श्रीश्रीगौरगदाधरौ विजयेताम्

श्रीचैतन्यचरितामृत

[श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामी प्रणीत]



श्रीहरिदास शास्त्री

।। श्रीश्रीगौरगदाधरौ विजयेताम् ।।

श्रीचैतन्यचरितामृत

[श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामि प्रणीत]

श्रीधाम वृन्दावन-कालियदह निवासी
काव्य व्याकरण सांख्य मीमांसा वेदान्त तर्क तर्क तर्क वैष्णव दर्शन तीर्थ
श्रीहरिदास शास्त्रि न्यायाचार्य कर्त्तृक सम्पादित

सद्ग्रन्थ प्रकाशक :
श्रीहरिदास शास्त्री
श्रीगदाधर गौरहरि प्रेस
श्रीहरिदास निवास ■ कालीदह, वृन्दावन (मथुरा)
पिन-२८११२१

मुद्रक एवं प्रकाशक :

श्रीहरिदास शास्त्री

श्रीगदाधरगौरहरि प्रेस,

श्रीहरिदासनिवास, कालीदह

वृन्दावन–मथुरा (उत्तर प्रदेश)

पिन–२८११२१

प्रकाशन तिथि :

अष्टोत्तरशतश्रीप्रभुपाद

श्रील विनोदविहारी गोस्वामी

वेदान्तरत्न महाशय की तिरोभाव तिथि

पौष कृष्णा द्वितीया २५-११-८८

प्रथम संस्करण — १०००

प्रकाशन सहायता— १०५) रु.

✽ श्रीश्रीगौरगदाधरौ विजयेताम् ✽

विज्ञप्ति

विश्व वैष्णव राजसभा सभाजन भाजन श्रीश्री भगवत् श्रीकृष्णचैतन्यचरणानुचर "श्रीरूप सनातन भट्ट रघुनाथ श्रीजीव गोपाल भट्ट दास रघुनाथ" नामक सुप्रसिद्ध षड् गोस्वामि के अन्यतम श्रीरघुनाथ भट्ट गोस्वामि के शिष्य श्रीकृष्णदास कविराज ही प्रस्तुत श्रीचैतन्यचरितामृत के रचयिता हैं। इस ग्रन्थ में अनन्य सुलभमनस्वित्व, अभूतपूर्व पाण्डित्य एवं अद्वितीय कवित्व शक्ति के सहित सुगभीर दार्शनिकता, काव्यरस, अलङ्कार, इतिहास प्रभृति का परिवेशन सुमधुर, सुस्पष्ट भाषा के द्वारा होने के कारण पाठक मात्र का हृदय आनन्द से आप्लुत हो जाता हैं।

अप्राकृत मनस्वी कवि श्रीचैतन्यचरितामृत, श्रीगोविन्दलीलामृत एवं श्रीकृष्णकर्णामृत की (सारङ्ग रङ्गदा टीका) तीन अमृत का परिवेशन करके चिर तृषित मानव समाज को सुतृप्त किये हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ श्रीचैतन्यचरितामृत में श्रीचैतन्य प्रवर्त्तित गौड़ीय वैष्णव धर्म के नैतिक, तात्त्विक, दार्शनिक एवं आध्यात्मिक विषय समूह का स्थूल एवं सूक्ष्म मर्म विशेष दक्षता एवं परमरसज्ञता के सहित सरल भाव से वर्णित हुआ है, वस्तुतः 'मितञ्च सारञ्च वचोहि वाग्मिता' का उदाहरण ही यह ग्रन्थ है।

वेद, उपनिषद्, पुराण, पञ्चरात्रादि एवं श्रीरूप सनातनादि गोस्वामिगण रचित ग्रन्थादि व्यतीत श्रीस्वरूप दामोदर की कड़चा, श्रीमुरारि गुप्त कृत कड़चा, श्रीवृन्दावनदास ठाकुर कृत श्रीचैतन्यभागवत श्रीरूप गोस्वामिकृत लघुभागवतामृत, उज्ज्वल नीलमणि, श्रीकवि कर्णपूर कृत श्रीचैतन्यचरितामृत महाकाव्य, श्रीचैतन्य चन्द्रोदय प्रभृति ग्रन्थ के अवलम्बन से यह ग्रन्थ रचित हुआ है।

विशेषतः श्रीवृन्दावन ठाकुर कृत श्रीचैतन्य भागवत के अनुसरण प्रधान रूप से इस ग्रन्थ में हुआ है, अतएव इस ग्रन्थ को श्रीचैतन्य लीला वर्णन का उत्तरार्द्ध कहा जा सकता है, कारण श्रीचैतन्य भागवत में श्रीचैतन्य लीला का पूर्वार्द्ध वर्णित हुआ है।

श्रीवृन्दावनदास ठाकुर श्रीगौराङ्ग का वर्णन 'नारायण', 'वैकुण्ठ विलासी', 'मुकुन्द', 'लक्ष्मीकान्त', 'सीताकान्त', 'गोकुलनाथ', 'वनमाली', 'कृष्ण' इत्यादि रूप में करके श्रीगौराङ्ग को ईशतत्त्व रूप में प्रतिपादन किये हैं। श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामी उस भित्ति को सुदृढ़तर करने के निमित्त 'न चैतन्यात् कृष्णात् जगति पर तत्त्वं परमिह' 'राधाकृष्ण द्युति सुवलितं नौमि कृष्ण स्वरूपम्' 'नन्दसुत बलि यारे भागवते गाई। सेइ कृष्ण अवतीर्ण चैतन्य गोसाञि।' 'चैतन्य गोसाञिर एइ तत्त्व निरूपण स्वयं भगवान् कृष्ण व्रजेन्द्रनन्दन।' इत्यादि परिभाषा के द्वारा 'श्रीराधायाः प्रणयमहिमा कीदृशो वानयैवास्वाद्यो येनाद्भुतमधुरिमा कीदृशो वा मदीयः। 'सौख्यं चास्या मदनुभवतः कीदृशं वेतिलोभात्तद्भावाढ्यः समजनि शची गर्भ सिन्धौ हरीन्दुः' इत्यादि श्लोकों के द्वारा श्रीगौराङ्ग अवतार का मुख्य कारण निर्देश पूर्वक विजातीय भाव से अर्थात् प्रेम का विषय होकर आश्रय जातीय रसास्वादन करने में असामर्थ्य हेतु

राधाभाग अङ्गीकरि धरि तार वर्ण । तिन सुख आस्वादिते हन अवत्तीर्ण ।' इत्यादि प्रमाणों के द्वारा सुविचार पूर्वक श्रीचैतन्य के मनोऽभीष्ट पदार्थ का आलोचन, आस्वादन एवं अनुशीलन किये हैं ।

श्रीगौराङ्ग की सुगम्भीर गम्भीरा लीला के द्वारा जो प्रेम रत्नाकर उद्वेलित होकर नीलाचल को आप्लुत करके दशदिक् में प्रसृत हो रहा था, उसका वर्णन मध्यलीला पञ्चविंशति परिच्छेद में इस प्रकार हुआ है—

कृष्ण लीलामृतसार, तार शत-शत धार,
दशदिके बहे याहा हैते ।
से चैतन्यलीला हय, सरोवर अक्षय,
मन हंस चराओ ताहाते ।।
भक्तगण शुन मोर दैन्य वचन ।
तोमा सबार पदधूलि, अङ्गे विभूषण करि,
किच्छु मुञि करोँ निवेदन ।।
कृष्ण भक्ति-सिद्धान्तगण, याते प्रफुल्ल पद्मवन,
तारमधु कर आस्वादन ।
प्रेम रस कुमुदवने, प्रफुल्लित रात्रिदिने,
ताते चराओ मन भृङ्गगण ।।
नाना भावे भक्तजन, हंस चक्रवाक्गण,
याते सबे करेन विहार ।
कृष्ण केलि मृणाल, याहा पाइ सर्वकाल,
भक्त हंस करये आहार ।।
सेइ सरोवरे गिया, हंस चक्रवाक हैञा,
सदा ताहा करह विलास ।
खण्डिवे सकल दुःख, पाइबे परम सुख,
आनायासे हबे प्रेमोल्लास ।।
एइ अमृत अनुक्षण, साधु महान्त मेघगण,
विश्वोद्याने करे बरिषण ।
ताते फले अमृत फल, भक्त खाय निरन्तर,
तार प्रेमे जीये जगज्जन ।।
चैतन्यलीलामृत पूर, कृष्णलीला सुकर्पूर,
दुँह मिलि हय सुमाधुर्य्य ।

साधु गुरु प्रसादे, ताहा येइ आस्वादे,
सेइ जाने माधुर्य्य प्राचुर्य्य ॥
से लीला अमृत बिने, खाय यदि अन्न पाने,
तबु भक्तेर दुर्बल जीवन ।
यार एक बिन्दु पाने उत्फुल्लित तनु मने,
हासे गाय करये नर्त्तन ॥
ए अमृत कर पान, याहा सम नाहि आन,
चित्ते करि सुदृढ़ विश्वास ।
ना पड़ कुतर्क गर्त्ते, अमेध्य कर्कशावर्त्मे,
याते पड़िले हय सर्वनाश ॥
श्रीचैतन्य नित्यानन्द, श्रीअद्वैत भक्तवृन्द,
आर यत श्रोता भक्तगण ।
तोमा सबार श्रीचरण, मस्तके करि भूषण,
याहा हैते अभीष्ट पूरण ॥
श्रीरूप सनातन, रघुनाथ जीव चरण,
शिरे धरि यार करि आश ।
कृष्णलीलामृतान्वित चैतन्यचरितामृत,
कहे किछु दीन कृष्णदास ॥

अन्त्यलीला के द्वादश परिच्छेद में कथित है—

श्रूयतां श्रूयतां नित्यं गीयतां गीयतां मुदा ।
चिन्त्यतां चिन्त्यतां भक्ताश्चैतन्यचरितामृतम् ।

एवं मध्यलीला के नवमाध्याय में उक्त है—

"चैतन्य चरित शुन श्रद्धा भक्ति करि ।
मात्सर्य्य छाड़िया मुखे बल हरि हरि ॥
एइ कलिकाले आर नाहि कोन धर्म्म ।
वैष्णव वैष्णव शास्त्र एइ कहे मर्म ॥"

वस्तुतः श्रीगौरहरि की 'अनर्पितचरी उन्नतोज्ज्वलरसमयी अहैतुकी' भक्ति का अनुसन्धान ग्रन्थकार प्रदान न करने से मानव उसको जानने में सक्षम नहीं होता, केवल यही नहीं, किन्तु श्रीरूप सनातनादि षड़् गोस्वामी के द्वारा अनुशीलित एवं आस्वादित रससिन्धु एवं तत्त्वसिन्धु मन्थन हेतु अमृत निर्य्यास ही इसमें परिवेषित हुआ है ।

ग्रन्थकार के मत में श्रीगौराङ्ग श्रीराधाभावाढ्य श्रीकृष्ण हैं, "रसराज महाभाव दुइ एक रूप" अतएव इस ग्रन्थ के अध्ययन करके अतिशय सुदुर्लभ सुकृतिमान् व्यक्ति श्रीस्वरूप, रामराय, सनातन, श्रीहरिदास, श्रीरूप, रघुनाथ एवं श्रीगदाधर के प्राणकोटि अनुराग दीपशिखा से निर्मञ्छित नीलाचल विभूषण रसराज महाभाव मूर्त्ति श्रीगौरहरि के श्रीपाद पद्म की सेवा में लुब्ध हो सकता है।

प्रस्तुत ग्रन्थ आदि, मध्य, अन्त्यलीला तीनों भागों में विभक्त है। आदि लीला में १७, मध्यलीला में २५ एवं अन्त्यलीला में २० परिच्छेद हैं। ग्रन्थकार रचित श्लोक ९७, उद्धृत श्लोक ९१५, समष्टि से १०१२ हैं। पयार संख्या आदि लीला में २०८९, मध्यलीला में ५३७८, अन्त्यलीला में ३०३६+१०५०३ हैं, पयार एवं श्लोक की समष्टि ११५१५ हैं। तीनों लीलाओं में परिच्छेदों का अनुवाद १७ परिच्छेद २५ परिच्छेद एवं २० परिच्छेद में है एवं मध्यलीला के प्रथम परिच्छेद में मध्यलीला एवं नीलाचल लीला का संक्षिप्त परिचय है।

आदि लीला के प्रथम परिच्छेद में श्रीचैतन्यावतार का साधारण तत्त्व, द्वितीय में विशेष तत्त्व, तृतीय में अवतार का गौण उद्देश्य, चतुर्थ में अन्तरङ्ग हेतु, पञ्चम में श्रीनित्यानन्द तत्त्व, षष्ठ में श्रीअद्वैत तत्त्व वर्णित है। सप्तम में पञ्चतत्त्व का आख्यान, अष्टम में ग्रन्थ की उपक्रमणिका एवं ग्रन्थकार का परिचय नवम में श्रीचैतन्य मालाकार का प्रेमफल दान की उदारता प्रदर्शन, दशम से द्वादश पर्य्यन्त श्रीगौराङ्ग की निज शाखा, नित्यानन्द, अद्वैत एवं गदाधर के शाखा समूह का स्थूलत: वर्णन है। इन परिच्छेदों को उपोद्‌घात भी कहा जा सकता है। त्रयोदश में जन्मलीला, चतुर्द्दश में बाल्यलीला, पौगण्ड लीला, षोड़श में किशोर लीला एवं सप्तदश में यौवन लीला की घटनावली एवं ग्रन्थानुवाद लिखित हैं।

मध्यलीला के प्रथम परिच्छेद में श्रीरूप सनातन का विवरण, मध्य एवं अन्त्यलीला का सूत्र, द्वितीय में अवशेष द्वादश वर्ष की लीलावली का संक्षिप्त परिचय है, तृतीय में सन्न्यास की परवर्त्ती घटना, राढ़ देश में भ्रमण, अद्वैत गृह में आगमन प्रभृति वर्णित हैं।

चतुर्थ पञ्चम में नीलाचल के पथ से रेमुणा, याजपुर, कटक, साक्षीगोपाल एव भुवनेश्वरादि स्थान का विवरण, दण्ड भङ्ग लीलादि वर्णित हैं, षष्ठ परिच्छेद में नीलाचल में आगमन एवं सार्वभौम मिलन, सप्तम में दक्षिण यात्रा, अष्टम में श्रीरामानन्द मिलन, नवम में दाक्षिणात्य भ्रमण, दशम एकादश में, पुरी में प्रत्यागमन एवं भक्त सम्मिलन, द्वादश, त्रयोदश, चतुर्द्दश में नीलाचल में अवस्थान, जगन्नाथदेव के गुण्डिचा मन्दिर मार्जन, रथयात्रा हेरा पञ्चमी प्रभृति का वर्णन है।

पञ्चदश में भक्त विदा, षोड़श में वृन्दावन यात्रा एवं कानाइ की नाटशाला से पुन: प्रत्यावर्त्तन, सप्तदश में वन पथ से पुन: वृन्दावन यात्रा, अष्टादश में वृन्दावन भ्रमण, ऊनविंश में प्रयाग में श्रीरूप शिक्षा, विंश, एकविंश में सम्बन्ध तत्त्व निरूपण, द्वाविंश में अभिधेय तत्त्व, त्रयोविंश में प्रयोजन तत्त्व, चतुर्विंश में 'आत्माराम' श्लोक की ६१ प्रकार की व्याख्या एवं पञ्चविंश परिच्छेद में मायावादियों का उद्धार एवं वैष्णव स्मृति के उद्देश्यादि वर्णित हैं।

अन्त्यलीला के प्रथम परिच्छेद में श्रीरूप के द्वितीय मिलन एवं काव्यामृतास्वादन एवं सेन शिवानन्द के कुक्कुर का विवरण, द्वितीय में छोटा हरिदास वर्जन, तृतीय में श्रीहरिदास ठाकुर की महिमा नाम महिमा एवं दामोदर का वाक्य दण्ड, चतुर्थ में सनातन के सहित पुनर्मिलन, पञ्चम में रामानन्द से प्रद्युम्न मिश्र का विवरण श्रवण, वङ्गीय कविकृत नाटक परीक्षा, षष्ठ में रघुनाथ दास गोस्वामी का प्रसङ्ग एवं दधि चिउड़ा महोत्सव वर्णित है।

सप्तम में श्रीवल्लभ भट्ट मिलन, अष्टम में रामचन्द्र पुरी के कटाक्ष से भिक्षा-सङ्कोचन, नवम में गोपीनाथ पट्टनायक का उद्धार, दशम में राघव पण्डित की झालि, एकादश में श्रीहरिदास ठाकुर का निर्याण महोत्सव, द्वादश में जगदानन्द का प्रेम विवर्त्त, त्रयोदश में जगदानन्द की वृन्दावन यात्रा, श्रीचैतन्य प्रभु कर्त्तृ क देवदासी का गीत श्रवण एवं रघुनाथ भट्ट मिलन वर्णित है।

चतुर्दश एवं पञ्चदश में दिव्योन्माद, अन्तर्दशा में वृन्दावन दर्शन एवं कृष्णान्वेषण, षोड़श में कालिदास का वैष्णवोच्छिष्ट ग्रहण प्रसङ्ग, कवि कर्णपूर का शैशव चरित एवं फेवालव माहात्म्य कीर्त्तन, सप्तदश में तेलेङ्गा धेनु के मध्य में पतनादि, अष्टादश में समुद्र में पतन, ऊनविंश में विरह प्रलाप; मुखघर्षणादि एवं विंश परिच्छेद में शिक्षाष्टक आस्वादन एवं ग्रन्थानुवाद वर्णित है।

'दीनता ही भक्ति जननी है' बृहद्भागवतामृत की इस उक्ति की यथार्थता का प्रकाश ग्रन्थकार के जीवन में परिस्फुट रूप से हुआ है। अन्त्यलीला के विंश परिच्छेद में आपने लिखा है—

आमि अति क्षुद्र जीव पक्षी राङ्गा टुनि।
से यैछे तृष्णाय पिये समुद्रेर पानी॥
तैछे आमि एक कण छुँइल लीलार।
एइ दृष्टान्ते जानिह प्रभुर लीलार विस्तार॥
आमि लिखि इहो मिथ्या करि अभिमान।
आमार शरीर काष्ठ पुतली समान॥
वृद्धजरातुर आमि अन्ध बधिर।
हस्त हाले मन बुद्धि नहे मोर स्थिर॥
नाना रोग ग्रस्त चलिते वसिते ना पारि।
पञ्चरोग पीड़ाय व्याकुल रात्रि दिने मरि॥
पूर्व ग्रन्थे इहा करियाछि निवेदन।
तथापि लिखिये शुन इहार कारण॥
श्रीगोविन्द श्रीचैतन्य श्रीनित्यानन्द।
श्रीअद्वैत श्रीभक्त आदि श्रोतृ वृन्द॥
श्रीस्वरूप श्रीरूप श्रीसनातन।
श्रीरघुनाथ दास, श्रीगुरु, श्रीजीव चरण॥
इँहा सभार चरण कृपाय लिखाय आमारे।
आर एक हय तिँहो अति कृपा करे॥
श्रीमदनगोपाल मोरे लेखाय आज्ञा करि।
कहिते ना जुभाय तमो रहिते ना पारि॥

ना कहिले हय मोर कृतघ्नता दोष ।
दम्भ करि बलि श्रोता ना करिह रोष ।।
तोमा सभार चरण धूलि करिलु वन्दन ।
ताते चैतन्यलीला हैल ये किछु लिखन ।।

आदिलीला के अष्टम परिच्छेद में ग्रन्थ आरम्भ का विवरण इस प्रकार लिखित है—

वृन्दावनदास कैल चैतन्य मङ्गल ।
ताहाते चैतन्यलीला वर्णिल सकल ।।
नित्यानन्द लीला वर्णने हइल आवेश ।
चैतन्येर शेष लीला वर्णने रहिल अवशेष ।।
सेइ सब लीलार शुनिते विवरण ।
वृन्दावनवासी भक्त उत्कण्ठित मन ।।
वृन्दावने कल्पद्रुम सुवर्ण सदन ।
महायोगापीठ ताँहा रत्न सिंहासन ।।
ताते वसि आछे साक्षात् व्रजेन्द्रनन्दन ।
श्रीगोविन्ददेव नाम साक्षात् मदन ।।
राजसेवा हय ताहाँ विचित्र प्रकार ।
दिव्य सामग्री दिव्य वस्त्र अलङ्कार ।।
सहस्र सेवक सेवा करे अनुक्षण ।
सहस्र वदने सेवा ना याय वर्णन ।।
सेवार अध्यक्ष श्रीपण्डित हरिदास ।
याँर यश गुण सर्व जगते प्रकाश ।।
सुशील सहिष्णु शान्त वदान्य गम्भीर ।
मधुर वचन मधुर चेष्टा अति धीर ।।
सभार सम्मानकर्त्ता करे सभार हित ।
कौटिल्य मात्सर्य्य हिंसा ना जाने याँर चित ।।
कृष्णेर साधारण सद्गुण प्रकाश ।
सेह सब गुण ताँर शरीरे प्रकाश ।।
पण्डित गोसाञिर शिष्य अनन्त आचार्य ।
कृष्ण प्रेममय तनु उदार महा आर्य्य ।।

ताँहार अनन्त गुण के करु प्रकाश।
ताँर प्रिय शिष्य एइ पण्डित हरिदास॥
चैतन्य नित्यानन्दे ताँर परम विश्वास।
चैतन्यचरिते तार परम उल्लास॥
वैष्णवेर गुणग्राही ना देखये दोष।
काय मनो वाक्ये करे वैष्णव सन्तोष॥
निरन्तर शुने तिहोँ चैतन्य मङ्गल।
ताँहार प्रसादे शुने वैष्णव सकल॥
कथाय सभा उज्ज्वले येन पूर्णचन्द्र।
निज गुणामृते वाढ़ाय वैष्णव आनन्द॥
तिहोँ वड़ कृपा करि आज्ञा कैल मोरे।
गौराङ्गेर शेष लीला वर्णिवार तरे॥
काशीश्वर गोसाञिर शिष्य गोविन्द गोसाञि।
गोविन्देर प्रियसेवक ताँर समनाञि॥
यादवाचार्य्य गोसाञि श्रीरूपेर सङ्गी।
चैतन्यचरिते तिहोँ अति बड़ रङ्गी॥
पण्डित गोसाञिर शिष्य भूगर्भ गोसाञि।
चैतन्य कथा विनु मुखे आर कथा नाञि॥
ताँर शिष्य गोविन्द पूजक चैतन्यदास।
कुमुदानन्द चक्रवर्त्ती प्रेमी कृष्णदास॥
वृन्दावने वैसे यत वैष्णवेरगण।
शेष लीला शुनिते सभार हैल मन॥
मोरे आज्ञा दिलासबे करुणा करिञा।
ताँ सभार बोले लिखि निर्ल्लज्ज हइञा॥
वैष्णवेर आज्ञा पाञा चिन्तित अन्तरे।
मदनगोपाले गेलाङ आज्ञा मागिवारे॥
दर्शन करिञा कैल चरण वन्दन।
गोसाञिदास पूजारी करे चरण सेवन॥

प्रभुर चरणे यदि आज्ञा मागिल ।
गोसाञिदास आनिञा आज्ञा माला दिल ।।
आज्ञा माला पाञा मोर हइल आनन्द ।
तथाइ ग्रन्थेर तबे करिल आरम्भ ।।
एइ ग्रन्थ लेखाय मोरे मदनमोहन ।
आमार लिखन येन शुकेर पठन ।।
सेइ लिखि मदनगोपाल ये लेखाय ।
काष्ठेर पुतली येन कुहके नाचाय ।।
कुलाधि देवता मोर मदनमोहन ।
याँर सेवक रघुनाथ रूप सनातन ।।
वृन्दावन दासेर पाद-पद्म करि ध्यान ।
ताँर आज्ञा लैञा लिखि याहाते कल्याण ।।
चैतन्य लीलाते व्यास वृन्दावन दास ।
ताँर कृपा विने अन्ये ना हय प्रकाश ।।
मूर्ख नीच क्षुद्र मुञि विषय लालस ।
वैष्णवेर आज्ञा बले एतेक साहस ।।
श्रीरूप रघुनाथ चरणेर एइ बल ।
यार स्मृते पूर्ण हय वाञ्छित सकल ।।

श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामिपाद का जन्म बङ्गदेश के काटोआ के समीपवर्त्ती झामटपुर ग्राम में आनुमानिक १४५१ शकाब्द में वैद्यकुल में हुआ था । पिता का नाम भागीरथ एवं माता का नाम सुनन्दा था । शैशव में मातृ-पितृ वियोग होने के कारण भ्राता श्यामदास के सहित पितृ स्वसा के गृह में प्रतिपालित हुये थे । बाल्यकाल से ही हृदय में प्रवल वैराग्य का उदय होने के कारण वयः प्राप्त होने से भ्राता को विषय समर्पण करके श्रीनित्यानन्द प्रभु के स्वप्नादेश से श्रीवृन्दावन चले आये थे, एवं वहाँ अन्तिम समय पर्य्यन्त निवास किये थे । श्रीचैतन्य महाप्रभु (१४०७-१४५५) एवं श्रीनित्यानन्द प्रभु प्रभृति के सहित ग्रन्थकार का साक्षात्कार नहीं हुआ था । श्रीवृन्दावन आगमन का वृत्तान्त आदि लीला के पञ्चम परिच्छेद में आप इस प्रकार दिये हैं—

श्रीचैतन्य सेइ कृष्ण नित्यानन्द राम ।
नित्यानन्द पूर्ण करे चैतन्येर काम ।।
नित्यानन्द महिमा सिन्धु अनन्त अपार ।
एक कण स्पर्शि तबे से कृपा ताहाँर ।।

आर एक शुन ताँर कृपार महिमा।
अधम जनारे यैछे आनिल उर्द्ध्व सीमा॥
वेद गुह्य कथा एइ अयोग्य कहिते।
तथापि लिखि ये ताँर कृपा प्रकाशिते॥
उल्लासेर वशे लेखों तोमार प्रसाद।
नित्यानन्द प्रभु मोर क्षम अपराध॥
अवधूत गोँसाञिर एक भृत्य प्रेम धाम।
मीन केतन रामदास ताँर नाम॥
आमार आलये अहोरात्र सङ्कीर्त्तन।
ताहाते आइला तिहोँ पाञा निमन्त्रण॥
महा प्रेममय आसि रहिला अङ्गने।
सकल वैष्णव ताँर बन्दिला चरणे॥
नमस्कार करिते कारो उपरेत चढ़े।
प्रेमे कारे वंशी मारे काहाके चापड़े॥
ये नेत्रे देखिते अश्रु हय मने यार।
सेइ नेत्रे अविच्छन्न वहे अश्रुधार॥
कभो कोन अङ्गे देखि पुलक कदम्ब।
एक अङ्गे जाड्यय ताँर आर अङ्गे कम्प॥
नित्यानन्द बलि यबे करेन हुँङ्कार।
ताहा देखि लोक हय महा चमत्कार॥
गुणार्णव मिश्र नाम विप्र एक आर्य्य।
श्रीमूर्त्ति निकटे तिहोँ करे सेवा कार्य्य॥
अङ्गने आसिया तिहोँ ना कैल सम्भाष।
ताहा देखि क्रुद्ध हैञा बले रामदास॥
एइ त द्वितीय सूत रोम हर्ष सम।
बलभद्र देखिये ना कैल प्रत्युद्गम॥
एत बलि नाचे गाय करये सन्तोष।
सेवा कार्य्य करे विप्र ना करिया रोष॥

उत्सवान्ते गेला तिहोँ करिया प्रसाद ।
मोर भ्रातासने ताँर हैल किछु बाद ।।
चैतन्य प्रभुते ताँर सुदृढ़ विश्वास ।
नित्यानन्द विषये तार विश्वास आभास ।।
इहा जानि रामदासेर दुःख हैल मने ।
तबेत भ्रातारे आमि करिल भर्त्सने ।।
दुइ भाइ एक तनु समान प्रकाश ।
नित्यानन्द ना मान तोमार हबे सर्वनाश ।।
एकेत विश्वास अन्ये ना कर सम्मान ।
अर्द्धकुक्कुटि न्याय तोमार प्रमाण ।।
किम्वा दोँहा ना मानिञा हओ तो पाषण्ड ।
एके मानि आरे ना मानि एइमत भण्ड ।।
क्रुद्ध हैञा वंशी भाङ्गि चले रामदास ।
तत्काले आमार भ्रातार हैल सर्वनाश ।।
एइत कहिल ताँर सेवक प्रभाव ।
आर एक कहि ताँर दयार स्वभाव ।।
भाइके भर्तिसलुँ मुञि लैञा एइगुण ।
सेइ रात्र्ये प्रभु मोरे दिला दरशन ।।
नैहाटि निकटे झामटपुर नामे ग्राम ।
ताँहा स्वप्ने देखा दिला नित्यानन्द राम ।।
दण्डवत् हैञा मुञि पड़िलुँ भूमिते ।
निज पादपद्म प्रभु दिला मोर माथे ।।
उठ-उठ करि मोरे बले बार-बार ।
उठि ताँर रूप देखि हैलुँ चमत्कार ।।
श्याम चिक्कण कान्ति प्रकाण्ड शरीर ।
साक्षात् कन्दर्प येन महामल्ल वीर ।।
सुबलित हस्त पद कमल नयान ।
पट्ट वस्त्र शिरे पट्ट वस्त्र परिधान ।।

सुवर्ण कुण्डल कर्णे स्वर्णाङ्गद बाला।
चरणे नूपुर बाजे कण्ठे पुष्पमाला॥
चन्दने लेपित अङ्ग तिलक सुठाम।
मत्त गज जिनि मदमन्थर पयान॥
कोटि चन्द्र येन देखि उज्ज्वल वदन।
दाड़िम्ब वीज सम दन्त ताम्बूल चर्वण॥
कृष्ण प्रेमे मत्त अङ्ग डाहिने बामे दोले।
कृष्ण कृष्ण बलिया गम्भीर बोल बोले॥
राङ्गा यष्टि हस्ते दोले येन मत्त सिंह।
चारिपाशे बेढ़ि आछे चरणेते भृङ्ग॥
पारिषद गणे देखि सब गोप वेश।
कृष्ण कृष्ण कहे सभे प्रेमेते आवेश॥
शिङ्गा वाँशी वाजाय केहो केहो नाचे गाय।
सेवके योगाय पान चामर ढुलाय॥
नित्यानन्द स्वरूपेर देखिया वैभव।
किबा रूप गुण लीला अलौकिक सब॥
आनन्दे विह्वल आमि किछुइ ना जानि।
तबे हासि प्रभु मोरे बलिलेन वाणी॥
अये अये कृष्णदास नाकर तो भय।
वृन्दावन याह ताँहा सर्व लभ्य हय॥
एत बलि प्रेरिला मोरे हात सान दिया।
अन्तर्धान कैल प्रभु निजगण लैञा॥
मूर्च्छित हइया मुञि पड़िलुँ भूमिते।
स्वप्न भङ्ग हैले देखोँ हैञाछे प्रभाते॥
कि देखिनु कि शुनि करिये विचार।
प्रभु आज्ञा हैल वृन्दावन याइ बार॥
सेइ क्षणे वृन्दावने करिनु गमन।
प्रभुर कृपाते सुखे आइनु वृन्दावन॥

जय जय नित्यानन्द नित्यानन्द राम ।
याहाँर कृपाय पाइनुँ वृन्दावन धाम ॥
जय जय जय नित्यानन्द कृपामय ।
याँहा हैते पाइनु रूप सनातनाश्रय ॥
सनातन कृत पाइलुँ भक्तिर सिद्धान्त ।
श्रीरूप कृपाय पाइलुँ रस भाव प्रान्त ॥
जय जय नित्यानन्द चरणारविन्द ।
याहा हैते पाइलुँ श्रीराधागोविन्द ॥
जगाइ माधाइ हैते मुञि से पापिष्ठ ।
पुरीषेर कीट हैते मुञिसे लघिष्ठ ॥
मोर नाम शुने येइ तार पुण्य क्षय ।
मोर नाम लय येइ तार पाप हय ॥
एमन निर्घृण मोरे केवा कृपा करे ।
एक नित्यानन्द विनु जगत भितरे ॥
प्रेमेमत्त नित्यानन्द कृपा अवतार ।
उत्तम अधम किछु ना करे विचार ॥
ये आगे पड़ये तार करये निस्तार ।
अतएव निस्तारिल मोहेन दुराचार ॥
मोहेन पापिष्ठे आनिल वृन्दावन ।
मोहेन अधमे दिला श्रीरूप चरण ॥
मदनगोपाल श्रीगोबिन्द दरशन ।
कहिवार योग्य नहे ए सब कथन ॥
वृन्दावन पुरन्दर मदनगोपाल ।
रास विलासी साक्षात् व्रजेन्द्रकुमार ॥
श्रीराधा ललिता सङ्गे रासादि विलास ।
मन्मथ-मन्मथ रूपे याँहार प्रकाश ॥
दुइ पाशे राधा ललिता करेन सेवन ।
स्वमाधुर्य्ये लोकेर मन करे आकर्षण ॥

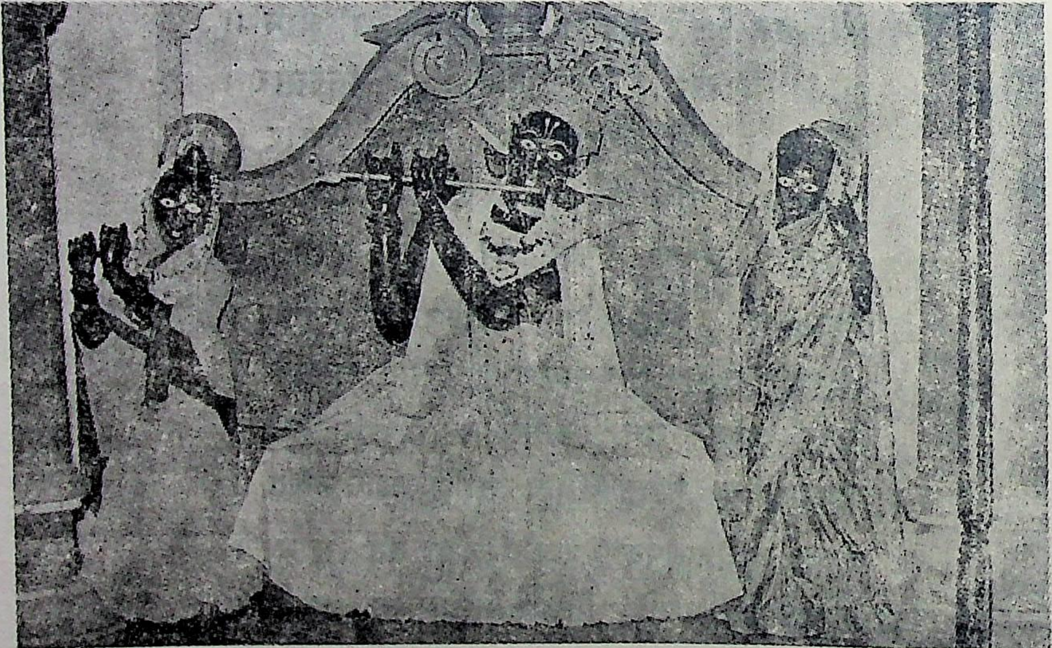
नित्यानन्द दया मोरे ताँरे देखाइल।
राधा मदनगोपाले प्रभु करि दिल॥
वृन्दावन योगपीठ कल्पतरु वने।
रत्न मण्डप ताहे रत्न सिंहासने॥
श्रीगोविन्द वसियाछे व्रजेन्द्रनन्दन।
माधुर्य्य प्रकाश करे जगत् मोहन॥
वाम पार्श्वे श्रीराधिका सखीगण सङ्गे।
रासादिका लीला करे प्रभु कत रङ्गे॥
याँर ध्यान निज लोके करि पद्मासन।
अष्टादशाक्षर मन्त्रे करे उपासन॥
चौद्द भुवने याँर सभे करे ध्यान।
वैकुण्ठादि पुरे याँर लीला गुण गान॥
याहाँर माधुरी करे लक्ष्मी आकर्षण।
श्रीरूप गोसाञि रूप करिल वर्णन॥
साक्षात् व्रजेन्द्र सुत इथे नाहि आन।
ये अज्ञ करे ताँरे प्रतिमा हेन ज्ञान॥
सेइ अपराधे तार ना हय निस्तार।
घोर नरकेते पड़े कि बलिब आर॥
हेन ये गोविन्द प्रभु पाइलुँ याँ हैते।
ताँहार चरण कृपा ना पारि वर्णिते॥
वृन्दावने वैसे यत वैष्णव मण्डल।
कृष्ण नाम परायण परम मङ्गल॥
यार प्राण धन नित्यानन्द श्रीचैतन्य।
राधाकृष्ण भक्ति विनु नाहि जाने अन्य॥
से वैष्णवेर पद रेणु ताँर पद छाया।
मो हेन अधमे दिल नित्यानन्द दया॥
ताँहा सर्वलाभ हय प्रभुर चरण।
सेइ सूत्र एइ तार कैल विवरण॥

ए सब पाइलूँ आमि वृन्दावन आय।
एइ सब लभ्य हय प्रभुर अभिप्राय ।।
आपनार कथा लिखि निर्ल्लज्ज हइया।
नित्यानन्द गुणे लेखाय उन्मत्त करिञा ।।
नित्यानन्द प्रभुर गुण महिम अपार।
सहस्र वदने शेष नाहि पाय पाँर ।।
श्रीरूप रघुनाथ पदे यार आश।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ।।

ग्रन्थ समाप्ति का समय १५३७ शकाब्द है।

"शाके सिन् ध्वग्नि वाणेन्दौ ज्यैष्ठे वृन्दावनान्तरे।
सूर्य्येऽह्न्यसित पञ्चम्यां ग्रन्थोऽयं पूर्णतां गतः ।।"

श्रीहरिदासशास्त्री



※ श्रीश्रीगौरगदाधरौ विजयेताम् ※

सूची पत्र



श्लोक-सूची

आदि खण्ड





श्रीचैतन्यचरितामृत

आदिलीला

प्रथमपरिच्छेद

श्रीश्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः ।

वन्दे गुरूनीशभक्तानीशमीशावतारकान् ।
तत्प्रकाशांश्च तच्छक्तीः कृष्णचैतन्यसंज्ञकम् ॥१॥

टीका— श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः । गुरून् वन्दे, ईशभक्तान् वन्दे, ईशं वन्दे, ईशावतारकान् वन्दे, तस्य ईशस्य प्रकाशान् वन्दे, तस्य ईशस्य शक्तीश्च वन्दे । ईशं किम्भूतं ? श्रीकृष्णचैतन्यसंज्ञकम् । ईशभक्ताः श्रीवासादयस्तान्, तत्प्रकाशा नित्यानन्दादयस्तान्, तस्य शक्तयः गदाधरादयस्तान् । बहुत्वं परिवाराभिप्रायेण ॥१॥

मैं मदीय मन्त्रदाता गुरु एवं शिक्षागुरु स्वरूप श्रीरूप-सनातन प्रमुख गोस्वामीवृन्द की वन्दना करता हूँ। श्रीवास प्रभृति ईश्वरके भक्तवृन्द की वन्दना करता हूँ। ईश्वर के अवतार श्रीअद्वैताचार्य प्रभृति की वन्दना करता हूँ। ईश्वरके प्रकाशस्वरूप श्रीनित्यानन्द प्रभृति की वन्दना करता हूँ। ईश्वरके शक्तिस्वरूप श्रीगदाधर प्रभृति की वन्दना करता हूँ, एवं श्रीकृष्णचैतन्य नामक ईश्वर की वन्दना करता हूँ ॥१॥

वन्दे श्रीकृष्णचैतन्यनित्यानन्दौ सहोदितौ ।
गौड़ोदये पुष्पवन्तौ चित्रौ शन्दौ तमोनुदौ ॥२॥

टीका—श्रीकृष्णचैतन्यनित्यानन्दौ अहं वन्दे । तौ किम्भूतौ ? पुष्पवन्तौ, रविचन्द्रौ, किम्भूतौ ? सहोदितौ सह एककालेन उदितौ। कुत्र उदितौ ? गौड़ोदये, गौड़ एव पूर्वपर्वतः उदयाचलस्तत्र । किम्भूतौ तौ ? चित्रौ चित्ररूपौ, शन्दौ मङ्गलदौ, पुनस्तमोनुदौ अज्ञानान्धकारनाशकौ ॥२॥

गौड़देशरूप उदयाचल में युगपत् प्रकाशित पुष्पवन्त चन्द्रसूर्य्यस्वरूप श्रीकृष्णचैतन्य एवं श्री नित्यानन्द की वन्दना करता हूँ। जिन्होंने सूर्य्य चन्द्रके समान जगद्वर्त्ति मानववृन्दके अज्ञानान्धकार विनाशपूर्वक उन सबको अत्याश्चर्य नित्य सुखसम्पन्न किया है ॥२॥

यदद्वैतं ब्रह्मोपनिषदि तदप्यस्य तनुभा,
य आत्मान्तर्यामी पुरुष इति सोऽस्यांश विभवः ।
षड़ैश्वर्य्यैः पूर्णो य इह भगवान् स स्वयमयम्,
न चैतन्यात् कृष्णाज्जगति परतत्त्वं परमिह ॥३॥

टीका—उपनिषदि वेदशिरोभागे ज्ञानमार्गे अद्वैतं ब्रह्म इति तत्त्वं, तदपि अस्य गोविन्दस्य तनुभा कान्तिः । य आत्मा अन्तर्यामी योगशास्त्रे तत्त्वं सोऽपि अस्य अंशविभवः, षड़ैश्वर्य्यैः पूर्णो यः स भगवान् इति अयं चैतन्यः स्वयं, अतो न चैतन्यात् कृष्णात् जगति मध्ये परतत्त्वम् ॥३॥

उपनिषदमें जिनकी अङ्गकान्ति अद्वैत ब्रह्म नाम से सुप्रसिद्ध है, जिनकी आंशिक विभूति योग शास्त्रमें

अन्तर्य्यामी पुरुष नामसे ख्यात है, एवं षड़ैश्वर्य्यपूर्ण भगवान् भी जो स्वयं हैं, वही स्वयं श्रीकृष्णचैतन्य हैं। सुतरां श्रीकृष्णस्वरूप चैतन्य व्यतीत इस जगत्में परमतत्त्व वस्तु अपर नहीं है ॥३॥

अनर्पितचरीं चिरात् करुणयावतीर्णः कलौ,
समर्पयितुमुन्नतोज्ज्वलरसां स्वभक्तिश्रियम् ।
हरिः पुरटसुन्दरद्युतिकदम्बसन्दीपितः,
सदा हृदयकन्दरे स्फुरतु वः शचीनन्दनः ॥४॥

टीका—सः शचीनन्दनो हरिः वो युष्माकं हृदय-कन्दरे सदा स्फुरतु। सः किम्भूतः? पुरटसुन्दर-द्युतिकदम्बसन्दीपितः, स्वभक्तिश्रियं समर्पयितुं अवतीर्णः। स्वभक्तिश्रियं किम्भूताम? उन्नतोज्ज्वल-रसाम्। पुनः किम्भूताम्? चिरात् अनर्पितचरीं चिरकालं व्याप्य अदत्तपूर्वाम्। स हरिरिव सिंहस्य वीरत्वादिगुणेन सादृश्यं, सिंहसादृश्ये वीररसस्य महत्त्वमायातम्। महावीररसेनावतीर्णः। वीररस-श्चतुर्थो भवति। दयावीरो दानवीरो युद्धवीरो धर्म-वीरश्च। तत्र प्रथमतः करुणयावतीर्णः दयावीरः, कलौ कलियुगे युद्धे च धर्मादिविरोधेऽत्र युद्धवीरः। चिरात् चिरकाल व्याप्य अनर्पितचरीमुन्नतोज्ज्वलरसां स्वभक्तिश्रियं समर्पयितुं संपूर्णां दातुं अवतीर्णस्तत्र दानवीरः, अधर्मान्निर्जितात् धर्मस्य स्थापनात् धर्मवीरः। पुरटेभ्यः सुवर्णेभ्यः सुन्दरद्युतिकदम्बैः सुप्रभासमूहैः सन्दीपितोऽत्राक्रान्तसादृश्यं; सिंहोऽपि यत्रावतरति तत्र स्वभक्तिश्रियं स्वलग्नश्रियं उन्नतो-ज्ज्वलरसां दीप्तरसां तत्रार्पयति ॥४॥

जो अन्यान्य भगवदवतारगण कर्त्तृक अप्रदत्त द्वादश रस के मध्यमें सर्वश्रेष्ठ मनोविमोहक उज्ज्वल रसप्रधान निज भजनरूप निज प्रेमसम्पद, सबको प्रदान करनेके निमित्त करुणापूर्वक वर्त्तमान कलियुग में अवतीर्ण हुए हैं, कनकोज्ज्वल कान्तिमण्डित वह शचीनन्दन श्रीहरि तुम सबके हृदय कन्दरा में स्फुरित हों ॥४॥

राधा कृष्णप्रणयविकृतिर्ह्लादिनीशक्तिरस्मा-
देकात्मानावपि भुवि पुरा देहभेदं गतौ तौ
चैतन्याख्यं प्रकटमधुना तद्द्वयं चैक्यमाप्तं,
राधाभावद्युतिसुबलितं नौमि कृष्णस्वरूपम् ॥५॥

टीका—राधा कृष्णस्य प्रणयविकृतिः प्रणयस्य विकारः सा एवाह्लादिनीशक्तिरस्माद्धेतोः पुरा एकात्मानौ तौ देहभेदं गतौ, अधुना साम्प्रत तद्द्वयं राधाकृष्णद्वयं चैक्यमाप्तं सत् प्रकटम्। किम्भूतं चैतन्याख्यं? राधाभावद्युतिसुबलित यत् कृष्णस्वरूपं तं नौमि ॥५॥

श्रीराधिका स्वतःसिद्ध कृष्णप्रेमस्वरूपिणी हैं, सुतरां श्रीकृष्ण की सर्वशक्ति वरीयसी ह्लादिनीशक्ति हैं। शक्ति एवं शक्तिमत्तत्त्व अभिन्न होने के कारण उभय ही एक वस्तु हैं, अर्थात् जो कृष्ण हैं, वही राधा हैं, जो राधा हैं, वही श्रीकृष्ण हैं, किन्तु लीला हेतु वही अभिन्न तत्त्व राधा एवं कृष्ण नामक भिन्न भिन्नरूपमें आविर्भूत हुए थे, अधुना वही तत्त्व अभिन्न भावसे चैतन्यरूप में प्रकट हुआ है। श्रीराधा की गौरकान्ति एवं श्रीकृष्णप्रेममण्डित होकर जो आविर्भूत हुये हैं, उन कृष्णस्वरूप श्रीचैतन्य देवको नमस्कार करता हूँ ॥५॥

श्रीराधायाः प्रणयमहिमा कीदृशो वानयैवा-
स्वाद्यो येनाद्भुतमधुरिमा कीदृशो वा मदीयः।
सौख्यं चास्या मदनुभवतः कीदृशं वेति लोभा-
त्तद्भावाढ्यः समजनि शचीगर्भसिन्धौ हरीन्दुः ॥६॥

टीका—श्रीराधायाः प्रणयमहिमा कीदृशो वा मयापि न ज्ञायते, मदीयाद्भुतमधुरिमा कीदृशो वा च, येन प्रणयेन अनया राधया आस्वाद्यः, अस्याः राधाया मदनुभवतः सौख्यञ्च कीदृशं वा इति लोभात् तद्भावाढ्यः श्रीराधाया भावाढ्यः सन् सः श्रीकृष्ण-चन्द्रो हरीन्दुर्गौरचन्द्रः शचीगर्भसिन्धौ समजनि प्रादुर्भूतः ॥६॥

श्रीराधा प्रेम की महिमा कितनी है? प्रेम दृष्टि से श्रीकृष्ण माधुर्य्य की चमत्कारिता कितनी है? एवं उस चमत्कारिता का अनुभव करके श्रीराधा कितनी सुखी होती है, इसको जाननेके निमित्त चन्द्र

जिस प्रकार समुद्रसे उदित हुआ उसी प्रकार श्रीराधा भाव कान्ति मण्डित श्रीकृष्ण गौरचन्द्र रूपमें शचीगर्भ सिन्धु से आविर्भूत हुये हैं ॥६॥

सङ्कर्षण: कारणतोयशायी
गर्भोदशायी च पयोब्धिशायी।
शेषश्च यस्यांशकला: स नित्या-
नन्दाख्यराम: शरणं ममास्तु ॥७॥

टीका—स नित्यानन्दाख्यराम: शरणं ममास्तु। सङ्कर्षणादयो यस्यांशकला भवन्ति, परव्योमनाथस्य सङ्कर्षणस्तृतीयव्यूहो भवति, कारणतोयशायी महाविष्णु:, गर्भोदशायी सहस्रशीर्षा पुरुष:, पयोब्धिशायी क्षीरोदशायी विष्णु:, शेष: अनन्त:, एते केचित् अंशा: केचित् कला भवन्ति ॥७॥

कारणार्णवशायी महाविष्णु प्रथमपुरुष, गर्भोदशायी प्रद्युम्न द्वितीयपुरुष, क्षीरोदशायी अनिरुद्धरूपी तृतीय पुरुष एवं अनन्तदेव जिनके अशांश रूपमें परिगणित हैं, उन श्रीनित्यानन्दराम की शरण ग्रहण मैं करता हूँ ॥७॥

मायातीते व्यापि वैकुण्ठलोके,
पूर्णैश्वर्य्ये श्रीचतुर्व्यूहमध्ये।
रूपं यस्योद्भाति सङ्कर्षणाख्यं,
तं श्रीनित्यानन्दरामं प्रपद्ये ॥८॥

टीका—तं नित्यानन्दरामं अहं प्रपद्ये, आश्रयामि। यस्य नित्यानन्दरामस्य रूपं स्वरूपं श्रीचतुर्व्यूहमध्ये वासुदेवसङ्कर्षणप्रद्युम्नानिरुद्ध इति चतुर्व्यूहमध्ये उद्भाति उत्कर्षेण वर्त्तते। किम्भूतं स्वरूपं? सङ्कर्षणाख्यं। कुत्र? श्रीचतुर्व्यूहमध्ये किम्भूते? पूर्णैश्वर्य्ये। पुन: किम्भूते? मायातीते। पुन: श्रीचतुर्व्यूहकिम्भूत:? व्यापि-वैकुण्ठलोक:, तं व्याप्य तिष्ठतीत्यर्थ: ॥८॥

प्रकृत्यतीत वैकुण्ठलोकस्थित पूर्णैश्वर्य पूर्णवासुदेव सङ्कर्षण, प्रद्युम्न एवं अनिरुद्ध नामक जो चतुर्व्यूह हैं, उनके मध्यमें जो सङ्कर्षण नामक रूप देदीप्यमान हैं, मैं उन नित्यानन्द स्वरूप रामकी शरण ग्रहण करता हूँ ॥८॥

मायाभर्त्ताजाण्डसङ्घाश्रयाङ्ग:,
शेते साक्षात् कारणाम्भोधिमध्ये।
यस्यैकांश: श्रीपुमानादिदेव-
स्तं श्रीनित्यानन्दरामं प्रपद्ये ॥९॥

टीका—यस्य नित्यानन्दस्य एकांश: श्रीपुमानादिदेव प्रथमपुरुषो महाविष्णु:, तं नित्यानन्दराम प्रपद्ये आश्रयामि। स: पुमानादिदेव: किम्भूत:? साक्षात् मायाभर्त्ता। पुन: किम्भूत:? अजाण्डसंघाश्रयाङ्ग:, अजाण्डानि तेषां सङ्घ: समूह: तस्याश्रयोऽङ्गं यस्य स:। पुन: किम्भूत:? कारणाम्भोधिमध्ये विरजाजलमध्ये य: शेते स: ॥९॥

मैं बलरामरूपी नित्यानन्दकी शरण ग्रहण करता हूँ। इनके अंश आदिदेव प्रथमपुरुष महाविष्णु मायाधीश हैं, इनके शरीर से असंख्य ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति हुई है, आप कारण समुद्रमें शायित रहते हैं ॥९॥

यस्यांशांश: श्रीलगर्भोदशायी,
यन्नाभ्यब्जं लोकसङ्घातनालम्।
लोकस्रष्टु: सूतिकाधाम धातु-
स्तं श्रीनित्यानन्दरामं प्रपद्ये ॥१०॥

टीका—यस्य श्रीनित्यानन्दस्य अंशांशस्य अंशो गर्भोदशायी नारायणो ब्रह्मा तन्नालं लोकसङ्घात: लोकसमूहश्चतुर्दशभुवनं नाले यस्य तत्। पुनर्नाभिकमलं किम्भूतं? धातुर्ब्रह्मण: सूतिकाधाम सूतिकागृहं जन्मस्थानम्। धातु: किम्भूतस्य? लोकस्रष्टु: ॥१०॥

जिनका नाभिपद्म लोकस्रष्टा ब्रह्मा के सूतिकागृह स्वरूप हैं, अतएव यावतीय लोकों का अधिष्ठान स्वरूप है, गर्भोदशायी अर्थात् हिरण्यगर्भके अन्तर्यामी हैं, उन द्वितीय पुरुष भी जिनके अंशके अंशमात्र हैं, उन नित्यानन्दराम की शरण ग्रहण करता हूँ ॥१०॥

यस्यांशांशांश: परात्माखिलानां,
पोष्टा विष्णुर्भाति दुग्धाब्धिशायी।
क्षौणीभर्त्ता यत्कला सोऽप्यनन्त-
स्तं श्रीनित्यानन्दरामं प्रपद्ये ॥११॥

टीका—यस्य नित्यानन्दरामस्य अंशांशांश: अखिलानां परमात्मा दुग्धाब्धिशायी क्षीरोदशायी नारायणोऽखिलानां पालनकर्त्ता विष्णुश्च स एव। यत्कला यस्य कला क्षौणीभर्त्ता पृथिवीधारणकर्त्ता अनन्तस्तं श्रीनित्यानन्दरामं अहं प्रपद्ये आश्रयामि ॥११

निखिल विश्वके पालक एवं चालक क्षीराब्धिशायी विष्णु भी जिनके अंशके अंशके अंशमात्र हैं, एवं पृथिवी धारणकारी अनन्तनाग भी जिनके आवेशावतार वा कलावतार हैं, मैं उन नित्यानन्द राम की शरण ग्रहण करता हूँ ॥११॥

महाविष्णुर्जगत्कर्त्ता मायया यः सृजत्यदः।
तस्यावतार एवायमद्वैताचार्य्य ईश्वरः ॥१२॥

टीका—महाविष्णुर्जगत्कर्त्ता मायया अदः सर्वं जगत् सृजति, यस्यावतार एवायं अद्वैताचार्योऽतोऽयमीश्वरः ॥१२॥

जगत्कर्त्ता महाविष्णु—जिन्होंने निज माया नाम्नी वहिरङ्गा शक्ति के द्वारा विश्व की सृष्टि की है, ईश्वर स्वरूप यह अद्वैताचार्य उनका ही अवतार हैं ॥१२॥

अद्वैतं हरिणाद्वैतादाचार्य्यं भक्तिशंसनात्।
भक्तावतारमीशं तमद्वैताचार्य्यमाश्रये ॥१३॥

टीका—तं अद्वैताचार्यं अहं आश्रये। तं किम्भूतं? हरिणा सह अद्वैतं अद्वितीयम्। भक्तेः शंसनात् कथनात्। पुनः किम्भूतं? ईश्वरं भक्तरूपेण अवतारम् ॥१३॥

मैं भक्तावतार एवं ईश्वरस्वरूप अद्वैताचार्य का आश्रय ग्रहण करता हूँ, श्रीहरिके सहित अभिन्नता हेतु आपका नाम अद्वैत है, एवं भक्ति उपदेश के हेतु आप आचार्य हैं ॥१३॥

पञ्चतत्त्वात्मकं कृष्णं भक्तरूपस्वरूपकम्।
भक्तावतारं भक्ताख्यं नमामि भक्तशक्तिकम् ॥१४॥

टीका—कृष्णं अहं नमामि। कथम्भूतं? पञ्चतत्त्वात्मकं पञ्चाख्यं तत्त्वं आत्मस्वरूपं यस्य स तम्। पुनः किम्भूतं? भक्तरूपं स्वस्वरूपो यत्र तम्। भक्तरूपः श्रीकृष्णचैतन्यः, भक्तस्वरूपः श्रीनित्यानन्दः। पुनः किम्भूतं? भक्तावतारं भक्तरूपेणावतारो यस्य स तम्। अद्वैताचार्यो भक्तरूपः, श्रीकृष्णचैतन्यो भक्तस्वरूपः। श्रीनित्यानन्दं किम्भूतं? भक्ताख्यं आख्या यस्य तम्। भक्ताख्यः श्रीवासादिः। पुनः किम्भूतम्? भक्तशक्तिकं भक्तः शक्तिर्यस्य स तम्। भक्तशक्तिः श्रीगदाधरपण्डितः ॥१४॥

भक्तरूप अर्थात् श्रीकृष्णचैतन्यरूप, भक्तस्वरूप अर्थात् नित्यानन्दरूप, भक्तावताररूप अर्थात् अद्वैत आचार्यरूप, भक्ताख्य—श्रीवासादिरूप एवं भक्त शक्तिक अर्थात् श्रीगदाधररूप—पञ्चतत्त्वमय श्रीकृष्ण चैतन्यदेव को मैं प्रणाम करता हूँ ॥१४॥

जयतां सुरतौ पङ्गोर्मम मन्दमतेर्गती।
मत्सर्वस्वपदाम्भोजौ राधामदनमोहनौ ॥१५॥

टीका—राधामदनमोहनौ जयताम्। तौ किम्भूतौ? सुरतौ शोभनप्रेमयुक्तौ। पुनः किम्भूतौ? मम गती। मम कथम्भूतस्य? मन्दमतेः मन्दा मतिर्यस्य स तस्य। पुनः किम्भूतौ? मत्सर्वस्वपदाम्भोजौ मम सर्वस्वपदाम्भोज ययोस्तौ। मम पुनः कथम्भूतस्य? पङ्गोः खञ्जस्य ॥१५॥

भक्त कृपालु श्रीराधामदनमोहन की जय हो, उनके चरणकमल ही मेरा जीवन सर्वस्व एवं आश्रय स्थल हैं। मैं मन्दमति एवं पङ्गु हूँ ॥१५॥

दीव्यद्वृन्दारण्यकल्पद्रुमाधः
श्रीमद्रत्नागारसिंहासनस्थौ।
श्रीमद्राधा-श्रीलगोविन्ददेवौ,
प्रेष्ठालीभिः सेव्यमानौ स्मरामि ॥१६

टीका—श्रीश्रीराधा-श्रीलगोविन्ददेवौ स्मरामि। किम्भूतौ? दीव्यद्वृन्दारण्ये कल्पद्रुमाधः कल्पवृक्षमूले श्रीमति रत्नागारे सिंहासने स्थितौ। पुनः किम्भूतौ? प्रेष्ठालीभिः परमप्रेष्ठसखीभिः सेव्यमानौ ॥१६॥

दिव्य शोभामय श्रीवृन्दावन कल्पवृक्ष के तलदेश स्थित रत्नमन्दिर के रत्नसिंहासन में समासीन एवं

प्रियसखीवृन्द के द्वारा सेवित श्रीराधिका एवं श्री गोविन्ददेव का स्मरण मैं करता हूँ ॥१६॥

श्रीमान् रासरसारम्भी वंशीवटतटस्थितः ।
कर्षन् वेणुस्वनैर्गोपीर्गोपीनाथः श्रियेऽस्तु नः ॥१७॥

टीका—गोपीनाथः नोऽस्माकं श्रिये निमित्ताय अस्तु। कथम्भूत सः? श्रीमान् रासरसारम्भी। किं कुर्वन् वेणुस्वनैः गोपीगणान् कर्षन् आकर्षन् ॥१७

श्रीमान् अर्थात् सर्वार्थपरिपूर्ण, रासलीलाप्रवृत्त गोपीनाथ हम सबका कल्याण करें, आप वंशीवट के तलदेशमें अवस्थित होकर वंशी वादनके द्वारा गोपी वृन्द को आकर्षण करते रहते हैं ॥१७॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
ए तिन ठाकुर गौड़ियाके करियाछेन आत्मसाथ ।
ए तिनेर चरण वन्द तिने मोर नाथ ॥२
ग्रन्थेर आरम्भे करि मङ्गलाचरण ।
गुरु वैष्णव भगवान् तिनेर स्मरण ॥३
तिनेर स्मरणे हय विघ्न विनाशन ।
अनायासे हय निज वाञ्छित पूरण ॥४
से मङ्गलाचरण हय त्रिविधप्रकार ।
वस्तुनिर्द्देश, आशीर्वाद, नमस्कार ॥५
प्रथम दुइ श्लोके इष्टदेव नमस्कार ।
सामान्य विशेषरूपे दुइ त प्रकार ॥६
तृतीय श्लोकेते करि वस्तुर निर्द्देश ।
याहा हैते हय परतत्त्वेर उद्देश ॥७
चतुर्थ श्लोकेते करि जगते आशीर्वाद ।
सर्वत्र मागिये कृष्णचैतन्य-प्रसाद ॥८
सेइ श्लोके कहि वाह्यावतार-कारण ।
पञ्चम षष्ठ श्लोके कहि मूल प्रयोजन ॥९
एइ छय श्लोके कहि चैतन्येर तत्त्व ।
आर पञ्च श्लोके नित्यानन्देर महत्त्व ॥१०
एइ चौद्द श्लोके करि मङ्गलाचरण ।
तहि मध्ये कहि सब वस्तु-निरूपण ॥११
आर दुइ श्लोके अद्वैत-तत्त्वाख्यान ।
आर एक श्लोके पञ्चतत्त्वेर व्याख्यान ॥१२
सब श्रोता वैष्णवेरे करि नमस्कार ।
एइ सब श्लोकेर करि अर्थविचार ॥१३
सकल वैष्णव शुन करि एकमन ।
चैतन्य कृष्णेर शास्त्र मते निरूपण ॥१४
कृष्ण, गुरुद्वय, भक्तावतार प्रकाश ।
शक्ति एइ छय रूपे करेन विलास ॥१५
एइ छय तत्त्वेर करि चरण वन्दन ।
प्रथमे सामान्ये करि मङ्गलाचरण ॥१६

तथाहि—

वन्दे गुरूनीशभक्तानीशमीशावतारकान् ।
तत्प्रकाशांश्च तच्छक्तीः कृष्णचैतन्यसंज्ञकम् ॥१८॥*

मन्त्रगुरु आर यत शिक्षागुरुगण ।
ताहार चरण आगे करिये वन्दन ॥१७
श्रीरूप, सनातन, भट्ट रघुनाथ ।
श्रीजीव, गोपालभट्ट, दास रघुनाथ ॥१८
एइ छय गुरु शिक्षागुरु ये आमार ।
ताँ सभार पादपद्मे कोटि नमस्कार ॥१९
भगवानेर भक्त यत श्रीवास प्रधान ।
ताँ सभार पादपद्मे सहस्र प्रणाम ॥२०
अद्वैत आचार्य्य प्रभुर अंश-अवतार ।
ताँर पादपद्मे कोटि प्रणति आमार ॥२१

---

* अनुवादादि १म पृष्ठामें ।

नित्यानन्दराय प्रभुर स्वरूप प्रकाश ।
ताँर पादपद्म वन्दि याँर मुञि दास ॥२२
गदाधर-पण्डितादि प्रभुर निजशक्ति ।
ताँ सभार चरणे मोर सहस्र प्रणति ॥२३
श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु स्वयं भगवान् ।
ताँहार पदारविन्दे अनन्त प्रणाम ॥२४
सावरणे प्रभुरे करिया नमस्कार ।
एइ छय तेँहो यैछे करिये विचार ॥२५
यद्यपि आमार गुरु चैतन्येर दास ।
तथापि जानिये आमि ताँहार प्रकाश ॥२६
गुरु कृष्णरूप हन शास्त्रेर प्रमाणे ।
गुरुरूपे कृष्ण कृपा करेन भक्तगणे ॥२७

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।१७।२७) उद्धवं प्रति श्रीभगवद्वाक्यम्—

आचार्यं मां विजानीयान्नावमन्येत कर्हिचित् ।
न मर्त्यबुद्ध्यासूयेत सर्वदेवमयो गुरुः ॥१९॥

टीका—आचार्यं मां विजानीयात्, कर्हिचित् कदाचित् न अवमन्येत, मर्त्यबुद्ध्या कलुषबुद्ध्या न असूयेत, सर्वदेवमयो गुरुः ॥१९॥

श्रीमद्भागवतके ११।१७।२७ में श्रीभगवान् कृष्ण उद्धवको कहे हैं—आचार्य्य अर्थात् गुरुको मेरा स्वरूप जानना चाहिये । कभी भी उनको अवज्ञा न करे एवं मर्त्यबुद्धि-मरणधर्मशील मानव बुद्धि से दोषारोपण, ईर्षा प्रभृति आचरण उनके प्रति न करे, कारण, गुरुदेव समस्त देवताओंके समष्टिस्वरूप हैं ॥१९

तत्रैव श्रीमद्भागवते (११।२९।६) श्रीभगवन्तं प्रति श्रीमदुद्धववाक्यम्—

नैवोपयन्त्यपचितिं कवयस्तवेश
ब्रह्मायुषापि कृतमृद्धमुदः स्मरन्तः ।
योऽन्तर्बहिस्तनुभृतामशुभं विधुन्व-
न्नाचार्य्यचैत्यवपुषा स्वगतिं व्यनक्ति ॥२०॥

टीका—हे ईश ! कवयः ब्रह्मविदोऽपि त्वत्कृतं उपकारं स्मरन्त ऋद्धमुद उपचितपरमानन्दाः सन्तः अपचितिं आनृण्यं नैव उपयन्ति प्राप्नुवन्ति । यतः यः भवान् बहिः आचार्यवपुषा गुरुरूपेण अन्तः चैत्यवपुषा अन्तर्यामिरूपेण तनुभृतां अशुभं विधुन्वन् स्वगतिं व्यनक्ति प्रकटयति ॥२०॥

उद्धव भगवान् को कहे थे—हे ईश ! आप बाहर आचार्य्य रूपमें एवं अभ्यन्तर में अन्तर्यामी रूपमें देहधारीवृन्दके अशुभ विनष्ट करते करते निज स्वरूप को प्रकट करते रहते हैं । आपके कर्मसमूह का स्मरण करके वेदज्ञ पण्डितवृन्द आनन्द विभोर होते रहते हैं । ब्रह्माके समान आयुः प्राप्त होने पर भी आपका ऋण शोध करने में पण्डितगण अक्षम हैं ॥२०॥

तथाहि श्रीमद्गीतायाम् (१०।१०) अर्ज्जुनं प्रति श्रीभगवद्वाक्यम्—

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम् ।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते ॥२१॥

टीका—एवं सततयुक्तानां मयि आसक्तचित्तानां प्रीतिपूर्वकं भजतां तं बुद्धिरूपं योगं उपायं ददामि । येन ते भक्ताः मां उपयान्ति प्राप्नुवन्ति ॥२१॥

भगवान् श्रीकृष्ण, अर्जुनको कहे हैं—हे अर्जुन ! मेरा जो सब भक्त, मुझमें तन्मय चित्त होकर प्रीतिपूर्वक मेरी उपासना करते हैं, मैं उन सबको उस प्रकार बुद्धियोग प्रदान करता हूँ, जिसके द्वारा वे सब मुझको प्राप्त कर सकते हैं ॥२१॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।९।३०) ब्रह्माणं प्रति भगवद्वाक्यम्—

ज्ञानं परमगुह्यं मे यद्विज्ञानसमन्वितम् ।
सरहस्यं तदङ्गञ्च गृहाण गदितं मया ॥२२॥

टीका—मे मम परमं गुह्यं गोपनीयं रहस्यं यत् ज्ञानं गदितं तत् गृहाण ग्रहणं कुरु। तत् किम्भूतं? विज्ञानसमन्वितम्। पुनः किम्भूतम्? रहस्येन वर्तमानं, तत् अङ्गञ्च। अस्य रहस्यस्य अङ्गञ्च मया कथितम् ॥२२॥

भगवान् ब्रह्मा को कहे हैं—हे ब्रह्मन्! विज्ञान समन्वित मत्सम्बन्धीय जो परमगुह्य ज्ञान है, उसका वर्णन तुम्हारे निकट करता हूँ, तुम अङ्ग के सहित उस ज्ञान का अवधारण करो ॥२२॥

तत्रैव श्रीमद्भागवते (२।९।३१)

यावानहं यथाभावो यद्रूपगुणकर्मकः।
तथैव तत्त्वविज्ञानमस्तु ते मदनुग्रहात् ॥२३॥

टीका—अहं यथा येन प्रकारेण यावान् यत् परिमितः तथा तेन प्रकारेण भावः। यानि रूपाणि गुणाः कर्माणि तत्तल्लीला यस्य सः यद्रूपगुणकर्मकोऽहं तेन प्रकारेण ते तव तत्त्वविज्ञानं मदनुग्रहात् मदनुग्रहेणास्तु ॥२३॥

ब्रह्मन्! मेरा परिमाण, भाव, रूप, गुण, कर्मसमूह जिस प्रकार हैं, मदीय अनुग्रह से तुमको उस उस विषय का तत्त्वज्ञान हो ॥२३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।९।३२)

अहमेवासमेवाग्रे नान्यत् यत् सदसत् परम्।
पश्चादहं यदेतच्च योऽवशिष्येत सोऽस्म्यहम् ॥२४

टीका—अहमेवाग्रे आसम्। स्थितवा तदा अन्यत् सत् वा असत् ॥२४॥

सृष्टिके पूर्वमें मैं ही था, स्थूल सूक्ष्म, कार्य-कारणात्मक परिदृश्यमान पदार्थसमूह उस समय नहीं थे, जो कुछ वर्त्तमान है, एवं भविष्यमें जो कुछ विद्यमान होंगे, एवं प्रलय समयमें जो भी अवशिष्ट रहेगा, वे सब ही मैं हूँ ॥२४॥

तत्रैव श्रीमद्भागवते (२।९।३३)—

ऋतेऽर्थं यत् प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्मनि।
तद्विद्यादात्मनो मायां यथाभासो यथा तमः ॥२५॥

टीका—ऋतेऽर्थं विनापि वास्तवमर्थं तदयतः किमप्यनिरुक्तं आत्मनि अधिष्ठाने प्रतीयते सदपि न च प्रतीयते तदात्मनो मम मायां विद्यात्। यथाभासः प्रतिबिम्बरश्मिः, यथा च तमः तिमिरम् ॥२५॥

परमार्थ वस्तु मैं ही हूँ, मुझको छोड़कर जिसकी प्रतीति होती है, अथच स्वरूप विषयमें जिसकी किसी प्रकार उपलब्धि नहीं होती है, उसको ही मेरी माया जाननी चाहिये। इस विषय में दृष्टान्त यह है—जिस प्रकार आभास आलोकादि एवं तमः अन्धकारादि हैं ॥२५॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।९।३४)—

यथा महान्ति भूतानि भूतेषूच्चावचेष्वनु।
प्रविष्टान्यप्रविष्टानि तथा तेषु न तेष्वहम् ॥२६॥

टीका—अथ तस्यैव प्रेम्णो रहस्यत्वं यथा महान्तीति। यथा महान्ति भूतानि भूतेष्व-प्रविष्टानि बहिःस्थितान्यप्यनुप्रविष्टान्यन्तःस्थितानि भान्ति तथा लोकातीतवैकुण्ठस्थितत्वेनाप्रविष्टोऽप्यहं तेषु तत्तद्गुणविख्यातेषु प्रणयिजनेषु प्रविष्टो हृदिस्थितो-ऽहं भवामि ॥२६॥

क्षिति, जल, तेज, वायु, आकाशरूप महाभूत समूह जिस प्रकार बृहद् एवं क्षुद्रभूत के अभ्यन्तरमें प्रविष्ट होकर भी अप्रविष्ट भाव से पृथक् वर्त्तमान हैं, उसी प्रकार मैं भी समस्त भूतमें परमात्म रूपमें प्रविष्ट होकर भी अप्रविष्ट हूँ, अर्थात् स्वतन्त्र भगवद्रूप में मैं नित्य विराजित हूँ ॥२६॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।९।३५)—

एतावदेव जिज्ञास्यं तत्त्वजिज्ञासुनात्मनः।
अन्वयव्यतिरेकाभ्यां यत् स्यात् सर्वत्र सर्वदा ॥२७

टीका—अथ क्रमप्राप्त-रहस्यपर्य्यन्तस्य साधकत्वात् रहस्यत्वेनैव तदङ्गमुपदिशति। एतावदेवेति, आत्मनो मम भगवतस्तत्त्वजिज्ञासुना याथार्थ्यमनु-भवितुमिच्छुना एतावदेव जिज्ञास्यं श्रीगुरुचरणेभ्यः शिक्षणीयं, किं तत् यदेकमेव वस्तु अन्वयव्यतिरेकाभ्यां विधिनिषेधाभ्यां सदा सर्वत्र स्यात् इति उपपद्यते।

तत्रान्वयेन यथा एतावानेव लोकेऽस्मिन्नित्यादि। 'ईश्वरं सर्वभुतानामित्यादि, मन्मना भव मद्भक्त इत्यादि च।' व्यतिरेकेन यथा 'मुखबाहूरूपादेभ्य' इत्यादि। सर्वत्रैव भगवद्भजनमेवोपदिष्टम् ॥२७॥

जो पदार्थ अन्वय व्यतिरेक उपायके द्वारा सर्वत्र सर्वदा विद्यमान है, तत्त्व जिज्ञासु व्यक्ति श्रीगुरुचरण के समीपमें उसी वस्तुको जिज्ञासा करके जाने ॥२७॥

तथाहि कर्णामृते प्रथमश्लोके—

चिन्तामणिर्जयति सोमगिरिर्गुरुर्मे,
शिक्षागुरुश्च भगवान् शिखिपिच्छमौलिः।
यत्पादकल्पतरुपल्लवशेखरेषु,
लीलास्वयम्बररसं लभते जयश्रीः ॥२८॥

टीका—सोमगिरिः तन्नामा मे मम गुरुर्जयति सर्वोत्कर्षेण वर्त्तते। सोमगिरिः किम्भूतः? चिन्तामणिः चिन्तामणिस्वरूपः। भगवांश्च श्रीवृन्दावनविहारी कृष्णश्च जयति। सः किम्भूतः? शिखिपिच्छमौलिः शिखिपिच्छचूड़ः। तत्पादकल्प-तरुपल्लवशेखरेषु तदङ्गुलीनखाग्रेषु लीलास्वयम्बर-रसं जयश्री र्लभते ॥२८॥

कर्णामृत में उक्त है—चिन्तमणि के तुल्य वाञ्छितार्थफलप्रद सोमगिरि नामक मदीय गुरुदेव की जय हो, एवं जिनके चरणरूप कल्पवृक्षके नखाग्र रूप पल्लवसमूहमें जयश्री श्रीराधा लीलारूप स्वयवर रस को प्राप्त करती रहती है, मयुर पुच्छ निर्मित चूड़ा के द्वारा शोभितमस्तक, शिक्षागुरु भगवान् श्रीकृष्ण की भी जय हो ॥२८॥

जीवेर साक्षात नाहि ताते गुरु चैत्यरूपे।
शिक्षागुरु हय कृष्ण महान्त स्वरूपे ॥२८॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।९।३६)

एतन्मतं समातिष्ठ परमेण समाधिना।
भवान् कल्पविकल्पेषु न विमुह्यति कर्हिचित् ॥२९॥

टीका—नन्वतिगम्भीरार्थं चतुःश्लोकीभागवतमिदं कथं मया अवगन्तुं शक्यं विवदमानानां मत-वैविध्या-दित्यत आह-एतन्मतं मदीयं सम्यगनुतिष्ठ समाधिना चित्तैकाग्र्येण विमृशेत्यर्थः। कल्पविकल्पेषु महा-कल्पानुकल्पेषु ॥२९॥

अतएव हे ब्रह्मन्! तुम मदुक्त उपदेश समूह का अनुष्ठान एकाग्र चित्तसे करो। ऐसा होनेपर महा-कल्प एवं अनुकल्प में कभी भी मुग्धता तुम्हारी नहीं होगी ॥२९॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२६।२६)—

ततो दुःसङ्गमुत्सृज्य सत्सु सज्जेत बुद्धिमान्।
सन्त एवास्य छिन्दन्ति मनोव्यासङ्गमुक्तिभिः ॥३०॥

टीका ततस्तस्माद्दुःसङ्गं उत्सृज्य त्यक्त्वा सत्सु साधुषु बुद्धिमान् जनः सज्जेत आसक्तो भवेत्। सन्तः साधव एव अस्य जनस्य मनोव्यासङ्गं मनो-दुर्विषयं छिन्दन्ति। कैरुक्तिभिः?—कृष्णकथाभिः छिन्दन्ति छेदनं कुर्वन्ति ॥३०॥

श्रीभगवान् कहते हैं—इस हेतु प्राज्ञ व्यक्तिगण असत्सङ्ग को परित्याग करके साधुसङ्ग करें, कारण साधुवृन्द उपदेशके द्वारा चित्तसंशय वा मनोवेदना को विदूरित करने में सक्षम हैं ॥३०॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२५।२५) देवहूतिं प्रति श्रीकपिलदेववाक्यम्—

सतां प्रसङ्गान्मम वीर्य्यसंविदो,
भवन्ति हृत्कर्णरसायनाः कथाः।
तज्जोषणादाश्वपवर्गवर्त्मनि,
श्रद्धा रतिर्भक्तिरनुक्रमिष्यति ॥३१॥

टीका—वीर्य्यस्य सम्यग्वेदनं यासु ताः वीर्य्य-संविदः, हृत्कर्णयो रसायनाः सुखदाः तासां जोषणात् सेवनात् अपवर्गः अविद्या-निवृत्तिः वर्त्म यस्मिन् हरौ। प्रथमं श्रद्धा, ततो रतिः, ततो भक्तिरनु-क्रमिष्यति ॥३१॥

कपिलदेव देवहूति को कहे थे—साधु व्यक्ति का समागम होने पर मदीय वीर्य्यसूचक हृदय प्रीतिकर श्रुतिमनोहर कथासमूह आलोचित होते हैं। उसका

श्रवण करने पर मत्सम्बन्धीय भक्तिमार्ग में क्रमशः श्रद्धा, रति भक्ति एवं भक्तिका सञ्चार होता है ॥३१

ईश्वर स्वरूप भक्त ताँर अधिष्ठान ।
भक्तेर हृदये कृष्णेर सतत विश्राम ॥२६

तथाहि श्रीमद्भागवते (६।४।६८) दुर्वाससं प्रति श्रीभगवद्वाक्यम्—

साधवो हृदयं मह्यं साधूनां हृदयन्त्वहम् ।
मदन्यत्ते न जानन्ति नाहं तेभ्यो मनागपि ॥३२॥

टीका—साधवो हृदयं मह्यं मदर्थं धारयन्ति, साधूनां हृदयं त्वहम् । मदन्यत् ते साधवो न जानन्ति, अहमपि तेभ्यः साधुभ्योऽन्यं मनागपि न जानामि ॥३२

भगवान् दुर्वासा ऋषिको कहे थे— साधुवृन्द मेरे निमित्त ही हृदय धारण करते हैं, एवं मैं भी साधु वृन्द के हृदय स्वरूप हूँ। मुझको छोड़कर वे सब अपर कुछ भी नहीं जानते हैं। मैं भी उन सब साधुको छोड़कर अपर कुछ भी नहीं जानता हूँ ॥३२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१३।१०) विदुरं प्रति युधिष्ठिरवाक्यम्—

भवद्विधा भागवतास्तीर्थीभूताः स्वयं प्रभो ।
तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि स्वान्तःस्थेन गदाभृता ॥३३॥

टीका—हे प्रभो ! भवद्विधा भवन्तः भागवताः स्वयं तीर्थीभूताः । स्वान्तःस्थेन गदाभृता श्रीकृष्णेन हेतुना अतीर्थानि तीर्थीकुर्वन्ति ॥३३॥

श्रीविदुर को युधिष्ठिर कहे थे—हे प्रभो ! आप के तुल्य भगवद्भक्त महात्मावृन्द ही स्वयं तीर्थस्वरूप होते हैं। पापीवृन्दके कलुष संस्पर्श से दूषित तीर्थ समूह को आप सब अपने हृदयस्थित गदाधरके द्वारा पवित्र करके पुनर्वार विशुद्ध तीर्थत्व प्राप्त कराते हैं ॥३३

सेइ भक्तगण हय द्विविध प्रकार ।
पारिषदगण एक साधकगण आर ॥३०
ईश्वरेर अवतार ए तिन प्रकार ।
अंश-अवतार, आर गुण-अवतार ॥३१
शक्त्यावेश-अवतार तृतीय एमत ।
अंश-अवतार पुरुष मत्स्यादिक यत ॥३२
ब्रह्मा विष्णु शिव तिन गुणावतारे गणि ।
शक्त्यावेशे सनकादि पृथु व्यासमुनि ॥३३
दुइरूपे हय भगवानेर प्रकाश ।
एके त प्रकाश हय आरे त विलास ॥३४
एकइ विग्रह यदि हय बहुरूप ।
आकारे त भेद नाहि एकइ स्वरूप ॥३५
महिषी-विवाहे यैछे यैछे कैल रास ।
इहाके कहिये कृष्णेर मुख्य प्रकाश ॥३६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।६९।२) परीक्षितं प्रति श्रीशुकदेववाक्यम्

चित्रं बतैतदेकेन वपुषा युगपत् पृथक् ।
गृहेषु द्व्यष्टसाहस्रं स्त्रिय एक उदावहत् ॥३४॥

श्रीपरीक्षित को श्रीशुकदेव कहे थे—अहो ! यह अतीव आश्चर्य्यकर है कि—एक ही समयमें श्रीकृष्ण एक ही शरीरमें एवं एक ही समयमें षोड़श सहस्र स्त्रीवृन्द को पृथक् पृथक् भवन में विवाह किये थे ॥३४

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३३।३) शुकवाक्यम्—

रासोत्सवः संप्रवृत्तो गोपीमण्डलमण्डितः ।
योगेश्वरेण कृष्णेन तासां मध्ये द्वयोर्द्वयोः ॥
प्रविष्टेन गृहीतानां कण्ठे स्वनिकटं स्त्रियः ।
यं मन्येरन्नभस्तावद्विमानशतसङ्कुलम् ॥
दिवौकसां सदाराणामौत्सुक्यहृतात्मनाम् ।
ततो दुन्दुभयो नेदुर्निपेतुः पुष्पवृष्टयः ॥३५

टीका—तासां मण्डलाकारेण स्थितानां द्वयोर्द्वयो-र्मध्ये प्रविष्टेन तेनैव कण्ठे गृहीतानां उभयतः आलिङ्गितानाम् । कथम्भूतेन ? यं सर्वा नार्य्यः स्वसमीपं मामेव आश्लिष्टवानिति मन्येरन्, तेन एतदर्थं द्वयोर्द्वयोर्मध्ये प्रविष्टेनेत्यर्थः । ननु एकस्य कथं तथा प्रवेशः इत्यत उक्तं, योगेश्वरेण अचिन्त्यशक्तिनेत्यर्थः ।

तावत् तत्क्षणमेवौत्सुक्यव्याप्तमनसां सस्त्रीकानां देवानां विमानशतैः सङ्कुलं सङ्कीर्णं नभो वभूव ॥३५

श्रीशुकदेव कहे थे—गोपीवृन्द परिवृत रासोत्सव आरम्भ हुआ। श्रीकृष्ण मण्डलाकार में संस्थित उन सबके दो दो के मध्य में प्रविष्ट होने पर कण्ठको उभय पार्श्व गोपिका के द्वारा आलिङ्गित हो गये। इस प्रकार आलिङ्गित श्रीकृष्ण को गोपीवृन्द निज निज निकटस्थ मानने लगीं। अर्थात् उन सबको इस प्रकार प्रतीत होने लगा कि—श्रीकृष्ण केवल मदीय कण्ठ धारण पूर्वक मुझको ही आलिङ्गन कर रहे हैं।

उस समय कौतूहलाक्रान्त हृदय से समागत सस्त्रीक अमरवृन्द के शत शत विमानों के द्वारा गगनतल समाकीर्ण हुआ, उस समय स्वर्गसे दुन्दुभि नाद एवं पुष्प बर्षण भी होने लगा ॥३५

तथाहि लघुभागवतामृते पूर्वखण्डे (१८)—

अनेकत्र प्रकटता रूपस्यैकस्य यैकदा।
सर्वथा तत्स्वरूपैव सः प्रकाश इतीर्यते ॥३८

टीका—एकस्य रूपस्य या एकदा एकस्मिन् काले अनेकत्र प्रकटता, सर्वथा सर्वस्मिन् तत्स्वरूपैव प्रकाशः ॥३८॥

एक ही रूप का एक ही समयमें अनेक स्थानोंमें जो प्रकाश, अथच जिसमें समस्त रूप ही सब प्रकार से मूल रूपके ही सदृश होते हैं, उसी को प्रकाश कहते हैं ॥३६

एकइ विग्रह किन्तु आकारे हय आन।
अनेक प्रकाश हय विलास तार नाम ॥३७

तथाहि लघुभागवतामृते तदेकात्मरूपकथने (५)—

स्वरूपमन्यकारं यत्तस्य भाति विलासतः।
प्रायेणात्मसमं शक्त्या स विलासो निगद्यते ॥३९

टीका—यत् स्वरूपं तस्य विलासतः अन्याकारं भाति, प्रायेण शक्त्या आत्मसमं, स विलासो निगद्यते कथ्यते ॥३९

भगवान् के लीलाविलास हेतु उन स्वरूप की जो अन्य मूर्त्ति विभिन्न आकारसे प्रकाशित होती हैं। एवं शक्ति से जो प्राय स्वयं रूप भगवान् के तुल्य हैं, वही विलास नामसे अभिहित होते हैं ॥३९

यैछे बलदेव परव्योमे नारायण।
यैछे वासुदेव प्रद्युम्नादि सङ्कर्षण ॥३८
ईश्वरेर शक्ति हय त्रिविध प्रकार।
एक लक्ष्मीगण पुरे महिषीगण आर ॥३९
व्रजे गोपीगण आर सभाते प्रधान।
व्रजेन्द्रनन्दन याते स्वयं भगवान् ॥४०
स्वयं-रूप कृष्णेर कायव्यूह ताँर सम।
भक्त सहिते हय ताँहार आवरण ॥४१
भक्त-आदि क्रमे कैल सवार वन्दन।
ए सवार वन्दन सर्व शुभेर कारण ॥४२
प्रथम श्लोके कहि सामान्य मङ्गलाचरण।
द्वितीय श्लोकेते करि विशेष वन्दन ॥४३

वन्दे श्रीकृष्णचैतन्यनित्यानन्दौ सहोदितौ।
गौड़ोदये पुष्पवन्तौ चित्रौ शन्दौ तमोनुदौ ॥४०

गौड़देशरूप उदयाचलमें युगपत् प्रकाशित पुष्पवन्त चन्द्रसूर्य्यरूप श्रीकृष्णचैतन्य एवं श्री नित्यानन्द की वन्दना करता हूँ। जिन्होंने सूर्य्य चन्द्रके समान जगदवर्त्ति मानववृन्दके अज्ञानान्धकार विनाशपूर्वक उन सबको अत्याश्चर्य नित्य सुखसम्पन्न किया है ॥४०

व्रजे ये विहरे पूर्वे कृष्ण बलराम।
कोटि सूर्य्य-चन्द्र जिनि दोँहार निजधाम ॥४४
सेइ दुइ जगतेरे हइया सदय।
गौड़देशे पूर्वशैले करिला उदय ॥४५
श्रीकृष्णचैतन्य आर प्रभु नित्यानन्द।
याँहार प्रकाशे सर्वजगत आनन्द ॥४६

सूर्य्य-चन्द्र हरे यैछे सब अन्धकार ।
वस्तु प्रकाशिया करे धर्मेर प्रचार ॥४७
एइ मत दुइ भाइ जीवेर अज्ञान ।
तमो नाश करि करे वस्तुतत्त्व दान ॥४८
अज्ञान-तमेर नाम कहिये कैतव ।
धर्म-अर्थ-काम-वाञ्छा आदि एइ सब ॥४९
तार मध्ये मोक्ष-वाञ्छा कैतव प्रधान ।
याहा ह'ते कृष्णभक्ति हय अन्तर्धान ॥५०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१।२)—

धर्मः प्रोज्झितकैतवोऽत्र परमो निर्मत्सराणां सतां,
वेद्यं वास्तवमत्र वस्तु शिवदं तापत्रयोन्मूलनम् ।
श्रीमद्भागवते महामुनिकृते किंवा परैरीश्वरः,
सद्यो हृद्यवरुध्यतेऽत्र कृतिभिः शुश्रूषुभिस्तत्क्षणात् ॥४१

टीका—श्रीमति भागवते परमो धर्मो निरूप्यते । धर्मः किम्भूतः ? प्रोज्झितकैतवः प्रोज्झितं कैतवं यस्मिन् सः । केषां धर्मः ? निर्मत्सराणां मत्सर-रहितानाम् । सतां साधूनाम् । अत्र भागवते वास्तवं परमार्थभूतं वस्तु वेद्यम् । वस्तु किम्भूतं ? शिवदं परमसुखप्रदम् । पुनः किम्भूतम् ? तापत्रयोन्मूलनं आध्यात्मिकादितापत्रयनाशनम् । भागवते किम्भूते ? महामुनिकृते श्रीनारायणेन प्रथमं संक्षेपतः कृते । अतः परैः अन्यशास्त्रैः किं प्रयोजनम् ? अत्र शुश्रूषुभिः भागवतश्रवणेच्छुभिः कृतिभिः पुण्यशीलैः सद्य-स्तत्क्षणात् हृदि ईश्वरः अवरुध्यते स्थिरीक्रियते ॥४१

महामुनि श्रीनारायण कृत मनोहर यह श्रीमद् भागवत शास्त्रमें हिंसादिशून्य एवं परोत्कर्ष सहनशील साधु व्यक्तिवृन्द के परिपालनीय भुक्तिमुक्तिरूप कपटता वर्जित परमधर्म कीर्त्तित हुआ है ।

इससे आध्यात्मिकादि त्रिताप नाशक कल्याणप्रद वास्तव वस्तु का भी परिज्ञान होता है ।

शास्त्र श्रवणेच्छु पुण्यात्मा व्यक्तिवृन्द के हृदयमें इस शास्त्र श्रवण समकाल में ही श्रीहरि अवरुद्ध होते हैं । किन्तु अन्यान्य शास्त्र श्रवण से अथवा तत्तत् शास्त्रोक्त उपदेश पालन से क्या श्रीहरि हृदय में अवरुद्ध होते हैं ? कभी भी नहीं ॥४१

व्याख्यातञ्च श्रीधरस्वामीचरणैः—

प्र-शब्देन मोक्षाभिसन्धिरपि निरस्तः इति ॥४२

इस श्लोकमें श्रीधरस्वामीकृत व्याख्या इस प्रकार है—उक्त श्लोकके 'प्रोज्झित' पदस्थित 'प्र' शब्दके द्वारा मोक्षाभिसन्धिरूप प्रधान कैतव भी निरस्त हुआ है ॥४२

कृष्णभक्तिर बाधक यत शुभाशुभ कर्म ।
सेह एक जीवेर अज्ञान-तमो धर्म ॥५१
याँहार प्रसादे एइ तमः हय नाश ।
तमो नाश करि करे तत्त्वेर प्रकाश ॥५२
तत्त्ववस्तु कृष्ण, कृष्णभक्ति प्रेमरूप ।
नामसङ्कीर्त्तन सब आनन्दस्वरूप ॥५३
सूर्य्य चन्द्र बाहिरेर तमः से विनाशे ।
बहिर्वस्तु घट-पट आदि से प्रकाशे ॥५४
दुइ भाइ हृदयेर क्षालि अन्धकार ।
दुइ भागवत सङ्गे करान साक्षात्कार ॥५५
एक भागवत बड़ भागवतशास्त्र ।
आर भागवत भक्त भक्तिरस-पात्र ॥५६
दुइ भागवत द्वारा दिया भक्तिरस ।
ताँहार हृदये ताँर प्रेमे हय वश ॥५७
एक अद्भुत समकाले दोँहार प्रकाश ।
आर अद्भुत चित्तगुहार तमः करे नाश ॥५८
एइ सूर्य्य चन्द्र दुइ परम सदय ।
जगतेर भाग्ये गौड़े करिला उदय ॥५९
सेइ दुइ प्रभुर करि चरण वन्दन ।
याँहा हैते बिघ्ननाश अभीष्टपूरण ॥६०

एइ दुइ श्लोके कैल मङ्गल वन्दन ।
तृतीय श्लोकेर अर्थ शुन सर्वजन ॥६१
वक्तव्य-बाहुल्य, ग्रन्थ-विस्तारेर डरे ।
विस्तारि ना वर्णि सारार्थ कहि अल्पाक्षरे ॥६२

अनादिव्यवहारसिद्धप्राचीनैः स्वशास्त्रे उक्तञ्च—

मितञ्च सारञ्च वचो हि वाग्मितेति ।४३

टीका—मितं अल्पाक्षरेण सारं तात्पर्य्यं उक्तं वचः वाग्मिता इति ॥४३

अनादि व्यवहार सिद्ध प्राचीन मनीषिवृन्द निज निज शास्त्रमें उल्लेख किये हैं—कि परिमित एवं सारगर्भित वाक्य ही वाग्मिता है, अर्थात् वाक्य प्रयोग कौशल है ॥४३

शुनिले खण्डिवे चित्तेर अज्ञानादि दोष ।
कृष्णे गाढ़ प्रेम हवे पाइवे सन्तोष ॥६३
श्रीचैतन्य नित्यानन्द अद्वैत महत्त्व ।
ताँर भक्त भक्ति नाम प्रेम रसतत्त्व ॥६४
भिन्न भिन्न लिखियाछि करिया विचार ।
शुनिले जानिवे सब वस्तु-तत्त्वसार ॥६५
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥६६

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे
मङ्गलाचरणं गुर्वादिवन्दनं नाम
प्रथमः परिच्छेदः ।





द्वितीय-परिच्छेद

श्रीकृष्णचैतन्यतत्त्वनिरूपण

**श्रीकृष्णचैतन्यप्रभुं वन्दे बालोऽपि यदनुग्रहात् ।
तरेन्नानामतग्राहव्याप्तं सिद्धान्तसागरम् ॥१**

टीका—श्रीचैतन्यप्रभुमहं वन्दे; बालोऽपि अज्ञोऽपि यस्य चैतन्यस्य अनुग्रहात् अनुग्रहेण नानामतानि एव ग्राहाः जलजन्तुविशेषास्तैर्व्याप्तः सिद्धान्तास्तैः सागर इव सागरस्तं नानामतग्राहव्याप्त-सिद्धान्तसागरं तरेत् ॥१

जिनके अनुग्रह से बालकवत् अज्ञ व्यक्ति भी विविध मतरूप हिंस्र जलजन्तुपूर्ण सिद्धान्तसागर समुत्तीर्ण होनेमें समर्थ होता है। मैं उन श्रीचैतन्य प्रभुको प्रणाम करता हूँ ॥१

**कृष्णोत्कीर्त्तनगाननर्त्तनकलापाथोजनिभ्राजिता,
सद्भक्तावलिहंसचक्रमधुपश्रेणीविहारास्पदम् ।
कर्णानन्दिकलध्वनिर्वहतु मे जिह्वामरुप्राङ्गणे,
श्रीचैतन्यदयानिधे तव लसल्लीलासुधास्वर्धुनी ॥२**

टीका—हे श्रीचैतन्यदयानिधे दयासमुद्र ! तव लसल्लीलासुधास्वर्धुनी स्वर्गङ्गा मे मम जिह्वामरुप्राङ्गणे वहतु। किम्भूता ? कृष्णोत्कीर्त्तन-गान-नर्त्तनकलापाथोजनिभ्राजिता। पुनः कथम्भूता ? सद्भक्तावलिहंसचक्रमधुपश्रेणीविलासास्पदम्। पुनः किम्भूता ? कर्णानन्दिकलध्वनिः। लसल्लीला एव सुधास्वर्धुनी स्वर्गनदी गङ्गा। जिह्वा एव मरुप्राङ्गणं निर्जलचत्वरम्। कृष्णोत्कीर्त्तनगाननर्त्तनकला एव पाथो जलं, तस्मात् जन्म तेन भ्राजिता दीप्ता। सद्भक्तावलीः सद्भक्तसमूहः स एव हंसचक्रवाकमधुप-श्रेणी तस्या विहारास्पदम्। कर्णानन्दी कर्णस्य आनन्दकरो कलो मधुरध्वनि र्यस्याः ॥२

हे दयानिधि श्रीचैतन्य देव ! कृष्ण विषयक उच्च नामसङ्कीर्त्तन एवं नर्त्तन कला प्रभृति रूप कमल समूह से सुशोभित, साधु भक्तवृन्दरूप हंस, चक्रवाक एवं भ्रमरवृन्द का एकमात्र विहारस्थल,

श्रवणानन्दकर कलध्वनियुक्त आप की वह शोभित लीलारूप अमृत मन्दाकिनी मदीय मरुभूमि सदृश नीरस जिह्वा क्षेत्रमें प्रवाहित हो ॥२

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
तृतीय श्लोकेर अर्थ करि विवरण ।
वस्तुनिर्द्देशरूप मङ्गलाचरण ॥२

तथाहि ग्रन्थकारस्य—

यदद्वैतं ब्रह्मोपनिषदि तदप्यस्य तनुभा,
य आत्मान्तर्यामी पुरुष इति सोऽस्यांश विभवः ।
षड़ैश्वर्यैः पूर्णो य इह भगवान् स स्वयमयम्,
न चैतन्यात् कृष्णाज्जगति परतत्त्वं परमिह ॥३

उपनिषदमें जिनकी अङ्गकान्ति अद्वैत ब्रह्म नाम से सुप्रसिद्ध है, जिनकी आंशिक विभूति योग शास्त्रमें अन्तर्य्यामी पुरुष नामसे ख्यात है, एवं षड़ैश्वर्य्यपूर्ण भगवान् भी जो स्वयं हैं, वही स्वयं श्रीकृष्णचैतन्य हैं। सुतरां श्रीकृष्णस्वरूप चैतन्य व्यतीत इस जगत्में परमतत्त्व वस्तु अपर नहीं है ॥३

ब्रह्म आत्मा भगवान् अनुवाद तिन ।
अङ्गप्रभा अंशस्वरूप विधेय-चिह्न ॥३
अनुवाद कहि पाछे विधेय स्थापन ।
सेइ अर्थ कहि शुन शास्त्रविवरण ॥४
स्वयं भगवान् कृष्ण विष्णु परतत्त्व ।
पूर्णज्ञान पूर्णानन्द परम महत्त्व ॥५
नन्दसुत वलि याँरे भागवते गाइ ।
सेइ कृष्ण अवतीर्ण चैतन्य गोसाञि ॥६
प्रकाशविशेषे तेँह धरे तिन नाम ।
ब्रह्म परमातम आर स्वयं भगवान् ॥७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।२।११)—

वदन्ति तत्तत्त्वविदस्तत्त्वं यज्ज्ञानमद्वयम् ।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते ॥४

टीका – तत्त्वविदस्तु तदेव तत्त्वं वदन्ति । किं तत्? ज्ञानं नाम अन्वयमिति क्षणिकज्ञानपक्षं व्यवर्त्तयति । औपनिषदैः ब्रह्मेति, हिरण्यगर्भैः परमात्मेति, सात्वतैर्भगवानिति अभिधीयते ॥४

परतत्त्व एक ही अद्वय ज्ञानस्वरूप है, उपासक की ज्ञान-दृष्टि के क्रमसे एक ही तत्त्व ब्रह्म, परमातम, भगवान नाम से अभिहित होते हैं ॥४

ताँहार अङ्गेर शुद्ध किरणमण्डल ।
उपनिषद कहे ताँरे ब्रह्म सुनिर्मल ॥८
चर्मचक्षे देखे यैछे सूर्य्य निर्विशेष ।
ज्ञानमार्गे लैते नारे कृष्णेर विशेष ॥९

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (५।३६)—

यस्य प्रभाप्रभवतो जगदण्डकोटि-
कोटिष्वशेषवसुधादिविभूतिभिन्नम् ।
तद्ब्रह्म निष्कलमनन्तमशेषभूतं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥५

टीका—निष्कलादिस्वरूपं ततब्रह्माण्डार्बुद-कोटिषु । विभूतिभिर्धराद्याभिर्भिन्नं भेदमुपागतम् । सदा प्रभावयुक्तस्य ब्रह्म यस्य प्रभा भवेत् । तं गोविन्दं अहं भजामि ॥५

कोटि कोटि ब्रह्माण्डमें पृथिवी, जल, तेजः, वायु, एवं आकाशादि पृथक् पृथक् भूत रूपमें जो अधिष्ठित है, वह निष्कल, अनन्त एवं अशेष स्वरूप ब्रह्म भी जिन प्रभावान् गोविन्द की देह प्रभा है, मैं उनका भजन करता हूँ ॥५

कोटि कोटि ब्रह्माण्डे ये ब्रह्मेर विभूति ।
सेइ ब्रह्म गोविन्देर हय अङ्ग-कान्ति ॥१०
सेइ गोविन्द भजि आमि तेहों मोर पति ।
ताँहार प्रसादे मोर हय सृष्टिशक्ति ॥११

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।६।४७) श्रीभगवन्तं प्रति उद्धववाक्यम्—

वातवसनाः य ऋषयः श्रमणा ऊर्द्ध्वमन्थिनः ।
ब्रह्माख्यं धाम ते यान्ति शान्ताः सन्न्यासिनोऽमलाः ॥६

टीका—सन्न्यासिनो हि ब्रह्मचर्य्यादिक्लेशैः कथञ्चित् तरन्ति। वयन्तु अनायासेनैव तरिष्याम इत्याह वातवसना इति। ऊर्द्ध्वमन्थिनः ऊर्द्ध्व-रेतसः ॥६

श्रीमद्भागवत के एकादश स्कन्धमें लिखित है—परमार्थ विषय में श्रमशील ऊर्द्ध्वरेता दिगम्बर सन्न्यासीवृन्द शान्त एवं विमलमना होकर मदीय ब्रह्म संज्ञक धामको जाते हैं ॥६

आत्मा अन्तर्यामी याँरे योगशास्त्रे कय।
सेइ गोविन्देर अंशविभूति ये हय ॥१२
अनन्त स्फटिके यैछे एक सूर्य्य भासे।
तैछे जीव गोविन्देर अंश परकाशे ॥१३

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (१०।४२) अर्जुनं प्रति श्रीभगवद्वाक्यम्—

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥७

टीका—बहुना पृथक् पृथक् ज्ञातेन किं तव कार्य्यं? यस्मात् इदं सर्वं जगत् एकांशेन एकदेशमात्रेण विष्टभ्य व्याप्य अहमेव स्थितः। मद्व्यतिरिक्तं न किञ्चिदपि अस्तीत्यर्थः ॥७

श्रीमद्भगवद्गीता में लिखित है—हे अर्जुन! मदीय विभूति के सम्बन्ध में तुमको अधिक जानने का प्रयोजन क्या है? निश्चित रूपसे ही इसको जानना कि—मेरा एक अंशमें यह जगत् अवस्थित हैं ॥७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।९।४२) भीष्मवाक्यम्—

तमिममहमजं शरीरभाजां
हृदि हृदि धिष्ठितमात्मकल्पितानाम्।
प्रतिदृशमिव नैकधार्कमेकं
समधिगतोऽस्मि विधूतभेदमोहः ॥८

टीका—तं इमं ईश्वरं अजं, एकं एकरूपं शरीर-भाजां आत्मकल्पितानां हृदि हृदि धिष्ठितम्। अकारलोपस्त्वार्षः। इति हेतोरहं हृदि न एकधा समधिगतोस्मि, यतो विधूतभेदमोहः। क इव? एकं अर्कं प्रतिदृशं अनेकमिव ॥८

श्रीमद्भागवत में उक्त है—भीष्म कहे थे, यह भगवान् जन्मादि रहित होकर भी स्वयं निज निर्मित जीववृन्द के हृदय में अवस्थान करते हैं। एकमात्र भास्कर जिस प्रकार प्रत्येक की दृष्टि में अनेक प्रकार से प्रकाशित होता है, उसी प्रकार भगवान् भी अधिष्ठान विशेष में अनेक रूपसे प्रकाशित होते हैं। जो भी हो, मैंने इनको पाया, इनको देखकर मेरा मोह एवं भेदज्ञान विदूरित हो गया ॥८

सेइत गोविन्द साक्षात चैतन्य गोसाञि।
जीव निस्तारिते ऐछे दयालु आर नाइ ॥१४
परव्योमेते वैसे नारायण नाम।
षड़ैश्वर्य्य पूर्ण लक्ष्मीकान्त भगवान् ॥१५
वेद भागवत उपनिषद् आगम।
पूर्णतत्त्व याँरे कहे नाहि याँर सम ॥१६
भक्तियोगे भक्त पाय याँहार दर्शन।
सूर्य्य यैछे स्वविग्रह देखे देवगण ॥१७
ज्ञानयोगमार्गे ताँरे भजे येइ सब।
ब्रह्म आत्मारूपे ताँरे करे अनुभव ॥१८
उपासना भेदे जानि ईश्वर महिमा।
अतएव सूर्य्य ताँर दियेत उपमा ॥१९
सेइ नारायण कृष्णेर स्वरूप अभेद।
एकइ विग्रह किन्तु आकार विभेद ॥२०
इहोँत द्विभुज तिहोँ धरे चारि हात।
इहो वेणु धरे तिहोँ चक्रादिक साथ ॥२१

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१४।१४)—

नारायणस्त्वं न हि सर्वदेहिना-
मात्मास्यधीशाखिललोकसाक्षी।
नारायणोऽङ्गं नरभूजलायना-
त्तच्चापि सत्यं न तवैव माया ॥९

टीका—त्वं किं नारायणः? अपि तु मूल नारायण एव। यतः सर्वदेहिनामात्मासि, अस्य विश्वस्य अधीशः पुरुषाणां परः, यतो लोकानां साक्षी। नरभूजलायनात् हेतोः यो यस्य नारायणस्य नरहृदि भूमौ जलमध्ये च वासः, सोऽपि तवाङ्गमंशः, तवैव मायया, तच्चापि सत्यम् ॥९

श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्धके चतुर्दश अध्याय में उक्त है, श्रीब्रह्मा कहे थे—हे प्रभु! आप क्या नारायण नहीं हैं? मैं निश्चित रूपसे कह सकता हूँ, आप ही नारायण हैं। कारण, आप अखिल देही की आत्मा हैं, इस प्रकार होने पर भी आप नारायण नहीं हैं, ऐसा नहीं है। कारण, नार—जीवसमूह, उसका अयन—आश्रय, सुतरां यावतीय देही का आश्रयत्व निबन्धन आप ही नारायण हैं।

हे देव! आप समस्त लोकों के साक्षी हैं, सुतरां नारायण नामसे अभिहित हैं। कारण लोक समूहको जो अयन ज्ञान करते हैं, उनको हि नारायण कहा जा सकता है। हे भगवन्! नर से सञ्जात जो सब पदार्थ अर्थात् चतुर्विंशति तत्त्व हैं, और उससे उद्भूत जो जल, तन्मात्र, अयन—आश्रय होनेके कारण, जो नारायण शब्द से ख्यात हैं, वह ही भवदीय मूर्त्ति हैं, इसमें सन्देह नहीं है, यह आप की माया नहीं है ॥९

शिशु वत्स हरि ब्रह्मा करि अपराध।
अपराध क्षमाइते मागेन प्रसाद ॥२२
तोमार नाभिपद्म हैते आमार जन्मोदय।
तुमि पिता माता—आमि तोमार तनय ॥२३
पिता माता बालकेर ना लय अपराध।
अपराध क्षम मोरे करह प्रसाद ॥२४
कृष्ण कहेन, ब्रह्मा! तोमार पिता नारायण।
आमि गोप तुमि कैछे आमार नन्दन ॥२५
ब्रह्मा बलेन तुमि किना हओ नारायण।
तुमि नारायण शुन ताहार कारण ॥२६
प्राकृताप्राकृत सृष्टि यत जीवरूप।
ताहार ये आत्मा तुमि मूल स्वरूप ॥२७
पृथ्वी यैछे घटकुलेर कारण आश्रय।
जीवेर निदान तुमि तुमि सर्वाश्रय ॥२८
नार शब्दे कहे सर्व जीवेर निचय।
अयन शब्देते कहे ताहार आश्रय ॥२९
अतएव हओ तुमि मूल नारायण।
एइ एक हेतु शुन द्वितीय कारण ॥३०
जीवेर ईश्वर पुरुषादि अवतार।
ताहा सबा हैते तोमार ऐश्वर्य्य अपार ॥३१
अतएव अधीश्वर तुमी सर्वपिता।
तोमार शक्तिते तारा जगत् रक्षिता ॥३२
नारेर अयन याते करह पालन।
अतएव हओ तुमि मूल नारायण ॥३३
तृतीय कारण शुन श्रीभगवान्।
अनन्त ब्रह्माण्डे बहु वैकुण्ठादि धाम ॥३४
इथि यत जीव तार त्रैकालिक कर्म।
ताहा देख साक्षी तुमि जान सब मर्म ॥३५
तोमार दर्शने सर्व जगतेर स्थिति।
तुमि ना देखिले नहे कार स्थिति गति ॥३६
नारेर अयन याते कर दरशन।
ताहातेओ हओ तुमि मूल नारायण ॥३७
कृष्ण कहे ना बुझिये तोमार वचन।
जीव हृदि जले वैसे सेइ नारायण ॥३८
ब्रह्मा कहे जले जीवे येइ नारायण।
से सब तोमार अंश ए सत्य वचन ॥३९
कारणाब्धि गर्भोदक क्षीरोदकशायी।
मायाद्वारे सृष्टि करे ताते सब मायी ॥४०

सेइ तिन जलशायी सर्व अन्तर्यामी।
ब्रह्माण्ड वृन्देर आत्मा ये पुरुष नामी ॥४१
हिरण्यगर्भेर आत्मा गर्भोदकशायी।
व्यष्टिजीव अन्तर्यामी क्षीरोदकशायी ॥४२
जिहा सभार दर्शनादि आछे मायागन्ध।
तुरीय कृष्णेर नाजि मायार सम्बन्ध ॥४३

तथाहि श्रीमद्भागवते ११।१५।१६ श्लोकस्य श्रीधर-स्वामीकृतटीकायाम् धृत श्लोक:—

विराट् हिरण्यगर्भश्च कारणञ्चेत्युपाधय:।
ईशस्य यत् त्रिभिर्हीनं तुरीयं तत् पदं विदु: ॥१०

टीका - विराट् हिरण्यगर्भ कारणं च एते ईशस्य उपाधय:। यत् त्रिभिर्हीनं करणं, तुरीयं तत् पदं विदु:—वदन्ति ॥१०

विराट् अर्थात् क्षीरोदशायी जीवान्तर्यामी, हिरण्यगर्भ अर्थात् गर्भोदशायी ब्रह्माण्डान्तर्यामी, एवं कारण, ये तीन ईश्वर की पुरुषावतार की उपाधि हैं।

जो ये उपाधित्रय हीन हैं, अर्थात् जो माया सम्पर्क विहीन हैं, उनको तुरीय चतुर्थ सद्वस्तु कहते हैं ॥१०

यद्यपि तिनेर माया लैया व्यवहार।
तथापि तत्स्पर्श नाहि सबे माया पार ॥४४

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।११।३८) शौनकादि प्रति सूतवाक्यम्—

एतदीशनमीशस्य प्रकृतिस्थोऽपि तद्गुणै:।
न युज्यते सदाऽऽत्मस्थैर्यथा बुद्धिस्तदाश्रया ॥११

टीका—ईशस्य एतत् ईशनं ऐश्वर्य्यं भवति। प्रकृतिस्थोपि तद्गुणै: प्रकृतेर्गुणैर्येन न युज्यते, यथा आत्मस्थैर्गुणै:, तदाश्रयापि बुद्धिस्तैर्न युज्यते ॥११

श्रीशौनक को सूत कहे थे—इसको हि ईश्वर का ईश्वरत्व कहते हैं, जिस प्रकार बुद्धि आत्मा को अवलम्बन कर अवस्थित होने पर भी आत्माके आनन्दादि गुणोंसे मण्डित नहीं होती है, उसी प्रकार ईश्वर मायाश्रित होने पर भी मायाके सुखदु:खादि गुणों से युक्त नहीं है ॥११

सेइ तिनजनेर तुमि परम आश्रय।
तुमि मूल नारायण इथे कि संशय ॥४५
सेइ तिनेर अंशी परव्योम नारायण।
तेँह तोमार विलास तुमि मूल कारण ॥४६
अतएव ब्रह्मवाक्ये परव्योम नारायण।
तेँह कृष्णेर विलास एइ तत्त्व निरूपण ॥४७
एइ श्लोकतत्त्व लक्षण भागवत सार।
परिभाषा-रूपे जिहार सर्वत्राधिकार ॥४८
ब्रह्म आत्मा भगवान् कृष्णेर विहार।
ए अर्थ ना जानि मूर्ख अर्थ करे आर ॥४९
अवतारी नारायण कृष्ण अवतार।
तेहँ चतुर्भुज इहँ मनुष्य आकार ॥५०
एइ मत नाना रूपे करे पूर्वपक्ष।
ताहाके निर्जिते भागवत पद्य दक्ष ॥५१

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।२।११)—

वदन्ति तत्तत्त्वविदस्तत्त्वं यज्ज्ञानमद्वयम्।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते ॥१२

तत्त्ववेत्तावृन्द उसी अद्वय तत्त्व ज्ञान वस्तु को ब्रह्म, परमात्मा, भगवान् शब्दसे कहते हैं ॥१२

शुन भाइ एइ श्लोकेर करह विचार।
एक मुख्य तत्त्व तिन ताहार प्रचार ॥५२
अद्वय ज्ञान तत्त्ववस्तु कृष्णेर स्वरूप।
ब्रह्म आत्मा भगवान् तिन ताँर रूप ॥५३
एइ श्लोकेर अर्थे तुमि हैला निर्वचन।
आर एक शुन भागवतेर वचन ॥५४

तत्रैव श्रीमद्भागवते (१।३।२८) शौनकादि प्रति सूत वाक्यम्—

एते चांशकला: पुंस: कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् ।
इन्द्रारिव्याकुलं लोकं मृड़यन्ति युगे युगे ॥१३

टीका- एते च पुंस: परमेश्वरस्य केचिदंशा: कला: विभूतयश्च । कृष्णस्तु स्वय साक्षात् भगवान् नारायण एव । यत: युगे युगे लोकं मृड़यन्ति सुखिनं कुर्वन्ति । किम्भूतं लोकम् ? इन्द्रारिव्याकुलं दैत्यैरुपद्रुतम् ॥१३

श्रीसूत शौनकादि मुनिवृन्द को कहे थे—ये सब अवतारवृन्द परमपुरुष—परमेश्वर के अंश कला हैं। किन्तु सर्वशक्तित्व निबन्धन श्रीकृष्णावतार ही साक्षात् भगवान् हैं। इसमें सन्देह नहीं है। ये सब युग युग में जगत्में अवतीर्ण होकर असुर पीड़ित मानवोंको उद्धार कर आनन्दित करते रहते हैं ॥१३

सर्व अवतारेर करि सामान्य लक्षण ।
तार मध्ये कृष्णचन्द्रेर करिल गणन ॥५५
तबे शुकदेव मने पाजा बड़ भय ।
यार ये लक्षण ताहा करिल निश्चय ॥५६
अवतार सब पुरुषेर कला अंश ।
स्वयं भगवान् कृष्ण सर्व अवतंस ॥५७
पूर्वपक्ष कहे तोमार भाल त व्याख्यान ।
परव्योम नारायण स्वयं भगवान् ॥५८
तेँह आसि कृष्णरूपे करेन अवतार ।
एइ अर्थ श्लोके देखि, कि आर विचार ॥५९
तारे कहे केने कर कुतर्कानुमान ।
शास्त्र विरुद्धार्थ कभु ना हय प्रमाण ॥६०

तथाहि काव्यप्रकाशालङ्कारे एकादशीतत्त्वे—

अनुवादमनुक्त्वा तु न विधेयमुदीरयेत् ।
नह्यलब्धास्पदं किञ्चित् कुत्रचित् प्रतितिष्ठति ॥१४

टीका—अनुवादं ज्ञातवस्तु, विधेयं अज्ञातवस्तु ॥१४

एकादशी तत्त्वमें उक्त है—उद्देश्य अर्थात् ज्ञात पदार्थको प्रकाशित न करके विधेय अर्थात् अज्ञात पदार्थ का उल्लेख न करे। कारण, जिसका ज्ञान पहले नहीं हुआ है, वह कहीं पर प्रतिष्ठित नहीं हो सकता है। अर्थात् उद्देश्य रूप अनुवाद का वर्णन न करके विधेय का निर्द्देश न करे। विधेय का आश्रय—अनुवाद है, आश्रय व्यतीत किसी भी वस्तु कहीं पर प्रतिष्ठित नहीं हो सकती है ॥१४॥

अनुवाद ना कहिया ना कहि विधेय ।
आगे अनुवाद कहि पश्चात् विधेय ॥६१
विधेय कहिये तारे ये वस्तु अज्ञात ।
अनुवाद कहि तारे येइ हय ज्ञात ॥६२
यैछे कहि एइ विप्र परम पण्डित ।
विप्र अनुवाद जिहा विधेय पाण्डित्य ॥६३
विप्रत्व विख्यात तार पाण्डित्व अज्ञात ।
अतएव विप्र आगे पाण्डित्य पश्चात ॥६४
तैछे जिहा अवतार सब हैला ज्ञात ।
कार अवतार एइ वस्तु अविज्ञात ॥६५
एते शब्दे अवतारेर आगे अनुवाद ।
पुरुषेर अंश पाछे विधेय सम्बाद ॥६६
तैछे कृष्ण अवतार भितरे हैल ज्ञात ।
ताहार विशेष ज्ञान सेइ अविज्ञात ॥६७
अतएव कृष्णशब्द आगे अनुवाद ।
स्वयं भगवत्त्व पिछे विधेय सम्बाद ॥६८
कृष्णेर स्वयं भगवत्त्व जिहा हैल साध्य ।
स्वयं भगवानेर कृष्णत्व हैल बाध्य ॥६९
कृष्ण यदि अंश हैत अंशी नारायण ।
तबे विपरीत हैत सूतेर वचन ॥७०
नारायण अंशी येइ स्वयं भगवान् ।
तिहोँ इ श्रीकृष्ण ऐछे करि त व्याख्यान ॥७१

भ्रम प्रमाद विप्रलिप्सा करणापाटव ।
आर्ष विज्ञ वाक्ये नाहि दोष एइ सब ॥७२
विरुद्धार्थ कह तुमि कहिते कर दोष ।
तोमार अर्थे अविमृष्ट विधेयांश दोष ॥७३
यार भगवत्ता हैते अन्येर भगवत्ता ।
स्वयं भगवान् शब्दे ताहातेइ सत्ता ॥७४
दीप हइते यैछे बहु दीपेर ज्वलन ।
मूल एक दीप ताहा करिये गणन ॥७५
तैछे सब भगवानेर कृष्ण से कारण ।
आर एक श्लोक शुन कुव्याख्या खण्डन ॥७६

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।१०।१) परीक्षितं प्रति शुकेन उक्तम्—

अत्र सर्गो विसर्गश्च स्थानं पोषणमूतयः ।
मन्वन्तरेशानुकथा निरोधो मुक्तिराश्रयः ॥१५॥

टीका—तत्र भागवते सर्गः, विसर्गः, स्थानं स्थितिः, पोषणं तदनुग्रहः, ऊतयः कर्मवासना, मन्वन्तराणि, ईशानुकथा, निरोधः, मुक्तिः, आश्रयः एते दृश्यन्ते ॥१५॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।१०।२) परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्—

दशमस्य विशुद्ध्यर्थं नवानामिह लक्षणम् ।
वर्णयन्ति महात्मानः श्रुतेनार्थेन चाञ्जसा ।१६॥

टीका—महात्मानः दशमस्य आश्रयस्य विशुद्ध्यर्थं तत्त्वज्ञानार्थं नवानां लक्षणं इह श्रुतेन श्रुत्यैव अञ्जसा साक्षात् वर्णयन्ति ॥१६॥

श्रीमद्भागवतमें सर्ग, विसर्ग, स्थान, पोषण, ऊति (कर्म वासना) मन्वन्तर, ईशानुकथा, निरोध, मुक्ति एवं आश्रय वर्णित है। आश्रय तत्त्वज्ञान हेतु सर्गादि नौ लक्षण का वर्णन मनीषिवृन्द श्रुतिके द्वारा एवं साक्षात् तथा तात्पर्यके द्वारा करते हैं ॥१५-१६

आश्रय जानिते कहि ए नव पदार्थ ।
ए नवेर उत्पत्ति हेतु सेइ आश्रयार्थ ॥७७
कृष्ण एक सर्वाश्रय कृष्ण सर्वधाम ।
कृष्णेर विग्रहे सर्व-विश्वेर विश्राम ॥७८

भावार्थदीपिकायां श्रीधरस्वामिनोक्तं (१०।१।१)—

दशमे दशमं लक्ष्यमाश्रिताश्रयविग्रहम् ।
श्रीकृष्णाख्यं परं धाम जगद्धाम नमामि तत् ॥१७

टीका—तत् कृष्णाख्यं परं धाम आश्रयं नमामि किम्भूतम्? दशमे दशमस्कन्धे दशमं लक्ष्यं निरूपितं नवानां आश्रयम्। पुनः किम्भूतम्? आश्रितानां आश्रयविग्रहम्। पुनः किम्भूतम्? जगतां धाम ॥१७॥

जिनका श्रीविग्रह, सङ्कर्षण प्रभृति आश्रित तत्त्वों का आश्रय है, जो स्वयं परम धाम हैं, एवं जगत् का आश्रय हैं, दशम स्कन्ध के लक्षण स्थानीय उन आश्रय पदार्थ रूप श्रीकृष्णको प्रणाम करता हूँ ॥१७॥

कृष्णेर स्वरूप आर शक्तित्रय ज्ञान ।
यार हय तार नाहि कृष्णेते अज्ञान ॥७९
कृष्ण स्वरूप हय षड् विध विलास ।
प्राभव वैभव रूपे द्विविध प्रकाश ॥८०
अंश शक्त्यावेश रूपे द्विविधावतार ।
बाल्य पौगण्ड धर्म दुइ त प्रकार ॥८१
किशोर स्वरूप कृष्ण स्वयं अवतारी ।
क्रीड़ा करे एइ छय रूपे विश्व भरि ॥८२
एइ छय रूपे हय अनन्त विभेद ।
अनन्त रूपेते एक नाहि किछु भेद ॥८३
चिच्छक्ति स्वरूपशक्ति अन्तरङ्गा नाम ।
ताहार वैभवानन्त वैकुण्ठादि धाम ॥८४
मायाशक्ति बहिरङ्गा जगत कारण ।
ताहार वैभवानन्त ब्रह्माण्डेर गण ॥८५
जीवशक्ति तटस्थाख्या नाहि यार अन्त ।
मुख्य तिन शक्ति तार विभेद अनन्त ॥८६

एइत स्वरूपगण आर तिन शक्ति ।
सवार आश्रय कृष्ण, कृष्णे सवार स्थिति ॥८७

यद्यपि ब्रह्माण्डगणेर पुरुष आश्रय ।
सेइ पुरुषादि सवार कृष्ण मूलाश्रय ॥८८

स्वयं भगवान् कृष्ण, कृष्ण सर्वाश्रय ।
परम ईश्वर कृष्ण सर्वशास्त्रे कय ॥८६

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (५।१)—

ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्दविग्रहः ।
अनादिरादिर्गोविन्दः सर्वकारणकारणम् ॥१८॥

टीका—ईश्वरादीनि कृष्णस्य विशेषणानि। कृष्ण एव विशेष्यः । सर्वोत्कर्षकत्वान कृष्णेति मुख्य नाम, अतएव ईश्वरः सववशयिता । अतएव परमः, परा सर्वोत्कृष्टा मा लक्ष्मीरूपा शक्तिर्यस्मिन् यस्माद्वा सः परमः । सर्वेषां कारणानां कारणम् । सच्चिदानन्द-विग्रह इति सच्चिदानन्दलक्षणो यो विग्रहस्तद्रूप इत्यर्थः ॥१८॥

ब्रह्मसहिता में लिखित हैं—श्रीकृष्ण परम ईश्वर हैं, सच्चिदानन्द विग्रह हैं, अनादि एवं आदि हैं, कारण—समस्त कारणों के कारण गोविन्द हैं ॥१८॥

ए सब सिद्धान्त तुमि जान भालमते ।
तबु पूर्वपक्ष कर आमा चालाइते ॥६०

सेइ कृष्ण अवतारी व्रजेन्द्रकुमार ।
आपनि चैतन्यरूपे कैल अवतार ॥६१

अतएव चैतन्यगोसाञि परतत्त्वसीमा ।
ताँरे क्षीरोदशायी कहि कि ताँर महिमा ॥६२

सेइ त भक्तेर वाक्य नहे व्यभिचारी ।
सकल सम्भवे ताँते याते अवतारी ॥६३

अवतारीर देहे सब अवतारेर स्थिति ।
केहो कोन रूपे कहे यार येन मति ॥६४

कृष्णके कहये केह नरनारायण ।
केहो कहे कृष्ण हय साक्षात् वामन ॥६५

केहो कहे कृष्ण क्षीरोदशायी अवतार ।
असम्भव नहे सत्य वचन सवार ॥६६

केहो कहे परव्योम नारायण करि ।
सकल सम्भवे कृष्णे याते अवतारी ॥६७

सब श्रोतागणेर करि चरण वन्दन ।
ए सब सिद्धान्त शुन करि एक मन ॥६८

सिद्धान्त वलिया चित्ते ना कर अलस ।
इहा हइते लागे कृष्णे सुदृढ़ मानस ॥६६

चैतन्यमहिमा जानि ए सब सिद्धान्ते ।
चित्त दृढ़ हञा लागे महिमा ज्ञान हैते ॥१००

चैतन्य प्रभुर महिमा कहिवार तरे ।
कृष्णेर महिमा कहि करिया विस्तारे ॥१०१

चैतन्यगोसाञिर एइ तत्त्व निरूपण ।
स्वयं भगवान् कृष्ण व्रजेन्द्रनन्दन ॥१०२

श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१०३

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे वस्तु-निर्देशमङ्गलाचरणे चैतन्यतत्त्वनिरूपणं नाम द्वितीयः परिच्छेदः ॥





तृतीय-परिच्छेद

श्रीचैतन्यप्रभुं वन्दे यत्पादाश्रयवीर्य्यतः ।
संगृह्णात्याकरव्रातावज्ञः सिद्धान्तसन्मणीन् ॥१

टीका—श्रीचैतन्यप्रभुमहं वन्दे। यत् यस्य चैतन्यस्य पादाश्रयवीर्य्यतः पादाश्रयप्रभावात् अज्ञो जनः सिद्धान्तसन्मणीन् सिद्धान्तरत्नान् संगृह्णाति। कस्मात्?—आकरव्रातात्; आकरः खनिः, व्रातः समूहस्तस्मात्। एतावता यथा रत्नखनितः उत्तम-रत्नान् अज्ञो जनः गृह्णाति, तथास्य पादाश्रयवीर्य्यतः प्रेमरत्नसिद्धान्तान् संगृह्णाति ॥१॥

श्रीकृष्णचैतन्यप्रभु की वन्दना करता हूँ, जिनके श्रीचरणाश्रय करने से अज्ञव्यक्ति भी शास्त्ररूप खनि समूह से सिद्धान्तस्वरूप उत्कृष्ट मणि समूह संग्रह करने में समर्थ होता है ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१

तृतीय श्लोकेर अर्थ कैल विवरण ।
चतुर्थ श्लोकेर अर्थ शुन भक्तगण ॥२

तथाहि विदग्धमाधवे (१।२)—

अनर्पितचरीं चिरात् करुणयावतीर्णः कलौ,
समर्पयितुमुन्नतोज्ज्वलरसां स्वभक्तिश्रियम् ।
हरिः पुरटसुन्दरद्युतिकदम्बसन्दीपितः,
सदा हृदयकन्दरे स्फुरतु वः शचीनन्दनः ॥२॥

चिरकाल जो वस्तु अदेय रही, वह है—उन्नत उज्ज्वल रस। अर्थात् मधुर रससिक्त निज प्रेम सम्पद वितरण करने के निमित्त करुणावशतः कलि युगमें जो अवतीर्ण हुये हैं। सुवर्णवत् कान्तिविशिष्ट वह शचीनन्दन गौरहरि तुम सबके हृदयकन्दर में देदीप्यमान हों ॥२॥

पूर्ण भगवान् कृष्ण व्रजेन्द्रकुमार ।
गोलोके व्रजेर सह नित्य विहार ॥३

ब्रह्मार एकदिने तिँहो एकवार ।
अवतीर्ण हञा करेन प्रकट विहार ॥४

सत्य त्रेता द्वापर कलि चारियुग जानि ।
सेइ चारि युगे एक दिव्य युग मानि ॥५

एकात्तर चतुर्युगे एक मन्वन्तर ।
चौद्द मन्वन्तर ब्रह्मार दिवस भितर ॥६

वैवस्वत नाम एइ सप्तम मन्वन्तर ।
साताइश चर्तुयुगे ताहार अन्तर ॥७

अष्टाविंश चर्तुयुगे द्वापरेर शेषे ।
व्रजेर सहिते हय कृष्णेर प्रकाशे ॥८

दास्य सख्य वात्सल्य शृङ्गार चारि रस ।
चारि भावे भक्त यत कृष्ण तार वश ॥९

दास सखा पिता माता कान्तागण लञा ।
व्रजे क्रीड़ा करे कृष्ण प्रेमाविष्ट हञा ॥१०

यथेष्ट विहरि कृष्ण करे अन्तर्द्धान ।
अन्तर्द्धान करि मने करे अनुमान ॥११

चिरकाल नाहि करि प्रेमभक्ति दान ।
भक्ति विना जगतेर नाहि अवस्थान ॥१२

सकल जगते मोरे करे विधिभक्ति ।
बिधिभक्त्येच व्रजभाव पाइते नाहि शक्ति ॥१३

ऐश्वर्य्य-ज्ञानेते सब जगत् मिश्रित ।
ऐश्वर्य्य-शिथिल-प्रेमे नाहि मोर प्रीत ॥१४

ऐश्वर्य्यज्ञाने बिधिमार्गे भजन करिया ।
वैकुण्ठेते याय चतुर्बिध मुक्ति पाञा ॥१५

सार्ष्टि सारूप्य आर सामीप्य सालोक्य ।
सायुज्य ना लय भक्त याते ब्रह्म-ऐक्य ॥१६

युगधर्म प्रवर्त्तिमु नाम संकीर्त्तन ।
चारि भावे भक्ति दिया नाचाईमु भुवन ॥१७

आपनि करिव भक्तभाव अङ्गीकारे ।
आपनि आचरि भक्ति शिखाइमु सवारे ॥१८

आपनि ना कैले धर्म शिखान ना याय ।
एइ त सिद्धान्त गीता भागवते गाय ॥१६

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (४।८) अर्जुनं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्—

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥३॥

टीका—साधूनां स्वधर्मनिरतानां परित्राणाय रक्षणाय, दुष्कृतां पापात्मनां विनाशाय वधाय, च एवं धर्मसंस्थापनाय धर्मस्य सस्थापनार्थं, युगे युगे तत्तदवसरे सम्भवामि ॥३॥

श्रीकृष्ण अर्जुनको कहे हैं—साधुवृन्दका परित्राण एवं दुर्ज्जनों का विनाश, तथा धर्मसंस्थापन हेतु युग युगमें मैं अवतीर्ण होता हूँ ॥३॥

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (३।२४) अर्जुनं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्—

उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्य्यां कर्म चेदहम् ।
सङ्करस्य च कर्त्ता स्यामुपहन्यामिमाः प्रजाः ॥४॥

टीका—चेत् यदि अहं कर्म न कुर्य्याम्, तर्हि इमे लोकाः उत्सीदेयुः, धर्मलोपेन नश्येयुः, अहञ्च सङ्करस्य वर्णसङ्करस्य कर्त्ता स्याम् भवेयम्; अहमेव इमाः प्रजाः उपहन्याम् मलिनीकुर्य्याम् ॥४॥

मैं कर्म न करने से ये सब लोकजगत् विनष्ट हो जायेंगे, मैं भी सङ्कर का कर्त्ता होकर प्रजा ध्वंसकारी बन जाऊंगा ॥४॥

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः ।
स यत् प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्त्तते ॥५॥

टीका—श्रेष्ठः यत् यत् आचरति, इतरो जनः तत् तत् एव आचरति, सः श्रेष्ठः कर्म शास्त्रं तन्निवृत्ति-शास्त्रं वा यत् प्रमाणं कुरुते मन्यते, लोकः तत् अनुवर्त्तते ॥५॥

श्रेष्ठ व्यक्ति के आचरण को देख कर ही अपर व्यक्ति आचरण करता है, श्रेष्ठ व्यक्ति जिसको प्रमाणरूपमें स्थापन करता है, अपर व्यक्ति उसीका अनुसरण करता है ॥५॥

युगधर्म प्रवर्त्तन हय अंश हैते ।
आमा विना अन्ये नारे व्रजप्रेम दिते ॥२०

तथाहि लघुभागवतामृते ६३ अङ्कधृतश्लोकः—

सन्त्ववतारा बहवः पङ्कजनाभस्य सर्वतोभद्राः ।
कृष्णादन्यः को वा लतास्वपि प्रेमदो भवति ॥६॥

टीका—पङ्कजनाभस्य अवतारा बहवः सन्तु, तेषु मध्येषु कृष्णात् अन्यः को वा लतासु बालभावेषु प्रेमदो भवति ? न कोपीत्यर्थः ॥६॥

पद्मनाभ श्रीकृष्ण के सर्वकल्याणकर अनेक अवतार विद्यमान होने पर भी श्रीकृष्ण व्यतीत अपर कौन है—जो लताको भी प्रेमदान करने में समर्थ हैं ॥६॥

ताहाते आपन भक्तगण करि सङ्गे ।
पृथिवीते अवतरि करिव नाना रङ्गे ॥२१

एत भावि कलिकाले प्रथम सन्ध्याय ।
अवतीर्ण हैला कृष्ण आपनि नदीयाय ॥२२

चैतन्य सिंहेर नवद्वीपे अवतार ।
सिंहग्रीव सिंहवीर्य्य सिंहेर हुङ्कार ॥२३

सेइ सिंह वसुक जीवेर हृदय-कन्दरे ।
कल्मष-द्विरद नाश याँहार हुङ्कारे ॥२४

प्रथम लीलाय ताँर विश्वम्भर नाम ।
भक्तिरसे भरिल धरिल भूतग्राम ॥२५॥

डुभृञ् धातुर अर्थ धारण पोषण ।
धरिल पोषिल प्रेम दिया त्रिभुवन ॥२६

शेष लीलाय नाम धरे श्रीकृष्णचैतन्य ।
कृष्ण जानाइया सब विश्व कैल धन्य ॥२७

ताँर युगावतार जानि गर्ग महाशय ।
कृष्णेर नामकरणे करियाछे निर्णय ॥२८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८।१३)—

आसन् वर्णास्त्रयो ह्यस्य गृह्णतोऽनुयुगं तनुः ।
शुक्लो रक्तस्तथा पीत इदानीं कृष्णतां गतः ॥७॥

टीका—अनुयुगं तनूर्गृह्णतस्तव पुत्रस्य युगे युगे तनुधारिणो वर्णास्त्रय आसन् अभवन् । शुक्लो रक्तश्च यथा बभूव, तथा पीतो पीतवर्णो भविष्यति । इदानीं साम्प्रतं द्वापरे कृष्णत्वं श्यामत्वं गतः ॥७॥

गर्गाचार्य्य नन्द को कहे थे—तुम्हारे यह पुत्र प्रति युगमें ही शरीर धारण करते रहते हैं। शुक्ल, रक्त एवं पीत वर्ण उनके अतीत हो गये हैं, अधुना कृष्णत्व प्राप्त हुये हैं, सुतरां उनका कृष्ण नाम हुआ ॥७॥

शुक्ल रक्त पीत वर्ण एइ तिन दुचति ।
सत्य त्रेता कलिकाले धरेन श्रीपति ॥२९
इदानी द्वापरे तिहोँ हैला कृष्णवर्ण ।
एइ सब शास्त्रागम पुराणेर मर्म ॥३०

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।५।२७)—

द्वापरे भगवान् श्यामः पीतवासा निजायुधः ।
श्रीवत्सादिभिरङ्कैश्च लक्षणैरुपलक्षितः ॥८॥

टीका—द्वापरे द्वापरयुगे भगवान् श्यामः अतसी-कुसुमसङ्काशः, निजायुधः निजानि चक्रादीनि आयुधानि यस्य सः, श्रीवत्सादिभिः अङ्कैश्च लक्षणैः उपलक्षितः । श्रीवत्सो नाम वक्षसो दक्षिणे भागे रोम्नां प्रदक्षिणावर्त्तः स आदिर्येषां, करचरणादिगत-तैरङ्कैरङ्कितैश्चिह्नैर्लक्षणैर्वाह्यैः कौस्तुभादिभिः पताकादिभिश्च उपलक्षितः ॥८॥

भगवान् द्वापर युगमें श्यामवर्ण, अर्थात् अतसी कुसुम के तुल्य, पीताम्बर, निजायुधधारी, श्रीवत्स लाञ्छित एवं कौस्तुभ शोभित होकर अवतीर्ण होते हैं ॥८॥

कलियुगे युगधर्म नामेर प्रचार ।
तथि लागि पीतवर्ण चैतन्यावतार ॥३१
तप्तहेम सम कान्ति प्रकाण्ड-शरीर ।
नवमेघ जिनि कण्ठध्वनि ये गम्भीर ॥३२
दैर्घ्ये विस्तारे येइ आपनार हाते ।
चारि हस्त हय महापुरुष विख्याते ॥३३
न्यग्रोधपरिमण्डल हय तार नाम ।
न्यग्रोधपरिमण्डल तनु चैतन्य गुणधाम ॥३४
आजानुलम्बित भुज कमललोचन ।
तिल फुल सम नासा सुधांशुवदन ॥३५
शान्त दान्त निष्ठा कृष्ण-भक्तिपरायण ।
भक्तवत्सल सुशील सर्वभूते सम ॥३६
चन्दनेर अङ्गद बाला चन्दन भूषण ।
नृत्यकाले परि करे कृष्णसङ्कीर्त्तन ॥३७
एइ सब गुण लैया मुनि वैशम्पायन ।
सहस्र नामे कैल ताँर नाम गणन ॥३८
दुइ लीला चैतन्येर आदि आर शेष ।
दुइ लीलाय चारि चारि नाम विशेष ॥३९

तथाहि महाभारते दानधर्मे १४९ सर्गे सहस्रनाम-स्तोत्रे—

सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी ।
सन्न्यासकृच्छमः शान्तो निष्ठाशान्तिपरायणः ॥९

टीका—स श्रीकृष्णचैतन्यः किम्भूतः? सुवर्ण-वर्णः, सुवर्णमिव वर्णो यस्य सः । हेमो जाम्बुनद इव अङ्गं यस्य सः । पुनः किम्भूतः? वराङ्गः । चन्दनाङ्गदी आह्लादजनककेयूरयुक्तः । सन्न्यासकृत् मोक्षाश्रमं चतुर्थं कृतवान् । शमः शमभावः । शान्तः निष्ठाशान्तिपरायणः ॥९॥

सुवर्णवर्ण, हेमाङ्ग, वराङ्ग चन्दनाङ्गदी, सन्न्यासकृत्, शम, शान्त—निष्ठाशान्ति, परायण,

अर्थात् जो कृष्णकथाश्रयी जिनकी कान्ति सुवर्णसदृश, चन्दन जिनके बाहुभूषण एवं सन्न्यासी, स्थिरचित्त दृढ़निष्ठ एवं शान्ति परायण हैं, आप स्वयं श्रीकृष्ण हैं। श्रुतिमें उनका वर्णन ही हिरण्मय पुरुष एवं आनन्दस्वरूप ब्रह्म नाम से है ॥६॥

व्यक्त करि भागवते कहे आर वार।
कलियुगे युगधर्म नामसङ्कीर्त्तन सार ॥४०

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।५।३२)—

कृष्णवर्णं त्विषाकृष्णं साङ्गोपाङ्गास्त्र-पार्षदम्।
यज्ञैः सङ्कीर्त्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः ॥१०॥

टीका—सुमेधसो विवेकिनः पण्डिताः सङ्कीर्त्तन-प्रायैः सङ्कीर्त्तनमहोत्सवैः यज्ञैः साङ्गोपाङ्गास्त्रपार्षदं त्विषा अकृष्णं हि निश्चितं यजन्ति। त्विषा कान्त्या अकृष्णं गौरमित्यर्थः ॥१०॥

श्रीमद्भागवत के एकादश स्कन्धमें उक्त है—जिनके मुखमें कृष्णनाम शोभित है, जिनका वर्ण गौर है, अङ्ग एवं उपाङ्गरूप अस्त्र एवं पार्षद नियत ही जिनमें विद्यमान हैं, उनकी अर्चना पण्डितगण सङ्कीर्त्तन प्रमुख उपकरण के द्वारा करते हैं ॥१०॥

शुन भाइ! एइ सब चैतन्य महिमा।
एइ श्लोके कहे ताँर महिमार सीमा ॥४१
'कृष्ण' एइ दुइ वर्ण सदा याँर मुखे।
अथवा कृष्णके तेँहो वर्णे निज सुखे ॥४२
कृष्णवर्ण-शब्देर अर्थ दुइ त प्रमाण।
कृष्ण विनु ताँर मुखे नाहि आइसे आन ॥४३
केहो ताँरे बोले यदि 'कृष्णवरण'।
आर विशेषणे तार करे निवारण ॥४४
देहकान्त्ये हय तेँह अकृष्णवरण।
अकृष्णवरणे कहे से पीत-वरण ॥४५

तथाहि श्रीचैतन्यदेवस्य स्तवमालायाम् (२।१)—

कलौ यं विद्वांसः स्फुटमभियजन्ते द्युतिभरा-
दकृष्णाङ्गं कृष्णं मखविधिभिरुत्कीर्त्तनमयैः।
उपास्यञ्च प्राहुर्यमखिलचतुर्थाश्रमजुषां
स देवश्चैतन्याकृतिरतितरां नः कृपयतु ॥११॥

टीका-कलौ कलियुगे विद्वांसः पण्डिताः यं कृष्णं स्फुटं यथा स्यात्तथा उत्कीर्त्तनमयैर्मखविधि-र्यज्ञैरभियजन्ते। कृष्णं कथम्भूतम्? द्युतिभरात् कान्त्यतिशयात् अकृष्णाङ्गं गौरकान्तिम्। पुनः कथम्भूतम्? अखिलचतुर्थाश्रमजुषां सन्न्यासिनां यं चैतन्यं उपास्यञ्च पण्डिताः प्राहुः, स देवश्चैतन्याकृति-रतितरां अतिशयेन नोऽस्मान् कृपयतु कृपां करोतु ॥११

चिर प्रसिद्ध श्रीकृष्णचैतन्य देव हम सबके प्रति अतिशय कृपा करें। ज्योतिःपुञ्ज से अत्युज्ज्वल देह अकृष्ण होकर भी आप स्वयं कृष्ण हैं। समस्त न्यासिवृन्द के उपास्य भी आप हैं, एवं कलियुगमें ज्ञानिवृन्द उच्च सङ्कीर्त्तनमय सम्भार के द्वारा आपकी अर्चन भी करते रहते हैं ॥११॥

प्रत्यक्ष ताहार तप्त काञ्चनेर द्युति।
याहार-छटाय नाशे अज्ञान-तमस्तुति ॥४६
जीवेर कल्मष-तमो नाश करिवारे।
अङ्ग-उपाङ्ग नाम नाना अस्त्र धरे ॥४७
भक्तिर विरोधी—कर्म-धर्म वा अधर्म।
ताहार 'कल्मष' नाम—सेइ महातम ॥४८
बाहु तुलि 'हरि' वलि प्रेमदृष्टे चाय।
करिया कल्मष-नाश प्रेमेते भासाय ॥४९

तथाहि श्रीचैतन्यदेवस्य स्तवमालायाम् (२।८)—

स्मितालोकः शोकं हरति जगतां यस्य परितो
गिरान्तु प्रारम्भः कुशलपटलीं पल्लवयति।
पदालम्भः कं वा प्रणयति न हि प्रेमनिवहं
स देवश्चैतन्याकृतिरतितरां नः कृपयतु ॥१२॥

टीका—यस्य चैतन्यस्य सस्मितालोकः हास्या-वलोकः जगतां शोकं हरति, यस्य चैतन्यस्य गिरां वाणीनां प्रारम्भः जगतां कुशलपटलीं मङ्गलसमूहं पल्लवयति विस्तारयति, यस्य पदालम्भः प्रेमनिवहं

हि निश्चितं न प्रणयति न प्रापयति, अपि तु प्रापयतीत्यर्थः। स देवश्चैतन्याकृतिरतितरां अतिशयेन नोऽस्मान् कृपयतु ॥१२॥

जिनकी स्मित दृष्टि जगतवासी के समस्त शोक विदूरित करती है, जिनकी चरित्रकथा जगत्में पारस्परिक सौहार्द्य प्रदान करती है, जिनके चरणाश्रय करनेसे प्रेम लाभ होता है, वह श्रीचैतन्य देव हम सबके प्रति अतिशय कृपा विस्तार करें ॥१२

श्रीअङ्ग श्रीमुख येइ करे दरशन।
तार पाप क्षय हय, पाय प्रेमधन ॥५०
अन्य अवतारे सब सैन्य-शस्त्र सङ्गे।
चैतन्यकृष्णेर सैन्य अङ्ग-उपाङ्गे ॥५१

तथाहि अङ्गोपाङ्गानामत्रावतारत्वं श्रीरूपगोस्वामिभिरपि स्तवमालायां निरूपितमस्ति (१।१)—

सदोपास्यः श्रीमान् धृतमनुजकायैः प्रणयितां
वहद्भिर्गीर्वाणैर्गिरिशपरमेष्ठि-प्रभृतिभिः।
स्वभक्तेभ्यः शुद्धां निजभजनमुद्रामुपदिशन्
स चैतन्यः किं मे पुनरपि दृशोर्यास्यति पदम् ॥१३॥

टीका—स चैतन्य मम दृशोः पदं स्थानं पुनरपि किं यास्यति? किमित्यलक्ष्य एवानुतापः। अत्र तद्शब्दात् यः पुरा दृशोः पदं यास्यति गत एवासीत् सेति साकाङ्क्षम्। यद्वा, तच्छब्दस्य प्रसिद्ध-परामर्शकत्वात्। सः कीदृशः? महादेवब्रह्मादिभि र्देवैः सदा उपास्यः। ते देवाः सदा यदुपासका इत्यर्थः। अहन्तु तत्र को वराक इति भावः इति भावः। तैः कीदृशैः? प्रणयितां प्रणयं प्रेमपरिणाम-विशेषं वहद्भिर्धारयद्भिः। ननु तैस्तत्तदवस्थैस्तत् प्रकाशकः श्रीकृष्ण एव उपास्यते इत्याह—धृतमनुज-कायैः धृतमनुष्यशरीरैः सद्भिरित्यर्थः। स चैतन्यः पुनः कीदृशः? स्वभक्तेभ्यः प्रकाशान्तरेणासाधारण-भक्तेभ्यः शुद्धां ज्ञानकर्माद्यनावृतां निजस्य भक्ति-परिपाटीं उपदिशन् शिक्षयन्, अत्र वर्त्तमाननिर्देशेन तदवस्थ एव नवद्वीपादौ विराजते इति व्यज्यते ॥१३

शिव, ब्रह्मा प्रभृति देवगण मनुष्यदेह धारण कर सर्वदा जिनकी उपासना करते हैं, एवं निज भक्तवृन्द को भक्तियोग वितरण करते हैं, वह श्रीचैतन्यदेव क्या मदीय दृष्टिगोचर पुनर्बार होंगे? १३॥

अङ्गोपाङ्ग अस्त्र करे स्वकार्य्य साधन।
'अङ्ग'-शब्देर अर्थ आर शुन दिया मन ॥५२
'अङ्ग' शब्दे अंश कहे शास्त्र-परमाण।
अङ्गेर अवयव 'उपाङ्ग' व्याख्यान ॥५३

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१४।१४)—

नारायणस्त्वं न हि सर्वदेहिना-
मात्मास्यधीशाखिललोकसाक्षी।
नारायणोऽङ्गं नरभूजलायना-
त्तच्चापि सत्यं न तवैव माया ॥१४॥

ब्रह्मा श्रीकृष्ण को कहे थे—जब तुम समस्त जीवों की आत्मा हो, तब क्या तुम नारायण नहीं हो? नार शब्द का जीवसमूह है, अयन शब्द का अर्थ आश्रय है। जो जीवसमूह का आश्रय है, वही नारायण—परमात्मा है। अतएव तुम परमात्मा होने के कारण—नारायण हो, जो समस्त लोकों को जानते हैं, वा साक्षात् देखते हैं, उनको नारायण कहा जाता है। जीवों के हृदयमें एवं जलमें जो रहते हैं, वह प्रसिद्ध नारायण तुम्हारे अंश अर्थात् मूर्त्ति विशेष हैं। तुमसे वह भिन्न नहीं हैं, तुम्हारी लीला सत्य है, तुम्हारे वह नारायणरूप सत्य है, मायिक नहीं है ॥१४॥

जलशायी अन्तर्य्यामी येइ नारायण।
सेहो तोमार अंश, तुमि मूल नारायण ॥५४

'अङ्ग' शब्दे अंश कहे, सेहो सत्य हय।
मायार कार्य्य नहे,—सब चिदानन्दमय ॥५५

अद्वैत नित्यानन्द चैतन्येर दुइ अङ्ग।
अङ्गेर अवयवगणे कहिये उपाङ्ग ॥५६

अङ्गोपाङ्ग तीक्ष्ण अस्त्र प्रभुर सहिते ।
सेइ सब अस्त्र हय पाषण्ड दलिते ॥५७
नित्यानन्द गोसाञि साक्षात् हलधर ।
अद्वैत आचार्य्य गोसाञि साक्षात ईश्वर ॥५८
श्रीवासादि पारिषद सैन्य सङ्गे लञा ।
दुइ सेनापति बुले कीर्त्तन करिया ॥५९
पाषण्डदलन वाना नित्यानन्द राय ।
अद्वैतहुङ्कारे पापपाषण्डी पलाय ॥६०
सङ्कीर्त्तनप्रवर्त्तक श्रीकृष्णचैतन्य ।
सङ्कीर्त्तनयज्ञे ताँरे भजे सेइ धन्य ॥६१
सेइ त सुमेधा आर कुबुद्धि संसार ।
सर्व यज्ञ हैते कृष्णनामयज्ञ सार ॥६२
कोटि अश्वमेध एक कृष्णनाम सम ।
येइ कहे से पाषण्डी दण्डे तारे यम ॥६३
भागवत-सन्दर्भ ग्रन्थेर मङ्गलाचरणे ।
एइ श्लोक जीवगोसाञि करियाछेन व्याख्याने ॥

तथाहि भागवतसन्दर्भे मङ्गलाचरणे (२)—

**अन्तःकृष्णं बहिर्गौरं दर्शिताङ्गादिवैभवम् ।
कलौ सङ्कीर्त्तनाद्यैः स्मः कृष्णचैतन्यमाश्रिताः ॥१५॥**

टीका—कलौ कलियुगे सर्वे जनाः कृष्णचैतन्यमाश्रिताः स्युः । कैः साधनैः ? सङ्कीर्त्तनाद्यैः । अन्तः कृष्णं, वहिर्गौरं दर्शिताङ्गादिवैभवं दर्शितमङ्गादिवैभवं येन स तम् ॥१५॥

जो अन्तरमें कृष्ण हैं, एवं बाहर गौर हैं, जिनकी महिमा अन्तरङ्ग भक्तवृन्दमें सुप्रकाशित है, उन श्रीकृष्णचैतन्यदेव का भजन सङ्कीर्त्तन यज्ञ के द्वारा हम सब करते हैं ॥१५॥

उपपुराणे शुनियाछि श्रीकृष्णवचन ।
कृपा करि व्यास-प्रति कहियाछेन कथन ॥६५

तथाहि उपपुराणे—

**अहमेव क्वचिद्ब्रह्मन् सन्न्यासाश्रममाश्रितः ।
हरिभक्तिं ग्राहयामि कलौ पापहतान्नरान् ॥१६॥**

टीका— हे ब्रह्मन् ! अहमेव कलौ कलियुगमध्ये, क्वचित् कदापि समये, सन्न्यासाश्रममाश्रितः सन्न्यासधर्ममाश्रितः सन् हरिभक्तिग्रहणं कारयामि । किम्भूतान् ? पापहतान् ॥१६॥

हे ब्रह्मन् ! कलियुगमें सन्न्यास ग्रहण कर मैं ही पापहत मनुष्यों को कलियुगमें हरिभक्ति प्रदान करूँगा ॥१६॥

भागवत भारत शास्त्र आगम पुराण ।
चैतन्यकृष्ण अवतार प्रकट प्रमाण ॥६६
प्रत्यक्ष देखह नाना प्रकट प्रभाव ।
अलौकिक कर्म अलौकिक अनुभाव ॥६७
देखिया ना देखे यत अभक्तेर गण ।
उलूके ना देखे येन सूर्य्येर किरण ॥६८

तथाहि यामुनाचार्यस्तोत्रे—

**त्वां शीलरूपचरितैः परमप्रकृष्टैः
सत्त्वेन सात्त्विकतया प्रबलैश्च शास्त्रैः ।
प्रख्यातदैवपरमार्थविदां मतैश्च
नैवासुरप्रकृतयः प्रभवन्ति बोद्धुम् ॥१७**

टीका—हे ईश्वर ! जनास्त्वां बोद्धुं ज्ञातुं प्रभवन्ति योग्या भवन्ति । कैः लक्षणैः ? तव शीलरूपचरितैः, सत्त्वेन सत्त्वगुणेन, सात्त्विकतया सात्त्विकभावेन, प्रबलैश्च शास्त्रैः परमार्थविदां मतैः । त्वां किम्भूतम् ? परमप्रहृष्टम् । तथा आसुरप्रकृतयः असुरस्वभावा ये, ते बोद्धुं ज्ञातुं न प्रभवन्ति, न समर्था भवन्ति ॥१७॥

तुम्हारे अत्युत्कृष्ट बल, स्वभाव, रूप एवं चरित्र को देखकर भी एवं अति निर्मल दृढ़ शास्त्रादि अध्ययन करके भी प्रख्यात परमार्थवेत्ताओं के मत को सुनकर भी असुर प्रकृति के व्यक्तिगण तुमको जान नहीं सकते हैं ॥१७॥

आपना लुकाइते प्रभु नाना यत्न करे।
तथापि ताँहार भक्त जानये ताँहारे ॥६९

तथाहि यामुनाचार्यस्तोत्रे (१८)—

उल्लङ्घितत्रिविधसीमसमातिशायि
सम्भावनं तव परिव्रढ़िमस्वभावम्।
मायाबलेन भवतापि निगुह्यमानं
पश्यन्ति केचिदनिशं त्वदनन्यभावाः ॥१८

टीका—हे ईश्वर ! तव सम्भावनं इयत्ता-परिमाणं केचिद्विरला जनाः त्वयि अनन्यभावाः पश्यन्ति। सम्भावनं किम्भूतम्? मायाबलेन भवता त्वया निगुह्यमानं गोपनीयम्। पुनः किम्भूतम्? उल्लङ्घितत्रिविधसीमसमातिशायि, उल्लङ्घितस्त्रैकालिकसीमा येन, अतएव आतिशायि सर्वातिशायित्वम्। तदपि कुतः? यतः व्रढ़िमस्वभावं अपरिमितस्वभावं स्वभावेन दुर्बोध्यम् ॥१८॥

तुम्हारा स्वरूप असीम है, देश-काल-पात्रातीत है, तुम्हारे समान भी कोई नहीं है, श्रेष्ठ भी कोई नहीं है, इस स्वरूप को निज शक्ति से गोपन करके रखते हो, तथापि भक्तवृन्द अविरत तुम्हारा ध्यान करके इस स्वरूप को सर्वदा अनुभव करते हैं ॥१८॥

असुर-स्वभावे कृष्णे कभु नाहि जाने।
लुकाइते नारे कृष्ण भक्तजनस्थाने ॥७०

तथाहि पाद्मे—

द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन् दैव आसुर एव च।
विष्णुभक्तः स्मृतो दैव आसुरस्तद्विपर्ययः ॥१९॥

टीका—अस्मिन् लोके द्वौ भूतसर्गौ। एको दैव आसुर एव च। विष्णुभक्तो दैव, आसुरस्तद्विपर्ययः भक्तिरहितः ॥१९॥

इस जगत्में द्विविध जीव हैं। एक दैव एवं अपर आसुरिक भाव सम्पन्न है। विष्णुभक्त जीवको दैव कहते हैं, एवं विष्णुभक्ति हीन जीव को आसुरिक भाव सम्पन्न कहते हैं ॥१९॥

आचार्य्य गोसाञि प्रभुर भक्त-अवतार।
कृष्ण अवतार हेतु याँहार हुङ्कार ॥७१
कृष्ण यदि पृथिवीते करेन अवतार।
प्रथमेइ करेन गुरुवर्गेर सञ्चार ॥७२
पिता माता गुरु आदि यत मान्यगण।
प्रथमे करेन सवार पृथिवीते जनम ॥७३
माधव ईश्वरपुरी शची जगन्नाथ।
अद्वैत आचार्य्य प्रकट हैला सेइ साथ ॥७४
प्रकटिया देखे आचार्य्य सकल संसार।
कृष्णभक्तिगन्धहीन विषयव्यवहार ॥७५
केह पापे केह पुण्ये करे विषयभोग।
भक्तिगन्ध नाहि याते याय भवरोग ॥७६
लोकगति देखि आचार्य्य करुण-हृदय।
विचार करेन लोकेर कैछे हित हय ॥७७
आपने श्रीकृष्ण यदि करेन अवतार।
आपने आचरि भक्ति करेन प्रचार ॥७८
नाम विनु कलिकाले धर्म नाहि आर।
कलिकाले कैछे हवे कृष्ण अवतार ॥७९
शुद्धभावे करिव कृष्णेर आराधन।
निरन्तर सदैन्ये करिव निवेदन ॥८०
आनिया कृष्णेर करों कीर्त्तनसञ्चार।
तवे से अद्वैत नाम सफल आमार ॥८१
कृष्ण वश करिवेन कोन् आराधने।
विचारिते एक श्लोक आइल ताँर मने ॥८२

तथाहि हरिभक्तिविलासस्य एकादशविलासे दशाधि[क]शताङ्कधृतं गौतमीयतन्त्रे नारदवचनम्—

तुलसीदलमात्रेण जलस्य चुलुकेन वा।
विक्रीणीते स्वमात्मानं भक्तेभ्यो भक्तवत्सलः ॥२

टीका—स एव भक्तवत्सलो भवति, अन्यो न।

यः कृष्णः भक्तेभ्य आत्मानं विक्रीणीते। केन मूल्येन ? तुलसीदलमात्रेण, जलस्य चुलुकेन वा ।।२०

एकमात्र तुलसीपत्र अथवा एक गण्डूष जल प्रदान करने से ही भक्तवत्सल भगवान् भक्तके निकट आत्मविक्रय करते हैं ।।२०।।

एइ श्लोकार्थ आचार्य्य करेन विचारण।
कृष्णके तुलसी जल देय येइ जन ।।८३
तार ऋण शोधिते कृष्ण करेन चिन्तन।
जल तुलसीर सम किछु नाहि आर धन ।।८४
तवे आत्मा वेचि करे ऋणेर शोधन।
एत भावि आचार्य्य करेन सेइ आराधन ।।८५
गङ्गाजल तुलसीमञ्जरी अनुक्षण।
कृष्णेर चरण भावि करे समर्पण ।।८६
कृष्णेर आह्वान करे करिया हुङ्कार।
ए मते कृष्णेरे कराइल अवतार ।।८७
चैतन्येर अवतारे एइ मुख्य हेतु।
भक्तेर इच्छाय अवतार धर्मसेतु ।।८८

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।९।११)—

त्वं भक्तियोगपरिभावितहृत्सरोज-
आस्से श्रुतेक्षितपथो ननु नाथ पुंसाम्।
यद्यद्धिया त उरुगाय विभावयन्ति
तत्तद्वपुः प्रणयसे सदनुग्रहाय ।।२१।।

टीका—ननु भो, हे नाथ ! त्वं पुंसां पुरुषाणां श्रुतेक्षितपथः श्रुतिद्वारे दर्शनपथो यस्य। तेषां पुरुषाणां मध्ये ये भक्तास्तेषां भक्तियोगपरिभावित-हृत्सरो आस्से। अतएव उरुगाय, ते तव भक्ता धिया बुद्धया यद्वत् वपुर्विभावयन्ति तत्तत् वपुः शरीरं प्रणयसे प्राप्नोषि। सतां अनुग्रहाय निमित्ताय साधूनां तवानुग्रहः अस्तीति ।।२१।।

तुम भक्तके प्रेम निर्मल हृदयकमल में निवास करते हो। वेद प्रभृति शास्त्र श्रवण करने पर भी तुम उपलब्ध नहीं होते हो, किन्तु भक्तवृन्द जिस जिस भाव से तुम्हारा ध्यान करते हैं, परम करुण तुम उस उस रूपसे ही उन सबके निकट प्रकाशित होते हो ।।२१।।

एइ श्लोकेर अर्थ कहि संक्षेप सार।
भक्तेर इच्छाय कृष्णेर सर्व अवतार ।।८९
चतुर्थ श्लोकेर अर्थ हैल सुनिश्चिते।
अवतीर्ण हैला गौर प्रेम प्रकाशिते ।।९०
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ।।९१

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे आशीर्वाद-मङ्गलाचरणे चैतन्यावतारसामान्यकारणं नाम तृतीयः परिच्छेदः।





चतुर्थ-परिच्छेद

श्रीचैतन्यप्रसादेन तद्रूपस्य विनिर्णयम् ।
बालोऽपि कुरुते शास्त्रं दृष्ट्वा व्रजविलासिनः ॥१

टीका—श्रीचैतन्यप्रसादेन बालोऽपि अज्ञोऽपि तद्रूपस्य तस्य रूपस्य विनिर्णयं कुरुते । किं कृत्वा ? शास्त्रं दृष्ट्वा । तद्रूपस्य व्रजविलासिनः, व्रजे विलासं कर्त्तुं शीलं यस्य स तस्य ॥१॥

श्रीकृष्णचैतन्यदेव के अनुग्रह से व्रजविलासी श्रीकृष्ण रूप श्रीगौराङ्गदेव के तत्त्व निर्णय करनेमें अतिशय अज्ञ बालक भी समर्थ हो सकता है ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
चतुर्थ श्लोकेर अर्थ कैल विवरण ।
पञ्चम श्लोकेर अर्थ शुन भक्तगण ॥२
मूल श्लोकेर अर्थ करिते प्रकाश ।
अर्थ लागाइते आगे कहि ये आभाष ॥३
चतुर्थ श्लोकेर अर्थ एइ कैल सार ।
प्रेम नाम प्रचारिते एइ अवतार ॥४
सत्य एइ हेतु किन्तु एहो बहिरङ्ग ।
आर एक हेतु शुन आछे अन्तरङ्ग ॥५
पूर्वे येन पृथिवीर भार हरिबारे ।
कृष्ण अवतीर्ण हैला शास्त्रेर प्रचारे ॥६
स्वयं भगवानेर कर्म नहे भार हरण ।
स्थितिकर्त्ता विष्णु करे जगत् पालन ॥७
किन्तु कृष्णेर हय सेइ अवतार काल ।
भार हरण काले ताते हइल मिशाल ॥८
पूर्ण भगवान् अवतरे येइ काले ।
आर सब अवतार ताते आसि मिले ॥९
नारायण चतुर्व्यूह मत्स्याद्यवतार ।
युगमन्वन्तरावतार यत आछे आर ॥१०
सबे आसि कृष्ण अङ्गे हय अवतीर्ण ।
ऐछे अवतारे कृष्ण भगवान् पूर्ण ॥११
अतएव विष्णु तखन कृष्णेर शरीरे ।
विष्णुद्वारे करे कृष्ण असुर संहारे ॥१२
आनुषङ्ग कर्म एइ असुर मारण ।
ये लागि अवतार कहि से मूल कारण ॥१३
प्रेम रस निर्यास करिते आस्वादन ।
रागमार्ग भक्ति लोके करिते प्रचारण ॥१४
रसिक-शेखर कृष्ण परम करुण ।
एइ दुइ हेतु दुइ इच्छार उद्गम ॥१५
ऐश्वर्य्य ज्ञानेते सर्वजगत मिश्रित ।
ऐश्वर्य्य शिथिल प्रेमे नाहि मोर प्रीत ॥१६
आमाके ईश्वर माने आपनाके हीन ।
तार प्रेमे वश आमि ना हइ अधीन ॥१७
आमाके त ये ये भक्त भजे ये ये भावे ।
तारे से से भावे भजि ए मोर स्वभावे ॥१८

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (४।११)—

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।
मम वर्त्मानुवर्त्तन्ते मनुष्याः पार्थ ! सर्वशः ॥२॥

टीका—ये यथा येन प्रकारेण सकामतया निष्कामतया या मां प्रपद्यन्ते भजन्ति, तान् अहं तथैव तदपेक्षितफलदानेन भजामि अनुगृह्णामि । हे पार्थ ! यतः मनुष्याः सर्वशः मम वर्त्म भजनमार्गं अनुवर्त्तन्ते ॥२॥

हे अर्जुन ! जो जिस भावसे भजन करता है, मैं उसको उस भावसे ही अनुग्रह करता हूँ । समस्त भावों से ही मनुष्य मेरा भजन कर सकता है ॥२॥

मोर पुत्र मोर सखा मोर प्राणपति ।
एइ भावे येइ मोरे करे शुद्धरति ॥१९
आपनाके बड़ माने आमाके सम हीन ।
सर्वभावे हइ आमि ताहार अधीन ॥२०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८२।४५)—

मयि भक्तिर्हि भूतानाममृतत्वाय कल्पते ।
दिष्ट्या यदासीन्मत्स्नेहो भवतीनां मदापनः ॥३॥

टीका—भूतानां सर्वप्राणिनां हि निश्चितं मयि विषये भक्तिः अमृतत्वाय मोक्षत्वाय कल्पते । भवतीनां गोपीनां मदापनः स्नेहो यो दिष्टचा मम भाग्येन करणेन आसीत् ।।३।।

मुझ श्रीकृष्णमें ही भक्ति आचरण से प्राणिवृन्द अमृतत्व को प्राप्त कर सकते हैं। मेरे प्रति तुम सबको जो स्नेह हुआ है, वही स्नेह सौभाग्य से मिलता है, एवं उससे ही मानववृन्द मुझको प्राप्त कर सकते हैं ।।३।।

माता मोरे पुत्रभावे करये बन्धन ।
अति हीन ज्ञाने करे लालन पालन ॥२१
सखा शुद्ध सख्ये करे स्कन्धे आरोहण ।
तुमि कोन बड़लोक तुमि आमि सम ॥२२
प्रिया यदि मान करि करये भर्त्सन ।
वेदस्तुति हैते सेइ हरे मोर मन ॥२३
एइ शुद्धभक्ति लैया करिव अवतार ।
करिब विविध भाति अद्भुत विहार ॥२४
वैकुण्ठाद्ये नाहि ये ये लीलार प्रचार ।
से से लीला करिव याते मोर चमत्कार ॥२५
मो विषये गोपीगणेर उपपति भावे ।
योगमाया करिवेन आपन प्रभावे ॥२६
आमिह ना जानि ताहा ना जाने गोपीगण ।
दोँहार रूप गुणे दोँहार नित्य हरे मन ॥२७
धर्म छाड़ि रागे दुँहे करये मिलन ।
कभु मिले कभु ना मिले दैवेर घटन ॥२८
एइ सब रससार करिव आस्वाद ।
एइ द्वारे करिव सब भक्तेरे प्रसाद ॥२९
व्रजेर निर्मल राग शुनि भक्तगण ।
रागमार्गे भजे येन छाड़ि धर्म कर्म ॥३०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३३।३७)—

अनुग्रहाय भक्तानां मानुषं देहमाश्रितः ।
भजते तादृशीः क्रीड़ा याः श्रुत्वा तत्परो भवेत् ॥४॥

टीका—श्रीकृष्णः भक्तानां प्रति अनुग्रहाय मानुषं देहं आश्रित सन् तादृशीः क्रीड़ाः भजते, याः क्रीड़ाः श्रुत्वा तत्परो भवेत् ॥४॥

भक्तवृन्द के प्रति अनुग्रह करने के निमित्त भगवान् मनुष्यशरीर ग्रहण करके उसी प्रकार लीला करते हैं, जिसको सुनकर लोक भगवत् परायण हो सकते हैं ॥४॥

'भवेत्' क्रिया विधिलिङ् सेइ इहा कय ।
कर्त्तव्य अवश्य एइ अन्यथा प्रत्यवाय ॥३१
एइ वाञ्छा यैछे कृष्ण प्राकट्य कारण ।
असुर संहार आनुषङ्ग प्रयोजन ॥३२
एइ मत चैतन्य कृष्ण पूर्ण भगवान् ।
युगधर्म प्रवर्त्तन नहे ताँर काम ॥३३
कोन कारणे यवे हैल अवतारे मन ।
युगधर्म काल हैल से काले मिलन ॥३४
दुइ हेतु अवतार लैञा भक्तगण ।
आपने आस्वादे प्रेम नाम सङ्कीर्त्तन ॥३५
सेइ द्वारे आचाण्डाले कीर्त्तन सञ्चारे ।
नाम प्रेममाला गाँथि पराइल संसारे ॥३६
एइ मत भक्तभाव करि अङ्गीकार ।
आपनि आचरि भक्ति करिल प्रचार ॥३७

दास्य सख्य वात्सल्य आर ये शृङ्गार।
चारिविध प्रेम चारि भक्तइ आधार ॥३८
निज निज भाव सबे श्रेष्ठ करि माने।
निज भावे करे कृष्ण सुख आस्वादने ॥३९
तटस्थ हइया मने विचार यदि करि।
सर्वरस हैते शृङ्गारे अधिक माधुरी ॥४०

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे स्थायिभावलहर्यां द्वाविंशश्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

यथोत्तरमसौ स्वादु विशेषोल्लासमय्यपि।
रतिर्वासनया स्वाद्वी भासते कापि कस्यचित् ॥५

टीका—यथोत्तरमुक्तक्रमेण स्वाद्वी अभिरुचिता। नन्वत्र विवेक्ता कतमः स्यात्। निर्वासना एकवासनो बहुवासनो वा तत्राद्ययोरन्यतरस्वादाभावात् विवेक्तृत्वं न घटत एव। अन्त्यस्य च रसाभासिता पर्य्यवसानान्नास्तीति सत्यम्। तथाप्येकवासनस्य तद्घटते। रसान्तरस्याप्रत्यक्षत्वेपि सदृशरसस्योपमानेन प्रमाणेन विसदृशरसस्य तु सामग्रीपरिपोषापरिपोषदर्शनादनुमानेन चेति ॥५॥

दास्य, सख्य, वात्सल्य एवं मधुररति उत्तरोत्तर स्वादुतर होने पर भी व्यक्ति विशेष की वासना के अनुसार एक एक भाव भक्तवृन्दके निकट स्वादुतर बोध होता है। ५॥

अतएव मधुर रस कहि तार नाम।
स्वकीया परकीया भावे द्विविध संस्थान ॥४१
परकीया भावे अति रसेर उल्लास।
व्रज बिना इहार अन्यत्र नाहि वास ॥४२
व्रजवधूगणेर एइ भाव निरवधि।
तार मध्ये श्रीराधाय भावेर अवधि ॥४३
प्रौढ़ निर्मल भाव प्रेम सर्वोत्तम।
कृष्णेर माधुरी आस्वादनेर कारण ॥४४
अतएव सेइ भाव अङ्गीकार करि।
साधिलेन निज वाञ्छा गौराङ्ग श्रीहरि ॥४५

तथाहि स्तवमालायां श्रीचैतन्यदेवस्य (१।२)—

सुरेशानां दुर्गं गतिरतिशयेनोपनिषदां
मुनीनां सर्वस्वं प्रणतपटलीनां मधुरिमा।
विनिर्यासः प्रेम्णो निखिलपशुपालाम्बुजदृशां
स चैतन्यः किं मे पुनरपि दृशोर्यास्यति पदम् ॥६

टीका—स श्रीचैतन्यः किं पुनरपि दृशोः पदं स्थानं यास्यति? किम्भूतः? सुरेशानां ब्रह्मादीनां दुर्गं दुर्बोध्यं वस्तु। पुनः किम्भूतः? उपनिषदां श्रुतिशिरसां वेदशिरोभागानां अतिशयेन अतिचेष्टितेन गतिः न तु आपाततगम्य इत्यर्थः। पुनः किम्भूतः? मुनीनां सर्वस्वं सर्वस्वरूपम्। पुनः किम्भूतः? प्रणतपटलीनां भक्तानां मधुरिमा माधुर्य्यम्। किम्भूतः? निखिलपशुपालाम्बुजदृशां पुनः समूहगोपीनां प्रेम्णो विनिर्य्यासः रसस्वरूपः ॥६॥

जो देवतावृन्द का अभय आश्रयस्थल हैं, उपनिषदों की परमा गति हैं, मुनिवृन्दके सर्वस्व है, प्रणत जनों की मधुरिमा एवं गोपीप्रेम का निर्यास रूप हैं, वह श्रीचैतन्य देव क्या पुनर्वार नयनगोचर होंगे?६॥

तथाहि स्तवमालायां श्रीचैतन्यदेवस्य (१।३)—

अपारं कस्यापि प्रणयिजनवृन्दस्य कुतुकी
रसस्तोमं हृत्वा मधुरमुपभोक्तुं कमपि यः।
रुचिं स्वामावव्रे द्युतिमिह तदीयां प्रकटयन्
स देवश्चैतन्याकृतिरतितरां नः कृपयतु ॥७॥

टीका—स देवश्चैतन्यो नोऽस्मान् कृपयतु कृपां करोतु। स कथम्भूतः? चैतन्याकृतिश्चैतन्यस्वरूपः। पुनः कीदृशः? कौतुकी कौतुकयुक्तः। प्रणयिजनवृन्दस्य मध्ये कस्यापि प्रणयिजनविशेषस्यापारं कमपि मधुरः रसस्तोमं उपभोक्तुं तदीयां प्रणयिजनसम्बन्धिनीं द्युतिं प्रकटयन्। तां स्वीयां रुचिं आवव्रे आवृतवान्। प्रणयिजनस्य रूपं धृत्वा, प्रणयिजनस्य

रसनीयं वस्तु श्रुत्वा, स्वयमेव रस्यते एतावदेव कुतुकीत्वमायातम् ॥७॥

कौतुकी श्रीकृष्ण निज प्रणयीवृन्दके अनिर्वचनीय प्रेम माधुर्य्य को आस्वादन करने के निमित्त निज प्रिया की कान्ति द्वारा निज कान्ति को आवृत कर जगत्में उनके भाव माधुर्य्य को आस्वादन पूर्वक प्रचार करनेके निमित्त श्रीकृष्णचैतन्य रूपमें अवतीर्ण हुये हैं, आप हम सबके प्रति अतिशय कृपा करें ॥७॥

भाव ग्रहण हेतु कैल धर्म स्थापन ।
मूल हेतु आगे श्लोके करि विवरण ॥४६
भाव ग्रहणेर एइ शुनह प्रकार ।
ताहा लागि पञ्चम श्लोक करिये विचार ॥४७
एइत पञ्चम श्लोकेर कहिल आभास ।
एवे करि सेइ श्लोकेर अर्थ प्रकाश ॥४८

तथाहि श्रीरूपगोस्वामी-कड़चायाम्—

राधा-कृष्णप्रणयविकृतिर्ह्लादिनीशक्तिरस्मा-
देकात्मानावपि भुवि पुरा देहभेदं गतौ तौ ।
चैतन्याख्यं प्रकटमधुना तद्द्वयं चैक्यमाप्तं,
राधाभावद्युतिसुवलितं नौमि कृष्णस्वरूपम् ॥८॥

श्रीराधाके भाव एवं कान्ति ग्रहण क्यों किये, उसका कारण कहते हैं—श्रीकृष्ण प्रेम ही स्वरूपतः श्रीराधा हैं, एवं समस्त शक्ति की वरीयसी ह्लादिनी शक्तिस्वरूपिणी है। राधा एवं कृष्ण की सत्ता भिन्न नहीं है, किन्तु लीला हेतु वे भिन्न रूपमें आविर्भूत होते हैं।

अधुना वे एक होकर चैतन्यरूपमें आविर्भूत हुये हैं। श्रीराधिका की गौर कान्ति एवं कृष्णप्रेम को लेकर श्रीकृष्णचैतन्य रूपमें जो आविर्भूत हुये हैं, उनको नमस्कार करता हूँ ॥८॥

राधा-कृष्ण एक आत्मा दुइ देह धरि ।
अन्योन्ये विलासे रस आस्वादन करि ॥४९
सेइ दुइ एक एवे चैतन्य गोसाञि ।
भाव आस्वादिते दुँहे हैला एक ठाञि ॥५०
इथि लागि आगे करि ताँर विवरण ।
याहा हैते हय गौरेर महिमा कथन ॥५१
राधिका हयेन कृष्णेर प्रणय-विकार ।
स्वरूपशक्ति-ह्लादिनी नाम याँहार ॥५२
ह्लादिनी कराय कृष्णे आनन्दास्वादन ।
ह्लादिनी द्वाराय करे भक्तेर पोषण ॥५३
सत् चित् आनन्द पूर्ण कृष्णेर स्वरूप ।
एकइ चिच्छक्ति ताँर धरे तिन रूप ॥५४
आनन्दांशे ह्लादिनी सदंशे सन्धिनी ।
चिदंशे सम्वित् यारे ज्ञान करि मानि ॥५५

तथाहि विष्णुपुराणे (१।१२।६९)—

ह्लादिनी सन्धिनी सम्वित्त्वय्येका सर्वसंश्रये ।
ह्लादतापकरी मिश्रा त्वयि नो गुणवर्जिते ॥९॥

टीका—ह्लादिनी आह्लादकरी, सन्धिनी सत्ता, सम्वित् विद्याशक्तिः। एका मुख्या अव्यभिचारिणी स्वरूपभूता इति। सर्वसंस्थितौ सर्वस्य सम्यक् स्थितिर्यस्मात्। तस्मिन् सर्वाधिष्ठानभूते त्वयि एव, न तु जीवेषु। जीवेषु च या गुणमयी त्रिविधा, सा त्वयि नास्ति। तामेवाह—ह्लादतापकरी मिश्रेति। ह्लादकरी मनःप्रसादोत्था सात्त्विकी। तापकरी विषयवियोगादिषु तापकरी तामसी। तदुभयमिश्रा विषयजन्या राजसी। तत्र हेतु सत्त्वादिगुणवर्जिते ॥९

श्रीविष्णुपुराणमें लिखित है, श्रीध्रुव भगवान्‌को कहे हैं—सबके आश्रयस्वरूप आप हैं, स्वरूप शक्ति स्वरूप ह्लादिनी, सन्धिनी एवं सम्वित् शक्तिसम्पन्न आप हैं, प्राकृत गुणवर्जित स्वरूप होने के कारण, आपमें प्राकृत सत्त्व रज स्तमात्मिका मिश्रा शक्तिका प्रभाव नहीं है ॥९॥

सन्धिनीर सार अंश शुद्धसत्त्व नाम ।
भगवानेर सत्ता हय याहाते विश्राम ॥५६
माता पिता स्थान गृह शय्यासन आर ।
ए सब कृष्णेर शुद्ध सत्त्वेर विकार ॥५७

तथाहि विष्णुपुराणे (४।३।२१) श्रीसतीं प्रति श्री-शिववाक्यम्—

सत्त्वं विशुद्धं वसुदेवशब्दितं
यदीयते तत्र पुमानपावृतः।
सत्त्वे च तस्मिन् भगवान् वासुदेवो
ह्यधोक्षजो मे मनसा विधीयते ।।१०

टीका—किञ्च न केवलं अभ्यागतेष्वेव वासुदेव-दृष्टया नमनं क्रियते, किन्तु नित्यमेव मनसि वासुदेवश्चिन्त्यत इत्याह—विशुद्धं सत्त्वमन्तःकरणं सत्त्वगुणो वा वसुदेवशब्दितं वसुदेवशब्देनोक्तम्। कुतः? यद् यस्मात् तत्र तस्मिन् सत्त्वे पुमान् वासुदेव ईयते प्रकाशते; अपगतं आवृतं आवरणं यस्मात् सः, अयमर्थः वसुदेवे भवति प्रतीयते, इति वासुदेवः परमेश्वरः प्रसिद्धः, स च विशुद्धसत्त्वे प्रतीयते प्रत्ययार्थेन प्रसिद्धेन प्रकृत्यर्थो निर्द्धार्य्यते। ततश्च वासयति देवमिति व्युत्पत्त्या वसत्यस्मिन् वा वासुदेवः, दीव्यति द्योतत इति वा वसुभिः पुण्यै-र्दीव्यति प्रकाशत इति वा वसुदेवशब्दवाच्यं शुद्धं सत्त्वं। ततः किमत आह, सत्त्वे च तस्मिन्मे मया नमसा नमस्कारेण अनुविधीयते सेव्यत इत्यर्थः। ननु केवलेन मनसैव चिन्त्यतां किन्तेन सत्त्वेन तत्राह—हि यस्मादधोक्षजः अधःकृतमतिक्रान्तमक्षज-मिन्द्रियज्ञानं येन सः ।।१०।।

शुद्ध सत्त्व का नाम ही वसुदेव है, यह विशुद्ध सत्त्व ही परम पुरुष का प्रकाश स्थान है। अतः उनको वासुदेव कहते हैं। इन्द्रियातीत हेतु भक्तियोग के द्वारा ही आपका साक्षात्कार होता है ।।१०।।

कृष्णे भगवत्ता ज्ञान सम्बितेर सार।
ब्रह्म ज्ञानादिक सब तार परिबार ।।५८
ह्लादिनीर सार प्रेम प्रेम सार भाव।
भावेर परमकाष्ठा नाम महाभाव ।।५९
महाभाव स्वरूपा श्रीराधा ठाकुराणी।
सर्वगुण-खनि कृष्णकान्ताशिरोमणि ।।६०

तथाहि श्रीमदुज्ज्वलनीलमणौ श्रीराधाचन्द्रावल्योः श्रेष्ठता कथने (२)—

तयोरप्युभयोर्मध्ये राधिका सर्वथाधिका।
महाभावस्वरूपेयं गुणैरतिवरीयसी ।।११।।

टीका—तयोरपि उभयोर्मध्ये राधिका सर्वथा सर्वप्रकारेण अधिका प्रधाना। यतः इयं राधिका महाभावस्वरूपा, गुणैश्च अतिवरीयसी ।।११।।

राधा एवं चन्द्रावलीके मध्यमें राधा ही सर्वश्रेष्ठा है। आप अतुलनीय गुणशालिनी एवं महाभाव स्वरूपिणी हैं ।।११।।

कृष्णप्रेम भावित याँर चित्तेन्द्रिय काय।
कृष्ण निजशक्ति राधा क्रीड़ार सहाय ।।६१

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (५।३७)—

आनन्दचिन्मयरस प्रतिभाविताभि-
स्ताभिर्य एव निजरूपतया कलाभिः।
गोलोक एव निवसत्यखिलात्मभूतो
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ।।१२

टीका—य एव अखिलात्मभूतः, आनन्दचिन्मय-रस-प्रतिभाविताभिः ताभिः कलाभिः सह, गोलोके निजरूपतया निवसति, अहं तं आदिपुरुषं गोविन्दं भजामि ।।१२।।

समस्त प्राणियों की आत्मा—गोलोक निवासी, निज ह्लादिनी शक्ति स्वरूपिणी प्रियावृन्द के सहित निरन्तर लीलापरायण आदिपुरुष श्रीगोविन्द का मैं भजन करता हूँ ।।१२।।

कृष्णके कराय यैछे रस आस्वादन।
क्रीड़ार सहाय यैछे शुन विवरण ।।६२
कृष्णकान्तागण देखि त्रिविध प्रकार।
लक्ष्मीगण एक नाम महिषीगण आर ।।६३

व्रजाङ्गनारूप आर कान्तागण सार।
श्रीराधिका हैते कान्तागणेर विस्तार ॥६४
अवतारी कृष्ण यैछे करे अवतार।
अंशिनी राधा हैते तिन गणेर प्रचार ॥६५
लक्ष्मीगण हय ताँर अंश-विभूति।
विम्ब-प्रतिविम्बरूप महिषीर तति ॥६६
लक्ष्मीगण ताँर वैभव-विलासांशरूप।
महिषीगण प्राभवप्रकाश-स्वरूप ॥६७
आकार स्वभाव भेदे व्रजदेवीगण।
कायव्यूहरूप ताँर रसेर कारण ॥६८
बहु कान्ता विना नहे रसेर उल्लास।
लीलार सहाय लागि बहुत प्रकाश ॥६९
तार मध्ये व्रजे नाना भाव रस-भेदे।
कृष्णेरे कराय रासादिक लीलास्वादे ॥७०
गोविन्दानन्दिनी राधा गोविन्द-मोहिनी।
गोविन्द-सर्वस्व सर्वकान्ता-शिरोमणि ॥७१

तथाहि वृहद्गौतमीयतन्त्रे—

देवी कृष्णमयी प्रोक्ता राधिका परदेवता।
सर्व्वलक्ष्मीमयी सर्व्वकान्तिः सम्मोहिनी परा ॥१३॥

टीका—दीव्यति क्रीड़ति या सा देवी परमसुन्दरी, ऐकात्मकत्वात् कृष्णमयी, सा एव प्रेमरूपा, अतो रसरूप-भावरूपयोर्विषयाश्रयौ भवतः। अतः प्रोक्ता प्रकर्षेण कथिता, सा राधिका एव, अनया राधया राध्यति कृष्णः संसिद्धो भवति परमचमत्कारदशां प्राप्नोतीति राधिका, परदेवता श्रीकृष्णस्य विधात्री। सर्व्वलक्ष्मीमयी कृष्णस्य सर्व्वसम्पत्तिरूपा। तदेव स्पष्टयति,—सर्व्वकान्तिः, कान्तिरिच्छा, कृष्णस्य सर्व्वकान्तिः। तदेव विशिनष्टि, संमोहिनी मोहनस्य कृष्णस्य संमोहिनी ॥१३॥

आनन्ददायिनी परमा देवता राधिका कृष्णस्वरूपा हैं, आप निखिल श्री, विश्वकान्ति एवं दिव्यरूपा सम्मोहिनी हैं ॥१३॥

देवी कहि द्योतमाना परमासुन्दरी।
किंवा कृष्णक्रीड़ा-प्रजार वसति नगरी ॥७२
कृष्णमयी कृष्ण यार भितरे वाहिरे।
याँहा याँहा नेत्र पड़े ताँहा कृष्ण स्फुरे ॥७३
किंवा प्रेमरसमय कृष्णेर स्वरूप।
ताँर शक्ति ताँर सह हय एकरूप ॥७४
कृष्णवाञ्छा-पूर्त्तिरूप करे आराधने।
अतएव राधा नाम पुराणे वाखाने ॥७५

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३०।२८)—

अनया राधितो नूनं भगवान् हरिरीश्वरः।
यन्नो विहाय गोविन्दः प्रीतो यामनयद्रहः ॥१४॥

टीका—अनया राधया नूनं निश्चितं ईश्वरो हरिः आराधितः। यत् यस्मात् गोविन्दः नोऽस्मान् विहाय प्रीतः सन् यां राधां रहः निर्ज्जने अनयत् ॥१४

भगवान् श्रीकृष्ण की आराधना करके इसने निश्चय ही उनको सन्तुष्ट किया हैं,कारण-गोविन्द हम सबको छोड़कर इसको लेकर ही निर्जनमें चले गये हैं ॥१४॥

अतएव सर्व-पूज्या परम देवता।
सर्व-पालिका सर्व जगतेर माता ॥७६
सर्व-लक्ष्मी शब्द पूर्वे करियाछि व्याख्यान।
सर्व-लक्ष्मीगणेर तेँहो हय अधिष्ठान ॥७७
किंवा सर्वलक्ष्मी कृष्णेर षड़्विध ऐश्वर्य्य।
ताँर अधिष्ठात्री शक्ति सर्वशक्तिवर्य्य ॥७८
सर्व-सौन्दर्य्य कान्ति वैसये याँहाते।
सर्व-लक्ष्मीगणेर शोभा हय याँहा हैते ॥७९
किंवा कान्ति शब्दे कृष्णेर सब इच्छा कहे।
कृष्णेर सकल वाञ्छा राधातेइ रहे ॥८०
राधिका करेन कृष्णेर वाञ्छितपूरण।

सर्व-कान्ति शब्देर एइ अर्थ-विवरण ॥८१
जगत्-मोहन कृष्ण ताँहार मोहिनी ।
अतएव समस्तेर परा ठाकुराणी ॥८२
राधा पूर्णशक्ति कृष्ण पूर्ण-शक्तिमान् ।
दुइ वस्तु भेद नाहि शास्त्र-परमाण ॥८३
मृगमद तार गन्ध यैछे अविच्छेद ।
अग्नि ज्वालाते यैछे नाहि कभु भेद ॥८४
राधा कृष्ण ऐछे सदा एकइ स्वरूप ।
लीलारस आस्वादिते धरे दुइ रूप ॥८५
प्रेमभक्ति शिखाइते आपनि अवतरि ।
राधा-भाव-कान्ति दुइ अङ्गीकार करि ॥८६
श्रीकृष्णचैतन्यरूपे कैल अवतार ।
एइत पञ्चम श्लोकेर अर्थ-परचार ॥८७
षठ श्लोकेर अर्थ करिते प्रकाश ।
प्रथमे कहिये सेइ श्लोकेर आभास ॥८८
अवतरि प्रभु प्रचारिल संकीर्त्तन ।
एहो गौण हेतु पूर्वे करियाछि सूचन ॥८९
अवतारेर आर एक आछे मुख्यवीज ।
रसिक-शेखर कृष्णेर सेइ कार्य्य निज ॥९०
अतिगूढ़ हेतु सेहो त्रिविध प्रकार ।
दामोदरस्वरूप हैते याहार प्रचार ॥९१
स्वरूपगोसाञि प्रभुर अति अन्तरङ्ग ।
ताहाते जानेन प्रभुर ए सब प्रसङ्ग ॥९२
राधिकार भाव मूर्त्ति प्रभुर अन्तर ।
सेइ भावे सुख दुःख उठे निरन्तर ॥९३
शेषलीलाय प्रभुर कृष्ण-विरह-उन्माद ।
भ्रममय चेष्टा आर प्रलापमय वाद ॥९४
राधिकार भाव यैछे उद्धवदर्शने ।
सेइ भावे मत्त प्रभु थाके रात्रिदिने ॥९५
रात्रे विलापेन स्वरूपेर कण्ठ धरि ।
आवेशे आपन भाव कहये उघारि ॥९६
यबे येइ भाव उठे प्रभुर अन्तर ।
सेइ गीते श्लोके सुख देन दामोदर ॥९७
एवे कार्य्य नाहि किछु एसब विचारे ।
आगे इहा विवरिव करिया विस्तारे ॥९८
पूर्वे व्रजे कृष्णेर त्रिविध वयो धर्म ।
कौमार पौगण्ड आर कैशोर अति मर्म ॥९९
वात्सल्य आवेशे कैल कौमार सफल ।
पौगण्ड सफल कैल लञा सखा बल ॥१००
राधिकादि लञा कैल रासादि विलास ।
वाञ्छा भरि आस्वादिल रसेर निर्य्यास ॥१०१
कैशोर वयस काम जगत् सकल ।
रासादि लीलाय तिन करिल सफल ॥१०२

तथाहि विष्णुपुराणे (५।१३।५५)—

**सोऽपि कैशोरकवयो मानयन्मधुसूदनः ।
रेमे स्त्रीरत्नकूटस्थः क्षपाशु क्षपिताहितः ॥१५॥**

टीका - सोऽपि मधुसूदनः कैशोरकवयः मानयन्, स्त्रीरत्नकूटस्थः रेमे । स्त्रीरत्न समूहस्थः स्त्रीरत्नेषु कूटस्थः सर्व्वव्यापी, येन रमणेन क्षपा रात्रिर्दिवापि आशु शीघ्रं क्षपिता ॥१५॥

मधुसूदन भी कैशोर को सफल करने के निमित्त सुन्दरी रमणीवृन्द के मध्यवर्त्ती होकर शरद् यामिनी में विहार कर जगत् के अमङ्गल विदूरित किये थे ॥१५॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धोर्दक्षिण विभागे(१।१२४)-

**वाचा सूचितशर्व्वरी-रतिकलाप्रागल्भ्यया राधिकां
व्रीड़ कुञ्चितलोचनां विरचयन्नग्रे सखीनामसौ ।
तद्वक्षोरुहचित्रकेलिमकरीपाण्डित्य-पारं गतः
कैशोरं सफलीकरोति कलयन्कुञ्जे विहारं हरिः ॥१६**

टीका—हरिः श्रीकृष्णः कुञ्जे विहारं कुर्व्वन् कैशोरं वयः सफलीकरोति । पुनः किं कुर्व्वन् ?—सखीनामग्रे क्रीड़ाकुञ्चित-लोचनां राधिकां विरचयन् विशिष्ट प्रकारेण कथयन्। किं करणया ?—वाचा। किम्भूतया ?—सूचितशर्व्वरी-रतिकला-प्रागल्भ्यया। हरिः पुनः कथम्भूतः ?—तस्या राधाया वक्षोरुहयोश्चित्रकेलिमकरीरचने पाण्डित्यपारं गतः। ।१६।।

श्रीकृष्ण--कैशोर वयस को सफल कर कुञ्ज-विहार करते रहते हैं। श्रीराधिका के वक्षःस्थल में पत्र रचना में चमत्कार नैपुण्य प्रदर्शन करते हैं, एवं रजनी में रति कलाप्रदर्शन हेतु श्रीराधिका जिस प्रकार प्रगल्भा होती रहती है। उसका विशद वर्णन सखीवृन्द के सम्मुख में करते रहते हैं, उससे राधिका भी लज्जा से निमीलित नयना हो जाती है ।।१६।।

तथाहि विदग्धमाधवे (७।५)—

वृन्दां प्रति पौर्णमासी वाक्यम्—

हरिरेष नचेदवातरिष्य-
न्मथुरायां मधुराक्षी राधिका च।
अभविष्यदियं वृथा विसृष्टि-
र्मकराङ्कस्तु विशेषतस्तदात्र ।।१७।।

टीका—एष हरिः, मधुराक्षी राधिका च चेत् यदि मथुरायां न अवातरिष्यन्, तदा अत्र इयं विसृष्टिः वृथा निरर्थकं भविष्यति, तु पुनर्विशेषतः मकराङ्कः कन्दर्पः वृथा भविष्यति इत्यर्थः ।।१७।।

विदग्ध माधव में उक्त है—पौर्णमासी वृन्दा को बोली थीं—हे मधुराक्षि ! यह हरि एवं राधिका यदि मथुरा में अवतीर्ण नहीं होते तो यह विसृष्टि वृथा हो जाती विशेष कर मकराङ्क का अस्तित्व विफल हो जाता ।।१७।।

एइ मत पूर्व्वे कृष्ण रसेर सदन।
यद्यपि करिल रस निर्यास चर्व्वण ।।१०३
तथापि नहिल तिन वाञ्छार पूरण।
ताहा आस्वादिते यदि करिल यतन ।।१०४
ताहार प्रथम वाञ्छा करिये व्याख्यान।
कृष्ण कहे आमि हइ रसेर निधान ।।१०५
पूर्णानन्दमय आमि चिन्मय पूर्णतत्त्व।
राधिकार प्रेमे आमा कराय उन्मत्त ।।१०६
ना जानि राधार प्रेमे आछे कोन् बल।
ये बले आमारे करे सर्व्वदा विह्वल ।।१०७
राधिकार प्रेम गुरु आमि शिष्य नट।
सदा आमा नाना नृत्ये नाचाय उद्भट ।।१०८

तथाहि गोविन्दलीलामृते अष्टमसर्गे सप्तसप्तति श्लोके श्रीराधावृन्दयोरुक्तिप्रत्युक्तिः—

कस्माद्वृन्दे प्रियसखि हरेः पादमूलात् कुतोऽसौ-
कुण्डारण्ये किमिह कुरुते नृत्यशिक्षां गुरुः कः।
तं त्वन्मूर्त्तिः प्रति तरुलता दिग्विदिक्षु स्फुरन्ती
शैलूषीव भ्रमति परितो नर्त्तयन्ती स्वपश्चात् ।।१८।।

टीका—कस्माद्वृन्देति । वृन्दाराधयोः प्रत्युक्तिः। प्रथमतो राधिकावचनं।—हे प्रियसखि ! हे वृन्दे ! कस्मात् त्वमागतः ? अत्र वृन्दाया उक्तिः, —हरेः श्रीकृष्णस्य पादमूलात्। राधिकावचनं,—कुतोऽसौ ? असौ श्रीकृष्णः कुत्र कस्मिन् स्थलेऽस्ति ? वृन्दावचनम्,—कुण्डारण्ये । राधिकावचनमत्र,—किं करोति ? वृन्दावचनं,—नृत्यशिक्षां कुरुते। राधावचनं,—गुरुः कः ? वृन्दावचनं—त्वन्मूर्त्तिः, यतस्त्वन्मूर्त्तिः दिग्विदिक्षु प्रतितरुलताः स्फुरन्ती स्वपश्चात्तं नर्त्तयन्ती सर्व्वतोभावेन शैलूषीव नर्त्तकी इव भ्रमति ।।१८।।

श्रीगोविन्द लीलामृत में लिखित है—
श्रीराधा एवं वृन्दा की उक्ति प्रत्युक्ति यह है- प्रिय सखि वृन्दे ! कहाँ से आई ? मैं कृष्ण के समीप से आई हूँ। हरि कहाँ हैं ? राधाकुण्ड विपिन में हैं। वहाँ क्या करते हैं ? नृत्य शिक्षा करते हैं। इनके गुरु कौन हैं ? प्रति तरुलता के तलदेश में सर्वत्र तुम्हारी जो मूर्त्ति स्फुरित होती रहती है, प्रधान नटी के समान कृष्ण उसके पीछे पीछे नाच नाचकर

चलते रहते हैं ॥१८॥

निज प्रेमास्वादे मोर हय ये आह्लाद।
ताहा हैते कोटि गुण राधाप्रेमास्वाद ॥१०९
आमि यैछे परस्पर विरुद्ध धर्म्माश्रय।
राधाप्रेम तैछे सदा विरुद्ध धर्म्ममय ॥११०
राधाप्रेम विभु यार वाड़िते नाञि ठाञि।
तथापिह क्षणे क्षणे वाड़ये सदाइ ॥१११
याहा हैते गुरुवस्तु नाहि सुनिश्चित।
तथापि गुरुर धर्म्म गौरव वर्जित ॥११२
याहा हैते सुनिर्म्मल द्वितीय नाञि आर।
तथापि सर्व्वदा वाम्य वक्र व्यवहार ॥११३

तथाहि दानकेलिकौमुद्यात् ५थ श्लोकः—

श्रीरूपगोस्वामी वाक्यम्--

विभुरपि कलयन् सदातिवृद्धि
गुरुरपि गौरवचर्य्यया विहीनः।
मुहुरुपचितवक्रिमापि शुद्धो
जयति मुरद्विषि राधिकानुरागः ॥१६॥

टीका—विभुरित्यादि। मुरद्विषि श्रीकृष्णे कृष्णविषये राधिकानुरागो जयति। किं कुर्व्वन्?-- यद्यपि विभुरनाद्यन्तस्तथापि सदा नित्यं वृद्धिं कलयन्। यद्यपि राधिकानुरागः कृष्णगुरुरपि तथापि गौरवचर्य्यया विहीनः। पुनर्यद्यपि राधिकानुरागः उपचितविक्रमा सदा वक्रभावयुक्तस्तथापि शुद्धः। जयतीति एवं वृत्तं निजचित्रचमत्काररूपं सदा विभावयतात् ॥१६॥

श्रीकृष्ण राधा का अनुराग जय युक्त हो, श्रीराधा का अनुराग—सर्वव्यापी होकर भी प्रतिक्षण वर्द्धन शील है, गौरवान्वित होकर भी अनुद्धत, नव नव विलास से कुटिल होने पर भी निर्म्मल प्रेम हेतु सरल है ॥१६॥

सेइ प्रेमेर राधिका परम आश्रय।
सेइ प्रेमेर आमि हइ केवल विषय ॥११४

विषय जातीय सुख आमार आस्वाद।
आमा हैते कोटिगुण आश्रयेर आह्लाद ॥११[५]
आश्रय जातीय सुख पाइते मन धाय।
यत्ने आस्वादिते नारि कि करि उपाय ॥११[६]
कभु यदि एइ प्रेमेर हइये आश्रय।
तबे एइ प्रेमानन्देर अनुभव हय ॥११७
एत चिन्ति रहे कृष्ण परम कौतुकी।
हृदये वाड़ये प्रेम लोभ धक्धकी ॥११८
एइ एक शुन आर लोभेर प्रकार।
स्वमाधुर्य्य देखि कृष्ण करेन विचार ॥११९
"अद्भुत अनन्त, पूर्ण मोर मधुरिमा।
त्रिजगते इहार केह नाहि पाय सीमा ॥१२०
एइ प्रेमद्वारे नित्य राधिका एकलि।
आमार माधुर्य्यामृत आस्वादे सकलि ॥१२१
यद्यपि निर्म्मल राधार सतप्रेम दर्पण।
तथापि स्वच्छता तार वाड़े क्षणे क्षण ॥१२[२]
आमार माधुर्य्येर नाहि वाड़िते अवकाशे।
ए दर्पणेर आगे नव नव रूपे भासे ॥१२३
मन्माधुर्य्य राधाप्रेम दुहे होड़ करि।
क्षणे क्षणे वाड़े दोँहे केह नाहि हारि ॥१२४
आमार माधुर्य्य नित्य नव नव हय।
स्व स्व प्रेम अनुरूप भक्ते आस्वादय ॥१२५
दर्पणाद्ये यदि देखि आपन माधुरी।
आस्वादिते लोभ हय आस्वादिते नारि ॥१२[६]
विचार करिये यदि आस्वाद उपाय।
राधिका स्वरूप हैते तबे मन धाय ॥" १२७

तथाहि ललितमाधवे (८।३२)--

अपरिकलितपूर्व्वः कश्चमत्कारकारी
स्फुरति मम गरीयानेष माधुर्य्यपूरः।

अयमहमपि हन्त ! प्रेक्ष्य यं लुब्धचेताः
सरभसमुपभोक्तुं कामये राधिकेव ॥२०॥

टीका—अपरिकलितेति मणिभित्तौ स्वप्रतिविम्ब-लब्धातिशयं वपुश्चित्रं दृष्ट्वा श्रीभगवन्मनोरथः प्रतिक्षणं नवनवायमानतन्माधुर्य्यत्वात् ॥२०॥

यह अपूर्व चमत्कार कारि परिपूर्ण माधुर्य्य स्वरूप जो मेरे समीप में स्फुरित हो रहा है, यह कौन है ? मेरा मुग्धमन इस को देखकर परम आवेग से राधा के समान ही इसको भोग करना चाहता है ।२०

कृष्ण माधुर्य्येर एक स्वाभाविक बल ।
कृष्ण आदि नरनारी करये चञ्चल ॥१२८
श्रवणे दर्शने आकर्षये सर्व्व मन ।
आपना आस्वादिते करे अनेक यतन ॥१२९
ए माधुर्य्यामृत पान सदा येवा करे ।
तृष्णा शान्ति नहे तृष्णा बाड़े निरन्तरे ॥१३०
अतृप्त हइया करे विधाता निन्दन ।
अविदग्ध विधि भाल ना जाने सृजन ॥१३१
कोटि नेत्र ना दिल सबे दिल दुइ ।
ताहाते निमेष कृष्ण कि देखिव मुञि ॥१३२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८२।३९)—

परीक्षितं प्रति शुक वाक्यम्—
गोप्यश्च कृष्णमुपलभ्य चिरादभीष्टं
यत्प्रेक्षणे दृशिषु पक्ष्मकृतं शपन्ति ।
दृग्भिर्हृदीकृतमलं परिरभ्य सर्व्वा-
स्तद्भावमापुरपि नित्ययुजां दुरापम् ॥२१॥

टीका—अभीष्टत्वे लिङ्गं यस्य श्रीकृष्णस्य प्रेक्षणे दृशिषु नेत्रेषु व्यवधाय पक्ष्मकृतं विधातारं शपन्ति । दृग्भिर्नेत्रद्वारैर्हृदिकृतं हृदये प्रवेशितं परिरभ्य तद्भावं तदात्मतां प्रापुः । अपि नित्ययुजां आरूढ़योगिनामपि ॥२१॥

श्रीशुकदेव कहे थे—श्रीकृष्ण के सहित एकात्म भाव—जो रुक्मिणी प्रभृति के पक्ष में भी दुर्ल्लभ था, उसको गोपिकाने प्राप्त किया, जो कृष्ण उन सब के हृदय में नित्य विराजित हैं, चिर ईप्सित हैं, जिनके दर्शन समय में निमेष पात को असहनीय दुःख कर मानती हैं, उन श्रीकृष्ण को अनेक दिनों के पश्चात् कुरुक्षेत्र में दर्शन कर गोपियों ने निज दृष्टि के द्वारा ही परिपूर्ण आलिङ्गन किया ।२१।

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३१।१५)—

अटति यद्भवानह्नि काननं
त्रुटिर्युगायते त्वामपश्यताम् ।
कुटिलकुन्तलं श्रीमुखञ्च ते
जड़ उदीक्षतां पक्ष्मकृद्दृशाम् ॥२२॥

टीका—यत् यदा भवान् अह्नि दिवसे काननं वृन्दारण्यं अटति गच्छति, तदा त्वां अपश्यतां प्राणिनां त्रुटिः क्षणार्द्धमपि युगायते युगवद्भवति । कुटिलकुन्तलं ते तव श्रीमुखञ्च उदीक्षतांदृशां सम्बन्धे पक्ष्मकृत् ब्रह्मा जड़ः मन्दो भवति ॥२२॥

हे कृष्ण ! तुम जब दिन में वन भ्रमण करते रहते हो, तब तुम्हें न देखकर हम सब के पक्ष में एक महूर्त्त समय भी एक युगके समान हो जाता है । तुम्हारे कुटित अलकावली शोभित श्रीमुख दर्शन समय में हम सब के नयनों में जो निमेष पात होता है, वह—विचार बुद्धि हीन विधाता की अयोग्यता का निदर्शन है ॥२२॥

कृष्णावलोकन विना नेत्रे फल नाहि आन ।
येइ जन कृष्ण देखे सेइ भाग्यवान् ॥१३३

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२१।७)

अक्षण्वतां फलमिदं न परं विदामः
सख्यः पशूननुविवेशयतोर्वयस्यैः ।
वक्त्रं व्रजेशसतयोरनुवेणु जुष्टं
यैर्वा निपीतमनुरक्तकटाक्षमोक्षम् ॥२३॥

टीका—हे सख्यः ! अक्षण्वतां नेत्रयुक्तानां फले अर्थात् नेत्राणां फलमिदं, इतःपरं न विदामो न जानीमः । पशून् अनुविवेशयतोश्चारयतोः व्रजेशसुतयोः रामकृष्णयोः वक्त्रं अनुवेणु—जुष्टं युक्तं अनुरक्तं कटाक्षमोक्षं अनुरागस्यानुरागयुक्तस्य मोक्षं स्निग्ध-

कटाक्ष-विसर्गं यत्र तत् यैर्जनैर्निपीतं नि शेषेण पीतं, तेषां किं वक्तव्यम् ।।२३।।

हे सखी गण ! सखा वृन्द के सहित श्रीकृष्ण एवं बलराम गोचारण हेतु जब वन गमन करते हैं, उनके मुखमें वेणु,एवं अपाङ्गमें अनुराग विलसित है, इस दृश्य को जिसने देखा है, उसके ही नयन सफल है, कारण—नयन प्राप्ति का फल-इस से अधिक और कुछ भी नहीं है ।।२३।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।४४।१४)

गोप्यस्तपः किमचरन् यदमुष्य रूपं
लावण्यसारमसमोर्द्ध्वमनन्यसिद्धम् ।
दृग्भिः पिबन्त्यनुसवाभिनवं दुराप-
मेकान्तधाम यशसः श्रिय ऐश्वरस्य ।।२४।।

टीका—गोप्यः किं तपः अचरन् आचरितवत्यः, यद्येन तपसा अमूष्य कृष्णस्य रूपं दृग्भिर्नेत्रै: करणैः पिबन्ति । रूपं किम्भूतं ?—लावण्यसारं, असमोर्द्ध्वं नास्ति सममूर्द्ध्वं यस्य तत् । पुनः कथम्भूतं ?—अनुसवाभिनवं प्रतिक्षण नूतन । पुनः कथम्भूतं ?—दुरापं, यशसः श्रियः एकान्तधाम ।।२४।।

श्रीकृष्ण का रूप—लावण्य का सार है, एवं तुलना विहीन, स्वभाव सुन्दर, प्रतिक्षण में नव नवायमान, दुर्लभ, माधुर्य्य ऐश्वर्य्य, का एकान्त आश्रय है । गोपियों ने ऐसी कौन तपस्या की है, जिस से वे इस रूप का पान नयनों से करती रहती है ।२४

अपूर्व्व माधुरी कृष्णेर अपूर्व तार बल ।
याहार श्रवणे मन हयत चञ्चल ।।१३४
कृष्णेर माधुरी कृष्णेर उपजाय क्षोभ ।
सम्यक् आस्वादिते नारे मने रहे लोभ ।।१३५
एइत द्वितीय हेतु कैल विवरण ।
तृतीय हेतुर एवे शुनह लक्षण ।।१३६
अत्यन्त निगूढ़ एइ रसेर सिद्धान्त ।
स्वरूप गोँसाञि मात्र जानेन एकान्त ।।१३७
येवा केह अन्य जाने सेहो ताँहा हैते ।
चैतन्य प्रभुर तेहोँ अत्यन्त मर्म्मे याते ।।१३८
गोपीगणेर प्रेम रूढ़ महाभाव नाम ।
विशुद्ध निर्म्मल प्रेम कभु नहे काम ।।१३९

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे साधनभक्ति लहर्याम् (१४३)--

प्रेमैव गोपरामाणां काम इत्यगमत् प्रथाम् ।
इत्युद्धवादयोऽप्येतं वाञ्छन्ति भगवत् प्रियाः ।।२५।।

टीका—गोपरामाणां प्रमैव काम इति प्रथां अगमत् । भगवत् प्रियाः भगवद्भक्ता उद्धवादयोऽपि एतं वाञ्छन्ति ।।२५।।

गोपी वृन्द के प्रेम ही काम नाम से अभिहित होता है । उद्धव प्रभृति महानुभव वृन्द इसको प्राप्त करने की आकाङ्क्षा करते रहते हैं ।।२५।।

काम प्रेम ए दोँहार विभिन्न लक्षण ।
लौह काञ्चन यैछे स्वरूपे विलक्षण ।।१४०
आत्मेन्द्रिय प्रीति इच्छा तारे कहि काम ।
कृष्णेन्द्रिय प्रीति इच्छा धरे प्रेम नाम ।।१४१
कामेर तात्पर्य्य निज सम्भोग केवल ।
कृष्णसुख तात्पर्य्य हय प्रेम महाबल ।।१४२
लोकधर्म्म वेदधर्म्म देहधर्म्म कर्म्म ।
लज्जा धैर्य्य देह सुख आत्मसुख मर्म्म ।।१४३
दुस्त्यज आर्य्यपथ निज परिजन ।
स्वजने करये यत ताड़न भर्त्सन् ।।१४४
सर्व्वत्याग करि करे कृष्णेर भजन ।
कृष्णेर सुख हेतु करे प्रेम सेवन ।।१४५
इहारे कहिये कृष्णे दृढ़ अनुराग ।
स्वच्छ धौतवस्त्रे यैछे नाहि कोन दाग ।।१४६
अतएव काम, प्रेमे बहुत अन्तर ।
काम अन्धतम प्रेम निर्म्मल भास्कर ।।१४७
अतएव गोपीगणे नाहि काम गन्ध ।

कृष्णसुख लागि मात्र कृष्णेर सम्बन्ध ॥१४८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३१।१९)—

यत्ते सुजातचरणाम्बुरुहं स्तनेषु
भीताः शनैः प्रिय ! दधीमहि कर्कशेषु ।
तेनाटवीमटसि तद्व्यथते न किं स्वित्
कूर्पादिभिर्भ्रमति धीर्भवदायुषां नः ॥२६॥

टीका—हे प्रिय ! हे कृष्ण ! यत् ते सुजात-चरणाम्बुरुहं ते तव यत् सुजातचरणकमलं वयं भीताः सत्यः, कर्कशेषु कठिनेषु स्तनेषु दधीमहि धारणं कुर्व्वीमहि, तेन चरणेन त्वं अटवीं काननं अटसि भ्रमसि, तत् किं कूर्पादिभिरुच्चनीचैः खण्ड--प्रस्तरादिभिर्न व्यथते ? अपि तु व्यथत एव, इत्यस्माकं भवदायुषां भवानेव आयुर्यासां तासां धीर्बुद्धिः भ्रमति ॥२६॥

हे प्रिय ! हमारे कठिन वक्षःस्थल में तुम्हारे सुकोमल पद-कमल को भीरु हम सब धीरे धीरे स्थापन करती रहती हैं, चरण व्यथित न हो, उसी चरणों से तुम अरण्य भ्रमण कर रहे हो कठिन कङ्करों से क्या चरण व्यथित नहीं होता है,--यह सोच कर तद्गत प्राण हम सब विभ्रान्त हो गई हैं ।२६

आत्मसुखदुःखे गोपीर नाहिक विचार ।
कृष्ण सुख हेतु करे सङ्गते विहार ॥१४९
कृष्ण लागि आर सब करि परित्याग ।
कृष्ण सुख हेतु करे शुद्ध अनुराग ॥१५०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३२।२१)—

गोपी प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्—

एवं मदर्थोज्झितलोकवेद-
स्वानां हि वो मय्यनुवृत्तयेऽबला ।
मया परोक्षं भजता तिरोहितं
मासूयितुं मार्हथ तत् प्रियं प्रियाः ॥२७॥

टीका—एवं मदर्थोज्झित-लोकवेदस्वानां यो युष्माकं परोक्षं अदर्शनं यथा भवति तथा भजता मया तिरोहितं अन्तर्द्धानेन स्थितम् । तत्तस्मात् हे अबलाः ! हे प्रियाः ! प्रियं मां असूयितुं दोषारोपेण द्रष्टुं यूयं मा अर्हथ न योग्या स्थः ॥२७॥

मदीय प्रेम हेतु तुम सबने संसार को छोड़ ही दिया है । धर्माचार स्वजन बान्धव को भी परित्याग किया है । तुम सब के निरन्तर वर्द्धित अनुराग आस्वादन हेतु मैं तिरोहित हुआ, तुम सब मेरी प्रिया हो, मैं तुम सबके प्रिय हूँ । मुझ को दोषी न करो ।२७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।४६।४)—

ता मन्मनस्का मत्प्राणा मदर्थे त्यक्तदैहिकाः ।
मामेव दयितं प्रेष्ठमात्मानं मनसा गताः ॥२८॥

टीका—ता मन्मनस्का मद्गतचित्ताः, मत्-प्राणाः, मदर्थे त्यक्तदैहिकाः, दयितं प्रेष्ठं आत्मानं मामेव मनसा गताः ॥२८॥

वे मुझ को मन, प्राण, देह सम्पर्कित समस्त विषय, समर्पण किये हैं, मैं उन्हीं का दयित हूँ, प्रिय तम हूँ, आत्मस्वरूप हूँ—मुझ को वे मनके द्वारा प्राप्त करते रहते है ॥२८॥

कृष्णेर प्रतिज्ञा एक आछे पूर्व्व हैते ।
ये यैछे भजे तैछे ताहारे भजिते ॥१५१

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायां (४।११)—

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।
मम वर्त्मानुवर्त्तन्ते मनुष्याः पार्थ ! सर्व्वशः ॥२९

श्रीभगवद् गीता में लिखित हैं—

जो जिस भाव से मेरा भजन करता है, मैं भी उसका भजन उसी भाव से ही करता रहता हूँ । मनुष्य गण समस्त भावों से मेरा भजन कर सकते हैं ॥२९॥

से प्रतिज्ञा भङ्ग हैल गोपीर भजने ।
ताहाते प्रमाण कृष्ण श्रीमुखवचने ॥१५२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३२।२२)—

न पारयेऽहं निरवद्यसंयुजां
स्वसाधुकृत्यं विबुधायुसापि वः ।

मा मामजन् दुर्जरगेहशृङ्खलाः
संवृश्च्य तद्वः प्रतियातु साधुना ॥३०॥

टीका—रासे गोपीं प्रति श्रीकृष्णवचनं। यो युष्माकं किं स्वसाधुकृत्यं ऋणशोधनं कर्त्तुं विबुधायुषापि ब्रह्मण आयुषापि कालेनाह पारये न समर्थाः। यो युष्माकं किम्भूतानां?—निरवद्यसयुजां परमोत्कृष्टानिर्व्वचनीयः प्रेमसंयोगो यासां। तदेव व्यक्तीकरोति, या गोप्यः मा मां अभजन सेवितवत्यः। किं कृत्वा?—दुर्ज्जरगेहशृङ्खलाः संवृश्च्य सच्छेद्य। अतो ऋणी अहं, अतः साधुकृत्यं युष्माकं साधुना सद्गुणेन यदि योग्यो भवेत्, तदा प्रतियातु प्रतिकृतं भवतु ॥३०॥

अनिन्दद्य प्रेम परायण तुम सब का ऋण का परिशोध मैं देवताओं की आयुः को प्राप्त कर भी नहीं कर सकूँगा। तुम सबने दुश्छेद्य गृह बन्धन को छिन्न करके मेरा भजन किया है, अतः उस सुशीलता से ही ऋण का परिशोध हो ॥३०॥

तवे ये देखिये गोपीर निज देहे प्रीत।
सेहोत कृष्णेर लागि जानिह निश्चित ॥१५३
एइ देह कैल आमि कृष्णे समर्पण।
ताँर धन एइ ताँर सम्भोग साधन ॥१५४
ए देह दर्शन स्पर्शे कृष्णसन्तोषण।
एइ लागि करे देहेर मार्ज्जन भूषण ॥१५५

तथाहि गोपीप्रेमामृते श्रीकृष्णवाक्यम्—
निजाङ्गमपि या गोप्यो ममेति समुपासते।
ताभ्यः परं न मे पार्थ! निगूढ़प्रेमभाजनम् ॥३१

टीका—यो गोप्या निजाङ्गं निजदेहं ममेति मम सम्बन्धि तद्दर्शनादौ ममैव महत् सुखं स्यात्, इति ज्ञात्वा उपासते शुश्रूषते, ताभ्यः परं हे पार्थ! मम निगूढ़-प्रेमभाजनं नास्ति ॥३१॥

निज देह की भी कृष्ण का मान कर गोपी गण जो प्रसाधित करती रहती है, उन गोपी भी को छोड़कर—हे अर्जुन! मेरा प्रेम भाजन और कोई नहीं हैं ॥३१॥

आर एक अद्भुत गोपीभावेर स्वभाव।
बुद्धिर गोचर नहे याहार प्रभाव ॥१५६
गोपीगण करेन यबे कृष्ण दरशन।
सुख वाञ्छा नाहि सुख हय कोटिगुण ॥१५७
गोपिका दर्शने कृष्णेर ये आनन्द हय।
ताहा हैते कोटिगुण गोपी आस्वादय ॥१५८
ताँ सवार नाहि निज सुख अनुरोध।
तथापि वाड़ये सुख पड़िल विरोध ॥१५९
ए विरोधेर एक मात्र देखि समाधान।
गोपिकार सुख कृष्णसुखे पर्य्यवसान ॥१६०
गोपिका दर्शने कृष्णेर बाड़े प्रफुल्लता।
से माधुर्य्य बाड़े यार नाहिक समता ॥१६१
आमार दर्शने कृष्ण पाइल एत सुख।
एइ सुखे गोपीर प्रफुल्ल अङ्ग मुख ॥१६२
गोपीशोभा देखि कृष्णेर शोभा बाड़े यत।
कृष्णशोभा देखि गोपीर शोभा बाड़े तत।१६३
एइमत परस्पर पड़े हुड़ाहुड़ि।
परस्पर बाड़े केह मुख नाञि मुड़ि ॥१६४
किन्तु कृष्ण सुख हय गोपीरूपगुणे।
ताँर सुखे सुख बुद्धि हय गोपीगणे ॥१६५
अतएव सेइ सुखे कृष्ण सुख पोषे।
एइ हेतु गोपीप्रेमे नाहि काम दोषे ॥१६६

यथोक्तः श्रीरूपगोस्वामिना स्तवमालायां-
केशवाष्टके (८)—

उपेत्य पथि सुन्दरीततिभिराभिरभ्यर्चितं
स्मिताङ्कुरकरम्बितैर्नटदपाङ्गभङ्गीशतैः।
स्तनस्तवकसञ्चरन्नयनचञ्चरीकाञ्चनं
व्रजे विजयिनं भजे विपिनदेशतः केशवम् ॥३२

टीका—विपिनदेशतो विपिनदेशात् व्रजे

विजयिनं केशवं अहं भजे। किम्भूतं ?—सुन्दरी-ततिभिराभिः पथि उपेत्य आगमनं कृत्वा अभ्यर्चितम्। कैः करणैः ?—नटदपाङ्गभङ्गीशतैः किम्भूतैः ?—स्मिताङ्कुरकरम्बितैः। केशवं किम्भूतं ?—स्तनेति, तासां व्रजसुन्दरीणां स्तनस्तवकैः सञ्चरत् नयन-चञ्चरीकाञ्चनं यस्य तम्। स्तना एव स्तवकाः पुष्प-गुच्छाः, सञ्चरतीति सञ्चरत् नयन एव चञ्चरीकौ भ्रमरौ तयोरेव अञ्चनं गमनम्। नयन-चञ्चरी-काञ्जनमिति पाठे नयनचञ्चरीकयोरञ्जन कटाक्षम्। स्तनस्तवक-सञ्चरन्नयन-चञ्चरी-काञ्चलमिति पाठे स्तनाः स्तवकाः इव स्तनस्तवकाः तेषु सञ्चरन् नयनयोः चञ्चरीकयोः भृङ्गयोः इव अञ्चलं प्रान्तभागं यस्य सः तं लुप्तोपमेयं न च रूपकम् ॥३२॥

व्रज वन से गोष्ठ में प्रत्यावर्त्तन समय में व्रज बधू वृन्द मृदुहास--रोमाञ्च युक्त -नृत्यशील असंख्य कटाक्ष भङ्गी के द्वारा पथ में जिन की पूजा करती रहती हैं, जिनके नयन युगल व्रज सुन्दरी वृन्द के स्तन पुष्प स्तवक में सञ्चारित हो रहे हैं, विपिन देश से गोष्ठ में प्रत्यावर्त्तन कारी उन केशव का भजन में करता हूँ ॥३२॥

आर एक गोपीप्रेमेर स्वाभाविक चिह्न।
ये प्रकारे हय प्रेम कामदोष हीन ॥१६७
गोपीप्रेमे करे कृष्णमाधुर्य्येर पुष्टि।
माधुर्य्य बाड़ाय प्रेम हञा महातुष्टि ॥१६८
प्रीति विषयानन्दे तदाश्रयानन्द।
ताँहा नाहि निज सुख वाञ्छार सम्बन्ध ॥१६९
निरुपाधि प्रेम याँहा ताँहा एइ रीति।
प्रीति विषयेर सुखे आश्रयेर प्रीति ॥१७०
निज प्रेमानन्दे कृष्ण सेवानन्दे बाधे।
से आनन्देर प्रति भक्तेर हय महाक्रोधे ॥१७१

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पश्चिमविभागे द्वितीय-लहर्य्यां चतुस्त्रिंश श्लोके—

अङ्गस्तम्भारम्भमुत्तुङ्गयन्तं
प्रेमानन्दं दारुको नाभ्यनन्दत्।
कंसारातेर्वीजने येन साक्षा-
दक्षोदीयानन्तरायो व्यधायि ॥३३॥

टीका—दारुको भक्तोऽन्तः प्रेमानन्दं नाभ्यनन्दत् न साधुवादमकरोत्। कंसाराते कृष्णस्य जीवने चामर करणे येन अक्षोदीयान् महान् अन्तरायो व्यवधानं व्यधायि अकारि। किम्भूतं प्रेमानन्दं ?—अङ्ग-स्तम्भारम्भं उत्तुङ्गयन्तं अत्युच्चम् ॥३३॥

उदीयमान प्रेमानन्द से दारुक का अङ्ग स्तम्भित हुआ, आप श्रीकृष्ण को व्यजन कर रहे थे, अङ्ग स्तम्भित होने से साक्षात् भावसे सेवा में विघ्न उपस्थित हुआ, अतः दारुक उस प्रेमघन आनन्द को भी तिरस्कार किये थे ॥३३॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे तृतीय लहर्य्यां द्वात्रिंश श्लोके—

गोविन्दप्रेक्षणाक्षेपि वाष्पपूराभिवर्षिणम्।
उच्चैरनिन्ददानन्दमरविन्दविलोचना ॥३४॥

टीका—सा अरविन्दविलोचना आनन्द-मुच्चैरनिन्दत् निन्दां अकरोत्। किम्भूतं ?—वाष्प-पूराभिवर्षिणं, गोविन्दप्रेक्षणाक्षेपि गोविन्ददर्शन-विरोधि ॥३४॥

उस कमल लोचना ने निज आनन्द को अतिशय निन्दा की, कारण, गोविन्द दर्शन जनित आनन्द से नयनों से जो अश्रुधारा निर्गत हो रही थी, वही गोविन्द दर्शन का बाधक हो गई थी ॥३४॥

आर शुद्ध भक्त कृष्णप्रेम-सेवा विने।
स्वसुखार्थ सालोक्यादि ना करे ग्रहणे ॥१७२

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२९।११-१२)—
देवहूति प्रति कपिलवाक्यम्—

मद्गुणश्रुतिमात्रेण मयि सर्व्वगुहाशये।

मनोगतिरविच्छिन्ना यथा गङ्गाम्भसोऽम्बुधौ ॥
लक्षणं भक्तियोगस्य निर्गुणस्य ह्युदाहृतम् ।
अहैतुक्यव्यवहिता या भक्तिः पुरुषोत्तमे ॥३५॥

टीका—निर्गुणा तु भक्तिरेकविधैव, तामाह मद्गुणश्रुतिमात्रेणेति द्वाभ्याम् । अविच्छिन्ना सन्तता, अहैतुकी फलानुसन्धानशून्या, अव्यवहिता भेददर्शन-रहिता च मद्गुणश्रुतिमात्रेण मयि पुरुषोत्तमे मनो-गतिरिति या भक्तिः सा निर्गुणस्य भक्तियोगस्य लक्षणमित्यन्वयः । लक्षणं स्वरूपम् ॥३५॥

समुद्र के अभिमुख में गङ्गा की गति जिस प्रकार निरन्तरा होती है, उस प्रकार मदीय गुण श्रवण से मेरे प्रति भी व्यक्ति वृन्द की जो निरन्तरा मनोगति है । पुरुषोत्तम में अकारण एवं अव्यवहित इस प्रकार भक्ति योग को ही निष्काम भक्ति योग कहते हैं ॥३५॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२९।१३)—

सालोक्यसार्ष्टि-सारूप्य-सामीप्यैकत्वमप्युत ।
दीयमानं न गृह्णन्ति विना मत्सेवनं जनाः ॥३६॥

टीका—सालोक्यादि-मुक्तिं जनाः (भक्ताः) मत्सेवनं विना मया दीयमानमपि न गृह्णन्ति, अन्वेषणं कुतः ? ॥३६॥

मदीय सेवा में सन्तुष्ट चित्त व्यक्ति गण सालोक्य, सार्ष्टि, सारूप्य, सामीप्य एवं सायुज्य-रूप पञ्च विध मुक्ति प्रदान करने पर भी ग्रहण नहीं करते हैं ॥३६॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (९।४।६७)—

मत्सेवया प्रतीतं ते सालोक्यादिचतुष्टयम् ।
नेच्छन्ति सेवया पूर्णाः कुतोऽन्यत्कालविप्लुतम् ।३७

टीका—ते भक्तजनाः मत्-सेवया प्रतीतं प्राप्तं सालोक्यादिचतुष्टयं न इच्छन्ति । तत्र कारणं, सेवया पूर्णाः अन्यत् कालविप्लुतं कालभ्रष्टं स्वर्गादिकं कुतः ? ॥३७॥

मदीय सेवा के द्वारा परिपूर्ण चित्त व्यक्ति गण, सालोक्यादि चतुर्विध मुक्ति को ग्रहण नहीं करते है । विनाश शील स्वर्गादि लाभ की कथा तो दूर है ॥३७॥

कामगन्धहीन स्वाभाविक गोपी प्रेम ।
निर्म्मल उज्ज्वल शुद्ध येन दग्धहेम ॥१७३
कृष्णेर सहाय गुरु, बान्धव, प्रेयसी ।
गोपीका हयेन प्रिया, शिष्या, सखी, दासी ॥१७
गोपिका जानेन कृष्णेर मनेर वाञ्छित ।
प्रेमसेवा परिपाटि इष्ट समीहित ॥१७५

तथाहि लघुभागवतामृते उत्तरखण्डे-

गोपीप्रेमामृते (३२)–

सहाया गुरवः शिष्या भुजिष्या बान्धवाः स्त्रियः ।
सत्यं वदामि ते पार्थ ! गोप्यः किं मे भवन्ति न ॥३

टीका—हे पार्थ ! ते तव सम्बन्धे सत्यम् वदामि, गोप्यः किं मे मम न भवन्ति ? यत सहायादयः ॥३८॥

हे पार्थ ! मैं सत्य कहता हूँ । गोपीगण—मेरे सहायक, गुरु, शिष्य, दासी, बन्धु, एवं भार्य्या हैं मेरी मर्य्यादा, मेरी सेवा, मेरी श्रद्धा, एवं मेरे

तथाहि लघुभागवतामृते (३५)—

मन्माहात्म्यं मत्सपर्य्यां मत्श्रद्धां मन्मनोगतम् ।
जानन्ति गोपिकाः पार्थ, नान्ये जानन्ति तत्त्वतः ॥

टीका—हे पार्थ ! मन्माहात्म्यं मत्सपर्य्यां मम परिचर्य्यां मच्छ्रद्धां मन्मनोगतं गोपिका ए जानन्ति, न अन्ये ॥३९॥

अभिलाषा केवल गोपीवृन्द ही जानती हैं, और कोई नहीं ॥२८–४९॥

सेइ गोपीगण मध्ये उत्तमा राधिका ।
रूपे गुणे सौभाग्ये प्रेमे सर्व्वाधिका ॥१७

तथाहि लघुभागवतामृते उत्तरखण्डे भक्ताम्
एकचत्वारिंश अङ्कधृतपद्मपुराणवाक्यम्—

यथा राधा प्रिया विष्णोस्तस्या कुण्डं प्रियं तथा।
सर्व्वगोपीषु सैवैका विष्णोरत्यन्तवल्लभा ॥४०॥

टीका—यथा कृष्णस्य प्रिया राधा, तस्या राधायाः कुण्डमपि तथा कृष्णस्य प्रियं। सा राधा कृष्णस्य प्रिया सर्व्वगोपीषु मध्येषु एकामुख्या, यतोऽत्यन्तवल्लभा ॥४०॥

जिस प्रकार कृष्ण की प्रियतमा श्रीराधा है, उस प्रकार राधाकुण्ड स्थान भी कृष्ण का प्रियतम है। श्रीराधा ही समस्त गोपीओं के मध्यमें सर्वाधिक प्रिया हैं ॥४०॥

तथाहि गोपीप्रेमामृते (४३)—

त्रैलोक्ये पृथिवी धन्या यत्र वृन्दावनं पुरी।
तत्रापि गोपिकाः पार्थ, यत्र राधाभिधा मम ॥४१

टीका—हे पार्थ ! यत्र वृन्दावन पुरीविराजते, सा पृथिवी त्रैलोक्ये त्रिभुवन-मध्ये धन्या, तत्रापि गोपिकाः धन्याः, यत्र गोपिकासु राधाभिधा श्रीराधानाम्नी गोपी मम वल्लभा ॥४१॥

त्रिलोक में पृथिवी ही धन्या है, कारण, यहाँ वृन्दावन पुरी है। वृन्दावन में भी गोपी वृन्द ही धन्या हैं—कारण, उन सब के मध्य में मेरी प्रिया राधा विद्यमान हैं ॥४१॥

राधा सह क्रीड़ा रस वृद्धिर कारण।
आर सब गोपीगण रसोपकरण ॥१७७॥
कृष्णेर वल्लभा राधा कृष्ण प्राणधन।
ताँहा विनु सुख हेतु नहे गोपीगण ॥१७८

तथाहि श्रीजयदेवचरणैः श्रीगीतगोविन्दे (३।१)—

कंसारिरपि संसारवासनाबद्धशृङ्खलाम्।
राधामाधाय हृदये तत्याज व्रजसुन्दरीः ॥४२॥

टीका—कंसारिः श्रीकृष्णः ताः व्रजसुन्दरीस्तत्याज। किं कृत्वा ?—राधां हृदये आधाय धारणं कृत्वा। किम्भूतां राधां ?—संसारवासनाबद्धशृङ्खलाम् ॥४२॥

रासलीला की विलास स्वरूपा राधा को हृदय में धारण कर श्रीकृष्ण भी व्रजाङ्गना गण को परित्याग किये थे ॥४२॥

सेइ राधार भाव लैया चैतन्यावतार।
युगधर्म्म नाम प्रेम कैल परचार ॥१७९
सेइ भावे निज वाञ्छा करिल पूरण।
अवतारेर एइ वाञ्छा मूल कारण ॥१८०
श्रीकृष्णचैतन्य गोँसाञि व्रजेन्द्रकुमार।
रसमय मूर्त्ति कृष्ण साक्षात् शृङ्गार ॥१८१
सेइ रस आस्वादिते कैल अवतार।
आनुसङ्गे हैल सब रसेर प्रचार ॥१८२

तथाहि जयदेवचरणैः श्रीगीतगोविन्दे (१।४७)—

विश्वेषामनुरञ्जनेन जनयन्नानन्दमिन्दीवर-
श्रेणीश्यामल-कोमलैरुपनयन्नङ्गैरनङ्गोत्सवम्।
स्वच्छन्दं व्रजसुन्दरीभिरभितः प्रत्यङ्गमालिङ्गितः-
शृङ्गारः सखि, मूर्त्तिमानिव मधौ मुग्धो हरिः
क्रीड़ति ॥४३॥

टीका—हे सखि ! मधौ वसन्ते मुग्धो हरिः क्रीड़ति। किं कुर्व्वन् ?—विश्वेषां सर्व्वगोपीगणानां अनुरञ्जनेन तेषां स्व-स्व-वाञ्छितातिरिक्त-रसदानात् प्रीणनेनानन्दं जनयन्। पुनः किं कुर्व्वन् ?—अङ्गैरनङ्गोत्सवनाधिक्येन प्रापयन्। कीदृशैः ?—नीलकमलश्रेणीतोऽपि श्यामल-कोमलैः। इन्दीवरशब्देन शीतलत्वं, श्रेणीपदेन नवनवायमानत्वं, श्यामलपदेन सुन्दरत्वं, कोमलशब्देन सुकुमारत्वं सूचितम्। नायकस्यानुरागे सत्यपि नायिकानुरागमन्तरेण कथं तदुदयः स्यात् ? अत आह,—व्रजसुन्दरीभिरालिङ्गितः आलिङ्गनानुरञ्जनेनानुरञ्जितः। ननु एकेनानेकासां समाधानं कथं स्यात् तत्राह,—शृङ्गाररसो मूर्त्तिमान्। यतः सोपि एक एव विश्वमनुरञ्जयन्नानन्दयति ॥४३

हे सखि ! सुनील पद्म के समान कोमल एवं श्यामल अङ्ग के द्वारा विश्ववासी को अनुरञ्जित करके एवं व्रजाङ्गना वृन्द के मध्य में अनङ्गोत्सव

करके मूर्त्तिमान् शृङ्गार के समान मधुमास में मुग्ध कृष्ण व्रजसुन्दरी के द्वारा प्रति अङ्ग आलिङ्गित होकर क्रीड़ा रत हैं ।।४३।।

श्रीकृष्ण चैतन्य गोँसाञि रसेर सदन ।
अशेष विशेषे कैल रस आस्वादन ।।१८३
सेइ द्वारे प्रवर्त्ताइल कलियुग धर्म्म ।
चैतन्येर दासे जाने एइ सब मर्म्म ।।१८४
अद्वैत आचार्य्य नित्यानन्द श्रीनिवास ।
गदाधर दामोदर मुरारि हरिदास ।।१८५
आर यत चैतन्य कृष्णेर भक्तगण ।
भक्तिभावे शिरे धरि सबार चरण ।।१८६
षष्ठ श्लोकेर एइ करिल आभास ।
मूल श्लोकेर अर्थ शुन करिये प्रकाश ।।१८७

तथाहि श्रीरूपगोस्वामिकड़चायाम्—

श्रीराधायाः प्रणयमहिमा कीदृशो वानयैवा-
स्वाद्यो येनाद्भुतमधुरिमा कीदृशो वा मदीयः ।
सौख्यं चास्या मदनुभवतः कीदृशं वेतिलोभा-
त्तद्भावाढ्यः समजनि शचीगर्भसिन्धौ हरीन्दुः ।।४४

(१) श्रीराधा की प्रेम महिमा कितनी है ? (२) उस प्रेम दृष्टि से श्रीकृष्ण माधुर्य्यास्वादन की चमत्कारिता कितनी है ? (३) उस चमत् कारिता का अनुभव करके राधा कितनी आनन्दित होती है ? इन तीनों विषयों को विशेष रूप से आस्वादन करने के निमित्त श्रीकृष्ण—श्रीराधा की भावकान्ति को ग्रहण कर श्रीकृष्ण चैतन्य रूपमें समुद्रसे चन्द्रोदयवत् शची गर्भ सिन्धु से हरीन्दु आविर्भूत हुये थे ।।४४।।

ए सब सिद्धान्त गूढ़ कहिते ना जुयाय ।
ना कहिले केह इहार अन्त नाहि पाय ।।१८८
अतएव कहि किछु करिया निगूढ़ ।
बुझिवे रसिक भक्त ना बुझिवे मूढ़ ।।१८९
हृदये धरये ये चैतन्यनित्यानन्द ।
ए सब सिद्धान्त सेइ पाइवे आनन्द ।।१९०
ए सब सिद्धान्त रस आम्रेर पल्लव ।
भक्तगण कोकिलेर सर्व्वदा वल्लभ ।।१९१
अभक्त उष्ट्रेर इथे ना हय प्रवेश ।
तवे चित्ते हय मोर आनन्द विशेष ।।१९२
ये लागि कहिते भय से यदि ना जाने ।
इहा वइ किवा सुख आछे त्रिभुवने ।।१९३
अतएव भक्तगणे करि नमस्कार ।
निःशङ्के कहिये सभार हउक चमत्कार ।।१९४
कृष्णेर विचार एक रहये अन्तरे ।
पूर्णानन्द पूर्णरस रूप कहे मोरे ।।१९५
आमा हैते आनन्दित हय त्रिभुवन ।
आमाके आनन्द दिवे ऐछे कोन् जन ।।१९६
आमा हैते यार हय शत शत गुण ।
सेइ जन आह्लादिते पारे मोर मन ।।१९७
आमा इहते गुणी बड़ जगते असम्भव ।
एकलि राधाते ताहा कहि अनुभव ।।१९८
कोटि काम जिनि रूप यद्यपि आमार ।
असमोर्द्ध्वमाधुर्य्य साम्य नाहि यार ।।१९९
मोर रूपे आप्यायित हय त्रिभुवन ।
राधार दर्शने मोर जुड़ाय नयन ।।२००
मोर वंशीगीते आकर्षये त्रिभुवन ।
राधार वचने हरे आमार श्रवण ।।२०१
यद्यपि आमार गन्धे जगत् सुगन्ध ।
मोर चित्त घ्राण हरे राधा अङ्ग गन्ध ।।२०२
यद्यपि आमार रसे जगत सरस ।
राधार अधर रस मोरे करे वश ।।२०३
यद्यपि आमार स्पर्श कोटीन्दु शीतल ।

राधिकार स्पर्शे आमा करे सुशीतल ॥२०४
एइ मत जगतेर सुखे आमि हेतु ।
राधिकार रूप गुण आमार जीवातु ॥२०५
एइ मत अनुभव आमार प्रतीत ।
विचारि देखिये यवे सब विपरीत ॥२०६
राधार दर्शने मोर जुड़ाय नयन ।
आमार दर्शने राधा सुखे अगे-आन ॥२०७
परस्पर वेणुगीते हरये चेतन ।
मोर भ्रमे तमालेरे करे आलिङ्गन ॥२०८
कृष्ण आलिङ्गन पाइनु जन्म सफले ।
सेइ सुखे मग्न रहे वृक्ष करि कोले ॥२०९
अनकूलवाते यदि पाय मोर गन्ध ।
उड़िया पड़िते चाहे प्रेमे हञा अन्ध ॥२१०
ताम्बूलचर्व्वित यवे करे आस्वादने ।
आनन्दसमुद्रे मग्न किछुइ ना जाने ॥२११
आमार सङ्गमे राधा पाय ये आनन्द ।
शतमुखे कहि तबु नाहि पाइ अन्त ॥२१२
लीला अन्ते सुखे इहार ये अङ्ग माधुरी ।
ताहा देखि सुखे आमि आपना पासरि ॥२१३
दोँहार ये सम रस भरत मुनि माने ।
आमार व्रजेर रस सेह नाहि जाने ॥२१४
अन्योन्य सङ्गमे आमि यत सुख पाइ ।
ताहा हैते राधा सुख शत अधिकाइ ॥२१५

तथाहि ललितमाधवे (९।५)—

श्रीराधिकांप्रति श्रीकृष्ण वाक्यम् (९।५)

निर्धूतामृतमाधुरी-परिमलः कल्याणि विम्बाधरो-
वक्त्रं पङ्कजसौरभं कुहुरुत श्लाघाभिदस्ते गिरः ।
अङ्गश्चन्दनशीतलस्तनुरियं सौन्दर्य्यसर्व्वस्वभाक्-
त्वामासाद्य ममेदमिन्द्रियकूलं राधे मुहुर्मोदते ॥४५

टीका —हे राधे कल्याणि ! ते तव विम्बाधरः निर्धूतामृत माधुरीं-परिमलः निर्धूतोऽमृतमाधुरी परिमलो येन सः । ते तव वक्त्रं किम्भूतं ? पङ्कजस्येव सौरभं यस्य स तं । गिरः किम्भूताः ? कुहुरुत श्लाघाभिदः । तवाङ्ग किम्भूतः ? चन्दन-शीतलः । ते तनुः किम्भूत ? सौन्दर्य्य–सर्व्वस्वभाक् सौन्दर्य्यस्य सर्व्वस्वं भजति । हे कल्याणि ! त्वामासाद्य आश्लिष्य मम इन्द्रियकुल मुहुर्बारम्बारं मोदते आनन्दते ॥४५॥

हे कल्याणि ! तुम्हारे विम्बाधर—अमृत के माधुर्य्य परिमल को पराजित किया है, तुम्हारे मुख पङ्कज- पद्म सौरभ का पराजित किया है, तुम्हारी वाणी— कोकिल की काकलि को पराजित किया है, तुम्हारे अङ्ग चन्दन से भी शीतल है, तुम्हारे तनु-सर्व सौन्दर्यमय है । राधे ! तुम्हारे सहित मिलन से मेरी इन्द्रिय समूह आकुल भावसे अनुक्षण आनन्दित हैं ।

तथाहि श्रीरूपगोस्वामिनोक्तम्—

रूपे कंसहरस्य लुब्धनयनां स्पर्शेऽतिहृष्यत्त्वचं,
वाण्यामुत्कलितश्रुतिं परिमले संहृष्टनासापुटाम् ।
आरज्यद्रसनां किलाधररसे न्यञ्चन्मुखाम्भोरुहां
दम्भोद्गीर्णमहाधृतिं वहिरपि प्रोद्यद्विकाराकुलाम् ।४६

टीका—तां राधां किम्भूतां—कंसहरस्य रूपे लुब्धनयनां । पुनः किम्भूतां ? कंसहरस्य स्पर्शेऽतिहृष्यत्त्वचं । पुनः किम्भूतां ?—कंसहरस्य वाण्यामुत्-कलित-श्रुतिं । पुनः कथम्भूतां ?-कंसहरस्य नासापुटं यया । पुनः किम्भूतां ? — कंसहरस्याधररसे किल निश्चितं आरज्यद्रसना यस्याः सा तां । वहिरपि प्रोद्यत्--विकाराकुलां । पुनः किम्भूतां ?—दम्भोत-गीर्णमहाधृति दम्भेन कपटेन उद्गीर्णा महाधृतिर्यया सा तां । पुनः किम्भूतां ?—न्यञ्चन्मुखाम्भोरुहां ।४६

कृष्ण के रूप में राधा के नयन, लुब्ध हैं, स्पर्श से त्वक् रोमाञ्चित है, कथा से श्रवण व्याकुल हैं, सौरभ से नासिका आनन्द विभोर है,अधर रसके हेतु रसना प्रलोभित है, तथापि आप किसी प्रकार मुख

पद्म को नत करती हैं,एवं गर्व से मनोभाव को गोपन करती हैं, किन्तु विकार से आकुल हैं ।।४५--४६।।

ताते जानि मोते आछे कोन एक रस ।
आमार मोहिनी राधा तारे करे वश ।।२१६
आमा इहते राधा पाय ये जातीय सुख ।
ताहा आस्वादिते आमि सदाइ उन्मुख ।।२१७
नाना यत्न करि आमि नारि आस्वादिते ।
सेइ सुखमाधुर्य्य घ्राणे लोभ बाड़े चिते ।२१८
रस आस्वादिते आमि कैल अवतार ।
प्रेमरस आस्वादिल विविध प्रकार ।।२१९
रागमार्गे भक्त भक्ति करे ये प्रकारे ।
ताँहा शिखाइल लीला आचरण द्वारे ।।२२०
एइ तिन तृष्णा मोर नहिल पूरण ।
विजातीय भावे नहे ताहा आस्वादन ।।२२१
राधिकार भाव कान्ति अङ्गीकार विने ।
सेइ तिन सुख कभु नहे आस्वादने ।।२२२
राधा भाव अङ्गीकरि धरि तार वर्ण ।
तिन सुख आस्वादिते हव अवतीर्ण ।।२२३
सर्व्वभावे करिल कृष्ण एइत निश्चय ।
हेनकाले आइल युगावतार समय ।।२२४
सेइकाले श्रीअद्वैत करे आराधन ।
ताँहार हुङ्कारे कैल कृष्ण आकर्षण ।।२२५
पिता माता गुरुगण आगे अवतारि ।
राधिकार भाव वर्ण अङ्गीकार करि ।।२२६

नवद्वीपे शचीगर्भ शुद्ध-दुग्धसिन्धु ।
ताहाते प्रकट हैला कृष्ण पूर्ण इन्दु ।।२२
एमत षष्ठ श्लोकेर करिल व्याख्यान ।
स्वरूप गोँसाञिर पादपद्म करि ध्यान ।।२
एइ दुइ श्लोकेर आमि ये करिल अर्थ ।
श्रीरूप गोँसाञिर श्लोक प्रमाण समर्थ ।।२

तथाहि स्तवमालायां (२।३)—

अपारं कस्यापि प्रणयिजनवृन्दस्य कुतुकी
रसस्तोमं हृत्वा मधुरमुपभोक्तुं कमपि यः ।
रुचं स्वामावव्रे द्युतिमिह तदीयां प्रकटयन्
स देवश्चैतन्याकृतिरतितरां नः कृपयतु ।।४७

कौतुकी श्रीकृष्ण—प्रणयिनी वृन्द के अनिर्वचनीय प्रेमसम्भार को आस्वादन करने के निमित्त निज श्यामल कान्ति को तदीय कान्ति के द्वारा आच्छादित करके श्रीकृष्ण चैतन्य रूप में आविर्भूत हुये हैं, आप हम सबके प्रति कृपा करें ।४

मङ्गलाचरणं कृष्णचैतन्यतत्त्वलक्षणम् ।
प्रयोजनञ्चावतारे श्लोकषट्कैर्निरूपितम् ।।४८

टीका—चैतन्यचन्द्रस्य सामान्य-विशेष मङ्गलाचरणं, चैतन्यस्य तत्त्वलक्षणं,अवतारे अवतार विषये मूलप्रयोजनं, षट्कैः श्लोकैर्निरूपितम् ।।४८।।

मङ्गलाचरण–कृष्ण चैतन्य का तत्त्व निर्णय एवं अवतार के प्रयोजन विषयों का वर्णन षट्श्लोकों के द्वारा हुआ है ।।४८।।

श्रीरूप रघुनाथ पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ।।२३०

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदि खण्डे श्रीचैतन्यावतार मूल प्रयोजन कथनं नाम चतुर्थः परिच्छेदः ।।



❀ पञ्चम परिच्छेद ❀



तथाहि ग्रन्थकारस्य—

वन्देऽनन्ताद्भुतैश्वर्यं श्रीनित्यानन्दमीश्वरम् ।
यस्येच्छया तत्स्वरूपमज्ञेनापि निरूप्यते ॥१॥

टीका—श्रीनित्यानन्दमीश्वर--मनन्ताद्भुतैश्वर्यं अहं वन्दे। यस्येच्छया तत्स्वरूपं मया अज्ञेनापि निरूप्यते ॥१॥

अनन्त एवं अपूर्व ऐश्वर्य्यशाली ईश्वर स्वरूप श्रीनित्यानन्द की वन्दना करता हूँ। आप की कृपा से अज्ञ लोक भी आपके स्वरूप को जान सकते हैं ॥१

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१॥
षष्ठ श्लोके कहिल कृष्णचैतन्य महिमा ।
पञ्च श्लोके कहि नित्यानन्द-तत्त्व-सीमा ॥२॥
सर्व्व अवतारी कृष्ण स्वयं भगवान् ।
ताँहार द्वितीय देह श्रीबलराम ॥३॥
एकइ स्वरूप दोँहार भिन्नमात्र काय ।
आद्य कायव्यूह कृष्ण लीलार सहाय ॥४॥
सेइ कृष्ण नवद्वीपे श्रीचैतन्यचन्द्र ।
सेइ बलराम सङ्गे श्रीनित्यानन्द ॥५॥

तथाहि श्रीरूपगोस्वामिकड़चाया: श्लोक:—

सङ्कर्षण: कारणतोयशायी
गर्भोदशायी च पयोऽब्धिशायी ।
शेषश्च यस्यांशकला: स नित्या
नन्दाख्यराम: शरणं ममास्तु ॥२॥

जिन के अंश एवं कला कारण समुद्र शायी सङ्कर्षण, गर्भोदशायी, विराट् क्षीरोदशायी विष्णु एवं अनन्त देव हैं, उन नित्यानन्द रूपी बलराम की मैं शरण ग्रहण करता हूँ ? ॥२॥

श्रीबलराम गोँसाञि मूल सङ्कर्षण ।
पञ्चरूप धरि करे कृष्णेर सेवन ॥६॥
आपने करेन कृष्ण लीलार सहाय ।
सृष्टिलीला कार्य्य करे धरि चारि काय ॥७
सृष्टयादिक सेवा ताँर आज्ञार पालन ।
शेषरूपे करे कृष्ण विविध सेवन ॥८॥
सर्व्वरूपे आस्वादये कृष्ण सेवानन्द ।
सेइ राम चैतन्य सङ्गे श्रीनित्यानन्द ॥९॥
सप्तम श्लोकेर अर्थ करि चारिश्लोके ।
याते नित्यानन्द-तत्त्व जाने सर्व्वलोके ॥१०॥

तथाहि श्रीरूपगोस्वामिकड़चाया: श्लोक:—

मायातीते व्यापि वैकुण्ठलोके
पूर्णैश्वर्य्ये श्रीचतुर्व्यूहमध्ये ।
रूपं यस्योद्भाति सङ्कर्षणाख्यं
तं श्रीनित्यानन्दरामं प्रपद्ये ॥३॥

मैं बलराम रूपी नित्यानन्द की शरण ग्रहण करता हूँ। जो बलराम सङ्कर्षण रूप में वैकुण्ठ के चतुर्व्यूह के मध्य में विराजित हैं, ये चतुर्व्यूह-अर्थात वासुदेव, सङ्कर्षण, प्रद्युम्न एवं अनिरुद्ध--षड़ैश्वर्य्य पूर्ण हैं। सर्वव्यापी एवं मायातीत वैकुण्ठ में ये सब नित्य विराजित हैं ॥३॥

प्रकृतिर पार परव्योम नाम धाम ।
कृष्ण विग्रह यैछे विभुत्वादि गुणवान् ॥११
सर्व्वग अनन्त ब्रह्म वैकुण्ठादि धाम ।
कृष्ण कृष्ण अवतारेर ताहाइ विश्राम ॥१२
ताँहार उपरिभागे कृष्णलोक ख्याति ।
द्वारका मथुरा गोकुल त्रिविधत्वे स्थिति ॥१३

सर्व्वोपरि श्रीगोकुल व्रजलोकधाम ।
श्रीगोलोक श्वेतद्वीप वृन्दावन नाम ॥१४
सर्व्वग अनन्त विभु कृष्ण तनु सम ।
उपर्य्यधो व्यापियाछे नाहिक नियम ॥१५
ब्रह्माण्डे प्रकाश ताँर कृष्णेर इच्छाय ।
एकइ स्वरूप ताँर नाहि दुइ काय ॥१६॥
चिन्तामणि भूमि कल्पवृक्षमय वन ।
चर्म्मचक्षे देखे ताँरे प्रपञ्चेर सम ॥१७॥
प्रेमनेत्रे देखे ताँर स्वरूप प्रकाश ।
गोप गोपी सङ्गे ताँहा कृष्णेर विलास ॥१८

तथाहि ब्रह्मसंहितायां (५।२५)

चिन्तामणि-प्रकरसद्मसु कल्पवृक्ष-
लक्षावृतेषु सुरभीरभिपालयन्तम् ।
लक्ष्मीसहस्रशतसम्भ्रमसेव्यमान
गोविन्दमादि पुरुषं तमहं भजामि ॥४॥

टीका—तमादिपुरुषं गोविन्दं अहं भजामि । किम्भूतं ?—लक्ष्मीसहस्र-शतसंभ्रम-सेव्यमानं । कस्मिन् स्थाने ?—चिन्तामणिप्रकरसद्मसुकल्प—वृक्षलतावृतेषु । गोविन्दं पुन किम्भूतं ?-सुरभीरभिपालयन्तम् ॥४॥

लक्षलक्ष कल्पतरु समावृत चिन्तामणिमय मन्दिर में शत सहस्र लक्ष्मी के द्वारा सेवित होकर जो स्वयं गो पालन करते रहते हैं— उन आदि पुरुष गोविन्द का भजन मैं करता हूँ ॥४॥

मथुरा द्वारकाय निज रूप प्रकाशिया ।
नाना रूपे विलसये चतुर्व्यूह हैञा ॥१९॥
वासुदेव सङ्कर्षण प्रद्युम्नानिरुद्ध ।
सर्व्व चतुर्व्यूह अंशी तुरीय विशुद्ध ॥२०
एइ तिन लोके कृष्ण केवल लीलामय ।
निजगुण लञा खेले अनन्त समय ॥२१
परव्योम मध्ये करि स्वरूप प्रकाश ।
नारायण रूपे करे विविध विलास ॥२२
स्वरूप विग्रह कृष्णेर केवल द्विभुज ।
नारायणरूपे सेइ तनु चतुर्भुज ॥२३
शङ्ख चक्र गदा पद्म महैश्वर्य्यमय ।
श्री भू लीला शक्ति याँर चरण सेवय ॥२४
यद्यपि केवल ताँर क्रीड़ामात्र धर्म्म ।
तथापि जीवेर कृपाय करे एत कर्म्म ॥२५
सालोक्य सामीप्य सार्ष्टि सारूप्य प्रकार ।
चारि मुक्ति दिया करे जीवेर निस्तार ॥२६
ब्रह्मसायुज्य मुक्तिर ताँहा नाहि गति ।
वैकुण्ठ वाहिरे ता सवार हय स्थिति ॥२७
वैकुण्ठ वाहिरे एक ज्योतिर्म्मय मण्डल ।
कृष्णेर अङ्गेर प्रभा परम उज्ज्वल ॥२८
सिद्धलोक नाम ताँर प्रकृतिर पार ।
चित्स्वरूप ताहा नाहि चिच्छक्ति विकार ॥२
सूर्य्येर मण्डल यैछे वाहिरे निर्व्विशेष ।
भितरे सूर्य्येर रथ आदि सविशेष ॥३०

तथाहि श्रीमद्भागवते (७।१।२९)—

युधिष्ठिरं प्रति नारदवाक्यम्—
कामाद्द्वेषाद्भयात् स्नेहात् यथा भक्त्येश्वरे मनः ।
आवेश्य तदघं हित्वा बहवस्तद्गतिं गताः ॥५॥

टीका—यथाभक्त्या यथायोग्यभक्त्या ईश्वरे मन आवेश्य मनो निवेश्य बहवो जनास्तद्गति तस्य गतिं स्थानं गताः प्राप्ताः । तदघं हित्वा द्वेषसम्बन्ध-प्रतीपमघं हित्वापि । कस्मात् गोप्यकामात्, भयात् कंसः, द्वेषात् शिशुपालादयः, सम्बन्धेन यादवाः, स्नेहात् युधिष्ठिरादयः ॥५॥

सूर्य्य एवं सूर्य्य किरण जिस प्रकार अभिन्न है, उस प्रकार कृष्ण एवं ब्रह्म अभिन्न हैं । अतएव वैरी एवं प्रिय व्यक्ति के प्राप्य को एक रूपमें वर्णन शास्त्र

करते हैं ।।५।।

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ साधनभक्तिलहर्य्यां श्रीरूपगोस्वामिना उक्तम्—

यदरीणां प्रियाणाञ्च प्राप्यमेकमिवोदितम् ।
तद्ब्रह्मकृष्णयोरैक्यात् किरणार्कोपमाजुषोः ।।६

टीका—अरीणां कसचैद्यादीनां प्रियाणां गोपीनां युधिष्ठिरादीनामेकं ब्रह्म प्राप्यमिव उक्तं कथितं, यत्तत् ब्रह्मकृष्णयोरैक्यात् एकी भवेत् । ब्रह्म कृष्णयोः किरणार्कोपमाजुषोर्यथा किरणस्य सूर्य्यस्य ऐक्यकिरणरूपं ब्रह्मसूर्य्यरूपं कृष्णः ।।६।।

मायिक सीमा उत्तीर्ण होने से ही आनन्दमय सिद्ध लोक उपलब्ध होता है । यहाँ ब्रह्म सुख मग्न सिद्ध गण जिस प्रकार निवास करते हैं, उस प्रकार श्रीकृष्ण निहत दैत्यगण भी निवास करते हैं ।

ब्रह्म एवं श्रीकृष्ण--एक वस्तु होने के कारण अरिवृन्द के एवं प्रियवृन्द के एक प्राप्य कथित हुआ है । किन्तु उसका पार्थकच—सूर्य्य एवं सूर्य्य के किरण रूप में है, अर्थात् सूर्य्य एवं सूर्य्य किरण एक पदार्थ होने पर भी उस में जिस प्रकार परस्पर अङ्गाङ्गी भेद दृष्ट होता है, उस प्रकार श्रीकृष्ण एवं ब्रह्म में भेद है । अरिवृन्द किरण स्थानीय गति को प्राप्त करते हैं, एवं प्रिय व्यक्ति गण--सूर्य्य स्थानीय श्रीकृष्ण को प्राप्त करते हैं ।।६।।

तैछे परव्योमे नाना चिच्छक्तिविलास ।
निर्विशेष ज्योतिर्विम्ब वाहिरे प्रकाश ।।३१।।
निर्विशेष ब्रह्म-सेइ केवल ज्योतिर्म्मय ।
सायुज्येर अधिकारी ताँहा पाय लय ।।३२

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ साधनभक्तिलहर्य्यां वशाधिकशाताङ्कधृत-ब्रह्माण्डपुराणवचनम्—

सिद्धलोकस्तु तमसः पारे यत्र वसन्ति हि ।
सिद्धा ब्रह्मसुखे मग्ना दैत्याश्च हरिणा हताः ।।७

टीका—तमसः मायायाः पारे सिद्धलोकस्तु । तत्र हि निश्चितं सिद्धा ब्रह्मसुखे मग्नाः सन्तो वसन्ति । तत्र हरिणा हता दैत्याश्च वसन्ति ।।७।।

पृथिवी, जल, तेज मरुत, आकाश, अहङ्कार, महत्तत्त्व एवं प्रकृति के पश्चात् सिद्धलोक विराजित है, अहं ब्रह्म भावना परायण व्यक्ति गण एवं श्रीहरि कर्त्तृक निहत दैत्य वृन्द का प्राप्य स्थान वही है, यह सिद्ध लोक प्रकृत्यतीत है ।।७।।

सेइ परव्योमे चतुर्व्यूह चारि पाशे ।
द्वारिका चतुर्व्यूहेर द्वितीय प्रकाशे ।।३३
वासुदेव सङ्कर्षण प्रद्युम्नानिरुद्ध ।
द्वितीय चतुर्व्यूह एइ तुरीय विशुद्ध ।।३४
ताहा ये नामेर रूप महासङ्कर्षण ।
चिच्छक्ति आश्रय तिँहो कारणेर कारण ।।३५
चिच्छक्तिविलास एक शुद्धसत्त्व नाम ।
शुद्धसत्त्वमय यत वैकुण्ठादि धाम ।।३६
षड़् विधैश्वर्य्य ताहा सकल चिन्मय ।
सङ्कर्षण-विभूति सब जानिह निश्चय ।।३७
जीवनाम तटस्थाख्य एक शक्ति हय ।
महासङ्कर्षण सब जीवेर आश्रय ।।३८।।
याहा हैते विश्वोत्पत्ति याहाते प्रलय ।
सेइ पुरुषेर सङ्कर्षण समाश्रय ।।३९।।
सर्व्वाश्रय सर्व्वाद्भुत ऐश्वर्य्य अपार ।
अनन्त कहिते नारे महिमा याँहार ।।४०
तुरीय विशुद्धतत्त्व सङ्कर्षण नाम ।
तिँहो याँर अंश सेइ नित्यानन्दराम ।।४१
अष्टम श्लोकेर एइ कैल विवरण ।
नवम श्लोकेर अर्थ शुन दिया मन ।।४२

तथाहि श्रीरूपगोस्वामि कड़चायाम्—

मायाभर्त्ताजाण्डसंघाश्रयाङ्गः
शेते साक्षात् कारणाम्भोधिमध्ये ।

यस्यैकांशः श्रीपुमानादिदेव--
एतं श्रीनित्यानन्दरामं प्रपद्ये ।।८।।

जो माया शक्ति के परिचालक हैं, एवं ब्रह्मा तथा निखिल पदार्थोंको निज शरीर में आश्रय दाता, कारण समुद्र के सलिल में शयनावस्था में जा सतत विराजमान हैं, एवं मत्स्य कूर्म्मादि अवतार वृन्द के अंशी स्वरूप प्रथम पुरुष महाविष्णु रूप में ख्यात हैं, वे भी श्रीनित्यानन्दराम के एकांश मात्र हैं, मैं उन श्रीनित्यानन्द राम की शरण ग्रहण करता हूँ ।।८।।

वैकुण्ठ वाहिरे येइ ज्योतिर्म्मय धाम ।
ताहार वाहिरे कारणार्णव नाम ।।४३
वैकुण्ठ वेड़िया एक आछे जलनिधि ।
अनन्त अपार तार नाहिक अवधि ।।४४
वैकुण्ठेर पृथिव्यादि सकल चिन्मय ।
मायिक भूतेर तथि जन्म नाहि हय ।।४५
चिन्मय जल सेइ परम कारण ।
यार एक कणा गङ्गा पतित-पावन ।।४६
सेइत कारणार्णवे सेइ सङ्कर्षण ।
आपनार एक अंशे करेण शयन ।।४७
महत्स्रष्टा पुरुष तिँहो जगत कारण ।
आद्य अवतार करे मायार इक्षण ।।४८
मायाशक्ति रहे कारणाब्धिर वाहिरे ।
कारणसमुद्र माया परशिते नारे ।।४९
सेइत मायार दुइ विध अवस्थिति ।
जगतेर उपादान प्रधान प्रकृति ।।५०
जगत्कारण नहे प्रकृति जड़रूपा ।
शक्ति सञ्चारिया तारे कृष्ण करे कृपा ।।५१
कृष्ण शक्त्ये प्रकृति हय गौण कारण ।
अग्निशक्त्ये लौह येन करये जारण ।।५२
अतएव कृष्ण मूल जगत्कारण ।
प्रकृतिर कारण यैछे अजागलस्तन ।।५३
सेहो नहे याते कर्त्ता हेतु नारायण ।
हेतु कर्त्ता करे तारे शक्ति सञ्चारण ।।५४
घटेर निमित्त हेतु यैछे कुम्भकार ।
तैछे जगतेर कर्त्ता पुरुषावतार ।।५५
कृष्णकर्त्ता माया यार करेन सहाय ।
घटेर कारण चक्र--दण्डादि उपाय ।।५६
दूर हैते पुरुष करे मायाते अवधान ।
जीवरूप वीर्य्य ताते करेन आधान ।।५७
एक अङ्गाभासे करे मायाते मिलन ।
माया हैते जन्मे तवे ब्रह्माण्डेर गण ।।५८
अगण्य अनन्त यत अण्ड सन्निवेश ।
ततो रूपे पुरुष करे सवाते प्रवेश ।।५९
पुरुष--नासाते यवे वाहिराय श्वास ।
निश्वास सहिते हय ब्रह्माण्ड प्रकाश ।।६०
पुनरपि श्वास यवे प्रवेशे अन्तरे ।
श्वास सह ब्रह्माण्ड पैशे पुरुष शरीरे ।।६१
गवाक्षेर रन्ध्रे येन त्रसवेणु चले ।
पुरुषेर लोमकूपे ब्रह्माण्डेर जाले ।।६२

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (५।४५)—

यस्यैक-निश्वसित-कालमथावलम्ब्य
जीवन्ति लोमविलजा जगदण्डनाथाः ।
विष्णुर्महान् स इह यस्य कलाविशेषो
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ।।९।।

टीका—तं गोविन्दं आदिपुरुषं अहं भजामि। यस्य गोविन्दस्य महान् विष्णुः कलाविशेषः, यस्य महाविष्णोरेव निश्वसितकालमवलम्ब्य अवलम्बनं कृत्वा जगदण्डनाथा ब्रह्मादयो जीवन्ति । किम्भूताः? यस्य महाविष्णोः लोमविलजाः ।।९।।

जिनके एक निश्वास काल को अवलम्बन कर

उनके लोमविवरस्थित ब्रह्माण्ड नाथ वृन्द जीवित रहते हैं, इस प्रकार महाविष्णु भी जिनके कलाविशेष हैं, आदि पुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन मैं करता हूँ ॥९॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१४।११)—

श्रीकृष्णं प्रति ब्रह्मवाक्यम्---

क्वाहं तमोमह- खचराग्निवार्भू -
संवेष्टिताण्डघटसप्तवितस्तिकायः ।
क्वेदृग्विधाविगणिताण्डपराणुचर्या-
वाताध्वरोमविवरस्य च ते महित्वम् ॥१०॥

टीका—ब्रह्मणो वाक्यमिदम् ।—हे ईश्वर ! ब्रह्माण्डविग्रहस्त्वमपि चेत्तत्राह क्वाहमिति । तमः प्रकृतिर्महान् महत्तत्त्वं, अहं अलङ्कारः, ख आकाशः, चरो वायुः, अग्निः, वार्जलं, भूः प्रकृत्यादि पृथिव्यन्तैरेतैः सम्वेष्टितो योऽण्डघटस्तस्मिन् स्वमानेन सप्तवितस्तिः कायो यस्य सोऽहं क्वच, क्व च ते महित्वम् । कथम्भूतस्य ईदृग्विधानि अविगणितानि अण्डानि तान्येव परमाणवः तेषां चर्य्या परिभ्रमणं तदर्थं वाताध्वनो गवाक्षा इव लोमविवराणि यस्य तव, अतोऽतितुच्छत्वात् त्वयानुकम्प्यं ऽहमिति ॥१०

ब्रह्मा श्रीकृष्ण को कहे थे---

भगवन् ! प्रकृति, महत्तत्त्व, अहङ्कार तत्त्व, आकाश, अनिल, अनल, जल एवं पृथिवी, इन सबके द्वारा परिवेष्टित सप्तवितस्ति परिमित मदीय देह है, और आप की महिमा अतुलनीयं है, सुतरां हम दोनों में महदन्तर विद्यमान है, मैं परिच्छिन्न हूँ । एवं आप के रोम विवर में गवाक्ष में परिभ्रमणरत परमाणुवत् असंख्य ब्रह्माण्ड गमना गमन करते रहते हैं ॥१०॥

अंशेर अंश येइ कला तार नाम ।
गोविन्देर प्रतिमूर्त्ति श्रीबलराम ॥६३
ताँर एक स्वरूप श्रीमहासङ्कर्षण ।
ताँर अंश पुरुषेर कलाते गणन ॥६४
याहाकेत कला कहि तिँहो महाविष्णु ।
महापुरुषावतारी तिँहो सर्व्वजिष्णु ॥६५
गर्भोद क्षीरोदशायी दोँहे पुरुष नाम ।
सेइ दुइ याँर अंश हय विश्वधाम ॥६६

तथाहि लघुभागवतामृते पूर्व्वखण्डे षट्त्रिंशाङ्के सात्वततन्त्रम्—

विष्णोस्तु त्रीणि रूपाणि पुरुषाख्यान्यथोविदुः ।
एकन्तु महतः स्रष्टृ द्वितीयं त्वण्डसंस्थितम् ।
तृतीयं सर्व्वभूतस्थं तानि ज्ञात्वा विमुच्यते ॥११॥

टीका—अथानन्तरं विष्णोर्भगवतस्त्रीणि रूपाणि विदुः पण्डिता वदन्ति । किम्भूतानि रूपाणि ? पुरुष इति आख्या येषाम् । मध्ये एकन्तु महतः श्रेष्ठं महाविष्णुरूपं, द्वितीयं अण्डसंस्थितं गर्भोदशायिरूपं, तृतीयं सर्व्वभूतस्थं सर्व्वान्तर्यामिरूपं क्षीरोदशायि-रूपम् । एतानि रूपाणि ज्ञात्वा जनो विमुच्यते मुक्तो भवति ॥११॥

वैकुण्ठेश्वर भगवान् विष्णु के तीन पुरुष रूप विद्यमान हैं, प्रथम पुरुष--महत् स्रष्टा--कारणार्णव शायी--महाविष्णु, द्वितीय पुरुष—ब्रह्माण्डस्थित गर्भोदशायिरूप, तृतीय पुरुष—सर्वभूतस्थ सर्वान्त-र्यामी क्षीरोद शायी रूप। उक्त पुरुषत्रय का ज्ञान होने से मानव मुक्त होता है ॥११॥

यद्यपि कहिये ताँरे कृष्णेर कला करि ।
मत्स्य कूर्म्माद्यवतारेर तिँहो अवतारी ॥६७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।३।२८)—

शौनकादीन् प्रति सूतवाक्यम्--

एते चांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् ।
इन्द्रारिव्याकुलं लोकं मृड़यन्ति युगे युगे ॥१२॥

शौनकादि मुनि वृन्द को सूत कहे थे—

जो सब अवतारों का विवरण कहा गया है, उन सब के मध्य में कोई कोई परम पुरुष कारणार्णव शायी के अंश हैं, कोई तो तदीय कला अर्थात् ऐश्वर्य्य मात्र है, किन्तु सर्व शक्तित्व निबन्धन श्रीकृष्णावतार साक्षात् भगवान् हैं, इस में सन्देह नहीं है। वे सब अवतार-समय--समय पर जगत् में अवतीर्ण होकर

मर्य्यादा लङ्घनकारी असुर पीड़ित जनगण की रक्षा करके सुख शान्ति विधान करते हैं ॥१२॥

सेइ पुरुष सृष्टि-स्थिति—प्रलयेर कर्त्ता ।
नाना अवतार करे जगतेर भर्त्ता ॥६८
सृष्ट्यादि निमित्ते येइ अंशे अवधान ।
सेइत अंशेरे कहि अवतार नाम ॥६९
आद्यावतार महापुरुष भगवान् ।
सर्व्व अवतार वीज सर्व्वाश्रयधाम ॥७०

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।६।४०)

आद्योऽवतारः पुरुषः परस्य
कालः स्वभावः सदसन्मनश्च ।
द्रव्यं विकारो गुण इन्द्रियाणि
विराट् स्वराट् स्थास्नु चरिष्णु भूम्नः ॥१३॥

टीका—अवतारान् आह । पुरुषः प्रकृति-प्रवर्त्तकः परस्य भूम्नः आद्योऽवतारः । ततः कालः, स्वभावः, कार्य्यकारणरूपा प्रकृतिः, मनो महत्तत्त्वं, द्रव्यं महाभूतानि, विकारः अहङ्कारतत्त्वं गुणः सत्त्वादि, इन्द्रियाणि, विराट् समष्टिशरीरं, स्वराट् वैराजः, स्थाणुः स्थावरं, चरिष्णुः जङ्गमम् ॥१३॥

पुरुषोत्तम के प्रकृति प्रवर्त्तक प्रथम पुरुष अवतार हैं, उनकी ही विभूति-काल, स्वभाव, सत्, असत्, मन, द्रव्य, विकार, गुण, इन्द्रिय, विराट्, स्वराट्, एवं समस्त स्थावर जङ्गम हैं ॥१३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।३।१)

शौनकादीन् प्रति सूतवाक्यम्—
जगृहे पौरुषं रूपं भगवान्महदादिभिः ।
सम्भूतं षोड़शकलमादौ लोकसिसृक्षया ॥१४॥

टीका—भगवान् लोकसिसृक्षया आदौ महदादिभिः सम्भूतं षोड़शकलं पौरुषं रूपं जगृहे ।१४

सूत शौनकादि मुनिवृन्द को कहे थे—

लोक सृजनेच्छा से भगवान् प्रथमतः महत्तत्त्व, अहङ्कार तत्त्व, एवं पञ्च तन्मात्र में द्वारा षोड़श कला विशिष्ट पौरुषरूप,--अर्थात् एकादश इन्द्रिय एवं पञ्च महाभूत रूप षोड़श अंशयुक्त विराट् मूर्त्ति धारण किये थे ॥१४॥

यद्यपि तिहों सर्व्वाश्रय ताँहाते संसार ।
अन्तरात्मा रूपे तिहों जगत् आधार ॥७१
प्रकृति सहिते ताँर उभय सम्बन्ध ।
तथापि प्रकृति सह नाहि स्पर्शगन्ध ॥७२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।११।३४)

शौनकादीन् प्रति सूतवचनम्—
एतदीशनमीशस्य प्रकृतिस्थोऽपि तद्गुणैः ।
न युज्यते सदात्मस्थैर्यथा बुद्धिस्तदाश्रया ॥१५॥

सूत शौनकादि ऋषि वृन्द को कहे थे—

इस को ही ईश्वर का ईश्वरत्व जानना चाहिये। जिस प्रकार बुद्धि—आत्मा को अवलम्बन कर अवस्थित होने पर भी आत्मा के आनन्दादि गुण समन्वित नहीं हो सकती है, उसी प्रकार ईश्वर के सहित माया का सम्बन्ध होने पर भी ईश्वर मायाके सुख दुःखादि गुणों से लिप्त नहीं होते हैं। इसी प्रकार भगवद् विषयिणी बुद्धि होने पर वह बुद्धि दैहिक सुख दुःख से कभी लिप्त नहीं होती है ॥१५॥

एइ मत गीताते हो पुनः पुनः कय ।
सर्व्वदा ईश्वर—तत्त्व अचिन्त्य शक्ति हय ॥७३
आमित जगते वसि जगत् आमाते ।
ना आमि जगते वसि ना आमा जगते ॥७४
अचिन्त्य ऐश्वर्य्य एइ जानिह आमार ।
एइत गीतार अर्थ कैल परचार ॥७५
सेइत पुरुष याँर अंश धरे नाम ।
चैतन्येर सङ्गे सेइ नित्यानन्द राम ॥७६
एइत नवम श्लोकेर अर्थ विवरण ।
दशम श्लोकेर अर्थ शुन दिया मन ॥७७

तथाहि श्रीरूपगोस्वामिकड़चायाम्—

यस्यांशांशः श्रीलगर्भोदशायी
यन्नाभ्यब्जं लोकसंघातनालम् ।

लोकस्रष्टुः सूतिकाधाम धातु-
स्तं श्रीनित्यानन्दरामं प्रपद्ये ॥१६॥

जिनके अंग के अंश गर्भोदक शायी सहस्रशीर्ष पुरुष हैं, जिनके नाभि कमल, लोक स्रष्टाविधाता का जन्मस्थान है, मैं उन नित्यानन्द रामका शरण ग्रहण करता हूँ ॥१६॥

सेइ पुरुष अनन्त ब्रह्माण्ड सृजिया ।
सब अण्डे प्रवेशिला बहु मूर्त्ति हञा ॥७८
भितरे प्रवेशि देखे सब अन्धकार ।
रहिते नाहिक स्थान करिल विचार ॥७९
निज अङ्गे स्वेदजल करिल सृजन ।
सेइ जले कैल अर्द्धब्रह्माण्ड भरण ॥८०
ब्रह्माण्ड प्रमाण पञ्चाशत्कोटि योजन ।
आयाम विस्तार हय दुइ एक सम ॥८१
जले भरि अर्द्ध ताहा कैल निज वास ।
आर अर्द्धे कैल चौद्द भुवन प्रकाश ॥८२
ताँहाइ प्रकट कैल वैकुण्ठ निज धाम ।
शेषशयन जले करिला विश्राम ॥८३
अनन्तशय्याते ताँहा करिल शयन ।
सहस्र मस्तक ताँर सहस्र वदन ॥८४
सहस्र नयन हस्त सहस्र चरण ।
सर्व्व अवतार वीज जगत्-कारण ॥८५
ताँर नाभिपद्मे ते हइल एक पद्म ।
सेइ पद्म हैल ब्रह्मार जन्मसद्म ॥८६
सेइ पद्मनाले हैल चौद्दभुवन ।
तिँहो ब्रह्मा हैया सृष्टि करिल सृजन ॥८७
विष्णुरूप हैया करे जगत् पालने ।
गुणातीत विष्णु स्पर्श नाहि गुण सने ॥८८
रुद्ररूप धरि करे जगत् संहारे ।
सृष्टि स्थिति प्रलय इच्छाय याँहार ॥८९
हिरण्यगर्भ अन्तर्य्यामी जगत् कारण ।
याँर अङ्गे करि स्थिर चरेर कल्पन ॥९०
हेन नारायण याँर अंशेर अंश ।
सेइ प्रभु नित्यानन्द सर्व्व अवतंस ॥९१
दशम श्लोकेर एइ कैल विवरण ।
एकादश श्लोकेर अर्थ शुन दिया मन ॥९२

तथाहि श्रीरूपगोस्वामिकड़चायाम्—

यस्यांशांशांशः परात्माखिलानां
पोष्टा विष्णुर्भाति दुग्धाब्धिशायी ।
क्षौणीभर्त्ता यत्कला सोऽप्यनन्त-
स्तं श्रीनित्यानन्दरामं प्रपद्ये ॥१७॥

क्षीर सागरशायी विष्णु जो निखिल विश्वके पालक एवं चालक हैं, वे भी श्रीनित्यानन्द रामके अंशके अंशके अंश मात्र है, एवं पृथिवी धारण कारी अनन्त नाग भी जिन श्रीनित्यानन्द राम की कला वा अशावतार हैं, मैं उन श्रीनित्यानन्द राम की शरण ग्रहण करता हूँ ॥१७॥

नारायणेर नाभिनाल मध्येते धरणी ।
धरणीर मध्ये सप्त समुद्र ये गणि ॥९३
ताँहा क्षीरोदक मध्ये श्वेतद्वीप नाम ।
पालयिता विष्णु ताँर सेइ निज धाम ॥९४
सकल जीवेर तेँहो हय अन्तर्यामी ।
जगत्-पालक तिँहो जगतेर स्वामी ॥९५
युग-मन्वन्तरे करि नाना अवतार ।
धर्म्म संस्थापन करे अधर्म्म संहार ॥९६
देवगण नाहि पाय ताहाँर दर्शन ।
क्षीरोदक-तीरे याइ करेन स्तवन ॥९७
तवे अवतरि करे जगत् पालन ।
अनन्त वैभव ताँर नाहिक गणन ॥९८

सेइ विष्णु हय याँर अंशांशेर अंश ।
सेइ प्रभु नित्यानन्द सर्व्व अवतंश ।।९९
सेइ विष्णु शेषरूपे धरेन धरणी ।
काँहा आछे मही शिरे हेन नाहि जानि ।।१००
सहस्र विस्तीर्ण याँर फणार मण्डल ।
सूर्य्य जिनि मणिगण करे झलमल ।।१०१
पञ्चाशत् कोटि योजन पृथिवी विस्तार ।
याँर एक फणे रहे सर्षप आकार ।।१०२
सेइत अनन्त शेष भक्त-अवतार ।
ईश्वरेर सेवा बिने नाहि जाने आर ।।१०३
सहस्र वदने करे कृष्ण गुण गान ।
निरबधि गुण गान अन्त नाहि पान ।।१०४
सनकादि भागवत शुने याँर मुखे ।
भगवानेर गुण कहे भासे प्रेमसुखे ।।१०५
छत्र पादुका शय्या उपाधान वसन ।
आराम आवास यज्ञसूत्र सिंहासन ।।१०६
एत मूर्त्ति भेद करि कृष्णसेवा करे ।
कृष्णेर शेषता पाञा शेषनाम धरे ।।१०७
सेइत अनन्त याँर कहि एक कला ।
हेन प्रभु नित्यानन्द के जाने ताँर खेला ।।१०८
ए सब प्रमाणे जानि नित्यानन्द तत्त्व सीमा ।
ताँहाके अनन्त कहि कि ताँर महिमा ।।१०९
अथवा भक्तेर वाक्य मानि सत्य कहि ।
सेहोत सम्भवे ताहे याते अवतारी ।।११०
अवतार अवतारी अभेद ये जाने ।
पूर्व्वे यैछे कृष्णके केह काँहु करि माने ।।१११
केह कहे कृष्ण, साक्षात नर नारायण ।
केह कहे कृष्ण, हय साक्षात् वामन ।।११२
केह केह कृष्ण, क्षीरोदशायी अवतार ।
असम्भव नहे सत्य वचन सवार ।।११
कृष्ण यवे अवतार सर्व्वांश आश्रय ।
सर्व्व अंश आसि तवे कृष्णेते मिशाय ।।११
येइ येइ रूपे जाने सेइ ताहा कय ।
सकल सम्भवे कृष्णे किछु मिथ्या नय ।।१
अतएव श्रीकृष्णचैतन्य गोसाञि ।
सर्व्व अवतार करि लीला सवारे देखाइ ।।१
एइ रूपे नित्यानन्द अनन्त प्रकाश ।
एइभावे कहे मुञि चैतन्येर दास ।।११
कभु गुरु कभु सखा कभु भृत्यलीला ।
पूर्व्वे येन तिनभावे व्रजे कैल खेला ।।११
वृष हैया कृष्णसने माथामाथि रण ।
कभु कृष्ण ताँर पद करे सम्बाहन ।।११
आपनाके भृत्य करि कृष्ण--प्रभु जाने ।
कृष्णेर कलार कला आपनाके माने ।।१२

तथा हि श्रीमद्भागवते (१०।११।४०)

परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्—

वृषायमाणौ नर्द्दन्तौ युयुधाते परस्परम् ।
अनुकृत्यरुतैर्जन्तून् श्चेरतुः प्राकृतौ यथा ।।१८।।

टीका—रामकृष्णौ वृषायमाणौ नर्द्दन्तौ तदनुकारिशब्दान् कुर्व्वन्तौ परस्परं युयुधाते। रुतैः शब्दैश्च जन्तून् हंसमयूरादीन् अनुकृत्य प्राकृतौ यथा तथा चेरतुः ।।१८।।

श्रीशुकदेव श्रीपरीक्षित महाराज को कहे थे··

बलराम एवं कृष्ण – वृषरूप धारण कर ए उसके अनुरूप शब्द करके परस्पर मस्तकामस्तकि युद्ध में प्रवृत्त होते थे एवं समय समय पर शब्द द्वारा हस मयूरादि का अनुकरण कर प्राकृत शि के समान भ्रमण करते थे ।।१८।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१५।१४)—

परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्—

क्वचित् क्रीड़ापरिश्रान्तं गोपोत्सङ्गोपवर्हणम् ।
स्वयं विश्रामयत्यार्य्यं पादसम्बाहनादिभिः ।।१६।।

टीका—क्वचित् कदापि श्रीकृष्ण क्रीड़ा-परिश्रान्तं, गोपोत्सङ्गोपवर्हणं, आर्य्यं अग्रजं पाद-सम्बाहनादिभिः स्वयं विश्रामयति ।।१६।।

कदाचित् श्रीकृष्ण - अग्रज बलदेव क्रीड़ाश्रान्त होने पर किसी गोप शिशु के क्रोड़ में मस्तक स्थापन पूर्वक शयन कराकर स्वयं पाद सम्बाहनादि के द्वारा उनको विश्राम कराते थे ।।१६।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१३।३४)—

श्रीकृष्णमुद्दिश्य बलदेववाक्यम्--

केयं वा कुत आयाता दैवी वा नार्य्युतासुरी ।
प्रायो मायास्तु मे भर्त्तुर्नान्या मेऽपि विमोहिनी । २०

टीका—का इयं माया ? दैवी, नारी वा आसुरी ? कुतः आयाता ? तत्र न अन्या माया सम्भवति, यतः मे ममापि विमोहिनी मोहकरी । इयं मे मम भर्त्तुः कृष्णस्य माया प्रायः अस्तु ।।२०।।

श्रीबलराम श्रीकृष्ण को लक्ष्यकर कहे थे-यह माया किसकी है ? दैवी, मानुषी, वा आसुरी है ? कहाँ से आई है ? अपर माया नहीं हो सकती है, कारण, यह मुझ को भी मुग्ध कर रही है, अतः यह माया प्रभुकी ही है, अन्यथा इस से मेरा मोह नहीं होता ।।२०।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।६८।३७)--

दुर्य्योधनादीन् प्रति श्रीबलदेववाक्यम्—
यस्यांघ्रिपङ्कजरजोऽखिललोकपालैः
मौल्युत्तमैर्धृतमुपासिततीर्थतीर्थम् ।
ब्रह्मा भवोऽहमपि यस्य कलाः कलायाः
श्रीश्चोद्वहेमचिरमस्य नृपासनं क्व ।।२१।।

टीका—अखिललोकपालैः यस्य अङ्घ्रिपङ्कज-रजः चरण पङ्कजः मौल्युत्तमैः मौलीयुक्तैरुत्तमाङ्गैः धृत, ब्रह्मा, भवः, अहमपि, श्रीश्च यस्य कलायाः कलाः, वयं यस्य अंघ्रिपङ्कजरजः चिरं उद्वहेम, तस्य नृपासनं क्व । अपि तु कुत्रापि नास्ति इत्यर्थः । अंघ्रिपङ्कजरजः किम्भूतं ?—उपासिततीर्थतीर्थं उपासितानि तीर्थानि यैर्योगिभिस्तेषामपि तीर्थम् ।२१

दुर्य्योधन प्रभृति के प्रति श्रीबलदेव कहे थे—

अखिल लोक पाल गण, - जिनकी चरण रजः को शिरोपरि धारण करते हैं, ब्रह्मा, शिव, एवं में जिनकी अंशकला हूँ, हम सब जिनकी चरण रजः चिरदिन मस्तक के द्वारा वहन करते है, उनको नृपति सिंहासन से क्या प्रयोजन है ? ।।२१।।

एकले ईश्वर कृष्ण आर सब भृत्य ।
यारे यैछे नाचाय से तैछे करे नृत्य ।।१२१
एइ मत चैतन्यगोसाञि एकला ईश्वर ।
आर सब पारिषद केह वा किङ्कर ।।१२२
गुरुवर्ग नित्यानन्द अद्वैत-आचार्य्य ।
श्रीवासादि आर यत लघु सम आर्य्य ।।१२३
सबे पारिषद सबे लीलार सहाय ।
सबा लजा निज कार्य्य साधे गौरराय ।।१२४
अद्वैत गोसाञि नित्यानन्द दुइ अङ्ग ।
दुइ जन लजा प्रभुर यत किछु रङ्ग ।।१२५
अद्वैत आचार्य्य गोसाञि साक्षात् ईश्वर ।
प्रभु गुरु करि माने तिहोँत किङ्कर ।।१२६
आचार्य्य-गोसाञिर तत्त्व ना याय कथन ।
कृष्ण अवतारी येहोँ तारिल भुवन ।।१२७
नित्यानन्द स्वरूप पूर्व्वे हइला लक्ष्मण ।
लघुभ्राता हैया करे रामेर सेवन ।।१२८
रामेर चरित्र सब दुःखेर कारण ।
स्वतन्त्र लीलाय दुःख सहेन लक्ष्मण ।।१२९
निषेध करिते नारे याते छोट भाइ ।
मौन करि रहे लक्ष्मण मने दुःख पाइ ।।१३०

कृष्णावतारे ज्येष्ठ हैला सेवार कारण ।
कृष्णाके कराइल नाना सुख आस्वादन ॥१३१
राम लक्ष्मण कृष्ण रामेर अंश विशेष ।
अवतार--काले दोँहे दोँहाते प्रवेश ॥१३२
सेइ अंश लजा ज्येष्ठ कनिष्ठाभिमान ।
अंशांशी--रूपे शास्त्रे करये व्याख्यान ॥१३३

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (५।२४)—

रामादि--मूर्त्तिषु कलानियमेन तिष्ठ-
न्नानावतारमकरोद्भुवनेषु किन्तु ।
कृष्णः स्वयं समभवत् परमः पुमान् यो
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥२२॥

टीका—यः परमः पुमान् गोविन्दः स्वयमेव कृष्णः समभवत्, किन्तु भुवनेषु नानावतारमकरोत्, किं कुर्व्वन् ? कलानियमेन रामादिमूर्त्तिषु । तिष्ठन् । तं आदिपुरुषं गोविन्दमहं भजामि ।।२२॥

ब्रह्म संहिता में लिखित है—

जो परम पुरुष स्वयं कृष्ण रूप में धरातल में अवतीर्ण हुए हैं, एवं रामादि मूर्त्ति समूह में कलानियम अर्थात् परिमित शक्ति प्रकाश द्वारा विविध अवतार ग्रहण किये हैं, उन आदि पुरुष श्रीगोविन्द का मैं भजन करता हूँ ।।२२॥

श्रीकृष्णचैतन्य नित्यानन्द सेइ राम ।
नित्यानन्द पूर्ण करे चैतन्येर काम ॥१३४
नित्यानन्द-महिमा-सिन्धु अनन्त अपार ।
एक कणा स्पर्शिमात्र से कृपा ताहार ॥१३५
आर एक शुन ताँर कृपार महिमा ।
अधम जीवेरे चड़ाइल ऊर्द्ध्वसीमा ॥१३६
वेद-गुह्य कथा एइ अयोग्य कहिते ।
तथापि कहिये ताँर कृपा प्रकाशिते ॥१३७
उल्लासेर वशे लिखि तोमार प्रसाद ।
नित्यानन्द प्रभु मोर क्षम अपराध ॥१३८

अवधूत गोँसाञिर एक भृत्य--प्रेमधाम ।
मीनकेतन रामदास हय तार नाम ॥१३
आमार आलये अहोरात्र सङ्कीर्त्तन ।
ताहाते आइल तेँहो पाञा निमन्त्रण ॥१४
महा प्रेममय आसि रहिल अङ्गने ।
सकल वैष्णव ताँर वन्दिला चरणे ॥१४
नमस्कार करिते कार उपरेते चड़े ।
प्रेमे केह वंशी मारे केह वा चापड़े ॥१४
ये नेत्रे देखिते अश्रु मने हय यार ।
सेइ नेत्रे अविच्छिन्न वहे अश्रुधार ॥१४
कभु कोन अङ्गे देखि पुलक--कदम्ब ।
एक अङ्गे जाड्य ताँर आर अङ्गे कम्प ॥१
नित्यानन्द वलि यवे करेन हुङ्कार ।
ताहा देखि लोकेर हय महा चमत्कार ।१
गुणार्णव मिश्र नामे एक विप्र-आर्य्य ।
श्रीमूर्त्ति निकटे तिहोँ करे सेवा-कार्य्य ॥१
अङ्गने आसिया तिहोँ ना कैल सम्भाष ।
ताहा देखि क्रुद्ध हञा बले रामदास ॥१४७
एइत द्वितीय सूत श्रीरोमहर्षण ।
बलराम देखि ये ना कैल प्रत्युद्गम ॥१४८
एत बलि नाचे गाय करये सन्तोष ।
कृष्णकार्य्य करे विप्र ना करिल रोष ॥१४९
उत्सवान्ते गेला तिहोँ करिया प्रसाद ।
मोर भ्राता सने ताँर किछु हैला वाद ॥१५०
चैतन्य गोँसाञिते ताँर सुदृढ़ विश्वास ।
नित्यानन्द विषये किछु विश्वास आभास ।१५
इहा शुनि रामदासेर दुःख हैल मने ।
तवेत भ्रातारे आमि करिनु भर्त्सने ॥१५२

दुइ भाइ एक तनु समान प्रकाश ।
नित्यानन्द ना मान तोमार हवे सर्व्वनाश ।१५३
एकेते विश्वास अन्ये ना करे सम्मान ।
अर्द्ध कुक्कुटी--न्याय तोमार प्रमाण ।।१५४
किंवा दुइ ना मानिया हओत पाषण्ड ।
एके मानि आरे ना मानि एइ मत भण्ड ।१५५
क्रुद्ध हञा वंशी भाङ्गि चले रामदास ।
तत्काले आमार भ्रातार हैल सर्व्वनाश ।१५६
एइ त कहिल ताँर सेवक--प्रभाव ।
आर एक कहि ताँर दयार स्वभाव ।।१५७
भाइके भर्त्सिनु मुञि लञा एइ गुण ।
सेइ रात्रे प्रभु मोरे दिला दरशन ।।१५८
नैहाटि निकटे झामटपुर ग्राम ।
ताँहा स्वप्ने देखा दिला नित्यानन्द राम ।१५९
दण्डवत हैया आमि पड़िनु पायेते ।
निज पादपद्म प्रभु दिला मोर माथे ।।१६०
उठ उठ बलि मोरे बले वारवार ।
उठि ताँर रूप देखि हैनु चमत्कार ।।१६१
श्याम--चिकण कान्ति प्रकाण्ड शरीर ।
साक्षात् कन्दर्प यैछे महा मल्लवीर ।।१६२
सुवलित हस्त पद कमललोचन ।
पट्ट-वस्त्र शिरे पट्ट-वस्त्र परिधान ।।१६३
सुवर्ण-कुण्डल कर्णे स्वर्णाङ्गद वाला ।
पायेते नूपुर वाजे कण्ठे पुष्पमाला ।।१६४
चन्दन-लेपित अङ्ग तिलक सुठाम ।
मत्तगज जिनि मत्त मन्थर पयाण ।।१६५
कोटि चन्द्र जिनि मुख उज्ज्वल वरण ।
दाड़िम्ब-वीज-सम-दन्त ताम्बूल-चर्व्वण ।१६६
प्रेमेते मत्त अङ्ग डाहिने बामे दोले ।
कृष्ण कृष्ण करिया गम्भीर बोल बले ।१६७
राङ्गा यष्टि हस्ते दोले येन मत्त सिंह ।
चारि पाशे वेड़ियाछे चरणेते भृङ्ग ।।१६८
पारिषदगण देखि सब गोपवेश ।
कृष्ण कृष्ण सबे कहे सप्रेम आवेश ।।१६९
शिङ्गा वंशी वाजाय केह, केह नाचे गाय ।
सेवक योगाय ताम्बूल चामर ढुलाय ।।१७०
नित्यानन्द स्वरूपेर देखिया वैभव ।
किवा रूप गुण लीला अलौकिक सब ।।१७१
आनन्दे विह्वल आमि किछुइ ना जानि ।
तबे हासि प्रभु मोरे कहिलेन वाणी ।।१७२
अये ! अये ! कृष्णदास ना करिह भय ।
वृन्दावने याह ताँहा सर्व्व लभ्य हय ।।१७३
एत बलि प्रेरिला मोरे हातसानि दिया ।
अन्तर्द्धान कैल प्रभु निजगण लञा ।।१७४
मूर्च्छित हइया मुञि पड़िनु भूमिते ।
स्वप्न भङ्ग हैल देखि हैयाछे प्रभाते ।।१७५
कि देखिनु कि शुनिनु करिये विचार ।
प्रभु आज्ञा हैल वृन्दावन याइवार ।।१७६
सेइक्षणे वृन्दावने करिनु गमन ।
प्रभुर कृपाते सुखे आइनु वृन्दावन ।।१७७
जय जय नित्यानन्द नित्यानन्द राम ।
याहार कृपाते आइनु वृन्दावन धाम ।।१७८
जय जय नित्यानन्द जय कृपामय ।
याँहाते पाइनु रूप सनातनाश्रय ।।१७९
याँहा हैते पाइनु रघुनाथ महाशय ।
याँहा हैते पाइनु श्रीरूप आश्रय ।।१८०

सनातन कृपाय पाइनु भक्तिर सिद्धान्त।
श्रीरूप कृपाय पाइनु रसभाव प्रान्त ॥१८१
जय जय नित्यानन्द चरणारविन्द।
याँहा हैते पाइलाम श्रीराधा-गोविन्द ॥१८२
जगाइ माधाइ हैंते मुञि से पापिष्ठ।
पुरीषेर कीट हैते मुञि से लघिष्ठ ॥१८३
मोर नाम शुने येइ तार पुण्य क्षय।
मोर नाम लय येइ तार पाप हय ॥१८४
एमन निर्घृण मोरे केवा कृपा करे।
एक नित्यानन्द विनु जगत्-संसारे ॥१८५
प्रेमे मत्त नित्यानन्द कृपा अवतार।
उत्तम अधम किछु ना करे विचार ॥१८६
ये आगे पड़ये तार करये निस्तार।
अतएव निस्तारिले मो हेन दुराचार ॥१८७
मो पापिष्ठे आनिलेन श्रीवृन्दावन।
मो हेन अधमे दिल श्रीरूप चरण ॥१८८
श्रीमदन गोपाल श्रीगोविन्द दरशन।
कहिवार योग्य नहे ए सब कथन ॥१८९
वृन्दावन पुरन्दर श्रीमदन गोपाल।
रासविलासी साक्षात् व्रजेन्द्र-कुमार ॥१९०
राधा ललितादि सङ्गे रास विलास।
मन्मथ-मन्मथ रूपे याहार प्रकाश ॥१९१

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३२।२)—

परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्—

तासामाविरभूच्छौरिः स्मयमानमुखाम्बुजः।
पीताम्बरधरः स्रग्वी साक्षान्मन्मथमन्मथः ॥२३

टीका – शौरिः शूरवंशाविर्भूतत्वेन प्रसिद्धः कृष्णः तासामेव आविरभूत प्रादुर्बभूव। शौरिः किम्भूतः ?—स्मयमानमुखाम्बुजः। पुनः किम्भूतः पीताम्बरधर। पुनः कथम्भूतः ?-स्रग्वी माल्यवान्। पुनः किम्भूतः ?—साक्षात् मन्मथमन्मथः कामस्यापि मोहकरः। इति एवम्प्रकारेण आविरभूदित्यर्थः।

परीक्षित् के प्रति शुकदेव कहे हैं—

गोपीवृन्द की व्याकुलता से भगवान् होकर भी पीत वसन एवं वनमाला धारण पूर्वक सहास्य वदन से उन सब के निकट जगन्मोहन कन्दर्प विस्मयकर रूप में आविर्भूत हुये थे ॥२३॥

स्वमाधुर्य्ये लोकेर मन करे आकर्षण।
दुइ पाशे राधा ललितादि करेन सेवन ॥१९२
नित्यानन्द दया मोरे ताँरे देखाइल।
श्रीराधा मदनमोहन प्रभु करि दिल ॥१९३
मो अधमे दिल श्रीगोविन्द दरशन।
कहिवार कथा नहे अकथ्य कथन ॥१९४
वृन्दावने योगपीठ कल्पतरु--वने।
रत्नमण्डप ताहे रत्न-सिंहासने ॥१९५
श्रीगोविन्द वसियाछेन व्रजेन्द्र-नन्दन।
माधुर्य्य प्रकाशि करेन जगत् मोहन ॥१९६
वामपार्श्वे श्रीराधिका सखीगण सङ्गे।
रासादिक लीला प्रभु करे कत रङ्गे ॥१९७
याँर ध्यान निजलोके करे पद्मासन।
अष्टादशाक्षर--मन्त्रे करे उपासन ॥१९८
चौद्दभुवने याँर सबे करे ध्यान।
वैकुण्ठादि पुरे याँर करे लीला गान ॥१९९
याँर माधुरीते करे लक्ष्मी आकर्षण।
रूप गोँसाञि करियाछेन से रूप वर्णन ॥२००

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे साधनभक्ति-लहर्य्यां (८७) श्रीरूपगोस्वामीवाक्यम्—

स्मेरां भङ्गीत्रयपरिचितां साचिविस्तीर्णदृष्टिं वंशीन्यस्ताधरकिशलयामुज्ज्वलां चन्द्रकेन।

गोविन्दाख्यां हरितनुमित: केशितीर्थोपकण्ठे
मा प्रेक्षिष्ठास्तव यदि सखे ! बन्धुसङ्गेऽस्ति रङ्गः ॥२४॥

टीका—हे सखे ! तव यदि बन्धुसङ्गे रङ्गोऽस्ति, तदा केशितीर्थोपकण्ठे केशितीर्थसमीपे गोविन्दाख्यां हरितनुं हरिमूर्त्तिं मा प्रेक्षिष्ठाः । किम्भूतां ?—वंशीन्यस्ताधरकिसलयां वंशीन्यस्त: अधरकिसलय: अधरपल्लवो यत्र सा तां । पुन: किम्भूतां ?—चन्द्रकेन मयूरपुच्छेन उज्ज्वलां । पुन: कथम्भूतां ?—स्मेरां ईषद्धास्ययुक्तां । पुन: किम्भूतां ?—भङ्गीत्रयपरिचितां त्रिभङ्गललितां ! पुन: कथम्भूतां ? साचिविस्तीर्ण दृष्टिं वङ्किमापाङ्गनेत्रां । अत्र निषेधच्छलेन अवश्यविधिरयं तदेतन्माधुर्य्ये अनुभूयमाने स्वयमेव सर्व्वमेव तुच्छं मंस्यसे तस्मादेनामेव पश्येत्यभिप्राय: ॥२४॥

भक्ति रसामृतसिन्धु में उक्त है—

हे सखे ! यदि बन्धु वृन्द के सहित आमोद प्रमोद करने का अभिलाष हो तो, केशितीर्थ के समीप में अवस्थित, हास्ययुक्त, त्रिभङ्ग, वङ्किम नेत्र, वंशीवदन, मयूर पुच्छ--शोभित गोविन्द मूर्त्ति का दर्शन न करो ॥२४॥

साक्षात् व्रजेन्द्र-सुत इथे नाहि आन ।
येवा अज्ञ करे ताँके प्रतिमादि ज्ञान ॥२०१
सेइ अपराधे तार नाहिक निस्तार ।
घोर नरकेते पड़े कि बलिब आर ॥२०२
हेन ये गोविन्द प्रभु पाइनु याँहा हैते ।
ताँहार चरण कृपा के पारे वर्णिते ॥२०३
वृन्दावने वैसे यत वैष्णव-मण्डल ।
कृष्णनाम-परायण परम-मङ्गल ॥२०४
यार प्राणधन नित्यानन्द श्रीचैतन्य ।
राधाकृष्ण-भक्ति बिने नाहि जाने अन्य ॥२०५
सेइ वैष्णवेर पदरेणु पदछाया ।
मो हेन अधमे दिल नित्यानन्द-दया ॥२०६
ताँहा सर्व्वलभ्य हय ताँहार वचन ।
सेइ सूत्र एइ तार कैल विवरण ॥२०७
से सब पाइनु आमि वृन्दावन आय ।
सेइ सब लभ्य एइ प्रभुर कृपाय ॥२०८
आपनार कथा लिखि निर्लज्ज हइया ।
नित्यानन्द गुणे लेखाय उन्मत्त करिया ॥२०९
नित्यानन्द प्रभुर गुण, महिमा अपार ।
सहस्रवदने शेष नाहि पाय याँर ॥२१०
श्रीरूप रघुनाथ पदे याँर आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२११॥

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे श्रीनित्यानन्दतत्त्वनिरूपणं नाम
पञ्चम: परिच्छेद: ॥५॥





❀ षष्ठ परिच्छेद ❀



तथाहि ग्रन्थकारस्य—

वन्दे तं श्रीमदद्वैताचार्यं गद्भुतचेष्टितम् ।
यस्य प्रसादादज्ञोऽपि तत्स्वरूपं निरूपयेत् ॥१॥

टीका—यस्य अद्वैताचार्य्यस्य प्रसादात् प्रसादेन अज्ञोऽपि तत्स्वरूपं तस्य स्वरूपं निरूपयेत, तं श्रीमदद्वैताचार्य्यं अहं बन्दे । अद्वैताचार्य्यं किम्भूत ? अद्‌भुतचेष्टितं अतर्क्यचेष्टितम् ॥१॥

अत्याश्चर्य्य चरित सम्पन्न श्रीमद् अद्वैत आचार्य्य की में वन्दना करता हूँ । जिनकी कृपा से अज्ञ व्यक्ति भी उन का स्वरूप निरूपण करने में सक्षम होता है ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१॥
पञ्च श्लोके कहिल श्रीनित्यानन्द--तत्त्व ।
श्लोकद्वये कहि अद्वैताचार्य्येर महत्त्व ॥२

तथाहि श्रीरूपगोस्वामिकड़चायां—

महाविष्णुर्जगत्कर्त्ता मायया यः सृजत्यदः ।
तस्यावतार एवायमद्वैताचार्य्य ईश्वरः ॥
अद्वैतं हरिणाद्वैतादाचार्य्यं भक्तिशंसनात् ।
भक्तावतारमीशं तमद्वैताचार्य्यमाश्रये ॥२॥

जो जगत् स्रष्टा महाविष्णु वहिरङ्गा शक्ति के द्वारा अर्थात् प्रकृति पुरुष रूप कारण के द्वारा परिदृश्यमान जगत् सृजन करते हैं, उनका ही अवतार ईश्वर अद्वैताचार्य्य हैं ।

श्रीहरि के सहित द्वैत भाव वर्णित होने के कारण अद्वैत नाम है, भक्ति उपदेश हेतु–आचार्य्य–गुरु हैं, भक्त रूप में जगत् में अवतीर्ण हेतु—भक्तावतार हैं, एवं ईश--ईश्वर-सर्व समर्थ प्रभु हैं, अत: मैं उनको आश्रय रूप में अवलम्बन करता हूँ ।२

अद्वैत आचार्य्य गोँसाञि साक्षात् ईश्वर ।
याँहार महिमा नहे जीवेर गोचर ॥३
महाविष्णु सृष्टि करेन जगदादि कार्य्य ।
ताँर अवतार साक्षात् अद्वैत आचार्य्य ॥४
ये पुरुष सृष्टि-स्थिति करेन मायाय ।
अनन्त ब्रह्माण्ड सृष्टि करेन लीलाय ॥५
इच्छाय अनन्त मूर्त्ति करेन प्रकाश ।
एक एक मूर्त्त्ये करे ब्रह्माण्डे प्रवेश ॥६
से पुरुषेर अंश अद्वैत नाहि किछु भेद ।
शरीर विशेषे ताँर नाहिक विच्छेद ॥७
सहाय करेन ताँर लइया प्रधाने ।
कोटि ब्रह्माण्ड करेन इच्छाय निर्म्माणे ॥८
जगत् मङ्गलाद्वैत मङ्गल गुणधाम ।
मङ्गल चरित्र सदा मङ्गल याँर नाम ॥९
कोटि अंश कोटि शक्ति कोटि अवतार ।
एत लैया सृजे पुरुष सकल संसार ॥१०
माया यैछे दुइ अंश निमित्त उपादान ।
माया निमित्त हेतु उपादान प्रधान ॥११
पुरुष प्रकृति ऐछे द्विमूर्त्ति करिया ।
विश्व सृष्टि करे निमित्त उपादान लञा ॥१२
आपने पुरुष विश्वेर निमित्त कारण ।
अद्वैतरूपे उपादान हय नारायण ॥१३
निमित्तांशे कहेन तिंहो मायाते ईक्षण ।
उपादान अद्वैत करे ब्रह्माण्ड-सृजन ॥१४
अद्वैत आचार्य्य कोटि ब्रह्माण्डेर कर्त्ता ।

आर एक एक मूर्त्ति ब्रह्माण्डेर भर्त्ता ॥१५
सेइ नारायणेर अङ्ग मुख्य अद्वैत ।
अङ्ग शब्दे अंश करि कहे भागवत ॥१६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१४।१४)--

नारायणस्त्वं न हि सर्व्वदेहिना--
आत्मास्यधीशाखिललोकसाक्षी ।
नारायणोऽङ्गं नरभूजलायना-
त्तच्चापि सत्यं न तवैव माया ॥३॥

ब्रह्मा गोप बालक श्रीकृष्ण को कहे थे—

हे प्रभु आप क्या नारायण नहीं है ? मैं तो निश्चय कर कह सकता हूँ— कि-आप ही नारायण हैं। कारण--अखिल देह धारियों के आत्मा स्वरूप नारायण आप ही हैं। नार--जीव समूह के आश्रय नारायण आप ही हैं. हे देव ! आप समस्त लोकों के साक्षी होने के कारण- आप नारायण हैं, कारण, लोक समूह का अयन,--परिज्ञान जिनका है वह नारायण आप ही हैं।

हे भगवन् ! नर से उत्पन्न जो सब पदार्थ-- अर्थात् चतुर्विंशति तत्त्व हैं, और उस मे उद्भूत जो जल है, वही एकमात्र--अयन--आश्रय होने के कारण जो नारायण प्रसिद्ध हैं, वे भी भवदीय मूर्त्ति ही हैं, इस में सन्देह नहीं है ॥३॥

ईश्वरेर अङ्ग अंश चिदानन्दमय ।
मायार सम्बन्ध नाहि एइ श्लोके कय ॥१७
अंश ना कहिया केन कह ताँरे अङ्ग ।
अंश हैते अङ्ग याते हय अन्तरङ्ग ॥१८
महाविष्णुर अंश अद्वैत गुणधाम ।
ईश्वरे अभेद हैते अद्वैत पूर्णनाम ॥१९
पूर्व्वे यैछे कैल सर्व्व विश्वेर सृजन ।
अवतरि कैल एवे भक्ति प्रवर्त्तन ॥२०
जीव निस्तारिल कृष्णभक्ति करि दान ।
गीता भागवते कैल भक्तिर व्याख्यान ॥२१
भक्ति उपदेश विनु ताँर नाहि कार्य्य ।
अतएव नाम ताँर अद्वैत आचार्य्य ॥२२
दुइ नाम मिलने हैल अद्वैत आचार्य्य ।
वैष्णवेर गुरु तिँहो जगतेर आर्य्य ॥२३
कमल नयनेर तिँहो याते अङ्ग अंश ।
कमलाक्ष करि धरे नाम अवतंस ॥२४
ईश्वर सारुप्य पाय पारिषदगण ।
चतुर्भुज पीतवास यैछे नारायण ॥२५
अद्वैत आचार्य्य ईश्वरेर अंशवर्य्य ।
ताँर तत्त्व नाम गुण सकल आश्चर्य्य ॥२६
याँहार तुलसीजले याँहार हुङ्कारे ।
स्वगण सहिते चैतन्येरे अवतारे ॥२७
याँर द्वारा कैल प्रभु कीर्त्तन प्रचार ।
याँर द्वारा कैल प्रभु जगत् निस्तार ॥२८
आचार्य्य गोँसाञिर गुण महिमा अपार ।
जीव कीट कोथाय पाइबेक तार पार ॥२९
आचार्य्य गोँसाञि चैतन्येर मुख्य अङ्ग ।
आर एक अङ्ग ताँर प्रभु नित्यानन्द ॥३०
प्रभुर उपाङ्ग श्रीवासादि भक्तगण ।
हस्त-मुख-नेत्र-अङ्ग चक्राद्यस्त्र सम ॥३१
एइ सब लइया चैतन्य प्रभुर विहार ।
एइ सब लइया करेन वाञ्छित प्रचार ॥३२
माधवेन्द्र पुरीर इहोँ शिष्य एइ ज्ञाने ।
आचार्य्य गोँसाञिरे प्रभु गुरु करि माने ।३३
लौकिक लीलाते धर्म्म मर्य्यादा रक्षण ।
स्तुति भक्त्ये करेन ताँर चरण वन्दन ॥३४
चैतन्य गोँसाञिके आचार्य्य करे प्रभुज्ञान ।

आपनाके करेन ताँर दास अभिमान ॥३५
सेइ अभिमान सुखे आपना पासरे।
कृष्णदास हय़ो जीवे उपदेश करे ॥३६
कृष्णदास अभिमाने ये आनन्द-सिन्धु।
कोटि ब्रह्म सुख नहे तार एक बिन्दु ॥३७
मुञि दास चैतन्येर आर नित्यानन्द।
सदा भाव सम नहे अन्यत्र आनन्द ॥३८
परम प्रेयसी लक्ष्मी हृदये वसति।
तिँहो दास्यसुख मागे करिया विनति ॥३९
दास्य भावे आनन्दित पारिषद्गण।
बिधि भव नारद आर शुक सनातन ॥४०
नित्यानन्द अबधूत सभाते आगल।
चैतन्येर दास्य-प्रेमे इहल पागल ॥४१
श्रीवास हरिदास रामदास गदाधर।
मुरारि मुकुन्द चन्द्रशेखर वक्रेश्वर ॥४२
ए सब पण्डित लोक परम महत्त्व।
चैतन्येर दास्ये सबाय करिल उन्मत्त ॥४३
एइ मत गाय नाचे करे अट्टहास।
लोके उपदेशे हय़ो चैतन्येर दास ॥४४
चैतन्य गोँसाञि मोरे करे गुरु ज्ञान।
तथापि आमार हय दास अभिमान ॥४५
कृष्णप्रेमेर एइ एक अपूर्व्व प्रभाव।
गुरु सम लघुके कराय दास्यभाव ॥४६
इहार प्रमाण शुन शास्त्रेर व्याख्यान।
महदनुभव याते सुदृढ़ प्रमाण ॥४७
अन्येर का कथा सेइ नन्द महाशय।
ताँर सम गुरु कृष्णेर आर केह नय ॥४८
शुद्धवात्सल्य ऐश्वर्य्य ज्ञान नाहि याँर।
ताँहाकेइ प्रेमे कराय दास्य अनुकार ॥४९
तिँहो रति मति मागे कृष्णेर चरणे।
ताँहार श्रीमुख वाणी ताहाते प्रमाणे ॥५०
शुन उद्धव सत्य कृष्ण आमार तनय।
तिँहो ईश्वर हेन यदि तोमार मने लय ॥५१
तथापि ताँहाते हय मोर मनोवृत्ति।
तोमार ईश्वर कृष्णे हउक मोर रति ॥५२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।४७।६६)—

श्रीकृष्णमुद्दिश्य नन्दवाक्यम्—

मनसो वृत्तयो न स्युः कृष्णपादाम्बुजाश्रयाः।
वाचोऽभिधायिनीर्नाम्नां कायस्तत् प्रह्वणादिषु ॥४

टीका — नोऽस्माकं मनसो वृत्तयः कृष्णपदाम्बुजाश्रयाः स्युः। अस्माकं वाचः नाम्नां अभिधायिनीः स्यु। अस्माकं कायः तत्प्रह्वणादिषु तत्प्रणामादिषु रतः भवतु ॥४॥

प्रत्यावर्त्तन रत उद्धव के निकट श्रीकृष्ण के उद्देश्य में नन्द महाराज कहे थे—हे उद्धव ! हमारे मनोवृत्ति समूह श्रीकृष्ण चरणारविन्दाश्रित हों, हमारे वाक्य समूह तदीय नाम, गुण गान में एवं हमारे शरीर तदीय प्रणामादि कर्म्म में नियुक्त हों ॥४॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।४७।६७)—

श्रीकृष्णमुद्दिश्य नन्दवाक्यम्—

कर्म्मभिर्भ्राम्यमाणानां यत्र क्वापीश्वरेच्छया।
मङ्गलाचरितैर्दानैरतिर्नः कृष्ण ईश्वरे ॥५॥

टीका—कर्म्मभिः निजनिजकर्म्मभिः करणैः यत्र क्वापि ईश्वरेच्छया भ्राम्यमाणानां नानायोनिषु गतानां नः अस्माकं सम्बन्धे मङ्गलाचरितैः पुण्यकर्म्मभिः दानैश्च ईश्वरे कृष्णे रतिर्भवतु ॥५॥

श्रीकृष्ण को लक्ष्यकर श्रीनन्द कहे थे—

हम सब निज निज उपार्जित कर्म निबन्धन ईश्वरेच्छा से जहाँ जहाँ भ्रमण क्यों न करें हमारे पुण्य कर्म एवं दान कर्म्म के द्वारा उन परमेश्वर

कृष्ण में मति हो ।।५।।

श्रीदामादि व्रजेर यत सखा निचय ।
ऐश्वर्य्य-ज्ञान हीन केवल सख्यमय ।।५३
कृष्ण सङ्गे युद्ध करे स्कन्ध आरोहण ।
तार दास्यभावे करे चरण सेवन ।।५४

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१५।१७)—

परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्—

पादसम्बाहनं चक्रुः केचित्तस्य महात्मनः ।
अपरे हतपाप्मानो व्यजनैः समवीजयन् ।।६।।

टीका—केचित् सखायो महात्मनः तस्य कृष्णस्य पादसम्बाहनं चक्रुः कृतवन्तः, अपरे सखायो व्यजनैस्तं समवीजयन्, मयूरपक्षादिभिश्च वनलताचमरी-चामरादिभि र्व्यजनैश्च समवीजयन् । अपरे किम्भूताः? हतपाप्मानः ।।६।।

श्रीशुकदेव परीक्षित् को कहे थे—

श्रीकृष्ण, शयन करने पर कतिपय सखा तदीय पाद सम्वाहन करते हैं, कतिपय निष्पाप बालक मयूर पक्षादि निर्म्मित व्यजन द्वारा, एवं वनलता, वा चामर के द्वारा व्यञ्जन करते रहते हैं ।।६।।

कृष्णेर प्रेयसी व्रजे यत गोपीगण ।
याँर पदधूलि करे उद्धव प्रार्थना ।।५५
याँ सबा उपरे कृष्णेर प्रिय नाहि आन ।
ताँहारा आपनाके करे दासी अभिमान ।।५६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३१।६)—

व्रजजनार्त्तिहन् ! वीर ! योषितां
निजजनस्मयध्वंसनस्मित ।
भज सखे ! भवत्-किङ्करीः स्मनो
जलरुहाननं चारु दर्शय ।।७।।

टीका—हे वीर ! हे व्रजजनार्त्तिहन् ! हे व्रज-जनानां दुःखहारिन् ! हे निजजनस्मय--ध्वंसनस्मित ! निजजनानां यः स्मयो गर्व्वस्तस्य ध्वसनं नाशकं स्मितं यस्य हे तथाभूत ! हे सखे ! भवत्-किङ्करीः नोऽस्मात् भज आश्रय स्म । प्रथमं चारु मनोहरं जलरुहाननं कमलवदनं नो दर्शय इति ।।७।।

श्रीमद् भागवत के ३१ अध्याय में उक्त है--

हे सखे ! तुम व्रज वासि जनगण के दुःखहारी हो, हे वीर ! तुम्हारे हास्य, निज जनका गर्व हारक है, हम तुम्हारी किङ्करी हैं,--कृपा पूर्वक आश्रय दान करो, हम सब नारी जाति हैं, पहले हम सब को निज मनोहर वदन कमल का दर्शन कराओ ।।७।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।४७।२१)—

उद्धवं प्रति गोपीवाक्यम्—

अपि बत मधुपुर्य्यामार्य्यपुत्रोऽधुनास्ते
स्मरति स पितृगेहान् सौम्य बन्धूंश्चगोपान् ।
क्वचिदपि स कथां नः किङ्करीणां गृणीते
भुजमगुरुसुगन्धं मूर्द्ध्न्यधास्यत् कदा नु ।।८।।

टीका—बत हर्षे, हे सौम्य ! गुरुकुलात् आगत्य आर्य्यपुत्रः श्रीकृष्णः अधुना किं मधुपुर्य्यां वर्त्तते ? सः पितृगेहान्, बन्धूंश्च गोपान् किं स्मरति ? सः क्वचिदपि किङ्करीणां नः अस्माकं कथाः किं गृणीते ? कदाचिदपि नाऽस्माकं वार्त्ताः किं ब्रूते ? अगुरुवत् सुगन्धं भुज नो मूर्द्ध्नि कदानुधास्यति ? ।।८।।

उद्धव के प्रति गोपी बोली थी—

हे सौम्य ! आर्य्य पुत्र श्रीकृष्ण, गुरु गृहसे आकर अधुना क्या मधुपुरी मे विराजमान हैं ? आप क्या पितृ गृह एवं बन्धु वर्ग का स्मरण--करते हैं ? हम सब उनकी ही किङ्करी हैं, हम सबकी कथा कभी भी पूछते हैं ? आप कब यहाँ आकर अगुरु तुल्य सुगन्ध युक्त भुज को हमारे मस्तक में स्थापन करेंगे ? ।।८।।

ताँ सबार कथा रहु श्रीमती राधिका ।
सबा हइते सकलांशे परम अधिका ।।५७
तिँहो याँर दासी हैया करेण सेवन ।
याँर प्रेमगुणे कृष्ण बद्ध अनुक्षण ।।५८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३०।३९)—

श्रीकृष्णमुद्दिश्य श्रीराधिकावाक्यम्—

हा नाथ ! रमणप्रेष्ठ क्वासि क्वासि महाभुज ।
दास्यास्ते कृपणाया मे सखे दर्शय सन्निधिम् ॥९

टीका—हा नाथ ! हा रमण ! हा प्रेष्ठ ! क्वासि ? हा महाभुज ! क्वासि ? कुत्रासि ? हे सखे ! ते तव दास्या: कृपणाया दीनाया: सम्बन्धे सन्निधि दर्शय ।९

श्रीकृष्ण को लक्ष्यकर श्रीराधिका बोली थीं—

हा नाथ ! हा रमण ! हा प्रियतम ! तुम कहाँ हो, हे महाबाहो ! तुम कहाँ हो, हे सखे ! मैं तुम्हारी दासी हूँ, मैं अतीव दीना हूँ, मुझे दर्शन दान करो ।।९।।

द्वारकाते रुक्मिण्यादि यतेक महिषी ।
ताँहाराओ आपनाके माने कृष्ण दासी ।।७९

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८३।११)—

द्रौपदीं प्रति कालिन्दीवाक्यम्—

तपश्चरन्तीमाज्ञाय स्वपादस्पर्शनाशया ।
सख्योपेत्याग्रहीत् पाणिं साहं तद्गृहमार्ज्जनी ।।१०

टीका—सख्या अर्ज्जुनेन । तस्य गृहसम्मार्ज्जन-कर्त्री । मा मां सख्या सहोपेत्य ननु तपश्चरणादिना तस्य योग्या भार्य्या । तस्या गृहमार्ज्जनी च दासी, न च पत्नीत्व योग्या इत्यर्थ. ।।१०।।

कालिन्दी बोली थीं—

मैं श्रीहरि के चरण स्पर्श कामना से तपस्या रत थी, इस समय कृष्ण,—निज सखा अर्जुन के सहित मेरा पाणि ग्रहण किये थे । उस समय से मैं उनकी गृह मार्जन कारिणी दासी होकर हूँ ।।१०।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८३।३९)—

द्रौपदीं प्रति महिषीवाक्यम्—

आत्मारामस्य तस्येमा वयं वै गृहदासिका: ।
सर्व्वसङ्गनिवृत्त्याद्धा तपसा च बभूविम ।।११

टीका—इमा अष्टौ वयं सर्व्वसङ्गनिवृत्त्या त स्वधर्म्मेण च अद्धा साक्षात् तस्य गृहदासि बभूविम ।।११।।

द्रौपदी को महिषी गण बोली थीं—

इस रीति से हम सब तपश्चरण एवं स सङ्ग वर्जन कर उन आत्माराम श्रीकृष्ण के गृह दा को प्राप्त किये हैं ।।११।।

आनेर कि कथा बलदेव महाशय ।
याँर भाव शुद्ध सख्य वात्सल्यादिमय ।।
तिँहो आपनाके करे दास भावना ।
कृष्णदास-भाव विनु आछे कोन जना ।।
सहस्रवदन येहोँ शेष सङ्कर्षण ।
दश देह धरि करेन कृष्णेर सेवन ।।
अनन्त ब्रह्माण्डे रुद्र सदाशिवेर अंश ।
गुणावतार तिँहो सर्व्व अवतंस ।।
तिँहो ये करेन कृष्णेर दास्य प्रत्याश ।
निरन्तर कहे शिव मुञि कृष्णदास ।।
कृष्ण-प्रेमे उन्मत्त विह्वल दिगम्बर ।
कृष्णगुण-लीला गाय नाचे निरन्तर ।।
पिता माता गुरु सखा भाव केन नय ।
प्रेमेर स्वभावे दास्यभाव से करय ।।
एक कृष्ण सर्व्व सेव्य जगत् ईश्वर ।
आर यत सब ताँर सेवकानुचर ।।
सेइ कृष्ण अवतीर्ण चैतन्य-ईश्वर ।
अतएव आर सब ताँहार किङ्कर ।।
केह माने केह ना माने सब ताँर दास ।
ये ना माने तार हय सेइ पापे नाश ।।
चैतन्येर दास मुञि चैतन्येर दास ।
चैतन्येर दास मुञि ताँर दासेर दास ।।

इहा कहि नाचे गाय हुङ्कार गम्भीर ।
क्षणेक वसिल आचार्य्य हैया सुस्थिर ॥७१
भक्त अभिमान मूल श्रीबलराम ।
सेइ भावे अनुगत ताँर अंशगणे ॥७२
ताँर अवतार एक श्रीसङ्कर्षण ।
भक्त करि अभिमान करे सर्व्वक्षण ॥७३
ताँर अवतार एक श्रीयुत लक्ष्मण ।
श्रीरामेर दास्य तिँहो कैल सर्व्वक्षण ॥७४
सङ्कर्षण अवतार कारणाब्धिशायी ।
ताँहार हृदये भक्तभाव अनुयायी ॥७५
ताँहार प्रकाश भेद अद्वैत आचार्य्य ।
कायमनोवाक्ये सदा ताँर भक्ति कार्य्य ॥७६
वाक्ये कहे मुञि चैतन्येर अनुचर ।
मुञि तार भक्त बलि माने निरन्तर ॥७७
जल तुलसी दिया करे चरण सेवन ।
भक्ति प्रचारिया सब तारिला भुवन ॥७८
पृथ्वी धरे येइ सेइ शेष सङ्कर्षण ।
कायव्यूह करि करे कृष्णेर सेवन ॥७९
एइ सब हय श्रीकृष्णेर अवतार ।
निरन्तर देखि सब भक्तिर आचार ॥८०
ए सबाके शास्त्रे कहे भक्त अवतार ।
भक्त अवतार पद उपरि सवार ॥८१
अतएव अंशी कृष्ण अंश अवतार ।
अंशी अंशे देखि ज्येष्ठ कनिष्ठ आचार ॥८२
ज्येष्ठभावे अंशीते हय प्रभुज्ञान ।
कनिष्ठभावे आपनाके भक्त अभिमान ॥८३
कृष्ण समता हैते भक्तभाव बड़ पद ।
आत्मा हैते कृष्णेर भक्त प्रेमास्पद ॥८४
आत्मा हैते कृष्ण भक्त बड़ करि माने ।
ताहाते सकल शास्त्र वचन प्रमाणे ॥८५

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।१४।१५)—

उद्धवं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्—

न तथा मे प्रियतम आत्मयोनिर्न शङ्करः ।
न च सङ्कर्षणो न श्रीर्नैवात्मा च यथा भवान् ॥१२

टीका—उद्धवं प्रति ईश्वरस्य वचनं ।—भवान् त्वं यथा मे मम प्रियः, तथा आत्मयोनिर्ब्रह्मा, सङ्कर्षणः, श्रीर्लक्ष्मीः, आत्मा देहश्च प्रियतमो न भवति ॥१२॥

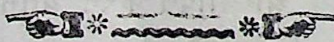
श्रीकृष्ण—उद्धव को सम्बोधन कर कहे थे—

हे उद्धव ! तुम जिस प्रकार मेरा प्रियतम हो, आत्मयोनि ब्रह्मा, महादेव, प्रियतमा लक्ष्मी एवं मदीय आत्माभी उस प्रकार प्रिय नहीं है ॥१२॥

कृष्ण साम्य नहे ताँर माधुर्य्यास्वादन ।
भक्तभावे करे ताँर माधुर्य्य चर्व्वण ॥८६
शास्त्रेर सिद्धान्त एइ विज्ञेर अनुभव ।
मूढ़लोक नाहि जाने भावेर वैभव ॥८७
भक्तभाव अङ्गीकरि बलराम लक्ष्मण ।
अद्वैत नित्यानन्द शेष सङ्कर्षण ॥८८
कृष्णेर माधुर्य्य-रसामृत करे पान ।
सेइ सुखे मत्त किछु नाहि जाने आन ॥८९
अन्येर आछुक कार्य्य आपने श्रीकृष्ण ।
आपन माधुर्य्य पाने हइया सतृष्ण ॥९०
स्वमाधुर्य्य आस्वादिते करेन यतन ।
भक्तभाव विना नहे ताहा आस्वादन ॥९१
भक्तभाव अङ्गीकरि हैल अवतीर्ण ।
श्रीकृष्णचैतन्य रूपे सर्व्व भावे पूर्ण ॥९२
नाना भक्त भावे करे स्वमाधुर्य्य पान ।
पूर्व्वे करियाछि एइ सिद्धान्त व्याख्यान ॥९३

अवतारगणेर भक्तभावे अधिकार।
भक्तभाव हैते अधिक सुख नाहि आर ॥९४
मूल भक्त अवतार श्रीसङ्कर्षण।
भक्त अवतार ताँहि अद्वैत गणन ॥९५
अद्वैत आचार्य्य गोँसाञिर महिमा अपार।
याँहार हुङ्कारे कैल चैतन्यावतार ॥९६
कीर्त्तन प्रचारि कैल जगत् तारण।
अद्वैत--प्रसादे लोक पाइल प्रेमधन ॥९७
अद्वैत महिमानन्त के पारे कहिते।
सेइ लिखि येइ शुनि महाजन हैते ॥९८
आचार्य्य चरणे मोर कोटि नमस्कार।
इथे किछु अपराध ना लबे आमार ॥९९
तोमार महिमा कोटि समुद्र अगाध।
ताहार ये तत्त्व कहि बड़ अपराध ॥१००
जय जय जय श्रीअद्वैत आचार्य्य।
जय जय श्रीचैतन्य--नित्यानन्द आर्य्य ॥१०१
दुइ श्लोके कहिल अद्वैत-तत्त्व-निरूपण।
पञ्चतत्त्वेर विचार एबे शुन भक्तगण ॥१०२
श्रीरूप-रघुनाथ पदे यार आश।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१०३

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे
श्रीअद्वैततत्त्वनिरूपणं नाम
षष्ठः परिच्छेदः ॥६॥







सप्तम परिच्छेद



तथाहि ग्रन्थकारस्य—

अगत्येकगतिं नत्वा हीनार्थाधिकसाधकम्।
श्रीचैतन्यं लिख्यतेऽस्य भक्तिप्रेमवदान्यता ॥१॥

टीका—श्रीचैतन्यं नत्वा, अस्य भक्तिप्रेमवदान्य
लिख्यते। श्रीचैतन्यं किम्भूत?—अगत्येकग
अगतीनामेका अनन्या गतिः शरण, पुनः किम्भूतं
हीनार्थाधिकसाधकं हीनानां सज्जन्म--कर्म्मरहि
नामतिनीचजनानां ये अर्थाः प्रयोजनानि धर्म्मादि
वा तेषामधिकं यथा स्यात्तथा साधकं ॥१॥

सज्जन्यकर्म्म सहाय सम्पद् रहित व्यक्ति
भी सौभाग्य प्रदान कारी गति हीन व्यक्ति के
मात्र आश्रय श्रीचैतन्य देवकी प्रेमवदान्यता का व
करते हैं ॥१॥

जय जय महाप्रभु श्रीकृष्णचैतन्य।
ताँहार चरणाश्रित लह सेइ धन्य ॥
पूर्व्वे गुर्व्वादि छय तत्त्वे कैल नमस्कार।
गुरु तत्त्व कहियाछि शुन पाँचेर विचार ॥
पञ्च तत्त्व अवतीर्ण श्रीचैतन्य सङ्गे।
पञ्च तत्त्व लञा करे सङ्कीर्त्तन रङ्गे ॥
पञ्च तत्त्व एक वस्तु नाहि किछु भेद।
रस आस्वादिते ताँर विविध विभेद ॥

तथाहि श्रीरूपगोस्वामि-कड़चायाम्—

पञ्चतत्त्वात्मकं कृष्णं भक्तरूपस्वरूपकम्।
भक्तावतारं भक्ताख्यं नमामि भक्तशक्तिकम्।

भक्तरूप अर्थात् श्रीकृष्ण चैतन्य रूप, भ
स्वरूप—अर्थात् नित्यानन्द रूप, भक्तावतार ह
अर्थात् श्रीअद्वैताचार्य्य रूप, भक्ताख्य--अर्थ

श्रीवासादि रूप एवं भक्त शक्तिक अर्थात् श्रीगदाधरादि रूप—पञ्चतत्वमय श्रीकृष्ण चैतन्य देव को मैं प्रणाम करता हूँ ।।२।।

स्वयं भगवान् कृष्ण एकले ईश्वर ।
अद्वितीय नन्दात्मज रसिक--शेखर ।।५
रासादि-विलासी व्रजललना--नागर ।
आर यत देख सब ताँर परिकर ।।६
सेइ कृष्ण अवतीर्ण श्रीकृष्णचैतन्य ।
सेइ परिकर गण सङ्गे सब धन्य ।।७
एकले ईश्वर तत्त्व चैतन्य ईश्वर ।
भक्तभावमय ताँर शुद्ध कलेवर ।।८
कृष्ण--माधुर्य्येर एक अद्भुत स्वभाव ।
आपनास्वादिते कृष्ण करे भक्तभाव ।।९
इथे भक्तभाव धरे चैतन्य गोँसाञि ।
भक्त--स्वरूप ताँर नित्यानन्द भाइ ।।१०
भक्त-अवतार ताँर आचार्य्य गोँसाञि ।
एइ तिन तत्त्व सबे प्रभु करि गाइ ।।११
एक महाप्रभु आर प्रभु दुइ जन ।
दुइ प्रभु सेवे महाप्रभुर चरण ।।१२
एइ तिन तत्त्व सर्व्वाराध्य करि मानि ।
चतुर्थ ये भक्ततत्त्व आराधक जानि ।।१३
श्रीनिवास आदि कोटि कोटि भक्तगण ।
शुद्ध—भक्त-तत्त्व मध्ये ता सवार गणन ।।१४
गदाधर पण्डितादि प्रभुर शक्ति अवतार ।
अन्तरङ्ग भक्त करि गणन ताँहार ।।१५
याँ सबा लइया प्रभुर नित्य विहार ।
याँ सबा लइया करे कीर्त्तन प्रचार ।।१६
याँ सबा लञा करे प्रेम आस्वादन ।
याँहा सबा लैञा दान करे प्रेमधन ।।१७
सेइ पञ्चतत्त्व मिलि पृथिवी आसिया ।
पूर्व्व प्रेमभाण्डारेर मुद्रा उघाड़िया ।।१८
पाँचे मेलि लुठे प्रेम करे आस्वादन ।
यत पिये तत तृष्णा वाड़े अनुक्षण ।।१९
पुनः पुनः पिये पियाइया हये मत्त ।
नाचे गाय हासे कान्दे यैछे मदमत्त ।।२०
पात्रापात्र विचार नाहि, नाहि स्थानास्थान ।
येइ याहा पाय, ताँहा करे प्रेमदान ।।२१
लुटिया खाइया दिया भाण्डार उजाड़े ।
आश्चर्य्य भाण्डार, प्रेम शत गुण बाड़े ।।२२
उथलिल प्रेमवन्या चौदिके बेड़ाय ।
स्त्री वृद्ध युवा आदि सबाड़े डुवाय ।।२३
सज्जन दुर्ज्जन पङ्गु जड़ अन्धगण ।
प्रेम—वन्याय डुवाइल जगतेर मन ।।२४
जगत डुविल जीवेर हैल वीज नाश ।
ताहा देखि पाँच जनेर परम उल्लास ।।२५
यत यत प्रेमवृष्टि करे पञ्चजने ।
तत तत बाड़े जल व्यापे त्रिभुवने ।।२६
मायावादी कर्म्मनिष्ठ कुतार्किकगण ।
निन्दक पाषण्डी यत पड़ुया अधम ।।२७
सेइ सब महादक्ष धाञा पलाइल ।
सेइ वन्या ता सबारे छुइते नारिल ।।२८
ताहा देखि महाप्रभु करेन चिन्तन ।
जगत् डुवाइते आमि करिल यतन ।।२९
केह केह एड़ाइल प्रतिज्ञा हैल भङ्ग ।
ता सबा डुवाते पातिव किछु रङ्ग ।।३०
एत बलि मने किछु करिया विचार ।
सन्नयास आश्रम प्रभु कैल अङ्गीकार ।।३१

चव्विश वत्सर छिल गृहस्थ आश्रमे ।
पञ्चविंशति वर्षे कैल यति धर्म्मे ॥३२
सन्न्यास करिया प्रभु कैल आकर्षण ।
यतेक पलाञाछिल तार्किकादिगण ॥३३
पड़ुया पाषण्डी कर्म्मी निन्दकादि यत ।
तारा आसि प्रभु-पदे हय अवनत ॥३४
अपराध क्षमाइल डुविल प्रेमजले ।
केवा एड़ाइव प्रभुर प्रेम महाजाले ॥३५
सवा निस्तारिते प्रभु कृपा-अवतार ।
सवा निस्तारिते करे चातुरी अपार ॥३६
तवे निज भक्त कैल यत म्लेच्छ आदि ।
सबे एक एड़ाइल काशीर मायावादी ॥३७
वृन्दावन याइते प्रभु रहिला काशीते ।
मायावादीगण ताँरे लागिल निन्दिते ॥३८
सन्न्यासी हइया करेन गायन नाचन ।
ना करे वेदान्तपाठ करे सङ्कीर्त्तन ॥३९
मूर्ख सन्न्यासी निज धर्म्म नाहि जाने ।
भावुक हइया फिरे भावुकेर सने ॥४०
ए सब शुनिया प्रभु हासे मने मने ।
उपेक्षा करिया कैल मथुरा गमने ॥४१
सेखानेते नाना कीर्त्ति प्रेम प्रयोजन ।
मथुरा देखिया पुनः कैल आगमन ॥४२
काशीते लेखक शूद्र चन्द्रशेखर ।
तार घरे रहिला प्रभु स्वतन्त्र ईश्वर ॥४३
तपनमिश्रेर घरे भिक्षा निर्व्वाहण ।
सन्न्यासीर सङ्गे नाहि माने निमन्त्रण ॥४४
सनातन गोँसाञि आसि ताँहाइ मिलिला ।
ताँरे शिक्षाइते प्रभु दुमास रहिला ॥४५
ताँरे शिक्षाइल सब वैष्णवेर धर्म ।
भागवत आदिशास्त्रे यत गूढ़ मर्म्म ॥४६
इतिमध्ये चन्द्रशेखर मिश्र तपन ।
दुःखी हञा प्रभु-पदे कैल निवेदन ॥४७
कतेक शुनिव प्रभुर तोमार निन्दन ।
ना पारि सहिते एवे छाड़िव जीवन ॥४८
तोमारे निन्दये यत सन्न्यासीर गण ।
शुनिते ना पारि फाटे हृदय श्रवण ॥४९
इहा शुनि रहे प्रभु ईषत हासिया ।
सेइ काले एक विप्र मिलिल आसिया ॥५०
आसि निवेदन करे चरणे धरिया ।
एक वस्तु मागो देह प्रसन्न हइया ॥५१
सकल सन्न्यासी मुञि कैनु निमन्त्रण ।
तुमि आइस पूर्ण तबे हय मोर मन ॥५२
ना याह सन्न्यासी गोष्ठी इहा आमि जानि ।
मोरे अनुग्रह कर निमन्त्रण मानि ॥५३
प्रभु हासि निमन्त्रण कैल अङ्गीकार ।
सन्न्यासीरे कृपा लागि ए भङ्गी ताँहार ॥५४
से विप्र जानेन प्रभु ना यान कारो घरे ।
ताँहार प्रेरणाय ताँरे अत्याग्रह करे ॥५५
आर दिन गेला प्रभु से विप्र भवने ।
देखिलेन वसियाछेन सन्न्यासीर गणे ॥५६
सभा नमस्कारि गेला पाद-प्रक्षालने ।
पाद प्रक्षालन करि, वसिला सेइ स्थाने ॥५७
वसिया करिल किछु ईश्वर्य्य प्रकाश ।
महा तेजोमय वपु कोटि सूर्य्य भास ॥५८
प्रभावे आकर्षिल सर्व्व सन्न्यासीर मन ।
उठिला सन्न्यासीगण छाड़िया आसन ॥५९

प्रकाशानन्द नामे सर्व्व सन्नयासी प्रधान ।
प्रभुके कहिल किछु करिया सम्मान ॥६०
इहा आइस, इहा आइस शुनह श्रीपाद ।
अपवित्र स्थाने वैस, किवा अवसाद ॥६१
गोँसाञि कहेन आमि हीन सम्प्रदाय ।
तोमा सभाते मोरवसिते ना जुयाय ॥६२
आपने प्रकाशानन्द हातेते धरिया ।
वसाइल सभामध्ये सम्मान करिया ॥६३
पुछिल तोमार नाम श्रीकृष्णचैतन्य ।
केशव भारतीर शिष्य ताते तुमि धन्य ॥६४
सम्प्रदायी सन्नयासी तुमि रह एइ ग्रामे ।
कि कारणे आमा सबार ना कर दर्शने ॥६५
सन्नयासी हइया कर नर्त्तन गायन ।
भावुक सब सङ्गे लैया कर सङ्कीर्त्तन ॥६६
वेदान्त पठन प्रधान सन्नयासीर धर्म्म ।
ताहा छाड़ि केन कर भावकेर कर्म्म ॥६७
प्रभावे देखि ये तुमि साक्षात् नारायण ।
हीनाचार कर केन कि इहार कारण ॥६८
प्रभु कहे श्रीपाद शुनह इहार कारण ।
गुरु मोरे मूर्ख देखि करिला शासन ॥६९
मूर्ख तुमि तोमार नाहि वेदान्ताधिकार ।
कृष्णमन्त्र जप सदा एइ मन्त्र सार ॥७०
कृष्ण नाम हैते हवे संसार मोचन ।
कृष्ण नाम हैते पावे कृष्णेर चरण ॥७१
नाम विना कलिकाले नाइ आर धर्म्म ।
सर्व्वमन्त्र--सार नाम एइ शास्त्र-मर्म्म ॥७२
एत बलि एक श्लोक शिक्षाइल मोरे ।
कण्ठे करि एइ श्लोक करिह विचारे ॥७३

तथाहि बृहन्नारदीयवचनम्—

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम् ।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा ॥३

टीका—कलौ हरेर्नाम एव कृष्ण प्राप्तिकारणं, नान्यत, यतो नाम्नि रूपे च श्रीकृष्णस्याविर्भाव: । अतो नाम्नि सर्व्वेषां निस्तार एवाधिक्ये वारत्रयं एवकार: । केवलशब्देन निश्चयार्थ: । येन जनेन अन्यथा क्रियते,तस्य गतिर्नाम्नि नास्त्येव निश्चितमिदं पुनरेवकारात् ॥३॥

कलिकाल में केवल हरिनाम व्यतीत, हरिनाम व्यतीत, हरिनाम व्यतीत अन्य गति नहीं है, अन्य गति नहीं है, अन्य गति है हो नहीं । अर्थात् श्रीहरिनाम श्रवण कीर्त्तन एवं जप, कलिकाले में एकमात्र विधेय है, ज्ञान योग एवं काम्य कर्म्भ योग विहित नहीं है । श्रीहरिनाम ग्रहण रूप भक्ति योग ही विहित है । कारण, निरपराध से श्रीहरिनाम ग्रहण कारी व्यक्ति के प्रति श्रीहरि की मदीयतामयी निश्चयात्मिका बुद्धि होती है ॥३॥

एइ आज्ञा पाञा नाम लइ अनुक्षण ।
नाम लैते लैते मोर भ्रान्त हैल मन ॥७४
धैर्य्य करिते नारि हइलाम उन्मत्त ।
हासि कान्दि नाचि गाइ यैछे मदमत्त ॥७५
तबे धैर्य्य धरि मने करिल विचार ।
कृष्णनामे ज्ञानाच्छन्न हइल आमार ॥७६
पागल हइलाम आमि धैर्य्य नहे मने ।
एत चिन्ति निवेदिनु गुरुर चरणे ॥७७
किवा मन्त्र दिला गोँसाञि तार किबा बल ।
जपिते जपिते मन्त्र करिल पागल ॥७८
हासाय नाचाय मोरे कराय क्रन्दन ।
एत शुनि गुरु हासि बलिला वचन ॥७९
कृष्णनाम महामन्त्रेर एइ त स्वभाव ।
येइ जपे तार कृष्णे उपजये भाव ॥८०

कृष्ण विषय प्रेमा परम पुरुषार्थ ।
यार आगे तृणतुल्य चारि पुरुषार्थ ॥८१

पञ्चम पुरुषार्थ प्रेमानन्दामृत-सिन्धु ।
मोक्षादि आनन्द यार नहे एक बिन्दु ॥८२

कृष्णनामेर फल कृष्णप्रेमा शास्त्रे कय ।
भाग्ये सेइ प्रेमा तोमार करिल उदय ॥८३

प्रेमार स्वभावे करे चित्त तनु क्षोभ ।
कृष्णेर चरण प्राप्त्ये उपजाय लोभ ॥८४

प्रेमार स्वभावे भक्त हासे कान्दे गाय ।
उन्मत्त हइया नाचे इति उति धाय ॥८५

स्वेद कम्प रोमाञ्चाश्रु गद्गद वैवर्ण ।
उन्माद विषाद धैर्य्य गर्व्व हर्ष दैन्य ॥८६

एत भावे प्रेमा भक्तगणेरे नाचाय ।
कृष्ण आनन्द-सुख सागरेते डुवाय ॥८७

भाल हेल पाइले तुमि परम पुरुषार्थ ।
तोमार प्रेमेते आमि हैलाम कृतार्थ ॥८८

नाच गाओ भक्तसङ्गे कर सङ्कीर्त्तन ।
कृष्ण नाम उपदेशि तार त्रिभुवन ॥८९

एत बलि पुनः श्लोक शिखाइला मोरे ।
भागवतेर सार एइ बले बारे बारे ॥९०

तथाहि श्रीमद्भागवते (११.२।४०)

एवं व्रतः स्वप्रियनामकीर्त्या
जातानुरागो द्रुतचित्त उच्चैः ।
हसत्यथो रोदिति रौति गाय-
त्युन्मादवन्नृत्यति लोकबाह्यः ॥४॥

टीका—स भक्तः एवं व्रतः एवं वृत्तं यस्य सः द्रुतचित्ते द्रवीभूतचिते स्वप्रियनामकीर्त्या जातानुरागः उच्चैर्हसति, रौति, शब्द करोति, गायति, उन्मादवत् नृत्यति । पुनः कथम्भूतः ?—लोकवाह्यः लोकरहितः ॥४॥

श्रीमद् भागवत में लिखित है—

निज प्रियतम श्रीहरि के नाम कीर्त्तन क[ar] करते प्रेमोत्पत्ति हेतु द्रवित हृदय होकर उन्माद[वत्] कभी उच्चैःस्वर से हास्य, रोदन प्रेमोद्गार [कर] करते हैं, एवं लोक लज्जा परित्याग कर नृत्य क[रने] लगते हैं ॥४॥

एइ ताँर वाक्ये आमि दृढ़ विश्वास धरि
निरन्तर कृष्ण-नाम सङ्कीर्त्तन करि ॥९[१]

सेइ कृष्णनाम कभु गाओयाय नाचाय ।
गाइ, नाचि नाइ आमि आपन इच्छाय ॥[९२]

कृष्णनामे ये आनन्द सिन्धु आस्वादन ।
ब्रह्मानन्द तार आगे खातोदक सम ॥[९३]

तथाहि हरिभक्तिसुधोदये—

त्वत्साक्षात्करणाह्लादविशुद्धाब्धिस्थितस्य मे ।
सुखानि गोष्पदायन्ते ब्राह्माण्यपि जगद्गुरो ॥५॥

टीका—हे जगद्गुरो ! हे ईश्वर ! त्वत्साक्षा[त्] करणेनान्तःकरणे य आह्लादः परमानन्द एव एव विशुद्धाब्धिः प्रेमानन्दरसाब्धिस्तत्र स्थितस्य मम सम्बन्धे ब्राह्माणि ब्रह्मानन्दमयानि सुख[ानि] गोष्पदायन्ते गोष्पदप्रमाणगर्त्त इव भवन्ति ॥५॥

प्रह्लाद नृसिंह देवको सम्बोधन कर कहे थे- जगद् गुरो ! मैं भवदीय साक्षात् करणरूप वि[शुद्ध] आनन्द समुद्र में हूँ, अतः मेरे निकट ब्रह्मा[नन्द] गोष्पद के समान बोध होता है ।

अर्थात् हे भुवन पावन प्रभो ! समुद्र श[ायी] व्यक्ति जिस प्रकार गोष्पद को तुच्छ मानता है, [उसी] प्रकार तुम्हारे दर्शन से आनन्द निर्म्मलचित्त होने [के] कारण ब्रह्म सुख भी अतितुच्छ प्रतिभात होता है ।

प्रभुर मिष्टवाक्य शुनि सन्न्यासीर गण ।
चित्त फिरे गेल कहे मधुर वचन ॥९[४]

ये किछु कहिले तुमि सब सत्य हय ।
कृष्णप्रेमा सेइ पाय यार भाग्योदय ॥९[५]

कृष्णभक्ति कर इहाय सबार सन्तोष ।
वेदान्त ना शुन केन, तार किबा दोष ॥९६
एत शुनि हासि प्रभु बलिल बचन ।
दुःख ना मानह यदि करि निवेदन ॥९७
इहा शुनि बले सर्व्व सन्न्यासीर गण ।
तोमारे देखिये यैछे साक्षात् नारायण ॥९८
तोमार वचन शुनि जुड़ाय श्रवण ।
तोमार माधुरी देखि जुड़ाय नयन ॥९९
तोमार प्रभावे सबा आनन्दित मन ।
कभु असङ्गत नहे तोमार वचन ॥१००
प्रभु कहे वेदान्त-सूत्र ईश्वर-वचन ।
व्यासरूपे कहिल याहा श्रीनारायण ॥१०१
भ्रम प्रमाद विप्रलिप्सा करणापाटव ।
ईश्वरेर वाक्ये नाहि एइ दोष सब ॥१०२
उपनिषत् सह सूत्र कहे येइ तत्त्व ।
मुख्यवृत्ति सेइ अर्थ परम महत्त्व ॥१०३
गौणीवृत्ति येबा भाष्य करिल आचार्य्य ।
ताहार श्रवणे नाश हय सर्व्व कार्य्य ॥१०४
ताहार नाहिक दोष ईश्वर आज्ञा पाञा ।
गौणार्थे कैल मुख्य अर्थ आच्छादिया ॥१०५
ब्रह्मशब्दे मुख्य अर्थे कहे भगवान् ।
चिदैश्वर्य्य परिपूर्ण अनूर्द्ध्व समान ॥१०६
ताँहार विभूति देह सब चिदाकार ।
चिद्विभूति आच्छादि ताँरे कहे निराकार ।१०७
चिदानन्द देह ताँर स्थान परिवार ।
ताँरे कहे प्राकृत सत्त्वेर विकार ॥१०८
ताँर दोष नाहि तेँहो आज्ञाकारी दास ।
आर येइ शुने तार हय सर्व्वनाश ॥१०९
विष्णुनिन्दा नाहि आर इहार उपर ।
प्राकृत करिया माने विष्णुकलेवर ॥११०
ईश्वरेर तत्त्व यैछे ज्वलित ज्वलन ।
जीवेर स्वरूप यैछे स्फुलिङ्गेर कण ॥१११
जीवतत्त्व शक्ति कृष्णतत्त्व शक्तिमान् ।
गीता विष्णुपुराण इथे परम प्रमाण ॥११२

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (७'५)—

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम् ।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्य्यते जगत् ॥६॥

टीका—इयं तु अपरा जड़त्वात् निकृष्टा इतः सकाशात् परां प्रकृष्टां अन्यां जीवभूतां जीवनस्वरूपां मे प्रकृतिं विद्धि । हे महाबाहो ! यया चेतनया स्व-कर्म्मद्वारेण इदं जगत् धार्य्यते ॥६॥

श्रीमद् भगवद् गीता में उक्त है—

पूर्वोक्त अष्ट प्रकार प्रकृति का अपरा नाम है । हे महाबाहो ! परा नामक एक प्रकृति है,जिसका अपर नाम जीव है,वह जीव रूपा प्रकृति चेतन है,एवं निज कर्म्माचरण के द्वारा इस जगत् को धारण करती है ।६

तथाहि विष्णुपुराणे (६।७।६१)—

विष्णुशक्तिः परा प्रोक्ता क्षेत्रज्ञाख्या तथा परा ।
अविद्या कर्म्मसंज्ञान्या तृतीया शक्तिरिष्यते ॥७॥

टीका—परा विष्णु शक्तिः प्रोक्ता कथिता, सच्चिदानन्दरूपा, तथा अपरा क्षेत्रज्ञाख्या जीवभूता शक्तिः अविद्या सा कर्म्मसंज्ञा इष्यते दृश्यते ॥७॥

विष्णु पुराण में उक्त है—विष्णु शक्ति त्रिविध हैं,—परा-(१) अन्तरङ्गा, (२ अपरा क्षेत्रज्ञा, एवं (३)अविद्या-कर्म्मसंज्ञा । इसका अपर नाम-अन्तरङ्गा चिच्छक्ति, वहिरङ्गा मायाशक्ति, एवं तटस्था-जीव-शक्ति है ॥७॥

हेन जीवतत्त्व लञा लिखि परतत्त्व ।
आच्छन्न करिल श्रेष्ठ ईश्वर महत्त्व ॥११३

व्यासेर सूत्रे कहे, परिणाम-बाद ।
व्यास भ्रान्त बलि ताहा उठिल विवाद ॥११४
परिणाम-बादे ईश्वर हयेन विकारी ।
एत कहि विवर्त्तबाद स्थापन ये करि ॥११५
वस्तुत परिणाम-बादे सेइत प्रमाण ।
देहे आत्मबुद्धि एइ विवर्त्तेर स्थान ॥११६
अविचिन्त्य शक्तियुक्त श्रीभगवान् ।
इच्छाय जगत् रूपे पाय परिणाम ॥११७
तथापि अचिन्त्य-शक्त्ये हय अविकारी ।
प्राकृत चिन्तामणि ताते दृष्टान्त धरि ॥११८
नाना रत्नराशि हय चिन्तामणि हैते ।
तथापि मणि रहे स्वरूप अविकृते ॥११९
प्राकृत वस्तुते यदि अचिन्त्य-शक्ति हय ।
ईश्वरेर अचिन्त्यशक्ति ए कोन विस्मय ॥१२०
प्रणव से महावाक्य वेदेर निदान ।
ईश्वर स्वरूप प्रणव सर्व्व विश्वधाम ॥१२१
सर्व्वाश्रय ईश्वरेर प्रणव उद्देश ।
तत्त्वमसि वाक्य हय वेदेर एकदेश ॥१२२
प्रणव महावाक्य ताहा करि आच्छादन ।
महावाक्य करि तत्त्वमसिर स्थापन ॥१२३
सर्व्ववेदसूत्रे कहे कृष्णेर अभिधान ।
मुख्यावृत्ति छाड़ि कैल लक्षणा व्याख्यान ॥१२४
स्वतः प्रमाण वेद प्रमाण शिरोमणि ।
लक्षणा करिले स्वतः प्रमाणता हानि ॥१२५
एइ मत प्रति सूत्रे सहजार्थ छाड़िया ।
गौण अर्थ व्याख्या करे कल्पना करिया ॥१२६
एइ मत प्रतिसूत्र करेण दूषण ।
शुनि चमत्कार हैल सन्न्यासीर गण ।१२७

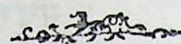
सकल सन्न्यासी कहे शुनह श्रीपाद ।
तुमि ये खण्डिले अर्थ नहे से विवाद ॥१२
आचार्य्य कल्पित अर्थ इहा सबे जानि ।
सम्प्रदाय अनुरोधे तबु नाहि मानि ॥१२
मुख्यार्थ व्याख्या कर देखि तोमार बल ।
मुख्यार्थे लागाइल प्रभु सूत्र सकल ॥१३
बृहद्वस्तु ब्रह्म कहि श्रीभगवान् ।
षड्विध ऐश्वर्य्यपूर्ण परतत्त्व धाम ॥१३
स्वरूप ऐश्वर्य्य ताँर नाहि मायागन्ध ।
सकल वेदेर भगवान् से सम्बन्ध ॥१३
ताँरे निर्व्विशेष कहि चिच्छक्ति ना मानि
अर्द्ध स्वरूप ना मानिले पूर्णता हय हानि ।
भगवान् प्राप्ति हेतु ये करि उपाय ।
श्रवणादि भक्ति कृष्ण प्राप्तिर सहाय ॥१
सेइ सर्व्ववेदेर अभिधेय नाम ।
साधनभक्तिते हय प्रेमेर उद्गम ॥१३
कृष्णेर चरणे यदि हय अनुराग ।
कृष्ण विनु अन्ये तार नाहि हय राग ॥१३
पञ्चम पुरुषार्थ सेइ प्रेम महाधन ।
कृष्णेर माधुर्य्यरस कराय आस्वादन ॥१३
प्रेम हैते कृष्ण हय निज भक्तवश ।
प्रेम हैते पाइ कृष्ण सेवासुखरस ॥१३
सम्बन्ध अभिधेय प्रयोजन नाम ।
एइ तिन अर्थे सब सूत्र पर्य्यवसान ॥१३
एइ मत सबसूत्रेर व्याख्यान शुनिया ।
सकल सन्न्यासी कहे विनय करिया ॥१४
वेदमय मूर्त्ति तुमि साक्षात नारायण ।
अपराध क्षम पूर्व्वे ये कैनु निन्दन ॥१४

सेइ हैते सन्न्यासीर फिरि गेल मन ।
कृष्ण कृष्ण नाम सदा करये ग्रहण ॥१४२
एइ मत ता सबार क्षमि अपराध ।
सबाकारे कृष्ण नाम करिला प्रसाद ॥१४३
तबे सन्न्यासीर गण महाप्रभु लैया ।
भिक्षा करिलेन सर्व्वमध्ये वसाइया ॥१४४
भिक्षा करि महाप्रभु आइला वासा घर ।
हेन चित्रलीला करे गौराङ्गसुन्दर ॥१४५
चन्द्रशेखर तपनमिश्र सनातन ।
शुनि देखि आनन्दित सबाकार मन ॥१४६
प्रभुके देखिते आइसे सकल सन्न्यासी ।
प्रभुर प्रशंसा करे सर्व्व वाराणसी ॥१४७
वाराणसीपुरी आइला श्रीकृष्णचैतन्य ।
पुरीसह सर्व्वलोके हैल महाधन्य ॥१४८
लक्ष लक्ष लोक आइसे प्रभुके देखिते ।
महाभिड़ हैल द्वारे नारे प्रवेशिते ॥१४९
प्रभु यबे याय विश्वेश्वर दरशने ।
लक्ष लक्ष लोक आसि मिले सेइ स्थाने ॥१५०
स्नान करिते यबे यान गङ्गातीरे ।
ताँहा सब लोक आसि हय महाभिड़े ॥१५१
बाहु तुलि बले प्रभु बल हरि हरि ।
हरिध्वनि करे लोक स्वर्गमर्त्त्य भरि ॥१५२
लोक निस्तारिया प्रभुर चलिते हैल मन ।
वृन्दावने पाठाइलेन श्रीसनातन ॥१५३
रात्रि दिवस लोकेर शुनि कोलाहल ।
वाराणसी छाड़ि प्रभु आइला नीलाचल ॥१५४
एइ लीला आगे कहिव विस्तार करिया ।
संक्षेपे कहिल इहा प्रसङ्ग पाइया ॥१५५
एइ पञ्चतत्त्वरूपे श्रीकृष्णचैतन्य ।
कृष्णनाम-प्रेम दिया विश्व कैल धन्य ॥१५६
मथुराते पाठाइल रूप सनातन ।
दुइ सेनापति कैल भक्ति प्रचारण ॥१५७
नित्यानन्द गोँसाञिके पाठाइल गौड़देशे ।
तिँहो भक्ति प्रचारिल अशेष विशेषे ॥१५८
आपने दक्षिण देशे करिल गमन ।
ग्रामे ग्रामे कैल कृष्णनाम प्रचारण ॥१५९
सेतुबन्ध पर्य्यन्त कैल भक्तिर प्रचार ।
कृष्णप्रेम दिया कैल सबार निस्तार ॥१६०
एइत कहिल पञ्चतत्त्वेर आख्यान ।
याहार श्रवणे हय गौरतत्त्व ज्ञान ॥१६१
श्रीचैतन्य नित्यानन्दाद्वैत तिन जन ।
श्रीवास गदाधर आदि यत भक्तगण ॥१६२
सबार चरणपद्मे करि नमस्कार ।
यैछे तैछे कहि किछु चैतन्य विहार ॥१६३
श्रीरूप रघुनाथ पदे यार आश ॥
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१६४

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे
पञ्चतत्त्वार्थनिरूपणं नाम सप्तमः
परिच्छेदः ॥७॥



❀ अष्टम परिच्छेद ❀



वन्दे चैतन्यदेवं तं भगवन्तं यदिच्छया ।
प्रसभं नृत्यते चित्रं लेखरङ्गे जड़ोऽप्ययम् ॥१॥

टीका—तं भगवन्तं चैतन्यदेवमहं वन्दे । यस्य इच्छया प्रसभं हठात् चित्रं चित्रनिर्म्माणं नृत्यते । यस्य इच्छा चित्रं नर्त्तयति, अज्ञो जड़ोपि अयं जनो लेखरङ्गे पण्डितो भवति ॥१॥

जिनकी इच्छा से चित्रित पदार्थ भी सहसा नृत्य करता है, जिनकी इच्छा से जड़रूप यह व्यक्ति लिखन रूप रङ्ग क्षेत्र में नृत्य कर रहा है, अर्थात् लिख रहा है, मैं उन भगवान् श्रीचैतन्य देवको वन्दन करता हूँ ॥१॥

जय जय श्रीकृष्णचैतन्य गौरचन्द्र ।
जय जय परमानन्द जय नित्यानन्द ॥१
जय जय अद्वैत आचार्य्य कृपामय ।
जय जय गदाधर पण्डित महाशय ॥२
जय जय श्रीवासादि यत भक्तगण ।
प्रणत हइया वन्दो सवार चरण ॥३
मूक कवित्व करे ये सवेर स्मरणे ।
पङ्गु गिरि लङ्घे अन्ध देखे तारागणे ॥४
ए सब ना माने येइ पण्डित सकल ।
ता सबार विद्यापाठ भेक--कोलाहल ॥५
ए सब ना माने येइ करे कृष्णभक्ति ।
कृष्ण-कृपा नाहि तारे, नाहि तार गति ॥६
पूर्व्वे यैछे जरासन्ध आदि राजगण ।
वेद धर्म्म करि करे विष्णुर पूजन ॥७
कृष्ण नाहि माने ताते दैत्य करि मानि ।
चैतन्य ना मानिले तैछे दैत्य तारे जानि ॥८
मोरे ना मानिले सब लोक हवे नाश ।
एइ लागि कृपाय प्रभु करिल सन्न्यास ॥९
सन्न्यासीर बुद्ध्ये मोरे करिवे नमस्कार ।
तथापि खण्डिवे दोष हइवे निस्तार ॥१०
हेन कृपामय चैतन्य ना माने येइ जन ।
सर्व्वोत्तम हैले ताँरे असुरे गणन ॥११
अतएव पुनः कहोँ ऊर्द्ध्व बाहु हैया ।
चैतन्य नित्यानन्द भज कुतर्क छाड़िया ॥१२
यदि वा तार्किक कहे तर्क से प्रमाण ।
तर्क शास्त्रे सिद्ध येइ सेइ सेव्यमान ॥१३
श्रीकृष्णचैतन्य दया करह विचार ।
विचार करिले चित्ते पावे चमतकार ॥१४
बहु जन्म करे यदि श्रवण कीर्त्तन ।
तबु नाहि पाय कृष्णपदे प्रेमधन ॥१५

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे साधनभक्ति लहर्य्याम् चतुर्व्विंशाङ्कधृत--तन्त्रवचनम् ।

ज्ञानतः सुलभा मुक्तिर्भुक्तिर्यज्ञादिपुण्यतः ।
सेयं साधनसाहस्रैर्हरिभक्तिः सुदुर्ल्लभा ॥२

टीका—महादेववचनमिदं । ज्ञानतः मुक्ति सुलभा, यज्ञादि पुण्यतः भुक्तिः सुलभा, किन्तु सा इयं हरिभक्तिः साधनसाहस्रैः सुदुर्ल्लभा दुष्प्राप्या ॥२॥

महादेव पार्वती को कहे थे,—देवि! स्वरूपानुसन्धानात्मक ज्ञानके द्वारा अनायास मुक्ति होती है, एवं यज्ञादि पुण्यकर्म के द्वारा भोग्य पदार्थ का लाभ भी होता है, किन्तु सहस्र सहस्र साधन के

द्वारा भी श्रीहरिभक्ति की प्राप्ति अनायास से नहीं होती है ॥२॥

कृष्ण यदि छुटे भक्ते भक्ति मुक्ति दिया ।
कभु प्रेम भक्ति ना देन राखे लुकाइया ॥१६

तथाहि श्रीमद्भागवते (५।६।१८)—

राजन् पतिर्गुरुरलं भवतां यदूनां
दैवं प्रिय: कुलपति: क्वच किङ्करो व: ।
अस्त्वेवमङ्ग ! भजतां भगवान्मुकुन्दो
मुक्तिं ददाति कर्हिचित् स्म न भक्तियोगम् ॥३

टीका—हे राजन् ! भगवान् मुकुन्द: भवतां यदूनां सम्बन्धे क्व च कुत्रापि पति: रक्षाकर्त्ता भवति क्व च अलं यथा स्यात्तथा गुरु:, क्व च दैवं, क्व च प्रिय: इष्टं, क्व च कुलपतिर्भवति, वो युष्माकं सम्बन्धे क्वचित सारथ्यादिकर्म्मणि किङ्करो भवति । हे अङ्ग ! वो युष्माकं सम्बन्धे भगवानेवास्ति, भजतां जनानां मुक्तिं ददाति, कर्हिचित् स्म न भक्तियोगं ददाति । एतावता प्रेमसम्बन्धं विना प्रेमभक्तिं न ददातीत्यर्थ: ॥३॥

शुकदेव परीक्षित् को कहे थे—हे राजन् ! भगवान् मुकुन्द--किसी किसी समय आप सबके एवं यदु गण के प्रति--पालनकारि गुरु--उपदेष्टा, देव--उपास्य, प्रिय, कुलपति एवं सारथी प्रभृति कार्य्य में किङ्कर स्वरूप हुये हैं। हे अङ्ग ! भगवान् आप सब के सम्बन्ध में उस प्रकार होते हैं, एवं जो लोक उनका भजन करते हैं, उन सब को मुक्ति प्रदान करते हैं, किन्तु आप कभी किसी व्यक्ति को भक्ति योग प्रदान नहीं करते हैं ॥३॥

हेन प्रेम श्रीचैतन्य दिल यथा तथा ।
जगाइ माधाइ पर्य्यन्त अन्येर का कथा १७
स्वतन्त्र ईश्वर प्रेम निगूढ़ भाण्डार ।
विलाइल यारे तारे ना कैल विचार ॥१८
अद्यापिह देख चैतन्य नाम येइ लय ।
कृष्णप्रेमे पुलकाश्रु विह्वल से हय ॥१६

नित्यानन्द बलिते हय कृष्ण प्रेमोदय ।
आउलाय सर्व्व अङ्ग अश्रु गङ्गा वय: ॥२०
कृष्णनाम करे अपराधेर विचार ।
कृष्ण बलिते अपराधीर ना हय विकार ॥२१

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।३।२४)—

तदश्मसारं हृदयं बतेदं
यदगृह्यमाणैर्हरिनामधेयै: ।
न विक्रियेताथ यदा विकारो
नेत्रे जलं गात्ररुहेषु हर्ष: ॥४॥

टीका—यत् हृदयं गृह्यमाणैर्हरिनामधेयै: उच्यमानैर्हरिनामभिर्न विक्रियेत, तदिदं हृदयं अश्मसारं पाषाणमयं । विकारो निरूप्यते ।—नेत्रे जलं, गात्ररुहेषु रोमसु हर्ष: उद्गम: ॥४॥

श्रीशौनक सूत को कहे थे—हे सूत ! श्रीहरि नाम उच्चारण से भी जिस हृदय में विकार उत्पन्न नहीं होता है, एवं विकार होने पर भी नेत्र में अश्रु एवं शरीर में रोमाञ्च उद्गत नहीं होता है, उस हृदय को पत्थर तुल्य कठिन जानना होगा ॥४॥

एक कृष्ण-नाम करे सर्व्व पाप नाश ।
प्रेमेर कारण भक्ति करेन प्रकाश ॥२२
प्रेमेर उदये हय प्रेमेर विकार ।
स्वेद कम्प पुलकादि गद्गदाश्रुधार ॥२३
अनायासे भव क्षय कृष्णेर सेवन ।
एक कृष्ण नामे फल पाइ एत धन ॥२४
हेन कृष्ण नाम यदि लय बहुवार ।
तबु यदि प्रेम नहे, नहे अश्रुधार ॥२५
तबे जानि अपराध ताहाते प्रचुर।
कृष्णनाम वीज ताहा ना हय अङ्कुर ॥२६
चैतन्य नित्यानन्दे नाहि ए सब विचार ।
नाम लैले प्रेम देन वहे अश्रुधार ॥२७

स्वतन्त्र ईश्वर प्रभु अत्यन्त उदार।
ताँरे ना भजिले कभु ना हय निस्तार ॥२८
अरे मूढ़ लोक, शुन चैतन्यमङ्गल।
चैतन्य-महिमा याते जानिवे सकल ॥२९
कृष्णलीला भागवते कहे वेदव्यास।
चैतन्यलीलाते व्यास वृन्दावन दास ॥३०
वृन्दावन--दास कैल चैतन्यमङ्गल।
याहार श्रवणे नाशे सर्व्व अमङ्गल ॥३१
चैतन्य निताइर याते जानिये महिमा।
याते जानि कृष्णभक्ति सिद्धान्तेर सीमा ॥३२
भागवते यत भक्ति सिद्धान्तेर सार।
लिखियाछे इहा आनि करिया उद्धार ॥३३
चैतन्यमङ्गल शुने यदि पाषण्डी यवन।
सेहो महा वैष्णव हय ततक्षण ॥३४
मनुष्य रचिते नारे ऐछे ग्रन्थ धन्य।
वृन्दावनदास मुखे वक्ता श्रीचैतन्य ॥३५
वृन्दावन--दास पदे कोटि नमस्कार।
ऐछे ग्रन्थ करि येहों तारिल संसार ॥३६
नारायणी चैतन्येर उच्छिष्ट--भाजन।
ताँर गर्भे जन्मिला श्रीदास-वृन्दावन ॥३७
ताँर कि अद्‌भुत चैतन्य चरित वर्णन।
याहार श्रवणे हैल शुद्ध त्रिभुवन ॥३८
अतएव भज लोक चैतन्य नित्यानन्द।
खण्डिवे संसार दुःख पावे प्रेमानन्द ॥३९
वृन्दावन-दास कैल चैतन्यमङ्गल।
ताहाते चैतन्य लीला वर्णिल सकल ॥४०
सूत्र करि सब लीला करिल ग्रन्थन।
पाछे विस्तारिया ताहा कैल विवरण ॥४१
चैतन्यचन्द्रेर लीला अनन्त अपार।
वर्णिते वर्णिते ग्रन्थ हइल विस्तार ॥४२
विस्तार देखिया किछु सङ्कोच हैल मन।
सूत्रधृत कोन लीला ना कैल वर्णन ॥४३
नित्यानन्द लीलाय बड़ हइल आवेश।
चैतन्येर शेष लीला रहिल अवशेष ॥४४
सेइ सब लीलार शुनिते विवरण।
वृन्दावनवासी भक्तेर उतकण्ठित मन ॥४५
वृन्दावन कल्पद्रुम सुवर्ण सदन।
महायोगपीठ ताहा रत्न सिंहासन ॥४६
ताते वसि आछे साक्षात् व्रजेन्द्रनन्दन।
श्रीगोविन्ददेव नाम साक्षात् मदन ॥४७
राजसेवा हय ताहा विचित्र प्रकार।
दिव्य सामग्री दिव्य वसन अलङ्कार ॥४८
सहस्र सेवक सेवा करे अनुक्षण।
सहस्र वदने सेवा ना हय वर्णन ॥४९
सेवार अध्यक्ष श्रीपण्डित हरिदास।
याँर यश गुण सर्व्व जगते प्रकाश ॥५०
सुशील सहिष्णु शान्त वदान्य गम्भीर।
मधुर वचन मधुर चेष्टा अति धीर ॥५१
सबार सम्मानकर्त्ता करे सबार हित।
कौटिल्य मातसर्य्य हिंसा ना जाने याँर चित ॥५२
कृष्णेर ये साधारण सद्‌गुण पञ्चाश।
सेइ सब इहार शरीरे प्रकाश ॥५३

तथाहि श्रीमद्भागवते (५।१८।१२)—

यस्यास्ति भक्तिर्भगवत्यकिञ्चना
सर्व्वैर्गुणैस्तत्र समासते सुराः।

हरावभक्तस्य कुतो महद्गुणा
मनोरथेनासति धावतो बहिः ॥५॥

टीका – यस्य जनकस्य भगवति श्रीकृष्णे अकिञ्चना अनन्या हेतुशून्या भक्तिरस्ति, तत्र जने सर्व्वैः गुणैः सह सुरा गुणाधिष्ठातृदेवाः समासते तिष्ठन्ति। हरौ श्रीकृष्णे मनोरथे नासति बहिः संसारे धावतोऽभक्तस्य कुतः कस्मात् महद्गुणा भवन्ति ?॥५

भगवान् में जिसकी अकिञ्चना भक्ति हुई है, अर्थात् अनिमित्ता भक्ति हुई है, यावतीय गुणों के सहित तत्तद् गुणाधिष्ठात्री देवगण उस व्यक्ति में सर्वदा निवास करते हैं, किन्तु श्रीहरि में जिस की भक्ति नहीं हुई है, सांसारिक विषय में सर्वदाचित्त धावित हैं, अर्थात् निरन्तर गृहादि में आसक्त है उस में वैराग्यादि गुणोत्पन्न कैसे होगा ॥५॥

पण्डित गोँसाञिर शिष्य अनन्त आचार्य्य।
कृष्णप्रेममय तनु उदार महा आर्य्य ॥५४
ताँहार अनन्त गुण के करु प्रकाश।
ताँर प्रिय शिष्य इहोँ पण्डित हरिदास ॥५५
चैतन्य नित्यानन्दे ताँर परम विश्वास।
चैतन्यचरिते ताँर परम उल्लास ॥५६
वैष्णवेर गुणग्राही नाहि देखे दोष।
कायमनोबाक्ये करे वैष्णव सन्तोष ॥५७
निरन्तर तिँहो शुनेन चैतन्यमङ्गल।
ताँहार प्रसादे शुने वैष्णव सकल ॥५८
कथाय सभा उज्ज्वल करेन ये पूर्णचन्द्र।
निज गुणामृते बाड़ाय वैष्णव आनन्द ॥५९
तिँहो बड़ कृपा करि आज्ञा कैल मोरे।
गौराङ्गेर शेषलीला वर्णिवार तरे ॥६०
काशीश्वर गोँसाञिर गोविन्द गोँसाञि।
गोविन्देर प्रियसेवक ताँर सम नाञि ॥६१
यादवाचार्य्य गोँसाञि श्रीरूपेर सङ्गी।
चैतन्य-चरिते तिँहो अति बड़ रङ्गी ॥६२
पण्डित गोँसाञिर शिष्य भूगर्भ गोँसाञि।
चैतन्य-कथा विना मुखे आर कथा नाञि ॥६३
ताँर शिष्य गोविन्दपूजक चैतन्यदास।
मुकुन्दानन्द चक्रवर्त्ती प्रेमी कृष्णदास ॥६४
आर यत वृन्दावनवासी भक्तगण।
शेष लीला शुनिते सबार हैल मन ॥६५
मोरे आज्ञा दिल सबे करुणा करिया।
ताँ सबार बोले लिखि निर्लज्ज हइया ॥६६
वैष्णवेर आज्ञा पाञा चिन्तित अन्तरे।
मदनगोपाले गेलाङ आज्ञा मागिवारे ॥६७
दर्शन करिया कैनु चरण वन्दन।
गोँसाञिदास पूजारि करेन चरण सेवन ॥६८
प्रभुर चरणे यबे आज्ञा मागिल।
प्रभुकण्ठ हैते माला खसिया पड़िल ॥६९
सकल वैष्णबगण हरिध्वनि दिल।
गोँसाञिदास आनि माला मोर गले दिल ॥७०
आज्ञामाला पाञा मोर हइल आनन्द।
ताँहाइ करिनु तबे ग्रन्थेर आरम्भ ॥७१
एइ ग्रन्थ लेखाय मोरे मदनमोहन।
आमार लिखन येन शुकेर पठन ॥७२
सेइ लिखि मदनगोपाल ये लिखाय।
काष्ठेर पुतलि येन कुहके नाचाय ॥७३
कुलाधिदेवता मोर मदनमोहन।
याँर सेवक रघुनाथ रूपसनातन ॥७४
वृन्दावन दासेर पादपद्म करि ध्यान।
ताँर आज्ञा लञा लिखि याहाते कल्याण ७५

चैतन्यलीलार व्यास वृन्दावन दास।
ताँर कृपा विना अन्ये ना हय प्रकाश ॥७६
मूर्ख नीच क्षुद्र मुञि विषय लालस।
वैष्णव आज्ञा बले करि एतेक सारस ॥७७
श्रीरूप रघुनाथ चरण एइ बल।
याँर स्मृते सिद्धि हय बाञ्छित सकल ॥७८
श्रीरूप सनातन पदे यार आश।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥७९

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे
ग्रन्थकरणे वैष्णवाज्ञारूपकथनं नाम
अष्टमः परिच्छेदः ॥८॥



नवम परिच्छेद

तं श्रीमत्कृष्णचैतन्यदेवं वन्दे जगद्गुरुम्।
यस्यानुकम्पयाश्वापि महाब्धिं सन्तरेत् सुखम्॥१

टीका—तं श्रीमच्चैतन्यदेवं अहं वन्दे। किम्भूतं? जगद्गुरुं। यस्य चैतन्यस्य अनुकम्पया कृपया श्वापि कुक्कुरोपि महाब्धिं महोदधिं सुखं सुखेन सन्तरेत् पारं गच्छेत् ॥१॥

जिनकी अनुकम्पा से कुकुर भी सुख पूर्वक महासमुद्र पार करने में सक्षम होता है, मैं उन जगद् गुरु श्रीमत्कृष्णचैतन्य देवको वन्दन करता हूँ ॥१॥

जय जय श्रीकृष्णचैतन्य गौरचन्द्र।
जयाद्वैतचन्द्र जय जय नित्यानन्द ॥१
जय जय श्रीवासादि गौर-भक्तगण।
सर्व्वाभीष्ट पूर्त्ति हय याँहार स्मरण
श्रीरूप सनातन भट्ट रघुनाथ।
श्रीजीव गोपाल भट्ट दास रघुनाथ
ए सब प्रसादे लिखि चैतन्यलीला गुण
जानि वा ना जानि करि आपन शोधन

मालाकारः स्वयं कृष्णप्रेमामरतरुः स्वयम्।
दाता भोक्ता तत्फलानां यस्तं चैतन्यमाश्रये

टीका—कृष्णः स्वयं मालाकारः, प्रेम अमरतरुः कल्पवृक्षः, तत्फलानां तस्य तरोः फ दाता भोक्ता च यश्चैतन्यस्तमहं आश्रये ॥२॥

श्रीकृष्ण स्वयं मालाकार हैं, प्रेम स्वयं वृक्ष है, जो श्रीचैतन्य देव उस वृक्ष फलके दाता भोक्ता है, मैं उन का आश्रय ग्रहण करता हूँ।

प्रभु कहे आमि विश्वम्भर नाम धरि।
नाम सार्थक हय यदि प्रेमे विश्वम्भरि
एत चिन्ति लैल प्रभु मालाकार धर्म्म।
नवद्वीपे आरम्भिल फलोद्यान कर्म्म
श्रीचैतन्य मालाकार पृथिवीते आनि।
भक्तिकल्पवृक्ष रुइल सिञ्चि इच्छापानि
जय श्रीमाधवपुरी कृष्णप्रेमपूर।
भक्ति-कल्पतरुर तिँहो प्रथम अङ्कुर
श्रीईश्वरपुरी रूपे अङ्कुर पुष्ट हैल।
आपने चैतन्यमाली स्कन्ध उपजिल
निजाचिन्त्यशक्त्येच माली हैया स्कन्ध ह
सकल शाखार सेइ स्कन्धमूलाश्रय।
परमानन्दपुरी आर केशव भारती।
ब्रह्मानन्द पुरी आर ब्रह्मानन्द भारती।
विष्णुपुरी केशवपुरी पुरी कृष्णानन्द।

श्रीनृसिंहतीर्थ आर पुरी सुखानन्द ॥१२
एइ सब मूल निकसिल वृक्षमूले।
एइ नव मूले वृक्ष करिल निश्चले ॥१३
मध्यमूल परमानन्दपुरी महाधीर।
अष्टदिके अष्ट मूल वृक्ष कैल स्थिर ॥१४
स्कन्धेर उपरे बहु शाखा उपजिल।
उपरि उपरि शाखा असंख्य हइल ॥१५
विश विश शाखा करि एकेक मण्डल।
महा महा शाखा छाइल ब्रह्माण्ड सकल ॥१६
एकैक शाखाते उपशाखा शत शत।
यत उपजिल ताहा के गणिवे कत ॥१७
मुख्य मुख्य शाखागणेर नाम गणन।
आगेते करिव शुन वृक्षेर वर्णन ॥१८
वृक्षेर उपरे शाखा हैल दुइ स्कन्ध।
एक अद्वैत नाम आर नित्यानन्द ॥१९
सेइ दुइ स्कन्धे बहु शाखा उपजिल।
तार उपशाखागणे जगत् छाइल ॥२०
बड़ शाखा उपशाखा तार उपशाखा।
यत उपजिल तार के करिवे लेखा ॥२१
शिष्य प्रशिष्य तार उपशिष्यगण।
जगत व्यापिल तार नाहिक गणन ॥२२
उड़ुम्बर वृक्ष येन फले सर्व्व अङ्गे।
एइ मत भक्तिवृक्षे सर्व्वत्र फल लागे ॥२३
मूल स्कन्धेर शाखा आर उपशाखागणे।
लागिल ये प्रेमफल अमृतके जिने ॥२४
पाकिल ये प्रेमफल अमृत मधुर।
विलाय चैतन्यमाली नाहि लय मूल ॥२५
त्रिजगते यत आछे धन रत्न मणि।
एक फलेर मूल्य करि ताहा नाहि गणि ॥२६
मागे वा ना मागे केह पात्र वा अपात्र।
इहार विचार नाहि जाने दिव मात्र ॥२७
अञ्जलि अञ्जलि भरि फेले चतुर्द्दिशे।
दरिद्रे कुड़ाये खाया मालाकार हाँसे ॥२८
मालाकार कहे शुन वृक्ष परिवार।
मूलशाख उपशाखा यतेक प्रकार ॥२९
अलौकिक वृक्ष करे सर्व्वेन्द्रिय कर्म्म।
स्थावर हइया धरे जङ्गमेर धर्म्म ॥३०
ए वृक्षेर अङ्ग तुमि सब सचेतन।
बाड़िया व्यापिले सबे सकल भुवन ॥३१
एक मालाकार आमि काँहा काँहा याव।
एकला वा कत फल पाड़िया विलाव ॥३२
एकला उठाञा दिते हय परिश्रम।
केह पाय केह ना पाय रहे एइ भ्रम ॥३३
अतएव आमि आज्ञा दिल सबाकारे।
याहा ताहा प्रेमफल देह यारे तारे ॥३४
एकला वा आमि माली कत फल खाव।
ना दिया वा एइ फल कि आर करिव ॥३५
आत्म इच्छामृते वृक्ष सिञ्चि निरन्तर।
ताहाते असंख्य फल वृक्षेर उपर ॥३६
अतएव सबे फल देह यारे तारे।
खाइया हउक लोक अजर अमरे ॥३७
जगत् भरिया आमार हवे पुण्य ख्याति।
सुखी हये लोक मोर गाइवे कीर्त्ति ॥३८
भारत भूमिते हैल मनुष्य जन्म यार।
जन्म सार्थक करे करि पर उपकार ॥३९

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२२।३५)—

एतावज्जन्मसाफल्यं देहिनामिह देहिषु ।
प्राणैरर्थैर्धिया वाचा श्रेय आचरणं सदा ॥३॥

टीका—इह देहिनां यो जनः प्राणैरर्थैर्धिया वाचा यत् श्रेयः शुभमेव सदा आचरेत्,तस्य एतावत् कर्म्म जन्मनः साफल्यं ॥३॥

इस जगत् में जो व्यक्ति प्राण, अर्थ,बुद्धि, एवं वाणी के द्वारा प्राणिमात्र के प्रति सर्वदा शुभ आचरण करता है, उसका जन्म ही-सफल है ॥३॥

तथाहि श्रीविष्णुपुराणे (३।१२।४२)—

प्राणिनामुपकाराय यदेवेह परत्र च ।
कर्म्मणा मनसा वाचा तदेव मतिमान् भजेत् ॥४॥

टीका—इह जन्मनि मतिमान् बुद्धिमान् जनः कर्म्मणा मनसा वाचा प्राणिनामुपकाराय यद्भजेत्, तदेव तस्य परत्र परजन्मनि भवत्येव ॥४॥

इस जन्म में बुद्धिमान् जो व्यक्ति कर्म, मनः एवं वाणी के द्वारा प्राणिमात्र के प्रति हिताचरण करता है, परलोक में वही सुफल प्रद होता है ॥४॥

माली मनुष्य आमार नाहि राज्य धन ।
फल फुल दिया करि पुण्य उपार्ज्जन ॥४०
माली हैया वृक्ष हैलाम एइ इच्छाते ।
सर्व्व प्राणीर उपकार हय वृक्ष हैते ॥४१

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२३।३३)—

अहो एषां वरं जन्म सर्व्व प्राण्युपजीविनाम् ।
सुजनस्येव येषां वै विमुखा यान्ति नार्थिनः ॥५॥

टीका—अहो ! एषां वृन्दावनतरुलतादीनां जन्म वरं श्रेष्ठं ! किम्भूतं ?—सर्व्व प्राण्युपजीवनं सर्व्वप्राणिनां जीविकाहेतुः । अर्थिनः सुजनस्येव येषां येभ्यः वै निश्चितं विमुखा न यान्ति ॥५॥

श्रीमद् भागवत में उक्त है—

अहो ! ये सब वृन्दावनीय तरुलता वृन्द का जन्म ही श्रेष्ठ है, कारण—ये सब समस्त प्राणियों के जीवातु हैं, कृपालु व्यक्तिके निकट से प्रार्थी के इन सब के निकट से भी प्रार्थी प्राणीगण विमुख होते हैं ॥५॥

एइ आज्ञा कैल यदि चैतन्य मालाकार ।
परमानन्द पाइल तवे वृक्ष परिवार ।
येइ याहा ताहा दान करे प्रेमफल ।
प्रेम फलास्वादे सुखे व्यापिल सकले ।
महामादक प्रेमफल पेट भरि खाय ।
मातिल सकल लोक हासे नाचे गाय ।
केह गड़ागड़ि याय केहत हुङ्कार ।
देखि आनन्दित हैञा हासे मालाकार ।
एइ मालाकार खाय एइ प्रेमफल ।
निरवधि माति रहे विवश विह्वल ।
सर्व्वलोक मत्त कैल आपन समान ।
प्रेमे मत्त लोक विना ना देखिये आन ॥
ये ये पूर्व्वे निन्दा कैल बलि मातोयाल ।
सेहो फल खाय नाचे बले भाल भाल ॥
एइ त कहिल प्रेमफल विवरण ।
एबे शुन फलदाता ये ये शाखागण ॥
श्रीरूप रघुनाथ पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे भक्तिकल्पवृक्षवर्णनं नाम नवमः परिच्छेदः ॥६॥

—**—





दशम परिच्छेदः



तथाहि ग्रन्थकारस्य—

श्रीचैतन्यपदाम्भोजमधुपेभ्यो नमो नमः ।
कथञ्चिदाश्रयाद् येषां श्वापि तद्गन्धभाग्भवेत् ।१

टीका—श्रीचैतन्यचरणाम्भोजमधुपेभ्यः चैतन्य-पादपद्मभक्तेभ्यः नमो नमः । येषां भक्तानां कथञ्चित् प्रकारेण आश्रयात् आश्रयेण श्वापि तद् गन्धभाक् भवेत् ।।१।।

श्रीचैतन्य पदाम्भोज मधुप को मैं पुनः पुनः प्रणाम करता हूँ जिन भक्त वृन्दके आश्रयसे कुकुर भी उस पद्म गन्ध का आघ्राण ग्रहण कर सकता है ।।१।।

जय जय श्रीकृष्णचैतन्य नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ।।१।।
एइ मालीर एइ वृक्षेर अकथ्य कथन ।
एवे शुन मुख्यशाखार नाम विवरण ।।२।।
चैतन्य गोँसाञिर यत पारिषदचय ।
लघु गुरु भाव तार ना हय निश्चय ।।३।।
ये ये महान्त सबार करिव गणन ।
केह ना करिते पारे ज्येष्ठ लघुक्रम ।।४।।
अतएव ता सबारे करि नमस्कार ।
नाम मात्र करि दोष ना लबे आमार ।।५

वन्दे श्रीकृष्णचैतन्यप्रेमामरतरोः प्रियान् ।
शाखारूपान् भक्तगणान् कृष्णप्रेमफल प्रदान् २।

टीका—श्रीकृष्णचैतन्यस्य प्रेमामरतरोः प्रेमकल्प वृक्षस्य प्रियान् शाखारूपान् भक्तगणान् तान् कृष्ण प्रेमफलप्रदान् अहं वन्दे ।।२।।

श्रीकृष्ण चैतन्य रूप प्रेम कल्प वृक्ष के प्रिय शाखारूप एवं कृष्ण प्रेम फल दाता भक्त वृन्द को मैं प्रणाम करता हूँ ।।२।।

श्रीवास पण्डित आर श्रीराम पण्डित ।
दुइ भाइ दुइ शाखा जगते विदित ।।६
श्रीपति श्रीनिधि तार दुइ सहोदर ।
चारि भाइर दास दासी गृह परिकर ।।७
दुइ शाखार उपशाखाय ताँ सबार गणन ।
यार गृहे महाप्रभुर सदा सङ्कीर्त्तन ।।८
सवंशे करे चारि भाइ चैतन्येर सेवा ।
विना गौरचन्द्र नाहि जाने देवी देवा ।।९
श्रीआचार्य्य रत्न नाम एक बड़ शाखा ।
ताँर परिकर शिष्य ताँर उपशाखा ।।१०
आचार्य्यरत्नेर नाम श्रीचन्द्रशेखर ।
याँर घरे देवी भावे नाचिला ईश्वर ।।११
पुण्डरीक विद्यानिधि बड़ शाखा जानि ।
याँर नाम लैया प्रभु कान्दिला आपनि ।।१२
बड़ शाखा गदाधर पण्डित गोँसाञि ।
तिँहो लक्ष्मीरूपा ताँर सम अन्य नाञि ।।१३
ताँर शिष्य उपशिष्य सब उपशाखा ।
एइ मत सब शाखा उपशाखाय लेखा ।।१४
वक्रेश्वर पण्डित प्रभुर बड़ प्रिय भृत्य ।
एक भावे चव्विश प्रहर याँर नृत्य ।।१५।।
आपने महाप्रभु गाय याँर नृत्यकाले ।
प्रभुर चरण धरि वक्रेश्वर बले ।।१६।।

दश सहस्र गन्धर्व्व मोरे देह चन्द्रमुख ।
ताँरा गाय मुञि नाचो तबे मोर सुख ॥१७
प्रभु बले तुमि मोर पक्ष एक शाखा ।
आकाशे उड़िताम यदि पाङ आर पाखा ॥१८
पण्डित जगदानन्द प्रभुर प्राणरूप ।
लोके ख्यात येँहो सत्यभामार स्वरूप ॥१९
प्रीते प्रभुर करिते चाहे लालन पालन ।
वैराग्य लोक भये प्रभु ना माने कखन ॥२०
दुइजने खटमटि लागये कोन्दल ।
ताँर प्रीतेर कथा आगे कहिब सकल ॥२१
राघव पण्डित प्रभुर आद्य अनुचर ।
ताँर एक शाखा आर मकरध्वज कर ॥२२
ताँर भगिनी दमयन्ती प्रभुर दासी ।
प्रभुर भोगेर सामग्री करे बारमासी ॥२३
से सब सामग्री यत झालिते भरिया ।
राघव लइया याय गुपति करिया ॥२४
बार मास प्रभु ताहा करेण अङ्गीकार ।
राघवेर झालि बलि प्रसिद्ध याहार ॥२५
से सब सामग्री आगे करिब विस्तार ।
याहार श्रवणे भक्तेर बहे अश्रुधार ॥२६
प्रभुर अत्यन्त प्रिय पण्डित गङ्गादास ।
याहार स्मरणे हय भवबन्ध नाश ॥२७
चैतन्य पार्षद श्रीआचार्य्य पुरन्दर ।
पिता करि याँरे कहे गौराङ्ग सुन्दर ॥२८
दामोदर पण्डित शाखा प्रेमेते प्रचण्ड ।
प्रभुर उपरे यिँहो करे वाक्यदण्ड ॥२९
दण्ड कथा कहिव आगे विस्तार करिया ।
दण्डे तुष्ट प्रभु ताँरे पाठाल नदीया ॥३०
ताहार अनुज शाखा शङ्कर पण्डित ।
प्रभुर पादोपधान याँर नाम विदित ॥३१
सदाशिव पण्डित याँर प्रभु पदे आश ।
प्रथमेइ नित्यानन्देर याँर घरे वास ॥३२
नृसिंह उपासक प्रद्युम्न ब्रह्मचारी ।
प्रभु ताँर नाम कैल नृसिंहानन्द करी ॥३३
नारायण पण्डित एक बड़इ उदार ।
चैतन्य--चरण विनु नाहि जाने आर ॥३४
श्रीमान्पण्डित शाखा प्रभुर निज भृत्य ।
देउटी धरेन यबे प्रभु करेन नृत्य ॥३५
शुक्लाम्बर ब्रह्मचारी बड़ भाग्यवान् ।
यार अन्न मागि काड़ि खाइल भगवान् ॥३६
नन्दन आचार्य्य शाखा जगते विदित ।
लुकाइया दुइ प्रभु याँर घरे स्थित ॥३७
श्रीमुकुन्द दत्त शाखा प्रभुर समाध्यायी ।
याँहार कीर्त्तने नाचे चैतन्य गोँसाञि ॥३८
वासुदेव दत्त प्रभुर भृत्य महाशय ।
सहस्र मुखे यार गुण कहिले ना हय ॥३९
जगते यतेक जीव तार पाप लञा ।
नरक भुञ्जिते चाहे जीव छोड़ाइया ॥४०
हरिदास ठाकुर शाखार अद्भुत चरित ।
तिन लक्ष नाम दिन लयि अपतित ॥४१
ताँहार श्री अनन्त गुण कहि दिङ्मात्र ।
आचार्य्य गोँसाञियाँरे भुञ्जाय श्राद्ध पात्र ॥४२
प्रह्लाद समान ताँर गुणेर तरङ्ग ।
यवन ताड़ने याँर नहिल भ्रूभङ्ग ॥४३
तिँहो सिद्धि पाइले ताँर देह लैया कोले ।
नाचिला चैतन्य प्रभु महाकुतूहले ॥४४

ताँर लीला वर्णियाछेन वृन्दावन दास ।
येबा अवशिष्ट आगे करिव प्रकाश ॥४५
ताँर उपशाखा आर कुलीन ग्रामी जन ।
सत्यराज आदि ताँर कृपार भाजन ॥४६
श्रीमुरारीगुप्त गुप्तप्रेमेर भाण्डार ।
प्रभुर हृदय द्रवे शुनि दैन्य याँर ॥४७
प्रतिग्रह ना करे ना लय कारो धन ।
आत्मवृत्ति करि करे कुटुम्ब भरण ॥४८
चिकित्सा करेन यार लइया सदय ।
देहरोग भवरोग दुइ तार क्षय ॥४९
श्रीमान् सेन प्रभुर भकत प्रधान ।
चैतन्यचरण विना नाहि जाने आन ॥५०
श्रीगदाधर दासेर शाखा सर्व्वोपरि ।
काजिगणेर मुखे ये बोलाइल हरि ॥५१
शिवानन्द सेन प्रभुर भृत्य अन्तरङ्ग ।
प्रभु स्थाने याइते सवे लय याँर सङ्ग ॥५२
प्रति वर्ष प्रभुर गण सङ्गेते लइया ।
नीलाचल चलेन पथे पालन करिया ॥५३
भक्ते कृपा करेन प्रभु ए तिन स्वरूपे ।
साक्षाते आवेश आर आविर्भाव रूपे ॥५४
साक्षात् सकल भक्त देखे निर्व्विशेष ।
नकुल ब्रह्मचारी देहे प्रभुर आवेश ॥५५
प्रद्युम्न ब्रह्मचारी याँर आगे नाम छिल ।
नृसिंहनान्द नाम प्रभु शेषेते राखिल ॥५६
ताँहा हैते हइल प्रभुर आविर्भाव ।
ऐछे अलौकिक प्रभुर अनेक स्वभाव ॥५७
आस्वादिल एइ सब रस शिवानन्द ।
विस्तारि कहिव आगे ए सब आनन्द ॥५८

शिवानन्देर उपशाखा तार परिकर ।
पुत्र भृत्य आदि चैतन्येर अनुचर ॥५९
चैतन्यदास रामदास आर कर्णपुर ।
तिन पुत्र शिवानन्देर प्रभुर भक्तशूर ॥६०
वल्लभसेन नाम आर सेन श्रीकान्त ।
शिवानन्द सम्बन्धे प्रभुर भक्त एकान्त ॥६१
प्रभुर प्रिय गोविन्दानन्द महाभागवत ।
प्रभुर कीर्त्तनीया आदि श्रीगोविन्द दत्त ॥६२
श्रीविजयदास नाम प्रभुर आँखरिया ।
प्रभुके दियाछेन पुथि अनेक लिखिया ॥६३
रत्नबाहु बलि प्रभु थुइल ताँर नाम ।
अकिञ्चन प्रभुर प्रिय कृष्णदास नाम ॥६४
खोलावेचा श्रीधर प्रभुर प्रियदास ।
याँर सने प्रभु करे नित्य परिहास ॥६५
प्रभु याँर नित्य लय थोड़ मोचा फल ।
याँर फुटा लोहपात्रे प्रभु पिला जल ॥६६
प्रभुर अति प्रियदास भगवान् पण्डित ।
याँर देहे कृष्ण पूर्व्वे हैला अधिष्ठित ॥६७
जगदीश पण्डित आर हिरण्य महाशय ।
याँरे कृपा कैल वाल्ये प्रभु दयामय ॥६८
सेइ दुइ घरे प्रभु एकादशी दिने ।
विष्णुर नैवेद्य मागि खाइला आपने ॥६९
प्रभुर पड़ुया दुइ पुरुषोत्तम सञ्जय ।
व्याकरणे मुख्य शिष्य दुइ महाशय ॥७०
वनमाली पण्डित हय विख्यात जगते ।
स्वर्ण मूषल हल ये देखिल प्रभुर हाते ॥७१
श्रीचैतन्य अति प्रिय बुद्धिमन्त खान ।
आजन्म आज्ञाकारी तेँहो सेवक प्रधान ॥७२

गरुड़ पण्डित लये श्रीनाममङ्गल ।
नाम बले विष याँरे ना करिल बल ॥७३
गोपीनाथ सिंह एक चैतन्येर दास ।
अक्रुर बलि प्रभु ताँरे करे परिहास ॥७४
भागवती देवानन्द, वक्रेश्वर कृपाते ।
भागवतेर भक्ति अर्थ पाइल प्रभु हैते ॥७५
खण्डवासी मुकुन्ददास श्रीरघुनन्दन ।
नरहरि दास चिरञ्जीव सुलोचन ॥७६
एइ सब महाशाखा चैतन्य कृपाधाम ।
प्रेम फुल फल करे याँहा ताहा दान ॥७७
कुलीन ग्रामेर सत्यराज रामानन्द ।
यदुनाथ पुरुषोत्तम शङ्कर विद्यानन्द ॥७८
वाणीनाथ वसु आदि यत ग्रामि-जन ।
सबे चैतन्य--भृत्य चैतन्य प्राणधन ॥७९
प्रभु कहे कुलीन ग्रामेर ये कुक्कुर ।
सेहो मोर प्रिय अन्य जन रहु दूर ॥८०
कुलीनग्रामीर भाग्य कहने ना याय ।
शूकर चराय डोम सेहो कृष्ण गाय ॥८१
अनुपम-वल्लभ श्रीरूप सनातन ।
एइ तिन शाखा वृक्षेर पश्चिमे सर्व्वोत्तम ॥८२
तार मध्ये रूप सनातन बड़ शाखा ।
अनुपम जीव राजेन्द्रादि उपशाखा ॥८३
मालीर इच्छाय शाखा बहुत बाड़िल ।
बाड़िया पश्चिम देश सकल छाइल ॥८४
आसिन्धु नदी-तीर आर हिमालय ।
वृन्दावन मथुरादि यत देश हय ॥८५
दुइ शाखार प्रेमफले सकल भासिल ।
प्रेमफलास्वादे लोक उन्मत्त हइल ॥८६
पश्चिमेर लोक सब मूढ़ अनाचार ।
ताँहा प्रचारिल दोँहे भक्ति सदाचार ॥८७
शास्त्रदृष्टे कैल लुप्त तीर्थेर उद्धार ।
वृन्दावने कैल श्रीमूर्त्ति सेवार प्रचार ॥८८
महाप्रभूर प्रियभृत्य रघुनाथ दास ।
सब छाड़ि कैल प्रभुर पदतले बास ॥८९
प्रभु ताँरे समर्पिल स्वरूपेर हाते ।
प्रभुर गुप्तसेवा कैल स्वरूपेर साते ॥९०
षोड़श वत्सर कैल अन्तरङ्ग सेवन ।
स्वरूपेर अन्तर्द्धाने आइला वृन्दावन ॥९१
वृन्दावने दुइ भाइर चरण देखिया ।
गोवर्द्धने त्यजिव देह भृगुपात करिया ॥९२
एइत निश्चय करि आइला वृन्दावन ।
आसि रूप सनातनेर कैल दरशन ॥९३
तबे दुइ भाइ ताँरे मरिते ना दिल ।
निज तृतीय भाइ करि निकटे राखिल ॥९४
महाप्रभुर लीला यत बाहिर अन्तर ।
दुइ भाइ ताँर मुखे शुने निरन्तर ॥९५
अन्नजल त्याग कैल अपर कथन ।
पल दुइ तिन माठा करेन भक्षण ॥९६
सहस्र दण्डवत् करे लये लक्ष नाम ।
दुइ सहस्र वैष्णवे नित्य परणाम ॥९७
रात्रि दिने राधाकृष्णेर मानसे सेवन ।
प्रहरेक महाप्रभुर चरित्र कथन ॥९८
तिन सन्ध्या राधाकुण्डे अपतित स्नान ।
व्रजवासी वैष्णवे करे आलिङ्गन दान ॥९९
सार्द्ध सप्तप्रहर करे भक्तिर साधने ।
चारि दण्ड निन्द्रा सेहो नहे कोनदिने ॥१००

ताँहार साधनरीति कहिते चमत्कार ।
सेइ रघुनाथदास प्रभु ये आमार ॥१०१
इहा सभार यैछे महाप्रभुर मिलन ।
आगे विस्तारिया ताहा करिब वर्णन ॥१०२
श्रीगोपाल भट्ट एक शाखा सर्व्वोत्तम ।
रूप सनातन सङ्गे याँर प्रेम आलापन ॥१०३
शङ्करारण्य आचार्य्य वृक्षेर एक शाखा ।
मुकुन्द काशीनाथ रुद्र उपशाखा लेखा ॥१०४
श्रीनाथ पण्डित प्रभुर कृपार भाजन ।
याँर कृष्णसेवा देखि वश त्रिभुवन ॥१०५
जगन्नाथ आचार्य्य प्रभुर प्रिय दास ।
प्रभुर आज्ञाते येहों कैल गङ्गावास ॥१०६
कृष्णदास वैद्य आर पण्डित शेखर ।
कविचन्द्र आर कीर्त्तनीया षष्ठीधर ॥१०७
श्रीनाथ मिश्र शुभानन्द श्रीराम ईशान ।
श्रीनिधि श्रीगोपीकान्त मिश्र-भगवान् ॥१०८
सुबुद्धि-मिश्र हृदयानन्द कमल-नयन ।
महेश पण्डित श्रीकर श्रीमधुसूदन ॥१०९
पुरुषोत्तम श्रीगालिम जगन्नाथ दास ।
श्रीचन्द्रशेखर वैद्य द्विज हरिदास ॥११०
रामदास कविचन्द्र श्रीगोपाल दास ।
भागवताचार्य्य ठाकुर सारङ्ग दास ॥१११
जगन्नाथ तीर्थ विप्र श्रीजानकीनाथ ।
गोपाल आचार्य्य आर विप्र वाणीनाथ ॥११२
गोविन्द माधव वासुदेव तिन भाइ ।
या सभार कीर्त्तने नाचे चैतन्य निताइ ॥११३
रामदास अभिराम सख्य प्रेमराशि ।
षोलसाङ्गेर काष्ठ हाते लैया कैल वाँशी ॥११४

प्रभुर आज्ञाय नित्यानन्द गौड़े चलिला ।
ताँर सङ्गे तिनजन प्रभु आज्ञाय आइला ॥११५
रामदास माधव आर वासुदेव घोष ।
प्रभु सङ्गे रहे गोविन्द पाइया सन्तोष ॥११६
भागवताचार्य्य चिरञ्जीव रघुनन्दन ।
माधवाचार्य्य कमलाकान्त श्रीयदुनन्दन ॥११७
महा कृपापात्र प्रभुर जगाइ माधाइ ।
पतितपावन गुणेर साक्षी दुइ भाइ ॥११८
गौड़देशेर भक्तेर कैल संक्षेप गणन ।
अनन्त चैतन्य भक्त ना याय कथन ॥११९
नीलाचले एइ सब भक्त प्रभु सङ्गे ।
दुइ स्थाने प्रभुर सेवा कैल बहु रङ्गे ॥१२०
केवल नीलाचले प्रभुर ये ये भक्तगण ।
संक्षेपे ता सभार किछु करिये कथन ॥१२१
नीलाचले प्रभुर सङ्गे यत भक्तगण ।
सभार अध्यक्ष प्रभुर मर्म्म दुइ जन ॥१२२
परमानन्दपुरी आर स्वरूप दामोदर ।
गदाधर जगदानन्द शङ्कर वक्रेश्वर ॥१२३
दामोदर पण्डित ठाकुर हरिदास ।
रघुनाथ वैद्य आर रघुनाथ दास ॥१२४
इत्यादिक पूर्व्व सङ्गी बड़ भक्तगण ।
नीलाचले रहि करे प्रभुर सेवन ॥१२५
आर यत भक्तगण गौड़देशवासी ।
प्रत्यब्द प्रभुरे देखे नीलाचले आसि ॥१२६
नीलाचले प्रभुर यार प्रथम मिलन ।
सेइ भक्तगणे एबे करिये गणन ॥१२७
बड़शाखा भक्त सार्व्वभौम भट्टाचार्य्य ।
ताँर स्वसापति श्रीमद्‌गोपीनाथाचार्य्य ॥१२८

काशीमिश्र प्रद्युम्नमिश्र राय भवानन्द ।
याँहार मिलने प्रभु पाइला आनन्द ॥१२९
आलिङ्गन करि ताँरे बलिल वचन ।
तुमि पाण्डु, पञ्च पाण्डव तोमार नन्दन ।१३०
रामानन्दराय पट्टनायक वाणीनाथ ।
कलानिधि सुधानिधि आर गोपीनाथ ॥१३१
एइ पञ्च पुत्र तोमार मोर प्रेमपात्र ।
रामानन्द सह मोर देह भेद मात्र ॥३१२
प्रतापरुद्र राजा आर ओड़ कृष्णानन्द ।
परमानन्द महापात्र ओड़ शिवानन्द ॥१३३
भगवान् आचार्य्य ब्रह्मानन्दाख्य भारती ।
श्रीशिखिमाहिती आर मुरारि माहिती ।१३४
माधवीदेवी शिखिमाहितीर भगिनी ।
श्रीराधार दासी मध्ये याँर नाम गणि ॥१३५
ईश्वरपुरीर शिष्य ब्रह्मचारी काशीश्वर ।
श्रीगोविन्द प्रिय नाम ताँर अनुचर ॥१३६
ताँर सिद्धिकाले दोँहे ताँर आज्ञा पाञा ।
नीलाचले प्रभु स्थाने मिलिला आसिञा ।१३७
गुरुर सम्बन्धे मान्य कैल दोँहाकारे ।
तार आज्ञा जानि सेवा दिलेन दोँहारे ॥१३८
अङ्ग सेवा गोविन्देरे दिलेन ईश्वर ।
जगन्नाथ देखिते सङ्गे आगे काशीश्वर ॥१३९
अपरश याय गोँसाञि मनुष्यगहन ।
लोक ठेलि पथ करे काशी महाबल ॥१४०
रामाइ नन्दाइ दुइ प्रभुर किङ्कर ।
गोविन्देर सङ्गे सेबा करे निरन्तर ॥१४१
वाइश जाड़ी पाणि दिने भरेन रामाइ ।
गोविन्द आज्ञाय सेबा करेन नन्दाइ ॥१४२

कृष्णदास नाम शुद्ध कुलीन ब्राह्मण ।
यारे सङ्गे लैया कैल दक्षिण गमन ॥
वलभद्राचार्य्य प्रेमभक्ति अधिकारी ।
मथुरा गमने प्रभुर येँहो ब्रह्मचारी ॥
बड़ हरिदास आर छोट हरिदास ।
दुइ कीर्त्तनिया रहे महाप्रभुर पाश ॥
रामभद्राचार्य्य आर ओड़ सिंहेश्वर ।
तपन आचार्य्य आर रघुनीलाम्बर ॥
सिङ्गाभट्ट कामाभट्ट दन्तर शिवान
गौड़ पूर्व्व भृत्य प्रभुर प्रिय कमलानन्द
श्रीअच्युतानन्द अद्वैत आचार्य्य तनय ।
नीलाचले रहे प्रभुर चरण आश्रय ॥
निर्लोम गङ्गादास आर विष्णुदास ।
इहा सबार नीलाचले प्रभु सङ्गे बास ।
वाराणसी मध्ये प्रभुर भक्त तिन जन
चन्द्रशेखर वैद्य आर मिश्र तपन ॥
रघुनाथ भट्टाचार्य्य मिश्रेर नन्दन ।
प्रभु यवे काशी आइला देखि वृन्दावन
चन्द्रशेखर घरे कैल दुइ मास बास ।
तपन मिश्रेर घरे भिक्षा दुइ मास ॥
रघुनाथ बाल्ये कैल प्रभुर सेवन ।
उच्छिष्टमार्ज्जन आर पाद सम्बाहन ॥
बड़ हैले नीलाचले गेला प्रभुर स्थाने ।
अष्टमास रहि भिक्षा देन कोन दिने ॥
तार आज्ञा पाञा वृन्दावनेते आइला ।
आसिया श्रीरूप गोँसाञिर निकटे रहिला
तार ठाञि रूप गोँसाइ शुनेन भागवत
प्रभुर कृपाय तिँहो हैला प्रेमे मत्त ॥

एइमत संख्यातीत चैतन्य-भक्तगण ।
दिङ्मात्र लिखि सम्यक् ना याय गणान ॥१५७
एकैक शाखाते लागे कोटि कोटि डाल ।
तार शिष्य उपशिष्य तार उपडाल ॥१५८
सकल भरिया आछे प्रेम फुल फले ।
भासाइला त्रिजगत कृष्णप्रेम-जले ॥१५९
एकैक शाखार शक्ति अनन्त महिमा ।
सहस्र वदने यार दिते नारे सीमा ॥१६०
संक्षेपे कहिल महाप्रभुर भक्तवृन्द ।
समग्र गणिते याहा नारेन अनन्त ॥१६१
श्रीरूप रघुनाथ पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१६२

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे
मूल-स्कन्ध-शाखा-वर्णनं नाम
दशमः परिच्छेदः ॥८॥



❀ एकादश परिच्छेद् ❀



तथाहि ग्रन्थकारस्य –

नित्यानन्दपदाम्भोजभृङ्गान् प्रेममधून्मदान् ।
नत्वाखिलान् तेषु मुख्या लिख्यन्ते कतिचिन्मया ॥१

टीका –अखिलान् सर्व्वान् नित्यानन्दपदाम्भोजभृङ्गान् नित्यानन्दपदकमलयोर्मधुपान् प्रेममधून्मदान् नत्वा तेषु सर्व्वेषु मध्येषु कतिचिन्मुख्या मया लिख्यन्ते ॥१॥

जो सब श्रीनित्यानन्द के चरण कमलके भृङ्ग स्वरूप होकर प्रेम मधुपान से उन्मत्त हैं, उन सब को प्रणाम करके उन सब के मध्य में कतिपय प्रधान प्रधान व्यक्तियों का नामोल्लेख कर रहा हूँ ॥१॥

जय जय महाप्रभु श्रीकृष्णचैतन्य ।
जयाद्वैताचार्य्य जय नित्यानन्द धन्य ॥१

तथाहि ग्रन्थकारस्य –

तस्य श्रीकृष्णचैतन्यसत्प्रेमामरशाखिनः ।
ऊर्द्ध्वस्कन्धावधूतेन्दोः शाखारूपान् गणान्नुमः ॥२

टीका –तस्य श्रीकृष्णचैतन्यसत्प्रेमामरशाखिनः श्रीकृष्णचैतन्यसत्प्रेमा एव एव अमरशाखीकल्प--वृक्षस्तस्य ऊर्द्ध्वस्कन्धावधूतेन्दोः ऊर्द्ध्वस्कन्धरूपोऽवधूतेन्दुः अवधूतचन्द्रः तस्य शाखारूपान् गणान् वयं नुमः स्तुतिं कुर्म्मः ॥२॥

श्रीकृष्ण चैतन्य रूप प्रेम कल्पतरु के ऊर्द्ध्व स्कन्ध स्वरूप अवधूतचन्द्र के शाखारूप व्यक्ति वृन्द को नमस्कार करता हूँ ॥२॥

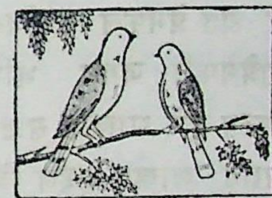
श्रीनित्यानन्द वृक्षेर स्कन्ध गुरुतर ।
ताहाते जन्मिल शाखा प्रशाखा विस्तर ॥२
मालाकारेर इच्छाजले बाड़े शाखागण ।
प्रेमफुल–फले भरि छाइल भुवन ॥३
असंख्य अनन्तगण के करु गणान ।
आपना शोधिते कहि मुख्य मुख्य जन ॥४
श्रीवीरभद्र गोँसाञि स्कन्ध सम शाखा ।
ताँर उपशाखा यत असंख्य तार लेखा ॥५
ईश्वर हइया कहाय महाभागवत ।
वेदधर्म्मातीत हैया वेदधर्म्मे रत ॥६
अन्तरे ईश्वर चेष्टा वाहिरे निर्दम्भ ।
चैतन्य भक्तिमण्डपे तिँहो मूलस्तम्भ ॥७
अद्यापि याँहार कृपा प्रभाव हइते ।
चैतन्य नित्यानन्द गाय सकल जगते ॥८

सेइ वीरभद्र गोँसाञिर लइनु शरण ।
याँहार प्रसादे हय अभीष्ट पूरण ॥९
श्रीरामदास आर गदाधर दास ।
चैतन्य गोँसाञिर भक्त रहे ताँर पाश ॥१०
नित्यानन्देर आज्ञा यबे हैल गौड़ याइते ।
महाप्रभु एइ दुइ दिला ताँर साथे ॥११
अतएव दुइ गणे दोहार गणन ।
माधव वासुदेव घोषेर एइ विवरण ॥१२
रामदास महाशाखा सख्य प्रेमराशि ।
षोलसाङ्गेर काष्ठ ये तुलिया कैल वाँशी ।१३
गदाधर दास गोपीभावे पूर्णानन्द ।
यार घरे दानलीला कैल नित्यानन्द ॥१४
श्रीमाधव घोष मुख्य कीर्त्तनीयागणे ।
नित्यानन्द प्रभु नृत्य करे याँर गाने ॥१५
वासुदेव गीते करे प्रभुर वर्णने ।
काष्ठ पाषाण द्रवे याहार श्रवणे ॥१६
मुरारी चैतन्यदासेर अलौकिक लीला ।
व्याघ्र गाले चड़ मारे सर्प सने खेला ॥१७
नित्यानन्देर गण यत सब व्रजसखा ।
शृङ्ग वेत्र गोपवेश शिरे शिखिपाखा ॥१८
रघुनाथ वैद्य उपाध्याय महाशय ।
याहार दर्शने कृष्णे प्रेमभक्ति हय ॥१९
सुन्दरानन्द नित्यानन्देर शाखा भृत्य मर्म्म ।
यार सङ्गे नित्यानन्द करे व्रजनर्म्म ॥२०
कमलाकर पिपीलाइ अलौकिक रीत ।
अलौकिक प्रेम ताँर भुवने विदित ॥२१
सूर्य्यदास सरखेल तार भाइ कृष्णदास ।
नित्यानन्दे दृढ़ विश्वास प्रेमेर निवास ॥२२

गौरीदास पण्डितेर प्रेमोद्दाम भक्ति ।
कृष्णप्रेम दिते येँहो धरे महाशक्ति ।
नित्यानन्द प्रिय श्रीपण्डित पुरन्दर ।
प्रेमार्णवमध्ये फिरे यैछन मन्दर ।
परमेश्वर दास नित्यानन्दैक शरण ।
कृष्णभक्ति पाय ताँरे ये करे स्मरण ।
जगदीश पण्डित हय जगत-पावन ।
कृष्णप्रेमामृत वर्षे यैछे वर्षाघन ।
नित्यानन्द प्रियभृत्य पण्डित धनञ्जय ।
अत्यन्त विरक्त सदा कृष्णप्रेममय ।
महेश पण्डित व्रजेर उदार गोयाल ।
ढक्कावाद्ये नृत्य करे प्रेमे मातोयाल ।
नवद्वीपे पुरुषोत्तम पण्डित महाशय ।
नित्यानन्द नामे ताँर महोन्माद हय ।
बलरामदास कृष्ण-प्रेमरसास्वादी ।
नित्यानन्द नामे हय परम उन्मादी ।
महाभागवत यदुनाथ कविचन्द्र ।
याहार हृदये नृत्य करे नित्यानन्द ।
राढ़देशे जन्म कृष्णदास द्विजवर ।
नित्यानन्द प्रभुर तिँहो परम किङ्कर ।
काला कृष्णदास बड़ वैष्णव प्रधान ।
नित्यानन्दचन्द्र विनु नाहि जाने आन ।
सदाशिव कविराज बड़ महाशय ।
श्रीपुरुषोत्तमदास ताहार तनय ।
आजन्म निमग्न नित्यानन्देर चरणे ।
निरन्तर बाल्य लीला करे कृष्णसने ।
ताँर पुत्र महाशय श्रीकानु ठाकुर ।
यार देहे रहे कृष्ण प्रेमामृत पूर ।

महाभागवत श्रेष्ठ दत्त उद्धारण ।
सर्व्वभावे सेवे नित्यानन्देर चरण ॥३७
आचार्य्य वैष्णवानन्द भक्ति अधिकारी ।
पूर्व्वे नाम छिल यार रघुनाथ पुरी ॥३८
विष्णुदास नन्दन गङ्गादास तिन भाइ ।
पूर्व्वे यार घरे छिला नित्यानन्द गोँसाञि ।३९
नित्यानन्द भृत्य परमानन्द उपाध्याय ।
श्रीजीव पण्डित नित्यानन्दगुण गाय ॥४०
परमानन्द गुप्त कृष्णभक्त महामति ।
यार घरे नित्यानन्देर सतत वसति ॥४१
नारायण कृष्णदास आर मनोहर ।
देवानन्द चारि भाइ निताइ किङ्कर ॥४२
विहारी कृष्णदास नित्यानन्दप्रभु प्राण ।
नित्यानन्द पद विनु नाहि जाने आन ॥४३
नकड़ि मुकुन्द सूर्य्य माधव श्रीधर ।
रामानन्द बसु जगन्नाथ महीधर ॥४४
श्रीमन्त गोकुल दास हरिहरानन्द ।
शिवाइ नन्दाइ अबधूत परमानन्द ॥४५
वसन्त नवनी होड़ गोपाल सनातन ।
विष्णाइ हाजरा कृष्णानन्द सुलोचन ॥४६
कंसारि-सेन रामसेन रामचन्द्र कविराज ।
गोविन्द श्रीरङ्ग कुमुद तिन कविराज ॥४७
पीताम्बर माधवाचार्य्य दास दामोदर ।
शङ्कर मुकुन्द ज्ञानदास मनोहर ॥४८
नर्त्तक गोपाल रामभद्र गौराङ्गदास ।
नृसिंह चैतन्यदास मीनकेतन रामदास ॥४९
वृन्दावन दास नारायणीर नन्दन ।
चैतन्यमङ्गल येँहो करिला रचन ॥५०
भागवते कृष्णलीला वर्णिला वेदव्यास ।
चैतन्यलीलाय व्यास वृन्दावन दास ॥५१
सर्व्व शाखाश्रेष्ठ श्रीवीरभद्र गोँसाञि ।
ताँर उपशाखा यत तार अन्त नाञि ॥५२
अनन्त नित्यानन्दगण के करु गणन ।
आत्मपवित्रता हेतु लिखिल कत जन ॥५३
सेइ सब शाखा पूर्ण पक्व प्रेमफले ।
यारे देखे तारे दिया भासाइल सकले ॥५४
अनर्गल प्रेमा सबार चेष्टा अनर्गल ।
प्रेम दिते कृष्ण दिते धरे सबे बल ॥५५
संक्षेपे कहिल एइ नित्यानन्देर गण ।
याँहार अबधि ना पाय सहस्रवदन ॥५६
श्रीरूप रघुनाथ पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥५७

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे
नित्यानन्दस्कन्धशाखावर्णनं नाम
एकादशः परिच्छेदः ॥११॥



❀ द्वादश परिच्छेद ❀

अद्वैताङ्घ्रचब्जभृङ्गांस्तान् सारासारभृतोऽखिलान् ।
हित्वासारान् सारभृतो वन्दे चैतन्यजीवनान् ॥१॥

टीका—ये अद्वैताङ्घ्रचब्जभृङ्गाश्चरण कमल-मधुपाः सारेणासारेण भृताः पुष्टाः तेषां मध्ये असारान् हित्वा अखिलान् सर्व्वान् सारभृतान् चैतन्यजीवान्

चैतन्य एव जीवनं येषां तान् अहं वन्दे ॥१॥

जो सब श्रीअद्वैत के चरण कमल के मधुकर स्वरूप हैं, एवं असार अंश को परित्याग कर सार ग्राही हुये हैं, उन सब के मध्य में श्रीचैतन्य देव ही एकमात्र जीवन स्वरूप जिन सब के हैं, उन सब भक्त वृन्द की वन्दना करता हूँ ॥१॥

जय जय महाप्रभु श्रीकृष्णचैतन्य ।
जय जय नित्यानन्द जयाद्वैत धन्य ॥१

श्रीचैतन्यामरतरोर्द्वितीयस्कन्धरूपिण: ।
श्रीमदद्वैतचन्द्रस्य शाखारूपान् गणान्नुम: ॥२

टीका—श्रीचैतन्यस्यामरतरो: कल्पवृक्षस्य द्वितीयस्कन्धरूपिण: श्रीमदद्वैताचार्य्यस्य शाखारूपान् भक्तगणान् वयं नुम: स्तुतिं कुर्म्म: ॥२॥

श्रीचैतन्य रूप अमर तरु के स्कन्धस्वरूप श्रीमदद्वैताचार्य्य के शाखा स्वरूप भक्त वृन्द का स्तव करता हूँ ॥२॥

वृक्षेर द्वितीय स्कन्ध आचार्य गोँसाञि ।
ताँर यत शाखा हैल तार लेखा नाञि ॥२
चैतन्य मालीर कृपाजलेर सेचने ।
सेइ जले पुष्ट स्कन्ध बाड़े दिने दिने ॥३
सेइ स्कन्धे यत प्रेमफल उपजिल ।
सेइ कृष्णप्रेमफले जगत भरिल ॥४
सेइ जले स्कन्ध करे शाखाते सञ्चार ।
फले फुले वाड़ि शाखा हइल विस्तार ॥५
प्रथमेते एक मत आचार्य्येर गण ।
पाछे दुइ मत हैल दैवेर कारण ॥६
केहत आचार्य्य आज्ञाय केहत स्वतन्त्र ।
स्वमत कल्पना करे दैव-परतन्त्र ॥७
आचार्य्येर मत येइ सेइ मत सार ।
ताँर आज्ञा लङ्घि चले सेइत असार ॥८
असारेर नामे इहा नाहि प्रयोजन ।
भेद जानिवारे करि एकत्र गणन ॥९
धान्यराशि मापि यैछे पातना सहिते ।
पाछे पातना उड़ाञा संस्कार करिते ॥१०
अच्युतानन्द बड़ शाखा आचार्य्यनन्दन ।
आजन्म सेविला तिँहो चैतन्यचरण ॥११
चैतन्य गोँसाञिर गुरु केशवभारती ।
एइ पितार वाक्य शुनि दुःख पाइल अति ॥१२
जगद्गुरु तुमि कर ऐछे उपदेश ।
तोमार एइ उपदेशे नष्ट हैल देश ॥१३
चौद्दभुवनेर गुरु चैतन्य गोँसाञि ।
ताँर गुरु अन्य एइ कोन शास्त्रे नाञि ॥१४
पञ्चवर्षेर बालक कहे सिद्धान्तेर सार ।
शुनिया आचार्य्य पाइला सन्तोष अपार ॥१५
कृष्णमिश्र नाम आर आचार्य्यतनय ।
चैतन्यगोँसाञि वैसे याँहार हृदय ॥१६
श्रीगोपाल नाम आर आचार्य्येर सुत ।
ताँहार चरित्र शुन अत्यन्त अद्भुत ॥१७
गुण्डिचा मन्दिरे महाप्रभुर सम्मुखे ।
कीर्त्तने नृत्य करे गोपाल बड़ प्रेमसुखे ॥१८
नाना भावोद्गम देहे अद्भुत नर्त्तन ।
दुइ गोँसाइ हरि बोले आनन्दित मन ॥१९
नाचिते नाचिते गोपाल हइला मूर्च्छित ।
भूमिते पड़िला देहे नाहिक सम्बित ॥२०
दुःखी हैला आचार्य्य पुत्र कोले लइया ।
रक्षा करेन नृसिंहेर मन्त्र पड़िया ॥२१
नाना मन्त्र पड़े आचार्य्य ना हय चेतन ।
दुःखी हइया आचार्य्य करेन क्रन्दन ॥२२

तबे महाप्रभु ताँर हृदे हस्त धरि ।
उठह गोपाल तुमि बल हरि हरि ॥२३
उठिला गोपाल प्रभुर स्पर्शध्वनि शुनि ।
आनन्दित हैल सबे करे हरिध्वनि ॥२४
आचार्य्येर आर पुत्र श्रीबलराम ।
आर पुत्र स्वरूप शाखाजगदीश नाम ॥२५
कमलाकान्त नाम हय आचार्य्य किङ्कर ।
आचार्य्येर व्यवहार ताहार गोचर ॥२६
नीलाचले तिँहो एक पत्रिका लिखिया ।
प्रतापरुद्रेर पाश दिला पाठाइया ॥२७
सेइत पत्रिर कथा आचार्य्य ना जाने ।
कोन पाके सेइ पत्रि एल प्रभु स्थाने ॥२८
से पत्रिते लेखा आछे एइत लिखन ।
ईश्वरत्वे आचार्य्येर करिया स्थापन ॥२९
किन्तु ताँर दैवे किछु हइयाछे ऋण ।
ऋण शोधिवारे चाहि टाका शत तिन ॥३०
पत्र पड़िया प्रभुर मने हैल दुःख ।
बाहिरे हासिया किछु कहे चन्द्रमुख ॥३१
आचार्य्ये स्थापियाछेन करिया ईश्वर ।
इथे दोष नाहि आचार्य्य दैवत--ईश्वर ॥३२
ईश्वरेर दैन्य करि करियाछे भिक्षा ।
अतएव दण्ड करि कराइब शिक्षा ॥३३
गोविन्देरे आज्ञा दिल जिहा आजि हैते ।
बाउलिया विश्वासेरे ना दिवे आसिते ॥३४
दण्ड शुनि विश्वास हैला परम दुःखित ।
शुनिया प्रभुर दण्ड आचार्य्य हर्षित ॥३५
विश्वासेरे कहे तुमि बड़ भाग्यवान् ।
तोमारे करिल दण्ड प्रभु भगवान् ॥३६
पूर्व्वे महाप्रभु मोरे करेन सम्मान ।
दुःख पाञा मने आमि कैल अनुमान ॥३७
मुक्ति श्रेष्ठ करि कैल वाशिष्ठ व्याख्यान ।
क्रुद्ध हञा प्रभु मोरे कैल अपमान ॥३८
दण्ड पाञा हैल मोर परम आनन्द ।
ये दण्ड पाइल भाग्यवन्त श्रीमुकुन्द ॥३९
ये दण्ड पाइलेन श्रीशची भाग्यवती ।
से दण्ड प्रसाद अन्य लोक पावे कति ॥४०
एत कहि आचार्य्य ताँरे करिया आश्वास ।
आनन्दित हैया एलो महाप्रभुर पाश ॥४१
प्रभुके कहेन तोमार ना बुझि ए लीला ।
आमा हैते प्रसाद पात्र हइला कमला ॥४२
आमारे ये कभु नाहि हय से प्रसाद ।
तोमार चरणे आमि कि कैनु अपराध ॥४३
एत शुनि महाप्रभु हासिते लागिला ।
बोलाइया कमलाकान्ते प्रसन्न हइला ॥४४
आचार्य्य कहे इहाके केन दिले दरशन ।
दुइ प्रकारेत मोरे करे विड़म्बन ॥४५
शुनिया प्रभुर मन प्रसन्न हइल ।
दुहाँर अन्तर कथा दुहेँ से बुझिल ॥४६
प्रभु कहे बाउलिया ऐछे काहे कर ।
आचार्य्येर लज्जा धर्म्म हानि से आचर ॥४७
प्रतिग्रह ना करिये कभु राजधन ।
विषयीर अन्न खाइले दुष्ट हय मन ॥४८
मन दुष्ट हैले नहे कृष्णेर स्मरण ।
कृष्ण--स्मृति विनु हय निष्फल जीवन ॥४९
लोकलज्जा हय धर्म्म कीर्त्ति हय हानि ।
एइ कर्म्म ना करिह कभु इहा जानि ॥५०

एइ शिक्षा सबाकार सबे मने कैल ।
आचार्य्य गोँसाञि मने आनन्द पाइल ॥५१
आचार्य्येर अभिप्राय प्रभु मात्र वुझे ।
प्रभुर गम्भीर वाक्य आचार्य्य समुझे ॥५२
एइत प्रस्तावे आछे बहुत विचार ।
ग्रन्थ बाहुल्येर भये नारि लिखिवार ॥५३
श्रीयदुनन्दनाचार्य्य अद्वैतेर शाखा ।
ताँर शाखा उपशाखार नाहि हय लेखा ॥५४
वासुदेव दत्तेर तिँहो कृपार भाजन ।
सर्व्वभावे आश्रियाछे चैतन्यचरण ॥५५
भागवताचार्य्य आर विष्णुदास आचार्य्य ।
चक्रपाणि आचार्य्य आर अनन्त आचार्य्य ।५६
नन्दिनी आर कामदेव चैतन्य दास ।
दुर्ल्लभ विश्वास आर बनमाली दास ॥५७
जगन्नाथ कर आर कर भवनाथ ।
हृदयानन्द सेन आर दास भोलानाथ ॥५८
यादवदास विजयदास दास जनार्द्दन ।
अनन्तदास कानुपण्डित दास नारायण ॥५९
श्रीवत्स पण्डित ब्रह्मचारी हरिदास ।
पुरुषोत्तम ब्रह्मचारी आर कृष्णदास ॥६०
पुरुषोत्तम पण्डित आर रघुनाथ ।
बनमाली कविचन्द्र आर वैद्यनाथ ॥६१
लोकनाथ पण्डित आर मुरारि पण्डित ।
श्रीहरिचरण आर माधव पण्डित ॥६२
विजय पण्डित आर पण्डित श्रीराम ।
असंख्य अद्वैतशाखा कत लव नाम ॥६३
माली दत्त जल अद्वैत-स्कन्धे योगाय ।
सेइ जले जीये शाखा फ़ुलफल पाय ॥६४

इहार मध्ये मानि पाछे कोन शाखागण ।
ना माने चैतन्य माली दुर्द्दैव कारण ॥६
ये जन्माइल जीयाइल ताँरे ना मानिल ।
कृतघ्न हइल तारे स्कन्ध क्रुद्ध हैल ॥६
क्रुद्ध हञा स्कन्ध तारे जल ना सञ्चारे ।
जलाभावे कृशशाखा शुकाइया मरे ॥६
चैतन्य-रहित देह शुष्क काष्ठसम ।
जियन्तेइ मरा सेइ, दण्डे ताँरे यम ॥६
केवल ए गण प्रति नहे एइ दण्ड ।
चैतन्यविमुख येइ सेइत पाषण्ड ॥६
कि पण्डित कि तपस्वी किवा गृही यती ।
चैतन्य--विमुख येइ तार एइ गति ॥७
ये ये लइल श्रीअच्युतानन्देर मत ।
सेइ आचार्य्येर गण महाभागवत ॥७
अच्युतेर येइ मत सेइ सब सार ।
आर यत मत सब हैल छारखार ॥७
सेइ सेइ आचार्य्येर कृपार भाजन ।
अनायासे पाइल सेइ चैतन्यचरण ॥७
सेइ आचार्य्येर गणे कोटि नमस्कार ।
अच्युतानन्द प्राय चैतन्य जीवन याहार ॥७
एइत कहिल आचार्य्य गोँसाञिर गण ।
तिन स्कन्धेर कैल शाखार संक्षेप गणन ॥
शाखा उपशाखा ताँर नाहिक गणन ।
किछुमात्र कहि करि दिग् दरशन ॥७
श्रीगदाधर पण्डित शाखाते महोत्तम ।
ताँर उपशाखा किछु करिये गणन ॥७
शाखाश्रेष्ट ध्रुवानन्द श्रीधर ब्रह्मचारी ।
भागवताचार्य्य हरिदास ब्रह्मचारी ॥७

अनन्त आचार्य्य कवि दत्त मिश्र नयन ।
गङ्गामन्त्री, मामुठाकुर कण्ठाभरण ॥७९
भूगर्भ गोँसाञि आर भागवत दास ।
एइ दुइ आसि कैल वृन्दावन वास ॥८०
वाणीनाथ ब्रह्मचारी बड़ महाशय ।
वल्लभ चैतन्यदास कृष्णप्रेममय ॥८१
श्रीनाथ चक्रवर्त्ती आर उद्धवदास ।
जितामिश्र, काठकाठा जगन्नाथ दास ॥८२
श्रीहरि आचार्य्य सादिपुरिया गोपाल ।
कृष्णदास ब्रह्मचारी पुष्पगोपाल ॥८३
श्रीहर्ष रघुमिश्र पण्डित लक्ष्मीनाथ ।
वङ्गवाटी चैतन्यदास, श्रीरघुनाथ ॥८४
चक्रवर्त्ती शिवानन्द शाखाते उद्दाम ।
मदनगोपाल पाये याहार विश्राम ॥८५
अमोघ पण्डित हस्ति-गोपाल चैतन्यवल्लभ ।
यदु गाङ्गुली आर मङ्गल वैष्णव ॥८६
संक्षेपे कहिल पण्डित गोँसाञिर गण ।
ऐछे आर शाखा उपशाखार गणन ॥८७
पण्डितेर गण सब भागवत धन्य ।
प्राणवल्लभ सबार श्रीकृष्णचैतन्य ॥८८
एइ तिन स्कन्धेर कैल शाखार संक्षेपे गणन ।
याँ सबा स्मरणे भवबन्ध विमोचन ॥८९
याँ सबा स्मरणे पाइ चैतन्यचरण ।
याँ सबा स्मरणे हय बाञ्छित पूरण ॥९०
अतएव ताँ सबार वन्दिल चरण ।
चैतन्यमालीर कहि लीला अनुक्रम ॥९१
गौरलीलामृतसिन्धु अपार अगाध ।
के करिते पारे ताते अवगाह साध ॥९२
ताहार माधुरी गन्धे लुब्ध हय मन ।
अतएव तटे रहि चाखि एक कण ॥९३
श्रीरूप रघुनाथ पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥९४

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे अद्वैतादिशाखावर्णनं नाम द्वादशः परिच्छेदः ॥१२॥



❀ त्रयोदश परिच्छेद ❀



तथाहि ग्रन्थकारस्य—

स प्रसीदतु चैतन्यदेवो यस्य प्रसादतः ।
तल्लीलावर्णने योग्यः सद्यः स्यादधमोऽप्ययम् ॥१

टीका—सः श्रीचैतन्यदेवः प्रसीदतु प्रसन्नो भवतु । यस्य श्रीचैतन्यस्य प्रसादतः प्रसादेनायं अधमो जनः सद्यस्तत्क्षणादेव तल्लीलावर्णने योग्यः स्यात ॥१॥

जिनके अनुग्रह से यह अधम जन भी तदीय लीला कीर्तन करने में सद्यः सक्षम होता है, इस प्रकार श्रीचैतन्य देव मेरे प्रति प्रसन्न हो ॥१॥

जय जय श्रीकृष्णचैतन्य गौरचन्द्र ।
जयाद्वैतचन्द्र जय जय नित्यानन्द ॥१
जय जय गदाधर जय श्रीनिवास ।
जय मुकुन्द वासुदेव जय हरिदाश ॥२
जय दामोदर स्वरूप जय मुरारि गुप्त ।
एइ सब चन्द्रोदय तमः कैल लुप्त ॥३

जय श्रीचैतन्यचन्द्रेर भक्त चन्द्रगरा ।
सबार प्रेम--ज्योतस्नाय उज्ज्वल भुवन ॥४
एइमत कहिल ग्रन्थारम्भे मुखबन्ध ।
एबे करि चैतन्यलीलार क्रम अनुबन्ध ॥५
प्रथमेत सूत्ररूपे करिये गरान ।
पाछे ताहा विस्तारि करिव विवरण ॥६
श्रीकृष्णचैतन्य नवद्वीपे अवतरि ।
अष्टचल्लिश वत्सर प्रकट विहरि ॥७
चौद्दशत सात शके जन्मेर प्रमाण ।
चौद्दशत पञ्चान्नते हैला अन्तर्द्धान ॥८
चव्विश वत्सर प्रभु कैल गृहवास ।
निरन्तर कैल प्रेमभक्तिर प्रकाश ॥९
चव्विश वत्सर शेषे करिया सन्नयास ।
चव्विश वत्सर कैला नीलाचले वास ॥१०
तार मध्ये छय वत्सर गमनागमन ।
कभु दक्षिण कभु गौड़ कभु वृन्दावन ॥११
अष्टादश वत्सर रहिल नीलाचले ।
कृष्णप्रेम नामामृते भासाइल सकले ॥१२
गार्हस्थे प्रभुर लीला आदिलीलाख्यान ।
मध्य-अन्त-लीला शेषलीलार दुइ नाम ॥१३
आदिलीला मध्ये प्रभुर यतेक चरित ।
सूत्ररूपे मुरारिगुप्त करिला ग्रथित ॥१४
प्रभुर ये शेषलीला स्वरूप दामोदर ।
सूत्र करि गाँथिलेन ग्रन्थेर भितर ॥१५
एइ दुइ जनेर सूत्र देखिया शुनिया ।
वर्णना करेन वैष्णव क्रम ये करिया ॥१६
बाल्य पौगण्ड कैशोर यौबन चारि भेद ।
अतएव आदिखण्डे गणि चारि भेद ॥१७

तथाहि ग्रन्थकारस्य—

सर्व्वसद्गुणपूर्णां तां वन्दे फाल्गुनपूर्णिमाम्
यस्यां श्रीकृष्णचैतन्योऽवतीर्णः कृष्णनामभिः

टीका—तां फाल्गुनपूर्णिमां अहं वन्दे । य
फाल्गुनपूर्णिमायां कृष्णनामभिः सह कृष्णचै
ऽवतीर्णः । फाल्गुनपूर्णिमां किम्भूतां ?– सर्व
गुणपूर्णाम् ॥२॥

जिस में श्रीकृष्ण नाम के सहित श्रीकृष्णचै
अवतीर्ण हुये हैं, मैं उस सर्व सद्गुण पूर्णा फा
पूर्णिमा की वन्दना करता हूँ ॥२॥

फाल्गुन-पूर्णिमा--सन्ध्याय प्रभुर जन्मोद
सेइ काले दैवयोगे चन्द्रग्रहण हय ॥
हरि हरि बले लोक हरषित हञा ।
जन्मिला चैतन्य प्रभु नाम जन्माइया ॥
जन्म बाल्य पौगण्ड कैशोर युवाकाले ।
हरिनाम लओयाइल कोन कोन छले ॥
बाल्यभाव छले प्रभु करेन क्रन्दन ।
कृष्ण हरि नाम शुनि रहये रोदन ॥
अतएव हरि हरि बोले नारीगण ।
देखिते आइसे येवा यत बन्धुजन ॥
गौरहरि बलि ताँरे हासे सर्व्व नारी ।
अतएव नाम ताँर हैल गौरहरि ॥
बाल्य बयस यावत हाते खड़ि दिल ।
पौगण्डवयस यावत् विवाह ना कैल ॥
विवाह करिले हैल नवीन यौवन ।
सर्व्वत्र लओयाइल प्रभु नाम सङ्कीर्त्तन ॥
पौगण्ड वयसे पड़े पड़ान शिष्यगणे ।
सर्व्वत्र करेन कृष्णनामेर व्याख्याने ॥
सूत्र वृत्ति पाँजि टीका "कृष्णेते तात्पर्य
शिष्येर प्रतीत हय प्रभाव आश्चर्य्य ॥

यारे देखे तारे कहे कह कृष्ण नाम"।
कृष्णनामे भासाइल नवद्वीप ग्राम ॥२८
किशोर बयसे आरम्भिल सङ्कीर्त्तन।
रात्रि दिने प्रेमे नृत्य सङ्गे भक्तगण ॥२९
नगरे नगरे भ्रमेण कीर्त्तन करिया।
भासाइल त्रिभुवन प्रेमभक्ति दिया ॥३०
चव्विश वत्सर ऐछे नवद्वीप ग्रामे।
लओयाइल सर्व्वलोके कृष्णप्रेम नामे ॥३१
चव्विश वत्सर छिला करिया सन्न्यास।
भक्तगण लञा कैल नीलाचले बास ॥३२
तार मध्ये नीलाचले छय वत्सर।
नृत्य गीत प्रेमभक्ति गान निरन्तर ॥३३
सेतुबन्ध आर गौड़ व्यापि वृन्दावन।
प्रेम नाम प्रचारिया करिल भ्रमण ॥३४
एइ मध्यलीला नाम लीलामुख्यधाम।
शेष अष्टादशवर्ष अन्त्यलीला नाम ॥३५
तार मध्ये छय वर्ष भक्तगण सङ्गे।
प्रेमभक्ति लओयाइल नृत्यगीत रङ्गे ॥३६
द्वादश वत्सर शेष रहिला नीलाचले।
प्रेमावस्था शिखाइल आस्वादन छले ॥३७
रात्रि दिवसे कृष्णविरह स्फुरण।
उन्मादेर चेष्टा करे प्रलापवचन ॥३८
श्रीराधार प्रलाप यैछे उद्धवदर्शने।
सेइमत उन्माद प्रलाप करे रात्रि दिने ॥३९
विद्यापति चण्डिदास जयदेव गीत।
आस्वादने रामानन्द स्वरूप सहित ॥४०
कृष्णेर योग वियोग यत प्रेमचेष्टित।
आस्वादिया पूर्ण कैल आपन वाञ्छित ॥४१

अनन्त चैतन्यलीला क्षुद्र जीव हञा।
के वर्णिते पारे ताहा विस्तार करिया ॥४२
सूत्रकरि गणे यदि आपनि अनन्त।
सहस्र बदने तिँहो नाहि पाय अन्त ॥४३
दामोदर-स्वरूप आर गुप्त मुरारि।
मुख्य मुख्य लीला सूत्रे लिखियाछे विचारि ।४४
सेइ अनुसारे लिखि लीलासूत्रगण।
विस्तारि वर्णियाछेन दास वृन्दावन ॥४५
चैतन्यलीलार व्यास वृन्दावन दास।
मधुर करिया लीला करिला प्रकाश ॥४६
ग्रन्थ विस्तार भये तिँहो छाड़िल ये ये स्थान।
सेइ सेइ स्थाने किछु करिब व्याख्यान ॥४७
प्रभुर लीलामृत तिँहो कैल आस्वादन।
ताँर भुक्त शेष किछु करिये चर्व्वण ॥४८
आदि--लीलार सूत्र लिखि शुन भक्तगण।
संक्षेपे लिखिये सम्यक् ना याय लिखन ॥४९
कोन वाञ्छा पूर्ण लागि व्रजेन्द्रकुमार।
अवतीर्ण हैते मने करिल विचार ॥५०
आगे अवतारिला ये ये गुरु परिवार।
संक्षेरे कहिये कहा ना याय विस्तार ॥५१
श्रीशची जगन्नाथ श्रीमाधवेन्द्रपुरी।
केशव-भारती आर श्रीईश्वरपुरी ॥५२
अद्वैत--आचार्य्य आर पण्डित श्रीवास।
आचार्य्यरत्न विद्यानिधि ठाकुर हरिदास ।५३
श्रीहट्टनिवासी श्रीउपेन्द्रमिश्र नाम।
वैष्णव पण्डित धनी सद्गुण प्रधान ॥५४
सप्त पुत्र तार हय, सप्त ऋषीश्वर।
कंसारि परमानन्द पद्मनाभ सर्व्वेश्वर ॥५५

जगन्नाथ जनार्द्दन त्रैलोक्यनाथ ।
नदीयाते गङ्गावास कैल जगन्नाथ ॥५६
जगन्नाथ मिश्रवर पदवी पुरन्दर ।
नन्द वसुदेव रूप सद्‌गुण सागर ॥५७
ताँर पत्नी शची नाम पतिव्रता सती ।
याँर पिता नीलाम्बर नाम चक्रवर्त्ती ॥५८
राढ़देशे जन्मिल ठाकुर नित्यानन्द ।
गङ्गादास पण्डित, गुप्त मुरारि, मुकुन्द ॥५९
असंख्य निजभक्तेर करिया अवतार ।
शेषे अवतीर्ण हैला व्रजेन्द्रकुमार ॥६०
प्रभुर आविर्भाव पूर्व्वे यत वैष्णव गण ।
अद्वैताचार्य्य स्थाने करेन गमन ॥६१
गीता भागवत कहे आचार्य्य गोँसाञि ।
ज्ञानकर्म्म निन्दि करे भक्तिर बड़ाञि ॥६२
सर्व्वशास्त्रे करे कृष्ण भक्तिर व्याख्यान ।
ज्ञानयोग कर्म्मयोग नाहि माने आन ॥६३
ताँर सङ्गे आनन्द करे वैष्णवेर गण ।
कृष्णपूजा कृष्णकथा नाम सङ्कीर्त्तन ॥६४
किन्तु आर सर्व्वलोके कृष्णवहिर्मुख ।
विषय निमग्न देखि सबे पाय दुःख ॥६५
लोकेर निस्तार हेतु करेन चिन्तन ।
केमते ए सब लोकेर हइब तारण ॥६६
कृष्ण अवतरि करे भक्तिर विस्तार ।
तबे त सकल लोकेर हइवे निस्तार ॥६७
कृष्णावतारिते आचार्य्य प्रतिज्ञा करिया ।
कृष्णपूजा करेन तुलसी गङ्गाजल दिया ॥६८
कृष्णेर आह्वान करे सघन हुङ्कार ।
हुङ्कारे आकृष्ट हैला व्रजेन्द्रकुमार ॥६९

जगन्नाथ-मिश्र-पत्नी शचीर उदरे ।
अष्ट कन्या क्रमे हैल जन्मि जन्मि मरे ।
अपत्य विरहे मिश्रेर दुःखी हैल मन ।
पुत्र लागि आराधिला विष्णुर चरण ।
तबे पुत्र उपजिला विश्वरूप नाम ।
महागुणवान् तिँहो बलदेव धाम ।
बलदेव प्रकाश परमव्योमे सङ्कर्षण ।
तिँहो विश्वेर उपादान निमित्त कारण ।
ताँहा बिना विश्वे किछु नाहि देखि आ
अतएव विश्वरूप नाम हैल ताँर ।

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१५।३५)—

परीक्षितं प्रति श्रीशुकवाक्यम्—

नैतच्चित्रं भगवति ह्यनन्ते जगदीश्वरे ।
ओतप्रोतमिदं विश्वं तन्तुष्वङ्ग यथा पट

टीका—यस्मिन् भगवति अनन्ते ज
सङ्कर्षणे इदं विश्वं तन्तुषु पट इव ओतं स्थि
एतत् चित्रं न ॥३॥

श्रीशुक देव परीक्षित महाराज को कहे
तन्तु समूह में वस्त्र जिस प्रकार ओत
उस प्रकार यह विश्व जो असीम जगदीश्वर में
अनुस्युत है, यह आश्चर्य कर नहीं है ॥३॥

अतएव प्रभुर तिँहो हैल बड़ भाइ ।
कृष्ण बलदेव दुइ चैतन्य निताइ ।
पुत्र पाञा दम्पती हैला आनन्दित मन
विशेषे सेवन करे गोविन्द--चरण ।
चौद्दशत छय शके शेष माघमासे ।
जगन्नाथ शची देहे कृष्णेर प्रकाशे ।
मिश्र कहे शची स्थाने देखि विपरीत ।
ज्योतिर्म्मय--देह गेह लक्ष्मी अधिष्ठित

याहा ताहा सर्व्वलोक करेन सम्मान ।
घरेते पाठाइया देन वस्त्र धन धान ॥७৯
शची कहे मुञि देख आकाश उपरे ।
दिव्यमूर्त्ति लोक सब स्तुति येन करे ॥८०
जगन्नाथ मिश्र कहे स्वप्न ये देखिल ।
ज्योतिर्म्मयधाम मोर हृदये पशिल ॥८१
आमार हृदय हैते गेला तोमार हृदये ।
हेन बुझि जन्मिबेन कोन महाशये ॥८२
एत बलि दुँहे रहे हरषित हञा ।
शालग्राम सेबा करे विशेष करिञा ॥८३
हैते हैते गर्भ हैल त्रयोदश मास ।
तथापि भूमिष्ठ नहे मिश्रेर हैल त्रास ॥८४
नीलाम्बर चक्रवर्त्ती कहिलेन गणिञा ।
एइ मासे पुत्र हैबे शुभक्षण पाञा ॥८५
चोद्दशत सात शके मास ये फाल्गुन ।
पौर्णमासी सन्ध्याकाले हैल शुभक्षण ॥८६
सिंहराशि सिंहलग्न उच्चग्रहगण ।
षड़्वर्ग अष्टवर्ग सर्व्वसुलक्षण ॥८७
अकलङ्क गौरचन्द्र दिल दरशन ।
सकलङ्क चन्द्रे आर कोन् प्रयोजन ॥८८
एत जानि राहु कैल चन्द्रेर ग्रहण ।
कृष्ण कृष्ण हरि नामे भासे त्रिभुवन ॥८९
जगत् भरिया लोक बले हरि हरि ।
सेइक्षणे गौरकृष्ण भूमि अवतरि ॥९०
प्रसन्न हइल सर्व्व जगतेर मन ।
हरि बलि हिन्दुके हास्य करये यवन ॥९१
हरि बलि नारीगण देन हुलाहुलि ।
स्वर्गे वाद्य नृत्य करे देव कुतूहली ॥९२
प्रसन्न हैल दश दिक् स्वच्छ नदीजल ।
स्थावर जङ्गम हैल आनन्दे विह्वल ॥९३

यथा राग ।

नदीया उदयगिरि, पूर्णचन्द्र गौरहरि,
कृपा करि हइल उदय ।
पापतमो हैल नाश, त्रिजगतेर उल्लास,
जगभरि हरिध्वनि हय ॥९४
सेइ काले निजालये, उठिया अद्वैत राये,
नृत्य करे आनन्दित मने ।
हरिदास लैया सङ्गे, हुङ्कार कीर्त्तन रङ्गे,
केने नाचे केह नाहि जाने ॥९५
देखि उपराग हासि, शीघ्र गङ्गाघाटे आसि,
आनन्दे करिल गङ्गास्नान ।
पाञा उपराग छले, आपनार मनोबले,
ब्राह्मणेरे दिला नाना दान ॥९६
जगत् आनन्दमय, देखि मने सविस्मय,
ठारे ठारे कहे हरिदास ।
तोमार ऐछन रङ्ग, मोर मन परसन्न,
देखि किछु आछे कार्य्ये भास ॥९७
आचार्य्यरत्न श्रीवास, हैल मने सुखोल्लास,
याइ स्नान कैल गङ्गाजले ।
आनन्दे विह्वल मन, करे हरि सङ्कीर्त्तन,
नाना दान कैल मनोबले ॥९८
एइ मत भक्त तति, यार येइ देशे स्थिति,
ताहा ताहा पाइ मनोबले ।
नाचे करे सङ्कीर्त्तन, आनन्दे विह्वल मन,
दान करे ग्रहणेर छले ॥९९
ब्राह्मण सज्जन नारी, नानाद्रव्य थालि भरि,
आइला सबे यौतुक लइया ।

येन काँचा सोना द्युति, देखि बालकेर मूर्त्ति,
आशीर्व्वाद करे सुख पाञा ॥१००
सावित्री गौरी सरस्वती, शची रम्भा अरुन्धती,
आर यत देव देवीगण।
नाना द्रव्य पात्रे भरि, ब्राह्मणीर वेश धरि,
आसि सबे करे दरशन ॥१०१
अन्तरीक्षे देवगण, गन्धर्व्व सिद्ध चारण,
स्तुति नृत्य करे वाद्य गीत।
नर्त्तक वादक भाट, नवद्वीपे यार नाट,
सबे आसि नाचे पाञा प्रीत ॥१०२
केवा आसे केवा याय, केवा नाचे केवा गाय,
सम्भालिते नारे कारो बोल।
खण्डिलेक दुःख शोक, प्रमोदे पूरित लोक,
मिश्र हैला आनन्दे विह्वल ॥१०३
आचार्य्य रत्न श्रीवास, जगन्नाथ मिश्र पाश,
आसि तारे करि सावधान।
कराइल जातकर्म्म, ये आछिल विधिधर्म्म,
तबे मिश्र करे नाना दान ॥१०४
यौतुक पाइल यत, घरे वा आछिल कत,
सब धन विप्रे दिल दान।
यत नर्त्तक गायन्, भाट अकिञ्चन जन,
धन दिया कैल सबार मान ॥१०५
श्रीवासेर ब्राह्मणी, नाम तार मालिनी,
आचार्य्य रत्नेर पत्नी सङ्गे।
सिन्दूर हरिद्रा तैल, खइ कला नारिकेल,
दिया पूजे नारीगण रङ्गे ॥१०६
अद्वैत आचार्य्य भार्य्या, जगत वन्दिता आर्य्या,
नाम तार सीता ठाकुराणी।

आचार्य्येर आज्ञा पाञा, गेला उपहार लञा
देखिते बालक शिरोमणि ॥१०
सुवर्णेर कड़ि बौलि, रजतमुद्रा पाशुलि
सुवर्णेर अङ्गद कङ्कण।
दु बाहुते दिव्यशङ्ख, रजतेर मलबङ्क
स्वर्णमुद्रा नाना हारगण ॥१०८
व्याघ्रनख हेमजड़ि, कटि पट्टसूत्र डोरि
हस्तपदेर यत आभरण।
चित्रवर्ण पट्टशाड़ी, भूनिपोता पट्टपाड़ी
स्वर्ण रौप्य मुद्रा बहुधन ॥१०९
दूर्व्वा धान्य गोरोचन, हरिद्रा कुङ्कुम चन्दन
मङ्गल द्रव्य पात्रेते भरिञा।
वस्त्र गुप्त दोला चड़ि, सङ्गे लञा दास चेड़ी
वस्त्रालङ्कार पेटारि भरिया ॥११
भक्ष्य भोज्य उपहार, सङ्गे लैल बहुभार,
शचीगृहे हैला उपनीत।
देखिया बालक ठाम, साक्षात् गोकुल कान,
वर्णमात्र देखि विपरीत ॥१११
सब अङ्ग सुनिर्म्मल, सुवर्ण प्रतिमा भाल,
सर्व्व अङ्ग सुलक्षणमय।
बालकेर दिव्य द्युति, देखि पाइल बहु प्रीति,
वात्सल्येते द्रविल हृदय ॥११२
दूर्व्वा धान्य दिल शीर्षे, कैल बहु आशिषे,
चिरजीवी हओ दुइ भाइ।
डाकिनी शाकिनी हैते, शङ्का उपजिल चित्ते,
डरे नाम थुइल निमाइ ॥११३
पुत्र माता स्नान दिने, दिल वस्त्र विभूषणे,
पुत्रसह मिश्रेर सम्मानि।

शची मिश्रेर पूजा लञा, मनेते हरिष हञा,
घरे आइला सीताठाकुराणी ॥११४
ऐछे शची जगन्नाथ, पुत्र पाञा लक्ष्मीनाथ,
पूर्ण हैल सकल वाञ्छित ।
धन धान्ये भरे घर लोकमान्य कलेवर,
दिने दिने हय आनन्दित ॥११५
मिश्र वैष्णव शान्त, अलम्पट शुद्ध दान्त,
धन भोगे नाहि अभिमान ।
पुत्रेर प्रभावे यत, धन आसि मिले तत,
विष्णुप्रीते द्विजे देन दान ॥११६
लग्न गणि हर्षमति, नीलाम्बर चक्रवर्त्ती,
गुप्ते किछु कहिल मिश्रेरे ।
महापुरुषेर चिह्न, लग्ने अङ्ग भिन्न भिन्न,
देखि एइ तारिबे संसारे ॥११७
ऐछे प्रभु शची घरे, कृपाय कैल अवतारे,
ये इहा करये श्रवण ।
गौर प्रभु दयामय, तारे हयेन सदय,
सेइ पाय ताँहार चरण ॥११८
पाइया मानुष जन्म, ये ना शुने गौरगुण,
हेन जन्म तार व्यर्थ हैल ।
पाइया अमृत धुनी, पिये विष गर्त्तपाणि,
जन्मिया से केने ना मरिल ॥११९
श्रीचैतन्य नित्यानन्द, आचार्य्य अद्वैत चन्द्र,
स्वरूप रूप रघुनाथ दास ।
इहा सबार श्रीचरण, शिरे वन्दि निज जन,
जन्मलीला गाइल कृष्णदास ॥१२०

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे
जन्मलीलावर्णनं नाम त्रयोदशः
परिच्छेदः ॥१३॥



❀ चतुर्द्दश परिच्छेद ❀

तथाहि ग्रन्थकारस्य—

कथञ्चन स्मृते यस्मिन् दुष्करं सुकरं भवेत् ।
विस्मृते विपरीतं स्यात् श्रीचैतन्यं नमामि तम् ॥१

टीका— कथञ्चन केनापि प्रकारेण यस्मिन् चैतन्ये स्मृते दुष्करं सुकरं भवेत् विस्मृते विपरीतं स्यात्, तं श्रीचैतन्यं नमामि ॥१॥

जिन का स्मरण किसी भी प्रकार करने से ही दुष्कर कार्य्यं भी सुकर होता है, एवं जिनका विस्मरण होने से सुकर कार्य्य भी दुष्कर हो जाता है, मैं उन श्रीचैतन्य देवको प्रणाम करता हूँ ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौर भक्तवृन्द ॥१
प्रभुर कहिल एइ जन्मलीला सूत्र ।
यशोदानन्दन यैछे हैल शचीपुत्र ॥२
संक्षेपे कहिल जन्मलीला अनुक्रम ।
एबे कहि बाल्यलीला सूत्रेर गणन ॥३

वन्दे चैतन्यकृष्णस्य बाल्यलीलां मनोहराम् ।
लौकिकमपि तामीशचेष्टया बलितान्तराम् ॥२॥

टीका—चैतन्यकृष्णस्य तां बाल्यलीलां वन्दे । किम्भूतां ?—मनोहराम् । पुनः किम्भूताम् ?—लौकिकीमपि ईशचेष्टया बलितान्तरां अन्तर्निबद्धाम् ।२

मैं श्रीचैतन्य देवकी उस मनो हारिणी बाल्य लीला को नमस्कार करता हूँ, जो लौकिकी होने पर भी ईश्वर चेष्टा के द्वारा अन्तर्निबद्ध है ॥२॥

बाल्यलीलाय प्रभुर आगे उत्तान शयन ।

पिता मातय देखाइल चिह्न चरण ॥४
गृहे दुइ जन देखे लघु पदचिह्न ।
तहि मध्ये ध्वज--वज्र--शङ्ख--चक्र--मीन ॥५
देखिया दोँहार चित्ते जन्मिल विस्मय ।
कार पदचिह्न घरे ना पाय निश्चय ॥६
मिश्र कहे बालगोपाल आछे शिलासङ्गे ।
तेँहो मूर्त्ति हञा खेले जानि घरे रङ्गे ॥७
सेइक्षणे जागिला निमाञि करिया क्रन्दन ।
अङ्के लैया शची ताँरे पियाइल स्तन ॥८
स्तन पियाइते पुत्रेर चरण देखिल ।
सेइ चिह्न पाय देखि मिश्रे बोलाइल ॥९
देखिया मिश्रेर हैल आनन्दित मति ।
गुप्ते बोलाइल नीलाम्बर चक्रवर्त्ती ॥१०
चिह्न देखि चक्रवर्त्ती बोलेन हाँसिञा ।
लग्नगणि पूर्व्वे आमि राखियाछि लिखिञा ॥११
वत्रिश लक्षण महापुरुष--भूषण ।
एइ शिशु अङ्गे देखि से सब लक्षण ॥१२

तथाहि सामुद्रिके (३)—

पञ्चदीर्घः पञ्चसूक्ष्मः सप्तरक्तं षड़ुन्नतः ।
त्रिह्रस्वपृथुगम्भीरो द्वात्रिंशल्लक्षणो महान् ॥३

टीका—पञ्चदीर्घः—नासा--भुज--हनुनेत्र--जानूनि । पञ्चसूक्ष्मः—त्वक्–केशाङ्गुलिपर्व्व--दन्त--रोमाणि । सप्तरक्तं–नेत्रान्तपादतल--हस्ततल-तात्वधरौष्ठजिह्वा नखानि । षड़ुन्नतः—वक्षः—स्कन्ध--नख-नासिका-कटिमुखानि । त्रिह्रस्वं – ग्रीवा--जङ्घा--मेहनानि । त्रिपृथुः—कटि-ललाट–वक्षांसि । त्रिगम्भीरः-नाभि-स्वर–सत्त्वानीति ॥३॥

महापुरुष द्वात्रिंशत् (३२) संख्यक चिह्न युक्त होते हैं। नासा,-- भुज--हनु--नेत्र--जानु ये पञ्च अङ्ग दीर्घ होते हैं। त्वक्-केश-अङ्गुलिपर्व-दन्त-रोम-ये पञ्च सूक्ष्म होते हैं।

नेत्रान्त, पाद तल--हस्ततल-तालु अधर ओष्ठ जिह्वा एवं नख-ये सप्त रक्त वर्ण के होते हैं।

वक्षः स्कन्ध--नख--नासिका -कटि एवं मुख-उज्वल होते हैं। ग्रीवा-जङ्घा--एवं मेहन ये तीन अङ्ग ह्रस्व होते है। कटि--ललाट--वक्षः--तीन अङ्ग विस्तृत होते हैं। नाभि-स्वर-एवं सत्त्व ये तीन अङ्ग गम्भीर होते हैं ॥३॥

नारायणेर चिह्नयुक्त श्रीहस्तचरण ।
एइ शिशु सर्व्वलोकेर करिबे तारण ॥१३
एइत करिबे वैष्णवधर्म्मेर प्रचार ।
इहा हैते हबे दुइ कुलेर उद्धार ॥१४
महोत्सब कर सब बोलाह ब्राह्मण ।
आजि दिन भाल करिब नामकरण ॥१५
सर्व्वलोकेर करिब इहो धारण पोषण ।
विश्वम्भर नाम इहार एइत कारण ॥१६
शुनि शची मिश्रेर मने आनन्द बाड़िल ।
ब्राह्मण ब्राह्मणी आनि महोत्सब कैल ॥१७
तबे कत दिने प्रभुर जानुचंक्रमण ।
नाना चमत्कार याते कराइल दर्शन ॥१८
क्रन्दनेर छले बोलाइल हरिनाम ।
नारी सब हरिबोले हासे गौरधाम ॥१९
तबे कत दिने कैल पाद-चंक्रमण ।
शिशुगण मेलि करे विविध खेलन ॥२०
एकदिन शची खइ सन्देश आनिया ।
वाटा भरि दिया लबै खाओत वसिया ॥२१
एत बलि गेला गुहकर्म्मादि करिते ।
लुकाञा लागिला शिशु मृत्तिका खाइते ॥२२
देखि शची धाञा आइला करि हाय हाय ।

माटी काड़ि लञा कहे माटी केने खाय ॥२३
कान्दिया कहेन शिशु केन कर रोष ।
तुमि माटी खाइते दिले मोर किवा दोष ॥२४
खै सन्देश अन्न यत माटीर विकार ।
एहो माटी सेहो माटी कि भेद इहार ॥२५
माटी देह माटी भक्ष्य देखह विचारि ।
अविचारे दोष देह कि बलिते पारि ॥२६
अन्तरे विस्मिता शची बलिल ताँहारे ।
माटी खाइते योगोपाय के शिखाइल तोरे ।२७
माटीर विकार अन्न खाइले देह पुष्ट हय ।
माटी खाइले रोग हय देह याय क्षय ॥२८
माटीर विकार घटे पानि भरि आनि ।
माटी पिण्डे धरि यबे शोषि याय पानि ॥२९
आत्म लुकाइते प्रभु कहिल ताहारे ।
आगे केने इहा माता ना शिखाइले मोरे ॥३०
एबेत जानिनु आर माटी ना खाइव ।
क्षुधा लागिले तोमार स्तनदुग्ध पिब ॥३१
एत बलि जननीर कोलेते चड़िया ।
स्तन पान करे प्रभु ईषत् हासिया ॥३२
एइमते नाना छले ऐश्वर्य्य देखाय ।
बाल्यभाव प्रकटिया पश्चात् लुकाय ॥३३
अतिथि विप्रेर अन्न खाइल तिन बार ।
पाछे गुप्त सेइ विप्रे करिल निस्तार ॥३४
चोरे लैया गेल प्रभुके बाहिरे पाइया ।
तार स्कन्धे चड़ि आइला तारे भुलाइया ॥३५
व्याधि छले जगदीश हिरण्य सदने ।
विष्णुर नैवेद्य खाइला एकादशी दिने ॥३६
शिशु सब लैया पाड़ापड़सिर घरे ।
चुरि करि द्रव्य खाय मारे बालकेरे ॥३७
शिशु सब शची स्थाने कैल निवेदन ।
शुनि शची पुत्रे किछु दिल ओलाहन ॥३८
केने चुरि कर केने मारह शिशुरे ।
केने परघरे याह किवा नाहि घरे ॥३९
शुनि प्रभु क्रुद्ध हैया घर भितर याञा ।
घरे यत भाण्ड छिल फेलिल भाङ्गिया ॥४०
तबे शची कोले करि कराइल सन्तोष ।
लज्जित इहया प्रभु जानि निज दोष ॥४१
कभु मृदुहस्ते कैल माताके ताड़न ।
माताके मूर्च्छिता देखि करये क्रन्दन ॥४२
नारीगण बोले नारिकेल देह आनि ।
तबे सुस्था हइबेन तोमार जननी ॥४३
बाहिर हइया आनिल प्रभु दुइ नारिकेल ।
देखिया विस्मित हैला अपूर्व सकल ॥४४
कभु शिशु सङ्गे स्नान करेन गङ्गाते ।
कन्यागण आइल ताँहा देवता पूजिते ॥४५
गङ्गास्नान करि पूजा करिते लागिला ।
कन्यागण मध्ये प्रभु आसिया बसिला ॥४६
कन्यागणे कहे आमा पूज आमि दिव वर ।
गङ्गा दुर्गा दासी मोर महेश किङ्कर ॥४७
आपनि चन्दन परि परेण फुलमाला ।
नैवेद्य काड़िया खान सन्देश चाल कला ॥४८
क्रोधे कन्यागण बले शुनहे निमाइ ।
ग्राम सम्बन्धे तुमि आमा सबार भाइ ॥४९
आमा सबा पक्षे इहा करिते ना जुयाय ।
ना लह देवतासज्जा ना कर अन्याय ॥५०
प्रभु कहे तोमा सबाके दिल एइ बर ।

तोमा सबार भर्त्ता हबे परम शुन्दर ॥५१
पण्डित विदग्ध युवा धनधान्यवान् ।
सात सात पुत्र हबे चिरायु मतिमान् ॥५२
बर शुनि कन्यागणे अन्तरे सन्तोष ।
बाहिरे भर्त्सना करे करि मिथ्या रोष ॥५३
कोन कन्या पलाइल नैवेद्य लइया ।
तारे डाकि कहे प्रभु सक्रोध हइया ॥५४
यदि मोरे नैवेद्य ना देह हइया कृपणी ।
बुड़ा भर्त्ता हबे आर चारि चारि सतिनी ॥५५
इहा शुनि ता सबार मने हैल भय ।
जानि कोन देवाविष्ट इहाते वा हय ॥५६
आनिया नैवेद्य तार सम्मुखे धरिल ।
खाइया नैवेद्य तारे इष्टवर दिल ॥५७
एइ मत चापल्य सब लोकेरे देखाय ।
दुःख कारो मने नहे सबे सुख पाय ॥५८
एक दिन वल्लभाचार्य्येर कन्या लक्ष्मीनाम ।
देवता पूजिते आइला करि गङ्गास्नान ॥५९
तारे देखि प्रभुर हैल साभिलाष मन ।
लक्ष्मी प्रीति पाइला करि प्रभुर दर्शन ॥६०
साहजिक प्रीति दोँहार हइल उदय ।
बाल्य भावाच्छन्न तबु हइल निश्चय ॥६१
दोँहा देखि दोँहार चित्ते हइल उल्लास ।
देवपूजाच्छले दोँहे करेन प्रकाश ॥६२
प्रभु कहे आमा पूज आमि महेश्वर ।
आमाके पूजिले पावे अभीप्सित वर ॥६३
लक्ष्मी ताँर अङ्गे दिल सपुष्प चन्दन ।
मल्लिकार माला दिया करिल वन्दन ॥६४
प्रभु तार पूजा पाञा हासिते लागिला ।
श्लोक पड़ि तार भाव अङ्गीकार कैला ॥६५

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२२।२५)

सङ्कल्पो विदितः साध्व्यो भवतीनां मदर्च्चनम् ।
मयानुमोदितःसोऽसौ सत्यो भवितुमर्हति ॥४॥

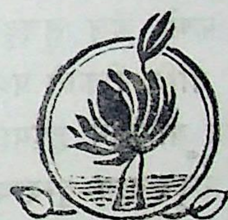
टीका— हे साध्यः ! भवतीनां मदर्च्चनं सङ्कल्पः विदितो ज्ञातो मया अनुमोदितः स्वीकृतः, अतः सत्यः सिद्धो भवितुं अर्हति ॥४॥

श्रीकृष्ण कहे थे— हे साध्वीवृन्द ! तुम सबने मेरी अर्च्चना की है, तुम सब के अभिलाष को शब्द से प्रकट न करने पर भी मैं उसको जानता हूँ, मैंने तुम सब के मनोरथ को अनुमोदन कर दिया, रहा हूँ, वह सत्य होने के योग्य है ।४॥

एइ मत लीला करि दुँहे गेला घर ।
गम्भीर चैतन्य लीला के बुझिते पर ॥६६
चैतन्य चापल्य देखि प्रेमे सर्व्वजन ।
शची जगन्नाथे देखि देन ओलाहन ॥६७
एक दिन शचीदेवी पुत्रेरे भर्त्सिया ।
धरिवारे गेला पुत्र पलाइला धाञा ॥६८
उच्छिष्ट गर्त्ते त्यक्त हाण्डिर उपर ।
वसिया आछेन सुखे प्रभु विश्वम्भर ॥६९
शची आसि कहे कैन अशुचि हइला ।
गङ्गास्नान कर याइ अपवित्र हैला ॥७०
इहा शुनि माता प्रति कहे ब्रह्मज्ञान ।
विस्मिता हइया माता कराइल गङ्गास्नान ॥७१
कभु पुत्र सङ्गे शची करिला शयन ।
देखे दिव्यलोक आसि भरिल भवन ॥७२
शची बले याह पुत्र बोलाह बापेरे ।
मातृ आज्ञा पाञा प्रभु चलिला बाहिरे ॥७३
चलिते नूपुर-ध्वनि बाजे झन झन ।
शुनि चमकित हैल पिता मातार मन ॥७४

मिश्र कहे एइ बड़ अद्भुत काहिनी ।
शिशुर शून्यपदे केने नूपुरेर ध्वनि ॥७५
शची बले आर एक अद्भुत देखिल ।
दिव्य दिव्य लोक आसि अङ्गन भरिल ॥७६
किबा कोलाहल करे बुझिते ना पारि ।
काहाके वा स्तुति करे अनुमान करि ॥७७
मिश्र कहे किछु हउक चिन्ता किछु नाइ ।
विश्वम्भरेर कुशल हउक एइ मात्र चाइ ॥७८
एक दिन मिश्र पुत्रेर चापल्य देखिया ।
धर्म्मशिक्षा दिल बहु भर्त्सन करिया ॥७९
रात्रे स्वप्न देखे एक आसिया ब्राह्मण ।
मिश्रेरे कहये किछु सरोष वचन ॥८०
मिश्र ! पुत्रेर तत्त्व तुमि किछुइ ना जान ।
भर्त्सन ताड़न कर पुत्र करि मान ॥८१
मिश्र कहे देवसिद्ध मुनि केने नय ।
ये से बड़ हउ एबे आमार तनय ॥८२
पुत्रेर लालन शिक्षा पितार स्वधर्म्म ।
आमि ना शिखाले कैछे जानिबे धर्म्ममर्म्म ।८३
विप्र कहे पुत्र यदि देवश्रेष्ठ हय ।
स्वतः सिद्धज्ञान तबे शिक्षा व्यर्थ हय ॥८४
मिश्र बले पुत्र केने नहे नारायण ।
तथापि पितार धर्म्म पुत्रेर शिक्षण ॥८५
एइ मते दोँहे करे धर्म्मेर विचार ।
विशुद्ध वात्सल्य मिश्र नाहि जाने आर ॥८६
एत शुनि द्विज गेला हैया आनन्दित ।
मिश्र जागिया हैला परम विस्मित ॥८७
बन्धु बान्धव स्थाने स्वपन कहिल ।
शुनिया सकल लोक विस्मित हइल ॥८८
एइ मत शिशु लीला करे गौरचन्द्र ।
दिने दिने पिता मातार बाड़ाय आनन्द ॥८९
कत दिने मिश्र पुत्रेर हाते खड़ि दिल ।
अल्पदिने द्वादश फला अक्षर शिखिल ॥९०
बाल्यलीला सूत्रे एइ कैल अनुक्रम ।
इहा विस्तारियाछेन दास वृन्दावन ॥९१
अतएव एइ लीला संक्षेपे सूत्र कैल ।
पुनरुक्ति हय विस्तारिया ना कहिल ॥९२
श्रीरूप रघुनाथ पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥९३

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे
बाल्यलीला--सूत्रवर्णनं नाम चतुर्द्दशः
परिच्छेदः ॥१४॥



❀ पञ्चदश परिच्छेद ❀



तथाहि ग्रन्थकारस्य—

कुमनाः सुमनस्त्वं हि याति यस्य पदाब्जयोः ।
सुमनोऽर्पणमात्रेण तं चैतन्यप्रभुं भजे ॥१॥

टीका — यस्य चैतन्यस्य पदाब्जयोः सुमनोऽर्पण-मात्रेण कुमनाः कुत्सितमना जनः सुमनस्त्वं याति, त चैतन्यप्रभुं भजे ॥१॥

जिनके चरण कमल युगल में कुसुमार्पण मात्र से कुमना व्यक्ति भी सुमना होता है, अर्थात् तदीय प्रियतमत्व को प्राप्त करता है मैं उन श्रीचैतन्य प्रभु का भजन करता हूँ ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्त वृन्द ॥१
पौगण्ड लीलार सूत्र करिये गणन ।
पौगण्ड वयसे प्रभुर मुख्य अध्ययन ॥२

तथाहि ग्रन्थकारस्य—

पौगण्डलीला चैतन्यकृष्णस्यातिसुविस्तृता ।
विद्यारम्भमुखा पाणिग्रहणान्ता मनोहरा ॥२॥

टीका—पौगण्डलीला चैतन्यकृष्णस्यातिसुविस्तृता, अत्यद्भुता, विद्यारम्भमुखा विद्यारम्भं मुखमादिर्यस्याः सा । पुनः कथम्भूता ?—पाणिग्रहणान्ता पाणिग्रहण विवाहोऽन्ते यस्याः सा । पुनः किम्भूता ?-मनोहरा ।२

श्रीकृष्ण चैतन्य देवकी पौगण्ड लीला अतीव विस्तृता है, उस में विद्यारम्भ से विवाह पर्य्यन्त मनोहर लीला कीर्त्तित है ॥२॥

गङ्गादास पण्डित स्थाने पड़े व्याकरण ।
श्रवण मात्र कण्ठे कैल सूत्रवृत्तिगण ॥३
अल्पकाले हैल पाँजि टीकाते प्रवीण ।
चिरकालेर पड़ुया जिने हइया नवीन ॥४
अध्ययनलीला प्रभुर दास वृन्दावन ।
चैतन्य मङ्गले कैल विस्तारि वर्णन ॥५
एक दिन मातार करि चरणे प्रणाम ।
प्रभु कहे माता मोरे देह एक दान ॥६
माता कहे ताहि दिब या तुमि चाहिवे ।
प्रभु कहे एकादशीते अन्न ना खाइवे ॥७
शची बलेन ना खाइब भालइ कहिला ।
सेइ हैते एकादशी करिते लागिला ॥८
तबे मिश्र विश्वरूपेर देखिया यौवन ।
कन्या चाहि विवाह दिते करिलेन मन ॥९
विश्वरूप शुनि घर छाड़ि पलाइला ।
सन्नयास करिया तीर्थ करिबारे गेला ॥१०

शुनि शची मिश्रेर दुःखित हैल मन ।
तबे प्रभु माता पितार कैल आश्वासन ॥
भाल हैल विश्वरूप सन्नयास करिल ।
पितृकूल मातृकुल दुइ उद्धारिल ॥
आमि त करिब तोमा दोँहार सेवन ।
शुनिया सन्तुष्ट हैल पितामातार मन ॥
एक दिन प्रभु नैवेद्य ताम्बुल खाइया ।
भूमिते पड़िला प्रभु अचेतन हैया ॥
आस्ते व्यस्ते पितामाता मुखे दिला पानी ।
सुस्थ हआ प्रभु कहे अद्भुत काहिनी ॥
एथा हैते विश्वरूप मोरे लआ गेला ।
सन्नयास करह तुमि आमारे कहिला ॥
आमि कहि आमार अनाथ पितामाता ।
आमि बालक सन्नयासेर किवा जानि कथा ।
गृहस्थ हइया करिब पितामातार सेवन ।
इहाते तुष्ट हवेन लक्ष्मीनारायण ॥
तबे विश्वरूप इहा पाठाइल मोरे ।
माताके कहिओ कोटि कोटि नमस्कार ॥
एइ मत नाना लीला करे गौरहरि ।
कि कारण लीला एइ बुझिते ना पारि ॥
कत दिन रहि मिश्र गेला परलोक ।
माता पुत्र दोँहार बाड़िल बड़ शोक ॥
बन्धुबान्धव आसि दोँहा प्रबोधिल ।
पितृक्रिया बिधि दृष्टे ईश्वर करिल ॥
कत दिने प्रभु चित्ते करिला चिन्तन ।
गृहस्थ हइलाम एबे चाहि गृहधर्म्म ॥
गृहिणी विना गृहधर्म्म ना हय शोभन ।
एत चिन्ति विवाह करिते हैल मन ॥

तथाहि उद्वाहतत्त्वे सप्तमाङ्के भट्टधृतस्मृतिः—

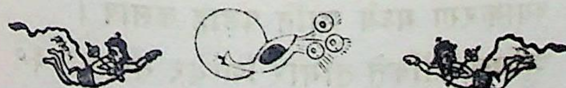
न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते ।
तया हि सहितः सर्व्वान् पुरुषार्थान् समश्नुते ॥३॥

टीका—पण्डिताः गृहं गृहम् इति न आहुः वदन्ति, किन्तु गृहिणी गृहमुच्यते कथ्यते । हि यतः तया सहितः समन्वितः सन् सर्व्वान् पुरुषार्थान् समश्नुते ।३

सुधीगण गृह को गृह नहीं कहते हैं, गृहिणी को गृह कहते हैं, कारण गृहिणी के सहित समन्वित होकर ही अखिल पुरुषार्थ लाभ होते हैं ॥३॥

दैवे एकदिन प्रभु पड़िया आसिते ।
वल्लभाचार्य्येर कन्या देखे गङ्गापथे ॥२५
पूर्व्व सिद्धभाव तार उदय करिल ।
दैवे वनमाली घटक शची स्थाने आइल ॥२६
शचीर इङ्गिते सम्बन्ध करिल घटन ।
लक्ष्मीके विवाह कैल शचीर नन्दन ॥२७
विस्तार वर्णिलेन इहा वृन्दावन दास ।
एइत पौगण्डलीला सूत्रेर प्रकाश ॥२८
पौगण्ड वयसे लीला बहुत प्रकार ।
वृन्दावनदास ताहा करियाछेन विस्तार ॥२९
अतएव दिङ्मात्र इहा देखाइल ।
चैतन्यमङ्गले सब लोक ख्यात हैल ॥३०
श्रीरूप रघुनाथ पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृते कहे कृष्णदास ॥३१

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे पौगण्डलीलावर्णनं नाम पञ्चदशः परिच्छेदः ॥१५॥





❀ षोड़श परिच्छेद ❀



तथाहि ग्रन्थकारस्य—

कृपासुधा सरिद्‌यस्य विश्वमाप्लावयन्त्यपि ।
नीचगैव सदा भाति तं चैतन्यप्रभुं भजे ॥१॥

टीका—यस्य चैतन्यस्य कृपासुधासरित् अमृतनदी सदा नीचगा एव भाति दीप्तीकरोति, किं कुर्व्वती सती ?—विश्वं संसारं आप्लावयन्ती, तं चैतन्यप्रभुं भजे ॥१॥

जिनकी कृपा रूप सुधा नदी विश्वब्रह्माण्ड को आप्लावित करने पर भी निरन्तर नीच गामिनी रूप में प्रकाशित होती है, मैं उन चैतन्य देवका भजन करता हूँ ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१

जीयात् कैशोरचैतन्यो मूर्त्तिमत्या गृहागमात् ।
लक्ष्मयार्च्चितोऽथ वाग्देव्या दिशां जयिजयच्छलात् ।२

टीका—असौ कैशोरचैतन्यः जीयात् जययुक्तो भवतु । सः किम्भूतं ?—गृहागमात् गृहागमावधि मूर्त्तिमत्या लक्ष्मया अर्च्चितः । पुनः कथम्भूतः ?—दिशां जयिजयच्छलात् दिग्विजयिजयच्छलात् वाग्देव्या सरस्वत्या अर्च्चितः ।।२।।

जो दिग्विजयी को पराजित करने के च्छल से वाग्देवी सरस्वती के द्वारा अर्च्चित हुये हैं, एवं गृह में मूर्त्तिमती कमला के द्वारा पूजित हुये हैं, इस प्रकार किशोर गौर चैतन्य देवकी जय हो ॥२॥

एवेत कैशोर लीलार सूत्र अनुबन्ध ।
शिष्यगणे पड़ाइते करिला आरम्भ ॥२

शत शत शिष्य सङ्गे सदा अध्ययन ।
व्याख्या शुनि सर्व्व लोकेर चमकित मन ॥३
सर्व्वशास्त्रे सर्व्वपण्डित पाय पराजय ।
विनयभङ्गीते कारो दुःख नाहि हय ॥४
विविध औद्धत्य करे शिष्यगण सङ्गे ।
जाह्नवीते जलकेलि करे नाना रङ्गे ॥५
कत दिने हैल प्रभुर वङ्गेते गमन ।
याहा याय ताहा लोयाय नाम सङ्कीर्त्तन ॥६
विद्यार प्रभाव देखि चमत्कार चिते ।
शत शत पड़ुया आसि लागिल पड़िते ॥७
सेइ देशे विप्र नाम मिश्रतपन ।
निश्चय करिते नारे साध्यसाधन ॥८
बहुशास्त्रे बहुवाक्ये चित्ते भ्रम हय ।
साध्यसाधन श्रेष्ठ ना हय निश्चय ॥९
स्वप्न एक विप्र कहे शुनह तपन ।
निमाइ पण्डित ठाञि करह गमन ॥१०
तिँहो तोमार साध्यसाधन करिबे निश्चय ।
साक्षात् ईश्वर तिँहो नाहिक संशय ॥११
स्वप्न देखि मिश्र आसि प्रभुर चरणे ।
स्वप्नेर वृत्तान्त सब कैल निवेदने ॥१२
प्रभु तुष्ट हञा साध्यसाधन कहिल ।
नामसङ्कीर्त्तन कर उपदेश कैल ॥१३
तार इच्छा प्रभु सङ्गे नवद्वीपे वसि ।
प्रभु आज्ञा दिल तुमि याह वाराणसी ॥१४
ताहा आमा सङ्गे तोमार हइवे मिलन ।
आज्ञा पाञा मिश्र कैल काशीते गमन ॥१५
प्रभुर अतर्क्य-लीला बुझिते ना पारि ।
स्वसङ्ग छाड़ाञा केन पाठाय काशीपुरी ॥१६
एइ मत बङ्गे लोकेर कैल महा हित ।
नाम दिया भक्त कैल पड़ाञा पण्डित ॥१७
एइ मत बङ्गे प्रभु करे नाना लीला ।
एथा नवद्वीपे लक्ष्मी विरहे दुःखी हैला ॥१८
प्रभुर विरह-सर्प लक्ष्मीरे दंशिल ।
विरह--सर्प विषे ताँर परलोक हैल ॥१९
अन्तरे जानिला प्रभु याते अन्तर्यामी ।
देशेरे आइला प्रभु शची दुःखी जानि ॥२०
घरे आइला प्रभु लञा बहु धन जन ।
तत्त्व कहि कैला शचीर दुःख विमोचन ॥२१
शिष्यगण लैया पुनः विद्यार विलास ।
विद्याबले सबा जिनि औद्धत्य प्रकाश ॥२२
तबे विष्णुप्रिया ठाकुराणी परिणय ।
तबे त करिल प्रभु दिग्विजयि जय ॥२३
वृन्दावन दास इहा करियाछेन विस्तार ।
स्फुट नाञि करेन दोष गुणेर विचार ॥२४
सेइ अंश कहि ताँरे करि नमस्कार ।
याहा शुनि दिग्विजयी कैल आपना धिक्कार २५
ज्योतस्नावती रात्रि प्रभु शिष्यगण सङ्गे ।
वसियाछे गङ्गातीरे विद्यार प्रसङ्गे ॥२६
हेनकाले दिग्विजयी ताहाञि आइला ।
गङ्गार वन्दना करि प्रभुरे मिलिला ॥२७
बसाइला प्रभु तारे आदर करिया ।
दिग्विजयी कहे मने अवज्ञा करिया ॥२८
व्याकरण पड़ाओ निमाइ तोमार नाम ।
बाल्यशास्त्रे लोक कहे तोमार गुणग्राम ॥२९
व्याकरण मध्ये जानि पड़ाह कलाप ।
शुनिल फाँकिते तोमार शिष्येर संलाप ॥३०

प्रभु कहे व्याकरण पड़ाइ अभिमान करि ।
शिष्येते ना बुझे आमि बुझाइते नारि ॥३१
काहा तुमि सर्व्वशास्त्रे कवित्वे प्रवीण ।
काहा आमि सब शिशु पड़ुया नवीन ॥३२
तोमार कवित्व किछु शुनिते हय मन ।
कृपा करि कर यदि गङ्गार वर्णन ॥३३
शुनिया ब्राह्मण गर्व्वे वर्णिते लागिला ।
घटि एके शत श्लोक गङ्गार वर्णिला ॥३४
शुनिया करिल प्रभु बहुत सत्कार ।
तोमा सम पृथिवीते कवि नाहि आर ॥३५
तोमार श्लोकेर अर्थ बुझिते कार शक्ति ।
तुमि जान भाल अर्थ किवा सरस्वती ॥३६
एक श्लोक अर्थ यदि कर निज मुखे ।
शुनि सब लोक तबे पाइवेक सुखे ॥३७
तबे दिग्विजयी व्याख्यार श्लोक पुछिल ।
शत श्लोक मध्ये श्लोक प्रभुत पड़िल ॥३८

तथाहि दिग्विजयीवाक्यम्—

महत्त्वं गङ्गायाः सततमिदमाभाति नितरां
यदेषा श्रीविष्णोश्चरणकमलोत्पत्तिसुभगा ।
द्वितीयश्रीलक्ष्मीरिव सुरनरैरर्च्यचरणा,
भवानीभर्त्तुर्या शिरसि विभवत्यद्भुतगुणा ॥३

टीका—गङ्गायाः सततमिदं महत्त्वं नितरां आभाति दीप्तिकरोति । यद् यस्मात् एषा गङ्गा श्रीविष्णोश्चरणकमलोत्पत्तिसुभगा श्रीविष्णोश्चरण-कमलयोरुत्पत्तिरुद्भवः तया उत्पत्त्या सुभगा भाग्यवती, अतो अद्वितीयश्रीरिव लक्ष्मीरिव सुरनरै-रर्च्यं चरणं यस्याः सा । भवानीभर्त्तुः शिवस्य शिरसि या विभवति, अतः अद्भुतगुणा ॥३॥

दिग्विजयी के वाक्य यह है—जो श्रीविष्णु पाद पद्म से आविर्भुत होने से अतीव भाग्यवती हैं, जो देवता एवं मनुष्य वृन्दके द्वारा अद्वितीय लक्ष्मीवत् अच्चित हैं, एव जो अद्भुत गुणवती होकर भवानी भर्त्ता महादेव के शिरोपरि विराजिता हैं, इस प्रकार गङ्गा की महिमा प्रकाशित है ॥३॥

एइ श्लोकेर अर्थ कर प्रभु यवे बैल ।
विस्मित हइया दिग्विजयी प्रभुरे पुछिल ॥३९
झञ्झावात प्राय आमि श्लोक पड़िल ।
तार मध्ये श्लोक तुमि कैछे कण्ठे कैल ॥४०
प्रभु कहे देववरे तुमि यैछे कविवर ।
तैछे देववरे केह हय श्रुतिधर ॥४१
श्लोक व्याख्या कैल विप्र हइया सन्तोष ।
प्रभु कहे श्लोकेर किवा कह गुण दोष ॥४२
विप्र कहे श्लोके नाहि दोषेर आभास ।
उपमालङ्कार गुण किछु अनुप्रास ॥४३
प्रभु कहे कहि यदि ना करह रोष ।
कह तोमार एइ श्लोके किवा आछे दोष ॥४४
प्रतिभार वाक्य तोमार देवता सन्तोषे ।
भाल मते विचारिले जानि गुण दोषे ॥४५
ताते भाल करि श्लोक करह विचार ।
कवि कहे ये करिल सेइ वेद सार ॥४६
व्याकरणी तुमि नाहि पड़ अलङ्कार ।
तुमि कि जानिबे एइ कवित्वेर सार ॥४७
प्रभु कहे अतएव पुछिये तोमारे ।
विचारिया गुण दोष बुझह आमारे ॥४८
नाहि पड़ि अलङ्कार करियाछि श्रवण ।
ताते एइ श्लोके देखि बहु दोष गुण ॥४९
कवि कहे कह देखि कोन गुण दोष ।
प्रभु कहे कहि शुन ना करिह रोष ॥५०

पञ्च दोष एइ श्लोके पञ्च अलङ्कार ।
क्रमे आमि कहि शुन करह विचार ॥५१
अविमृष्टविधेयांशे दुइ दोष चिह्न ।
विरुद्धमति भग्नक्रम पुनरुक्त दोष तिन ॥५२
गङ्गार महत्त्व श्लोकेर मूल विधेय ।
इदं शब्दे अनुवाद पश्चात विधेय ॥५३
विधेय आगे कहि पाछे कहिले अनुवाद ।
एइ लागि श्लोकेर अर्थ करियाछे बाद ॥५४

तथाहि काव्यप्रकाशालङ्कारे—

अनुवादमनुक्तातु न विधेयमुदीरयेत् ।
न ह्यलब्धास्पदं किञ्चित् कुत्राचित् प्रतितिष्ठति ।४

अनुवाद का वर्णन न करके विधेय का वर्णन न करे, कारण—आश्रय के अभाव से पदार्थ कहीं पर स्थिति लाभ नहीं कर सकता है ।४॥

द्वितीय श्रीलक्ष्मी इहा द्वितीयत्व विधेय ।
समासे गौण हैल शब्दार्थ गेल क्षय ॥५५
द्वितीय शब्द अविधेय पड़िल समासे ।
लक्ष्मीर समता अर्थ करिल बिनाशे ॥५६
अविमृष्ट--विधेयांशे एइ दोषेर नाम ।
आर एक दोष आछे शुन सावधान ॥५७
भवानीभर्त्तु शब्द दिले पाइया सन्तोष ।
विरुद्धमतिकृत नाम एइ महादोष ॥५८
भवानी शब्दे कहे महादेवेर गृहिणी ।
तार भर्त्ता कहिले द्वितीय भर्त्ता जानि ॥५९
शिवपत्नीभर्त्ता शब्द शुनिते विरुद्ध ।
विरुद्धमतिकृत शब्द, शास्त्र नहे शुद्ध ॥६०
ब्राह्मण-पत्नीर भर्त्तार हस्ते देह दान ।
शब्द शुनितेइ हय द्वितीय-भर्त्ता-ज्ञान ॥६१
विभवति क्रिया वाक्यसाङ्ग पुनः विशेषण ।
अद्भुतगुण एइ पुनरात्त--दूषण ॥६२
तिन पादे अनुप्रास देखि अनुपम ।
एक पादे नाहि एइ दोष भग्नक्रम ॥६३
यद्यपि एइ श्लोके आछे पञ्च अलङ्कार ।
एइ पञ्चदोषे श्लोक कैल छारखार ॥६४
दश अलङ्कारे यदि एक श्लोक हय ।
एक दोषे सब अलङ्कार हय क्षय ॥६५
सुन्दर शरीर यैछे भूषणे भूषित ।
एक श्वेतकुष्ठे यैछे करये विगीत ॥६६

तथाहि भरतमुनिवाक्यम्—

रसालङ्कारवत् काव्य दोषयुक् चेद्विभूषितम् ।
स्याद्वपुः सुन्दरमपि श्वित्रेणैकेन दुर्भगम् ॥५॥

टीका—रसालङ्कारवत् काव्यं, चेत् यदि तत् दोषयुक् भवति, तदा दूषितं स्यात, यथा वपुः शरीरं सुन्दरमपि एकेन श्वित्रेण कुष्ठेन दुर्भगं अवज्ञास्पदं स्यात् ॥५॥

भरत मुनि वाक्य इस प्रकार है—

रसालङ्कार युक्त का नाम ही काव्य है। शरीर जिस प्रकार सुन्दर होने पर भी एकमात्र श्वेत कुष्ठ रोग युक्त होने से अवज्ञास्पद होता है, उस प्रकार यह काव्य दोष युक्त होने से दूषित होता है।

पञ्चालङ्कारेर एबे शुनह विचार ।
दुइ शब्दालङ्कार तिन अर्थालङ्कार ॥६७
शब्दालङ्कारे तिनपादे आछे अनुप्रास ।
श्रीलक्ष्मी शब्दे पुनरुक्तवदाभास ॥६८
प्रथम चरणे पञ्च तकारेर पाँति ।
तृतीय चरणे हय पञ्च रेफ स्थिति ॥६९
चतुर्थ चरणे चारि भकार प्रकाश ।
अतएव शब्द--अलङ्कार अनुप्रास ॥७०

श्रीशब्दे लक्ष्मीशब्दे एक वस्तु उक्त ।
पुनरुक्तवदाभासे नहे पुनरुक्त ॥७१
श्रीयुक्त लक्ष्मी अर्थे अर्थेर विभेद ।
पुनरुक्तवदाभास शब्दालङ्कार भेद ॥७२
लक्ष्मीरिव अर्थालङ्कार उपमा प्रकाश ।
आर अर्थालङ्कार आछे नाम विरोधाभास ७३
गङ्गाते कमल जन्मे सवार सुवोध ।
कमले गङ्गार जन्म अत्यन्त विरोध ॥७४
जिहा विष्णु-पादपद्मे गङ्गार उनपत्ति ।
विरोधालङ्कारे इहा महा चमत्कृति ॥७५
ईश्वर अचिन्त्य शक्तेय गङ्गार प्रकाश ।
इहाते विरोध नाजि विरोध आभास ॥७६

तथाहि श्रीकृष्णचैतन्यपादोक्तः श्लोकः—

अम्बुजमम्बुनि जातं क्वचिदपि
न जातमम्बुजादम्बु ।
मुरभिदि तद्विपरीतं
पादाम्भोजान्महानदी जाता ॥६॥

टीका—अम्बुनि जले अम्बुजं जातं पद्मं जातं, न जातु कदाचित् अम्बुजात् पद्मात् अम्बु जातं । किन्तु मुरभिदि श्रीकृष्णे तद्विपरीतं, यतः तत्पदाम्भोजे चरणकमले महानदी जाता ॥६॥

श्रीकृष्णचैतन्य चरणोक्त श्लोक—

कमल सलिल से ही उत्पन्न होता है, कभी भी कमल से सलिल उत्पन्न नहीं होता है । किन्तु मुरारि कृष्ण में इसका विपरीत परिलक्षित हो रहा है, तदीय पाद पद्म से महानदी का उद्‌भव हुआ है ॥६॥

गङ्गार महत्त्व साध्य साधन ताहार ।
विष्णुपादोत्पत्ति अनुमान अलङ्कार ॥७७
स्थूल एइ पञ्च दोष पञ्च अलङ्कार ।
सूक्ष्म विचारिये यदि आछये अपार ॥७८
प्रतिभा कवित्व तोमार देवता प्रसादे ।
अविचार काव्ये अवश्य पड़े दोष वादे ॥७९
विचारि कवित्व कैले हय सुनिर्म्मल ।
सालङ्कार हैले अर्थ करे झलमल ॥८०
शुनिया प्रभुर व्याख्या दिग्विजयी विस्मित ।
मुखे ना निःसरे बाक्य प्रतिभा स्तम्भित ॥८१
कहिते चाहये किछु ना आइसे उत्तर ।
तबे मने विचारिये इहया फाँफर ॥८२
पड़ुया बालके कैल मोर बुद्धि लोप ।
जानि सरस्वती मोरे करियाछेन कोप ॥८३
ये व्याख्या करिल मनुष्येर नहे शक्ति ।
निमाइर मुखे रहि बोले सरस्वती ॥८४
एत भावि कहे शुन निमाइ पण्डित ।
तोमार व्याख्या शुनि आमि इहलाम विस्मित ८५
अलङ्कार नाहि पड़ नाहि शास्त्राभ्यास ।
केमने ए अर्थ तुमि करिले प्रकाश ॥८६
इहा शुनि महाप्रभु अति बड़ रङ्गी ।
ताहार हृदय जानि कहे करि भङ्गि ॥८७
शास्त्रेर विचार भाल मन्द नाहि जानि ।
सरस्वती ये बलाय कहि सेइ वाणी ॥८८
इहा शुनि दिग्विजयी करिल निश्चय ।
शिशु--द्वारे देवी मोरे कैल पराजय ॥८९
आजि तारे निवेदिव करि जप ध्यान ।
शिशुद्वारे कैल मोरे एत अपमान ॥९०
वस्तुतः सरस्वती अशुद्ध श्लोक कराइल ।
विचार समये ताँर बुद्धि आच्छादिल ॥९१
तबे शिष्यगण सबे हासिते लागिल ।
ता सवा निषेधि प्रभु कविके कहिल ॥९२

तुमि बड़ पण्डित महाकवि शिरोमणि ।
यार मुखे बाहिराय ऐछे वाक्यवाणी ॥९३
तोमार कवित्व येन गङ्गाजलधार ।
तोमार समान कवि कोथा नाहि आर ॥९४
भवभूति जयदेव आर कालिदास ।
ता सबार कवित्वे आछे दोषेर आभाष ॥९५
दोष गुण विचारे एइ अल्प करि मानि ।
कवित्व-करणे शक्ति ताहा से वाखानि ॥९६
शैशव चाञ्चल्य किछु ना लवे आमार ।
शिष्येर समान आमि ना इह तोमार ॥९७
आजि वासा याह कालि मिलिव आवार ।
शुनिव तोमार मुखे शास्त्रेर विचार ॥९८
एइमते निजघरे गेला दुइ जन ।
कवि रात्रे कैल सरस्वती--आराधन ॥९९
सरस्वती स्वप्ने तारे उपदेश कैल ।
साक्षात् ईश्वर करि प्रभुरे जानिल ॥१००
प्राते आसि प्रभु पदे लइला शरण ।
प्रभु कृपा कैल तार खण्डिल बन्धन ॥१०१
भाग्यवन्त दिग्विजयी सफल जीवन ।
विद्याबले पाइला महाप्रभुर चरण ॥१०२
ए लीला वर्णियाछेन वृन्दावनदास ।
ये किछु विशेष इहा करिल प्रकाश ॥१०३
चैतन्य गोँसाञिर लीला अमृतेर धार ।
सर्व्वेन्द्रिय तृप्त हय श्रवणे याहार ॥१०४
श्रीरूप रघुनाथ पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१०५

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे
कैशोर--लीलासूत्रवर्णनं नाम
षोड़शः परिच्छेदः ॥१६॥



❀ सप्तदश परिच्छेद ❀



तथाहि ग्रन्थकारस्य—

वन्दे स्वैराद्भुतेहं तं चैतन्यं यत्प्रसादतः ।
यवनाः सुमनायन्ते कृष्णनाम प्रजल्पकाः ॥१॥

टीका—तं चैतन्यं अहं वन्दे । किम्भूतं ?—स्वैराद्भुतेऽहं स्वैरं स्वच्छन्दं यथा स्यात्तथा अद्भुता इहा चेष्टा यस्य स तं । यत्प्रसादतः यस्य प्रसादेन यवनाः सुमनायन्ते सुमनाभवन्ति । कीदृशाः ?—कृष्णनामप्रजल्पकाः ॥१॥

जिनकी कृपा से यवन गण भी कृष्णनाम कीर्तन पूर्वक साधुवत् आचरण किये थे मैं उन इच्छामय अद्भुत चेष्टावत् श्रीचैतन्य देवकी वन्दना करता हूँ।

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
कैशोरलीलार सूत्र करिल गणन ।
यौवनलीलार सूत्र करि अनुक्रम ॥२

तथाहि ग्रन्थकारस्य—

विद्यासौन्दर्य्यसद्वेशसम्भोगनृत्यकीर्त्तनैः ।
प्रेमनामप्रदानैश्च गौरो दीव्यति यौवने ॥२॥

टीका—यौवने यौवनवयसि गौरो दीव्यति। किंकरणकैः ?—विद्या-सौन्दर्य्यसद्वेशसम्भोग-नृत्य-कीर्त्तनैः, प्रेमनामप्रदानैश्च ॥२॥

श्रीगौराङ्ग देव—यौवन काल में विद्या, सौन्दर्य, सद्वेश, सम्भोग नृत्य कीर्त्तन एवं प्रेम नाम प्रदान के द्वारा क्रीड़ा करते रहते हैं ॥२॥

यौवन प्रवेशे अङ्गेर अङ्ग विभूषण ।
दिव्यवस्त्र, दिव्यवेश, माल्यचन्दन ॥३

विद्यौद्धत्ये काहा केहो ना करे गणन ।
सकल पण्डित जिनि करे अध्यापन ॥४
वायुव्याधिछले करे प्रेम-परकाश ।
भक्तगण लैया कैल विविध विलास ॥५
तबेत करिल प्रभु गयाते गमन ।
ईश्वरपुरीर सङ्गे तथाइ मिलन ॥६
दीक्षा अनन्तरे कैल प्रेमपरकाश ।
देशे आगमन पुनः प्रेमेर विलासः ॥७
शचीके प्रेमदान तबे अद्वैतमिलन ।
अद्वैत पाइल विश्वरूप दरशन ॥८
प्रभुर अभिषेक तबे करिल श्रीवास ।
खाटे बसि प्रभु कैल ऐश्वर्य्यप्रकाश ॥९
तबे नित्यानन्द-स्वरूपेर आगमन ।
प्रभुके मिलिया पाइल षड़्भुज दर्शन ॥१०
प्रथमे षड़्भुज ताँरे देखाइल ईश्वर ।
शङ्ख-चक्र-गदा-पद्म-शार्ङ्ग-वेणुधर ॥११
तबे चतुर्भुज हैला तिन अङ्ग वक्र ।
दुइ हस्ते वेणु बाजाय दुइये शङ्ख चक्र ॥१२
तबेत द्विभुज केवल वंशीवदन ।
श्याम अङ्गे पीतवस्त्र व्रजेन्द्रनन्दन ॥१३
तबे नित्यानन्द गोँसाजिर व्यासपूजन ।
नित्यानन्दवेशे कैल मूषलधारण ॥१४
तबे शची देखिल रामकृष्ण दुइ भाइ ।
तबे निस्तारिल प्रभु जगाइ माधाइ ॥१५
तबे सप्तप्रहर प्रभु छिला भावावेशे ।
यथा तथा भक्तगण देखिल विशेषे ॥१६
बराह--आवेश हैला मुरारि भवने ।
तार स्कन्धे चड़ि प्रभु नाचिला अङ्गने ॥१७
तबे शुक्लाम्बरेर कैल तण्डुल भक्षण ।
हरेर्नाम श्लोकेर कैल अर्थ विवरण ॥१८

तथाहि वृहन्नारदीये—

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम् ।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा ।३

कलिकाल में केवल श्रीहरिनाम ही एकमात्र अवलम्बनीय है, इस को छोड़कर अपर आश्रय नहीं है। अर्थात् ज्ञानयोग, काम्यकर्मानुष्ठान, तप प्रभृति शुभ कर्म के द्वारा कलियुग में उस प्रकार भगवदुन्मुखता नहीं होती है, जिस प्रकार श्रीहरिनाम ग्रहण से होती हैं ॥३॥

कलिकाले नामरूपे कृष्ण अवतार ।
नाम हैते हय सर्व्वजगत निस्तार ॥१९
दार्ढ्य लागि हरेर्नाम उक्ति तिनबार ।
जड़ लोक बुझाइते पुनरेवकार ॥२०
केवल शब्द पुनरपि निश्चयकरण ।
ज्ञानयोग, कर्म्म, तप, आदि निवारण ॥२१
अन्यथा ये माने तार नाहिक निस्तार ।
नाइ नाइ नाइ एइ तिन एकवार ॥२२
तृण हैते नीच हैया सदा लबे नाम ।
आपनि निरभिमानी अन्ये दिबे मान ॥२३
तरुसम सहिष्णुता वैष्णव करिबे ।
ताड़न भर्त्सने कारे किछु ना बलिब ॥२४
काटिलेह तरु येन किछु ना बलय ।
शुकाइया मरे तबु जल ना मागय ॥२५
एइमत वैष्णव कारे किछु ना मागिव ।
अयाचित-वृत्ति किवा शाक फल खाइब ॥२६

तथाहि पद्यावल्यां श्रीमुखशिक्षाश्लोकः—

तृणादपि सुनीचेन तरोरिव सहिष्णुना ।
अमानिना मानदेन कीर्त्तनीयः सदा हरिः ॥४॥

टीका—अनेन जनेन सदा हरिः कीर्त्तनीयः। केन ?—तृणादपि सुनीचेन। पुनः किम्भूतेन ?—तरुरिव सहिष्णुना। पुनः किम्भूतेन ?—अमानिना अभिमानरहितेन। पुनः किम्भूतेन ? —मानदेन ॥४॥

श्रीहरिनाम ग्रहण में किस प्रकार व्यक्ति अधिकारी है, उसको कहते हैं। तृण की अपेक्षा नीच, अर्थात् नम्र, स्वयं योग्य होकर भी निरभिमानी, अपर को सम्मान प्रदाता, वृक्षवत् सहिष्णु एवं परोपकारी व्यक्ति ही निरन्तर हरिनाम कीर्त्तन के अधिकारी है।।४।।

ऊर्द्ध्वबाहु करि कहि शुन सर्व्वलोक।
नामसूत्रे गाँथि परकण्ठे एइ श्लोक ॥२७
प्रभुर आज्ञाय कर एइ श्लोक आचरण।
अवश्य पाइबे तबे श्रीकृष्णचरण ॥२८
तबे प्रभु श्रीवासेर गृहे निरन्तर।
रात्रे सङ्कीर्त्तन कैल एक वत्सर ॥२९
कपाट दिया कीर्त्तन करे परम आवेशे।
पाषण्डी हासिते आइसे ना पाय प्रवेशे ॥३०
कीर्त्तन शुनि बाहिरे तारा ज्वलि पुड़ि मरे।
श्रीवासेरे दुःख दिते नाना युक्ति करे ॥३१
एकदिन विप्र नाम गोपाल चापाल।
पाषण्डी प्रधान सेइ दुर्म्मुख वाचाल ॥३२
भवानीपूजार सब सामग्री लइया।
रात्रे श्रीवासेर द्वारे स्थान लेपाइया ॥३३
कलार पात उपरे थुइल उड़्फुल।
हरिद्रा, सिन्दूर रक्तचन्दन, तण्डुल ॥३४
मद्यभाण्ड पाशे धरि निज घरे गेला।
प्रातःकाले श्रीनिवास ताहात देखिला ॥३५
बड़ बड़ लोक सब आनिल डाकिया।
सबारे कहे श्रीवास हासिया हासिया ॥३६

नित्य रात्रे करि आमि भवानीपूजन।
आमार महिमा देख ब्राह्मण सज्जन ॥३
देखि सब शिष्ट लोक करे हाहाकार।
ऐछे कर्म्म एथा कैल कोन दुराचार ॥३
हाड़िके आनिया सब दूर कराइल।
गङ्गाजल गोमये सेइ स्थान लेपाइल ॥३
तिन दिन वइ, सेइ गोपाल चापाल।
सर्व्वाङ्गे हइल कुष्ठ वहे रक्तधार ॥४
सर्व्वाङ्गे वेड़िल कीड़ा काटे निरन्तर।
असह्य वेदना दुःखे ज्वलये अन्तर ॥४
गङ्गाघाटे वृक्षतले रहेत वसिया।
एक दिन बले किछु प्रभुके देखिया ॥४
ग्राम सम्बन्धे आमि हइ तोमार मातुल।
भागिना मुञि कुष्ठरोगे हञाछो व्याकुल ॥४
लोक सब उद्धारिते तोमार अवतार।
मुञि बड़ दुःखी मोरे करह उद्धार ॥४
एत शुनि महाप्रभु हैला क्रोधमन।
क्रोधावेशे कहे तारे तर्ज्जन वचन ॥४
आरे पापी भक्तद्वेषी तोरे ना उद्धारिमु।
कोटिजन्म एइ मत कीड़ा खाओयाइमु ॥४
श्रीवासेरे कराइलि भवानीपूजन।
कोटिजन्म हैवे तोर रौरवे पतन ॥४
पाषण्डी संहारिते मोर एइ अवतार।
पाषण्डी संहारि करिमु भक्तिर प्रचार ॥४
एत बलि गेला प्रभु करिते गङ्गास्नान।
सेइ पापीर दुःखभोगे ना याय पराण ॥४
सन्न्यास करि प्रभु यदि नीलाचले गेला।
तथा हैते यबे कुलिया ग्रामेते आइला ॥५

तबे सेइ पापी प्रभुर लइल शरण ।
हितोपदेश कैल प्रभु हञा सकरुण ॥५१
श्रीवास पण्डित स्थाने आछे अपराध ।
ताँहा याह तिँहो यदि करेन प्रसाद ॥५२
तबे तोर हबे एइ पाप विमोचन ।
यदि पुनः ऐछे नाहि कर आचरण ॥५३
तबे विप्र लइल श्रीवासेर शरण ।
ताँहार कृपाय पाप हैल विमोचन ॥५४
आर एक विप्र आइल कीर्त्तन देखिते ।
द्वारे कपाट ना पाइल भितरे याइते ॥५५
फिरि गेला घरे विप्र मने दुःख पाञा ।
आर दिन प्रभुरे कहे गङ्गाघाटे याञा ॥५६
शापिब तोमारे आमि पाञा मनोदुःख ।
पैता छिण्डिया शापे प्रचण्ड दुर्म्मुख ॥५७
सब संसार सुख तोमार हउक नाश ।
शाप शुनि प्रभुर चित्ते हइल उल्लास ॥५८
प्रभुर शापवार्त्ता येबा शुने श्रद्धावान् ।
ब्रह्मशाप हैते तार हय परित्राण ॥५९
मुकुन्द दत्तेरे कैल दण्ड परसाद ।
खण्डिल ताहार चित्ते सब अवसाद ॥६०
आचार्य्य गोँसाञिरे प्रभु करे गुरुभक्ति ।
इहाते आचार्य्य बड़ हय दुःखमति ॥६१
भङ्गी करि ज्ञानमार्ग करिल व्याख्यान ।
क्रोधावेशे प्रभु तारे कैल अवज्ञान ॥६२
तबे आचार्य्येर मने आनन्द हइल ।
लज्जित हइया प्रभु प्रसाद करिल ॥६३
मुरारि गुप्तेर मुखे शुनि राम-गुणग्राम ।
ललाटे लिखिल तार रामदास नाम ॥६४
श्रीधरेर लौहपात्रे कैल जलपान ।
समस्त भक्तेरे दिल इष्ट वरदान ॥६५
हरिदास ठाकुरेरे करिल प्रसाद ।
आचार्य्य स्थाने मातार खण्डाइल अपराध ।६६
भक्तगणे प्रभु नाम-महिमा कहिल ।
शुनि एक पड़ुया ताहा अर्थवाद कैल ॥६७
नामे स्तुतिवाद शुनि प्रभुर हैल दुःख ।
सबे निषेधिल इहार ना देखिह मुख ॥६८
सगणे सचेले गिया कैल गङ्गास्नान ।
भक्तिर महिमा ताँहा करिल व्याख्यान ॥६९
ज्ञान कर्म्म योग धर्म्मे नहे कृष्णवश ।
कृष्णवश हेतु एक प्रेमभक्तिरस ॥७०

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।१४।२०)—

न साधयति मां योगो न साङ्ख्यं धर्म्म उद्धव ।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्ज्जिता ॥५

टीका—हे उद्धव ! यथा—ऊर्ज्जिता बलवती मम भक्तिः मां साधयति, तथा न साङ्ख्यं, तथा न धर्म्मः, तथा न स्वाध्यायः, न तपः, न त्यागः दानं ॥५

श्रीमद् भागवत में उक्त है—श्रीकृष्ण कहे थे—हे उद्धव ! मद्विषयक दृढ़ा भक्ति जिस प्रकार मुझ को वशीभूत करती है, उस प्रकार सांख्य भोग, काम्य कर्म्म, तपः दान प्रभृति सत् कर्म्म मुझ को वशीभूत करने में सक्षम नहीं होते हैं ॥५॥

मुरारिके कहे तुमि कृष्णवश कैला ।
शुनिया मुरारि श्लोक पड़िते लागिला ॥७१

तथाहि श्रीमद्भागवते (१० ८१।१६)—

क्वाहं दरिद्रः पापीयान् क्व कृष्णः श्रीनिकेतनः ।
ब्रह्मबन्धुरितिस्माहं बाहुभ्यां परिरम्भितः ॥६॥

टीका—क्व अहं दरिद्रः, न केवलं दरिद्रः पापीयानपि । पुनः किम्भूतः ?—ब्रह्मब धुः । कृष्णः

किम्भूतः ?—श्रीनिकेतनः । तथापि अस्माभिः बाहुभ्यां परिरम्भितः आलिङ्गितः ॥६॥

श्रीमद् भागवत में लिखित है –

मैं अत्यन्त दरिद्र एवं पापी हूँ, सुतरां मैं कहाँ एवं श्रीनिकेतन श्रीकृष्ण का महत्व कहाँ ? तथापि निज बाहु युगल के द्वारा उन्होंने मुझ को आलिङ्गन किया ॥६॥

एकदिन प्रभु सब भक्तगण लञा ।
संकीर्त्तन करि वैसे श्रमयुक्त हञा ॥७२
एक आम्रवीज प्रभु अङ्गने रोपिल ।
तत्क्षणे जन्मिल वृक्ष बाड़िते लागिल ॥७३
देखिते देखिते वृक्ष हइल फलित ।
पाकिल अनेक फल सबाइ विस्मित ॥७४
शत दुइ फल प्रभु शीघ्र पाड़ाइल ।
प्रक्षालन करि कृष्णे भोग लागाइल ॥७५
रक्त पीतवर्ण, नाहि अष्ठ्यंश वल्कल ।
एकजनेर पेट पूरे खेले एक फल ॥७६
देखिया सन्तुष्ट हैला शचीर नन्दन ।
सबाके खाओयाइल आगे करिया भक्षण ॥७७
अष्ठिवल्कल नाहि अमृत रसमय ।
एक फल खाइले रसे उदर पूरय ॥७८
एइमत प्रतिदिन फले बारमास ।
वैष्णवे खायेन फल प्रभुर उल्लास ॥७९
एइ सब लीला करे शचीर नन्दन ।
अन्यजन ना जानये विना भक्तगण ॥८०
एइ मत बारमास कीर्त्तन अवसाने ।
आम्रमहोत्सव प्रभु करे दिने दिने ॥८१
कीर्त्तन करिते प्रभु आइल मेघगण ।
आपन इच्छाय कैल मेघ निवारण ॥८२
एक दिन प्रभु श्रीवासेरे आज्ञा दिल ।
सहस्र नाम पड़ शुनिते मन हैल ॥८३
पड़िते आइल स्तवे नृसिंहेर नाम ।
शुनिया आविष्ट हैला प्रभु गौरधाम ॥८४
नृसिंह आवेशे प्रभु हाते गदा लैया ।
पाषण्डी मारिते याय नगरे धाइया ॥८५
नृसिंह आवेश देखि महातेजोमय ।
पथ छाड़ि भागे लोक पाञा महाभय ॥८६
लोकभय देखि प्रभुर बाह्य हइल ।
श्रीवासेर गृहे गिया गदा फेलाइल ॥८७
श्रीवासेरे कहे प्रभु करिया विषाद ।
लोकभय पाय मोर हैल अपराध ॥८८
श्रीवास बलेन ये तोमार नाम लय ।
तार कोटि अपराध सब हय क्षय ॥८९
अपराध नाहि कैले जीवेर निस्तार ।
ये तोमा देखिल तार छुटिल संसार ॥९०
एत बलि श्रीवास ताँर करिल सेवन ।
तुष्ट हञा प्रभु आइला आपन भवन ॥९१
आर दिन शिवभक्त शिवगुण गाय ।
प्रभुर अङ्गने नाचे डमरु बाजाय ॥९२
महेश आवेश हैला शचीर नन्दन ।
तार स्कन्धे चड़ि नृत्य कैल बहुक्षण ॥९३
आर दिन एक भिक्षुक आइला मागिते ।
प्रभुर नृत्य देखि नृत्य लागिला करिते ॥९४
प्रभुसङ्गे नृत्य करे परम उल्लासे ।
प्रभु तारे प्रेम दिल प्रेमरसे भासे ॥९५
आर दिने ज्योतिष एक सर्व्वज्ञ आइल ।
ताँहार सम्मान करि प्रभु प्रश्न कैल ॥९६
के आछिलाङ आमि पूर्व्वजन्मे कह गणि ।

गणिते लागिला सर्व्वज्ञ प्रभुर आज्ञा शुनि ॥९७
गणि ध्याने देखे सर्व्वज्ञ महाज्योतिर्म्मय ।
अनन्त वैकुण्ठ ब्रह्माण्ड सबार आश्रय ॥९८
परतत्त्व परब्रह्म परम ईश्वर ।
देखि प्रभुर मूर्त्ति सर्व्वज्ञ हइल फाँफर ॥९९
बलिते ना पारे किछु मौन धरिल ।
प्रभु पुनः प्रश्न कैल कहिते लागिल ॥१००
पूर्व्व जन्मे छिला तुमि जगत आश्रय ।
परिपूर्ण भगवान् सर्व्वैश्वर्य्यमय ॥१०१
पूर्व्वे यैछे छिला तुमि एवे सेइरूप ।
दुर्व्विज्ञेय नित्यानन्द तोमार स्वरूप ॥१०२
प्रभु हासि बले तुमि किछु ना जानिला ।
पूर्व्वे आमि आछिलाङ जातिते गोयाला ।१०३
गोपगृहे जन्म छिल गाभीर राखाल ।
सेइ पुण्ये हैला आमि ब्राह्मण छाओयाल ।१०४
सर्व्वज्ञ कहे ताहा आमि ध्याने देखिलाम ।
ताहाते ऐश्वर्य्य देखि फाँफर हइलाम ॥१०५
सेइरूपे एइरूपे देखि एकाकार ।
कभु भेद देखि एइ मायाते तोमार ॥१०६
ये हओ से हओ तोमारे नमस्कार ।
प्रभु तारे प्रेम दिया कैल पुरस्कार ॥१०७
एक दिन प्रभु विष्णुमण्डपे वसिया ।
मधु आन मधु आन बलेन डाकिया ॥१०८
नित्यानन्द गोसाञिर आवेश जानिल ।
गङ्गाजल पात्र आनि सम्मुखे धरिल ॥१०९
जलपान करि नाचे हइया विह्वल ।
यमुनाकर्षण लीला देखाय सकल ॥११०
मदमत्त गति बलदेव अनुकार ।
आचार्य्य-शेखर ताँरे देखे रामाकार ॥१११
बनमाली आचार्य्य देखे सोनार लाङ्गल ।
सबे मिलि नृत्य करे आवेशे विह्वल ॥११२
एइ मत नृत्य हइल चारि प्रहर ।
सन्ध्याय गङ्गास्नान करि सबे गेला घर ।११३
नागरिया लोके प्रभु यबे आज्ञा दिल ।
घरे घरे संकीर्त्तन करिते लागिल ॥११४
हरि हरये नमः कृष्ण यादवाय नमः ।
गोपाल गोविन्द राम श्रीमधुसूदन ॥११५
मृदङ्ग करताल संकीर्त्तन उच्चध्वनि ।
हरि हरिध्वनि विना आर नाहि शुनि ॥११६
शुनिया ये क्रुद्ध हैल सकल यवन ।
काजि पाशे आसि सबे कैल निवेदन ॥११७
क्रोधे सन्ध्याकाले काजि एक घरे आइल ।
मृदङ्ग भाङ्गिया लोके कहिते लागिल ॥११८
एत काल केह नाहि कैल हिन्दुयानि ।
एबे ये उद्यम चालाओ कोन बल जानि ॥११९
केह कीर्त्तन ना करिह सकल नगरे ।
आजि मुञि क्षमा करि याइतेछि घरे ॥१२०
आर यदि कीर्त्तन करिते लागि पाब ।
सर्व्वस्व दण्डिया तार जाति ये लइब ॥१२१
एत बलि काजि गेल, नगरिया लोक ।
प्रभु स्थाने निबेदिल पाञा बड़ शोक ॥१२२
प्रभु आज्ञा दिल याह करह कीर्त्तन ।
आमि संहारिब आजि सकल यवन ॥१२३
घरे गिया लोक सब करे सङ्कीर्त्तन ।
काजिर भये स्वच्छन्द नहे चमकित मन ॥१२४
ता सबार अन्तर्भय प्रभु मने जानि ।

कहिते लागिला लोके शीघ्र डाकि आनि ।१२५
नगरे नगरे आजि करिव कीर्त्तन ।
सन्ध्याकाले सबे कर नगर मण्डन ॥१२६
सन्धयाते दिउटी सबे ज्वाल घरे घरे ।
देखि कोन् काजि आसि मोरे माना करे १२७
एत कहि सन्धयाकाले चले गौरराय ।
कीर्त्तनेर कैल प्रभु तिन सम्प्रदाय ॥१२८
आगे सम्प्रदाये नृत्य करे हरिदास ।
मधये नाचेन आचार्य्य परम उल्लास ॥१२९

पाछे सम्प्रदाये नृत्य करे गौरचन्द्र ।
तार सङ्गे नाचि बुले प्रभु नित्यानन्द ॥१३०
वृन्दावन दास इहा चैतन्यमङ्गले ।
विस्तारि वर्णियाछेन प्रभु कृपाबले ॥१३१
एइ मत कीर्त्तन करि नगर भ्रमिला ।
भ्रमिते भ्रमिते काजिर बहिर्द्वारे गेला ॥१३२
तर्जे गर्जे नागरिया करे कोलाहल ।
गौरचन्द्र बले लोक प्रश्रय पागल ॥१३३
कीर्त्तन-ध्वनि शुनि काजि लुकाइल घरे ।
तर्ज्जनगर्ज्जन शुनि ना हय बाहिरे ॥१३४
उद्धतलोक भाङ्गे काजिर पुष्पबन ।
विस्तारि वर्णिला इहा दास वृन्दावन ॥१३५
तबे महाप्रभु ताँर द्वारेते बसिला ।
भव्यलोक पाठाइ काजिरे बोलाइला ॥१३६
दूरे हैते आइसे काजि माथा नोङाइया ।
काजिरे बसाइला प्रभु सम्मान करिया ॥१३७
प्रभु कहे आमि तोमार आइलाम अभ्यागत ।
आमा देखि लुकाइले ए धर्म्म केमत ॥१३८

काजि कहे शुनि तुमि आइस क्रुद्ध हैया ।
तोमा शान्त कराइते रहिनु लुकाइया ॥१३९
एबे तुमि शान्त हैले आमि मिलिलाम ।
भाग्य मोर तोमा हेन अतिथि पाइलाम ॥१४०
ग्रामसम्बन्धे चक्रवर्त्ती हय मोर चाचा ।
देह सम्बन्ध हैते ग्राम सम्बन्ध साचा ॥१४१
नीलाम्बर चक्रवर्त्ती हय तोमार नाना ।
से सम्बन्धे हओ तुमि आमार भागिना ॥१४२
भागिनार क्रोध मामा अवश्य सहय ।
मातुलेर अपराध भागिना ना लय ॥१४३
एइ मत दोँहे कथा हय ठारे ठारे ।
भितरेर अर्थ केह बुझिते ना पारे ॥१४४
प्रभु कहे प्रश्न लागि आइलाम तोमार स्थाने।
काजि कहे आज्ञा कर ये तोमार मने ॥१४५
प्रभु कहे गोदुग्ध खाओ गाभी तोमार माता।
वृष अन्न उपजाय ताते तेहोँ पिता ॥१४६
पिता माता मारि खाओ एबा कोन धर्म्म ।
कोन् बले कर तुमि एमत विकर्म्म ॥१४७
काजि कहे तोमार यैछे वेद पुराण ।
तैछे आमार शास्त्र किताब कोराण ॥१४८
सेइ शास्त्रे कहे प्रवृत्त निवृत्ति मार्ग भेद ।
निवृत्ति मार्गे जीवमात्र बधेर निषेध ॥१४९
प्रवृत्तिमार्गे गोबध करिते बिधि हय ।
शास्त्र आज्ञा बध कैले नाहि पाप भय ॥१५०
तोमार वेदेते आछे गोबधेर वाणी ।
अतएव गोबध करे बड़ बड़ मुनि ॥१५१
प्रभु कहे वेदे कहे गोबध निषेध ।
अतएव हिन्दुमात्रे ना करे गोबध ॥१५२

जीयाइते पारे यदि तबे मारे प्राणी ।
वेद पुराणे एइ आछे आज्ञावाणी ॥१५३
अतएव जरद्गव मारे मुनिगण ।
वेदमन्त्रे शीघ्र करे ताहार जीवन ॥१५४
जरद्गव हैना युवा हय आरवार ।
ताते ताँर बध नहे हय उपकार ॥१५५
कलिकाले तैछे शक्ति नाहिक ब्राह्मणे ।
अतएव गोबध केह ना करे एखाने ॥१५६
तथाहि ब्रह्मवैवर्त्तपुराणे कृष्णजन्मखण्डे (१८५।१८०)—

अश्वमेधं गवालम्भं सन्नयासं पलपैतृकम् ।
देवरेण सुतोत्पत्तिं कलौ पञ्च विवर्ज्जयेत् ॥७॥

टीका—कलौ कलिकाले पञ्च विवर्ज्जयेत् । पञ्चानां विवृत्तिः—अश्वमेध, गवालम्भं, सन्नयास, पलपैतृकं पलेन मांसेन श्राद्धं, देवरेण सुतोत्पत्ति ॥७

ब्रह्म वैवर्त्त पुराण में लिखित है—

कलिकाल में अश्वमेध यज्ञ, गवालम्भ, अर्थात् गोमेधयज्ञ, सन्यास ग्रहण, मांस के द्वारा पितृ श्राद्ध, एवं देवर से पुत्रोत्पादन—ये पाँच क्रिया वर्जन करे।७

तोमरा जीयाइते नार बध मात्र सार ।
नरक हइते तोमार नाहिक निस्तार ॥१५७
गरुर यतेक लोम तत सहस्र वत्सर ।
गोवधी रौरव मध्ये पचे निरन्तर ॥१५८
तोमा सबार शास्त्रकर्त्ता सेह भ्रान्त हैल ।
ना जानि शास्त्रेर मर्म्म ऐछे आज्ञा दिल ।१५९
शुनि स्तब्ध हैला काजि नाहि स्फुरे वाणी ।
विचारिया कहे काजि पराभव मानि ॥१६०
तुमि ये कहिले पण्डित सेइ सत्य हय ।
आधुनिक आमार शास्त्र विचारस्थ नय ।१६१
कल्पित आमार शास्त्र आमि सब जानि ।
जाति अनुरोधे तबु सेइ शास्त्र मानि ॥१६२
सहजे यवन शास्त्रे अदृढ़ विचार ।
हासि महाप्रभु तारे पुछे आरवार ॥१६३
आर एक प्रश्न करि शुन तुमि मामा ।
यथार्थ कहिबे छले ना वञ्चिबे आमा ॥१६४
तोमार नगरे हय सदा संकीर्त्तन ।
वाद्यगीत कोलाहल सङ्गीत नर्त्तन ॥१६५
तुमि काजि हिन्दुधर्म्म बाधे अधिकारी ।
एबे ये ना कर माना बुझिते ना पारि ॥१६६
काजि बले सबे तोमा बले गौरहरि ।
सेइ नामे आमि तोमा सम्बोधन करि ॥१६७
शुन गौरहरि एइ प्रश्नेर कारण ।
निभृत हओ यदि तबे करि निवेदन ॥१६८
प्रभु कहे एलोक आमार अन्तरङ्ग हय ।
स्फुट करि कह तुमि नाहि किछु भय ॥१६९
काजि कहे यबे आमि हिन्दुर घर गिया ।
कीर्त्तन करिल माना मृदङ्ग भाँगिया ॥१७०
सेइ रात्रे एक सिंह महा भयङ्कर ।
नरदेह सिंहमुख, गर्जये विस्तर ॥१७१
शयने आमार उपर लाफ दिया चड़ि ।
अट्ट अट्ट हासे करे दन्त कड़मड़ि ॥१७२॥
मोर बुके नख दिया घोर स्वरे बले ।
फाड़िब तोमार बुक मृदङ्ग बदले ॥१७३
मोर कीर्त्तन माना करिस् करिमु तोरे क्षय ।
आँखि मुदि काँपि आमि पाञा बड़ भय १७४
भीत देखि सिंह बले हइया सदय ।
तोरे शिक्षा दिते कैल तोर पराजय ॥१७५
से दिने बहुत नाहि कैल उत्पात ।
तेजि क्षमा करिया ना कैनु प्राणाघात ॥१७६

ऐछे यदि पुनः कर तबे ना सहिमु ।
सबंशे तोमारे मारि यवने मारिमु ॥१७७
एत कहि सिंह गेला मोर हैल भय ।
एइ देख नखचिह्न आमार हृदय ॥१७८
एत बलि काजि निज बुक देखाइल ।
शुनि देखि सब लोक आश्चर्य्य मानिल ॥१७९
काजि कहे इहा आमि कारे ना कहिल ।
सेइ दिन आमार एक पेयादा आइल ॥१८०
आसि कहे गेलु मुञि कीर्त्तन बाधिते ।
अग्नि उल्का मोर मुखे लागे आचम्बिते १८१
पुड़िल सकल दाड़ि मुखे हैल व्रण ।
येइ पेयादा याय तार एइ विवरण ॥१८२
ताहा देखि बलि आमि महाभय पाञा ।
कीर्त्तन ना वर्जिह थाक घरेते वसिञा ।१८३
ताहाते नगरे हइबे स्वच्छन्दे कीर्त्तन ।
शुनि सब म्लेच्छ आसि कैल निवेदन ॥१८४
नगरे हिन्दुर धर्म्म बाड़िल अपार ।
हरिध्वनि विना मुखे ना शुनिये आर ॥१८५
आर म्लेच्छ कहे हिन्दु कृष्ण कृष्ण बुलि ।
हासे कान्दे नाचे गाय गड़ि याय धूलि ॥१८६
हरि हरि कहि हिन्दु करे कोलाहल ।
पातसा शुनिले तोमाय करिबेक फल ॥१८७
तबे सेइ यवनेरे आमित पुछिल ।
हिन्दु हरि बले तार स्वभाव जानिल ॥१८८
तुमित यवन हैया केने अनुक्षण ।
हिन्दु देवतार नाम लओ कि कारण ॥१८९
म्लेच्छ कहे आमि हिन्दुके करि परिहास ।
केह केह कृष्णदास केह रामदास ॥१९०

केह हरिदास सदा बले हरि हरि ।
जानि कार घरे धन करिवेक चुरि ॥१
सेइ हैते जिह्वा मोर बले हरि हरि ।
इच्छा नाहि तबु बले कि उपाय करि ॥१
आर म्लेच्छ कहे शुन आमि एइ मते ।
हिन्दुके मस्करि कैल सेइ दिन हैते ॥१
जिह्वा कृष्णनाम करे ना माने वर्ज्जन ।
ना जानि मन्त्रौषधि करे हिन्दुगण ॥१
एत शुनि ता सबारे घरे पाठाइल ।
हेनकाले पाषण्डी हिन्दु पाँच सात आइल ।
आसि कहे हिन्दु धर्म्म भासाइल निमाइ
ये कीर्त्तन प्रवर्त्ताइल कभु शुनि नाहि ॥१
मङ्गलचण्डी विषहरी करि जागरण ।
ताते नृत्य-गीत-वाद्य योग्य आचरण ॥१
पूर्व्वे भाल छिल एइ निमाइ पण्डित ।
गया हैते आसिया चालाय विपरीत ॥१
उच्च करि गाय गीते देय करतालि ।
मृदङ्ग करताल शब्दे कर्णे लागे तालि ॥१
ना जानि कि खाञा मत्त हैया नाचे गाय ।
हासे कान्दे पड़े उठे गड़ागड़ि याय ॥२०
नगरियाके पागल कैल सदा कीर्त्तने ।
रात्रे निद्रा नाहि याइ करि जागरणे ॥२०
निमाइ नाम छाड़ि एबे बलाय गौरहरि ।
हिन्दुधर्म्म नष्ट कैल पाषण्ड सञ्चारि ॥२
कृष्णेर कीर्त्तन करे नीच बार बार ।
एइ पापे नवद्वीप हइबे उजाड़ ॥२०
हिन्दुशास्त्रे ईश्वर नाम महामन्त्र जानि ।
सर्व्वलोक शुनिले मन्त्रेर वीर्य्य हय हानि २

ग्रामेर ठाकुर तुमि सबे तोमार जन ।
निमाइ बोलाञा तारे करह वर्ज्जन ॥२०५
तबे आमि प्रीतिवाक्ये कहिल सबारे ।
सबे घर याह आमि निषेधिब तारे ॥२०६
हिन्दुर ईश्वर बड़ येइ नारायण ।
सेइ तुमि हओ मोर हेन लय मन ॥२०७
एत शुनि महाप्रभु हासिया हासिया ।
कहिते लागिल किछु काजिरे छुँइया ॥२०८
तोमार मुखे कृष्ण नाम ए बड़ विचित्र ।
पापक्षय गेल हैला परम पवित्र ॥२०९
हरि कृष्ण नारायण लैले तिन नाम ।
बड़ भाग्यवान् तुमि महापुण्यवान् ॥२१०
एत शुनि काजिर दुइ चक्षे पड़े पानि ।
प्रभुर चरण छुँइ कहे मिष्ट वाणी ॥२११
तोमार प्रसादे मोर घुचिल कुमति ।
एइ कृपा कर ये तोमाते रहे भक्ति ॥२१२
प्रभु कहे एक दान मागिये तोमाय ।
कीर्त्तनवाद यैछे ना हय नदीयाय ॥२१३
काजि कहे मोर वंशे यत उपजिबे ।
ताहाके तालाक दिब कीर्त्तन ना बाधिबे ॥२१४
शुनि प्रभु हरि बलि उठिल आपनि ।
उठिल वैष्णव सब करि हरिध्वनि ॥२१५
कीर्त्तन करिते प्रभु करिला गमन ।
सङ्गे चलि आइसे काजि उल्लासित मन २१६
काजिरे विदाय दिल शचीर नन्दन ।
नाचिते नाचिते आइला आपन भवन ॥२१७
एइ मत काजिरे प्रभु करिला प्रसाद ।
इहा येइ शुने तार खण्डे अपराध ॥२१८

एकदिन श्रीवासेर मन्दिरे गोँसाइ ।
नित्यानन्द सङ्गे नृत्य करे दुइ भाइ ॥२१९
श्रीवास पुत्रेर ताहा हैल परलोक ।
तबु श्रीवासेर चित्ते ना जन्मिल शोक ॥२२०
मृत बालक मुखे कैल ज्ञानेर कथन ।
आपने दुइ भाइ हैला श्रीवास नन्दन ॥२२१
तबेत करिल सब भक्ते वरदान ।
उच्छिष्टे नारायणीर करिल सम्मान ।२२२
श्रीवासेर वस्त्र सिये दरजि यवन ।
निजरूप प्रभु तारे कराइल दर्शन ॥२२३
देखिनु देखिनु बलि हइल पागल ।
प्रेमे नृत्य करे हैल वैष्णवे आगल ॥२२४
आवेशे श्रीवासे प्रभु वंशीका मागिल ।
श्रीवास कहे गोपीगण वंशी हरि निल ॥२२५
शुनि प्रभु बल बल कहेन आवेशे ।
श्रीवास वर्णेन वृन्दावन लीला रासे ॥२२६
प्रथमे श्रीवृन्दावन माधुर्य्य वर्णिल ।
शुनिया प्रभुर चित्ते आनन्द बाड़िल ॥२२७
तबे बल बल प्रभु बले बार बार ।
पुनः पुनः कहे श्रीबास करिया विस्तार ॥२२८
वंशीवाद्ये गोपीगणेर करे आकर्षण ।
ता सबार सङ्गे यैछे वनविहरण ॥२२९
ताहि मध्ये छय ऋतु लीलार वर्णन ।
मधुपान रासोत्सव जलकेलि कथन ॥२३०
बल बल बले प्रभु शुनिते उल्लास ।
श्रीवास कहेन तबे रासेर विलास ॥२३१
कहिते शुनिते ऐछे प्रातःकाल हैल ।
प्रभु श्रीवासेरे तुष्टे आलिङ्गन कैल ॥२३२

तबे आचार्य्येर घरे कैल कृष्णलीला ।
रुक्मिण्यादि रूप प्रभु आपने हइला ॥२३३
कभु दुर्गा कभु लक्ष्मी कभु वा चिच्छक्ति ।
खाटे वसि भक्तगणे दिला प्रेमभक्ति ॥२३४
एकदिन महाप्रभुर नृत्य अवसाने ।
एक ब्राह्मणी आसि धरे प्रभुर चरणे ॥२३५
चरणेर धूलि सेइ लय बार बार ।
देखिया प्रभुर दुःख हइल अपार ॥२३६
सेइ क्षणे धाञा प्रभु गङ्गाते पड़िला ।
नित्यानन्द हरिदास धरि उठाइला ॥२३७
विजय-आचार्य्य गृहे से रात्रि रहिला ।
प्रातःकाले भक्त सब घरे लैया गेला ॥२३८
एकदिन गोपीभावे गृहेते वसिया ।
गोपी गोपी नाम लय विषण्ण हइया ॥२३९
एक पड़ुया आइल प्रभुके देखिते ।
गोपी गोपी नाम शुनि लागिल कहिते ॥२४०
कृष्णनाम ना लआे केने कृष्ण नाम धन्य ।
गोपी गोपी बलिले वा किवा हवे पुण्य ॥२४१
शुनि प्रभु क्रोध करे कृष्णे दोषोद्गार ।
ठेङ्गा लैया उठिला पड़ुया मारिबार ॥२४२
भये पालाय पड़ुया पाछे प्रभु धाय ।
आस्ते आस्ते भक्तगण प्रभु पाछे याय ॥२४३
प्रभुके शान्त करि आनिल निज घरे ।
पड़ुया पालाये गेल पड़ुया सभारे ॥२४४
पड़ुया सहस्र याहा पड़े एक ठाञि ।
प्रभुर वृत्तान्त द्विज कहे ताहा याइ ॥२४५
शुनि क्रुद्ध हैल सब पड़ुयार गण ।
सबे मेलि तबे करे प्रभुर निन्दन ॥२४६

सब देश भ्रष्ट कैल एकला निमाइ ।
ब्राह्मण मारिते याय धर्म्मभय नाञि ॥
पुनः यदि ऐछे करे मारिव ताहारे ।
कोन् वा मानुष हय कि करिते पारे ॥
प्रभुर निन्दाय सबार बुद्धि हैल नाश ।
सुपठित विद्या कारो ना हय प्रकाश ॥
तथापि दाम्भिक पड़ुया नम्र नाहि हय ।
यथा तथा प्रभुर निन्दा हासि से करय ॥
सर्व्वज्ञ गोसाञि जानि ता सबार दुर्गति ।
घरे वसि चिन्ते ता सबार अव्याहति ॥
यत अध्यापक आर तार शिष्यगण ।
धर्म्मी कर्म्मी तपोनिष्ठ निन्दुक दुर्जन ॥
एइ सब मोर निन्दा अपराध हैते ।
आमि लोयाइले भक्ति ना पारे लइते ॥
निस्तारिते आइलाम आमि हैल विपरीत ।
ए सब दुर्जनेर कैछे हइबेक हित ॥
आमाके प्रणति करे हय पापक्षय ।
तबे इहा सभारे से भक्ति लभ्य हय ॥
मोरे निन्दा करे ये ना करे नमस्कार ।
एसब जीवेर अवश्य करिव उद्धार ॥
अतएव अवश्य आमि सन्न्यास करिव ।
सन्न्यासीर बुद्धेय मोरे प्रणत हइव ॥
प्रणतिते हवे इहार अपराध क्षय ।
निर्म्मल हृदये भक्ति करिव उदय ॥
ए सब पाषण्डीर तबे हइवे निस्तार ।
आर कोन उपाय नाहि एइ युक्ति सार ॥
एइ दृढ़ युक्ति करि प्रभु आछे घरे ।
केशव भारती आइला नदीया नगरे ॥

प्रभु ताँरे नमस्करि कैल निमन्त्रण ।
भिक्षा कराइया किछु कैल निवेदन ॥२६१
तुमि हओ ईश्वर साक्षात् नारायण ।
कृपा करि कर मोर संसार मोचन ॥२६२
भारती कहेन ईश्वर तुमि अन्तर्यामी ।
येइ कह से करिव स्वतन्त्र नाहि आमि ॥२६३
एत बलि भारती गोँसाञि काटोयाते गेला ।
महाप्रभु ताहा याइ सन्न्यास करिला ॥२६४
सङ्गे नित्यानन्द चन्द्रशेखर आचार्य्य ।
मुकुन्द दत्त एइ तिन कैल सर्व्वकार्य्य ॥२६५
एइ आदि लीलार कैल सूत्र गणन ।
विस्तारि वर्णियाछेन दास वृन्दावन ॥२६६
यशोदानन्दन हैल शचीर नन्दन ।
चतुर्व्विध भक्तभाव करे आस्वादन ॥२६७
स्वमाधुर्य्य राधाप्रेमरस आस्वादिते ।
राधाभाव अङ्गी करियाछे भालमते ॥२६८
गोपीभाव याते प्रभु धरियाछे एकान्त ।
व्रजेन्द्रनन्दने माने आपनार कान्त ॥२६९
गोपिकाभावेर एइ सुदृढ़ निश्चय ।
व्रजेन्द्रनन्दन विना अन्यत्र ना हय ॥२७०
श्यामसुन्दर पिञ्छचूड़ा गुञ्जा विभूषण ।
गोपवेश त्रिभङ्गिम मुरलीवदन ॥२७१
इहा विना कृष्ण यदि हय अन्याकार ।
गोपिकार भाव ना याय निकट ताहार ।२७२

तथाहि ललितमाधवे (६।१४)

गोपीनां पशुपेन्द्रनन्पनजुषो भावस्य कस्तां कृति,
विज्ञातुं क्षमते दुरूहपदवीसञ्चारिनः प्रक्रियाम् ।
आविष्कुर्व्वति वैष्णवीमपि तनुं तस्मिन् भुजैर्जिष्णुभि-
र्यासां हन्त ! चतुर्भिरद्भुतरुचिं रागोदयः कुञ्चति ।८

टीका--गोपीनां भावस्य प्रक्रियां प्रकारं ज्ञातुं बोद्धुं कः कृती क्षमते ? किम्भूतस्य ?--दुरूहपदवी-सञ्चारिणः दुरूहायां पदव्यां सञ्चारिणः । पुनः कथम्भूतस्य ?--पशुपेन्द्रनन्दनजुषः । यद्वा पशुपेन्द्रनन्दने जुषः प्रीतिस्तद्रूपस्य, यतस्तस्मिन् पशुपेन्द्रनन्दनेन ताः परिहसितुं जिष्णुभिर्व्विराजमानैश्चतुर्भिर्भुजैरूप-लक्षितामद्भुतरुचिं विचित्रशोभामयीमपि तनुं वैकुण्ठनाथमूर्त्तिमपि आविष्कुर्व्वति सति तस्मिन् विषये यासां रागोदयः कुञ्चति ॥८॥

व्रजाङ्गना गण के श्रीकृष्ण के प्रति जो निष्ठा है, उसका वर्णन कौन कर सकते हैं, एकदिन श्रीकृष्ण वसन्त कालीन रास लीला के समय सहसा अन्तर्द्धान होकर कुञ्ज के मध्य में चतुर्भुज मूर्त्ति धारण कर विराजित हुये थे। गोपीगण अन्वेषण करते करते उस मूर्त्ति को कुञ्ज मध्य में देखकर प्रणति पूर्वक वहाँ से चली गईं। अर्थात् श्रीकृष्ण मूर्त्ति भिन्न अपर मूर्त्ति में उन सब का आकर्षण नहीं है ॥८॥

वसन्तकाले रासलीला करे गोवर्द्धने ।
अन्तर्द्धान कैल सङ्केत करि राधासने ॥२७३
निभृत निकुञ्जे बसि देखे राधा वाट ।
अन्वेषिते आइला ताहा गोपिकार ठाट ॥२७४
दूर हैते कृष्णे देखि कहे गोपीगण ।
एइ देख कुञ्जेर भितर व्रजेन्द्रनन्दन ॥२७५
गोपीगणे देखि कृष्णेर हइल साध्वस ।
लुकाइते नारिला भये हइला विवश ॥२७६
चतुर्भुज मूर्त्ति धरि आछे स्तब्ध हैया ।
कृष्णे देखि गोपी कहे निकटे आसिया ॥२७७
इँहो कृष्ण नहे हये नारायणमूर्त्ति ।
एत बलि ताँरे सबे करे नति स्तुति ॥२७८
नमो नारायण देव करह प्रसाद ।
कृष्ण सङ्ग देह मोरे खण्डाह विषाद ॥२७९

एत बलि नमस्करि गेला गोपीगण ।
हेनकाले राधा आसि दिला दरशन ॥२८०
राधा देखि कृष्ण तारे हास्य करिते ।
सेइ चतुर्भुज मूर्त्ति चाहेन राखिते ॥२८१
लुकाइल दुइ हात राधार अग्रेते ।
बहु यत्न कैल कृष्ण नारिल राखिते ॥२८२
राधार विशुद्ध भावेर अचिन्त्य प्रभाव ।
ये कृष्णेरे कराइल द्विभुज स्वभाव ॥२८३

तथाहि उज्जलनीलमणौ नायिकाभेदे (६।६)

रासारम्भविधौ निलीयवसता कुञ्जे मृगाक्षीगणैः,
दृष्टं गोपयितुं स्वमुद्धुरधिया या सुष्ठु सन्दर्शिता ।
राधायाः प्रणयस्य हन्त ! महिमा यस्य श्रिया रक्षितुं
सा शक्या प्रभविष्णुनापि हरिणा नासीच्चतुर्ब्बाहुता ।९

टीका—राधायाः प्रणयस्य महिमा हन्त अद्भुतः, यस्य प्रभावेण हरिणाप्र भविष्णुनापि सा चतुर्ब्बाहुता वैष्णवीं तनुं रक्षितुं शक्या नासीत् माभूत् । किम्भूता ?--हरिणा सुष्ठु सन्दर्शिता सम्यक् प्रकारेण दर्शिता । हरिणा किम्भूतेन ?—रासारम्भविधौ राधाभिसाराय सङ्केतं कृत्वा दृष्ट दर्शनं गोपयितुं कुञ्जे निलीय वसता । पुनः किम्भूतेन ?.--समुद्धुरधिया ।।९।।

उज्ज्वल नीलमणि ग्रन्थ के नायिका भेद प्रकरण में उक्त है—एकदा रास लीला आरम्भ होने पर श्रीकृष्ण कुन्जमें छिप कर बैठ गये थे । हरिण नयना गोपी गण उनको ढ़ूँढ़ने लगीं, आत्म गोपन करने के निमित्त कृष्ण चतुर्भुज मूर्त्ति धारण किये थे, अन्वेषण परायणा गोपी गण चले जाने के पश्चात् वहाँ राधा का आगमन होने से सर्व शक्तिमान् विष्णु होकर भी उस चतुर्भुज मूर्त्ति में रहना उनको असम्भव हो गया, एवं पूर्ववत् द्विभुज मुरली मनोहर गोपेन्द्रनन्दन रूप में अवस्थित हो गये । श्रीराधा प्रेम की महिमा ही इस प्रकार है ॥९॥

सेइ व्रजेश्वरी इहा शचीदेवी माता ।
सेइ व्रजेश्वर इहा जगन्नाथ पिता ॥२८४
सेइ नन्दसुत इहा चैतन्य गोँसाञि ।
सेइ बलदेव इहा नित्यानन्द भाइ ॥२८५
वात्सल्य-सख्य-दास्य तिन भावमय ।
सेइ नित्यानन्द कृष्णचैतन्य सहाय ॥२८६
प्रेमभक्ति दिया तिँहो भासाल जगते ।
ताँहार चरित्र लोक ना पारे बुझिते ॥२८७
अद्वैत आचार्य्य गोँसाञि भक्त अवतार ।
कृष्ण अवतारि कैल भक्तिर प्रचार ॥२८८
सख्य--दास्य दुइ भाव सहज ताँहार ।
कभु प्रभु करेन ताँरे गुरु व्यवहार ॥२८९
श्रीवासादि यत महाप्रभुर भक्तगण ।
निज निज भावे करेन चैतन्य सेवन ॥२९०
पण्डित गोँसाञि आदि यार येइ रस ।
सेइ सेइ रसे प्रभु हन ताँर बश ॥२९१
तिहोँ श्याम वंशीमुख गोपविलासी ।
इहोँ गौर कभु द्विज कभुत सन्नचासी ॥२९२
अतएव आपने प्रभु गोपीभाव धरि ।
व्रजेन्द्रनन्दने कहे प्राणनाथ करि ॥२९३
तेँह कृष्ण तेँह गोपी परम विरोध ।
अचिन्त्य चरित्र प्रभुर अति सुदुर्ब्बोध ॥२९४
इथे तर्क करि केह ना कर संशय ।
कृष्णेर अचिन्त्य शक्ति एइमत हय ॥२९५
अचिन्त्य अद्भुत कृष्णचैतन्य विहार ।
चित्रभाव चित्रगुण चित्र व्यवहार ॥२९६
तर्के इहा नाहि माने येइ दुराचार ।
कुम्भीपाके पचे तार नाहिक निस्तार ॥२९७

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे स्थायि-
भावलहर्य्याम् एकपञ्चाशदङ्कधृत उद्यम पर्व्वणि।
अचिन्त्याः खलु ये भावा न तांस्तर्केण योजयेत्।
प्रकृतिभ्यः परं यच्च तदचिन्त्यस्य लक्षणम् ॥१०

टीका—अचिन्त्याः खलु मे भावान् न तर्केण योजयेत्। प्रकृतिभ्या परं यत् तत् अचिन्त्यस्य लक्षणं स्यात् ॥१०॥

भक्ति रसामृत सिन्धु ग्रन्थ के दक्षिण विभाग में उक्त है—जो सब पदार्थ मानवीय बुद्धि विचार के अतीत हैं, उन सब को प्राकृत वस्तु विचार के समान केवल बुद्धि के द्वारा समझने का प्रयत्न करना नहीं चाहिये, किन्तु शास्त्रीय वचनों के द्वारा ही विचार पूर्वक ग्रहण करना चाहिये। प्राकृतिक पदार्थ से भिन्न पदार्थ को अचिन्त्य कहते हैं ॥१०॥

अद्भुत चैतन्यलीलार याहार विश्वास।
सेइ जन याय चैतन्येर पद पाश ॥२९८
प्रसङ्गे कहिल एइ सिद्धान्तेर सार।
इहा येइ शुने शुद्ध भक्ति हय तार ॥२९९
लिखित ग्रन्थेर यदि करि अनुवाद।
तबे से ग्रन्थेर अर्थ पाइया आस्वाद ॥३००
देखि ग्रन्थे भागवते व्यासेर आचार।
कथा कहि अनुवाद कहे बार बार ॥३०१
ताते आदिलीलार करि परिच्छेद गणन।
प्रथम परिच्छेदे कैल मङ्गलाचरण ॥३०२
द्वितीय परिच्छेदे चैतन्यतत्त्व निरूपण।
स्वयं भगवान् येइ व्रजेन्द्रनन्दन ॥३०३
तिँहत चैतन्य कृष्ण शचीर नन्दन।
तृतीय परिच्छेदे जन्मेर सामान्य कारण ॥३०४
तहि मध्ये प्रेमदान विशेष कारण।
युगधर्म्म कृष्णनाम प्रेम प्रचारण ॥३०५
चतुर्थे कहिल जन्मेर मूल प्रयोजन।
स्वमाधुर्य्य प्रेमानन्द रस आस्वादन ॥३०६
पञ्चमे श्रीनित्यानन्द तत्त्व निरूपण।
नित्यानन्द हैला राम रोहिणी नन्दन ॥३०७
षष्ठ परिच्छेदे अद्वैत तत्त्वेर विचार।
अद्वैत आचार्य्य महाविष्णु अवतार ॥३०८
सप्तम परिच्छेदे पञ्चतत्त्वेर आख्यान।
पञ्चतत्त्व मिलि यैछे कैल प्रेमदान ॥३०९
अष्टमेते चैतन्य लीला वर्णन कारण।
एक कृष्णनामेर महिमा कथन ॥३१०
नवमेते भक्तिकल्प वृक्ष विवरण।
श्रीचैतन्यमाली कैल वृक्ष आरोपण ॥३११
दशमे मूलस्कन्धेर शाखादि गणिल।
सबशाखागण यैछे फल बिलाइल ॥३१२
एकादशे नित्यानन्दशाखा विवरण।
द्वादशे अद्वैतादिर शाखार वर्णन ॥३१३
त्रयोदशे महाप्रभुर जन्म विवरण।
कृष्णनाम सह यैछे प्रभुर जनम ॥३१४
चतुर्द्दशे बाल्यलीलार किछु विवरण।
पञ्चदशे पौगण्डलीला संक्षेपे कथन ॥३१५
षोड़श परिच्छेदे कैशोर लीलार उद्देश।
सप्तदशे यौवनलीला कहिल विशेष ॥३१६
एइ सप्तदश प्रकार आदि लीलार प्रबन्ध।
द्वादश प्रबन्ध ताते ग्रन्थ मुखबन्ध ॥३१७
पञ्च प्रबन्धे पञ्च वयस चरित।
संक्षेपे कहिल अति ना कैल विस्तृत ॥३१८
वृन्दावन दास इहा चैतन्यमङ्गले।
विस्तारि वर्णिलेन नित्यानन्द आज्ञाबले।३१९

श्रीकृष्णचैतन्यलीला अद्भुत अनन्त ।
ब्रह्मा शिव शेष यार नाहि पाय अन्त ॥३२०
येइ येइ अंश कहे शुने सेइ धन्य ।
अचिरे मिलिबे तारे श्रीकृष्णचैतन्य ॥३२१
श्रीकृष्णचैतन्य अद्वैत नित्यानन्द ।
श्रीवास श्रीगदाधर आदि भक्तवृन्द ॥३२२
यत यत भक्तगण वैसे वृन्दावने ।
नम्र हैया शिरे धरोँ सबार चरणे ॥३२३
श्रीस्वरूप श्रीरूप श्रीसनातन ।
श्रीरघुनाथदास आर श्रीजीवचरण ॥३२४
शिरे धरि वन्दोँ नित्य करि ताँर आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥३२५

इति श्रीचैतन्यचरितामृते आदिखण्डे यौवनलीलासूत्रानुवर्णनं
नाम सप्तदशः परिच्छेदः ॥१७॥

आदिलीला सम्पूर्ण ।



श्रीचैतन्यचरितामृत

मध्यलीला ।

प्रथमपरिच्छेद

श्रीश्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः ।

यस्य प्रसादादज्ञोऽपि सद्यः सर्व्वज्ञतां व्रजेत् ।
स श्रीचैतन्यदेवो मे भगवान् संप्रसीदतु ॥१॥

टीका—यस्य प्रसादादिति । यस्य प्रसादात् अज्ञः सद्यस्तत्क्षणात् सर्व्वज्ञतां व्रजेत् प्राप्नुयात, स भगवान् श्रीचैतन्यदेवो मे मम सम्बन्धे संप्रसीदतु सम्यक् प्रसन्नो भवतु ॥१॥

जिनकी कृपा से अज्ञ व्यक्ति भी सर्वज्ञ होता है। इस प्रकार भगवान् चैतन्य देव मेरे प्रति प्रसन्न होवें ॥१॥

वन्दे श्रीकृष्णचैतन्यनित्यानन्दौ सहोदितौ ।
गौड़ोदये पुष्पवन्तौ चित्रौ शन्दौ तमोनुदौ ॥२॥

जिस प्रकार चन्द्र सूर्य्य उदयाचय में उदित होकर जगत के अन्धकार एवं तापनाश कर शीतल करते हैं, उस प्रकार गौड़देश में श्रीकृष्णचैतन्य-नित्यानन्द आविर्भूत होकर जगज्जनों का अज्ञानान्धकार एवं पापताप विदूरित करके जगत् जीवों को सुखी किये हैं, मैं अज्ञानान्धकार पापहारी एवं कल्याण प्रद उन श्रीकृष्णचैतन्य नित्यानन्द की वन्दना करता हूँ ॥२॥

जयतां सुरतौ पङ्गोर्मम मन्दमतेर्गती ।
मत्सर्व्वस्वपदाम्भोजौ राधामदनमोहनौ ॥३॥

विकलाङ्ग एवं मन्दमति सम्पन्न मेरी एकमात्र शरण स्वरूप एवं जिनके चरण कमल मेरा जीवन सर्वस्व हैं, उन परम दयालु उज्ज्वल रस निष्ठ श्रीराधामदन मोहन देव की जय हो ॥३॥

दिव्यद्वृन्दारण्यकल्पद्रुमाधः
श्रीमद्रत्नागारसिंहासनस्थौ ।
श्रीमद्राधा-श्रील गोविन्ददेवौ
प्रेष्ठालीभिः सेव्यमानौ स्मरामि ॥४॥

दिव्य शोभित वृन्दावनीय कल्पतरुमण्डित रत्न मन्दिर के सिंहासन में समासीन एवं प्रियसखी वृन्द के द्वारासेवित श्रीमती राधिका एवं श्रीमान् गोविन्द देवका स्मरण मैं करता हूँ ॥४॥

श्रीमान्-रासरसारम्भी वंशीवटतटस्थितः ।
कर्षन् वेणुस्वनैर्गोपीर्गोपीनाथः श्रियेऽस्तु नः ॥५

श्रीमान् अर्थात् सर्वार्थ परिपूर्ण, रासलीला प्रवृत्त गोपीकान्त,—वंशीवट के मूलदेश में स्थित होकर मुरलीरव के द्वारा गोपीवृन्दको आकर्षण करते रहते

हैं। आप हम को मङ्गल प्रदान करें ॥५॥

जय जय गौरचन्द्र जय दीनवन्धु।
जय जय शचीसुत जय कृपासिन्धु ॥१
जय जय नित्यानन्द जयाद्वैतचन्द्र।
जय श्रीवासादि जय गौरभक्तवृन्द ॥२
पूर्व्वे कहिल आदिलीलार सूत्रगरा।
याहा विस्तारियाछेन दास वृन्दावन ॥३
अतएव तार आमि सूत्रमात्र कैल।
ये किछु विशेष सूत्र मध्येइ कहिल ॥४
एबे कहि शेषलीलार मुख्य सूत्रगरा।
प्रभुर असंख्य लीला ना याय वर्णन ॥५
ताँर मध्ये येइ भाग दास वृन्दावन।
चैतन्यमङ्गले विस्तारि करिला वर्णन ॥६
सेइ भागेर इँहा सूत्रमात्र लिखिब।
इहा ये विशेष किछु ताहा विस्तारिब ॥७
चैतन्यलीलार व्यास दास वृन्दावन।
ताँर आज्ञाय करि ताँर उच्छिष्ट चर्व्वरा ॥८
भक्ति करि शिरे धरि ताँहार चरण।
शेषलीलार सूत्र किछु करिये वर्णन ॥९
चव्विश वत्सर प्रभुर गृहे अवस्थान।
ताहा ये करिल लीला आदिलीला नाम ॥१०
चव्विश वत्सर शेष येइ माघमास।
ताँर शुक्लपक्षे प्रभु करिला सन्नयास ॥११
सन्नयास करि चव्विश वत्सर अवस्थान।
ताहा येइ लीला तार शेषलीला नाम ॥१२
शेष लीलार मध्य अन्त दुइ नाम हय।
लीलाभेदे वैष्णवगण नाम भेद कय ॥१३

तार मध्ये छय वत्सर गमनागमन।
नीलाचल गौड़ सेतुबन्ध वृन्दावन ॥१
ताँहा येइ लीलार तार मध्य लीला नाम।
तार पाछे लीला अन्त्यलीला अभिधान ॥१
आदिलीला मध्यलीला अन्त्यलीला आर।
एबे मध्यलीला किछु करिया विस्तार ॥१
अष्टादश वर्ष कैल नीलाचले स्थिति।
आपनि आचरि जीवे शिखाइल भक्ति ॥१
तार मध्ये छय वत्सर भक्तगरा सङ्गे।
प्रेमभक्ति प्रवर्त्ताइल नृत्य गीत रङ्गे ॥१
नित्यानन्द प्रभुरे पाठाल गौरदेशे।
तिँहो गौरदेश भासाइल प्रेमरसे ॥१
सहजेइ नित्यानन्द कृष्ण प्रेमोद्दाम।
प्रभु आज्ञाय प्रेम सर्वत्र कैल दान ॥२
ताँहार चरणे मोर कोटि नमस्कार।
चैतन्येर भक्ति येँहो लोयाइला संसार ॥२
चैतन्य गोँसाञि याँरे बले बड़ भाइ।
तिँहो कहे मोर प्रभु चैतन्य गोँसाञि ॥२
यद्यपि आपने हयेन प्रभु बलराम।
तथापि चैतन्येर करे दास अभिमान ॥२
चैतन्य सेब चैतन्य लह गाओ चैतन्य नाम।
चैतन्ये ये भक्ति करे सेइ मोर प्राण ॥२
एइ मत लोके चैतन्य--भक्ति लोयाइल।
दीन-हीन-निन्दकादि सब निस्तारिल ॥२
तबे व्रजे पाठाइल रूप सनातन।
प्रभु आज्ञाय दुइ भाइ आइला वृन्दावन ॥२
भक्ति प्रचारिया सर्व्वतीर्थ प्रकाशिल।
मदनगोपाल गोविन्देर सेबा प्रचारिल ॥२

नाना शास्त्र आनि कैल भक्ति ग्रन्थ सार।
मूढ़ाधम जनेर ये करिला निस्तार ॥२८
प्रभु आज्ञाय कैल रस शास्त्रेर विचार।
व्रजेर निगूढ़ रस करिला प्रचार ॥२९
हरिभक्तिविलास आर भागवतामृत।
दशम टिप्पनी आर दशमचरित ॥३०
एइ सब ग्रन्थ कैल गोँसाञि सनातन।
रूप गोँसाञि कैल यत के करे गणन ॥३१
प्रधान प्रधान किछु करिये गणन।
लक्ष ग्रन्थ कैल व्रजविलास वर्णन ॥३२
रसामृतसिन्धु, आर विदग्धमाधव।
उज्ज्वल नीलमणि आर ललितमाधव ॥३३
दानकेलिकौमुदी आर बहु स्तवावली।
अष्टादश लीलाछन्द आर पद्यावली ॥३४
गोविन्द-विरुदावली ताहार लक्षण।
मथुरा-माहात्म्य आर नाटक वर्णन ॥३५
लघुभागवतामृतादि के करु गणन।
सर्व्वत्र करिल व्रजविलास वर्णन ॥३६
ताँर भ्रातुष्पुत्र नाम श्रीजीव गोँसाञि।
यत भक्तिग्रन्थ कैल तार अन्त नाञि ॥३७
श्रीभागवत सन्दर्भ नाम ग्रन्थविस्तार।
भक्ति सिद्धान्तेर ताते देखाइल पार ॥३८
गोपालचम्पू नाम तार ग्रन्थ महासूर।
नित्यलीला स्थापन याहे व्रजरसपुर ॥३९
एइ मत नाना ग्रन्थ करिया प्रकाश।
गोष्ठी सहिते कैल वृन्दावने वास ॥४०
प्रथम वत्सरे अद्वैतादि भक्तगण।
प्रभुरे देखिते कैल नीलाद्रि गमन ॥४१
रथयात्रा देखि ताँहा रहि चारिमास।
प्रभु सङ्गे नृत्य गीत परम उल्लास ॥४२
विदाय समये प्रभु कहिला सबारे।
प्रत्यब्द आसिबे सबे गुण्डिचा देखिबारे ॥४३
प्रभु आज्ञाय भक्तगण प्रत्यब्द आसिया।
गोँसाञि मिलिया याय गुण्डिचा देखिया ।४४
द्वादश वत्सर ऐछे करे गतागति।
अन्योन्ये दोँहार दोँहा विना नाहि स्थिति ।४५
शेष आर येइ रहे द्वादश वत्सर।
कृष्णेर विरहे स्फूर्त्ति प्रभुर अन्तर ॥४६
निरन्तर रात्रि दिन विरह-उन्मादे।
हासे कान्दे नाचे गाय परम विषादे ॥४७
येकाले करेन जगन्नाथ दरशन।
मने भावे कुरुक्षेत्रे हइल मिलन ॥४८
रथयात्रा आगे यबे करेन नर्त्तन।
ताहा एइ पदमात्र करये गायन ॥४९

तथाहि पदम्।

सेइत पराणनाथ पाइनु।
याँहा लागि मदन दहने झुरि गेनु ॥५०

एइ धुया गाने नाचे द्वितीय प्रहर।
कृष्ण लञा व्रजे याइ एभाव अन्तर ॥५१
एइ भावे नृत्य मध्ये पड़े एक श्लोक।
सेइ श्लोकेर अर्थ केह नाहि बुझे लोक ॥५२

तथाहि काव्यप्रकाशे (१४)—

यः कौमारहरः स एव हि वरस्ता एव चैत्रक्षपा
स्ते चोन्मीलितमालतीसुरभयः प्रौढ़ाः कदम्बानिलाः।
सा चैवास्मि तथापि तत्र सुरतव्यापारलीलाविधौ,
रेवारोधसि वेतसीतरुतले चेतः समुत्कण्ठते ॥६॥

टीका—हे श्रीकृष्ण ! यस्त्वं मम कौमारवयोहरः,

स एव हि निश्चतं वरः, सा चैवाहं राधास्मि चैत्रक्षपा चैत्रमासस्य रात्रिः, ते च प्रौढ़ाः कदम्बानिलाः कदम्ब वनस्य अनिलाः। कथम्भूताः ? उन्मीलितमालती-सुरभयः, उन्मीलिताः प्रकाशिताः मालतीसुरभयः सुगन्धयो येषु ते। तथापि तत्र रेवारोधसि वेतसि--तरुतले कुञ्जे, सुरतव्यापारलीलाविधौ रमणव्यापार-केलिविधानार्थं मम चेतः समुत्कण्ठते समुत्कण्ठितं भवति ॥६॥

जिसने मदीय कौमार काल अर्थात् यौवन राज्य हरण किया है, वही सम्प्रति मेरा वर है। वही चैत्र मासीया यामिनी है, वही प्रस्फुटित मालती सौरभ है, वही विकसित कदम्ब कानन सम्बन्धीय समीर है, एवं वही मैं हूँ, तथापि रेवानदी तीरस्थ अशोक तरुतल में जो विहार अनुष्ठित हुआ था, उस में ही मदीय मन समुत्कण्ठित है ॥६॥

एइ श्लोकेर अर्थ जाने एकेला स्वरूप।
दैवे से वत्सर ताहा गियाछेन रूप ॥५३
प्रभु मुखे श्लोक शुनि श्रीरूप गोँसाञि।
सेइ श्लोकेर अर्थे श्लोक करिल तथाइ ॥५४
श्लोक करि एक तालपत्रेते लिखिया।
आपनार वासाचाले राखिल गुँजिया ॥५५
श्लोक राखि गेला समुद्र स्नान करिते।
हेनकाले आइला प्रभु ताहारे मिलिते ॥५६
हरिदास ठाकुर आर रूप सनातन।
जगन्नाथ मन्दिरे नाहि याय तिन जन ॥५७
प्राते प्रभु जगन्नाथेर उपलभोग देखिया।
निजगृहे यान प्रभु ए तिने मिलिया ॥५८
एइ तिन मध्ये यबे थाके येइ जन।
तारे आनि आपने मिले प्रभुर नियम ॥५९
दैवे आसि प्रभु यबे ऊर्द्ध्वेते चाहिला।
चाले गोँजा तालपत्रे सेइ श्लोक पाइला ॥६०
श्लोक पड़ि प्रभु आछेन आविष्ट हइञा।
रूप-गोँसाञि आसि पड़े दण्डवत् हञा ॥६१
उठि महाप्रभु ताँरे चापड़ मारिया।
कहिते लागिला किछु कोलेते करिया ॥६२
मोर श्लोकेर अभिप्राय केह नाहि जाने।
मोर मनेर कथा तुइ जानिलि केमने ॥६३
एत बलि तारे बहु प्रसाद करिञा।
स्वरूप-गोँसाञिरे श्लोक देखाइल लञा ॥६४
स्वरूपे पुछेन प्रभु हइया विस्मिते।
मोर मनेर कथा रूप जानिला केमते ॥६५
स्वरूप कहिल याते जानिल तोमार मन।
ताथे जानि हय तोमार कृपार भाजन ॥६६
गोँसाञि कहे तारे आमि सन्तुष्ट हइञा।
आलिङ्गन कैल सर्व्वशक्ति सञ्चारिञा ॥६७
योग्य पात्र हय गूढ़रस विवेचने।
तुमि कहिओ तारे गूढ़ रसाख्याने ॥६८
ए सब कथा आगे कहिब विस्तारिया।
संक्षेपे उद्देशे कैल प्रस्ताव पाइया ॥६९

तथाहि श्रीरूपगोस्वामिचरणैरुक्तोऽयं श्लोकः—

प्रियः सोऽयं कृष्णः, सहचरि कुरुक्षेत्रमिलितः,
तथाहं सा राधा तदिदमुभयोः सङ्गमसुखम्।
तथाप्यन्तः खेलन्मधुरमुरलीपञ्चमजुषे,
मनो मे कालिन्दीपुलिनविपिनाय स्पृहयति ॥७॥

टीका—हे सहचरि ! हे सखि ! सोऽयं प्रियः कृष्णः कुरुक्षेत्रे मिलितः, तथापि साहं राधा कुरुक्षेत्रे मिलिता, तन्नस्मादिदमुभयोः राधाकृष्णयोः सङ्गमसुखं तथापि मे मम मनः कालिन्दीपुलिनविपिनाय स्पृहयति इच्छां करोति। किम्भूताय ?—अन्तः खेलन्मधुरमुरलीपञ्चमजुषे, अन्तर्हृदि खेलन्तं मधुरमुरल्याः पञ्चमस्वरं जिह्वाति सेवते यत् तस्मै ॥७॥

तदनुरूप श्रीरूपगोस्वामिचरण कृत श्लोक—

श्रीमती राधिका बोलीं, हे सखि ! कुरुक्षेत्र में वही यह श्रीहरि उपस्थित हैं, मैं भी वही श्रीमती राधिका हूँ। उभय का मिलन सुख भी विद्यमान है, तथापि काननाभ्यन्तर में खेलित मुरली के पञ्चम कोकिल कुजितवत् स्वर विशिष्ट उस कालिन्दी सैकत कानन के हेतु मदीय चित्त स्पृहाशील है ॥७॥

एइ श्लोकेर संक्षेपार्थ शुन भक्तगण ।
जगन्नाथ देखि यैछे प्रभुर भावन ॥७०
श्रीराधिका कुरुक्षेत्रे कृष्णेर दर्शन ।
यद्यपि पायेन तबु भावेन ऐछन ॥७१
राजवेश हाती घोड़ा मनुष्य गहन ।
काँहा गोपवेश काँहा निर्ज्जन वृन्दावन ॥७२
सेइ भाव सेइ कृष्ण सेइ वृन्दावन ।
यबे पाइ तबे हय वाञ्छित पूरण ॥७३

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८२।४८)—

श्रीकृष्णं प्रति गोपीवाक्यम्—

आहुश्च ते नलिननाभ पदारविन्दं
योगेश्वरैर्हृदि विचिन्त्यमगाधबोधैः ।
संसारकूपपतितोत्तरणावलम्बं
गेहं जुषामपि मनस्युदियात् सदा नः ॥८॥

टीका – हे कृष्णः ! अगाधबोधैः यागेश्वरैर्ब्रह्मादिभिर्हृदि विचिन्त्यं तव पदारविन्दम् नोऽस्माकं मनसि चित्ते सदा नित्यमेव उदियात् प्रकाशीभवतु । कथम्भूतानां ? गेहं जुषां व्रजगृहवासिनां । पदारविन्दं किम्भूतं ?—ससारकूपपतितोत्तरणावलम्बम् ॥८॥

श्रीमद् भागवत में उक्त है—

गोपियों ने श्रीकृष्ण को कही– हे नलिननाभ ! अगाध बुद्धि योगेश्वरों के द्वारा हृदय में चिन्तनीय, भवकूप में निपतित जन वृन्द के उत्तरण के अवलम्बन स्वरूप तुम्हारे पदारविन्दद्वय– हम सब गृहवासिनी होने पर भी हमारे मन में निरन्तर उदित हों ॥८॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८३।२)—

त एवं लोकनाथेन परिपृष्टाः सुसत्कृताः ।
प्रत्युचुर्हृष्टमनसस्तत्पादेक्षाहतांहसः ॥९॥

टीका– तत् पादेक्षया हतमंहो येषां ते । एवं लोकनाथेन सर्व्वलोकेश्वरेणापि परि सर्व्वतः पृष्टाः तथा सुसत्कृताः ॥९॥

श्रीमद् भागवत के दशम स्कन्ध में उक्त है--

वे उस प्रकार लोकनाथ कर्त्तृक सुसंस्कृत एवं जिज्ञासित होकर तत् पश्चात् कृष्ण पदारविन्द दशन से निष्कलुष चित्त होने के कारण--पुलकित चित्त से प्रत्युत्तर देने लगीं ॥९॥

तोमार चरण मोर व्रजपुर घरे ।
उदय करये यदि तबे वाञ्छा पुरे ॥७४
भागवतेर श्लोकार्थ विशद करिया ।
रूपगोसाञि श्लोक कैल लोक बुझाइया ॥७५

तथाहि ललितमाधवे (१०।४९)—

श्रीराधा श्रीकृष्णं प्रति आह—

या ते लीला-रसपरिमलोद्गारि-वन्यापरीता
धन्या क्षौणी विलसति वृता माधुरी माथुरीभिः ।
तत्रास्माभिश्चटुल-पशुपीभावमुग्धान्तराभिः
संवीतस्त्वं कलय वदनोल्लासिवेणुर्विहारम् ॥१०॥

टीका—हे नन्दनन्दन ! या क्षौणी पृथिवी तव लीलारसपरिमलोद्गारि, वन्या, परीता प्राप्ता सती विलसति शोभते । कथम्भूता ?- माथुरी, माथुरीभिर्वृता, अतएव धन्या, तत्र पृथिव्यां निजविहारं कलय त्वं पश्य । त्वं किम्भूतः ?–वदनोल्लासिवेणुः, वदने मुखाधरे उल्लासि विलासं वेणु यस्य सः पुनः किम्भूतः ?--अस्माभिश्चटुल पशुभी-भावमुग्धान्तराभिः सम्वीतः प्राप्तः। चटुलाश्चञ्चला याः पशुप्यो गोप्यस्तास्तासां एव भावैर्मुग्धं अन्तरं यासां ताभिः ॥१०॥

श्रीकृष्ण को श्रीराधा बोली थीं—

हे नन्दनन्दन ! जो माधुर्य्यमयी धन्यतमा

मथुरा नगरी तुम्हारी लीलाभूमि समूह की सौरभ प्रकाशी कानन राजि से परिशोभित होकर विराजित है. वहाँ गोपीभाव विभावित मानस मादृश जन के सहित सङ्गत होकर विकसित वदन में वेणु धारण विहार करने की प्रतिश्रुति प्रदान करो ॥१०॥

एइ रूप महाप्रभु देखि जगन्नाथे ।
सुभद्रा सहित देखे वंशी नाहि हाते ॥७६
त्रिभङ्ग सुन्दर व्रजे व्रजेन्द्र--नन्दन ।
काँहा पाव एइ वाञ्छा बाड़े अनुक्षण ॥७७
श्रीराधिकार उन्माद यैछे उद्धव दर्शने ।
उद्घूर्णा प्रलाप तैछे प्रभुर रात्रिदिने ॥७८
द्वादश वत्सर शेष ऐछे गोङाइल ।
एइमत शेषलीला विधाने कहिल ॥७९
सन्नयास करि चब्विश वतसर कैल ये ये कर्म्म ।
अनन्त अपार तार के जानिबे मर्म्म ॥८०
उद्देश करिते करि दिग्दरशन ।
मुख्य मुख्य लीलार करि सूत्र गणन ॥८१
प्रथम सूत्र प्रभुर सन्नयास करण ।
तबेत चलिला प्रभु श्रीवृन्दावन ॥८२
प्रेमेते विह्वल बाह्य नाहिक स्मरण ।
राढ़देशे तिन दिन करिला भ्रमण ॥८३
नित्यानन्द प्रभु महाप्रभु भुलाइया ।
गङ्गातीरे लञा गेल यमुना बलिया ॥८४
शान्तिपुरे आचार्य्येर गृहे आगमन ।
प्रथम भिक्षा कैल ताहा रात्रे सङ्कीर्त्तन ॥८५
माता भक्तगणेर ताँहा करिल मिलन ।
सर्व्व समाधान करि कैल नीलाद्रि गमन ॥८६
पथे नाना लीला करे देवदरशन ।
माधवपुरीर कथा गोपाल स्थापन ॥८७
क्षीरचुरि कथा साक्षीगोपाल विवरण ।
नित्यानन्द कैल प्रभुर दण्ड भञ्जन ॥८८
क्रोध करि एका गेला जगन्नाथ देखिते ।
देखिया मूर्च्छित हञा पड़िला भूमिते ॥८९
सार्व्वभौम लञा गेला आपन भवन ।
तृतीय प्रहरे हैल प्रभुर चेतन ॥९०
नित्यानन्द जगदानन्द दामोदर मुकुन्द ।
पाछे आसि मिलि सबे पाइला आनन्द ॥९१
तबे सार्व्वभौमे प्रभु प्रसाद करिल ।
आपन ईश्वर मूर्त्ति तारे देखाइल ॥९२
तबे त करिला प्रभु दक्षिण गमन ।
कुर्म्मक्षेत्रे कैल वासुदेव विमोचन ॥९३
जीयड़ नृसिंहे कैल नृसिंह स्तवन ।
पथे पथे ग्रामे ग्रामे नाम प्रवर्त्तन ॥९४
गोदावरी तीर वने वृन्दावन भ्रम ।
रामानन्द राय सह ताहाञि मिलन ॥९५
त्रिमल्ल त्रिपदी स्थान कैल दरशन ।
सर्व्वत्र करिल कृष्ण नाम प्रचारण ॥९६
तबेत पाषण्डीगण करिल दमन ।
अहोबल नृसिंहादि कैल दरशन ॥९७
श्रीरङ्गक्षेत्रे आइला कावेरीर तीर ।
श्रीरङ्ग देखिया प्रेमे हइला अस्थिर ॥९८
त्रिमल्ल भट्टेर घरे कैल प्रभु बास ।
ताहाञि रहिला प्रभु वर्षा चारि मास ॥९९
श्रीवैष्णव त्रिमल्लभट्ट परम पण्डित ।
गोँसाञिर पाण्डित्यप्रेमे हइला विस्मित ॥१००
चातुर्म्मास्य ताँहा प्रभु श्रीवैष्णव सने ।
गोङाइला नृत्यगीत कृष्ण सङ्कीर्त्तने ॥१०१

चातुर्म्मास्य अन्ते पुनः दक्षिणे गमन ।
परमानन्दपुरी सने ताहाञि मिलन ॥१०२
तबे भट्टमारि हैते कृष्णदासेर उद्धार ।
रामजपि विप्रमुखे कृष्ण नाम प्रचार ॥१०३
श्रीरङ्गपुरीर सङ्गे हैल दरशन ।
रामदास विप्रेर कैल दुःख विमोचन ॥१०४
तत्त्ववादी सने कैल तत्त्वेर विचार ।
आपनाके हीनबुद्धि हैल ता सबार ॥१०५
अनन्त, पुरुषोत्तम, श्रीजनार्द्दन ।
पद्मनाभ, वासुदेव कैल दरशन ॥१०६
तबे प्रभु कैल सप्तताल विमोचन ।
सेतुबन्ध स्नान रामेश्वर दरशन ॥१०७
ताहाञि करिल कूर्म्मपुराण श्रवण ।
मायासीता निल रावण ताहाते लिखन ॥१०८
शुनिया प्रभुर हैल आनन्दित मन ।
रामदास विप्रेर कथा हइल स्मरण ॥१०९
सेइ पुरातन पत्र आग्रहे आनिल ।
रामदासे देखाइया दुःख खण्डाइल ॥११०
ब्रह्मसंहिता कर्णामृत दुइ पुथि पाञा ।
दुइ पुस्तक लञा आइला उत्तम जानिञा ।१११
पुनरपि नीलाचले गमन करिल ।
भक्तगणे मिलि स्नानयात्रा देखिल ॥११२
अनवसरे जगन्नाथेर ना पाञा दर्शन ।
विरहे आलालनाथ करिला गमन ॥११३
भक्तसङ्गे दिन कथो ताहाञि रहिला ।
गौड़ेर भक्त आइसे समाचार पाइला ॥११४
नित्यानन्द सार्व्वभौम आग्रह करिया ।
नीलाचल आइला महाप्रभुके लइया ॥११५
विरहे विह्वल प्रभु ना जाने रात्रि दिने ।
हेनकाले गौड़ हैते आइला भक्तगणे ॥११६
सबे युक्ति करि तबे कीर्त्तन आरम्भिल ।
कीर्त्तन आवेशे प्रभुर मनस्थिर हैल ॥११७
पूर्व्वे यबे प्रभु रामानन्देरे मिलिला ।
नीलाचले आसिबारे ताँरे आज्ञा दिला ॥११८
राज आज्ञा लञा तिहों आइला कथोदिने ।
रात्रि दिने कृष्णकथा रामानन्द सने ॥११९
काशीमिश्रे कृपा प्रद्युम्न मिश्रादि मिलन ।
परमानन्दपुरी गोविन्द काशीश्वरागमन ॥१२०
दामोदरस्वरूप मिलन, परम आनन्द ।
शिखिमाहिती मिलन, राय भवानन्द ॥१२१
गौड़देश हैते सब वैष्णवागमन ।
कुलीनग्रामवासी सङ्गे प्रथम मिलन ॥१२२
नरहरि मुकुन्दादि यत खण्डवासी ।
शिवानन्द सेन सङ्गे मिलिला सबे आसि ।१२३
स्नानयात्रा देखि प्रभुर सङ्गे भक्तगण ।
सबा लञा कैल प्रभु गुण्डिचा मार्ज्जन ॥१२४
सबा सङ्गे रथयात्रा कैल दरशन ।
रथ आगे नृत्य करि उद्यान गमन ॥१२५
प्रतापरुद्रेरे कृपा कैल सेइ स्थाने ।
गौड़िया भक्तेरे आज्ञा दिल विदायेर दिने ।१२६
प्रत्यब्द आसिबे रथयात्रा दरशने ।
एइ छले चाहे भक्तगणेर मिलने ॥१२७
सार्व्वभौमघरे प्रभुर भिक्षा परिपाटी ।
षाठीर माता कहे याते राण्डी हउक षाठी १२८
वर्षान्तरे अद्वैतादि भक्त आगमन ।
प्रभुरे देखिते सबे करिला गमन ॥१२९

आनन्दे सबारे निञा देन वासस्थान ।
शिवानन्द सेन करे सबार पालन ॥१३०
शिवानन्देर सङ्गे आइला कुक्कुर भाग्यवान् ।
प्रभुर चरण देखि कैला अन्तर्धान ॥१३१
पथे सार्व्वभौम सह सबार मिलन ।
सार्व्वभौम भट्टाचार्य्येर काशीते गमन ॥१३२
प्रभुरे मिलिया सर्व्व वैष्णव आसिया ।
जलक्रीड़ा कैल प्रभु सबारे लइया ॥१३३
सबा लञा कैल गुण्डिचा संमार्ज्जन ।
रथयात्रा दरशने प्रभुर नर्त्तन ॥१३४
उपबने कैल प्रभु विविध विलास ।
प्रभुर अभिषेक कैल विप्र कृष्णदास ॥१३५
गुण्डिचाते नृत्य अन्ते कैल जलकेलि ।
होरापञ्चमीते देखे लक्ष्मीदेवीर केलि ॥१३६
कृष्णजन्मयात्राते प्रभु गोपवेश हैल ।
दधिभार वहि तबे लगुड़ फिराइया ॥१३७
गौड़ेर भक्तगणे तबे करिल विदाय ।
सङ्गेर भक्त लञा करे कीर्त्तन सदाय ॥१३८
वृन्दावन याइते गौड़े करिल गमन ।
प्रतापरुद्र कैल पथे विविध सेबन ॥१३९
पुरी गोसाञि सङ्गे वस्त्र प्रदान प्रसङ्ग ।
रामानन्द राय आइला भद्रक पर्य्यन्त ॥१४०
आसि विद्यावाचस्पति गृहेते रहिला ।
प्रभुरे देखिते लोक सङ्घट्ट हइला ॥१४१
पञ्चदिन देखे लोक नाहिक विश्राम ।
लोकभये रात्रे प्रभु आइला कुलिया ग्राम ।१४२
कुलिया ग्रामेते प्रभुर शुनि आगमन ।
कोटि कोटि लोक आसि कैला दरशन ॥१४३
कुलिया ग्रामे कैल देवानन्देरे प्रसाद ।
गोपाल विप्रेर क्षमाइल श्रीवासापराध ॥१४४
पाषण्डी निन्दुक आसि पड़िला चरणे ।
अपराध क्षमि तारे दिल कृष्णप्रेमे ॥१४५
वृन्दावन याबेन प्रभु शुनि नृसिंहानन्द ।
पथ साजाइल मने करिया आनन्द ॥१४६
कुलिया ग्राम हैते पथ रत्ने बान्धाइल ।
निवृन्त पुष्पेर शय्या उपरे पातिल ॥१४७
पथे दुइ दिके पुष्प वकुलेर श्रेणी ।
मध्ये मध्ये दुइ पाशे दिव्य पुष्करिणी ॥१४८
रत्नबान्धा घाट ताहे प्रफुल्ल कमल ।
नाना-पक्षी-कोलाहल सुधा सम जल ॥१४९
शीतल समीर बहे नाना गन्ध लञा ।
कानाइर नाटशाला पर्य्यन्त लैल बान्धिया ।१५०
आगे मन नाहि चले ना पारे बान्धिते ।
पथ बान्धा ना याय नृसिंह हइला विस्मिते ।१५१
निश्चय करिया कहि शुन सर्व्वजन ।
एबार ना याबेन प्रभु श्रीवृन्दावन ॥१५२
कानाइर नाटशाला हैते आसिब फिरिया ।
जानिबे पश्चात् कहिनु निश्चय करिया ॥१५३
गोँसाञि कुलिया हैते चलिला वृन्दावन ।
सङ्गे सहस्रेक लोक यत भक्तगण ॥१५४
याँहा याँहा याय प्रभु ताँहा कोटिसंख्य लोक ।
देखिते आइसे देखि खण्डे दुःख शोक ॥१५५
याँहा याँहा प्रभुर चरण पड़ये चलिते ।
से मृत्तिका लय लोक गर्त्त हय पथे ॥१५६
ऐछे चलि आइला प्रभु रामकेलि ग्राम ।
गौड़ेर निकटे ग्राम अति अनुपम ॥१५७

ताँहा नृत्य करे प्रभु प्रेमे अचेतन ।
कोटि कोटि लोक आइसे देखिते चरण ॥१५८
गौड़ेश्वर यवन राजा प्रभाव शुनिया ।
कहिते लागिला किछु विस्मित हइया ॥१५६
बिना दाने एत लोक यार पाछे धाय ।
सेइत गोँसाञि इहा जानिह निश्चय ॥१६०
काजी यवन केह इहार ना कर हिंसन ।
आपन इच्छाय बुलु यहाँ लय मन ॥१६१
केशव छत्रीरे राजा वार्त्ता ये पुछिल ।
प्रभुर महिमा छत्री उड़ाइया दिल ॥१६२
भिखारी सन्न्यासी करे तीर्थ पर्य्यटन ।
तारे देखिवारे आइसे दुइ चारि जन ॥१६३
यवने तोमार ठाँइ करये लागानि ।
तार हिंसाय लाभ नाहि, हय मात्र हानि ॥१६४
राजारे प्रबोधि छत्री ब्राह्मण पाठाइया ।
चलिबार तरे प्रभुरे पाठाइल कहिया ॥१६५
दवीर खासेरे राजा पुछिल निभृते ।
गोँसाञिर महिमा तिँह लागिला कहिते ॥१६६
ये तोमारे राज्य दिल तोमार गोँसाञा ।
तोमार देशे तोमार भाग्ये जन्मिला आसिञा
॥१६७
तोमार मङ्गल वाञ्छे, वाक्यसिद्ध हय ।
इहार आशीर्व्वादे तोमार सर्व्वत्रेते जय ॥१६८
मोरे केन पुछ ? तुमि पुछ आपन मन ।
तुमि नराधिप हञा, विष्णु अंश सम ॥१६६
तोमार चित्ते चैतन्येर कैछे हय ज्ञान ।
तोमार चित्ते येइ लय सेइ त प्रमाण ॥१७०
राजा कहे शुन मोर मने येइ लय ।
साक्षात् ईश्वर इहों नाहिक संशय ॥१७१
एत कहि राजा गेल निज अभ्यन्तरे ।
तबे दवीरखास आइला आपनार घरे ॥१७२
घरे आसि दुइ भाइ युकति करिया ।
प्रभु देखिवारे चले वेश लुकाइया ॥१७३
अर्द्ध रात्रे दुइ भाइ आइला प्रभुस्थाने ।
प्रथमे मिलिला नित्यानन्द हरिदास सने ॥१७४
तारा दुइजन जानाइला प्रभुर गोचरे ।
रूप साकर-मल्लिक आइला तोमा देखिवारे
॥१७५
दुइ गुच्छ तृण दुँहे दशने धरिया ।
गले वस्त्र बान्धि पड़े दण्डवत हञा ॥१७६
दैन्यरोदन करे आनन्दे विह्वल ।
प्रभु कहे, उठ ! उठ ! हइल मङ्गल ॥१७७
उठि दुइ भाइ तबे दन्ते तृण धरि ।
दैन्य करि स्तुति करे करयोड़ करि ॥१७८
जय जय श्रीकृष्णचैतन्य दयामय ।
पतितपावन जय जय महाशय ॥१७६
नीचजाति, नीचसङ्गी, करि नीच काज ।
तोमार अग्रेते प्रभु कहिते बासि लाज ॥१८०

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे द्वितीयसाधन भक्तिलहर्य्यां पद्मपुराणवचनम् (१५श अङ्के)—

मत्तुल्यो नास्ति पापात्मा नापराधी च कश्चन ।
परिहारेऽपि लज्जा मे किं ब्रूवे पुरुषोत्तम ॥११

टीका—हे पुरुषोत्तम ! हे कृष्ण ! मत्तुल्यः मद्विधः पापात्मा पापयुक्तदेही, अपराधी कश्चन कोऽपि भुवने नास्ति । परिहारेऽपि निवेदनेऽपि मे मम लज्जा भवति, तस्मात् किमहं ब्रुवे वक्ष्यामि ।११

भक्तिरसामृत सिन्धु के साधन भक्ति लहरी

में उक्त है—हे पुरुषोत्तम ! मेरे समान पापी नहीं है, अपराधी भी कोई नहीं है, तुम्हारे समीप में क्षमा प्रार्थना करने में भी लज्जा होती है ॥११॥

पतित तारिते प्रभु तोमार अवतार ।
आमा बहि जगते पतित नाहि आर ॥१८१
जगाइ माधाइ दुइ करिले उद्धार ।
ताहा उद्धारिते श्रम नहिल तोमार ॥१८२
ब्राह्मण जाति तारा नवद्वीपे घर ।
नीच सेवा नाहि करे, नहे नीचेर कुर्पर ॥१८३
सबे एक दोष तारा हय पापाचार ।
पापराशि दहे नामाभासेते तोमार ॥१८४
तोमार नाम लञा करे तोमार निन्दन ।
सेइ नाम हैल तार मुक्तिर कारण ॥१८५
जगाइ माधाइ हैते कोटि कोटि गुणे ।
अधम पतित पापी आमरा दुइ जने ॥१८६
म्लेच्छजाति, म्लेच्छसेवी, करि म्लेच्छकर्म्म ।
गो ब्राह्मण-द्रोहिसङ्ग आमार सङ्गम ॥१८७
मोर कर्म्म मोर हाते गलाय बान्धिञा ।
कुविषय-विष्टागर्त्ते दियाछे डारिञा ॥१८८
आमा उद्धारिते बली नाहि त्रिभुवने ।
पतितपावन तुमि सबे तोमा विने ॥१८९
आमा उद्धारिया यदि देखाओ निज बल ।
पतितपावन नाम तबे से सफल ॥१९०
सत्य एक बात कहों शुन दयामय ।
मो विनु दयार पात्र जगते ना हय ॥१९१
मोरे दया करि कर स्वदया सफल ।
अखिल ब्रह्माण्ड देखुक तोमार दया बल ॥१९२

तथाहि गोस्वामिपादोक्तश्लोकः —

न मृषा परमार्थमेव मे शृणु विज्ञापनमेकमग्रतः ।

यदि मे न दयिष्यसे तदा दयनीयस्तव न
दुर्लभः ॥१२॥

टीका - हे नाथ ! हे कृष्ण ! अग्रतो अ मम एकं विज्ञानं दैन्यबोधिकं त्वं शृणु । तत् कि परमार्थमेव, मृषा मिथ्या न, यदि यस्मात् म दयिष्यसे, तदा तव दयनीयो दातव्यो दु दुष्प्राप्यो भवति ॥१२॥

हे प्रभो ! एक आन्तरिक निवेदन सुनो— कथन मिथ्या नहीं है, यदि मुझे दया न क तुम्हारे दयनीय जगत् में दुर्लभ होगा, अर्थ समान दया का पात्र कहाँ है ॥१२॥

आपना अयोग्य देखि मने पाइ क्षोभ ।
तथापि तोमार गुणे उपजाय लोभ ॥१
वामन यैछे चाँद धरिते इच्छा करे ।
तैछे एइ वाञ्छा मोर उठये अन्तरे ॥१

तथाहि गोस्वामिपादोक्तः श्लोकः—

भवन्तमेवानुचरन्निरन्तरं
प्रशान्तनिःशेष--मनोरथान्तरः ।
कदाहमैकान्तिक-नित्यकिङ्करः
प्रहर्षयिष्यामि सनाथजीवितम् ॥१३॥

टीका—हे नाथ ! हे कृष्ण ! सोऽहं जी प्राणनाथं प्रहर्षयिष्यामि प्रहृष्ट करिष्यामि । कुर्व्वन् ?— भवन्तं त्वां निश्चितं अनुचरन् परि कुर्व्वन् । अहं किम्भूतः ?—ऐकान्तिक-नित्यकिङ्क पुनः कथम्भूत ?—निरन्तरं तव सेवया प्रशान्त निःशेषमनोरथान्तराणि यस्य स ॥१३॥

हे नाथ ! मैं कब भवदीय ऐकान्तिक नित्य होकर अखिल कामना परित्याग पूर्वक आ आदेशानुवर्त्ती होकर निरन्तर आपकी सेवा के द्वा जीवन को धन्य करूँगा ? ॥१३॥

शुनि प्रभु कहेन शुन रूप दबीरखास ।
तुमि दुइ भाइ मोर पुरातन दास ॥१९

आजि हैते दोँहार नाम रूप सनातन ।
दैन्य छाड़ तोमार दैन्ये फाटे मोर मन ॥१९६
दैन्य पत्री लिखि मोरे पाठाले बार बार ।
सेइ पत्रीते जानि तोमार व्यवहार ॥१९७
तोमार हृदय--इच्छा जानि पत्रद्वारे ।
शिक्षाइते श्लोक लिखि पाठाइल तोमारे ।१९८

तथाहि शिक्षाश्लोको वाशिष्ठरामायणे---

परव्यसनिनी नारी व्यग्रापि गृहकर्म्मसु ।
तदेवास्वादयत्यन्तर्नवसङ्गरसायनम् ॥१४॥

टीका – नारी स्त्री परव्यसनिनी परस्य व्यसनानि दुःखानि विद्यन्ते यस्याः सा । गृहकर्मसु व्यग्रा व्याकुलापि यदेव तथापि अन्तर्हृदि नवसङ्गरसायनं नवीनकिशोरपुरुषोत्तमस्य यः सङ्गस्तु रसायनं रसाश्रयं स्वादयतीत्यर्थ ॥१४॥

परव्यसनी रमणी गृह कार्य्य में रत एवं व्यग्रा होने पर भी चित्त में निरन्तर अपर पुरुषासक्ति का आस्वादन करती रहती है ॥१४॥

गौड़ निकटे आसिते नाहि प्रयोजन ।
तोमा दोँहा देखिते मोर इहाँ आगमन ॥१९९
एइ मोर मनकथा केह नाहि जाने ।
सबे कहे केन आइला रामकेलि ग्रामे ॥२००
भाल हैल दुइ भाइ आइला मोर स्थाने ।
घरे याह भय किछु ना करिह मने ॥२०१
जन्मे जन्मे तुमि दुइ किङ्कर आमार ।
अचिराते कृष्ण तोमार करिबे उद्धार ॥२०२
एत बलि दुँहार शिरे धरे निज हाते ।
दुइ भाइ प्रभुपद निल निज माथे ॥२०३
दोँहा आलिङ्गिया प्रभु कहिल भक्तगणे ।
सबे कृपा करि उद्धारह दुइजने ॥२०४
दुइजने प्रभुकृपा देखि भक्तगणे ।
हरि हरि बले सबे आनन्दित मने ॥२०५
नित्यानन्द श्रीवास हरिदास गदाधर ।
मुकुन्द जगदानन्द मुरारि वक्रेश्वर ॥२०६
सबार चरण धरि पड़े दुइ भाइ ।
सबे कहे धन्य तुमि पाइले गोँसाञि ॥२०७
सबा पाश आज्ञा लञा चलनसमय ।
प्रभु पदे कहे किछु करिया विनय ॥२०८
इहा हैते चल प्रभु, इहा नाहि काज ।
यद्यपि तोमारे भक्ति करे गौड़राज ॥२०९
तथापि यवन जाति ना करि प्रतीति ।
तीर्थयात्राय एत संघट्ट भाल नहे रीति ॥२१०
यार सङ्गे चले लोक लक्ष कोटि ।
वृन्दावनयात्रार एइ नहे परिपाटी ॥२११
यद्यपि वस्तुतः प्रभुर किछु नाहि भय ।
तथापि लौकिक लीला लोकचेष्टामय ॥२१२
एत कहि चरण वन्दि गेला दुइ जन ।
प्रभुर से ग्राम हैते चलिते हैल मन ॥२१३
प्राते चलि आइला प्रभु कानाइर नाटशाला ।
देखिल सकल ताँहा कृष्णचरित-लीला ॥२१४
सेइ रात्रे प्रभु ताँहा चिन्ते मने मन ।
सङ्गे संघट्ट भाल नहे कैल सनातन ॥२१५
मथुरा याइब आमि एत लोक सङ्गे ।
किछु सुख ना पाइब हबे रसभङ्गे ॥२१६
एकाकी याइब किवा सङ्गे एक जन ।
तबे से शोभये वृन्दावनेर गमन ॥२१७
एत चिन्ति प्रातः काले गङ्गास्नान करि ।
नीलाचल याब बलि चलिल गौरहरि ॥२१८
एइमत प्रभु चलि आइला शान्तिपुरे ।

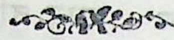
दिन पाँच सात रहिला आचार्य्येर घरे ॥२१९
शचीदेवी आनि, ताँरे कैल नमस्कार ।
सात दिन ताँर ठाञि भिक्षा व्यवहार ॥२२०
ताँर ठाञि आज्ञा लञा करिला गमने ।
विनय करिया विदाय दिल भक्तगणे ॥२२१
जन दुइ सङ्गे आमि याव नीलाचले ।
आमारे मिलिबा आसि रथयात्राकाले ॥२२२
बलभद्रभट्टाचार्य्य, पण्डित दामोदर ।
दुइ जन सङ्गे प्रभु आइला नीलाचल ॥२२३
दिन कत ताँहा रहि चलिला वृन्दावन ।
लुकाइया चलिला रात्रे ना जाने कोन जन ॥२२४
बलभद्रभट्टाचार्य्य रहे मात्र सङ्गे ।
झाड़िखण्डपथे काशी आइला नाना रङ्गे ॥२२५
दिन चारि काशी रहि गेला वृन्दावन ।
मथुरा देखिया देखे द्वादश कानन ॥२२६
लीलास्थल देखि प्रेमे हइला अस्थिर ।
बलभद्र कैल ताँरे मथुरा बाहिर ॥२२७
गङ्गातीरपथे लञा प्रयागे आइला ।
श्रीरूप आसि प्रभुके ताँहाइ मिलिला ॥२२८
दण्डवत् करि रूप भूमिते पड़िला ।
परम आनन्दे प्रभु आलिङ्गन दिला ॥२२९
श्रीरूपके शिक्षा करि पाठाइला वृन्दावन ।
आपने करिला वाराणसी आगमन ॥२३०
काशीते प्रभुके आसि मिलिला सनातन ।
दुइ मास रहि ताँरे कराइल शिक्षण ॥२३१
मथुरा पाठाइल ताँरे दिया भक्तिबल ।
सन्न्यासीरे कृपा करि गेला नीलाचल ॥२३२

छयवर्ष ऐछे प्रभु करिला विलास ।
कभु इति उति गति कभु क्षेत्रे वास ॥
आनन्दे भक्तसङ्गे सदा कीर्त्तन विलास ।
जगन्नाथदरशन प्रेमेर विलास ॥
मध्यलीलार करिल एइ सूत्र गणन ।
अन्त्यलीलार सूत्र एबे शुन भक्तगण ॥
वृन्दावन हैते यदि नीलाचले आइला ।
आठार वर्ष ताँहा बास काँहा नाहि गेला ॥
प्रति वर्ष आइसे गौड़ेर भक्तगण ।
चारिमास रहे प्रभुर सङ्गे सम्मिलन ॥
निरन्तर नृत्य गीत कीर्त्तन विलास ।
आचण्डाले प्रेमभक्ति करिला प्रकाश ॥
पण्डित गोसाञि कैल नीलाचले बास ।
वक्रेश्वर दामोदर शङ्कर हरिदास ॥
जगदानन्द भवानन्द गोविन्द काशीश्वर ।
परमानन्दपुरी आर स्वरूप दामोदर ॥
क्षेत्रवासी रामानन्द राय प्रभृति ।
प्रभुसङ्गे एइ सब कैल नित्य स्थिति ॥
श्रीअद्वैत नित्यानन्द मुकुन्द श्रीवास ।
विद्यानिधि वासुदेव मुरारि यत दास ॥
प्रतिवर्ष आइसे सङ्गे रहे चारि मास ।
ताहा सबा लञा प्रभुर विविध विलास ॥
हरिदासेर सिद्धिप्राप्ति अद्भुत से सब ।
आपने महाप्रभु यार कैल महोत्सव ॥
तबे रूपगोसाञिर पुनरागमन ।
तार हृदये कैल प्रभु शक्ति सञ्चारण ॥
तबे छोट हरिदासे प्रभु कैल दण्ड ।
दामोदर पण्डित कैल प्रभुके वाक्यदण्ड ॥

तबे सनातन गोँसाञिर पुनरागमन।
ज्यैष्ठमासे प्रभु तारे कैल परीक्षण ॥२४७
तुष्ट हञा प्रभु तारे पाठाइल वृन्दावन।
अद्वैतेर हाते प्रभुर अद्भुत भोजन ॥२४८
नित्यानन्द सङ्गे युक्ति करिया निभृते।
ताहारे पाठाइल गौड़े प्रेम प्रचारिते ॥२४९
तबेत वल्लभ भट्ट प्रभुरे मिलिला।
कृष्ण नामेर अर्थ प्रभु ताहारे कहिला ॥२५०
प्रद्युम्न मिश्रेरे प्रभु रामानन्दस्थाने।
कृष्णकथा शुनाइल कहि तार गुणे ॥२५१
गोपीनाथ पट्टनायक रामानन्दभ्राता।
राजा मारितेछिल प्रभु हैल त्राता ॥२५२
रामचन्द्रपुरी भये भिक्षा घटाइला।
वैष्णवेर दुःख देखि अर्द्धेक राखिला ॥२५३
ब्रह्माण्ड भितरे हय चौद्द भुवन।
चतुर्द्दश भुवने वैसे यत जीवगण ॥२५४
मनुष्येर वेश धरि यात्रिकेर छले।
महाप्रभु दर्शन करे आसि नीलाचले ॥२५५
एकदिन श्रीवासादि यत भक्तगण।
महाप्रभुर गुण गाञा करेन कीर्त्तन ॥२५६
शुनि भक्तगणे प्रभु कहे क्रोधमने।
कृष्णनाम गुण छाड़ि कि कर कीर्त्तने ॥२५७
औद्धत्य करिते हैल सबाकार मन।
स्वतन्त्र इहया सबे नाशाले भुवन ॥२५८
दशदिके कोटि कोटि लोक हेन काले।
जय कृष्णचैतन्य बलि करे कोलाहले ॥२५९
जय जय महाप्रभु व्रजेन्द्रकुमार।
जगत तारिते प्रभु तोमार अवतार ॥२६०
बहुदूर हैते आइलाम हञा बड़ आर्त्त।
दरशन दिया प्रभु करह कृतार्थ ॥२६१
शुनिया लोकेर दैन्य द्रबिला हृदय।
बाहिरे आसि दरशन दिला दयामय ॥२६२
बाहु तुलि बले प्रभु, बल हरि हरि।
उठिल श्रीहरिध्वनि चतुर्द्दिक भरि ॥२६३
प्रभु देखि प्रेमे लोक आनन्दितमन।
प्रभुके ईश्वर जानि करये स्तवन ॥२६४
स्तव शुनि प्रभुके कहये श्रीनिवास।
धरे गुप्त हञो केन बाहिरे प्रकाश ॥२६५
के शिक्षाइल ए लोके कहे कोन बात।
इहा सबार मुख ढाक दिया निज हात ॥२६६
सूर्य्य यैछे उदय करि चाहे लुकाइते।
बुझिते ना पारि तैछे तोमार चरिते ॥२६७
प्रभु कहेन श्रीनिवास छाड़ विड़म्बना।
सेइ सब कर याते आमार यातना ॥२६८
एत बलि लोके करि शुभदृष्टि दान।
अभ्यन्तर गेला, लोकेर पूर्ण हैल काम ॥२६९
रघुनाथदास नित्यानन्दपाश गेला।
चिड़ा दधि महोत्सब ताँहाइ करिला ॥२७०
ताँर आज्ञा लञा गेला प्रभुर चरणे।
प्रभु ताँरे समर्पिल स्वरूपेर स्थाने ॥२७१
ब्रह्मानन्द भारतीर घुचाइल चर्म्माम्बर।
एइमत लीला कैल छय वत्सर ॥२७२
एइ त कहिल मध्यलीलार सूत्रगण।
अन्त्यलीलार सूत्रेर करि विस्तार वर्णन ।२७३
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२७४

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे
मध्यलीलासूत्रवर्णनं नाम प्रथमः परिच्छेदः।१

❀ द्वितीय परिच्छेद ❀



विच्छेदेऽस्मिन् प्रभोरन्त्यलीलासूत्रानुवर्णने ।
गौरस्य कृष्णविच्छेदप्रलापाद्यनुवर्ण्यते ॥१॥

टीका—प्रभोः श्रीचैतन्यस्य गौरस्य अस्मिन् विच्छेदे कृष्णविच्छेद प्रलापादि अनुवर्ण्यते कीर्त्यते । अन्त्यलीला-सूत्रानुवर्णने अन्त्यखण्डलीलायाः सूत्रस्य अनुवर्णनं यत्र स तस्मिन् ॥१॥

मध्य खण्ड के इस द्वितीय परिच्छेद में अन्त्य खण्ड के अन्त्य लीलासूत्र वर्णन हेतु श्रीकृष्ण विच्छेद से श्रीमन्महाप्रभु के प्रलादादि वर्णित हो रहे हैं ॥१॥

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
शेष ये रहिल प्रभुर द्वादश वत्सर ।
कृष्णेर विरहस्फूर्त्ति हय निरन्तर ॥२
श्रीराधिकार चेष्टा यैछे उद्धव दर्शने ।
एइमत दशा प्रभुर हय रात्रि दिने ॥३
निरन्तर हय प्रभुर विरह उन्माद ।
भ्रममय चेष्टा सदा प्रलापमय बाद ॥४
रोमकूपे रक्तोद्गम दन्त सब हाले ।
क्षणे अङ्ग क्षीण हय क्षणे अङ्ग फुले ॥५
गम्भीरा भितरे रात्रे नाहि निद्रालब ।
भिते मुख शिर घसे क्षत हय सब ॥६
तिन द्वारे कपाट प्रभु यायेन बाहिरे ।
कभु सिंहद्वारे पड़े, कभु सिन्धुनीरे ॥७
चटक पर्व्वत देखि गोवर्द्धन भ्रमे ।
धाइया चले आर्त्तनादे करिया क्रन्दने ॥८
उपवनोद्यान देखि वृन्दावन ज्ञान ।
ताँहा याइ नाचे गाय क्षणे मूर्च्छा यान ॥९
काँहा नाहि शुनि येइ भावेर विकार ।
सेइ भाव हय प्रभुर शरीरे प्रचार ॥१०
हस्त पाद सन्धि यत वितस्ति प्रमाणे ।
सन्धि छाड़ि भिन्न हय चर्म्म रहे स्थाने ॥११
हस्तपद शिर सब शरीर भितरे ।
प्रविष्ट हय कूर्म्मरूप देखिये प्रभुरे ॥१२
एइमत अद्भुत भाव शरीरे प्रकाश ।
मनेते शून्यता वाक्य हा हा हुताश ॥१३
काँहा करो काँहा पाङ व्रजेन्द्रनन्दन ।
काँहा मोर प्राणनाथ मुरलीवदन ॥१४
काहारे कहिव कथा केवा जाने दुःख ।
व्रजेन्द्रनन्दन विनु फाटे मोर बुक ॥१५
एइमत बिलाप करि विह्वल अन्तर ।
रायेर नाटक श्लोक पड़े निरन्तर ॥१६॥

तथाहि श्रीजगन्नाथवल्लभनाटके (३ ९)

मदनिकां प्रति श्रीराधायाः वाक्यम्—

प्रेमच्छेदरुजोऽवगच्छति हरिर्नायं न च प्रेम वा
स्थानास्थानमवैति नापि मदनो जानाति नो दुर्बलाः
अन्यो वेद न चान्यदुःखमखिलं नो जीवनं वाश्रवं
द्वित्रीण्येव दिनानि यौवनमिदं हा हा विधेः का गतिः ।

टीका—हे सखि ! विधेर्ब्रह्मणः का गतिर्विधानं हा हा हन्त अतिविषादे. तां गतिमहं न जानामि । अयं हरिः श्रीकृष्णो नोऽस्मान् न अवगच्छति न जानाति । अस्मान् किंभूताः ?— प्रेमच्छेदरुजः प्रेमच्छेदात् प्रेमाङ्कुरभङ्गात् रुक् दुःखपूरं यासां ताः

इदं प्रेम स्थानास्थानं न अवैति, न जानाति, अयं यो मदनः कन्दर्पः दुर्ब्बलाः बलशून्याः अस्मान् न जानाति अतो राधां प्रति सखीवचनम् ।।—हे श्रीराधे ! कृपासिन्धुः श्रीकृष्ण. कदापि अङ्गीकरिष्यति । इति सखीवचनं श्रुत्वा मनसि विचार्य्यते ।—अखिलं सर्व्वं अन्यस्य दुःख अन्यो जनो न वेद न जानाति । सत्य-मेतत् शास्त्रप्रचारः । ततः सखीं प्रति राधावचनम् ।-हे सखि ! नोऽस्माकं जीवानां जीवनं वा अध्रुवं पद्म-पत्रजलमिव चञ्चलं, ततो नारीणामिदं यौवनं धनं द्वित्राणि एव दिनानि तिष्ठेत्, इति वाक्यं विचार्य्य न कथितम् ।।२।।

जगन्नाथ वल्लभनाटक में मदनिका के प्रति श्रीराधा का कथन है—

हे सखि हरि—श्रीकृष्णप्रेम विरह व्यथा को नहीं जानते हैं, स्थान अस्थान बोध - प्रेम को नहीं है, मदन भी हम सब को दुर्बल नहीं जानते हैं, अन्य व्यक्ति- अन्य जन के दुःख को नहीं जानता है, यह कथन सत्य है। हे सखि ! हमारे जीवन पद्म पत्रस्थ जल के समान चञ्चल है। यौवन भी दो तीन दिन स्थायी है, हाय ! काल की कैसी विचित्र गति है ! २

यथा राग ।

उपजिल प्रेमाङ्कुर, भाङ्गिल ये दुःख पूर,
कृष्ण ताहा नाहिकरे पान ।
बाहिरे नागराज, भितरे शठेर काज,
परनारी बधे सावधान ।।१७
सखि हे ना बुझिये विधिर बिधान ।
सुख लागि कैल प्रीति, हैल विपरीत गति,
एबे याय ना रहे पराण ।।१८
कुटिल प्रेमा अगेयान, नाहि जाने स्थानास्थान ।
भाल मन्द नारे विचारिते ।
क्रूर शठेर गुण डोरे, हाते गले बान्धि मोरे
राखियाछे, नारि उकाशिते ।।१९
ये मदन तनुहीन, परद्रोहे परवीण
पाँचबाण सन्धे अनुक्षण ।
अबलार शरीरे, बिन्धि करे जरजरे,
दुःख देय ना लय जीवन ।।२०
अन्येर ये दुःख मने, अन्ये ताहा नाहि जाने,
सत्य एइ शास्त्रेर प्रचार ।
अन्यजन काँहा लिखि, नाहि जाने प्राणसखी,
याते कहे धैर्य्य करिबार ।।२१
कृष्ण कृपापारावार, कभु करिबेन अङ्गीकार,
सखि ! तोर व्यर्थ ए वचन ।
जीवेर जीवन चञ्चल, येन पद्मपत्रेर जल,
तत दिन जीवे कोन् जन ।।२२
शत वत्सर पर्य्यन्त, जीवेर जीवन अन्त,
एइ वाक्य कह ना विचारि ।
नारीर यौवन धन, यारे कृष्ण करे मन,
से यौवन दिन दुइ चारि ।।२३
अग्नि यैछे निज धाम, देखाइया अभिराम,
पतङ्गेरे आकर्षिया मारे ।
कृष्ण ऐछे निजगुण, देखाइया हरे मन,
पाछे दुःख-समुद्रेते डारे ।।२४
एतेक विलाप करि, विषादे श्रीगौरहरि,
उघाड़िआ दुःखेर कपाट ।
भावेर तरङ्गबले, नानारूपे मन छले,
आर एक श्लोक कैल पाठ ।२५

तथाहि गोस्वामिपादोक्तः श्लोकः—
श्रीकृष्णरूपादि-निषेवणं विना,
व्यर्थानि मेऽहान्यखिलेन्द्रियाण्यलम् ।

पाषाण-शुष्केन्धन-भारकाण्यहो,
विभर्म्मि वा तानि कथं हतत्रप: ।।३।।

टीका—हे सखि ! कृष्णरूपादिनिषेवणं विना अहानि अखिलेन्द्रियाणि नयनश्रवणादीनि अलं अतिशयेन वृथानि भवन्ति । कथम्भूतानि ?—पाषाण-शुष्केन्धनभारकाणि शीलाशुष्ककाष्ठस्वरूपाणि । अहो आश्चर्य्यं ! किंवा तानि इन्द्रियाणि कथं अहं बिभर्म्मि धारयामि ? अहं कथम्भूत: ?—हतत्रप: हता त्रपा लज्जा यस्य, निर्लज्ज इत्यर्थ: ।।३।।

हे सखि ! श्रीकृष्ण के रूपादि निषेवण व्यतीत हमारे समस्त समय विफल हो रहे हैं एवं नयनादि इन्द्रिय समूह भी पाषाण एवं शुष्ककाष्ठवत् भार हो रहे हैं । हाय ! मैं कैसे निर्ल्लज्ज होकर इन सब का पोषण करूँगी ? ।।३।।

यथा राग ।

वंशीगानामृतधाम, लावण्यामृत जन्मस्थान,
येना देखे से चाँदवदन ।
से नयने किवा काज, पड़ुक तार माथे वाज,
से नयन रहे कि कारण ।।२६
सखि हे ! शुन मोर हतविधिबल ।
मोर वपु चित्त मन, सकल इन्द्रियगण,
कृष्ण विनु सकलि बिफल ।।२७
कृष्णेर मधुर वाणी, अमृतेर तरङ्गिणी,
तार प्रवेश नाहि ये श्रवणे ।
काणाकड़िछिद्रसम, जानिह सेइ श्रवण,
तार जन्म हैल अकारणे ।।२८
कृष्णेर अधरामृत, कृष्णगुण सुरचित,
सुधासार स्वादु विनिन्दन ।
तार स्वादु ये ना जाने, जन्मिञा ना मैल केने,
से रसना भेकजिह्वासम ।।२९

मृगमद नीलोत्पल, मिलने ये परिमल,
येइ हरे तार गर्व्वमान ।
हेन कृष्ण-अङ्गगन्ध, यार नाहि से सम्बन्ध,
सेइ नासा भस्त्रार समान ।।३०
कृष्ण-कर-पदतल, कोटि चन्द्र सुशीतल,
तार स्पर्श येन स्पर्शमणि ।
तार स्पर्श नाहि यार, से हउक छारखार,
सेइ बपु लौहसम जानि ।।३१
करि एत विलापन, प्रभु शचीनन्दन,
उघाड़िञा हृदयेर शोक ।
दैन्य निर्व्वेद विषादे, हृदयेर अवसादे,
पुनरपि पड़े एक श्लोक ।।३२

तथाहि श्रीजगन्नाथवल्लभनाटके (३।११)—

यदा यातो दैवान्मधुरिपुरसौ लोचनपथं
तदास्माकं चेतो मदनहतकेनाहृतमभूत् ।
पुनर्यस्मिन्नेष क्षणमपि दृशोरेति पदवीं
विधास्यामस्तस्मिन्नखिलघटिका रत्नखचिता ।।४।।

टीका—यदा यस्मिन् काले असौ मधुरिपु श्रीकृष्ण: अस्माकं लोचनपथं नयनमार्गमायात: आगत: । कस्मात् ?—दैवात् भाग्यवशात् । तदा तस्मिन्नेव क्षणे मदनहतकेन मदन: कन्दर्प: स एव हनको वैरि: तेन, तथा आनन्देन अस्माकं चेतो मन आहृतमभूत् । तस्मात् नयनभृङ्गे द्रष्टुं न प्राप्तम् । पुनरपि एष: कृष्ण: यस्मिन् क्षणे मम दृशोर्नयनयो पदवीं मार्गं क्षणमपि वेति आगमिष्यति, तस्मिन् क्षणे अखिलघटिका: सर्व्वघटिका रत्नखचिता रत्नैर्माला-चन्दनाभरणादिभि: खचिता अलङ्कृता वयं विधास्याम: ।।४।।

श्रीमती राधिका धैर्य्य धारण कर सखी को बोलीं—सखि ! हठात् जब मधुसूदन मेरे नयन गोचर हुये, तब हत मदन ने मेराचित्त को हर लिया।

अर्थात उस समय आनन्द में मेरा मन डूब गया, अतः नेत्रभृङ्ग को नयनों से मैं देख न सकी, पुनर्वार जब मधुसूदन नयन गोचर होंगे, तब मैं दण्ड क्षण समस्त समय को रत्न के द्वारा भूषित करूँगी ॥४॥

ये काले वा स्वपने, देखिनु वंशीवदने,
सेइ काले आइला दुइ वैरी ।
आनन्द आर मदन, हरि निल मोर मन,
देखिते ना पाइनु नेत्र भरि ॥३३
पुनः यदि कोन क्षण, कराय कृष्ण दरशन,
तबे से घटी, क्षण पल ।
दिया माला चन्दन, नाना रत्न आभरण,
अलङ्कृत करिमु सकल ॥३४
क्षणे बाह्य हैल मन, आगे देखे दुइ जन,
तारे पुछे आमि ना चैतन्य ।
स्वप्न प्राय कि देखिनु, किवा आमि प्रलापिनु,
तोमरा किछु शुनियाछ दैन्य ॥३५
शुन मोर प्राणेर बान्धव !
नाहि कृष्णप्रेम धन, दरिद्र मोर जीवन,
देहेन्द्रिय वृथा मोर सब ॥३६
पुन कहे, हाय हाय, शुन स्वरूप राम राय,
एइ मोर हृदयनिश्चय ।
शुनि करह विचार, हय नय कह सार,
एत कहि श्लोक उच्चारय ॥३७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३१।१)---
जयति ते इत्यस्य तोषणीकृतव्याख्यायां धृतो न्यायः ।
कइ अव रहिअं पेम्मं णहि होई माणुषे लोए ।
जइ होइ कस्स विरहो विरहे होन्तस्मि को
जीअइ ॥५॥

कैतव रहितं प्रेम नहि भवति मानुषे लोके यदि भवति कस्य विरहो भवति, विरहे भवत्यपि को जीवति । इति संस्कृतम् । कैतव रहितं प्रेम हि मानुषे लोके न भवति । यदि भवति कस्य विरहो, विरहे भवत्यपि को जीवति ?

मनुष्य जगत में कैतव शून्य—कपटता शून्य प्रेम- ममत्व नहीं होता है यदि कहीं होता है, तो वहाँ विरह नहीं होता है, विरह होने से कोई भी जीवित नहीं रहता ॥५॥

अकैतव कृष्णप्रेम, येन जाम्बूनद-हेम,
सेइ प्रेमा नृलोके ना हय ।
यदि हय तार योग, ना हय तार वियोग,
वियोग हैले केह ना जीयय ॥३८
एत कहि शचीसुत, श्लोक पड़े अद्‌भुत,
शुने दोँहे एकमन हञा ।
आपन हृदयकाज, कहिते बासिये लाज,
तबु कहि लाज वीज खाञा ॥३९

तथाहि महाप्रभुपादोक्तः श्लोकः—

न प्रेमगन्धोऽस्ति दरोऽपि मे हरौ,
क्रन्दामि सौभाग्यभरं प्रकाशितुम् ।
वंशीविलासाननलोकनं विना,
बिभर्म्मि यत् प्राणपतङ्गकान् वृथा ॥६॥

टीका – हरौ श्रीकृष्णे मे मम प्रेमगन्धो दरापि ईषदपि नास्ति, तथापि लोके सौभाग्यभरं प्रकाशितुं क्रन्दामि । श्रीकृष्णमुखावलोकनं विना यत् प्राण-पतङ्गकान् बिभर्म्मि, तत् वृथा विफलम् ॥६॥

श्रीकृष्ण में मेरा किञ्चिन्मात्र भी प्रेम गन्ध नहीं है । तथापि जन समक्ष में सौभाग्य प्रकाशार्थ क्रन्दन कर रहा हूँ । वंशीविलासी कृष्ण के वदन कमल दर्शन व्यतीत पतङ्गवत् प्राण धारण करना विफल है ॥६॥

दूरे शुद्धप्रेम बन्ध, कपट प्रेमेर गन्ध,
सेहो मोर कृष्ण नाहि पाय ।

तबे ये करि क्रन्दन, स्वसौभाग्य-प्रख्यापन,
कहि इहा जानिह निश्चय ॥४०
याते वंशीध्वनि सुख, ना देखि से चाँदमुख,
यद्यपि से नाहि आलम्बन ।
निज देहे करि प्रीति, केवल कामेर रीति,
प्राणकीटेर करिये धारण ॥४१
कृष्णप्रेम सुनिर्म्मल, येन शुद्ध गङ्गाजल,
सेइ प्रेम अमृतेर सिन्धु ।
मिर्म्मल से अनुरागे, ना लुकाये अन्य दागे,
शुक्लवस्त्रे यैछे मसिबिन्दु ॥४२
शुद्धप्रेम सुखसिन्धु, पाइ तार एक बिन्दु,
सेइ बिन्दु जगत डुवाय ।
कहिवार योग्य नहे, तथापि बाउले कहे,
कहिले वा केवा पातियाय ॥४३
एइ मत दिने दिने, स्वरूप रामानन्द सने,
निज भाव करेन विदित ।
वाह्ये विषज्वाला हय, भितरे अमृतमय,
कृष्णप्रेमार अद्भुत चरित ॥४४
एइ प्रेम आस्वादन, तप्त इक्षु चर्व्वण,
मुख ज्वले ना याय त्यजन ॥४५
सेइ प्रेमा यार मने, तार विक्रम सेइ जाने,
विषामृते एकत्र मिलन ॥४६

तथाहि विदग्धमाधवे (२ १८)

नान्दीमुखीं प्रति पौर्णमासीवाक्यम्—

पीड़ाभिर्नवकालकूट-कटुतागर्व्वस्य, निर्व्वासनो,
निःस्यन्देन मुदां सुधा-मधुरिमाहङ्कार-सङ्कोचनः ।
प्रेमा सुन्दरि ! नन्दनन्दनपरो जागर्त्ति यस्यान्तरे,
ज्ञायन्ते स्फुटमस्य वक्रमधुरास्तेनैव विक्रान्तयः ॥७॥

टीका—हे सुन्दरि ! हे नान्दीमुखी ! नन्दनन्दन-

परः श्रीकृष्णविषयः प्रेमा प्रेमभक्तिर्यस्य जनस्य अ
मनसि जागर्त्ति विराजते, तेनैव जनेन अस्य प्रे
विक्रान्तयो ज्ञायन्ते बुध्यन्ते । स्फुटं यथा स्या
कटुता तीक्ष्णत्वं अस्य गर्व्वस्य अहङ्कारस्य निर्व्वा
विनाशी । पुनः कीदृक् ?— निःस्यन्देन वि
मुदां सुखानां सुधामधुरिमाहङ्कारसङ्कोचनः । सु
नाममृतानां यो मधुरिमा माधुर्य्यं तस्याह
सङ्कोचयतीति ॥७॥

पौर्णमासी नान्दीमुखी के सम्बोधन कर कही
वत्से ! गाढ़ अनुराग का विकार दुर्बो
अतएव हे सुन्दरि ! सुनो, नन्दनन्दन श्री
विषयक प्रेम की कैसी विचित्र शक्ति है ?
व्यक्ति के अन्तर में यह प्रेम जागरूक है, इ
कुटिलता एवं माधुर्य्यरूप पराक्रम को वही जा
है, कृष्ण अदर्शन हेतु जो पीड़ा होती है, उ
अभिनव कालकूट विष की तीव्रता हेतु गर्व भी नि
होता है । एवं कृष्ण दर्शन से जो हर्ष क्षरित
है, उस से मधुरिमा का गर्व भी लुप्त हो जाता
सुतरां विषामृत मिश्रित कृष्ण प्रेम का माहात्म्
कैसे कहूँ ? ॥७॥

ये काले देखे जगन्नाथ, श्रीराम सुभद्रा सा
तबे जानि आइलाम कुरुक्षेत्र ।
सफल हैल जीवन, देखिनु पद्मलोचन
जुड़ाइल तनु-मन-नेत्र ॥४७
गरुड़ेर सन्निधाने, रहि करे दर
से आनन्देर कि कहिब बोले ।
गरुड़ स्तम्भेर तले, आछे एक निम्नख
सेइ खाल भरे अश्रुजले ॥४८॥
ताँहा हैते घरे आसि, माटिर उपरे व
नखे करे पृथिवी लिखन ।
हा हा काँहा वृन्दावन, काँहा गोपेन्द्रन
काँहा सेइ वंशीवदन ॥४९

काँहा से त्रिभङ्गठाम, काँहा सेइ वेणुगान,
काँहा सेइ यमुनापुलिन ।
काँहा नृत्य गीत हास, काँहा रासविलास,
काँहा प्रभु मदनमोहन ॥५०
उठिल नाना भावावेग, मने हैल उद्वेग,
क्षणमात्र नारे गोङाइते ।
प्रबल विरहानले, धैर्य्य हैल टलमले,
नाना श्लोक लागिला पड़िते ॥५१

तथाहि कृष्णकर्णामृते (४१)—
बिल्वमङ्गलवाक्यम् –
अमून्यधन्यानि दिनान्तराणि,
हरे ! त्वदालोकनमन्तरेण ।
अनाथबन्धो ! करुणैकसिन्धो !
हा हन्त हा हन्त ! कथं नयामि ॥८॥

टीका—हे हरे ! हे अनाथबन्धो ! हे करुणैक-सिन्धो ! हा हन्त हा हन्त अतिविषादे, त्वदालोकन-मन्तरेण त्वद्दर्शन विना अहं कथं केन प्रकारेण अमूनि अधन्यानि दिनान्तराणि नयामि ? ॥८॥

हे हरे ! हे अनाथबन्धो ! हे करुणैक सिन्धो ! हा हन्त, हा हन्त ! हाय हाय, हाय हाय, तुम्हारे दर्शन व्यतीत ये सब दिन विफल हैं, हाय कितना क्लेश ! मैं कैसे ये सब क्षण मुहूर्त्तादि को अतिवाहित करूँगा ? ॥८॥

तोमार दर्शन विने, अधन्य एइ रात्रि दिने,
एइ काल ना याय काटन ।
तुमि अनाथेर बन्धु, अपार करुणासिन्धु,
कृपा करि देह दरशन ॥५२
उठिल भाव चापल, मन हैल चञ्चल,
भावेर गति बुझन ना याय ।
अदर्शने पोड़े मन, केमने पाब दरशन,
कृष्ण ठाञि पुछेन उपाय ॥५३

तथाहि कृष्णकर्णामृते (३२)—
त्वच्छैशवं त्रिभुवनाद्भुतमित्यवेहि
मच्चापलञ्च तव वा मम वाधिगम्यम् ।
तत् किं करोमि विरलं मुरलीविलासि
मुग्धं मुखाम्बुजमुदीक्षितुमीक्षणाभ्याम् ॥६॥

टीका—हे व्रजेन्द्रनन्दन ! त्वच्छैशवं तव कैशोरं त्रिभुवनाद्भुतं त्रिभुवनेऽद्भुतमाश्चर्य्यमिति माधुर्य्यं त्वमेव अवेहि जानीहि । तत्र माधुर्य्ये मम चापलं चञ्चलञ्च, तदपि त्वमवेहि त्वं जानीहि । तत्र त्वहं किं करोमि ? तव वाधिगम्यं ज्ञेयं मम बाधिगम्यं तत् तव मुखाम्बुजं ईक्षणाभ्यां नयनाभ्यां उदीक्षितुं उच्चैर्द्रष्टुं यत्कृते तत् दृष्टं स्यात् त्वमेवोपदिश । तत् कीदृशं ?—मुग्धं मनोहरं, पुनर्विरलं सावहितं, दुर्ल्लभम् । पुनः कथम्भूतं ?—मुरलीविलासि मुरल्यां विलसति । ६॥

त्रिभुवन में तुम्हारी कैशोर लीला अपूर्व है, मेरी चपलता को सभी लोक जानते हैं, तुम भी जानते हो, और मैं भी जानता हूँ, तुम्हारे मुरली विलासी मनोहर वदन कमल अतीव दुर्लभ, अपलक नयनों से उस मुख को देखने के निमित्त मैं उपाय क्या करूँ ? ॥६॥

तोमार माधुरी बल, ताते मोर चापल,
एइ दुइ तुमि आमि जानि ।
काँहा करो काँहा याङ, काँहा गेले तोमा पाङ,
ताहा मोरे कहत आपनि ॥५४
नाना भावेर प्राबल्य, हैल सन्धिशावल्य,
भावे भावे हैल महारण ।
औत्सुक्य चापल्य दैन्य, रोषामर्ष आदि सैन्य,
प्रेमोन्माद सबार कारण ॥५५
मत्तगज भावगण, प्रभुर देह इक्षुवन,
गजयुद्धे वनेर दलन ।

प्रभुर हैल दिव्योन्माद, तनु मने अवसाद,
भावावेशे करे सम्बोधन ॥५६

तथाहि कृष्णकर्णामृते (४४)

हे देव ! हे दयित ! हे भुवनैकबन्धो !
हे कृष्ण ! हे चपल ! हे करुणैकसिन्धो !
हे नाथ ! हे रमण ! हे नयनाभिराम !
हाहा कदानुभवितासि पदं दृशोर्मे ॥१०॥

टीका—हे देव ! यः अन्याभिः सह दीव्यतीति देवस्त्वमतस्तत्रैव गच्छ। हे दयित ! मम प्राण-दयितोऽसि, त्वं द्रक्ष्यसे मद्भाग्यैतन्न पुनर्दर्शनं देहि। हे भुवनैकबन्धो ! तवात्र को दोषस्त्वं न केवलं ममैव, सर्व्वगोपीनामपि। हे बन्धो ! हे नाथ ! गच्छ। हे कृष्ण ! हे श्यामसुन्दर ! हे चित्ताकर्षक ! मम समान एव तादृशः कः पामरोऽस्ति यस्त्वयि मानं कुर्य्यात् ? तत् सकृदपि दर्शनं देहि। हे चपललोचन ! हे वल्लवीवृन्द--भुजङ्ग ! हे स्त्रीचौर ! गच्छ गच्छ। हे करुणैकसिन्धो ! यद्यहमपराधिनी, तथापि त्वं करुणया दयया कोमलया दर्शनं देहि। हे नाथ ! हे सम्भोगपते ! हे व्रजप्राण ! त्वं व्रजवासिनां नो रक्षितासि। हे रमण ! सदा मां रमयसीति रमणस्त्वं सुखं दातुमागतवान्। एष तवैव वैदग्ध्यविलासः। इदानीमप्यागत्य तथा कुरु। हे नयनाभिरामः ! हे नयनानन्द ! त्वञ्च मम प्राणधन। हा हा अतिखेदे, ननु वितर्के, मम दृशोर्नयनयोः पदं गोचरो भवितासि ? भविष्यसि ॥१०॥

हे देव ! हे दयित ! हे भुवनैक बन्धो ! हे कृष्ण ! हे चञ्चल ! हे करुणैक सिन्धो ! हे नाथ ! हे रमण ! हे नयनाभिराम ! तुम कब मेरे नयन गोचर होऊगे ? ॥१०॥

उन्मादेर लक्षण, कराय कृष्ण स्फुरण,
भावावेशे उठे प्रणयमान।
सोल्लुण्ठ वचन रीति, मान गर्व्व व्याजस्तुति
कभु निन्दा कभु त सम्मान ॥५७

तुमि देव क्रीड़ारत, भुवनेर नारी यत,
याइ कर अभीष्ट क्रीड़न।
तुमि आमार दयित, मोते वैसे तोमार चित,
मोर भाग्ये कैले आगमन ॥५८

भुवनेर नारीगण, सभार कर आकर्षण,
याह कर सब समाधान।
तुमि कृष्ण चित्तहर, ऐछे कोन पामर,
तोमारे वा के ना करे मान ॥५९

तोमार चपल मति, ना हय एकत्र स्थिति,
ताते तोमार नाहि किछु दोष।
तुमि त करुणासिन्धु, आमार प्राणेर बन्धु,
तोमाय मोर नाहि कभु रोष ॥६०

तुमि नाथ व्रजप्राण, व्रजेर कर परित्राण,
बहु कार्य्ये नाहि अवकाश।
तुमि आमार रमण, सुख दिते आगमन,
ए तोमार वैदग्ध्यविलास ॥६१

मोर वाक्य निन्दा मानि, कृष्ण छाड़ि गेल जानि,
शुन मोर ए स्तुति वचन।
नयनेर अभिराम, तुमि मोर धनप्राण,
हा हा पुनः देह दरशन ॥६२

स्तम्भ कम्प प्रस्वेद, वैवर्ण्याश्रु स्वरभेद,
देह हैल पुलके व्यापित।
हाँसे कान्दे नाचे गाय, उठि इति उति धाय,
क्षणे भूमे पड़िया मूर्च्छित ॥६३

मूर्च्छाय हैल साक्षात्कार, उठि करे हुहुङ्कार,
कहे एइ आइला महाशय।

कृष्णेर माधुरी गुणे, नाना भ्रम हय मने,
श्लोक पड़ि करये निश्चय ॥६४

तथाहि श्रीकृष्णकर्णामृते (६८)—

मारं स्वयं नु मधुरद्युतिमण्डलं नु
माधुर्य्यमेव नु मनो नयनामृतं नु ।
वेणीमृजो नु मम जीवितवल्लभो नु
कृष्णोऽयमभ्युदयते मम लोचनाय ॥११॥

टीका—हे सखि ! अयं कृष्णो मम लोचनाय अभ्युदयते प्रकाशयति । किम्भूतः ?— नु किंवा मारः कन्दर्पः मूर्तिमान् ? नु किंवा मधुरद्युतिमण्डलं रस शोभासमूहः ? नु किंवा माधुर्य्यं स्वयं मूर्त्तिमत् ? नु किंवा मनोनयनामृतं नयनयोः सुधा ? नु किंवा वेणीमृजः शुद्धवेणी ? नु किंवा मम जीवितवल्लभः प्राणप्रियः श्रीकृष्ण एव आगतः ? ॥११॥

हे सखि ! यह क्या स्वयं कन्दर्प ? है अथवा, मधुर कान्ति सम्पन्न चन्द्रमा है, किंवा, मूर्त्तिमान् माधुर्य्य है ? अथवा, मदीय वेणी उन्मोचन कारी प्रवासागत प्राणनाथ समागत है ? किंवा मदीय प्राण वल्लभ नव किशोर हरि मदीय नयनानन्द वर्द्धनार्थ उपस्थित हैं ? यह कौन है ? देखो ! ॥११॥

किवा एइ साक्षात् काम, किवा द्युति मूर्त्तिमान्,
कि माधुर्य्य स्वयं मूर्त्तिमन्त ।
किवा मनो नेत्रोत्सव, किवा प्राणेर वल्लभ,
सत्य कृष्ण आइला नेत्रानन्द ॥६५
गुरु नानाभावगण, शिष्य प्रभुर तनु मन,
नाना रीते सतत नाचाय ।
निर्व्वेद विषाद दैन्य, चापल्य हर्ष धैर्य्यमन्यु,
एइ नृत्ये प्रभुर काल याय ॥६६
चण्डीदास विद्यापति, रायेर नाटक गीति,
कर्णामृत श्रीगीतगोविन्द ।
स्वरूप रामानन्द सने, महाप्रभु रात्रि दिने,
गाय शुने परम आनन्द ॥६७
पुरीर वात्सल्य मुख्य, रामानन्देर शुद्ध सख्य,
गोविन्दाद्येर शुद्ध दास्य रस ।
गदाधर जगदानन्द, स्वरूपेर मुख्य रसानन्द,
एइ चारि भावे प्रभु वश ॥६८
लीलाशुक मर्त्यजन, तार हय भावोद्गम,
ईश्वरे से कि इहा विस्मय ।
ताहे मुख्य रसाश्रय, हैयाछेन महाशय,
ताते हय सर्व्वभावोदय ॥६९
पूर्व्वे व्रजविलासे, एइ तिन अभिलाषे,
यत्नेह आस्वाद नहिल ।
श्रीराधार भावसार, आपने करि अङ्गीकार,
सेइ तिन वस्तु आस्वादिल ॥७०
आपने करि आस्वादने, शिखाइल भक्तगणे,
प्रेम--चिन्तामणिर प्रभु धनी ।
नाहि जाने स्थानास्थान, यारे तारे कैलदान,
महाप्रभु दाताशिरोमणि ॥७१
एइ गुप्तभावसिन्धु, ब्रह्मा ना पाय एक बिन्दु,
हेन धन बिलाइल संसारे ।
हेन दयालु अवतार, हेन दाता नाहि आर,
गुण केह नारे वर्णिबारे ॥७२
कहिबार कथा नहे, कहिले केह ना बुझिये,
हेन चित्र चैतन्येर रङ्ग ।
सेइ से बुझिते पारे, चैतन्येर कृपा यारे,
हय तार दासानुदास सङ्ग ॥७३
चैतन्यलीला रत्नसार, स्वरूपेर भाण्डार
तिँह थुइला रघुनाथेर कण्ठे ।
ताँहा किछु ये शुनिल, ताहा इँहा विस्तारिल,
भक्तगणे दिल एइ भेटे ॥७४

यदि केह हेन कहे, ग्रन्थ कैल श्लोकमये,
इतर जन नारिबे बुझिते ।
प्रभुर येइ आचरण, सेइ करि वर्णन,
सर्व्वचित्त नारि आराधिते ॥७५

नाहि काहाँसे विरोध, नाहि काँहो अनुरोध,
सहज वस्तु करि विवेचन ।
यदि हय राग द्वेष, ताहा हय आवेश,
सहज बस्तु ना याय लिखन ॥७६

येवा नाहि बुझे केह, शुनिते शुनिते सेह,
कि अद्भुत चैतन्य चरित ।
कृष्णे उपजिबे प्रीति, जानिबे रसेर रीति,
शुनिलेइ हय बड़ हित ॥७७

भागवत श्लोकमय, टीका तार संस्कृत हय,
तबु कैछे बुझे त्रिभुवन ।
इँहा श्लोक दुइ चारि, तार व्याख्या भाषा करि,
केन ना बुझिबे सर्ब्बजन ॥७८

शेषलीलार सूत्रगण, कैल किछु विवरण,
इँहा विस्तारिते चित्त-हय ।
थाके यदि आयुःशेष, विस्तारिव लीलाशेष,
यदि महाप्रभुर कृपा हय ॥७९

आमि वृद्ध जरातुर, लिखिते काँपये कर
मने किछु स्मरण ना हय ।
ना देखिये नयने, ना शुनिये श्रवणे,
तबु लिखि ए बड़ विस्मय ॥८०

एइ अन्त्यलीलासार, सूत्रमध्ये विस्तार,
करि किछु करिल वर्णन ।
इहा मध्ये मरि यबे, वर्णिते नारिव तबे,
एइ लीला भक्तगणधन ॥८१

सङ्क्षेपे एइ सूत्र कैल, येइ इहा ना लिखि
आगे ताहा करिब विचार ।
यदि तत दिन जीये, महाप्रभुर कृपा हये
इच्छा करि करिब विस्तार ॥८२

छोट बड़ भक्तगण, वन्दो सबार श्रीचरण
सबे मोरे करह सन्तोष ।
स्वरूप गोँसाञिर मत, रूप रघुनाथ जाने
ताहि लिखि नाहि मोर दोष ॥८३

श्रीचैतन्य नित्यानन्द, अद्वैतादि भक्तवृन्द
शिरे धरि सबार चरण ।
स्वरूप रूप सनातन, रघुनाथेर श्रीचरण
धूलि करि मस्तकभूषण ॥८४

पाञा याँर आज्ञाधन, व्रजेर वैष्णवगण
वन्दो ताँर मुख्य हरिदास ।
चैतन्यविलाससिन्धु, कल्लोलेर एक बिन्दु
तार कणा कहे कृष्णदास ॥८५

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे
अन्त्यलीला--सूत्र--वर्णने प्रेमोन्माद-
प्रलापवर्णनं नाम द्वितीयः
परिच्छेदः ॥२॥



❀ तृतीय परिच्छेद ❀

न्यासं विधायोत्प्रणयोऽथ गौरो
वृन्दावनं गन्तुमना भ्रमाद् यः।
राढ़े भ्रमन् शान्तिपुरीमयित्वा,
ललास भक्तैरिह तं नतोऽस्मि ॥१॥

टीका—अथानन्तरं गौरं श्रीकृष्णचैतन्याख्यं सन्न्यासं विधाय गृहीत्वा उत्प्रणयः प्रेमा यस्य स प्रेमाविष्टः सन् वृन्दावनं गन्तुं मनो यस्य स स्वभ्रमणं कृतवान्, राढ़े राढ़देशे दिनत्रयं भ्रमन् सन् तद्देशं अयित्वा शान्तिपुरं गत्वा अद्वैतगृहे ललास विराजतेस्म, तं गौरमहं नतोस्मि ॥१॥

जिन्होंने सन्न्यास ग्रहण के पश्चात् वृन्दावन गमन समय में प्रेम विह्वलता हेतु राढ़ देश में भ्रमण करते करते शान्तिपुर में उपस्थित होकर भक्त वृन्द के सहित भगवद् भक्ति रसास्वादन किया, उन श्रीगौराङ्ग देव को नमस्कार करता हूँ ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
चव्विशवत्सर शेष येइ माघ मास।
तार शुक्लपक्षे प्रभु करिला सन्न्यास ॥२
सन्न्यास करि प्रेमावेशे चलिला वृन्दवन।
राढ़देशे तिन दिन करिला भ्रमण ॥३
एइ श्लोक पड़ि प्रभु भावेर आवेशे।
भ्रमिते पवित्र कैल सब राढ़देशे ॥४

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२३।५७)—
उद्धवं प्रति श्रीकृष्णोक्तं भिक्षुकवचनम्—

एतां स आस्थाय परात्मनिष्ठा-
मध्यासितां पूर्व्वतमैर्महर्षिभिः।
अहन्तरिष्यामि दुरन्तपारं,
तमो मुकुन्दाङ्घ्रिनिषेवयैव ॥२॥

टीका—श्रीकृष्णचरणारविन्दसेवया तमः संसाराख्यं तरिष्यामि। कीदृशं ?—दुरन्तपारं दुरन्तः कठिनः पारो यस्य तत्। किं कृत्वा?—पूर्व्वतमैरतिप्राचीनैर्महर्षिभिः मुनिभिरुपासितां एतां परात्मनिष्ठां श्रीकृष्णविषयनिष्ठां आस्थाय आश्रित्य ।२

मैं प्राचीन महर्षि गण प्रदर्शित परमनिष्ठा के सहित श्रीमुकुन्द के पदारविन्द निषेवण के द्वारा दुस्तर अन्धकार रूप संसार से उत्तीर्ण हो जाऊँगा ।२

प्रभु कहे साधु एइ भिक्षुर वचन।
मुकुन्दसेवन--व्रत कैल निर्द्धारण ॥५
परात्मनिष्ठामात्र वेश हय धारण।
मुकुन्दसेवाय हय संसारतारण ॥६
सेइ वेश कैल एबे वृन्दावन गिया।
कृष्णनिषेवण करि निभृते बसिया ॥७
एत बलि चले प्रभु प्रेमोन्मादेर चिह्न।
दिग्--विदिग्--ज्ञान नाहि किवा रात्रिदिन ॥८
नित्यानन्द, आचार्य्यरत्न, मुकुन्द तिन जन।
प्रभु पाछे पाछे तिने करेन गमन ॥९
येइ येइ प्रभु देखे सेइ सब लोक।
प्रेमावेशे हरि बले खण्डे दुःख शोक ॥१०
गोपबालक सब प्रभुके देखिया।
हरि हरि बलि उठे उच्च करिया ॥११
शुनि ता सबार निकट गेला गौरहरि।
बल बल बले सबार शिरे हस्त धरि ॥१२

ता सबारे स्तुति करे "तोमरा भाग्यवान् ।
कृतार्थ करिले मोरे शुनाञा हरिनाम" ॥१३
गुप्ते ता सबारे आनि ठाकुर नित्यानन्द ।
शिखाइल सबाकारे करिया प्रबन्ध ॥१४
वृन्दावन पथ प्रभु पुछेन तोमारे ।
गङ्गातीर पथ तबे देखाइओ ताँरे ॥१५
तबे प्रभु पुछिलेन शुन शिशुगण ।
कह देखि कोन् पथे याव वृन्दावन ॥१६
शिशुसब गङ्गातीर पथ देखाइल ।
सेइ पथे आवेशे प्रभु गमन करिल ॥१७
आचार्य्य-- रत्नेरे कहे नित्यानन्द गोँसाञि ।
शीघ्र याह तुमि अद्वैत--आचार्य्येर ठाञि ॥१८
प्रभु लैया याव आमि ताहार मन्दिरे ।
साबधाने रहे येन नौका लञा तीरे ॥१९
तबे नवद्वीपे तुमि करिह गमन ।
शची सह लञा आइस सब भक्तगण ॥२०
ताँरे पाठाइला नित्यानन्द महाशय ।
महाप्रभुर आगे आसि दिल परिचय ॥२१
प्रभु कहे श्रीपाद तोमार काँहा आगमन ।
श्रीपाद कहे तोमा सने याव वृन्दावन ॥२२
प्रभु कहे कत दूरे आछे वृन्दावन ।
तेँहो कहेन कर एइ यमुना दर्शन ॥२३
एत बलि ताँरे निल गङ्गासन्निधाने ।
आवेशे प्रभुर हैल गङ्गाय यमुनाज्ञाने ॥२४
अहो भाग्य ! यमुनार पाइल दरशन ।
एइ बलि यमुनार करेन स्तवन ॥२५

तथाहि चैतन्यचन्द्रोदय नाटके (५।१३)—

चिदानन्दभानोः सदानन्दसूनोः
परप्रेमपात्री द्रव--ब्रह्मगात्री ।

अघानां लवित्री जगत्क्षेमधात्री
पवित्रीक्रियान्नो वपुर्मित्रपुत्री ॥३॥

टीका—मित्रपुत्री सूर्य्यस्य कन्या नोऽस्म वपुर्देहं पवित्रीक्रियात । सा किम्भूता ?—अघा लवित्री पापनाशिनी, जगत्-क्षेमधात्री जगतां मङ्ग दायिनी । पुनः किम्भूता ?—द्रवब्रह्मगात्री जलम ब्रह्मरूपं गात्रं तनुर्यस्याः सा । पुनः कथम्भूता सदा नित्यं चिदानन्दभानोः नन्दसूनोः कृष्णस्य प्रेमपात्री ॥३॥

जो चिन्मय आनन्दमय नन्द नन्दन की प्र पात्री हैं, जो जलमय ब्रह्म रूप में अधिष्ठित हैं, सु पातक पुञ्जकी संहार कत्री एवं जगत् वासी कल्याण दायिनी है, वह यमुना हम सब को पवि करें ॥३॥

एत बलि नमस्करि कैल गङ्गास्नान ।
एक कोपीन नाहि द्वितीय परिधान ॥२
हेन काले आचार्य्य गोँसाञि नौकाते चड़िञा
आइला नूतन कौपीन वहिर्व्वास लञा ॥२
आगे आसि रहिला आचार्य्य नमस्कार करि
आचार्य्य देखि बोले प्रभु मने संशय
करि ॥२
तुमि त अद्वैत गोँसाञि हेथा केन आइला
आमि वृन्दावने तुमि केमने जानिला ॥२
आचार्य्य कहे तुमि याँहा ताँहा वृन्दावन ।
मोर भाग्ये गङ्गातीरे तोमार आगमन ॥३
प्रभु कहे नित्यानन्द आमारे वञ्चिला ।
गङ्गातीरे आनि मोरे यमुना कहिला ॥३
आचार्य्य कहे मिथ्या नहे श्रीपाद वचन ।
यमुनाते स्नान तुमि करिला एखन ॥३
गङ्गाय यमुना बहे हैञा एकधार ।
पश्चिमे यमुना बहे पूर्व्वे गङ्गाधार ॥३

पश्चिमे यमुना वहे ताँहा कैल स्नान ।
आर्द्र कौपीन छाड़, कर शुष्क परिधान ॥३४
प्रेमावेशे तिन दिन आछ उपवास ।
आज मोर घरे भिक्षा, चल मोर बास ॥३५
एक मुष्टि अन्न मुञि करियाछो पाक ।
शुका रूखा व्यञ्जन कैल सूप आर शाक ॥३६
एत बलि नौकाय चड़ाञा लैल निज घर ।
पाद प्रक्षालन कैल आनन्द--अन्तर ॥३७
प्रथमेइ पाक करियाछे आचार्य्याणी ।
विष्णु समर्पण कैल आचार्य्य आपनि ॥३८
तिन ठाँइ भोग बाड़ाइल सम करि ।
कृष्णेर भोग बाड़ाइल धातुपात्रे धरि ॥३९
बत्रिशा आठिया कलार आङ्गटिया पाते ।
दुइ ठाँइ भोग बाड़ाइल भाल मते ॥४०
मध्ये पीत घृतसिक्त शाल्यन्नेर स्तूप ।
चारिदिके व्यञ्जन-डोङ्गा आर मुद्गसूप ॥४१
वास्तूक शाक--पाक विविधप्रकार ।
पटोल कुष्माण्ड बड़ि मानकचु आर ॥४२
राइ मरीच शुक्तादि दिञा फल मूले ।
अमृत निन्दक पञ्चविध तिक्त झाले ॥४३
कोमल निम्बपत्र सह भाजा वार्त्ताकी ।
पटोल फुलबड़ि भाजा कुष्माण्ड मानचाकी ।४४
नारिकेलशस्य छाना शर्करा मधुर ।
मोचाघण्ट दुग्ध-कुष्माण्ड सकल प्रचुर ॥४५
मधुराम्ल बड़ा अम्ल अम्ल पाँच छय ।
सकल व्यञ्जन कैल लोके यत हय ॥४६
मुद्गबड़ा माषबड़ा कलाबड़ा मिष्ट ।
क्षीरपुली नारिकेल पुली यत पीठा इष्ट ॥४७
बत्रिशा आठिया कलार डोङ्गा बड़ बड़ ।
चले हाले नाहि डोङ्गा अति बड़ दड़ ॥४८
पञ्चाश पञ्चाश डोङ्गा व्यञ्जन भरिया ।
तिन भोगेर आशे पाशे राखिल धरिया ॥४९
सघृत पायस नव मृत्-कुण्डिका भरि ।
तिनपात्र घनावर्त्त दुग्ध दिला धरि ॥५०
दुग्धचिड़ा कला आर दुग्धलकलकी ।
यतेक करिल ताहा कहिते ना शकि ॥५१
दुइ पाशे धरिल सब मृत्कुण्डिका भरि ।
चाँपाकला दधि सन्देश कहिते ना पारि ॥५२
अन्न व्यञ्जन उपरे दिल तुलसीमञ्जरी ।
तिन जलपात्रे सुवासित जल भरि ॥५३
तिन शुभ्र पीठ तार उपरे वसन ।
कृष्णेर भोग साक्षात् कृष्णे कराय भोजन ॥५४
आरतिर काले दुइ प्रभु बोलाइल ।
प्रभु सङ्गे सबे आसि आरति देखिल ॥५५
आरति करिया कृष्णे कराइल शयन ।
आचार्य्य गोँसाञि आसि प्रभुरे कैल निवेदन ५६
गृहेर भितर प्रभु करह गमन ।
दुइ भाइ आइला तबे करिते भोजन ॥५७
मुकुन्द हरिदास दुइ प्रभु बोलाइला ।
योड़हाते दुइजन कहिते लागिला ॥५८
मुकुन्द कहे मोर किछु कृत्य नाहि सरे ।
पाछे मुञि प्रसाद पाब तुमि याह घरे ॥५९
हरिदास बले मुञि पापिष्ठ अधम ।
बाहिरे एक मुष्टि पाछे करिव भोजन ॥६०
दुइ प्रभु लञा आचार्य्य गेला भितर घर ।
प्रसाद देखिञा प्रभुर आनन्द--अन्तर ॥६१

ऐछे अन्न ये कृष्णेरे कराय भोजन ।
जन्मे जन्मे शिरे धरों ताँहार चरण ॥६२
प्रभु जाने तिन भोग कृष्णेर नैवेद्य ।
आचार्य्येर मन-कथा नहे प्रभुर वेद्य ॥६३
प्रभु कहे वैस तिने करि ये भोजन ।
आचार्य्य कहे आमि करिब परिवेशन ॥६४
कोन् स्थाने वसिब आर, आन दुइ पात ।
अल्प करि आनि ताहे देह व्यञ्जन भात ॥६५
आचार्य्य कहे वैस दुँहे पिँड़िर उपरे ।
एत बलि हाते धरि बसाइल दोँहारे ॥६६
प्रभु कहे सन्न्यासीर भक्ष्य नहे उपकरण ।
इहा खाइले कैछे हबे इन्द्रियबारण ॥६७
आचार्य्य कहेन छाड़ आपन चातुरी ।
आमि सब जानि सन्न्यासेर भारि भुरि ॥६८
{ भोजन करह छाड़ वचनचातुरी ।
प्रभु कहे एत अन्न खाइते ना पारि ॥६९
आचार्य्य कहे अकपटे करह आहार ।
यदि खाइते ना पार रहिवेक आर ॥७०
प्रभु कहे एत अन्न नारिब खाइते ।
सन्न्यासीर धर्म्म नहे उच्छिष्ट राखिते ॥७१
आचार्य्य कहे नीलाचले खाओ चौयान्नबार ।
एक एक बारे अन्न शत शत भार ॥७२
तिन जनेर भक्ष्य पिण्ड तोमार एक ग्रास ।
तार लेखाय एइ अन्न नहे एक ग्रास ॥७३
मोर भाग्ये मोर गृहे तोमार आगमन ।
छाड़ह चातुरी प्रभु करह भोजन ॥७४
एत बलि जल दिल दुइ गोँसाञिर हाते ।
हासिया लागिला दोँहे भोजन करिते ॥७
नित्यानन्द कहे कैल तिन उपवास ।
आजि पारणा करिते मने छिल बड़ आश ॥
आजिह उपवास हैल आचार्य्य निमन्त्रणे ।
अर्द्धपेट ना भरिवेक एइ ग्रासेक अन्ने ॥७
आचार्य्य कहे, हओ तुमि तैर्थिक सन्न्यासी ।
कभु फल मूल खाओ, कभु उपवासी ॥७
दरिद्र ब्राह्मणघरे पाइले मुष्टिक अन्न ।
इहाते सन्तोष हओ छाड़ लोभमन ॥७
नित्यानन्द कहे यबे कैले निमन्त्रण ।
तत दिते चाइ, यत करि ये भोजन ॥८०
शुनि नित्यानन्द कथा ठाकुर अद्वैत ।

कहिलेन तारे किछु पाइया पीरित ॥८
भ्रष्ट अबधूत तुमि उदर पूरिते ।
सन्न्यास लइयाछ बुझि ब्राह्मण दण्डिते ॥
तुमि खाइते पार दश विश मनेर अन्न ।
आमि ताँहा काँहा पाव दरिद्र ब्राह्मण ॥८३
ये पाञाछ मुष्टेचक अन्न ताहा खाञा उठ ।
पागलाइ ना करिह ना छड़ाइह झुट ॥८४
एइमत हास्यरसे करेन भोजन ।
अर्द्ध अर्द्ध खाञा प्रभु छाड़ेन व्यञ्जन ॥८५
सेइ व्यञ्जने आचार्य्य करेन पूरण ।
एइ मत पुनः पुनः परिवेशे व्यञ्जन ॥८६
दोना व्यञ्जने भरि करे प्रभुके प्रार्थना ।
प्रभु बलेन आर कत करिब भोजन ॥८७
आचार्य्य कहे ये दियाछि ताहा ना छाड़िबा ।
एखन ये दिये तार अर्द्धेक खाइबा ॥८८

नाना यत्ने दैन्ये प्रभुरे कराइला भोजन ।
आचार्य्येर इच्छा प्रभु करिल पूरण ॥८९
नित्यानन्द कहे मोर पेट ना भरिल ।
लञा याह तोर अन्न किछु ना खाइल ॥९०
एत बलि एक ग्रास भात हाते लञा ।
उझालि फेलिल आगे येन क्रुद्ध हञा ॥९१
भात दुइ चारि लागिल आचार्य्येर अङ्गे ।
भात अङ्गे लञा आचार्य्य नाचे बड़ रङ्गे ॥९२
अवधूतेर झुटा लागिल मोर अङ्गे ।
परम पवित्र मोरे कैल एइ ढङ्गे ॥९३
तोरे निमन्त्रण कैनु पाइनु तार फल ।
तोर जाति कुल नाहि, सहजे पागल ॥९४
आपन समान मोरे करिबार तरे ।
झुटा दिले विप्र बलि भय ना करिले ॥९५
नित्यानन्द कहे एइ कृष्णेर प्रसाद ।
इहाके झुठा कहिले तुमि कैले अपराध ॥९६
शतेक सन्न्यासी यदि कराह भोजन ।
तबे एइ अपराध हइबे खण्डन ॥९७
आचार्य्य कहे ना करिब सन्न्यासी निमन्त्रण ।
सन्न्यासी नाशिले मोर सब स्मृतिधन ॥९८
एत बलि दुइ जने कराइल आचमन ।
उत्तम शय्याते लञा कराइल शयन ॥९९
लवङ्ग एलाच आर उत्तम रसबास ।
तुलसी मञ्जरी सह दिल मुखबास ॥१००
सुगन्धि चन्दने लिप्त कैल कलेबरे ।
सुगन्धि पुष्पमाला दिल हृदय उपरे ॥१०१
आचार्य्य करिते चाहे पादसम्बाहन ।
सङ्कुचित हञा प्रभु कहेन वचन ॥१०२
बहु नाचाइले आमाय छाड़ नाचायन ।
मुकुन्द हरिदास लञा करह भोजन ॥१०३
तबे त आचार्य्य सङ्गे लञा दुइ जने ।
करिल इच्छाय भोजन ये आछिल मने ॥१०४
शान्तिपुरेर लोक शुनि प्रभुर आगमन ।
देखिते आइला लोक प्रभुर चरण ॥१०५
हरि हरि बले लोक आनन्दित हञा ।
चमत्कार हैल प्रभुर सौन्दर्य्य देखिञा ॥१०६
गौर देहकान्ति सूर्य्य जिनिया उज्ज्वल ।
अरुण वस्त्रकान्ति ताते करे झलमल ॥१०७
आइसे याय लोक हर्षे नाहि समाधान ।
लोकेर संघट्ट दिन हैल अवसान ॥१०८
सन्ध्याते आचार्य्य आरम्भिल संकीर्त्तन ।
आचार्य्य नाचेन, प्रभु करेन दर्शन ॥१०९
नित्यानन्द प्रभु बुले आचार्य्य धरिञा ।
हरिदास पाछे नाचे हरषित हञा ॥११०

धानश्री राग ।

"कि कहब रे सखि आनन्द ओर ।
चिरदिने माधव मन्दिरे मोर' ॥१११
एइ पद गाइ हर्षे करेन नर्त्तन ।
स्वेद कम्प पुलकाश्रु हुङ्कार गर्ज्जन ॥११२
फिर फिरि कभु प्रभुर धरेन चरण ।
चरणे धरिया प्रभुरे बलेन वचन ॥११३
अनेक दिन मोरे एड़ाले भाण्डिया ।
घरे पाञाछि एबे राखिब बान्धिया ॥११४
एत बलि आचार्य्य आनन्दे करेन नर्त्तन ।
प्रहरेक रात्रि आचार्य्य कैल संकीर्त्तन ॥११५

प्रेमेर उत्कण्ठा प्रभुर, नाहि कृष्णसङ्ग ।
विरहे बाड़िल प्रेम ज्वालार तरङ्ग ॥११६
व्याकुल हइया प्रभु भूमिते पड़िला ।
गोँसाञि देखिया आचार्य्य नृत्य सम्बरिला ॥११७
प्रभुर अन्तर मुकुन्द जाने भालमते ।
भावेर सदृश पद लागिला गाइते ॥११८
आचार्य्य उठाइला प्रभुके करिते नर्त्तन ।
पद शुनि प्रभुर अङ्ग ना याय धरण ॥११९
अश्रु कम्प पुलक स्वेद गद्गद वचन ।
क्षणे उठे क्षणे पड़े क्षणेके रोदन ॥१२०

तथाहि पदम् ।

हा हा प्राणप्रिय सखि ! किना हैल मोरे ।
कानु-प्रेमविषे मोर तनु मन जारे ॥१२१
रात्रि दिने पोड़े मन सोयाथ ना पाङ ।
याँहा गेले कानु पाङ ताँहा उड़ि याङ ॥१२२
एइ पद गाय मुकुन्द सुमधुर स्वरे ।
शुनिया प्रभुर चित्त विदरे अन्तरे ॥१२३
निर्व्वेद विषादामर्ष चापल्य गर्व्व दैन्य ।
प्रभुर शरीरे युद्ध करे भावसैन्य ॥१२४
जर्ज्जर हइला प्रभु भावेर प्रहारे ।
भूमिते पड़िला श्वास नाहिक शरीरे ॥१२५
देखिया चिन्तित हैला सब भक्तगण ।
आचम्बिते उठे प्रभु करिया गर्ज्जन ॥१२६
बोल बोल बलि नाचे आनन्दे विह्वल ।
बुझान ना याय भावतरङ्ग प्रबल ॥१२७
नित्यानन्द सङ्गे बुले प्रभुके धरिया ।
आचार्य्य हरिदास बुले पाछेते नाचिया ॥१२८

एइमत प्रहरेक नाचे प्रभु रङ्गे ।
कभु हर्ष कभु विषाद भावेर तरङ्गे ॥१२९
तिन दिन उपवासे करिया भोजन ।
उद्दण्ड नृत्ये प्रभुर हैल परिश्रम ॥१३०
तेँह त ना जाने, प्रेमे भावाविष्ट हञा ।
नित्यानन्द महाप्रभुके राखिल धरिञा ॥१३१
आचार्य्य गोँसाञि तबे राखिल कीर्त्तन ।
नाना सेबा करि प्रभुके कराइल शयन ॥१३२
एइमत दश दिन भोजन कीर्त्तन ।
एक रूपे करि कैल प्रभुर सेवन ॥१३३
प्रभाते आचार्य्यरत्न दोलाय चड़ाइञा ।
भक्तगण सङ्गे आइला शचीमाता लञा ॥१३४
नदीया नगरेर लोक स्त्री बालक वृद्ध ।
सब लोक आइला हैल संघट्ट समृद्ध ॥१३५
नृत्य करि करे प्रभु नामसङ्कीर्त्तन ।
शची माता लञा आइला अद्वैतभवन ॥१३६
शची आगे पड़िला प्रभु दण्डवत् हञा ।
कान्दिते लागिला शची कोलेते करिञा ॥१३७
दोँहार दर्शने दोँहे हइला विह्वल ।
केश ना देखिया शची हइला विकल ॥१३८
अङ्ग मुछे, मुख चुम्बे, करे निरीक्षण ।
देखिते ना पाय अश्रु भरिल नयन ॥१३९
कान्दिया कहेन शची, वाछारे निमाइ ।
विश्वरूपसम ना करिह निठुराइ ॥१४०
सन्न्यासी हइया पुन ना दिल दर्शन ।
तुमि तैछे कैले मोर हइबे मरण ॥१४१
प्रभु त कन्दिया कहे शुन मोर आइ ।
तोमार शरीर एइ मोर किछु नाइ ॥१४२

तोमार पालित देह जन्म तोमा हैते ।
कोटि जन्मे तोमार ऋण ना पारि शोधिते ।१४३
जानि वा ना जानि कैल यद्यपि सन्न्यास ।
तथापि तोमाके कभु नहिब उदास ॥१४४
तुमि याँहा कह आमि ताँहाइ रहिब ।
तुमि येइ आज्ञा देह सेइ त करिब ॥१४५
एत बलि पुनःपुन करे नमस्कार ।
तुष्ट हञा आइ कोले करे बार बार ॥१४६
तबे आइ लञा आचार्य्य गेला अभ्यन्तर ।
भक्तगण मिलिते प्रभु हइला सत्वर ॥१४७
एके एके मिलिला प्रभु सब भक्तगणे ।
सबार मुख देखि करे दृढ़ आलिङ्गने ॥१४८
केश ना देखिया भक्त यद्यपि पाय दुःख ।
सौन्दर्य्य देखिते तबु पाय महासुख ॥१४९
श्रीवास रामाइ विद्यानिधि गदाधर ।
गङ्गादास वक्रेश्वर मुरारि शुक्लाम्बर ॥१५०
बुद्धिमन्तखान नन्दन श्रीधर विजय ।
वासुदेव दामोदर मुकुन्द सञ्जय ॥१५१
कत नाम लब यत नवद्वीपवासी ।
सबारे मिलिला प्रभु कृपादृष्टे हासि ॥१५२
आनन्दे नाचये सबे बलि हरि हरि ।
आचार्य्य मन्दिर हैल श्रीवैकुण्ठपुरी ॥१५३
यत लोक आइल महाप्रभुके देखिते ।
नाना ग्राम हैते आर नवद्वीप हैते ॥१५४
सबाकारे वासा दिल भक्ष्य अन्न पान ।
बहुदिन आचार्य्य सबार कैल समाधान ॥१५५
आचार्य्य गोँसाञिर भाण्डार अक्षय अव्यय ।
यत द्रव्य व्यय करे पुन तैछे हय ॥१५६
सेइ दिन हैते शची करेन रन्धन ।
भक्तगण लञा प्रभु करेन भोजन ॥१५७
दिने आचार्य्येर प्रीति, प्रभुर दर्शन ।
रात्रे लोक देखे प्रभुर नर्त्तन कीर्त्तन ॥१५८
कीर्त्तन करिते प्रभुर हय भावोदय ।
स्तम्भ कम्प पुलकाश्रु गद्गद प्रलय ॥१५९
घन घन पड़े प्रभु आछाड़ खाइया ।
देखि शचीमाता कहे रोदन करिया ॥१६०
चूर्ण हैल हेन वासों निमाइकलेवर ।
हा हा करि विष्णुपाशे मागे एइ बर ॥१६१
बाल्यकाल हैते तोमार ये कैलुँ सेवन ।
तार एइ फल मोरे देह नारायण ॥१६२
ये काले निमाइ पड़े धरणी उपरे ।
व्यथा येन नाहि लागे निमाइशरीरे ॥१६३
एइमत शचीदेवी वात्सल्ये विह्वल ।
हर्ष भय दैन्य भावे हइला विकल ॥१६४
श्रीनिवास आदि यत विप्र भक्तगण ।
प्रभुके भिक्षा दिते हैल सबाकार मन ॥१६५
शुनि शची सबाकारे करेन मिनति ।
मुञि निमाइर दर्शन आर पाव कति ॥१६६
तोमा सबा सने हबे अन्यत्र मिलन !
मुञि अभागिनीर मात्र एइ दरशन ॥१६७
यावत् आचार्य्य-गृहे निमाइर अवस्थान ।
मुञि भिक्षा दिव सबारे एइ मागो दान ॥१६८
शुनि भक्तगण कहे करि नमस्कार ।
मातार ये इच्छा सेइ सम्मत सबार ॥१६९
मातार वैराग्य देखि प्रभुर व्यग्र मन ।
भक्तगण एकत्र करि बलिल वचन ॥१७०

तोमा सबार आज्ञा विने चलिलाङ वृन्दावन ।
याइते नारिल विघ्न कैल निवर्त्तन ॥१७१

यद्यपि सहसा आमि करियाछि सन्नचास ।
तथापि तोमा सबा हैते नाहिब उदास ॥१७२

तोमा सबा ना छाड़िब यावत् आमि जीव ।
मातारे तावत् आमि छाड़िते नारिव ॥१७३

सन्नचासीर धर्म्म नहे सन्नचास करिया ।
निज जन्मस्थाने रहे कुटुम्ब लइया ॥१७४

केह येन एइ बोले ना करे निन्दन ।
सेइ मुक्ति कह याते रहे दुइ धर्म्म ॥१७५

शुनिया प्रभुर एइ मधुर वचन ।
शचीपाशे आचार्य्यादि करिला गमन ॥१७६

प्रभुर निवेदन ताँरे सकल कहिला ।
शुनि शची जगन्नमाता कहिते लागिला ॥१७७

तेँहो यदि इहा रहे तबे मोर सुख ।
ताँर निन्दा हय यदि सेहो मोर दुःख ॥१७८

ताते एइ युक्ति भाल मोर मने लय ।
नीलाचले रहे यदि दुइ कार्य्य हय ॥१७९

नीलाचले नवद्वीपे यैछे दुइ घर ।
लोकगतागति वार्त्ता पाब निरन्तर ॥१८०

तुमि सब करिते पार गमनागमन ।
गङ्गास्नाने कभु हबे ताँर आगमन ॥१८१

आपनार दुःख सुख ताहा नाहि गणि ।
ताँर येइ सुख सेइ निज सुख मानि ॥१८२

शुनि भक्तगण ताँरे करेन स्तवन ।
वेद आज्ञा यैछे माता तोमार वचन ॥१८३

भक्तगण प्रभु आगे आसिया कहिल ।
शुनिया प्रभुर मने आनन्द हइल ॥१८४

नवद्वीपवासी आदि यत लोकगण ।
सबारे सम्मान करि बलिल वचन ॥१८५

तुमि सब लोक मोर परम बान्धव ।
एक भिक्षा मागि, मोरे देह तुमि सब ॥१८६

घरे याञा कर सदा कृष्णसङ्कीर्त्तन ।
कृष्णनाम कृष्णकथा कृष्ण--आराधन ॥१८७

आज्ञा देह नीलाचले करिये गमन ।
मध्ये मध्ये आसि तोमा सबाय दिब
दरशन ॥१८८

एत बलि सबाकारे ईषत् हासिया ।
विदाय करिल प्रभु सम्मान करिया ॥१८९

सबाय विदाय दिया प्रभु चलिते कैल मन ।
हरिदास कान्दि कहे करुण वचन ॥१९०

नीलाचल चलिले तुमि, मोर कोन गति ।
नीलाचल याइते मोर नाहिक शकति ॥१९१

मुञि अधम तोमार ना पाब दरशन ।
केमने धरिब एइ पापिष्ठ जीवन ॥१९२

प्रभु कहे कर तुमि दैन्य सम्बरण ।
तोमार दैन्ये आमार व्याकुल हय मन ॥१९३

तोमा लागि जगन्नाथे करिब निवेदन ।
तोमा लञा याञा आमिब श्रीपुरुषोत्तम ॥१९४

तबे त आचार्य्य कहे विनय करिया ।
दिन दुइ चारि रह कृपा त करिया ॥१९५

आचार्य्य वचन प्रभु ना करे लङ्घन ।
रहिला अद्वैतगृहे ना कैला गमन ॥१९६

आनन्दित हैला आचार्य्य शची भक्त सब ।
प्रतिदिन करे आचार्य्य महामहोत्सब ॥१९७

दिने कृष्णकथारस भक्तगण सङ्गे ।

रात्रे महामहोत्सव सङ्कीर्त्तन रङ्गे ॥१९८
आनन्दित हञा शची करेन रन्धन ।
सुखे भोजन करे प्रभु लञा भक्तगण ॥१९९
आचार्य्येर श्रद्धा भक्ति गृह सम्पद् धने ।
सकल सफल हैल प्रभु आराधने ॥२००
शचीर आनन्द बाड़े देखि पुत्रमुख ।
भोजन कराञा कैल पूर्ण निज सुख ॥२०१
एइ मत अद्वैतगृहे भक्तगण मेले ।
वञ्चिल कतेक दिन नाना कुतूहले ॥२०२
आर दिन प्रभु कहे सब भक्तगणे ।
निज निज गृहे सबे करह गमने ॥२०३
घरे गिया कर सबे कृष्ण सङ्कीर्त्तन ।
पुनरपि आमा सङ्गे हइबे मिलन ॥२०४
कभु वा करिबे तोमरा नीलाद्रि गमन ।
कभु वा आसिब आमि करिते गङ्गास्नान ॥२०५
नित्यानन्द गोँसाञि पण्डित जगदानन्द ।
दामोदर पण्डित आर दत्त मुकुन्द ॥२०६
एइ चारि जन आचार्य्य दिल प्रभु सने ।
जननी प्रबोध करि वन्दिल चरणे ॥२०७
ताँरे प्रदक्षिण करि करिल गमन ।
एथा आचार्य्येर घरे उठिल क्रन्दन ॥२०८
निरपेक्ष हइया प्रभु शीघ्र ये चलिला ।
कान्दिते कान्दिते आचार्य्य पाछे त
लागिला ॥२०९
कतदूर गिया प्रभु करि योड़ हात ।
आचार्य्य प्रबोधि कहे किछु मिष्ट बात ॥२१०
जननी प्रबोध कर भक्त समाधान ।
तुमि व्यग्र हैले कारो ना रहिबे प्राण ॥२११
एत बलि प्रभु ताँरे करि आलिङ्गन ।
निवृत्त करिया कैल स्वच्छन्द गमन ॥२१२
गङ्गातीरे गेला प्रभु चारि जन साथे ।
नीलाद्रि चलिला प्रभु छत्रभोग--पथे ॥२१३
चैतन्यमङ्गले प्रभुर नीलाद्रि गमन ।
विस्तारि वर्णियाछेन दास वृन्दावन ॥२१४
अद्वैतगृहे प्रभुर विलास शुने येइ जन ।
अचिराते मिले तारे चैतन्यचरण ॥२१५
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२१६

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे
सन्न्यासकरणाद्वैतगृहे भोजनविलास-
वर्णनं नाम तृतीयः परिच्छेदः ॥३॥

❀ चतुर्थ परिच्छेद ❀

यस्मै दातुं चोरयन् क्षीरभाण्डं
गोपीनाथः क्षीरचोराभिधोऽभूत् ।
श्रीगोपालः प्रादुरासीद्वशः सन्
यत् प्रेम्ना तं माधवेन्द्रं नतोऽस्मि ॥१॥

टीका—तं माधवेन्द्रं अहं नतोस्मि । तं किम्भूतं ? प्रेम्णा पूर्णं । यस्मै माधवेन्द्राय गोपीनाथः कृष्णः क्षीरभाण्डं दातुं चोरयन् क्षीरचोराभिधः क्षीरचोर-नामा अद्भुत--गोपालो यस्य माधवेन्द्रस्य दिदृक्षुः द्रष्टुमिच्छुः सन् प्रादुरासीत् प्रकटोऽभुत् ॥१॥

गोपीनाथ जिन को देने के निमित्त क्षीर भाण्ड हरण कर 'क्षीर' 'चोरा' नाम प्राप्त हुए थे, एवं श्रीगोपाल जिनके प्रेमवश होकर आविर्भूत हुए, मैं उन माधवेन्द्र पुरी को प्रणाम करता हूँ ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
नीलाद्रिगमन जगन्नाथदरशन ।
सार्व्वभौमभट्टाचार्य्य प्रभुर मिलन ॥२
एइ सब लीला प्रभुर दास वृन्दावन ।
विस्तारि करियाछेन उत्तम वर्णन ॥३
सहजे विचित्र मधुर चैतन्यविहार ।
वृन्दावनदास मुखे अमृतेर धार ॥४
अतएव ताहा वर्णिले हय पुनरुक्ति ।
दम्भ करि वर्णि यदि तैछे नाहि शक्ति ॥५
चैतन्यमङ्गले याहा करिला वर्णन ।
सूत्ररूपे सेइ लीला करिये सूचन ॥६
तार सूत्रे आछे तिँह ना कैल वर्णन ।
यथाकथञ्चित् करि से लीला-कथन ॥७
अतएव ताँर पाये करि नमस्कार ।
ताँर पाये अपराध नहुक आमार ॥८
एइ मत महाप्रभु चलिला नीलाचले ।
चारिभक्त सङ्गे कृष्णकीर्त्तन कुतूहले ॥९
भिक्षा मागि एक दिन एकग्रामे गिया ।
आपने बहुत अन्न आनिल मागिया ॥१०
पथे बड़ बड़ दानी विघ्न नाहि करे ।
ता सबारे कृपा करि आइला रेमुणारे ॥११
रेमुणाते गोपीनाथ परम मोहन ।
भक्ति करि कैल प्रभु ताँर दरशन ॥१२
ताँर पादपद्मनिकटे प्रणाम करिते ।
ताँर पुष्पचूड़ा पड़िल प्रभुर माथाते ॥१३
चूड़ा पाञा प्रभु मने आनन्दित हैया ।
बहु नृत्य गीत कैला भक्तगण लैया ॥१४

प्रभुर प्रभाव देखि प्रेम रूप गुण ।
विस्मित हइला गोपीनाथेर दासगण ॥१
नानामत प्रीते कैल प्रभुर सेवन ।
सेइ रात्रि ताँहा प्रभु करिला वञ्चन ॥१
महाप्रसाद क्षीर लोभे रहिला प्रभु तथा ।
पूर्व्वे ईश्वरपुरी ताँरे कहियाछेन कथा ॥१
क्षीरचोरा गोपीनाथ प्रसिद्ध ताँर नाम ।
भक्तगणे कहे प्रभु सेइ त आख्यान ॥१
पूर्व्वे माधवपुरी लागि क्षीर कैल चुरि ।
अतएव नाम हैल क्षीरचोरा हरि ॥१
पूर्व्वे श्रीमाधवपुरी आइला वृन्दावन ।
भ्रमिते भ्रमिते गेला गिरि गोवर्द्धन ॥२
प्रेमे मत्त नाहि ताँर दिवा रात्रि ज्ञान ।
क्षणे उठे क्षणे पड़े नाहि स्थानास्थान ॥२
शैल परिक्रमा करि गोविन्दकुण्डे आसि ।
स्नान करि वृक्षतले आछे सन्ध्याय वसि ॥
गोपाल बालक एक दुग्धभाण्ड लञा ।
आसि आगे धरि किछु बोलेन हासिञा ॥२
पुरी एइ दुग्ध लञा कर तुमि पान ।
मागि केन नाहि खाओ कि वा कर ध्यान ॥
बालकेर सौन्दर्य्ये पुरीर हइल सन्तोष ।
ताहार मधुर वाक्ये गेल भोक् शोक ॥२
पुरी कहे के तुमि, काहाँ तोमार वास ।
केमने जानिले आमि करि उपवास ॥२
बालक कहे, गोप आमि एइ ग्रामे वसि ।
आमार ग्रामेते केह ना रहे उपवासी ॥२
केह मागि खाय अन्न केह दुग्धाहार ।
अयाचक जने आमि दिये त आहार ॥२

जल लैते स्त्रीगण तोमारे देखि गेला ।
स्त्री सब दुग्ध दिञा आमारे पाटाइला ॥२९
गोदोहन करिते चाहि शीघ्र आमि याब ।
आर वार आसि एइ भाण्डटी लइब ॥३०
एत बलि बालक गेला ना देखिये आर ।
माधवपुरीर चित्ते हैल चमत्कार ॥३१
दुग्ध पान करि भाण्ड धुइञा राखिल ।
वाट देखे सेइ बालक पुनः ना आइल ॥३२
वसि नाम लय पुरी निद्रा नाहि हय ।
शेष रात्रे तन्द्रा हैल वाह्यवृत्ति लय ॥३३
स्वप्ने देखे सेइ बालक सम्मुखे आसिया ।
एक कुञ्जे लञा गेला हातेते धरिञा ॥३४
कुञ्ज देखाइया कहे, आमि एइ कुञ्जे रइ ।
शीत वृष्टि दावाग्निते दुःख बड़ पाइ ॥३५
ग्रामेर लोक आनि आमा काढ़ कुञ्ज हैते ।
पर्व्वत उपरे लञा राख भालमते ॥३६
एक मठ करि ताँहा करह स्थापन ।
बहु शीतल जले आमा कराह स्नपन ॥३७
बहु दिन तोमार पथ करि निरीक्षण ।
कबे आसि माधव आमा करिबे सेवन ॥३८
तोमार प्रेमवशे करि सेवा अङ्गीकार ।
दर्शन दिञा निस्तारिव सकल संसार ॥३९
श्रीगोपाल नाम मोर गोवर्द्धनधारी ।
व्रज्रेर स्थापित आमि इँहा अधिकारी ॥४०
शैल उपरे हैते आमा कुञ्जे लुकाइञा ।
म्लेच्छभये सेवक आमार गेल पलाइञा ॥४१
सेइ हैते रहि आमि एइ कुञ्जस्थाने ।
भाल हैल आइला, आमा काढ़ सावधाने ॥४२
एत बलि से बालक अन्तर्द्धान कैल ।
जागिञा माधवपुरी विचार करिल ॥४३
कृष्णके देखिनु मुञि नारिनु चिनिते ।
एत बलि प्रेमावेशे पड़िला भूमिते ॥४४
क्षणेक रोदन करि मन कैल धीर ।
आज्ञार पालन लागि हइला सुस्थिर ॥४५
प्रातः स्नान करि पुरी ग्राममध्ये गेला ।
सब लोके एकत्र करि कहिते लागिला ॥४६
ग्रामेर ईश्वर तोमार गोवर्द्धनधारी ।
कुञ्जे आछेन, ताँरे चल बाहिर ये करि ॥४७
अत्यन्त निविड़ कुञ्ज नारि प्रवेशिते ।
कुठार कोदाली लह द्वार ये करिते ॥४८
शुनि तार सङ्गे लोक चलिला हरिषे ।
कुञ्ज काटि द्वार करि करिल प्रवेशे ॥४९
ठाकुर देखिल माटी तृणे आच्छादित ।
देखि सब लोक हैल आनन्दे विस्मित ॥५०
आवरण दूर करि करिल विदिते ।
महाभारि ठाकुर केह नारे चालाइते ॥५१
महा महा बलिष्ठ लोक एकत्र हइया ।
पर्व्वत उपर गेला ठाकुर लइया ॥५२
पाथर-सिंहासन उपर ठाकुर वसाइल ।
बड़ एक पाथर पृष्ठे अवलम्ब दिल ॥५३
ग्रामेर ब्राह्मण सब नव घट लञा ।
गोविन्दकुण्डेर जल आनिल छानिञा ॥५४
नब शत घटजल कैल उपनीत ।
नाना वाद्य भेरी बाजे स्त्रीगणे गाय गीत ॥५५
केह गाय केह नाचे महोत्सब हैल ।
अनेक सामग्री यतन करि आनाइल ॥५६

दधि दुग्ध घृत आइल यत ग्राम हैते ।
भोगसामग्री आइला सन्देशादि यते ॥५७
तुलस्यादि पुष्प वस्त्र आइल अनेक ।
आपने माधवपुरी करे अभिषेक ॥५८
अङ्गमला दूर करि कराइल स्नान ।
बहु तैल दिया कैल श्रीअङ्ग चिक्कण ॥५९
पञ्चगव्य पञ्चामृते स्नान कराइया ।
महास्नान कराइल शत घट दिया ॥६०
पुन: तैल दिया कैल श्रीअङ्ग चिक्कण ।
शङ्खगङ्गोदके कैल स्नान समापन ॥६१
श्रीअङ्ग मार्ज्जन करि वस्त्र पराइल ।
चन्दन तुलसी पुष्पमाला अङ्गे दिल ॥६२
धूप दीप करि नाना भोग लागाइल ।
दधि दुग्ध सन्देशादि यत किछु छिल ॥६३
सुवासित जल नव पात्रे समर्पिल ।
आचमन दिया पुन: ताम्बूल अर्पिल ॥६४
आरति करिया कैल अनेक स्तवन ।
दण्डवत् करि कैल आत्मसमर्पण ॥६५
ग्रामेर यत तण्डुल दालि गोधूमादि चूर्ण ।
सकल आनिञा दिल पर्व्वत हैल पूर्ण ॥६६
कुम्भकारेर घरे छिल यत मृद्भाजन ।
सब आइल, प्रात हैते चड़िल रन्धन ॥६७
दश विप्र अन्न रान्धि करे एक स्तूप ।
जन चारि पाँच रान्धे नानाविध सूप ॥६८
वन्य शाक फल मूले विविध व्यञ्जन ।
केह बड़ा बड़ि कड़ि करे विप्रगण ॥६९
जन पाँच सात रुटि करे राशि राशि ।
अन्न व्यञ्जन रुटि सब रहे घृते भासि ॥७०

नववस्त्र पाति ताते पलाशेर पात ।
रान्धि रान्धि तार उपर राशि कैल भात ॥
तार पाशे रुटिराशि उप-पर्व्वत हैल ।
सूप-व्यञ्जन-भाण्ड सब चौदिके धरिल ॥
तार पाशे दधि दुग्ध माठा शिखरिणी ।
पायस मथनि सर पाशे धरे आनि ॥
हेन मते अन्नकूट करिया साजन ।
पुरीगोँसाञि गोपालेरे कैल समर्पन ॥
अनेक घट भरि दिल-सुशीतल जल ।
बहु दिनेर क्षुधाय गोपाल खाइला सकल ।
यद्यपि गोपाल सब अन्न व्यञ्जन खाइल ।
ताँर हस्तस्पर्शे अन्न पुन: तैछे हैल ॥
इँहा अनुभव कैल माधव गोँसाञि ।
ताँर ठाञि गोपालेर लुका किछु नाञि ॥
एक दिनेर उद्योगे ऐछे महोत्सब हैल ।
गोपाल प्रभावे हैल अन्ये ना जानिल ॥
आचमन दिञा दिल विड़ार सञ्चय ।
आरति करिल लोके करे जय जय ॥
शय्या कराइल नूतन खाट आनाइया ।
नव वस्त्र आनि तार उपरे पातिया ॥
तृणटाटि दिञा चारि दिक् आबरिल ।
उपरे आो एक टाटि दिञा आच्छादिल ॥
पुरी गोँसाञि आज्ञा दिल यतेक ब्राह्मणे ।
आबाल वृद्ध ग्रामेर लोक कराह भोजने ।
सब लोक वसि क्रमे भोजन करिल ।
ब्राह्मण ब्राह्मणीगणे आगे खाओयाइल ॥
अन्य ग्रामेर लोक येइ देखिते आइल ।
गोपाल देखिया सबे प्रसाद खाइल ॥

पुरीर प्रभाव देखि लोके चमत्कार ।
पूर्व्व अन्नकूट येन हैल साक्षात्कार ॥८५
सकल ब्राह्मण पुरी वैष्णव करिल ।
सेइ सेइ सेवामध्ये सबा नियोजिल ॥८६
पुनः दिनशेषे प्रभुर कराइल उत्थान ।
किछु भोग लागाइया कराइल जलपान ॥८७
गोपाल प्रकट हैल देशे शब्द हैल ।
आप पाश ग्रामेर लोक देखिते आइल ॥८८
एकैक दिन एक एक ग्रामे लइल माङ्गिया ।
अन्नकूट करे सबे हरषित हञा ॥८९
रात्रिकाले ठाकुरे कराइया शयन ।
पुरी गोँसाइ कैल किछु गव्य भोजन ॥९०
प्रातः काले पुनः तैछे करिल सेवन ।
अन्न लञा एक ग्रामेर आइल लोकगण ॥९१
अन्न घृत दधि दुग्ध ग्रामे यत छिल ।
गोपालेर आगे लोक आनिया धरिल ॥९२
पूर्व्व दिन प्राय विप्र करिल रन्धन ।
तैछे अन्नकूट गोपाल करिल भोजन ॥९३
व्रजवासी लोकेर कृष्णे सहज पिरीति ।
गोपालेर सहज प्रीति व्रजवासी प्रति ॥९४
महाप्रसादान्न यत खाइल सब लोक ।
गोपालदर्शने खण्डे सबार दुःख शोक ॥९५
आश पाश व्रजभूमेर यत लोक सब ।
एक एक दिन आसि करे महोत्सब ॥९६
गोपाल प्रकट शुनि नाना देश हैते ।
नाना द्रव्य लञा लोक लागिला आसिते ॥९७
मथुरार लोक सब बड़ बड़ धनी ।
भक्ति करि नाना द्रव्य भेट धरे आनि ॥९८
स्वर्ण रौप्य वस्त्र गन्ध नाना उपहार ।
असंख्य आइसे नित्य बाड़िल भाण्डार ॥९९
एक महाधनी क्षत्रिय कराइल मन्दिर ।
केह पाक-भाण्डार कैल केह त प्राचीर ॥१००
एक एक व्रजवासी एकैक गाभि दिल ।
सहस्र सहस्र गाभी गोपालेर हैल ॥१०१
गौड़ हैते आइल दुइ वैरागी ब्राह्मण ।
पुरी गोँसाञि राखिल ताँदेर करिया यतन १०२
सेइ दुये शिष्य करि सेवा समर्पिल ।
राजसेबा हैल पुरीर आनन्द बाड़िल ॥१०३
एइमत वत्‌ ।र दुइ करेन सेवन ।
एक दिन पुरी गोँसाञि देखिल स्वपन ॥१०४
गोपाल कहे, पुरी आमार ताप नाहि याय ।
मलय-चन्दन लेप तबे से जुड़ाय ॥१०५
मलयज आन याञा नीलाचल हैते ।
अन्य हैते नहे तुमि चलह तुरिते ॥१०६
स्वप्न देखि पुरी गोँसाञि हैला प्रेमावेशे ।
प्रभु आज्ञा पालिबारे चलिला पूर्व्वदेश ॥१०७
सेबार निर्ब्बन्ध लोक करिया स्थापन ।
आज्ञा मागि गौड़ देशे करिल गमन ॥१०८
शान्तिपुर आइला श्रील अद्वैतेर घरे ।
पुरीर प्रेम देखि आचार्य्य आनन्द-अन्तरे १०९
ताँर ठाँइ मन्त्र लैल यतन करिया ।
चलिला दक्षिणे पुरी ताँरे दिक्षा दिया ॥११०
रेमुणाते कैल गोपीनाथ दरशन ।
ताँर रूप देखि प्रेमावेशे हैल मन ॥१११
नृत्यगीत करि जगमोहने वसिला ।
काँहा काँहा भोग लागे ब्राह्मणे पुछिला ।११२

सेबार सौष्ठव देखि आनन्दितमने ।
उत्तम भोग लागे इहा हैल अनुमाने ॥११३
यैछे इँहा भोग लागे सकलि पुछिब ।
तैछे भियाने भोग गोपाले लागाब ॥११४
एइ लागि पुछिलेन ब्राह्मणेर स्थाने ।
ब्राह्मण कहिल सब भोगविवरणे ॥११५
शय्याभोगे क्षीर लागे अमृतकेलि नाम ।
द्वादश मृत्पात्र भरि अमृतसमान ॥११६
गोपीनाथेर क्षीर करि प्रसिद्ध नाम यार ।
पृथिवीते ऐछे भोग काँहा नाञि आर ॥११७
हेनकाले सेइ भोग ठाकुरे लागिल ।
शुनि पुरी गोँसाञि किछु मने विचारिल ११८
अयाचित क्षीरप्रसाद यदि अल्प पाइ ।
स्वाद जानि तैछे क्षीर गोपाले लागाइ ॥११९
एइ इच्छाय लज्जा पाञा विष्णुस्मरण कैल ।
हेनकाले भोग सरि आरति बाजिल ॥१२०
आरति देखिया पुरी करि नमस्कार ।
बाहिर हैला काहे किछु ना बलिला आर १२१
अयाचित वृत्ति पुरी विरक्त उदास ।
अयाचित पाइले खान नहे उपवास ॥१२२
प्रेमामृते तृप्त क्षुधा तृष्णा नाहि बाधे ।
क्षीरे इच्छा हैल ताहे माने अपराधे ॥१२३
ग्रामेर शून्य हाटे बसि करेन कीर्त्तन ।
एथा पूजारी कराइल ठाकुरे शयन ॥१२४
निजकृत्य करि पूजारी करिल शयन ।
स्वपने ठाकुर आसि बलेन वचन ॥१२५
उठह पूजारी, द्वार करह मोचन ।
क्षीर एक राखियाछि सन्नचासी कारण १२६

धड़ार अञ्चले ढाका एक क्षीर हय ।
तोमरा ना जान ताहा आमार मायाय ॥
माधवपुरी सन्नचासी आछे हाटेते वसिञा
ताहाकेत एइ क्षीर शीघ्र देह लञा ॥१
स्वप्न देखि उठि पूजारी करिल विचार ।
स्नान करि कपाट खुलि मुक्त कैल द्वार ॥
धड़ार आँचलतले पाइल सेइ क्षीर ।
स्थान लेपि क्षीर लैया हइला बाहिर ॥१
द्वार दिञा ग्रामे गेला सेइ क्षीर लञा ।
हाटे हाटे बोले माधवपुरीरे चाहिञा ॥१
क्षीर लञो एइ, यार नाम माधवपुरी ।
तोमार लागि गोपीनाथ क्षीर कैल चुरि १
क्षीर लञा सुखे तुमि करह भक्षणे ।
तोमा सम भाग्यवान् नाहि त्रिभुवने ॥१
एत शुनि पुरी गोँसाञि परिचय दिल ।
क्षीर दिया पूजारी ताँरे दण्डवत् कैल ॥
क्षीरेर वृत्तान्त ताँरे कहिल पूजारी ।
शुनि प्रेमाविष्ट हैला श्रीमाधव पुरी ॥१
प्रेम देखि सेवक कहे हइया विस्मित ।
कृष्ण ये इहार बश हय यथोचित ॥१
एत बलि नमस्करि गेला से ब्राह्मण ।
आवेशे करिला पुरी से क्षीर भक्षण ॥१
पात्र प्रक्षालन करि खण्ड खण्ड कैल ।
वहिर्व्वासे बान्धि सेइ ठिकारि राखिल ॥
प्रतिदिन एकखानि करेन भक्षण ।
खाइले प्रेमावेश हय अद्भुत कथन ॥१
ठाकुर मोरे क्षीर दिला सर्व्व लोक शुनि
दिने लोकभिड़ हबे मोर प्रतिष्ठा जानि ॥

एइ भये रात्रिशेषे चलिला श्रीपुरी ।
सेइ स्थाने गोपीनाथे दण्डवत् करि ॥१४१

चलि चलि आइला क्रमे श्रीनीलाचल ।
जगन्नाथ देखि प्रेमे हइला विह्वल ॥१४२

प्रेमावेशे उठे पड़े हासे नाचे गाय ।
जगन्नाथ दरशने महासुख पाय ॥१४३

माधवेन्द्रपुरी श्रीपाद आइला लोके हैल ख्याति ।
सब आसि ताँरे कैल भक्ति स्तुति ॥१४४

प्रतिष्ठार स्वभाव एइ जगते विदित ।
ये ना वाञ्छे तार हय बिधाता निर्म्मित ।१४५

प्रतिष्ठार भये पुरी गेला पलाइया ।
कृष्णप्रेमे प्रतिष्ठा सङ्गे चले लागि लैया १४६

यद्यपि उद्विग्न हैल पलाइते मन ।
ठाकुरेर चन्दनसाधन हइल बन्धन ॥१४७

जगन्नाथेर सेवक यत यतेक महान्त ।
सबाके कहिल पुरी गोपाल वृत्तान्त ॥१४८

गोपाल चन्दन मागे शुनि भक्तगण ।
आनन्दे चन्दन लागि करिला यतन ॥१४९

राजपात्र सने यार आछे परिचय ।
ताँहा मागि कर्पूर चन्दन करिल सञ्चय ।१५०

एक विप्र एक सेवक चन्दन वहिते ।
पुरी गोँसाञिर सङ्गे दिल सम्बल सहिते १५१

घाटे दान छाड़ाइते राजपात्रद्वारे ।
राजलिखा करि दिल पुरी गोँसाञिर करे ।१५२

चलिला माधवपुरी चन्दन लइया ।
कत दिने रेमुणाय उत्तरिला गिया ॥१५३

गोपीनाथेर चरणे कैला बहु नमस्कार ।
प्रेमावेशे नृत्य गीत करिला अपार ॥१५४

पुरी देखि सेवक सब सम्मान करिल ।
क्षीर महाप्रसाद दिञा भिक्षा कराइल ॥१५५

सेइ रात्रि देवालये करिल शयन ।
शेषरात्रि हैले पुरी देखिल स्वपन ॥१५६

गोपाल आसिया कहे, शुन हे माधव ।
कर्पूर चन्दन आमि पाइलाम सब ॥१५७

कर्पूर सहित घसि ए सब चन्दन ।
गोपीनाथेर अङ्गे नित्य करह लेपन ॥१५८

गोपीनाथ आर आमार एक अङ्ग हय ।
इँहा चन्दन दिले हवे आमार तापक्षय ॥१५९

ना कर आग्रह दुःख, ना भाविह मने ।
विश्वासे चन्दन देह आमार वचने ॥१६०

एत बलि गोपाल गेला, गोँसाञि जागिया ।
गोपीनाथेर सेवकगणे आनिल डाकिया ।१६१

प्रभुर आज्ञा हैल एइ कर्पूर चन्दन ।
गोपीनाथेर अङ्गे नित्य करह लेपन ॥१६२

इँहा चन्दन दिले गोपाल हइबे शीतल ।
स्वतन्त्र ईश्वर ताँर आज्ञा से प्रबल ॥१६३

ग्रीष्मकाले गोपीनाथ परिबे चन्दन ।
शुनि आनन्दित हैल सेवकेर मन ॥१६४

पुरी कहे एइ दुइ घसिबे चन्दन ।
आर जना दुइ देह दिव ये वेतन ॥१६५

एइमत प्रत्यह देय चन्दन घसिञा ।
पराय सेवक सब आनन्द करिञा ॥१६६

प्रत्यह चन्दन पराय यावत् हैल अन्त ।
तथाइ रहिला पुरी तावत् पर्य्यन्त ॥१६७

ग्रीष्मकाल-अन्ते पुनः नीलाचल गेला ।
नीलाचले चातुर्म्मास्य आनन्दे रहिला ॥१६८

श्रीमुखे माधवपुरीर अमृतचरित्र ।
भक्तगणे शुनाञा प्रभु करे आस्वादित ॥१६९
प्रभु कहे, नित्यानन्द करह विचार ।
पुरीसम भाग्यवान् जगते नाहि आर ॥१७०
दुग्धदानछले कृष्ण याँरे देखा दिल ।
तिनबार स्वप्ने आसि यारे कृपा कैल ॥१७१
याँर प्रेमे वश हञा प्रकट हइला ।
सेवा अङ्गीकार करि जगत तारिला ॥१७२
याँर लागि गोपीनाथ क्षीर कैला चुरि ।
अतएव नाम हैल क्षीरचोरा हरि ॥१७३
कर्पूर चन्दन याँर अङ्गे चड़ाइल ।
आनन्दे पुरी गोँसाञिर प्रेम उथलिल ॥१७४
म्लेच्छदेश कर्पूर चन्दन आनिते जञ्जाल ।
पुरी दुःख पाबे इहा जानिया गोपाल ॥१७५
महादयामय प्रभु भकत-वत्सल ।
चन्दन परि भक्तश्रम करिल सफल ॥१७६
पुरीर प्रेमपराकाष्ठा करह विचार ।
अलौकिक प्रेम चित्ते लागे चमत्कार ॥१७७
परम विरक्त मौनी सर्व्वत्र उदासीन ।
ग्राम्यवार्त्ताभये द्वितीयसङ्गहीन ॥१७८
हेन जन गोपालेर आज्ञामृत पाञा ।
सहस्र क्रोश आसिबोले चन्दन मागिञा ।१७९
भोके रहे तबु भिक्षा मागि नाहि खाय ।
हेन जन चन्दनेर भार वहि याय ॥१८०
मणेक चन्दन, तोला विशेक कर्पूर ।
गोपाले पराब एइ आनन्द प्रचुर ॥१८१
उत्कलेर दानी राखे चन्दन देखिया ।
ताहा एड़ाइला राजपत्र देखाइया ॥१८२
म्लेच्छदेश दूरपथ जगाति अपार ।
केमने चन्दन निब नाहि ए विचार ॥१८३
सङ्गे एक वट नाहि घाटि दान दिते ।
तथापि उत्साह मने चन्दन लइते ॥१८४
प्रगाढ़ प्रेमेर एइ स्वभाव आचार ।
निज दुःख विघ्नादिक ना करे विचार ॥१८५
एइ तार गाढ़ प्रेम लोके देखाइते ।
गोपाल ताँरे आज्ञा दिल चन्दन आनिते १८६
बहु परिश्रमे चन्दन रेमुणा आनिल ।
आनन्द बाड़ये मने दुःख ना गणिल ॥१८७
परीक्षा करिते गोपाल कैल आज्ञादान ।
परीक्षा करिया शेषे हैल दयावान् ॥१८८
एइ भक्ति भक्तप्रिय कृष्णव्यवहार ।
बुझितेओ आमा सबार नाहि अधिकार १८९
एत कहि पड़े प्रभु ताँर कृत श्लोक ।
येइ श्लोकचन्द्रे जगत् करियाछे आलोक ।१९०
घसिते घसिते यैछे मलयज सार ।
गन्ध बाड़े तैछे एइ श्लोकेर विचार ॥१९१
रत्नगणमध्ये यैछे हय कौस्तुभमणि ।
रसकाव्यमध्ये तैछे एइ श्लोक गणि ॥१९२
एइ श्लोक करियाछेन राधा ठाकुराणी ।
ताँर कृपाय स्फुरियाछे माधवेन्द्रवाणी ॥१९३
किवा गौरचन्द्र इहा करे आस्वादन ।
इहा आस्वादिते अधिकारी नाहि चौठ जन १९४
शेषकाले एइ श्लोक पड़िते पड़िते ।
सिद्धिप्राप्ति हैल पुरीर श्लोकेर सहिते ॥१९५

तथाहि पद्यावली (३४।३०)—

श्रीमाधवेन्द्रवाक्यम्—

अयि दीनदयार्द्र नाथ हे,
मथुरानाथ कदावलोक्यसे ।
हृदयं त्वदवलोकनकातरं,
दयित भ्राम्यति किं करोम्यहम् ॥२॥

टीका—श्रीकृष्णं प्रति श्रीराधिकाप्रलापवचनमिदम्। हे मथुरानाथ ! हे श्रीकृष्ण कदा मया त्वं अवलोक्यसे दृश्यसे ? पुनरिति शेषः। हे मथुरानाथ ! हे सम्भोगपते ! किंवा हे नाथ ! एकेन वपुषा न तु गोपीवाञ्छापूर्त्तिः। अयि ! कोमल-सम्बोधनं। हे दीनदयार्द्र ! दीनानां भवविरहदुःखितानां जनानां सम्बन्धे दयया करुणया सरसहृदय। हे दयित ! हे हे देव प्राणवल्लभ ! तस्मान्मम हृदयं मनो भ्राम्यति। मनः कीदृशं ?—त्वदवलोकनकातरं तवावलोकनाय दर्शननिमित्ताय कातरं व्याकुलं। नतोऽस्मि। अहं किं करोमि ? यत्कृते त्वद्दर्शनं स्यात्, त्वमेव उपदिश ॥२॥

हे दीन दयार्द्र ! हे नाथ ! हे मथुरा पते ! तुम्हारे दर्शन कब होगा ? हे दयित, तुम्हें न देखकर मेरा यह कातर हृदय अस्थिर है, मेरा मन भी व्याकुल है, मैं क्या करूँ ? ॥२॥

एइ श्लोक पड़िते प्रभु मूर्च्छित हइला ।
प्रेमेते विवश हञा भूमिते पड़िला ॥१९६
आस्ते व्यस्ते कोले करि निल नित्यानन्द ।
क्रन्दन करिया तबे उठे गौरचन्द्र ॥१९७
प्रेमोन्माद हैल उठि इति उति धाय ।
हुङ्कार करये कभु हासे नाचे गाय ॥१९८
अयि दीन अयि दीन प्रभु बले बार बार ।
कण्ठे ना उच्चरे वाणी नेत्रे अश्रुधार ॥१९९
कम्प स्वेद पुलकाङ्ग स्तम्भ वैवर्ण्य ।
निर्व्वेद विषाद जाड्य गर्व्व हर्ष दैन्य ॥२००
एइ श्लोक उघारिल प्रेमेर कपाट ।
गोपीनाथ सेवक देखे प्रभुर प्रेमनाट ॥२०१
लोकेर संघट्ट देखि प्रभुर वाह्य हैल ।
ठाकुरेर भोग सरि आरति बाजिल ॥२०२
ठाकुर शयन कराये पूजारी हइला बाहिर ।
प्रभु आगे आनि दिल प्रसाद बार क्षीर ॥२०३
क्षीर देखि महाप्रभुर आनन्द बाड़िल ।
भक्तगण खाओयाइते पञ्च क्षीर लैल ॥२०४
सात क्षीर पूजारीके बाहुड़िया दिल ।
पञ्च क्षीर पञ्च जने वाटिया खाइल ॥२०५
गोपीनाथ रूपे यदि करियाछेन भोजन ।
भक्ति देखाइते कैल प्रसाद भक्षण ॥२०६
नामसङ्कीर्त्तने सेइ रात्रि गोङाइया ।
प्रभाते चलिला मङ्गल आरति देखिया ॥२०७
श्रीगोपाल गोपीनाथ पुरीगोँसाञिर गुणगण ।
भक्तसङ्गे श्रीमुखे प्रभु करे आस्वादन ॥२०८
एइ त आख्याने कहि दुँहार महिमा ।
प्रभुर भक्तवातसल्य आर भक्तेर प्रेमसीमा २०९
श्रद्धायुक्त हैया इहा शुने येइ जन ।
श्रीकृष्ण चरणे सेइ पाय प्रेमधन ॥२१०
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२११

इति श्रीचैतन्यचरितामृते श्रीमाधवेन्द्र-
पुरीचरितामृतास्वादनं नाम चतुर्थः
परिच्छेदः ॥४॥



❀ पञ्चम परिच्छेद ❀

पद्भ्यां चलन् यः प्रतिमास्वरूपो
ब्रह्मण्यदेवो हि शताहगम्यं।
देशं ययौ विप्रकृतेऽद्भुतेऽहं
तं साक्षिगोपालमहं नतोऽस्मि ॥१॥

टीका—यः साक्षिगोपालो विप्रकृते ब्राह्मणार्थं शताहगम्यं शतदिवसेन प्राप्तं देशं विद्यानगराख्यं ययौ प्राप्तवान्। किं कुर्व्वन्?—पद्भ्यां चलन् गच्छन्। कीदृशः?—प्रतिमास्वरूप. श्रीमूर्त्तिः। हि यस्मात् अद्भुतात् ब्रह्मण्यदेवः ब्राह्मणानां देवता इत्यर्थः। तं साक्षिगोपालं अहं नतोऽस्मि ॥१॥

जिनकी चेष्टा लोकातीत, जो विप्र के हितकारी हैं, जो प्रतिमा स्वरूप होकर भी विप्र के निमित्त शत दिवस गम्य पथ को पद व्रज से अतिक्रम किये थे, अर्थात् सो दिन के पथ पैदल चलकर पहूँचे थे। मैं उन साक्षी गोपाल को प्रणाम करता हूँ ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
एइमत चलि आइला याजपुर ग्रामे।
वराह ठाकुर देखि करिल प्रणामे ॥२
नृत्य गीत कैल प्रेमे अनेक स्तवन।
सेइ रात्रि ताँहा रहि करिला गमन ॥३
कटक आइला साक्षिगोपाल देखिते।
गोपालसौन्दर्य्य देखि हैला आनन्दिते ॥४
प्रेमावेशे नृत्य गीत करि कतक्षण।
आविष्ट हइया कैल गोपाले स्तवन ॥५
सेइ रात्रि ताँहा रहि भक्तगण सङ्गे।
गोपालेर पूर्व्वकथा शुने बहु रङ्गे ॥६

नित्यानन्द गोँसाञि यबे तीर्थ भ्रमिला।
साक्षिगोपाल देखिवारे कटक आइला ॥७
साक्षिगोपालेर कथा शुनिल लोकमुखे।
सेइ कथा प्रभु-आगे कहे निज सुखे ॥८
पूर्व्वे विद्यानगरेर दुइत ब्राह्मण।
तीर्थ करिवारे दोँहा करिला गमन ॥९
गया वाराणसी आदि प्रयाग करिया।
मथुरा आइला दोँहे आनन्दित हइया ॥१०
वनयात्राय वन देखि देखे गोवर्द्धन।
द्वादशवन देखि शेषे आइला वृन्दावन ॥११
वृन्दावने गोविन्दस्थाने महादेवालय।
से मन्दिरे गोपालेर महासेवा हय ॥१२
केशितीर्थे कालि ह्रदादिके करि स्नान।
श्रीगोपाल देखि ताँहा करिल विश्राम ॥१३
गोपालसौन्दर्य्य दोँहार निल मन हरि।
सुख पाञा रहे ताँहा दिन दुइ चारि ॥१४
दुइ विप्रमध्ये एक विप्र वृद्धप्राय।
आर विप्र युवा ताँर करेन सहाय ॥१५
छोट विप्र करे सदा ताँहार सेवन।
ताहार सेवाय विप्रेर तुष्ट हैल मन ॥१६
विप्र कहे तुमि आमार बहु सेवा कैला।
सहाय हइया मोरे तीर्थ कराइला ॥१७
पुत्रेओ पितार ऐछे ना करे सेवन।
तोमार प्रसादे आमि ना पाइलाम श्रम ॥१८

कृतघ्नता हय तोमाय ना कैले सम्मान ।
अतएव तोमारे आमि दिव कन्यादान ॥१९
छोट विप्र कहे, शुन विप्र महाशय ।
असम्भव कह केन येइ नाहि हय ॥२०
महाकुलीन तुमि विद्याधनादिप्रवीण ।
आमि अकुलीन विद्याधनादिविहीन ॥२१
कन्यादान पात्र आमि ना हइ तोमार ।
कृष्णप्रीते करि तोमार सेवा व्यवहार ॥२२
ब्राह्मणसेवाते कृष्णेर प्रीति बड़ हय ।
ताँहार सन्तोषे भक्तिसम्पद बाड़य ॥२३
बड़ विप्र कहे, तुमि ना कर संशय ।
तोमाके कन्या दिव आमि करिनु निश्चय ॥२४
छोट विप्र कहे, तोमार आछे स्त्री पुत्र सब ।
बहु ज्ञाति गोष्ठी तोमार बहुत बान्धव ॥२५
ता सबार सम्मति विने नहे कन्यादान ।
रुक्मिणीर पिता भीष्मक ताहाते प्रमाण ।२६
भीष्मकेर इच्छा कृष्णे कन्या समर्पिते ।
पुत्रेर विरोधे कन्या नारिलेन दिते ॥२७
बड़ विप्र कहे, कन्या मोर निज धन ।
निज धन दिते निषेधिवे कोन् जन ॥२८
तोमारे कन्या दिव सबार करि तिरस्कार ।
संशय ना कर तुमि कर अङ्गीकार ॥२९
छोट विप्र कहे, यदि कन्या दिते मन ।
गोपालेर आगे कह ए सत्य वचन ॥३०
गोपालेर आगे विप्र कहिते लागिल ।
तुमि जान निज कन्या इँहारे आमि दिल ।३१
छोट विप्र कहे, ठाकुर तुमि मोर साक्षी ।
तोमा साक्षी बोलाइव यदि अन्यमत देखि ३२

एत कहि दुइ जन चलिला देशेते ।
गुरुबुद्ध्ये छोट विप्र बहु सेवा करे ॥३३
देशे आसि दोँहे गेला निज निज घर ।
कतदिने बड़ विप्र चिन्तिल अन्तर ॥३४
तीर्थे विप्रे वाक्य दिल केमते सत्य हय ।
स्त्री पुत्र ज्ञाति बन्धु जानिबे निश्चय ॥३५
एक दिन निज लोक एकत्र करिल ।
ता सबार आगे सब वृत्तान्त कहिल ॥३६
शुनि सब गोष्ठी तार करे हाहाकार ।
ऐछे बात मुखे तुमि ना आनिह आर ॥३७
नीचे कन्या दिले कुल याइबेक नाश ।
शुनि सब लोक तबे करिबे उपहास ॥३८
विप्र कहे तीर्थवाक्य केमने करि आन ।
ये हउक से हउक आमि दिव कन्यादान ॥३९
ज्ञाति लोक कहे सबे, तोमारे छाड़िव ।
स्त्री पुत्र कहे विष खाइया मरिव ॥४०
विप्र कहे साक्षी बोलाइया करिबेक न्याय ।
जिति कन्या निबे मोर धर्म्म व्यर्थ याय ॥४१
पुत्र कहे, प्रतिमा साक्षी, सेओ दूर देशे ।
के तोमार साक्षी दिवे, चिन्ता कर किसे ॥४२
नाहि कहि ना कहिओ ए मिथ्या वचन ।
सबे कहिओ किछु मोर ना हय स्मरण ॥४३
तुमि यदि कह आमि किछु नाहि जानि ।
तबे आमि न्याय करि ब्राह्मणेरे जिनि ॥४४
एत शुनि विप्रेर चिन्तित हैल मन ।
एकान्तभावे चिन्ते विप्र गोपालचरण ॥४५
मोर धर्म्म रक्षा पाय, ना मरे निज जन ।
दुइ रक्षा कर गोपाल, तोमार शरण ॥४६

एइमत चित्ते विप्र चिन्तिते लागिला।
आर दिन लघु विप्र ताँर घर आइला ॥४७
आसिया परम भक्त्ये नमस्कार करि।
विनय करिया कहे दुइ कर युड़ि ॥४८
तुमि मोरे कन्या दिते करियाछ अङ्गीकार।
एवे किछु नाहि कह, कि तोमार व्यवहार ।४९
एत शुनि सेइ विप्र मौन धरिल।
तार पुत्र ठेङ्गा हाते मारिते आइल ॥५०
अरे अधम, मोर भगिनी चाह विवाहिते।
वामन हञा चाहत येन चाँद धरिते ॥५१
ठेङ्गा देखि सेइ विप्र पलाइया गेल।
आर दिन ग्रामेर लोक सभा त करिल ॥५२
सब लोक बड़ विप्रे बोलाइया लइल।
तबे सेइ लघु विप्र कहिते लागिल ॥५३
एहो मोरे कन्या दिते करियाछे अङ्गीकार।
एवे कन्या नाहि देन, कि हय विचार ॥५४
तबे सेइ विप्रेरे पुछिल सर्व्व जन।
कन्या केन ना देह यदि दियाछ वचन ॥५५
विप्र कहे, शुन लोक मोर निवेदन।
कवे कि वलियाछि किछु ना हय स्मरण ॥५६
एत शुनि तार पुत्र वाक्छल पाञा।
प्रगल्भ हइया कहे सम्मुखे आसिञा ॥५७
तीर्थयात्रार पितार सङ्गे छिल बहु धन।
धन देखि एइ दुष्टेर लइते हैल मन ॥५८
आर केह सङ्गे नाञि सबे एइ एकल।
धुतुरा खाओइया वापे करिला पागल ॥५९
सब धन लञा कहे चोरे लैल धन।
कन्या दिते कहियाछे उठाइल वचन ॥६०

तोमरा सब लोक कह करिया विचार।
मोर पितार कन्या कि योग्य इहाके दिवार ॥
एत शुनि लोकेर मने हइल संशय।
सम्भवे धनलोभे लोक छाड़े धर्म्मभय ॥६१
तबे छोट विप्र कहे, शुन महाजन।
न्याय जिनिते कहे एइ असत्य वचन ॥६२
एइ विप्र मोर सेवाय सन्तुष्ट हइला।
तोरे आमि कन्या दिव आपने कहिला ॥६३
तबे आमि निषेधिनु शुन द्विजवर।
तोमार कन्यार योग्य नहि मुञि वर ॥६४
काँहा तुमि पण्डित धनी परमकुलीन।
काँहा मुञि दरिद्र मूर्ख नीच कुलहीन ॥६५
तबु एइ विप्र मोरे कहे बार बार।
तोरे कन्या दिव तुमि कर अङ्गीकार ॥६६
तबे मुञि कहिनु शुन द्विज महामति।
तोमार स्त्री पुत्र ज्ञातिर नहिबे सम्मति ॥६७
कन्या दिते नारिबे हवे असत्य वचन।
पुनरपि कहे विप्र करिया यतन ॥६८
कन्या तोरे दिनु द्विधा ना करिह चिते।
आत्मकन्या दिव केवा पारे निषेधिते ॥७०
तबे आमि कहिनु, एइ तोमार दृढ़ मन।
गोपालेर आगे कह ए सत्य वचन ॥७१
तबे इँहो गोपाल आगे याइया कहिल।
तुमि जान एइ विप्रे कन्या आमि दिल ॥७२
तबे आमि गोपालेरे साक्षी करिया।
कहिनु ताँहार पदे विनति करिया ॥७३
यदि मोरे एइ विप्र ना करे कन्या दान।
साक्षी बोलाइव तोमा हैओ सावधान ॥७४

एइ वाक्ये साक्षी मोर आछे महाजन ।
यार वाक्य सत्य करि माने त्रिभुवन ॥७५
तबे बड़ विप्र कहे, एइ सत्य कथा ।
गोपाल यदि साक्षी देन आपने आसि एथा ७६
तबे कन्या दिव एइ जानिह निश्चय ।
तार पुत्र कहे, भाल एइ बात हय ॥७७
बड़विप्रेर मने, कृष्ण सहजे दयावान् ।
अवश्य मोर वाक्य तिँहो करिबे प्रमाण ॥६८
पुत्रेर मने, प्रतिमा साक्षी नारिबे आसिते ।
दुइ बुद्ध्ये दुइ जना हइला सम्मते ॥७९
छोट विप्र कहे, पत्र करह लिखन ।
पुनः येन नाहि चले ए सब वचन ॥८०
तबे सब लोक एक पत्र त लिखिल ।
दोँहार सम्मति लञा मध्यस्थ राखिल ॥८१
तबे छोट विप्र कहे, शुन सभाजन ।
एइ विप्र सत्यवाक्य धर्म्मपरायण ॥८२
स्ववाक्य छाड़िते इँहार नाहि कभु मन ।
स्वजनमृत्युभये कहे लट्पटि वचन ॥८३
इँहार पुण्ये कृष्ण आसि साक्षी बोलाइमु ।
तबे एइ विप्रेर सत्य प्रतिज्ञा राखिमु ॥८४
एत शुनि सब लोक उपहास करे ।
केह कहे, ईश्वर दयालु आसिते ओ पारे ॥८५
तबे सेइ छोट विप्र गेला वृन्दावन ।
दण्डवत् करि कहे सब विवरण ॥८६
ब्रह्मण्यदेव ! तुमि बड़ दयामय ।
दुइ विप्रेर धर्म्म राख हइया सदय ॥८७
कन्या पाब मने मोर नाहि एइ सुख ।
विप्रेर प्रतिज्ञा याय एइ मोर दुःख ॥८८

एत जानि साक्ष्य देह तुमि दयामय ।
जानि साक्ष्य ना देय येइ तार पाप हय ॥८९
कृष्ण कहे याह विप्र आपन भवन ।
सभा करि आमा तुमि करिह स्मरण ॥९०
आविर्भूत हञा आमि ताँहा साक्ष्य दिव ।
प्रतिमास्वरूपे ताँहा याइते नारिव ॥९१
विप्र कहे हओ यदि चतुर्भुज मूर्त्ति ।
तबु तोमार वाक्ये कारो नहिबे प्रतीति ॥९२
एइ मूर्त्त्ये याञा यदि एइ श्रीवदने ।
साक्ष्य देह यदि तबे सर्व्व लोक माने ॥९३
कृष्ण कहे, प्रतिमा चले काँहाओ ना शुनि ।
विप्र कहे प्रतिमा हैञा कह केन वाणी ॥९४
प्रतिमा ना हओ तुमि साक्षात् व्रजेन्द्रनन्दन ।
विप्र लागि कर तुमि अकार्य्य साधन ॥९५
हासिया गोपाल कहे शुनह ब्राह्मण ।
तोमार पाछे पाछे आमि करिब गमन ॥९६
उलटि आमारे तुमि ना करिह दर्शने ।
आमाके देखिले आमि रहिब सेइ स्थाने ॥९७
नूपुरेर ध्वनिमात्र आमार शुनिबे ।
सेइ शब्दे गमन मोर प्रतीत करिबे ॥९८
एक सेर अन्न रान्धि करिबे समर्पण ।
ताहा खाञा तोमार सङ्गे करिव गमन ॥९९
आर दिन आज्ञा मागि चलिला ब्राह्मण ।
तार पाछे पाछे गोपाल करिल गमन ॥१००
नूपुरेर ध्वनि शुनि आनन्दितमन ।
उत्तम अन्न पाक करि कराय भोजन ॥१०१
एइमत चलि विप्र निज देशे आइल ।
ग्रामेर निकट आसि मनेते चिन्तिल ॥१०२

एबे मुञि ग्रामे आइनु याइमु भवन ।
लोकेरे कहिब गिया साक्षीर आगमन ॥१०३
साक्षात् ना देखिले मने प्रतीति ना हय ।
इँहा यदि रहे तबे किछु नाहि भय ॥१०४
एत चिन्ति सेइ विप्र फिरिया चाहिल ।
हासिया गोपालदेव ताँहाइ रहिल ॥१०५
ब्राह्मणे कहिल तुमि याह निज घर ।
इँहाइ रहिब आमि ना याव अतःपर ॥१०६
तबे सेइ विप्र याइ नगरे कहिल ।
शुनि सब लोकचित्त चमतकार हैल ॥१०७
आइसे सकल लोक साक्षी देखिबारे ।
गोपाल देखिया हर्षे दण्डवत् करे ॥१०८
गोपालेर सौन्दर्य्य देखि लोक आनन्दित ।
प्रतिमा चलि आइला शुनि हइला विस्मित ॥१०९
तबे सेइ बड़ विप्र आनन्दित हैञा ।
गोपालेर आगे पड़े दण्डवत् हैञा ॥११०
सकल लोकेर आगे गोपाल साक्ष्य दिल ।
बड़ विप्र छोट विप्रे कन्यादान कैल ॥१११
तबे सेइ दुइ विप्रे कहिला ईश्वर ।
तुमि दुइ जन्मे जन्मे आमार किङ्कर ॥११२
दोँहार सत्ये तुष्ट हैलाम दोँहे माग वर ।
दुइ विप्र बर मागे आनन्द--अन्तर ॥११३
यदि बर दिबे तबे रह एइ स्थाने ।
किङ्करेरे दया तबे सर्व्वलोक जाने ॥११४
गोपाल रहिला दोँहे करेन सेवन ।
देखिते आइसे तबे देशेर सर्व्वजन ॥११५
से देशेर राजा आइला आश्चर्य्य शुनिया ।
परम सन्तोष पाइल गोपाल देखिया ॥११
मन्दिर करिया राजा सेबा चालाइल ।
साक्षिगोपाल बलि नामख्याति हैल ॥१
एइमते विद्यानगरे साक्षिगोपाल ।
सेवा अङ्गीकार करि आछे चिरकाल ॥११
उत्कलेर राजा पुरुषोत्तमदेव नाम ।
सेइ देश जिनिलेन करिया संग्राम ॥११
सेइ राजा जिनि लैल ताँर सिंहासन ।
माणिक्यसिंहासन नाम अनेक रतन ॥१२
पुरुषोत्तमदेव सेइ बड़ भक्त आर्य्य ।
गोपाल चरणे मागे चल मोर राज्य ॥१२
ताँर भक्तिरसे गोपाल ताँरे आज्ञा दिल ।
गोपाल लइया राजा कटक आइल ॥१२
जगन्नाथे आनि दिल रत्नसिंहासन ।
कटके गोपाल सेवा करिल स्थापन ॥१२
ताँहार महिषी आइला गोपालदर्शने ।
भक्त्येच बहु अलङ्कार कैल समर्पणे ॥१२
ताँहार नासाते बहुमूल्य मुक्ता हय ।
ताहा दिते इच्छा हैल मनेते चिन्तय ॥१२
ठाकुरेर नासिकाते यदि छिद्र हैत ।
तबे एइ दासी मुक्ता नासाते पराइत ॥१
एत चिन्ति नमस्करि गेला स्वभवने ।
रात्रिशेषे गोपाल तारे कहेन स्वपने ॥१
बाल्यकाले माता मोर नासा छिद्र करि ।
मुक्ता पराइयाछिल बहु यत्न करि ॥१
सेइ छिद्र अद्यापि आछे आमार नासाते ।
सेइ मुक्ता पराह याहा चाहियाछ दिते ॥१

स्वप्न देखि राणी राजारे कहिला ।
राजा सङ्गे मुक्ता लञा मन्दिरे आइला ॥१३०
पराइल नासाय मुक्ता छिद्र देखिया ।
महामहोत्सव कैल आनन्दित हैया ॥१३१
सेइ हैते गोपालेर कटकेते स्थिति ।
एइ लागि साक्षीगोपाल नाम हैल ख्याति १३२
नित्यानन्द गोँसाञिर मुखे गोपालचरित ।
शुनि तुष्ट हैला प्रभु स्वभक्त सहित ॥१३३
गोपालेर आगे यबे प्रभुर हय स्थिति ।
भक्तगण देखे येन दोँहे एकमूर्त्ति ॥१३४
दोँहे एकवर्ण दोँहे प्रकाण्डशरीर ।
दोँहे रक्ताम्बर दोँहार स्वभाव गम्भीर ।१३५
महातेजोमय दोँहे कमलनयन ।
दोँहार भावावेशमन चन्द्रबदन ॥१३६
दोँहा देखि नित्यानन्द प्रभु महारङ्गे ।
ठाराठारि करि हासे भक्तगण सङ्गे ॥१३७
एतमत नानारङ्गे से रात्रि वञ्चिया ।
प्रभाते चलिला मङ्गल आरति देखिया ॥१३८
भुवनेश्वर, पथे यैछे करिल दरशन ।
विस्तारि कहिल ताहा, दास वृन्दावन ॥१३९
कमलपुरे आसि भार्गीनदीस्नान कैल ।
नित्यानन्द-हाते प्रभु दण्ड ये धरिल ॥१४०
कपोतेश्वर देखिते गेला भक्तगण सङ्गे ।
एथा नित्यानन्द प्रभु कैल दण्डभङ्गे ॥१४१
तिन खण्ड करि दण्ड दिल भासाइया ।
भक्तसङ्गे आइला प्रभु महेश देखिया ॥१४२
जगन्नाथेर देउल देखि आविष्ट हइला ।
दण्डवत् करि प्रेमे नाचिते लागिला ॥१४३
भक्तगण आविष्ट हैला सबे नाचे गाय ।
प्रेमाविष्ट प्रभुसङ्गे राजमार्गे याय ॥१४४
हासे नाचे कान्दे प्रभु हुङ्कार गर्ज्जन ।
तिनक्रोश पथ हैल सहस्र योजन ॥१४५
चलिते चलिते प्रभु आइला आठारनाला ।
ताँहा आसि प्रभु किछु वाह्य प्रकाशिला ॥१४६
नित्यानन्दे प्रभु कहे देह मोर दण्ड ।
नित्यानन्द कहे दण्ड हैल खण्ड खण्ड ॥१४७
प्रेमावेशे पड़िले तुमि तोमारे धरिनु ।
तोमा सह सेइ दण्ड उपरे पड़िनु ॥१४८
दुइ जनार भरे दण्ड खण्ड खण्ड हैल ।
सेइ खण्ड काँहा पड़िल ताहा ना जानिल १४९
मोर अपराधे तोमार दण्ड हैल खण्ड ।
येइ युक्त हय ताहा कर मोर दण्ड ॥१५०
शुनि प्रभु मने किछु दुःख प्रकाशिला ।
ईषत् क्रोध करि किछु सबारे कहिला ॥१५१
नीलाचले आनि आमा सबे हित कैला ।
सबे दण्डधन छिल ताहा ना राखिला ॥१५२
तुमि सब आगे याह ईश्वर देखिते ।
किवा आमि आगे याइ ना याव सहिते ॥१५३
मुकुन्ददत्त कहे, प्रभु तुमि चल आगे ।
आमि सब पाछे याब ना याब तोमार सङ्गे
॥१५४
एत शुनि प्रभु आगे चलिला शीघ्रगति ।
बुझिते ना पारे केह दुइ प्रभुर मति ॥१५५
एँहो केन दण्ड भाङ्गे तेँहो केन भाङ्गाय ।
भाङ्गाइया केन क्रुद्ध बुझा नाहि याय ॥१५६
दण्डभङ्गलीला एइ परम गम्भीर ।

सेइ बुझे दोँहार पदे यार भक्ति धीर ॥१५७
ब्रह्मण्यदेव गोपालेर महिमा एइ धन्य।
नित्यानन्द वक्ता यार श्रोता श्रीचैतन्य ॥१५८
श्रद्धायुक्त हञा शुन सर्व्व भक्तगण।
अचिराते पाबे कृष्णचैतन्य-चरण ॥१५९
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१६०

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे साक्षिगोपालचरितवर्णनं नाम पञ्चमः परिच्छेदः ॥५॥



❀ षष्ठ परिच्छेद ❀

नौमि तं गौरचन्द्रः यः कुतर्ककर्कशाशयम्।
सार्व्वभौमं सर्व्वभूमा भक्तिभूमानमाचरत् ॥१॥

टीका—तं गौरचन्द्रं अहं नौमि स्तौमि। यो गौरचन्द्रः सार्व्वभौमं भक्तिभूमानं भक्तिमन्तं आचरत्। स गौरः किम्भूतः?—सर्व्वभूमा सर्व्वोत्कृष्टः। सार्व्वभौमं किम्भूतं?—कुतर्ककर्कशाशयं कुत्सित-तर्कशास्त्रेण कर्कशः कुटिलः आशयो यस्य स तम्। १

जिन्होंने कुतर्क कठिन हृदय सार्वभौम नामक भट्टाचार्य्य को भक्ति प्रदान कर सम्पन्न किया, मैं उन सर्वव्यापी गौरचन्द्र को प्रणाम करता हूँ ॥१॥

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
आवेशे चलिला प्रभु जगन्नाथमन्दिरे।
जगन्नाथ देखि प्रेमे हइला अस्थिरे ॥२
जगन्नाथ आलिङ्गिते चलिला धाइया।
मन्दिरे पड़िला प्रेमे आविष्ट हइया ॥
दैवे सार्व्वभौम ताहा करेन दर्शन।
पड़िछा मारिते तेँह कैल निवारण ॥
प्रभुर सौन्दर्य्य आर प्रेमेर विकार।
देखि सार्व्वभौम हैला विस्मित अपार ॥
बहुक्षण चेतन नहे भोगेर काल हैल।
सार्व्वभौम मने तबे उपाय चिन्तिल ॥
शिष्य पड़िछा द्वारा प्रभु निल वहाइया।
घरे आनि पवित्रस्थाने थुइल शोयाइया ॥
श्वास प्रश्वास नाहि उदरस्पन्दन।
देखिया चिन्तित हैल भट्टाचार्य्येर मन ॥
सूक्ष्म तूला आनि नासा-अग्रेते धरिल।
ईषत् चलये तूला देखि धैर्य्य हैल ॥
वसि भट्टाचार्य्य मने करेन विचार।
एइ कृष्णमहाप्रेमेर सात्त्विक विकार ॥
सूद्दीप्त सात्त्विक एइ नाम ये प्रलय।
नित्यसिद्ध भक्ते से सुद्दीप्त भाव हय ॥
अधिरूढ़ भाव यार तार ए विकार।
मनुष्येर देहे देखि बड़ चमत्कार ॥
एत चिन्ति भट्टाचार्य्य आछेन वसिया।
नित्यानन्दादि सिंहद्वारे मिलिला आसिया ॥
ताहा शुनि लोक कहे अन्योन्ये बात।
एक सन्न्यासी आसि देखि जगन्नाथ ॥
मूर्च्छित हइला चेतन ना हय शरीरे।
सार्व्वभौम तैछे ताँरे लञा गेला घरे ॥
शुनि सबे जानिल एइ महाप्रभुर कार्य्य।
हेन काले आइला तथा गोपीनाथचार्य्य ॥
नदीया-निवासी विशारदेर जामाता।

महाप्रभुर भक्त तेँह प्रभु--तत्त्वज्ञाता ॥१७
मुकुन्द सहित पूर्व्वे आछे परिचय ।
मुकुन्द देखिया ताँर हइल विस्मय ॥१८
मुकुन्द ताँहारे देखि कैला नमस्कार ।
तेँह आलिङ्गिया पुछे प्रभुर समाचार ॥१९
मुकुन्द कहे प्रभुर इँहा हैल आगमने ।
आमि सब आसियाछि महाप्रभुर सने ॥२०
नित्यानन्द गोँसाञिरे आचार्य्य कैल नमस्कार ।
सबे मिलि पुछे प्रभुर वार्त्ता आरवार ॥२१
मुकुन्द कहे महाप्रभु सन्न्यास करिया ।
नीलाचल आइला सङ्गे आमा सबा लैया ॥२२
आमा सबा छाड़ि आगे गेला दरशने ।
आमि सब पाछे आइनु ताँर अन्वेषणे ॥२३
अन्योन्य लोकेर मुखे ये कथा शुनिल ।
सार्व्वभौमघरे प्रभु अनुमान कैल ॥२४
ईश्वरदर्शने प्रभु प्रेमे अचेतन ।
सार्व्वभौम लञा गेला आपन भवन ॥२५
तोमार मिलने मोर यवे हैल मन ।
दैवे सेइ क्षणे पाइल तोमार दर्शन ॥२६
चल सबे याइ सार्व्वभौमेर भवन ।
प्रभु देखि पाछे करिब ईश्वर दर्शन ॥२७
एत शुनि गोपीनाथ सबाके लइया ।
सार्व्वभौम-गृहे गेला हरषित हैया ॥२८
सार्व्वभौमस्थाने याइया प्रभुरे देखिल ।
प्रभु देखि आचार्य्येर दुःख हर्ष हैल ॥२९
सार्व्वभौमे जानाइया सबा निल अभ्यन्तरे ।
नित्यानन्द गोँसाञिरे तेँह कैल नमस्कारे ॥३०
सबा सहित यथायोग्य करिल मिलन ।
प्रभु देखि सबार हैल दुःख हर्षमन ॥३१
सार्व्वभौम पाठाइल सबाके दर्शन करिते ।
चन्दनेश्वर निज पुत्र दिल सबार साथे ॥३२
जगन्नाथ देखि सबार हइल आनन्द ।
भावेते अवश हैला प्रभु नित्यानन्द ॥३३
सबे मेलि धरि ताँरे सुस्थिर करिल ।
ईश्वरसेवक माला प्रसाद आनि दिल ॥३४
प्रसाद पाइया सबे आनन्दितमने ।
पुनरपि शीघ्र आइला महाप्रभुर स्थाने ॥३५
उच्च करि करे सबे नामसंकीर्त्तन ।
तृतीय प्रहरे प्रभुर हइल चेतन ॥३६
हुङ्कार करिया उठे हरि हरि बलि ।
आनन्दे सार्व्वभौम लैल प्रभुर पदधूलि ॥३७
सार्व्वभौम बले शीघ्र करह मध्याह्न ।
मुञि दिव आजि भिक्षा महाप्रसादान्न ॥३८
समुद्रस्नान करि महाप्रभु शीघ्र आइला ।
चरण पाखालि प्रभु आसने वसिला ॥३९
बहुत प्रसाद सार्व्वभौम आनाइला ।
तबे महाप्रभु सुखे भोजन करिला ॥४०
सुवर्ण थालिते अन्न उत्तम व्यञ्जन ।
भक्तगण सङ्गे प्रभु करेन भोजन ॥४१
सार्व्वभौम परिवेशन करेन आपने ।
प्रभु कहे मोरे देह लाफरा व्यञ्जने ॥४२
पिठा पाना देह तुमि इँहा सबाकारे ।
तबे भट्टाचार्य्य कहे युड़ि दुइ करे ॥४३
जगन्नाथ कैछे करियाछेन भोजन ।
आजि सब महाप्रसाद कर आस्वादन ॥४४

एत बलि पिठा पाना सब खाओयाइल ।
भिक्षा कराइया आचमन कराइल ॥४५
आज्ञा मागि गेला गोपीनाथाचार्य्य लइया ।
प्रभुर निकट आइला भोजन करिया ॥४६
नमो नारायण बलि नमस्कार कैल ।
कृष्णे मतिरस्तु बलि गोँसाञि कहिल ॥४७
शुनि सार्व्वभौम मने विचार करिल ।
वैष्णव सन्नयासी एहोँ वचने जानिल ॥४८
गोपीनाथ आचार्य्यके कहे सार्व्वभौम ।
गोँसाञिर जानिते चाहि काँहा पूर्व्वाश्रम ॥४९
गोपीनाथ आचार्य्य कहे नवद्वीपे घर ।
जगन्नाथ नाम, पदवी मिश्र पुरन्दर ॥५०
विश्वम्भर नाम इँहार ताँर इँहो पुत्र ।
नीलाम्बर चक्रवर्त्तीर हयेन दौहित्र ॥५१
सार्व्वभौम कहे नीलाम्बर चक्रवर्त्ती ।
विशारदेर समाध्यायी एइ ताँर ख्याति ॥५२
मिश्रपुरन्दर ताँर मान्य हेन जानि ।
पितार सम्बन्धे दोँहाके पूज्य आमि मानि ५३
नदीया सम्बन्धे सार्व्वभौम तुष्ट हैला ।
प्रीत हञा गोँसाञिरे कहिते लागिला ॥५४
सहजेइ पूज्य तुमि आरेत सन्नयास ।
अतएव जानिह तुमि आमि निजदास ॥५५
शुनि महाप्रभु कैल श्रीविष्णुस्मरण ।
भट्टाचार्य्ये कहे किछु विनयवचन ॥५६
तुमि जगद्गुरु सर्व्वलोक-हितकर्त्ता ।
वेदान्त पड़ाओ शुनाओ सन्नयासीर उपकर्त्ता ५७
आमि बालक सन्नयासी भालमन्द नाहि जानि
तोमार आश्रय निल गुरु करि मानि ॥५८

तोमार सङ्ग लागि मोर एथा आगमन ।
सर्व्वप्रकारे करिबे तुमि आमार पालन ॥५९
आजि आमार हैयाछिल बड़इ विपत्ति ।
ताहा हैते कैले तुमि आमार अव्याहति ॥६०
भट्टाचार्य्य कहे, एकले ना याइह दर्शने ।
आमा सङ्गे याइह किवा आमार लोक सने ॥६१
प्रभु कहे, मन्दिरभितर कभु ना याइब ।
गरुड़ेर पाछे रहि दर्शन करिब ॥६२
गोपीनाथ आचार्य्येरे कहे सार्व्वभौम ।
तुमि गोँसाञिर हैञा कराइह दर्शन ॥६३
आमार मातृष्वसा-गृह निर्ज्जन स्थान ।
ताँहा बासा देह, कर सर्व्व समाधान ॥६४
गोपीनाथ प्रभु लञा ताँहा बासा दिल ।
जल जलपात्रादिक समाधान कैल ॥६५
आर दिन गोपीनाथ प्रभुस्थाने गिया ।
शय्योत्थान दरशन कराइल लइया ॥६६
मुकुन्ददत्त लञा आइला सार्व्वभौमस्थाने ।
सार्व्वभौम ताँरे किछु बलिल वचने ॥६७
प्रकृति विनीत सन्नयासी आकृति सुन्दर ।
आमार बहु प्रीति हय इँहार उपर ॥६८
कोन् सम्प्रदाये सन्नयास करियाछेन ग्रहण ।
किवा नाम इँहार शुनिते हय मन ॥६९
गोपीनाथ कहे इँहार नाम श्रीकृष्णचैतन्य ।
गुरु इँहार केशव भारती महाधन्य ॥७०
सार्व्वभौम कहे एइ नाम सर्व्वोत्तम ।
भारती सम्प्रदाय एहोँ हयेन मध्यम ॥७१
गोपीनाथ कहे इँहार नाहि बाह्यापेक्षा ।
अतएव सम्प्रदाये करिल उपेक्षा ॥७२

भट्टाचार्य्य कहे इँहार प्रौढ़ यौवन ।
केमने सन्न्यासधर्म्म हइबे रक्षण ॥७३
निरन्तर इँहारे आमि वेदान्त शुनाइब ।
वैराग्य अद्वैतमार्गे प्रवेश कराइब ॥७४
कहेन यदि पुनरपि योगपट्ट दिया ।
संस्कार करिब उत्तम सम्प्रदाय आनिया ॥७५
शुनि गोपीनाथ मुकुन्द दोँहे दुःखी हैला ।
गोपीनाथाचार्य्य किछु कहिते लागिला ॥७६
भट्टाचार्य्य तुमि इँहार ना जान महिमा ।
भगवत्ता लक्षणेर इँहातेइ सीमा ॥७७
ताहाते विख्यात इँहो परम ईश्वर ।
अज्ञ स्थाने किछु नहे विज्ञेर गोचर ॥७८
शिष्यगण कहे, ईश्वर कह कोन् प्रमाणे ।
आचार्य्य कहे विद्वदनुभव ईश्वर लक्षणे ॥७९
भट्टाचार्य्य कहे ईश्वरतत्त्व साधि अनुमाने ।
आचार्य्य कहे ईश्वरतत्त्व नहे अनुमाने ॥८०
अनुमान प्रमाणे नहे ईश्वरतत्त्व ज्ञाने ।
कृपा विने ईश्वरतत्त्व केह नाहि जाने ॥८१
ईश्वरेर कृपालेश हयेत याहारे ।
सेइत ईश्वरतत्त्व जानिबारे पारे ॥८२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१४।२९)—

श्रीकृष्णं प्रति ब्रह्मणः स्तुतिः--
अथापि ते देव पदाम्बुजद्वय--
प्रसादलेशानुगृहीत एव हि ।
जानाति तत्त्वं भगवन्महिम्नो
न चान्य एकोऽपि चिरं विचिन्वन् ।२।

टीका — दशमे ब्रह्मणो वाक्यमिदम् । हे देव ! हे भगवन् ! ते तव पादाम्बुजद्वयप्रसाद-लेशानुगृहीतस्त्वत्पादसेवी जन एव तव महिम्नस्तत्त्वं जानाति ।

हि शब्दार्थः । पण्डितो जनश्चिरं चिरकालं विचिन्वन् विचारं कुर्व्वन् तथा तव महिम्नस्तत्त्वं न जानाति ॥२

श्रीमद् भागवत के दशम स्कन्ध में श्रीकृष्ण को ब्रह्मा कहे थे-हे देव ! हे भगवन् ! मुक्ति ज्ञान लभ्य होने पर भी आपके पदारविन्दके प्रसाद लेश से अनुगृहीत व्यक्ति ही आप की महिमा को जान सकता है । किन्तु अपर व्यक्ति चिरकाल प्रयत्न करके भी जानने में समर्थ नहीं है ॥२॥

यद्यपि जगद्गुरु तुमि शास्त्रज्ञानवान् ।
पृथिवीते नाहि पण्डित तोमार समान ॥८३
ईश्वरेर कृपालेश नाहिक तोमाते ।
अतएव ईश्वरतत्त्व ना पार जानिते ॥८४
तोमार नाहिक दोष शास्त्रे एइ कहे ।
पाण्डित्याद्ये ईश्वरतत्त्व कभु ज्ञात नहे ॥८५
सार्व्वभौम कहे आचार्य्य कह सावधाने ।
तोमाते ताँहार कृपा इथे कि प्रमाणे ॥८६
आचार्य्य कहे वस्तु विषये हय वस्तुज्ञान ।
वस्तुतत्त्वज्ञान हय कृपाते प्रमाण ॥८७
इँहार शरीरे सब ईश्वरलक्षण ।
महाप्रेमावेश तुमि पाइतेछ दर्शन ॥८८
तबु त ईश्वरज्ञान ना हय तोमार ।
ईश्वरमायाय करे एइ व्यवहार ॥८९
देखिले ना देखे ताँरे वहिर्मुख जन ।
शुनि हासि सार्व्वभौम कहिल वचन ॥९०
इष्टगोष्ठी विचार करि ना करिह रोष ।
शास्त्र दृष्टे कहि आमि नाहि किछु दोष ।९१
महाभागवत हय चैतन्यगोँसाञि ।
एइ कलिकाले विष्णुर अवतार नाञि ॥९२
अतएव त्रियुग करि कहि विष्णुनाम ।
कलियुगे अवतार नाहि शास्त्रज्ञान ॥९३

शुनिया आचार्य्य कहे दुःखी हैया मने ।
शास्त्रज्ञ हइया तुमि कर अभिमाने ॥९४
भागवत भारत दुइ शास्त्रेर प्रधान ।
एइ दुइ ग्रन्थवाक्ये नाहि अवधान ॥९५
सेइ दुइ कहे कलिते साक्षात अवतार ।
तुमि कह कलिते नाहि विष्णुर प्रचार ॥९६
कलिकाले लीलावतार ना करे भगवान् ।
अतएव त्रियुग करि कहि विष्णुनाम ॥९७
प्रतियुगे करे कृष्ण युग-अवतार ।
तर्कनिष्ठ हृदय तोमार नाहिक विचार ॥९८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८।१३)—

आसन् वर्णास्त्रयो ह्यस्य गृह्णतोऽनुयुगं तनुः ।
शुक्लो रक्तस्तथा पीत इदानीं कृष्णतां गतः ॥३॥

श्रीमद् भागवत के दशमस्कन्द में उक्त है—

गर्गाचार्य्य नन्द को कहे थे – नन्द ! आप के यह पुत्र प्रतियुग में ही देह धारण करता रहता है, शुक्ल, रक्त, एवं पीत वर्ण के देह धारण इसके पहले हो चुका है। अधुना यह कृष्णत्व प्राप्त किया है, सुतरां इस का नाम 'कृष्ण' हुआ ॥३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।५।३२)—

कृष्णवर्णं त्विषा कृष्णं साङ्गोपाङ्गास्त्रपार्षदम् ।
यज्ञैः सङ्कीर्त्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः ॥४॥

श्रीमद् भागवत के एकादशस्कन्ध में लिखित हैं—

विवेकी पण्डित गण सङ्कीर्त्तन बहुल यज्ञ के द्वारा साङ्गोपाङ्ग अस्त्र एवं पार्षद समन्वित अकृष्ण-अर्थात् गौर कान्ति युक्त भगवान् की अर्च्चना करते हैं ॥४॥

तथाहि महाभारते दानधर्म्मे १४९ सर्ग—

सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी ।
सन्न्यासकृत् समः शान्तो निष्ठाशान्तिपरायणः ।५

महाभारत के विष्णु सहस्र नामस्तोत्र में उक्त है—

सुवर्ण वर्ण, हेमाङ्ग, वराङ्ग, चन्दनाङ्गदी, सन्न्यास-कृत् शम, शान्त निष्ठा शान्ति परायण । ये नामावली श्रीगौर चन्द्र की आदि लीला में प्रथम उक्त चार एवं अन्त्यलीला में चार नाम सुव्यक्त हैं ॥५॥

तोमार आगे ए कथार नाहि प्रयोजन ।
ऊषर भूमिते येन वीजेर रोपण ॥९९
तोमार उपरे यबे कृपा ताँर हबे ।
ए सब सिद्धान्त तबे तुमिह करिबे ॥१००
तोमार ये शिष्य कहे कुतर्क नाना बाद ।
इहार कि दोष, एइ मायार प्रसाद ॥१०१

तथाहि श्रीमद्भागवते (६।४।२६)

यच्छक्तयो वदतां वादिनां वै,
विवादसम्वादभुवो भवन्ति ।
कुर्व्वन्ति चैषां मुहुरात्ममोहं
तस्मै नमोऽनन्तगुणाय भूम्ने ॥६॥

टीका – यद् यस्य शक्तयः वै निश्चितं वदतां वादिनां सम्बन्धे विवादसम्वादभुवः तर्कविषय-मीमांसाविषयस्य च स्थानानि भवन्ति, च पुनः मुहुः बारं बारं एषां आत्म मोहं कुर्व्वन्ति, तस्मै अनन्त-गुणाय भूम्ने नमः ॥६॥

दक्ष प्रजापति कहे थे—जिनके शक्ति समूह का विश्लेषण करते करते वादी प्रतिवादी व्यक्तिगण विवाद अर्थात् तर्क विषय, एवं सम्वाद-अर्थात् मीमांसा विषय में उपस्थित होते हैं, एवं वादिगण पुनः आत्ममोह को प्राप्त करते रहते हैं, मैं उन अनन्त गुण शाली परम पुरुष को प्रणाम करता हूँ ॥६॥

तत्रैव श्रीमद्भागवते (११।२२।४)—

युक्तञ्च सन्ति सर्व्वत्र भाषन्ते ब्राह्मणा यथा ।
मायां मदीयामुद्गृह्य वदतां किं नु दुर्घटम् ॥७॥

टीका – मदीयां मम सम्बन्धीयां मायां उद्गृह्य स्वीकृत्य वदतां सत्वां किं वस्तु दुर्घटम् ? न भवति इत्यर्थः ॥७॥

श्रीमद्भागवत के एकादशस्कन्ध में लिखित है-

भगवान् उद्धव को कहे थे—हे उद्धव ! ब्राह्मण वृन्द जो निर्णय किये हैं, वह अयुक्त नहीं है, कारण, सर्वत्र ही समस्त तत्त्व अन्तर्भूत हैं, जिसने मेरी माया को अवलम्बन कर जो कुछ कहा है, वह क्या दुर्घट हो सकता है ? ॥७॥

तबे भट्टाचार्य्य कहे याह गोँसाञिर स्थाने ।
आमार नामे गण सह कर निमन्त्रणे ॥१०२
प्रसाद आनिया ताँरे कराह आगे भिक्षा ।
पश्चात् आमारे आसि कराइह शिक्षा ॥१०३
आचार्य्य भगिनीपति श्यालक भट्टाचार्य्य ।
निन्दा स्तुति हास्ये शिक्षा करान आचार्य्य ।१०४
आचार्य्येर सिद्धान्ते मुकुन्देर हइल सन्तोष ।
भट्टाचार्य्येर वाक्ये मने हैल दुःख रोष ॥१०५
गोँसाञिर स्थाने आचार्य्य कैल आगमन ।
भट्टाचार्य्येर नामे ताँरे कैल निमन्त्रण ।१०६
मुकुन्द सहित कहे भट्टाचार्य्येर कथा ।
भट्टाचार्य्येर निन्दा करे मने पाइ व्यथा ।१०७
शुनि महाप्रभु कहे ऐछे मत कह ।
आमा प्रति भट्टाचार्य्येर आछे अनुग्रह ।१०८
आमार सन्न्यासधर्म्म चाहेन राखिते ।
वात्सल्ये करुणाय कहे कि दोष इहाते ।१०९
आर दिन महाप्रभु भट्टाचार्य्य सने ।
आनन्दे करिल जगन्नाथ दरशने ॥११०
भट्टाचार्य्य सङ्गे ताँर मन्दिरे आइला ।
प्रभुरे आसन दिया आपने वसिला ॥१११
वेदान्त पड़ाइते तबे आरम्भ करिल ।
स्नेह भक्ति करि किछु प्रभुरे कहिल ॥११२
वेदान्त श्रवण एइ सन्न्यासीर धर्म्म ।
निरन्तर कर तुमि वेदान्त श्रवण ॥११३
प्रभु कहे मोरे तुमि कर अनुग्रह ।
सेइत कर्त्तव्य आमार तुमि येइ कह ॥११४
सात दिन पर्य्यन्त करे वेदान्त श्रवणे ।
भाल मन्द नाहि कहे वसि मात्र शुने ॥११५
अष्टम दिवसे ताँरे कहे सार्व्वभौम ।
सात दिन कर तुमि वेदान्त श्रवण ॥११६
भाल मन्द नाहि कह रह मौन धरि ।
बुझ कि ना बुझ इहा बुझिते ना पारि ॥११७
प्रभु कहे मूर्ख आमि नाहि अध्ययन ।
तोमार आज्ञाते मात्र करि ये श्रवण ॥११८
सन्न्यासीर धर्म्म लागि श्रवणमात्र करि ।
तुमि ये करह अर्थ बुझिते ना पारि ॥११९
भट्टाचार्य्य कहे ना बुझि एइ ज्ञान यार ।
बुझिवार तरे सेइ पुछे आरबार ॥१२०
तुमि शुनि शुनि रह मौनमात्र धरि ।
हृदये कि आछे तोमार बुझिते ना पारि ।१२१
प्रभु कहे सूत्रेर अर्थ बुझिये निर्म्मल ।
तोमार व्याख्या शुनि मन हयत विकल ।१२२
सूत्रेर अर्थ-भाष्य कहे प्रकाशिया ।
तुमि भाष्य कह सूत्रेर अर्थ आच्छादिया १२३
सूत्रेर मुख्यार्थ तुमि ना कर व्याख्यान ।
कल्पना अर्थेते ताहा कर आच्छादन ॥१२४
उपनिषद् शब्देर अर्थ येइ मुख्य हय ।
सेइ मुख्य अर्थ व्यास सूत्रे सब कय ॥१२५
मुख्यार्थ छाड़िया कर गौणार्थ कल्पना ।
अभिधा वृत्ति छाड़ि शब्देर करह लक्षणा १२६
प्रमाणेर मध्ये श्रुति प्रमाण प्रधान ।

श्रुति येइ अर्थ कहे सेइ से प्रमाण ॥१२७

जीवेर अस्थि विष्ठा दुइ शङ्ख गोमय ।
श्रुतिवाक्ये सेइ दुइ महापवित्र हय ॥१२८

स्वतः प्रमाण वेद सत्य येइ कहे ।
लक्षणा करिले स्वतः प्रामाण्य हानि हये ।१२९

व्यासेर सूत्रेर अर्थ सूर्य्येर किरण ।
स्वकल्पित भाष्यमेघे करे आच्छादन ॥१३०

वेद पुराणे करे ब्रह्म निरूपण ।
सेइ ब्रह्म बृहद्वस्तु ईश्वरलक्षण ॥१३१

षड़ैश्वर्य्यपरिपूर्ण स्वयं भगवान् ।
ताँरे निराकार करि करह व्याख्यान ॥१३२

निर्व्विशेष ताँरे कहे येइ श्रुतिगण ।
प्राकृत निषेधि करे अप्राकृत स्थापन ॥१३३

तथाहि श्रीचैतन्यचन्द्रोदयनाटके षष्ठाङ्के एकविंशाङ्के धृतहयशीर्षपञ्चरात्रम् ।

या या श्रुतिर्जल्पति निर्व्विशेष
सा साभिधत्ते सविशेषमेव ।
विचारयोगे सति हन्त तासां
प्रायो बलीयः सविशेषमेव ॥८॥

टीका—या या श्रुतिः निर्व्विशेषं निराकारं ब्रह्म इति जल्पति वदति, सा सा श्रुतिः सविशेषमेव साकारं श्रीकृष्णमेव अभिधत्ते आश्रयति । तासां श्रुतीनां हन्त आश्चर्य्ये हर्षे वा विचारयोगे सति यः सविशेषः साकारः श्रीकृष्ण एव निश्चितं प्रायो बाहुल्येन बलीयः अतिबलवान् भवति ॥८॥

जिस श्रुति में निराकार ब्रह्म का वर्णन है, उस में ही साकार अर्थात् सविग्रह ब्रह्मका वर्णन है, किन्तु आश्चर्य्य यह है कि—श्रुति समूह को विचार पूर्वक अवलोकन करने से सविशेष ब्रह्म अर्थात् सविग्रह ब्रह्म पक्ष में ही बलवन् प्रमाण उपलब्ध होता है ॥८॥

अपादान करणाधिकरण कारक तिन ।
भगवानेर सविशेष एइ तिन चिह्न ॥१३

भगवान् बहु हैते यबे कैल मन ।
प्राकृत शक्तिके तबे कैल विलोकन ॥१३

से काले नाहिक जन्मे प्रकृत मन नयन ।
अतएव अप्राकृत ब्रह्मेर नेत्र मन ॥१३

ब्रह्म शब्दे कहे पूर्ण स्वयं भगवान् ।
स्वयं भगवान् कृष्ण शास्त्रेर प्रमाण ॥१३

वेदेर निगूढ़ अर्थ बुझने ना याय ।
पुराणवाक्ये सेइ अर्थ करये निश्चय ॥१३

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१४।३०)—

श्रीभगवन्तं प्रति ब्रह्मवाक्यम्—

अहो भाग्यमहो भाग्यं नन्दगोपव्रजौकसाम् ।
यन्मित्रं परमानन्दं पूर्णं ब्रह्म सनातनम् ॥९॥

टीका—नन्दगोपव्रजौकसां व्रजेन्द्र गोप... वासिनां अहो भाग्यं अहो भाग्यं अत्यन्ताद्भुतं ... तेषां नन्दगोपव्रजवासिनां पूर्णं ब्रह्म एव परमा... सनातनं नित्यं मित्रं भवति ॥९॥

श्रीभगवान् के प्रति ब्रह्मा कहे थे—

अहो कैसा आश्चर्य्य है ! जब परमानन्द स्व... सनातन, पूर्ण ब्रह्म, नन्दादि व्रजवासिवृन्द के मित्र... में प्रकाशित हुये हैं । तब इन सब के सौभाग्य... वर्णन कैसे हो सकता है ? ॥९॥

अपाणि-पाद श्रुति वर्जे प्राकृत पाणि चरण ।
पुन कहे शीघ्र चले करे सर्व्व ग्रहण ॥१

अतएव श्रुति कहे ब्रह्म सविशेष ।
मुख्या छाड़ि लक्षणाते माने निर्व्विशेष ॥१

षड़ैश्वर्य्य पूर्णानन्द विग्रह याँहार ।
हेन भगवाने तुमि कह निराकार ॥१

स्वाभाविक तिन शक्ति येइ ब्रह्मे हय ।
निःशक्ति करिया तारे करह निश्चय ॥१४२

तथाहि भगवत्सन्दर्भे सत्त्वं रजस्तम इति त्रिदेव-
मित्यस्यव्याख्यायां धृतविष्णुपुराणस्य षष्ठांशीय
सप्तमाध्यायस्य एकषष्टितमः श्लोकः ।

विष्णुशक्तिः परा प्रोक्ता क्षेत्रज्ञाख्या तथापरा ।
अविद्याकर्म्मसंज्ञान्या तृतीया शक्तिरिष्यते ॥१०

विष्णु पुराण के ६।७।३१ में उक्त है—

विष्णु की शक्ति तीन प्रकार हैं—परा अर्थात् सच्चिदानन्दारूपा, तथा, अपरा-क्षेत्रज्ञा स्वत-जीवभूता शक्ति, एवं अन्या शक्ति अविद्या कर्म्मसंज्ञा से भूषित है । अर्थात् अन्तरङ्गा, वहिरङ्गा, तटस्था-अर्थात् जीवशक्ति नामिका त्रिविध शक्ति हैं ॥१०॥

तथाहि द्वितीयस्कन्धे नवमाध्याये तृतीयाङ्कधृत-बहुरूप इत्यस्य विश्वनाथ-चक्रवर्त्ति कृत-व्याख्यायां धृतो विष्णुपुराणीयषष्ठांशस्य सप्तमाध्यायस्यैकषष्टितम श्लोकौ ।

या या क्षेत्रज्ञशक्तिः सा वेष्टिता नृप सर्व्वगा ।
संसारतापानखिलानवाप्नोत्यत्र सन्ततान् ॥
तया तिरोहितत्वाच्च शक्तिः क्षेत्रज्ञसंज्ञिता ।
सर्व्वभूतेषु भूपाल तारतम्येन वर्त्तते ॥११॥

टीका—हे नृप ! या या क्षेत्रज्ञशक्तिः जीव-भूतशक्तिः विद्यते, अत्र संसारे सा सर्व्वगा वेष्टिता सती सन्ततान् अखिलान् संसारतापान् अवाप्नोति । च पुनः तया पूर्व्वलिखितया मायया तिरोहितत्वात् क्षेत्रज्ञसंज्ञिता सा शक्तिः हे भूपाल ! सर्व्वभूतेषु तारतम्येन सामान्येन विशेषरूपेण वर्त्तते ॥११॥

विष्णु पुराण में उक्त है—हे नृप ! क्षेत्रज्ञ नामिका जो जीवशक्ति है, वह इस संसार में विविध संसार ताप को प्राप्त करती है, माया के द्वारा स्वरूपानुसन्धान ज्ञान तिरोहित होने से वह इस जगत में स्थावर एवं जङ्गम रूप में प्रतिमात है ॥११

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे रतिभक्ति-लहर्य्यां प्रथमश्लोकव्याख्यायां धृतो विष्णुपुराणीय-प्रथमांशस्य द्वादशाध्यायेष चत्वारिंश श्लोकः ।

ह्लादिनी सन्धिनी सम्बित् त्वय्येका सर्व्वसंश्रये ।
ह्लादतापकरी मिश्रा त्वयि नो गुणवर्जिते ॥१२॥

विष्णु पुराण के द्वादशाध्य में लिखित है—

ध्रुव भगवान् को कहे थे— हे प्रभो ! सर्वाधार स्वरूप आप में ह्लादिनी, सन्धिनी, एवं सम्बित् नामिका शक्तित्रय हैं, ये शक्ति स्वरूप भूता हैं, किन्तु गुणमयी अर्थात् सत्त्व रजः तमात्मिका अर्थात् सात्त्विकी राजसी तामसी शक्ति आप में नहीं है, किन्तु जीव में है, कारण, आप मायिक गुण सम्पन्न नहीं हैं, किन्तु स्वरूप भूत गुण सम्पन्न हैं ॥१२॥

सच्चिदानन्दमय हय ईश्वरस्वरूप ।
तिन अंशे चिच्छक्ति हय तिन रूप ॥१४३
आनन्दांशे ह्लादिनी सदंशे सन्धिनी ।
चिदंशे सम्बित् यारे ज्ञान करि मानि ॥१४४
अन्तरङ्गा चिच्छक्ति तटस्था जीवशक्ति ।
बहिरङ्गा माया तिने करे प्रभुभक्ति ॥१४५
षड् बिध ऐश्वर्य्य प्रभुर चिच्छक्ति विलास ।
हेन शक्ति नाहि मान परम साहस ॥१४६
मायाधीश मायावश ईश्वरे जीव भेद ।
हेन जीव ईश्वर सने करह अभेद ॥१४७
गीताशास्त्रे जींवरूप शक्ति करि माने ।
हेन जीवे अभेद कर ईश्वरेर सने ॥१४८

तथाहि श्रीभगवद्गीतायां (७।४)—

अर्ज्जुनं प्रति श्रीकृष्णवचनं—

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च ।
अहङ्कार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥१३॥

टीका—इयं वक्ष्यमाणा अष्टधा अष्टविधा प्रकृतिः शक्तिः मे मम सकाशादेव भिन्ना भवति ।

अष्टधा प्रकृतिस्तु,—भूमिः, आपः, अनलः, वायुः, खं, बुद्धिः, मनः, अहङ्कारः, इति ।१३।

श्रीभगवद् गीता में उक्त है—

भूमि—जल, अग्नि, वायु, आकाश, बुद्धि मन, एवं अहङ्कार ये अष्टविधा प्रकृति--शक्ति मुझ से भिन्ना हैं, अर्थात् ये मत् प्रकृति माया शक्ति रूपमें अधिष्ठित हैं ॥१३॥

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायां (७।५)

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम् ।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्य्यते जगत् ॥१४।

भगवद् गीता के सप्तम अध्याय में उक्त है--
यह शक्ति जड़ा शक्ति होने के कारण--अपराशक्ति नाम से अभिहिता है। हे महावाहो ! इस अपरा प्रकृति से विभिन्ना जीवरूपा परा प्रकृति है, जिस चेतन शक्ति के द्वारा अर्थात् निज निजोपार्ज्जित कर्म्म के द्वारा यह जगत् अवस्थित हैं, यह जानना होगा ॥१४॥

ईश्वरेर श्रीविग्रह सच्चिदानन्दाकार ।
से विग्रहे कह सत्त्व गुणेर विकार ? ॥१४९
श्रीविग्रह ये ना माने सेइत पाषण्डी ।
अदृश्य अस्पृश्य हय सेइ यमदण्डी ॥१५०
वेद ना मानिया बौद्ध हयत नास्तिक ।
वेदाश्रये नास्तिकवाद बौद्धते अधिक ॥१५१
जीवनिस्तारेर हेतु सूत्र कैल व्यास ।
मायावादि-भाष्य शुनिले हय सर्व्वनाश ॥१५२
परिणामवाद व्याससूत्रेर सम्मत ।
अचिन्त्य शक्त्ये ईश्वर जगद्रूपे परिणत ॥१५३
मणि यैछे अविकृत प्रसवे हेमभार ।
जगद्रूप हय ईश्वर तबु अविकार ॥१५४
व्यास भ्रान्त बलि सेइ सूत्रे दोष दिया ।
विवर्त्तवाद स्थापियाछे कल्पना करिया ॥१५५

जीवेर देहे आत्मबुद्धि सेइ मिथ्या हय ।
जगत् ये मिथ्या नहे नश्वरमात्र कय ॥१५
प्रणव ये महावाक्य से ईश्वरमूर्त्ति ।
प्रणव हइते सर्व्ववेद जगत् उत्पत्ति ॥१५
तत्त्वमसि जीवहेतु प्रादेशिक वाक्य ।
प्रणव ना मानि तारे कहे महावाक्य ॥१५
एइमत कल्पना-भाष्ये शत दोष दिल ।
भट्टाचार्य्य पूर्व्व पक्ष अनेक करिल ॥१५
वितण्डा छल निग्रहादि अनेक उठाइल ।
सब खण्डि प्रभु निज मत से स्थापिल ॥१६०
भगवान् सम्बन्ध भक्ति अभिधेय हय ।
प्रेम प्रयोजन वेदे तिन वस्तु कय ॥१६
आर ये ये किछु कहे सकलि कल्पना ।
स्वतःप्रमाण वेदवाक्ये ना करे लक्षणा ॥१
आचार्य्येर दोष नाहि ईश्वर--आज्ञा हैल ।
अतएव कल्पना करि नास्तिकशास्त्र कैल ।१६

तथाहि पद्मपुराणे उत्तरखण्डे सहस्रनामकथने (६२

श्रीशिवं प्रति श्रीकृष्णवाक्यं—

स्वागमैः कल्पितैस्त्वञ्च जनान्मद्विमुखान् कुरु।
माञ्च गोपय येन स्यात् सृष्टिरेषोत्तरोत्तरा ॥१

टीका—हे शिव ! कल्पितैः स्वागमैरागमशास्त्रै-र्जनान् मद्विमुखान् त्वं कुरु, माञ्च त्वं गोपय गोपनं कुरु, येन कल्पितशास्त्रेण उत्तरोत्तरा सृष्टिः स्यात् भवेत्, ब्रह्मण इत्यर्थः ॥१५॥

पद्म पुराणके उत्तर खण्ड ६२ अध्यायमें लिखित है

भगवान् शिव को कहे थे— कल्पित आगम नामक शास्त्र रचना के द्वारा समस्त मानव को मद्विमुख करो, अर्थात मेरे प्रति भक्ति हो, इस प्रकार प्रचार करो, मुझ को भी गोपन करो, जिससे उत्तरोत्तर सृष्टि वर्जित होगी, अर्थात् मानव भगवद्

विमुख होकर संसारासक्त होने से अनेक परिमाण में जीव सृष्टि होगी ॥१५॥

तथाहि पद्मपुराणे उत्तरखण्डे (२५।७)

मायावादमसच्छास्त्रं प्रच्छन्नं बौद्धमुच्यते ।
मयैव विहितं देवि कलौ ब्राह्मणमूर्त्तिना ॥१६॥

टीका—हे देवि ! असच्छास्त्रं मया एव विहितं कृतम् । कुत्र ?—कलौ कलियुगे। मया किम्भूतेन ?--ब्राह्मणमूर्त्तिना । असत् शास्त्रं किम्भूतं मायावादं कपट-वचनं तत् प्रच्छन्नं बौद्धमुच्यते कथ्यते ॥१६॥ '

पद्म पुराण के उत्तर खण्ड में लिखित है—हे देवि ! कलियुग में मैंने ही विप्ररूप में मायावाद रूप असत् शास्त्र का प्रणयन किया है, यह प्रच्छन्न बौद्ध शास्त्र नाम से कथित है ॥१६॥

शुनि भट्टाचार्य्य हैल परम विस्मित ।
मुखे ना निःसरे वाणी हइला स्तम्भित ॥१६४
प्रभु कहे भट्टाचार्य्य ना कर विस्मय ।
भगवाने भक्ति परम पुरुषार्थ हय ॥१६५
आत्माराम पर्य्यन्त करे ईश्वर भजन ।
ऐछे अचिन्त्य भगवानेर गुणगण ॥१६६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।७।१०)

शौनकादीन् प्रति श्रीसूतवाक्यम्—

आत्मारामाश्च मुनयो निर्ग्रन्था अप्युरुक्रमे ।
कुर्व्वन्त्यहैतुकीं भक्तिमित्थम्भूतगुणो हरिः ॥१७॥

टीका—आत्मारामाश्च सनकादयः उरुक्रमे श्रीकृष्णे अहैतुकीं हेतुशून्यां भक्तिं कुर्व्वन्ति । तथा निर्ग्रन्था मुनयो नारदादयश्च हेतुशून्यां भक्ति उरुक्रमे कुर्व्वन्ति । इत्थम्भूतगुणो हरिर्भवेत् ॥१७॥

श्रीमद् भागवत में शौनकादि के प्रति सूतका कथन यह है—

श्रीहरि के गुण ही इस प्रकार हैं कि—आत्माराम सनकादि योगिगण एवं निवृत्त हृदय ग्रन्थि सम्पन्न नारदादि मुनिगण भी उनके प्रति अहैतुकी भक्ति करते रहते हैं ॥१७॥

शुनि भट्टाचार्य्य कहे शुन महाशय ।
एइ श्लोकेर अर्थ शुनिते वाञ्छा हय ॥१६७
प्रभु कहे तुमि कि अर्थ कर ताहा आगे शुनि ।
पाछे आमि करिव अर्थ येवा किछु जानि ॥१६८
शुनि भट्टाचार्य्य श्लोक करिल व्याख्यान ।
तर्कशास्त्र-मत उठाल विविध विधान ॥१६९
नवविध अर्थ तर्कशास्त्र-मत लैया ।
शुनि महाप्रभु कहे ईषत् हासिया ॥१७०
भट्टाचार्य्य जानि तुमि साक्षात् वृहस्पति ।
शास्त्र व्याख्या करिते कारो नाहि ऐछे शक्ति ॥१७१
किन्तु तुमि अर्थ कैले पाण्डित्य-प्रतिभाय ।
इहा वइ श्लोकेर आछे आर अभिप्राय ॥१७२
भट्टाचार्य्येर प्रार्थनाय प्रभु व्याख्या कैल ।
तार नव अर्थमध्ये एक ना छुँइल ॥१७३
आत्मारामादि श्लोके एकादश पद हय ।
पृथक् पृथक् कैल पदेर अर्थ निश्चय ॥१७४
तत्तत्पदप्राधान्ये आत्माराम मिलाइया ।
अष्टादश अर्थ कैल अभिप्राय लइया ॥१७५
भगवान् ताँर शक्ति ताँर गुणगण ।
अचिन्त्य प्रभाव तिनेर ना याय कथन ।१७६
अन्य यत साध्य साधन करि आच्छादन ।
एइ तिने हरे सिद्धसाधकेर मन ॥१७७
सनकादि शुकदेव ताहाते प्रमाण ।
एइ मत नाना अर्थ करिल व्याख्यान ॥१७८
शुनि भट्टाचार्य्य-मने हैल चमत्कार ।
प्रभुके कृष्ण जानि करे आपना धिक्कार ।१७९

इँहोतो साक्षात् कृष्ण इहा ना जानिया ।
महा अपराध कैनु गर्व्वित हइया ॥१८०
आत्मनिन्दा करि लैल प्रभुर शरण ।
कृपा करिवारे तबे प्रभुर हइल मन ॥१८१
देखाइल आगे ताँरे चतुर्भुज रूप ।
पाछे श्याम वंशीमुख स्वकीय स्वरूप ॥१८२
देखि सार्व्वभौम पड़े दण्डवत् करि ।
पुन उठि स्तुति करे दुइ कर युड़ि ॥१८३
प्रभुर कृपाय ताँर स्फुरिल सब तत्त्व ।
नाम, प्रेम, दान, आदि, वर्णेर महत्त्व ॥१८४
शत श्लोक कैल एक दण्ड ना याइते ।
वृहस्पति तैछे श्लोक ना पारे कहिते ॥१८५
शुनि प्रभु सुखे ताँरे कैल आलिङ्गन ।
भट्टाचार्य्य प्रेमावेशे हैला अचेतन ॥१८६
अश्रु स्तम्भ पुलक कम्प स्वेद थरहरि ।
नाचे गाय कान्दे पड़े प्रभु-पद धरि ॥१८७
देखि गोपीनाथाचार्य्य हरषित-मन ।
भट्टाचार्य्य नृत्य देखि हासे प्रभुर गण ॥१८८
गोपीनाथाचार्य्य कहे महाप्रभु प्रति ।
सेइ भट्टाचार्य्येर प्रभु कैले एइ गति ॥१८९
प्रभु कहे तुमि भक्त तोमार सङ्ग हैते ।
जगन्नाथ इँहार कृपा कैल भाल मते ॥१९०
तबे भट्टाचार्य्ये प्रभु सुस्थिर करिल ।
स्थिर हैया भट्टाचार्य्य बहु स्तुति कैल ॥१९१
जगत् तारिले प्रभु सेइ अल्पकार्य्य ।
आमा उद्धारिले तुमि ए शक्ति आश्चर्य्य ।१९२
तर्कशास्त्रे जड़ आमि यैछे लौह-पिण्ड ।
आमा द्रवाइले तुमि प्रताप प्रचण्ड ॥१९३

स्तुति शुनि महाप्रभु निज बासा आइला ।
भट्टाचार्य्य आचार्य्यद्वारे भिक्षा कराइला ॥१
आर दिने प्रभु गेला जगन्नाथ दरशने ।
दर्शन करिला जगन्नाथ शय्योत्थाने ॥१९
पूजारि आनिया माला प्रसादान्न दिला ।
प्रसादान्न माला पाञा प्रभुर हर्ष हैला ॥१
सेइ प्रसादान्न माला आँचले बान्धिया ।
भट्टाचार्य्य घरे आइला त्वरायुक्त हैया ॥१
अरुणोदयकाले प्रभुर हैल आगमन ।
सेइ काले भट्टाचार्य्येर हैल जागरण ॥१
कृष्ण कृष्ण स्फुट कहि भट्टाचार्य्य जागिला
कृष्णनाम शुनि प्रभुर आनन्द बाड़िल ॥१
बाहिरे प्रभुर तिहों पाइल दरशन ।
आस्ते व्यस्ते कैल प्रभुर चरण वन्दन ॥२
बसिते आसन दिया दोँहे त बसिला ।
प्रसादान्न खुलि प्रभु ताँर हस्ते दिला ॥२०
प्रसाद पाञा भट्टाचार्य्येर आनन्द हइल ।
सन्ध्यास्नान दन्तधावन यद्यपि ना कैल ।२
चैतन्यप्रसादे मनेर जाड्य सब गेल ।
एइ श्लोक पड़ि अन्न भक्षण करिल ॥२०

तथाहि पद्मपुराणम्—

शुष्कं पर्य्युषितं वापि नीतं वा दूरदेशतः ।
प्राप्तमात्रेण भोक्तव्यं नात्र कालविचारणा ॥१८॥

टीका—श्रीकृष्णप्रसादं प्राप्तमात्रेण भोक्तव्यं, त
प्रसादभक्षणे कालाकाल-विचारणा नास्ति । प्रसाद
किम्भूतं ?--शुष्कं, वा यदि पर्य्युषितं, किंवा दूरदे
आनीतं, यवनेनापि संस्पृष्टं तदपि पावनं पवि
तद्ग्रहणे कालालालविचारणा नास्ति ॥१८॥

पद्म पुराण में उक्त है--महाप्रसाद शुष्क हो
अथवा पर्य्युसित हो, किंवा दूरदेश से आनीत हो

अर्थात् यवनादि के द्वारा संस्पृष्ट होने पर भी प्राप्ति मात्र से ही सेवन करना चाहिये, इस में समय का विचार न करे ॥१८॥

तथाहि पद्मपुराणे —

न देशनियमस्तत्र न कालनियमस्तथा ।
प्राप्तमन्नं द्रुतं शिष्टैर्भोक्तव्यं हरिरब्रवीत् ॥१९॥

टीका—तत्र महाप्रसादभक्षणे देशनियमो न, शोच्य-देशोऽयं महाप्रसादान्नं न भोक्तव्यं इति देश-नियमः न। कालनियमभोजनस्यायमनवसरः इति कालनियमो न। प्राप्तं महाप्रसादान्नं द्रुतं प्राप्तमात्रेण शिष्टैर्वैदिकाचारसम्पन्नैर्महानुभावैर्भोक्तव्यम्। ननु, कथं सन्ध्यावन्दनादिकमकृत्वा शास्त्रज्ञारूपभगवदाज्ञा-मुल्लङ्घ्य प्राप्तमात्रेण महाप्रसादान्नं भोक्तव्यमिति चेत् श्रूयतां हरिरब्रवीत्। परोक्षाज्ञातः साक्षादाज्ञायाः बलवत्त्वात् शास्त्रमुल्लङ्घ्यापि भगवतः साक्षादाज्ञा-बलेन सन्ध्यावन्दनादिकमकृत्वापि श्रीमहाप्रसादान्न-भोजने न कश्चिद्दोष इति सर्व्वमनवद्यम् ॥१९॥

पद्म पुराण में और भी लिखित है—

महा प्रसाद भक्षण विषय में देश का नियम नहीं है, काल का नियम नहीं है, प्राप्त मात्र से ही भोजन करे। यह कथन श्रीहरि का है ॥१९॥

देखि आनन्दित हैल महाप्रभुर मन ।
प्रेमाविष्ट हैञा कैला ताँरे आलिङ्गन ॥२०४
दुइ जन धरि दोँहे करेन नर्त्तन ।
दोँहार स्पर्शेते दोँहार प्रफुल्ल हैल मन ।२०५
स्वेद कम्प अश्रु दोँहे आनन्दे भासिला ।
प्रेमाविष्ट हञा प्रभुर कहिते लागिला ॥२०६
आजि मुञि अनायासे जिनिनु त्रिभुवन ।
आजि मुञि करिनु वैकुण्ठे आरोहण ॥२०७
आजि मोर पूर्ण हैल सब अभिलाष ।
सार्व्वभौमेर हैल महाप्रसादे विश्वास ॥२०८
आजि निष्कपटे तुमि हैला कृष्णाश्रय ।
कृष्ण निष्कपटे हैला तोमारे सदय ॥२०९
आजि से खण्डिल तोमार देहादि बन्धन ।
आजि छिन्न कैले तुमि मायार बन्धन ॥२१०
आजि कृष्ण-प्राप्ति-योग्य हैल तोमार मन ।
वेद धर्म्म लङ्घि कैले प्रसाद भक्षण ॥२११

तथाहि श्रीमद्भागवते (२.७।४१)—

नारदं प्रति श्रीब्रह्मवाक्यम्—

येषां स एव भगवान् दययेदनन्तः
सर्व्वात्मनाश्रितपदो यदि निर्व्यलीकम् ।
ते दुस्तरामतितरन्ति च देवमायां
नैषां ममाहमिति धीः श्वसृगालभक्ष्ये ।२०॥

टीका—ते जना देवमायां तरन्ति। किम्भूतां? दुस्तरां दुरत्ययाम्। ते के?—येषां सम्बन्धे हृदये स एव भगवान् श्रीकृष्णो दययेत् विराजते। येषां सम्बन्धे स भगवान् यदि निर्व्यलीकं प्रसन्नं यथा स्यात्तथा दययेत् दयां कुर्य्यात्। सः किम्भूतः?—अनन्तः, न विद्यते अन्तो यस्य सः। पुनः किम्भूतः? सर्व्वात्मना देहेन्द्रियेन आश्रितौ पदौ यस्य सः। श्वसृगालभक्ष्ये कुक्कुरैः शृगालैश्च भक्ष्ये भक्षणीये देहे ममाहमिति धीर्बुद्धिर्येषां ते देवमायां न तरन्ति ।२०

श्रीमद् भागवत के २।७।४२ में उक्त है—
भगवान् जिन के प्रति करुणा करते हैं, वे निष्कपट से एवं एकाग्र मनसे यदि श्रीभगवच्चरणारविन्दों को आश्रय करते हैं तो देवमाया से अपने को उद्धार करने में समर्थ होते हैं।

किन्तु श्व शृगाल भक्ष्य देह में मैं मेरा इस प्रकार जिन सब की बुद्धि है, वे देवमाया से उद्धार प्राप्त नहीं हो सकते हैं ॥२०॥

एत कहि महाप्रभु आइला निजस्थाने ।
सेइ हैते भट्टाचार्य्येर खण्डिल अभिमाने ।२१२
चैतन्यचरण विना नाहि जाने आन ।
भक्ति विना नाहि करे शास्त्रेर व्याख्यान २१३

गोपीनाथाचार्य्य ताँर वैष्णवता देखिया ।
हरि हरि बलि नाचे करतालि दिञा ॥२१४
आर दिन भट्टाचार्य्य चलिला दर्शने ।
जगन्नाथ ना देखि आइला प्रभुस्थाने ॥२१५
दण्डवत् करि कैल बहुबिध स्तुति ।
दैन्य करि कहे निज पूर्व्वेर दुर्म्मति ॥२१६
भक्तिसाधन श्रेष्ठ शुनिते हैल मन ।
प्रभु उपदेश कैल नाम संकीर्त्तन ॥२१७

तथाहि वृहन्नारदीयवचनम्—

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम् ।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा ॥२१

वृहन्नारदीय पुराण में उक्त है—कलिकाल में श्रीहरि नाम ही एकमात्र अवलम्बनीय है, इसको छोड़ कर अपर आश्रय नहीं है ॥२१॥

एइ श्लोकेर अर्थ शुनाइल करिया विस्तार ।
शुनि भट्टाचार्य्येर मने हैल चमत्कार ॥२१८
गोपीनाथाचार्य्य कहे पूर्व्वे ये कहिल ।
शुन भट्टाचार्य्य तोमार सेइत हैल ॥२१९
भट्टाचार्य्य कहे ताँरे करि नमस्कारे ।
तोमार सम्बन्धे प्रभु कृपा कैल मोरे ॥२२०
तुमि महाभागवत आमि तर्क-अन्धे ।
प्रभु कृपा कैल मोरे तोमार सम्बन्धे ॥२२१
विनय शुनि तुष्ट प्रभु कैल आलिङ्गन ।
कहिल याञा कर जगन्नाथ दरशन ॥२२२
जगदानन्द दामोदर दुइ सङ्गे लञा ।
घरे आइला भट्टाचार्य्य जगन्नाथ देखिञा ।२२३
उत्तम उत्तम प्रसाद ताहा ये पाइल ।
निज विप्र हाते दुइ जना सङ्गे दिल ॥२२४
निज दुइ श्लोक लेखि एक तालपाते ।

प्रभुके दिह बलि दिल जगदानन्द-हाते ॥
प्रभुस्थाने आइला दोँहे प्रसाद-पत्री लञा
मुकुन्ददत्त पत्री निल तार ठाँजि पाञा ॥
दुइ श्लोक बाहिरे भिते लिखिया राखिल ।
तबे जगदानन्द पत्री प्रभुरे लञा दिल ॥
प्रभु श्लोक पड़ि पत्र चिरिया फेलिल ।
भिते देखि भक्त सब श्लोक कण्ठे कैल ॥

तथाहि चैतन्यचन्द्रोदयनाटके (६।३२)

वैराग्यविद्यानिजभक्तियोग-
शिक्षार्थमेकः पुरुषः पुराणः ।
श्रीकृष्णचैतन्यशरीरधारी
कृपाम्बुधिर्यस्तमहं प्रपद्ये ॥
कालान्नष्टं भक्तियोगं निज यः
प्रादुष्कर्त्तुं कृष्णचैतन्यनामा ।
आविर्भूतस्तस्य पादारविन्दे
गाढ़ं गाढ़ं लीयतां चित्तभृङ्गः ॥

टीका—तं कृष्णचैतन्यं अहं प्रपद्ये आश्रया यः प्रभुः एकः अद्वितीयः, पुराणः पुरुषः, वैरा विद्यानिजभक्तियोग शिक्षार्थं श्रीकृष्णचैतन्य धारी, श्रीकृष्णचैतन्यरूपेण देहधारी भवति। कृष्णचैतन्यनामा प्रभुः कालात् कालवशात् नष्टं भक्तियोगं प्रादुष्कर्त्तुं आविर्भूतः, तस्य पादार चित्तभृङ्गः गाढ़ं गाढ़ं यथा स्यात्तथा लीयताम्

सार्वभौम शतक में लिखित है—जो अद्वि पुराण पुरुष--वैराग्य विद्या एवं निज भक्ति शिक्षा प्रदानार्थं श्रीचैतन्यरूप में अवतीर्ण हुये हैं उन कृपाम्बुधि की शरण ग्रहण करता हूँ।

काल के कारण— जो निज भक्ति योग वि हो गया था, उसको पुनर्वार प्रचार करने के लि जो अवतीर्ण हुये हैं उनके चरणार विन्दों में चित्त भृङ्ग गाढ़ रूप से आसक्त हो ॥२२॥

एइ दुइ श्लोक भक्तकण्ठे रत्नहार ।
सार्व्वभौमेर कीर्त्ति घोषे ढक्कावाद्यकार ॥

सार्व्वभौम हैला प्रभुर भक्त एकतान ।
महाप्रभु बिने सेव्य नाहि जाने आन ॥२३०
श्रीकृष्णचैतन्य शचीसूत गुणधाम ।
एइ ध्यान एइ जप एइ लय नाम ॥२३१
एक दिन सार्व्वभौम प्रभुस्थाने आइला ।
नमस्कार करि श्लोक पड़िते लागिला ॥२३२
भागवतेर ब्रह्मस्तवेर श्लोक पड़िला ।
श्लोकशेष दुइ अक्षर पाठ फिराइला ॥२३३

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१४।८)

श्रीभगवन्तं प्रति श्रीब्रह्मवाक्यम्—

तत्तेऽनुकम्पां सुसमीक्ष्यमाणो
भुञ्जान एवात्मकृतं विपाकम् ।
हृद्वाग्वपुर्भिर्विदधन्नमस्ते
जीवेत यो मुक्तिपदे स दायभाक् ॥२३

टीका—हे कृष्ण ! यो जनः हृद्वाग्वपुभिः करणैः ते तव नमो विदधन विधानं कुर्व्वन् जीवेत, सोऽपि मुक्तिपदे दायभाक् भवति । ते तव अनुकम्पां कृपां सुष्ठु यथा स्यात्तथा समीक्ष्यमाणः अवलोकयन् पुनः किं कुर्व्वन् आत्मकृतं देहविपाकं भुञ्जानः ॥२३॥

ब्रह्मा भगवान् को स्तुति कर कहे थे—हे कृष्ण ! कब तुम्हारी अनुकम्पा होगी, इस प्रकार आशापथ को निरीक्षण कर अनासक्त मन से निज कर्म फल भोग कर काय वाक्य मन से तुमको प्रणाम कर जीवित रहता है, वही व्यक्ति उत्तराधिकारी के समान मुक्ति विषय में दायभागी होता है ॥२३॥

प्रभु कहे मुक्तिपदे इहा पाठ हय ।
भक्तिपद केन पड़, कि तोमार आश्रय ॥२३४
भट्टाचार्य्य कहे मुक्ति नहे भक्तिफल ।
भगवद्विमुखेर हय दण्ड केवल ॥२३५
कृष्णेर विग्रह येइ सत्य नाहि माने ।
येइ निन्दा युद्धादिक करे ताँर सने ॥२३६
सेइ दुयेर दण्ड हय ब्रह्मसायुज्य मुक्ति ।
तार मुक्ति फल नहे येइ करे भक्ति ॥२३७
यद्यपि से मुक्ति हय पञ्चप्रकार ।
सालोक्य सामीप्य सारूप्य सार्ष्टि सायुज्य आर ॥२३८
सालोक्यादि चारि यदि हय सेवाद्वार ।
तबे कदाचित् भक्त करे अङ्गीकार ॥२३९
सायुज्य शुनिते भक्तेर हय घृणाभय ।
नरक वाञ्छये तबु सायुज्य ना लय ॥२४०
ब्रह्मे ईश्वरे सायुज्य दुइत प्रकार ।
ब्रह्मसायुज्य हैते ईश्वरसायुज्य धिक्कार ।२४१

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२९।११)

सालोक्य-सार्ष्टि-सामीप्य-सारूप्यैकत्वमप्युत ।
दीयमानं न गृह्णन्ति विना मत्सेवनं जनाः ॥२४॥

श्रीमद् भागवत के तृतीय स्कन्ध में उक्त है-समान लोक में निवास, समान ऐश्वर्य समीप में वास, समान रूप एवं एकत्व रूप सायुज्य मुक्ति देने पर भी भक्त गण मेरी सेवा को छोड़ कुछ भी नहीं ग्रहण करते हैं ॥२४॥

प्रभु कहे मुक्तिपदेर आर अर्थ हय ।
मुक्तिपद शब्दे साक्षात ईश्वर कहय ॥२४२
मुक्तिपद यार सेइ मुक्तिपद हय ।
नवम पदार्थ मुक्तिर किंवा समाश्रय ॥२४३
दुइ अर्थे कृष्ण कहे काहे पाठ फिरि ।
सार्व्वभौम इहा पाठ कहिते ना पारि ॥२४४
यद्यपि तोमार अर्थ एइ शब्द कय ।
तथापि आश्लिष्यदोषे कहन ना याय ॥२४५
यद्यपि मुक्ति शब्देर हय पञ्च वृत्ति ।
रूढ़ि वृत्त्ये कहे तबु सायुज्ये प्रतीति ॥२४६

मुक्ति शब्द कहिते मने हय घृणा त्रास ।
भक्ति शब्द कहिते मने हयत उल्लास ॥२४७
शुनिया हासेन प्रभु आनन्दितमन ।
भट्टाचार्य्ये कैल प्रभु दृढ़ आलिङ्गन ॥२४८
ये भट्टाचार्य्य पड़े पड़ाय मायावाद ।
ताँर हेन वाक्य स्फुरे चैतन्यप्रसाद ॥२४६
लोहाके यावत् स्पर्शि हेम नाहि करे ।
तावत् स्पर्शमणि केह चिनिते ना पारे ॥२५०
भट्टाचार्य्येर वैष्णवता देखि सर्व्वजन ।
प्रभुके जानिल साक्षात् व्रजेन्द्रनन्दन ॥२५१
काशीमिश्र आदि करि नीलाचलवासी ।
शरण लइल सबे प्रभुपदे आसि ॥२५२
से सकल कथा आगे करिब वर्णण ।
सार्व्वभौम करे यैछे प्रभुर सेवन ॥२५३
यैछे परिपाटी करे भिक्षा निर्व्वाहन ।
विस्तारिया आगे ताहा करिब बर्णन ॥२५४
एइ प्रभुर लीला सार्वभौमेर मिलन ।
इहा येइ श्रद्धा करि करये श्रवण ॥२५५
ज्ञान कर्म्मपाश हैते हय विमोचन ।
अचिराते पाय सेइ चैतन्यचरण ॥२५६
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२५७

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे
श्रीसार्व्वभौमोद्धारो नाम षष्ठः
परिच्छेदः ॥६॥





❀ सप्तम परिच्छेद ❀

धन्यं तं नौमि चैतन्यं वासुदेवं दयार्द्रधीः ।
नष्टकुष्ठं रूपपुष्टं भक्तिपुष्टं चकार यः ॥१॥

टीका--तं चैतन्यं अहं नौमि । किम्भूतं?- धन्यं सुकृतिनं । यश्चैतन्यो दयार्द्रधीः करुणा[...] बुद्धिः सन् वासुदेवाख्यं ब्राह्मणं नष्टकुष्ठमका[...] कारयामास । किम्भूतं ?---रूपपुष्टं सुन्दरं । भक्ति[...] सन्तोषितमित्यर्थः ॥१॥

जो करुणार्द्र चित्त होकर वासुदेव नामक कु[...] रोग ग्रस्त ब्राह्मण को नीरोग कर भक्ति दान[...] कृतार्थ किये थे, उन श्रीचैतन्य प्रभु को मैं प्र[...] करता हूँ ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्त वृन्द ॥
एइमत सार्व्वभौमेरे निस्तार करिल ।
दक्षिण गमने प्रभुर इच्छा उपजिल ॥
माघ शुक्लपक्षे प्रभु करिल सन्नचास ।
फाल्गुने आसिया कैल नीलाचले बास ॥
फाल्गुनेर शेषे दोलयात्रा से देखिल ।
प्रेमावेशे ताँहा बहु नृत्य गीत कैल ॥
चैत्रे रहि कैल सार्व्वभौमविमोचन ।
वैशाखप्रथमे दक्षिण याइते हैल मन ॥
निजगण आनि कहे विनय करिया ।
आलिङ्गन करे सबारे श्रीहस्ते धरिया ॥
तोमा सबा जानि आमि प्राणाधिक करि ।
प्राण छाड़ा याय तोमा सबा छाड़िते ना
पारि ॥

तुमि सब बन्धु मोर बन्धुकृत्य कैले ।
इँहा आनि मोरे जगन्नाथ देखाइले ॥८
एबे सबा स्थाने मुञि मागोँ एइ दाने ।
सबे मेलि आज्ञा देह याइब दक्षिणे ॥९
विश्वरूप उद्देशे आमि अवश्य याइब ।
एकाकी याइब काहो सङ्गे ना लइब ॥१०
सेतुबन्ध हैते आमि ना आसि यावत् ।
नीलाचले तुमि सब रहिबे तावत् ॥११
विश्वरूपेर सिद्धिप्राप्ति जानेन सकल ।
दक्षिणदेश उद्धारिते करेन एइ छल ॥१२
शुनिया सबार मने हैल महादुख ।
वज्र येन माथाय पड़े शुकाइल मुख ॥१३
नित्यानन्द प्रभु कहे ऐछे काहे हय ।
एकाकी याइबे तुमि के इहा सहय ॥१४
एक दुइ सङ्गे चलुक ना पड़ हठरङ्गे ।
यारे कह सेइ दुइ चलुक तोमार सङ्गे ॥१५
दक्षिणेर तीर्थपथ आमि सब जानि ।
आमि सङ्गे चलि प्रभु आज्ञा देह तुमि ॥१६
प्रभु कहे आमि नर्त्तक तुमि सूत्रधार ।
यैछे तुमि नाचाह तैछे नर्त्तन आमार ॥१७
सन्नयास करि आमि चलिलाम वृन्दावन ।
तुमि आमा लैया आइला अद्वैतभवन ॥१८
नीलाचल आसिते तुमि भाङ्गिले मोर दण्ड ।
तोमा सबार गाढ़स्नेहे आमार कार्य्य भण्ड १९
जगदानन्द चाहे आमाय विषय भुञ्जाइते ।
येइ कहे सेइ भये चाहिये करिते ॥२०
कभु यदि इहार वाक्य करिये अन्यथा ।
क्रोधे तिन दिन आमाय नाहि कहे कथा ॥२१
मुकुन्द हयेन दुःखी देखि सन्नयासधरम ।
तिन बार शीते स्नान भूमिते शयन ॥२२
अन्तरे दुःख ज्वाला किछु नाहि कहे मुखे ।
इँहार दुःख देखि आमार द्विगुण हय दुःखे ।२३
आमि त सन्नयासी दामोदर ब्रह्मचारी ।
सदा रहे आमार उपर शिक्षादण्ड धरि ॥२४
इहार अग्रेते आमि ना जानि व्यवहार ।
इँहार नाभाय स्वतन्त्र चरित्र आमार ॥२५
लोकापेक्षा नाहि इँहार कृष्णकृपा हइते ।
आमि लोकापेक्षा कभु ना पारि छाड़िते ॥२६
ताते तुमि सब इँहा रह नीलाचले ।
दिन कत आमि तीर्थ भ्रमिब एकले ॥२७
इँहा सबार वश प्रभु हय ये ये गुणे ।
दोषारोप-छले करे गुण आस्वादने ॥२८
चैतन्येर भक्तवात्सल्य अकथ्यकथन ।
आपने वैराग्यदुःख करेन सहन ॥२९
सेइ दुःख देखि येइ भक्त दुःख पाय ।
सेइ दुःख ताँर शक्त्ये सहन ना याय ॥३०
गुणे दोषोद्गार छले सबा निषेधिया ।
एकाकी भ्रमिवेन तीर्थ वैराग्य करिया ॥३१
तबे चारि जन बहु विनति करिल ।
स्वतन्त्र ईश्वर प्रभु किछु ना मानिल ॥३२
तबे नित्यानन्द कहे ये आज्ञा तोमार ।
दुःख सुख हउक सेइ कर्त्तव्य आमार ॥३३
किन्तु एक निवेदन करोँ आरबार ।
विचार करिया ताहा कर अङ्गीकार ॥३४
कौपीन वहिर्व्वास आर जलपात्र ।
आर किछु नाहि सङ्गे याबे एइ मात्र ॥३५

तोमार दुइ हस्त बद्ध नामगणने ।
जलपात्र वहिर्व्वास वहिबे केमने ॥३६
प्रेमावेशे पथे तुमि हबे अचेतन ।
जलपात्र वस्त्रेर केबा करिबे रक्षण ॥३७
कृष्णदास नामे एइ सरल ब्राह्मण ।
इँहा सङ्गे करि लह धर निवेदन ॥३८
जलपात्र वस्त्र वहि तोमार सङ्गे याबे ।
ये तोमार इच्छा कर किछु ना बलिबे ॥३९
तबे तार वाक्ये प्रभु कैल अङ्गीकारे ।
ताहा सबा लञा गेला सार्व्वभौम-घरे ॥४०
नमस्करि सार्व्वभौम आसन निवेदिल ।
सबाकारे मिलि प्रभु आसने बसिल ॥४१
नाना कृष्णवार्त्ता कहि कहिल ताहारे ।
तोमार ठाँञि आइलाम आज्ञा मागिबारे ॥४२
सन्न्यास करि विश्वरूप गियाछे दक्षिणे ।
अवश्य करिब आमि ताँर अन्वेषणे ॥४३
आज्ञा देह दक्षिण आमि अवश्य चलिब ।
तोमार आज्ञाते सुखे नेउटि आसिब ॥४४
शुनि सार्व्वभौम हैला अत्यन्त कातर ।
चरणे धरिया कहे विषाद उत्तर ॥४५
बहु जन्मेर पुण्यफले पाइनु तोमार सङ्ग ।
हेन सङ्ग बिधि मोर करिलेक विभङ्ग ॥४६
शिरे वज्र पड़े यदि पुत्र मरि याय ।
ताहा सहि, तोमार विच्छेद सहन ना याय ४७
स्वतन्त्र ईश्वर तुमि करिबे गमन ।
दिन कत रह देखि तोमार चरण ॥४८
ताँहार विनये प्रभुर शिथिल हैल मन ।
रहिला दिवस कत ना कैला गमन ॥४९

भट्टाचार्य्य आग्रह करि करे निमन्त्रण ।
गृहे पाक करि प्रभुके करान भोजन ॥५०
ताँहार ब्राह्मणी ताँर नाम षाठीर माता ।
रान्धि भिक्षा देन तेँहो आश्चर्य्य ताँर कथा ॥५१
आगे त कहिब ताहा करिया विस्तार ।
एबे कहि प्रभुर दक्षिणयात्रासमाचार ॥५२
दिन चारि रहि प्रभु भट्टाचार्य्य-स्थाने ।
चलिबार लागि आज्ञा मागिल आर दिने ॥५३
प्रभुर आग्रहे भट्टाचार्य्य सम्मत हइला ।
प्रभु तेँहो लञा जगन्नाथ-मन्दिरे आइला ॥५४
दर्शन करि ठाकुर-पाशे आज्ञा मागिल ।
पूजारी प्रभुरे मालाप्रसाद आनि दिल ॥५५
आज्ञा-माला पाञा हर्षे नमस्कार करि ।
आनन्दे दक्षिण देश चलिला गौरहरि ॥५६
भट्टाचार्य्य सङ्गे आर यत निजगण ।
जगन्नाथ प्रदक्षिण करि करिला गमन ॥५७
समुद्र तीरे तीरे आलालनाथ पथे ।
सार्व्वभौम कहिला आचार्य्य गोपीनाथे ॥५८
चारि कौपीन वहिर्व्वास राखियाछि घरे ।
ताहा प्रसादान्न लञा आइस विप्रद्वारे ॥५९
तबे सार्व्वभौम कहे प्रभुर चरणे ।
अवश्य राखिबे मोर एइ निवेदने ॥६०
राय रामानन्द आछे गोदावरीतीरे ।
अधिकारी हयेन तिँहो विद्यानगरे ॥६१
शूद्र विषयी ज्ञाने तारे उपेक्षा ना करिबा ।
आमार वचने ताँरे अवश्य मिलिबा ॥६२
तोमार सङ्गेर योग्य तिँहो एक जन ।
पृथिवीते रसिक भक्त नाहि ताँर सम ॥६३

पाण्डित्य आर भक्तिरस दुयेर तिँहो सीमा ।
सम्भाषिले जानिबे तुमि ताँहार महिमा ॥६४
अलौकिक वाक्यचेष्टा ताँर ना बुझिया ।
परिहास करियाछि ताँरे वैष्णव बलिया ।६५
तोमार प्रसादे एबे जानिनु ताँर तत्त्व ।
सम्भाषिले जानिबे ताँर येमन महत्त्व ॥६६

अङ्गीकार करि प्रभु ताँहार वचन ।
ताँरे विदाय दिते ताँरे कैल आलिङ्गन ॥६७
घरे कृष्ण भजि मोरे करिह आशीर्व्वादे ।
नीलाचले आसि येन तोमार प्रसादे ॥६८
एत बलि महाप्रभु करिला गमन ।
मूर्च्छित हइया ताँहा पड़िला सार्व्वभौम ॥६९
ताँरे उपेक्षिया कैल शीघ्र गमन ।
के बुझिते पारे महाप्रभुर चित्त मन ॥७०
महानुभावेर स्वभाव एइ मत हय ।
पुष्पसम कोमल कठिन वज्रमय ॥७१

तथाहि भवभूतिकृतवीरचरितस्य उत्तरचरिते(२।२३)

वज्रादपि कठोराणि मृदुनि कुसुमादपि ।
लोकोत्तराणां चेतांसि को हि विज्ञातुमीश्वरः ॥२॥

टीका—लोकोत्तराणां महानुभवानां चेतांसि चित्तानि हि निश्चितं को विज्ञातु बोधितु ईश्वरः समर्थो भवति ? चेतांसि किम्भूतानि ?—वज्रादपि कठोराणि, पुनः कुसुमादपि मृदुनि कोमलानि ॥२॥

असाधारण प्रकृति महानुभाववृन्द की चित्त वृत्ति वज्र से भी कठिन एवं पुष्प से भी मृदु है, उस को जानने में कौन समर्थ है ॥२॥

नित्यानन्द प्रभु भट्टाचार्य्ये उठाइल ।
ताँर लोकसङ्गे तार घरे पाठाइल ॥७२
भक्तगण शीघ्र आसि लैल प्रभुर साथ ।
वस्त्र-प्रसाद लञा तावत् आइला गोपीनाथ ७३
सबा सङ्गे तबे प्रभु आलालनाथ आइला ।
नमस्कार करि ताँरे बहु स्तुति कैला ॥७४
प्रेमावेशे नृत्य गीत कैल कतक्षण ।
देखिते आइल ताहा वैसे यत जन ॥७५
चतुर्द्दिके लोक सब बले हरि हरि ।
प्रेमावेशे मध्ये नृत्य करे गौरहरि ॥७६
काञ्चन सदृश देह अरुण वसन ।
पुलकाश्रु कम्प स्वेद ताहाते भूषण ॥७७
देखिया लोकेर मने हैल चमत्कार ।
यत लोक आइसे केहो नाहि याय घर ॥७८
केहो नाचे केहो गाय श्रीकृष्णगोपाल ।
प्रेमे भासिल लोक स्त्री बृद्ध युवा बाल ॥७९
देखि नित्यानन्द प्रभु कहे भक्तगणे ।
एइरूप नृत्य आगे हबे ग्रामे ग्रामे ॥८०
अतिकाल हैल लोक छाड़िया ना याय ।
तबे नित्यानन्द गोँसाञि सृजिल उपाय ॥८१
मध्याह्न करिते गेला प्रभुके लइया ।
ताहा देखिते आइसे लोक चौदिके धाइया ।८२
मध्याह्न करिया आइला देवता-मन्दिरे ।
निजगण प्रवेशि कवाट दिल वहिर्द्वारे ॥८३
तबे गोपीनाथ दुइ प्रभुके भिक्षा कराइल ।
प्रभुर शेष प्रसादान्न सबे बाँटि खाइल ॥८४
शुनि शुनि लोक सब आसि वहिर्द्वारे ।
हरि हरि बलि लोक कोलाहल करे ॥८५
तबे महाप्रभु द्वार कराइल मोचन ।
आनन्दे आसिया लोक कैल दरशन ॥८६

एइमत सन्ध्यापर्य्यन्त लोक आइसे याय ।
वैष्णव हइल लोक नाचे कृष्ण गाय ॥८७
एइरूपे सेइ ठाञि भक्तगण सङ्गे ।
सेइ रात्रि गोङाइला कृष्णकथारङ्गे ॥८८
प्रातःकाले स्नान करि करिल गमन ।
भक्तगणे विदाय दिल करि आलिङ्गन ॥८९
मूर्च्छित हइया सबे भूमिते पड़िला ।
ताहा सबा पाने प्रभु फिरि ना चाहिला ॥९०
विच्छेदे व्याकुल प्रभु चलिला दुःखी हञा ।
पाछे कृष्णदास याय पात्र वस्त्र लञा ॥९१
भक्तगण उपवासी ताहाञि रहिला ।
आर दिन दुःखी हञा नीलाचले आइला ॥९२
मत्त सिंहप्राय प्रभु करिला गमन ।
प्रेमावेशे याय करि नाम संकीर्त्तन ॥९३

तथाहि श्रीकृष्णचैतन्यवाक्यम्—

कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे ।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण रक्ष मां
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण पाहि मां ॥
राम राघव राम राघव राम राघव रक्ष मां ।
कृष्ण केशव कृष्ण केशव कृष्ण केशव पाहि मां ।३

टीका—हे कृष्ण ! त्वमेव मां रक्ष । हे कृष्ण ! मामेव हि रक्ष । हे राम ! हे राघव ! मां रक्ष ! हे कृष्ण ! हे केशव ! मां पाहि ॥३॥

हे कृष्ण ! मेरी रक्षा करो, हे कृष्ण ! मुझको परित्राण करो । हे राम ! हे राघव ! मेरी रक्षा करो, हे कृष्ण ! हे केशव मेरा परित्राण करो ॥३॥

एइ श्लोक पड़ि पथे चले गौरहरि ।
लोक देखि पथे कहे बोल हरि हरि ॥९४

सेइ लोक प्रेमे मत्त बले हरि कृष्ण ।
प्रभुर पाछे सङ्गे याय दर्शने सतृष्ण ॥९५
कत दूरे रहि प्रभु तारे आलिङ्गिया ।
विदाय करेन तारे शक्ति सञ्चारिया ॥९६
सेइ जन निज ग्रामे करिया गमन ।
कृष्ण बले हासे कान्दे नाचे अनुक्षण ॥९७
यारे देखे तारे कहे कह कृष्ण नाम ।
एइ मत वैष्णव कैल सब निज ग्राम ॥९८
ग्रामान्तर हैते आइसे दैवे यत जन ।
ताँहार दर्शन कृपाय हय ताँर सम ॥९९
सेइ याइ निज ग्राम वैष्णव करय ।
अन्य ग्रामी आसि ताँरे देखि वैष्णव हय ॥१००
सेइ याइ आर ग्रामे करे उपदेश ।
एइमत वैष्णव हैल सब दक्षिण देश ॥१०१
एइमत पथे याइते शत शत जन ।
वैष्णव करेन तारे करि आलिङ्गन ॥१०२
येइ ग्रामे रहि भिक्षा करेन यार घरे ।
सेइ ग्रामेर लोक आइसे प्रभु देखिबारे ॥१०३
प्रभुर कृपाय हय महाभागवत ।
से सब आचार्य्य हञा तारिल जगत ॥१०४
एइ मत कैला यावत् गेला सेतुबन्धे ।
सर्व्व देश भक्त हैला प्रभुर सम्बन्धे ॥१०५
नवद्वीपे येइ शक्ति ना कैल प्रकाशे ।
सेइ शक्ति प्रकाशि निस्तारिल दक्षिणदेशे १०६
प्रभुरे ये भजे तारे ताँर कृपा हय ।
सेइ से ए सब लीला सत्य करि लय ॥१०७
अलौकिक लीलाते यार ना जन्मे विश्वास ।
इहलोक परलोक तार हय नाश ॥१०८

प्रथमे कहिल प्रभुर ये रूपे गमन ।
एइ रूप जानिह यावत् दक्षिणभ्रमण ॥१०९
एइमत याइते याइते गेला कूर्म्मस्थाने ।
कूर्म्म देखि ताँरे कैल स्तवन प्रणामे ॥११०
प्रेमावेशे हासि कान्दि नृत्य गीत कैला ।
देखि सर्व्व लोकेर चित्ते चमत्कार हैला १११
आश्चर्य्य शुनि सब लोक आइल देखिबारे ।
प्रभुर रूप प्रेम देखि हैल चमत्कारे ॥११२
दर्शने वैष्णव हैल बले कृष्ण हरि ।
प्रेमावेशे नाचे लोक ऊर्द्ध बाहु करि ॥११३
कृष्णनाम लोकमुखे शुनि अविराम ।
सेइ लोक वैष्णव कैल अन्य सब ग्राम ॥११४
एइमत परम्पराय देश वैष्णव हैल ।
कृष्णनामामृत-वन्याय देश भासाइल ॥११५
कतक्षणे प्रभु यदि वाह्य प्रकाशिला ।
कूर्म्मेर सेवक बहु सम्मान करिला ॥११६
येइ येइ क्षेत्रे यान ताहा एइ व्यवहार ।
एक ठाँञि कहिल ना कहिब आर बार ।११७
कूर्म्मनामे सेइ ग्रामे वैदिक ब्राह्मण ।
बहु श्रद्धा भक्त्ये प्रभुर कैल निमन्त्रण ॥११८
घरे आनि प्रभुर कैल पादप्रक्षालन ।
सेइ जल स्ववंश सह करिल भक्षण ॥११९
अनेक प्रकार स्नेहे भिक्षा कराइल ।
गोँसाञिर प्रसादान्न सवंशे खाइल ॥१२०
येइ पादपद्म तोमार ब्रह्मा ध्यान करे ।
सेइ पादपद्म साक्षात् आइल मोर घरे ॥१२१
आमार भाग्येर सीमा ना याय कथन ।
आजि मोर श्लाघ्य हैल जन्म कुल धन ।१२३

कृपा कर महाप्रभु याब तोमार सङ्गे ।
सहिते ना पारि दुःख विषयतरङ्गे ॥१२४
प्रभु कहे ऐछे बात कभु ना कहिबा ।
गृहे रहि कृष्णनाम निरन्तर लैबा ॥१२५
यारे देख तारे कर कृष्ण उपदेश ।
आमार आज्ञाय गुरु हञा तार एइ देश १२६
कभु ना बाधिबे तोमार विषयतरङ्ग ।
पुनरपि एइ ठाञि पाबे मोर सङ्ग ॥१२७
एइमत यार घरे प्रभु करेन भिक्षा ।
सेइ ऐछे कहे तारे करान एइ शिक्षा ॥१२८
पथे याइते देवालये रहे येइ ग्रामे ।
यार घरे भिक्षा करे सेइ महाजने ॥१२९
कूर्म्मे यैछे रीति ऐछे कैल सर्व्व ठाञि ।
नीलाचल पुन यावत् ना आइला गोँसाञि १३०
अतएव इँहा कहिल करिया विस्तार ।
एइमत जानिबे प्रभुर सर्व्वत्र व्यवहार ॥१३१
एइ मत सेइ रात्रि ताँहाइ रहिला ।
स्नान करि प्रभु प्रातःकाले त चलिला ।१३२
प्रभु अनुव्रजि कूर्म्म बहु दूर गेला ।
प्रभु ताँरे यत्न करि घरे पाठाइला ॥१३३
वासुदेव नाम एक द्विज महाशय ।
सर्व्वाङ्गे गलित कुष्ठ सेहो कीड़ामय ॥१३४
अङ्ग हैते येइ कीड़ा खसिया पड़य ।
उठाइया सेइ कीड़ा राखे सेइ ठाँय ॥१३५
रात्रिते शुनिल तेँहो गोँसाञिर आगमन ।
देखिते आइला प्राते कूर्म्मेर भवन ॥१३६
प्रभुर गमन कूर्म्म-मुखेते शुनिञा ।
भूमिते पड़िला दुःखे मूर्च्छित हइया ॥१३७

अनेक प्रकार विलाप करिते लागिला ।
सेइ क्षणे आसि प्रभु तारे आलिङ्गिला ॥१३८
प्रभुर स्पर्शे दुःख-सङ्गे कुष्ठ दूरे गेल ।
आनन्द सहिते अङ्ग सुन्दर हइल ॥१३६
प्रभुर कृपा देखि तार विस्मय हैल मन ।
श्लोक पड़ि पाये धरि करये स्तवन ॥१४०

तथाहि श्रीमद्भागवते (११८१।१४)

क्वाहं दरिद्रः पापीयान् क्व कृष्णः श्रीनिकेतनः ।
ब्रह्मबन्धुरिति स्माहं बाहुभ्यां परिरम्भितः ॥४।

श्रीमद्भागवत में लिखत हैं—

मैं पापीयान् दरिद्र हीन ब्राह्मण कहाँ, और श्रीनिकेतन श्रीकृष्ण कहाँ। तथापि उन्होंने मुझको निज बाहु द्वय के द्वारा आलिङ्गन किया ॥४॥

बहु स्तुति करि कहे शुन दयामय ।
जीवे एइ गुण नाहि तोमातेइ हय ॥१४१
मोरे देखि मोर गन्धे पलाय पामर ।
हेन मोरे स्पर्श तुमि स्वतन्त्र ईश्वर ॥१४२
किन्तु आछिलाम भाल अधम हइया ।
एबे अहङ्कार मोर जन्मिबे आसिया ॥१४३
प्रभु कहे कभु तोमार ना हवे अभिमान ।
निरन्तर लह तुमि कृष्ण कृष्ण नाम ॥१४४
कृष्ण उपदेशि कर जीवेर निस्तार ।
अचिराते कृष्ण तोमा करिवेन अङ्गीकार १४५
एतेक कहिया प्रभु कैल अन्तर्द्धाने ।
दुइ विप्रे गलागलि कान्दे प्रभुर गुणे ॥१४६
वासुदेव-उद्धार एइ कहिल आख्यान ।
वासुदेवामृतप्रद हइल प्रभुर नाम ॥१४७
एइत कहिल प्रभुर प्रथम गमन ।
कूर्म्म-दरशन वासुदेव-विमोचन ॥१४८
श्रद्धा करि करे येइ ए लीला श्रवण ।
अविलम्बे मिले तारे चैतन्यचरण ॥१४९
चैतन्य-लीलार आदि अन्त नाहि जानि ।
सेइ लिखि महान्तेर मुखे येइ शुनि ॥१५०
इथे अपराध मोर ना लइह भक्तगण ।
तोमा सबार चरण मोर एकान्त शरण ॥१५१
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१६०

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे दक्षिणयात्रावासुदेवोद्धारो नाम सप्तमः परिच्छेदः ।.७॥



❀ अष्टम परिच्छेद ❀

सञ्चार्य्य रामाभिध-भक्तमेघे
स्वभक्तिसिद्धान्तचयामृतानि ।
गौराब्धिरेतैरमुना वितीर्णै-
स्तज्ज्ञत्वरत्नालयतां प्रयाति ।१॥

टीका--गौराब्धिः गौररूप-प्रेम-समुद्रः रामाभिध-भक्तमेघे स्वभक्ति--सिद्धान्त--चयामृतानि सञ्चार्य्य, अधुना एतैः वितीर्णैः तज्ज्ञत्वरत्नालयतां प्रयाति प्राप्नोति ॥१॥

गौर रूप प्रेम समुद्र, रामानन्द रायनामक भक्त मेघ में निजभक्ति सिद्धान्त रूप सुधावारि सञ्चार कर पुनर्वार रससे उसको प्राप्तकर रत्नाकर नाम से भूषित हुये थे ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१

पूर्व्व-रीते प्रभु आगे करिल गमने ।
"जियड़ नृसिंहक्षेत्रे" गेला कत दिने ॥२
नृसिंह देखिया कैल दण्डवत् नति ।
प्रेमावेशे कैल बहु नृत्य गीत स्तुति ॥३
श्रीनृसिंह जय नृसिंह जय जय नृसिंह ।
प्रह्लादेश ! जय पद्मामुख पद्मभृङ्ग ॥४

तथाहि श्रीमद्भागवते (७।६।१)

श्रीधरस्वामिकृतव्याख्यायां धृतमागमवचनं—
उग्रोऽप्यनुग्र एवायं स्वभक्तानां नृकेशरी ।
केशरीव स्वपोतानामन्येषामुग्रविक्रमः ॥२॥

टीका—केशरी सिंह उग्रोऽपि स्वपोतानां बालानां सम्बन्धेऽनुग्रः, तद्वत् गौरनृकेशरी स्वपोतानां सम्बन्धे उग्रोऽपि अनुग्र., अन्येषां अभक्तानां सम्बन्धे उग्रविक्रमः प्रचण्डः ॥२॥

केशरी जिस प्रकार उग्र होकर भी निज शिशु के प्रति महा कृपालु है, उस प्रकार यह नृ केशरी उग्र होकर भी निज भक्त के प्रति अनुग्रहवान् है ।२

एइ मत नाना श्लोक पड़ि स्तुति कैल ।
नृसिंहसेवक मालाप्रसाद आनि दिल ॥५
पूर्व्ववत् कोन विप्र कैल निमन्त्रण ।
सेइ रात्रि ताँहा रहि करिला गमन ॥६
प्रभाते उठिया प्रभु चलिला प्रेमावेशे ।
दिक् विदिक् ज्ञान नाहि रात्रि दिवसे ॥७
पूर्व्ववत् वैष्णव करि सब लोकगणे ।
गोदावरी-तीरे चलि आइला कत दिने ॥८
गोदावरी देखि हैल यमुना स्मरण ।
तीरे बन देखि स्मृति हैल वृन्दावन ॥९
सेइ बने कतक्षण करि नृत्य गान ।
गोदावरी पार हैञा कैल ताँहा स्नान ॥१०
घाट छाड़ि कत दूरे जल-सन्निधाने ।
वसिया करेन प्रभु नाम सङ्कीर्त्तने ॥११
हेन काले दोलाय चड़ि रामानन्द राय ।
स्नान करिबारे आइला बाजना बाजाय ॥१२
ताँर सङ्गे आइला बहु वैदिक ब्राह्मण ।
बिधिमत कैल तेँहो स्नानादि तर्पण ॥१३
प्रभु ताँरे देखि जानिल एइ रामराय ।
ताँहारे मिलिते प्रभुर मन उठि धाय ॥१४
तथापि धैर्य्य करि प्रभु रहिला वसिया ।
रामानन्द आइला अपूर्व्व सन्न्यासी देखिया १५
सूर्य्यशतसमकान्ति अरुणवसन ।
सुवलित प्रकाण्डदेह कमललोचन ॥१६
देखिया ताहार मने हैल चमत्कार ।
आसिया करिल दण्डवत् नमस्कार ॥१७
उठि प्रभु कहे उठ कह कृष्ण कृष्ण ।
ताँरे आलिङ्गिते प्रभुर हृदय सतृष्ण ॥१८
तथापि पुछिल तुमि राय रामानन्द ।
तेँह कहे सेइ मुञि दास शूद्र मन्द ॥१९
तबे प्रभु कैल ताँरे दृढ़ आलिङ्गन ।
प्रेमावेशे प्रभु भृत्य दोँहे अचेतन ॥२०
स्वभाविक प्रेम दोँहार उदय करिला ।
दोँहा आलिङ्गिया दोँहे भूमिते पड़िला ॥२१
स्तम्भ स्वेद अश्रु कम्प पुलक वैवर्ण्य ।
दोँहार मुखेते शुनि गदगद कृष्णवर्ण ॥२२
देखिया ब्राह्मणगणेर हैल चमत्कार ।
वैदिक ब्राह्मण सब करेन विचार ॥२३
एइत सन्न्यासीर तेज देखि ब्रह्मसम ।
शूद्र आलिङ्गिया केने करेन क्रन्दन ॥२४

एइ महाराज पात्र पण्डित गम्भीर ।
सन्न्यासीर स्पर्शे मत्त हइल अस्थिर ॥२५
एइ मत विप्रगण भावे मने मन ।
विजातीय लोक देखि प्रभु कैल सम्बरण २६
सुस्थ हञा दोँहे सेइ स्थानेते बसिला ।
तबे हासि महाप्रभु कहिते लागिला ॥२७
सार्व्वभौम भट्टाचार्य्य कहिल तोमार गुण ।
मिलिते तोमारे मोरे करिल यतन ॥२८
तोमा मिलिबारे मोर एथा आगमन ।
भाल हैल अनायासे पाइनु दरशन ॥२९
राय कहे सार्व्वभौम करे भृत्यज्ञान ।
परोक्षे ओ मोर हिते हय सावधान ॥३०
ताँर कृपाय पाइनु तोमार चरणदर्शन ।
आजि से सफल मोर मनुष्य-जनम ॥३१
सार्व्वभौमे तोमार कृपा तार एइ चिह्न ।
अस्पृश्य स्पर्शिले हञा तार प्रेमाधीन ॥३२
काँहा तुमि ईश्वर साक्षात् नारायण ।
काँहा मुइ राजसेवी विषयी शूद्राधम ॥३३
मोर दर्शन तोमाय वेदे निषेधय ।
मोर स्पर्शे ना करिले घृणा वेदभय ॥३४
तोमार कृपाय तोमाय कराय निन्द्यकर्म्म ।
साक्षात् ईश्वर तुमि के जाने तोमार मर्म्म ।३५
आमा निस्तारिते तोमार इँहा आगमन ।
कृपा करि मोरे आसि दिला दरशन ॥३६
महान्त स्वभाव एइ तारिते पामर ।
निजकार्य्य नाहि तबु यान तार घर ॥३७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८।४)
गर्गं प्रति श्रीनन्दवाक्यम्—

महद्विचलनं नृणां गृहिणां दीनचेतसां ।
निःश्रेयसाय भगवन् कल्पते नान्यथा क्वचित् ॥

टीका—श्रीगर्गाचार्य्यस्य प्रति श्रीनन्दवचनं । हे भगवन् ! नृणां मनुष्याणां मध्ये दीनचेतसां गृहिणां निःश्रेयसाय मलङ्गाय महद्विचलनं साधूनां अन्यत्र गमनं कल्पते घटते. अन्यथा कुत्रापि क्वचित् कदाचिदपि न कल्पते ॥३॥

गर्गमुनि के प्रति नन्द कहे थे—

हे भगवन् ! साधुगण-निज आश्रम परित्याग पूर्वक अन्यत्र जो गमन करते हैं, वह केवल दीन चित्त गृहिवृन्द के मङ्गलार्थ ही है, कारण, इस को छोड़कर उन सब का अपर कारण देखने में नहीं आता है ॥३॥

आमार सङ्गे ब्राह्मणादि सहस्रेक जन ।
तोमार दर्शने सबार द्रवीभूत मन ॥३८
कृष्ण कृष्ण नाम शुनि सबार बदने ।
सबार अङ्ग पुलकित अश्रु नयने ॥३९
आकृते प्रकृते तोमार ईश्वरलक्षण ।
जीवे ना सम्भवे एइ अप्राकृत गुण ४०
प्रभु कहे तुमि महाभागवतोत्तम ।
तोमार दर्शने सबार द्रवीभूत मन ॥४१
अन्येर कि कथा आमि मायावादी सन्न्यासी ।
आमिह तोमार स्पर्शे कृष्णप्रेमे भासि ॥४२
एइ जानि कठिन मोर हृदय शोधिते ।
सार्व्वभौम कहिलेन तोमारे मिलिते ॥४३
एइ मत स्तुति दोँहे करे दोँहार गुणे ।
दोँहे दोँहा दरशने आनन्दित मने ॥४४
हेनकाले वैदिक एक वैष्णव ब्राह्मण ।
दण्डवत् करि कैल प्रभुर निमन्त्रण ॥४५
निमन्त्रण मानिल ताँरे वैष्णव जानिया ।
रामानन्दे कहे प्रभु ईषत् हासिया ॥४६
तोमार मुखे कृष्णकथा शुनिते हय मन ।

पुनरपि हय येन तोमार दर्शन ॥४७

राय कहे आइला यदि पामर शोधिते ।
दर्शनमात्र शुद्ध नहे मोर दुष्ट चित्ते ॥४८

दिन पाँच सात रहि करह मार्ज्जन ।
तबे शुद्ध हय मोर एइ दुष्ट मन ॥४९

यद्यपि विच्छेद दोँहार सहने ना याय ।
तबु दण्डवत् करि चलिला रामराय ॥५०

प्रभु याइ सेइ विप्रघरे भिक्षा कैल ।
दुइ जनार उत्कण्ठाय आसि सन्ध्या हैल ॥५१

प्रभु स्नानकृत्य करि आछेन वसिया ।
एक भृत्य सङ्गे राय मिलिल आसिया ॥५२

दण्डवत् कैला राय प्रभु कैल आलिङ्गने ।
दुइ जने कथा कन वसि रहः स्थाने ॥५३

प्रभु कहे पड़ श्लोक साध्येर निर्णय ।
राय कहे स्वधर्म्माचरणे विष्णुभक्ति हय ॥५४

तथाहि विष्णुपुराणे (३।८।९)—

वर्णाश्रमाचारवता पुरुषेण परः पुमान् ।
विष्णुराराध्यते पन्था नान्यस्तत्तोषकारणम् ॥४

टीका—वर्णाश्रमाचारवता पुरुषेण परः पुमान् महाविष्णुराराध्यते । तस्य विष्णोस्तोषकारणं अन्यः पन्था क्वचिन्न स्यात् ॥४॥

वर्णाश्रम धर्माचरण पूर्वक परम पुरुष विष्णु की आराधना करे, एतद्व्यतीत तदीय सन्तोष हेतु अन्य उपाय नहीं है ॥४॥

प्रभु कहे एहो वाह्य आगे कह आर ।
राय कहे कृष्णे कर्म्मार्पण साध्यसार ॥५५

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (९।२७)—

यत् करोषि यदश्नासि यज्जुहोसि ददासि यत् ।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत् कुरुष्व मदर्पणम् ॥५॥

टीका—हे कौन्तेय ! हे अर्ज्जुन ! यत् यज्ञादिकं कर्म्म करोषि, यत् अश्नासि भक्षयसि, यत् हवनादिकं जुहोषि, यत् दानादिकं ददासि, यत् तपस्यसि तपः करोषि, तत् मदर्पणं कुरुष्व ॥५॥

हे कौन्तेय ! यज्ञादि कर्म जो भी करते हो, जो भोजन करते हो, जो हवनादि कर्म्म करते हो, दानादि जो कुछ करते हो,एवं तपस्या भी करते हो, सभी मुझ को अर्पण करो ॥५॥

प्रभु कहे एहो वाह्य आगे कर आर ।
राय कहे स्वधर्म्मत्याग एइ साध्यसार ॥५६

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (१८।५४)—

सर्व्वधर्म्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वां सर्व्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥६॥

टीका—सर्व्वधर्म्मान् परित्यज्य एकं मां शरणं व्रज । अहं त्वां सर्व्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि, मा शुचः शोकं मा कार्षीः ॥६॥

तुम समस्त धर्मानुष्ठान की आसक्ति को परित्याग कर केवल मेरी शरणागत हो जाओ, मैं तुम को समस्त पापों से मुक्त कर दूँगा, तुम शोक न करो ॥६॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।११।३२)—

आज्ञायैव गुणान् दोषान्मयादिष्टानपि स्वकान् ।
धर्म्मान् संत्यज्य यः सर्व्वान् मां भजेत स च सत्तमः ॥७

टीका—हे उद्धव ! मया वेदरूपेण आदिष्टान् अपि स्वकान् सर्व्वान् धर्म्मान् सन्त्यज्य विहाय, गुणान् दोषांश्च आज्ञाय विदित्वा यो जनः मां भजेत्, स एव पूर्व्ववत् सत्तमः साधूनां मध्ये श्रेष्ठः स्यात् ॥७॥

हे उद्धव ! मत् कर्तृक आदिष्ट वेदोक्त धर्म समूह को विसर्ज्जन कर धर्माधर्म के गुण दोष को जान कर जो व्यक्ति मेरी आराधना करता है,पूर्वोक्त व्यक्ति के समान यह व्यक्ति भी साधुवृन्द के मध्य में श्रेष्ठ होता है ॥७॥

प्रभु कहे एहो वाह्य आगे कह आर ।
राय कहे ज्ञानमिश्रा भक्ति साध्य सार ॥५७

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (१८।५४)

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति ।
समः सर्व्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ।।८।।

टीका—ब्रह्मभूतः ब्रह्मणि संस्थितः, प्रसन्नात्मा प्रसन्नचित्तः जनः न शोचति शोकं न करोति, अप्राप्तं न काङ्क्षति, सर्व्वेषु भूतेषु समः सन् परां मद्भक्तिं लभते प्राप्नोति ।।८।।

स्वरूपानुभव सम्पन्न, प्रसन्न चित्त, शोक से अनुद्विग्न चित्त, भोग्यवस्तुकी आकाङ्क्षा रहित, एवं प्राणीमात्र में आत्म बुद्धि विशिष्ट व्यक्ति ही मुझ में पराभक्ति लाभ करता है ।।८।।

प्रभु कहे एहो वाह्य आगे कह आर ।
राय कहे ज्ञानशून्य भक्ति साध्यसार ।।५८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१४।३)—

ज्ञाने प्रयासमुदपास्य नमन्तएव
जीवन्ति सन्मुखरितां भवदीयवार्त्तां ।
स्थानस्थिताः श्रुतिगतां तनुवाङ्मनोभि-
र्ये प्रायशोऽजित जितोऽप्यसि तैस्त्रिलोक्याम् ।।९

टीका—ये जनाः ज्ञाने प्रयासं उदपास्य त्यक्त्वा ईषदपि अकृत्वा, सन्मुखरितां साधूनां मुखात् नित्यं प्रकटितां भवदीयवार्त्तां स्थानस्थिताः एव श्रुति-गतां श्रवण-प्राप्तां तनुवाङ्मनोभिः कायमनोवाक्यैः नमन्त एव सन्तः जीवन्ति, त्रिलोक्यां स्वर्ग-मर्त्य-रसातले,हे अजित ! अप्राप्तोऽपि त्वं तैः जनैः प्रायशः जितोऽसि प्राप्तोऽसि ।।९।।

ब्रह्मा भगवान् को कहे थे—हे प्रभो ! जो व्यक्ति स्वरूपावबोध नामक ज्ञानानुसन्धान में प्रयत्न न करके निजाश्रम में रहकर साधु मुख से तुम्हारी कथा श्रवण एवं काय वाक्य मन से उसको सम्मान प्रदान करता है, त्रिभुवन में अपर के पक्ष में दुर्ल्लभ होने पर भी उसके द्वारा तुम वशीभूत हो जाते हो ।९

प्रभु कहे एहो हय आगे कर आर ।
राय कहे प्रेमभक्ति सर्व्वसाध्यसार ।।५९

तथाहि पद्यावल्यामेकादशाङ्कधृत-रामानन्दकृत-श्लोकः

नानोपचारकृतपूजनमातमबन्धोः
प्रेम्नैव भक्तहृदयं सुखविद्रुतं स्यात् ।
यावत् क्षुदस्ति जठरे जरठा पिपासा
तावत् सुखाय भवतो ननु भक्ष्यपेये ।।१०।।

टीका—आतमबन्धोः श्रीकृष्णस्य नानोपचारकृत-पूजनं प्रेम्ना एव करणेन भक्तहृदयं सुखविद्रुतं स्यात्। तत्र दृष्टान्तमाह ननु यावत् जठरे जरठा दारुणा क्षुत् अस्ति, पिपासा तृषा च वर्त्तते, तावत् काले भक्ष्य--पेये भोजन-पाने सुखाय निमित्ताय भवतः ।।

जब तक उदर में प्रबल क्षुधा एवं तृष्णा विद्यमान है, तब तक ही भोजन एवं पान सुखकर होते हैं। ईश्वर की आराधना भी उस प्रकार है, प्रेम के द्वारा भक्त एवं आतमबन्धु भगवान् के हृदय जिस प्रकार विगलित होता है, उस प्रकार विविध उपचारों के द्वारा आतमबन्धु प्रभु का पूजन से चित्त विगलित नहीं होता है ।।१०।।

तथाहि पद्यावल्यां द्वादशाङ्कधृत स्तस्यैव श्लोकः—

कृष्णभक्तिरसभाविता मतिः,
क्रीयतां यदि कुतोऽपि लभ्यते ।
तत्र लौल्यमपि मूल्यमेकलं,
जन्मकोटिसुकृतैर्न लभ्यते ।।११।।

टीका—कृष्णभक्तिरसभाविता कृष्णभक्तिरसेन शोधिता मतिः क्रीयतां अस्माभिरित्यर्थः । यदि दैवात् कुतोऽपि सा मतिः लभ्यते प्राप्यते, तत्र एकलं केवलं मूल्यं लौल्यं लोभः । जन्मकोटि-सुकृतैः कोटि-जन्मार्जितपुण्यैः तत् लौल्यं न लभ्यते ।।११।।

कृष्ण भक्ति रूप रस के द्वारा शोभित मति को प्राप्त करना ही कर्त्तव्य है । लालसा ही उसका मूल्य है, किन्तु कोटि जन्म में अर्जित पुण्य के द्वारा वह लालसा अर्जित नहीं होती है ।।११।।

प्रभु कहे एहो हय आगे कह आर ।
राय कहे दास्य-प्रेम सर्व्वसाध्यसार ।।६०

तथाहि श्रीमद्भागवते (९।५।१६)—

अम्बरीषं प्रति दुर्व्वाससो वाक्यम्—

यन्नामश्रुतिमात्रेण पुमान् भवति निर्म्मलः।
तस्य तीर्थपदः किंवा दासानामवशिष्यते ॥१२॥

टीका—यन्नामश्रुतिमात्रेण यस्य नामश्रवणमात्रेण पुमान् पुरुषो निर्म्मलः पवित्रो भवति, तस्य कृष्णस्य तीर्थपदः दासानां भक्तानां किं वा अवशिष्यते अवशिष्टो भवति ॥१२॥

श्रीमद् भागवत में उक्त है—दुर्वासा ऋषि अम्बरीष को कहे थे—हे अम्बरीष ! जिनका नाम श्रवण गोचर होने से ही मानव निर्म्मल होता है, उन भगवान् के भक्त गण के पक्ष में कौन वस्तु दुर्ल्लभ हो सकती है ? ॥१२॥

तथाहि गोस्वामिपादोक्तः श्लोकः—

भवन्तमेवानुचरन्निरन्तरः
प्रशान्तनिःशेष-मनोरथान्तरः।
कदाहमैकान्तिकनित्यकिङ्करः
प्रहर्षयिष्यामि सनाथजीवितम् ॥१३

हे नाथ ! कब मैं भवदीय ऐकान्तिक नित्यदास होकर अखिल कामना वर्जन पूर्वक आपके आदेश के अनुवर्त्ती होकर आजीवन आत्मा को आनन्दित करूँगा ? ॥१३॥

प्रभु कहे एहो हय आगे कह आर।
राय कहे सख्यप्रेम सर्व्वसाध्यसार ॥६१

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१२।१७)—

इत्थं सतां ब्रह्मसुखानुभूत्या,
दास्यं गतानां परदैवतेन।
मायाश्रितानां नरदारकेण
सार्द्धं विजह्रुः कृतपुण्यपुञ्जाः ॥१४॥

टीका—कृतपुण्यपुञ्जाः बालकाः श्रीदामादयः नरदारकेण नरदारकतया प्रतीयमानेन कृष्णेन सार्द्धं इत्थं अनेन प्रकारेण सहितं विजह्रुः विहारं कृतवन्तः। कृष्णेन किम्भूतेन ?—दास्यं सेवां गतानां दासानां परदैवतेन, सतां विदुषां ब्रह्मसुखानुभूत्या ब्रह्म च तत् सुखञ्च अनुभूतिश्च तया करणया स्वप्रकाशपरमसुखेन इत्यर्थः, मायाश्रितानान्तु नरदारकेन ॥१४॥

विद्वान् व्यक्ति गण जिनको ब्रह्म सुखानुभूति रूप में एवं भक्तगण जिनको सर्वाराध्य रूप में, मायाश्रित व्यक्तिगण जिनको नरशिशु रूप में जानते हैं, गोप शिशुगण—उनके सहित साधारण नर बालक बुद्धि से क्रीड़ा करते रहते हैं, यह अतीव पुण्य का ही फल है ॥१४॥

प्रभु कहे एहो उत्तम आगे कह आर।
राय कहे वात्सल्य प्रेम सर्व्वसाध्यसार ॥६२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८।४६)—

श्रीशुकदेवं प्रति परीक्षितवाक्यम्—

नन्दः किमकरोद्ब्रह्मन् श्रेय एवं महोदयम्।
यशोदा वा महाभागा पपौ यस्याः स्तनं हरिः ॥१५

टीका—श्रीदशमे परीक्षिद्वचनम्। हे ब्रह्मन् ! हे शुकदेव ! नन्दः किं महोदयं महान् उदय उद्भवो यस्य तत्, श्रेयः कल्याणकरं तपस्यादिकं अकरोत् ? महाभागा भाग्यशालिनी यशोदा वा किं श्रेयः अकरोत् ? यस्याः यशोदायाः स्तनं हरिः पपौ ॥१५

श्रीमद्भागवत में उक्त है—

श्रीशुकदेव को परीक्षित् कहे थे—हे ब्रह्मन् ! नन्द इस प्रकार महान् पुण्य कर्म्मानुष्ठान क्या किये थे ? भाग्य शालिनी यशोदा ने भी वैसा पुण्य कर्म का अनुष्ठान क्या किया, जिस से श्रीहरि उनका स्तन पान किये थे ? ॥१५॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।९।२०)—

नेमं विरिञ्चो न भवो न श्रीरप्यङ्गसंश्रया।
प्रसादं लेभिरे गोपी यत्तत् प्राप विमुक्तिदात् ॥१६

टीका—विमुक्तिदात् श्रीकृष्णात् यत् यं प्रसादं गोपी यशोदा प्राप, तत् इमं तं प्रसादं विरिञ्चः ब्रह्मा भवो महादेवः, श्रीः लक्ष्मीः अङ्गसंश्रया वक्षसि स्थिता अपि न लेभिरे ॥१६॥

श्रीमद्भागवत में उक्त है—मुक्तिदाता भगवान्

श्रीकृष्ण से यशोदाने जिस प्रकार प्रसाद लाभ किया है, उस प्रकार प्रसाद लाभ करना विरिञ्चि, महादेव एवं वक्षःस्थिता लक्ष्मी के पक्ष में भी सम्भव नहीं हुआ है ॥१६॥

प्रभु कहे एहोत्तम आगे कह आर।
राय कहे कान्ताप्रेम सर्व्वसाध्यसार ॥६३

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।४७।५३)--

नायं श्रियोऽङ्ग उ नितान्तरतेः प्रसादः।
स्वर्योषितां नलिनगन्धरुचां कुतोऽन्याः॥
रासोत्सवेऽस्य भुजदण्डगृहीतकण्ठ-
लब्धाशिषां य उदगाद् व्रजसुन्दरीणाम् ॥१७॥

टीका—रासोत्सवे भुजदण्ड-गृहीत-कण्ठलब्धाशिषां श्रीकृष्ण-भुजदण्डाभ्यां गृहीतः आलिङ्गितः कण्ठः तेन लब्धा आशिषो याभि स्तासां व्रजसुन्दरीणां गोप-रमणीनां सम्बन्धे अस्य कृष्णस्य यः प्रसादः उदगात् प्रादुर्बभुव. उ अहो अङ्गे वक्षसि नितान्तरतेः श्रियः लक्ष्याः सम्बन्धे अयं प्रसादः न विद्यते । नलिनगन्ध-रुचां कमलगन्धरुचां स्वर्योषितां सुरनारीणां अपि न विद्यते, अन्याः स्त्रियः कुतः ? ॥१७॥

भगवान् श्रीकृष्ण,—रासोत्सव में प्रवृत्त होकर निज बाहु के द्वारा व्रजरमणी वृन्दके कण्ठ आलिङ्गन पूर्वक उन सब के प्रति जिस प्रकार प्रसन्नता व्यक्त किये थे, लक्ष्मी तदीय हृदय वासिनी होकर भी एवं सुररमणीगण कमल गन्ध एवं कमल कान्ति मण्डित होकर भी उस प्रकार प्रसाद प्राप्त करने में समर्थ नहीं हुये, अन्य रमणी वृन्द की तो कथा ही क्या है ? ॥१७॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३२।२)--

तासामाविरभूच्छौरिः स्वयमानमुखाम्बुजः ।
पीताम्बरधरः स्रग्वी साक्षान्मन्मथमन्मथः ॥१८

श्रीमद्भागवत में उक्त है-गोपीवृन्द के रोदन श्रवण कर भगवान् शौरि पीतवास एवं वनमाला धारण कर सहास्य वदन से उन सब के निकट जगत् मोहन कन्दर्प मोहन रूप में आविर्भूत हुये थे ॥१८॥

कृष्ण प्राप्तिर उपाय बहुबिध हय।
कृष्णप्राप्तिर तारतम्य बहुत आछय ॥६४
किन्तु यार येइ भाव, सेइ सर्व्वोत्तम।
तटस्थ हैञा विचारिले आछे तरतम ॥६५

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे स्थायिभावलहर्य्याम् (२१)--

यथोत्तरमसौ स्वाद विशेषोल्लासमय्यपि।
रतिर्वासनया स्वाद्वी भासते कापि कस्यचित् ॥१९

उत्तरोत्तर आस्वाद भेद से उल्लास मयी यह मधुरारति वासना विशेष से स्वाद युक्त होकर किसी स्थल में किसी के सम्बन्ध में प्रकाशित होती है ॥१९॥

पूर्व्व पूर्व्व रसेर गुण परे परे हय।
दुइ तिन गणने पञ्च पर्य्यन्त बाड़य ॥६६
गुणाधिक्ये स्वादाधिक्य बाड़े प्रति रसे।
शान्त दास्य सख्य वात्सल्य गुण मधुरेते वैसे ६७
आकाशादिर गुण येन पर पर भूते।
दुइ तिन क्रमे बाड़े पञ्च पृथिवीते ॥६८
परिपूर्ण कृष्णप्राप्ति एइ प्रेम हैते।
एइ प्रेमेर वश कृष्ण कहे भागवते ॥६९

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८२।४४)--

मयि भक्तिर्हि भूतानाममृतत्वाय कल्पते।
दिष्ट्या यदासीन्मत्स्नेहो भवतीनां मदापनः ॥२०

श्रीमद्भागवत् के १०।८२।४४ में श्रीकृष्ण कहे थे—मेरे प्रति भक्ति ही प्राणिवृन्द के मोक्ष के निमित्त होती है। सुतरां मेरे प्रति तुम सब के जो स्नेह है, यह अतीव कल्याणकर है। कारण – वह मदीय प्रापक है ॥२०॥

कृष्णेर प्रतिज्ञा दृढ़ सर्व्वकाल आछे।
ये यैछे भजे कृष्ण तारे भजे तैछे ॥७०

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (४।११)--

यो यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।
मम वर्त्मानुवर्त्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्व्वशः ॥२१॥

जो व्यक्ति जिस भाव से मेरी उपासना करते हैं, मैं भी उन सब का भजन उसी भाव से ही करता रहता हूँ। अर्थात् कामना के अनुरूप फल प्रदान द्वारा आनुकूल्य करता रहता हूँ। हे पार्थ ! कारण-मनुष्यगण-मेरा भजन मार्ग का ही अनुसरण करते है ॥२१॥

एइ प्रेमार अनुरूप ना पारे भजिते ।
अतएव ऋणी हय कहे भागवते ॥७१

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३२।२२)--

न पारयेऽहं निरवद्यसंयुजां
स्वसाधुकृत्यं विबुधायुषापि वः ।
या माभजन् दुर्जरगेहशृङ्खलाः
संवृश्चय तद्वः प्रतियातु साधुना ॥२२॥

श्रीकृष्ण कहे थे—हे व्रज सुन्दरीवृन्द ! तुम सब का संयोग निरवद्य है, मैं निज जीवन में तुम सब का प्रत्युपकार करने में असमर्थ हूँ। तुम सबने दुश्छेद्य गृह श्रृङ्खल को भेदन कर मेरी उपासना की है। किन्तु मेरा चित्त अनेक व्यक्ति निष्ठ है, सुतरां एकनिष्ठ होना असम्भव है, अतः निज सौशील्य के द्वारा तुम सब सन्तुष्ट हो जाओ ॥२२॥

यद्यपि कृष्ण सौन्दर्य्य माधुर्य्येर धुर्य्य ।
व्रजदेवीर सङ्गे ताँर बाड़ये माधुर्य्य ॥७२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३३।६)—

तत्रातिशुशुभे ताभिर्भगवान् देवकीसुतः ।
मध्ये मणीनां हैमानां महामारकतो यथा ॥२३

टीका—हैमानां काञ्चनमयानां मणीनां मध्ये महामारकतः नीलमणिः यथा, तत्र भगवान् देवकी-सुतः ताभिः काञ्चनवर्णाभिराश्लिष्टाभिः अति निरतिशयं शुशुभे ॥२३॥

नील कान्त मणि जिस प्रकार काञ्चन वेष्टित होकर शोभित होती है, उस प्रकार देवकीसुन श्रीकृष्ण, रास मण्डल में काञ्चन वर्ण गोपिका के मध्य में शोभित हुये थे ॥२३॥

प्रभु कहे एइ साध्यावधि सुनिश्चय ।
कृपा करि कह यदि आगे किछु हय ॥७३
राय कहे इहार आगे पुछे हेन जने ।
एतदिन नाहि जानि आछये भुवने ॥७४
इहार मध्ये राधार प्रेम साध्यशिरोमणि ।
याँहार महिमा सर्व्वशास्त्रे त वाखानि ॥७५

तथाहि लघुभागवते उत्तरखण्डे—

यथा राधा प्रिया विष्णोस्तस्याः कुण्डं प्रियं तथा ।
सर्व्वगोपीषु सैवैका विष्णोरत्यन्तवल्लभा ॥२४॥

राधा-जिस प्रकार विष्णु की प्रिया हैं, उनका कुण्ड भी उसी प्रकार प्रिय है समस्त गोपिओं के मध्य में श्रीराधा ही एकमात्र विष्णु की अत्यन्त वल्लभा है ॥२४॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३०।२४)—

अनयाराधितो नूनं भगवान् हरिरीश्वरः ।
यन्नो विहाय गोविन्दः प्रीतो यामनयद्रहः ॥२५

गोपिका गण कृष्णानुसन्धान करते करते परस्पर कहने लगीं—सखीवृन्द ! यह इसने ईश्वर भगवान् हरिको आराधना निःसन्देह से की है, अन्यथा कृष्ण हम सब को छोड़कर क्यों इसको निर्जन वन में ले जायेंगे ? ॥२५॥

प्रभु कहे आगे कह शुनि पाइये सुखे ।
अपूर्व्व अमृतनदी वहे तोमार मुखे ॥७६
चुरि करि राधाके निल गोपीगणेर डरे ।
अन्यापेक्षा हैले प्रेमेर गाढ़ता ना स्फुरे ॥७७
राधा लागि गोपीरे यदि साक्षात करे त्याग ।
तबे जानि राधाय कृष्णेर गाढ़ अनुराग ॥७८

राय कहे ताहा शुन प्रेमेर महिमा ।
त्रिजगते नाहि राधा-प्रेमेर उपमा ॥७९
गोपीगणेर रासनृत्यमण्डली छाड़िया ।
राधा चाहि वने फिरे विलाप करिया ॥८०

तथाहि श्रीगीतगोविन्दे (२।१)

कंसारिरपि संसारवासनाबद्धशृङ्खलाम् ।
राधामाधाय हृदये तत्याज व्रजसुन्दरीः ॥२६॥

कंसारि कृष्ण भी संसार वासना बद्ध शृङ्खला राधा को हृदय में धारण कर समस्त व्रजसुन्दरीओं को परित्याग किये थे ॥२६॥

तथाहि श्रीगीतगोविन्दे (३।२)—

इतस्ततस्तामनुसृत्य राधिका-
मनङ्गवाणव्रणखिन्नमानसः ।
कृतानुतापः स कलिन्दनन्दिनी-
तटान्तकुञ्जे विषसाद माधवः ॥२७॥

टीका— माधवः श्रीकृष्णः कलिन्दनन्दिनीतटान्त-कुञ्जे यमुना–तीर-प्रान्तवर्त्ति-कुञ्जकानने इतस्ततः समन्तात् राधिकां अनुसृत्य, तामप्राप्य, अनङ्ग-वाण-व्रण–खिन्न मानसः कामशरोत्पन्नव्रणेन पीड़ितचित्तः सन् कृतानुतापः विषसाद ॥२७॥

माधव श्रीकृष्ण—कालिन्द कुलवर्त्ती कुञ्ज कानन में राधिका को न देखकर अनुसन्धान करने लगे, एवं विफल प्रयास होने पर मदन शरसे पीड़ित होकर हृदय में अनुताप एवं विलाप करने लगे ॥२७

एइ दुइ श्लोकेर अर्थ विचारिले जानि ।
विचारिते उठे येन अमृतेर खनि ॥८१
शतकोटि गोपीसङ्गे रासविलास ।
तार मध्ये एकमूर्त्ते रहे राधापाश ॥८२
साधारण प्रेम देखि सर्व्वत्र समता ।
राधार कुटिल प्रेम हइल वामता ॥८३

तथाहि उज्ज्वलनीलमणौ शृङ्गारभेदे विप्रलम्भप्रकरणे एकचत्वारिंशश्लोके श्रीरूपगोस्वामि-वाक्यम्—

अहेरिव गतिः प्रेम्णः स्वभावकुटिला भवेत् ।
अतो हेतोरहेतोश्च यूनोर्मान उदञ्चति ॥२८

टीका—प्रेम्नो गतिरहेर्भुजङ्गस्य गतिरिव स्वभावकुटिला स्वभावत एव वक्रा भवेत्, अतो हेतोरहेतोश्च यूनोः नायिका नायकयोः मान उदञ्चति उद्गमो भवति ॥२८

भुजङ्ग गतिवत् प्रेमकी गति स्वाभाविक ही कुटिल है । सुतरां हेतु एवं अहेतु से नायक नायिका में मान उद्गम होता है ॥२८॥

क्रोध करि रास छाड़ि गेला मान करि ।
तारे ना देखिया व्याकुल हइला श्रीहरि ॥८४
सम्यक् बासना कृष्णेर इच्छा रासलीला ।
रासलीला वाञ्छाते एका राधिका शृङ्खला ॥८५
ताँहा बिना रासलीला नाहि भाय चिते ।
मण्डली छाड़िया गेला राधा अन्वेषिते ॥८६
इतस्ततः भ्रमि काँहा राधा ना पाइया ।
विषाद करेन काम-वाणे खिन्न हैञा ॥८७
शतकोटि गोपीते नहे काम निर्व्वापण ।
इहातेइ अनुमानि श्रीराधिकार गुण ॥८८
प्रभु कहे ये लागि आइलाम तोमा स्थाने ।
सेइ सब रसवस्तु-तत्त्व हैल ज्ञाने ॥८९
एइत जानिल सेव्य साध्येर निर्णय ।
आगे किछु शुनिते आमार चित्त हय ॥९०
कृष्णेर स्वरूप कह राधिका-स्वरूप ।
रस कोन् तत्त्व प्रेम कोन् अनुरूप ॥९१
कृपा करि एइ तत्त्व कहत आमारे ।
तोमा विने इहा केह निरूपिते नारे ॥९२
राय कहे इहा आमि किछुइ ना जानि ।
ये तुमि कहाओ सेइ कहि आमि वाणी ॥९३

तोमार शिक्षाय पड़ि मेन शुकेर पाठ ।
साक्षात् ईश्वर तुमि के बुझे तोमार नाट ॥९४
हृदये प्रेरण करि जिह्वाय कहाओ वाणीं ।
कि कहिये भाल मन्द किछुइ ना जानि ॥९५
प्रभु कहे मायावादी आमित सन्न्यासी ।
भक्तितत्त्व नाहि जानि मायावादे भासि ॥९६
सार्व्वभौम सङ्गे मोर मन निर्म्मल हैल ।
कृष्णभक्ति-तत्त्वकथा ताँहारे पुछिल ॥९७
तेँह कहे आमि नाहि जानि कृष्णकथा ।
सबे रामानन्द जाने तेँह नाहि एथा ॥९८
तोमार ठाञि आइलु महिमा शुनिया ।
तुमि मोरे स्तुति कर सन्न्यासी जानिया ॥९९
किबा विप्र किबा शूद्र न्यासी केन नय ।
येइ कृष्ण-तत्त्व-वेत्ता सेइ गुरु हय ॥१००
सन्न्यासी बलिया मोरे ना कर वञ्चन ।
राधाकृष्णतत्त्व कहि पूर्ण कर मन ॥१०१
यद्यपि राय प्रेमी महाभागवते ।
ताँर मन कृष्णमाया नारे आच्छादिते ॥१०२
तथापि प्रभुर इच्छा परम प्रबल ।
जानि तेँह रायेर मन हैल टलमल ॥१०३
राय कहे आमि नट तुमि सूत्रधार ।
येमत नाचाह तैछे चाहि नाचिवार ॥१०४
मोर जिह्वा वीणा-यन्त्र तुमि वीणा-धारी ।
तोमार मने येइ उठे ताहाइ उच्चारि ॥१०५
ईश्वर परम कृष्ण स्वयं भगवान् ।
सर्व्व-अवतारी सर्व्व-कारणप्रधान ॥१०६
अनन्त वैकुण्ठ आर अनन्त अवतार ।
अनन्त ब्रह्माण्ड इहा सबार आधार ॥१०७

सच्चिदानन्दतनु श्रीव्रजेन्द्रनन्दन ।
सर्व्वैश्वर्य्य सर्व्वशक्ति सर्व्वरसपूर्ण ॥१०८

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (५।१)—

ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्दविग्रहः ।
अनादिरादिर्गोविन्दः सर्व्वकारणकारणम् ॥२९

सच्चिदानन्द स्वरूप श्रीकृष्ण ही परम ईश्वर है, वह गोविन्द हैं, अनादि-अर्थात् स्वयं उत्पत्ति हीन एवं आदि अर्थात् सब के उत्पत्ति कारण हैं एवं सर्व कारण—अर्थात सर्वोत्पत्ति की उपाय स्वरूप माया के उत्पत्ति हेतु हैं, अर्थात् उनका आदि कोई नहीं है, आप गोविन्द हैं, एवं सर्व कारण, माया का भी कारण हैं ॥२९॥

वृन्दावने अप्राकृत नवीन मदन ।
कामगायत्री कामबीजे याँर उपासन ॥१०९
पुरुष योषित किबा स्थावर जङ्गम ।
सर्व्वचित्ताकर्षक साक्षान्मन्मथमदन ॥११०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३२।२)—

तासामाविरभूच्छौरिः स्मयमानमुखाम्बुजः ।
पीताम्बरधरः स्रग्वी साक्षान्मन्मथमन्मथः ॥३०

श्रीमद् भागवत में उक्त है—गोपीवृन्द के मध्य के भगवान् शौरि पीतवसन एवं वनमाला धारण कर सहास्य वदन से जगन्मोहन कन्दर्प विमोहन रूप में आविर्भूत हुये थे ॥३०॥

नाना शक्तेर रसामृत नानाविध हय ।
सेइ सब रसामृतेर विषय आश्रय ॥१११

तथाहि श्रीभक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे
सामान्यलहर्य्याम् (१)—
श्रीरूपगोस्वामि-वाक्यम्—

अखिलरसामृतमूर्त्तिः प्रसृमररुचिरुद्धतारकापालिः ।
कलितश्यामाललितो राधाप्रेयान् विधुर्जयति ॥३१।

टीका—विधुः सर्व्वदुःखहारी सर्व्वसुखदो वा श्रीकृष्णः जयति सर्व्वोत्कर्षेण वर्त्तते । विधुः

किम्भूत: ?—अखिल-रसामृत-मूर्त्ति: अखिलरसानां शान्तादीनां अमृतमेव मूर्त्तिर्यस्य स: । पुन: किम्भूत: प्रसृमर-रुचिरुद्धतारकापालि:, प्रसृमराभि: विस्तीर्णाभि: रुचिभि: रुद्धा: आच्छादिता: तारकानां पालि: श्रेणी येन स:, अथवा प्रसृमराभि: प्रसरणशीलाभि: रुचिभि कान्तिभि: रुद्धे वशीकृते तारकापाली येन स: । पुन: कथम्भूत: ?— कलित-श्यामललित: कलिता: आत्मसात्कृता: श्यामा: श्यामवर्णा: ललिता: नार्य्य: येन स:, अथवा कलिते आत्मसात्कृते श्याम-ललिते येन स: । पुन: किम्भूत: ? राधाप्रेयान् राधाया: प्रीतिप्रद: ॥३१॥

जो शान्त दास्य प्रभृति रस समूह के मूर्त्ति स्वरूप हैं, जिनकी विस्तीर्ण कान्ति से नक्षत्र माला की दीप्ति भी पराभूत हुई है, अथवा जिनकी प्रसरण शील कान्ति से तारका एवं पाली नामक गोपिका द्वय वशीभूत हुई हैं । जिन्होंने श्यामवर्णा रमणीवृन्द को आत्मसात् किया है, अथवा जिन्होंने श्यामा एवं ललिता नामक रमणीद्वय को आत्मसात किया है । एवं जो श्रीराधिका के प्रति अतिशय प्रीतिकर्त्ता हैं, उन सब दु:ख हारी सर्वसुख विधाता श्रीकृष्ण की जय हो ॥३१॥

शृङ्गाररसराजमयमूर्त्तिधर ।
अतएव आत्मपर्य्यन्त सर्व्वचित्तहर ॥११२

तथाहि गीतगोविन्दे (१।४७) --

विश्वेषामनुरञ्जनेन जनयन्नानन्दमिन्दीवर--
श्रेणीश्यामलकोमलैरुपनयन्नङ्गैरनङ्गोत्सवम् ।
स्वच्छन्दं व्रजसुन्दरीभिरभित: प्रत्यङ्गमालिङ्गित:
शृङ्गार: सखि मूर्त्तिमानिव मधौ मुग्धो हरि
क्रीड़ति ॥३२॥

हे सखि ! कोमलाङ्ग के सौन्दर्य के द्वारा भुवन को आनन्दित कर एवं इन्दीवर तुल्य मनोहर हस्तपदादि द्वारा व्रज बालावृन्द के हृदय में मदनोत्सव का उदय कराकर उन सब के द्वारा प्रत्यङ्ग सुख पूर्वक आलिङ्गित होकर साक्षात् शृङ्गार स्वरूप श्रीहरि वसन्त ऋतु में लीला करते रहते हैं ॥३२॥

लक्ष्मीकान्त आदि अवतारेर हरे मन ।
लक्ष्मी आदि नारीगणेर करे आकर्षण ॥११

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८९।३२)-

श्रीकृष्णार्ज्जुनौ प्रति भूमपुरुषवाक्यम्–

द्विजात्मजा मे युवयोर्दिदृक्षुणा
मयोपनीता भुवि धर्म्मगुप्तये ।
कलावतीर्णाववनेर्भरासुरान्
हत्वेह भूयस्त्वरयेतमन्ति मे ॥३३॥

टीका—हे कलावतीर्णौ कृष्णार्ज्जुनौ ! धर्म्म गुप्तये धर्म्मरक्षणार्थं युवयो: दिदृक्षुणा द्रष्टुमिच्छु मया भुवि द्विजात्मजा: द्विजसुता: उपनीता: आनीता: अवने: धराया: भरासुरान् हत्वा इह मे मम अन्ति सकाशं भूय: पुनं त्वरया आशु इतं आगच्छतम् ॥३३॥

भूमा पुरुष कृष्णार्ज्जुन को सम्बोधन कर कहे थे । हे कृष्ण ! हे अर्ज्जुन ! मैं तुम दोनों को देखने के निमित्तद्विज नन्दन वृन्द को यहाँ ले आया हूँ। अधुना तुम दोनों को प्रत्यर्पण कर दिया । तुम दोनों धर्म रक्षार्थ मदीय अंश शक्ति से अवतीर्ण हुए हो पृथिवी के भार स्वरूप असुरगण को विनष्ट कर पुनर्वार आशु मदीय धाम में आगमन करो ॥३३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१६।३२)--

कस्यानुभावोऽस्य न देव विद्महे
तवाङ्घ्रिरेणुस्पर्शाधिकार: ।
यद्वाञ्छया श्रीर्ललनाचरत्तपो
विहाय कामान् सुचिरं धृतव्रता ॥३४॥

टीका—हे देव ! प्रभो ! तव अङ्घ्रिरेणुस्पर्शाधिकार: पदरेणुस्पर्शविषये अधिकार: अस्य कालियस्य साधनं कस्य कारणस्य अनुभाव: फलं तत् न विद्महे यद्वाञ्छया श्री: लक्ष्मी: ललना परमासुन्दरी नारी सुचिरं दीर्घकालं यावत् धृतव्रता सती कामान् विहाय परित्यज्य तप आचरत् ॥३४॥

श्रीमद् भागवत में उक्त है—

हे प्रभो ! आप की जिस चरण रेणु की स्पर्शाभिलाषा

से लक्ष्मी ललना होकर भी भोगत्याग पूर्वक बहुकाल व्रत धारण कर तपस्या रत थीं, यह कालिय नामक भुजङ्ग किस पुण्य फलसे उसको प्राप्त कर लिया, यह हमारी बुद्धि का अगोचर है ॥३४॥

आपनार माधुर्य्य हरे आपनार मन ।
आपने आपना चाहे करिते आलिङ्गन ॥११४

तथाहि ललितमाधवे (८।३२)--

अपरिकलितपूर्व्वः कश्चमत्कारकारी
स्फुरति मम गरीयानेष माधुर्य्यपूरः ।
अयमहमपि हन्त प्रेक्ष्य यं लुब्धचेताः
सरभसमुपभोक्तुं कामये राधिकेव ॥३५॥

ललितमाधव में लिखित है—मणिभित्ति में स्वीय प्रतिविम्ब दर्शन कर श्रीहरि उत्सुकता से कहे थे, अहो ! मेरी माधुरी कितनी निरतिशय आश्चर्य्य कर है ! इस के पहले इस को कभी नहीं देखा है। अधिक और क्या कहूँ, इसको देखकर मैं भी लुब्ध मना होकर कौतुक के सहित श्रीमती राधिका के समान उपभोग करने का इच्छुक हूँ ॥३५॥

संक्षेपे कहिल एइ कृष्णेर स्वरूप ।
एवे संक्षेपे कहि राधातत्त्वस्वरूप ॥११५
कृष्णेर अनन्तशक्ति ताते तिन प्रधान ।
चिच्छक्ति मायाशक्ति जीवशक्ति नाम ॥११६
अन्तरङ्गा वहिरङ्गा तटस्था कहि यारे ।
अन्तरङ्गा स्वरूपशक्ति सबार उपरे ॥११७

तथाहि विष्णुपुराणे (६।७।६१)--

विष्णुशक्तिः परा प्रोक्ता क्षेत्रज्ञाख्या तथापरा ।
अविद्या कर्म्मसंज्ञान्या तृतीया शक्तिरिष्यते ।३६

तीन प्रकार शक्ति श्रीविष्णु की हैं, प्रथमतः पराशक्ति-जो सच्चिदानन्द रूपा स्वरूप शक्ति नाम से अभिहिता है, द्वितीया शक्ति-क्षेत्रज्ञा, तटस्था-जीवभूता शक्ति है, तृतीया शक्ति-अविद्या, वहिरङ्गा, एवं कर्म संज्ञा से कथिता है ॥३६॥

सत्-चित्-आनन्दमय कृष्णेर स्वरूप ।
अतएव स्वरूपशक्ति हय तिन रूप ॥११८
आनन्दांशे ह्लादिनी सदंशे सन्धिनी ।
चिदंशे सम्बित यारे ज्ञान करि मानि ॥११९

तथाहि विष्णुपुराणे (१।१२।६९)--

ह्लादिनी सन्धिनी सम्बित् त्वय्येका सर्व्वसंश्रये ।
ह्लादतापकरी मिश्रा त्वयि नो गुणवर्जिते ।।३७।।

सर्वाधार स्वरूप आप में ह्लादिनी सन्धिनी सम्वित् शक्ति विद्यमान हैं, किन्तु मायिक सत्त्वरजस्तमो गुणात्मिका शक्ति का प्रभाव आप में नहीं है, इस का प्रभाव जीव में है, आप मायिक गुण वर्जित हैं ॥३७॥

कृष्णके आह्लादे ताते नाम आह्लादिनी ।
सेइ शक्तिद्वारे सुख आस्वादे आपनि ॥१२०
सुखरूप कृष्ण करे सुख आस्वादन ।
भक्तगणे सुख दिते ह्लादिनी कारण ॥१२१
ह्लादिनीर सार अंश तार प्रेम नाम ।
आनन्द चिन्मय रस प्रेमेर आख्यान ॥१२२
प्रेमेर परम सार महाभाव जानि ।
सेइ महाभावरूपा राधाठाकुराणी ॥१२३

तथाहि उज्ज्वलनीलमणौ राधाचन्द्रावल्योः श्रेष्ठत्व कथने (२)--

तयोरप्युभयोर्मध्ये राधिका सर्व्वथाधिका ।
महाभावस्वरूपेयं गुणैरतिवरीयसी ॥३८॥

समस्त गोपिका के मध्य में चन्द्रावली एवं राधिका श्रेष्ठा हैं। इन दोनों के मध्य में श्रीराधिका ही गुणों से अति श्रेष्ठा हैं ॥३८॥

प्रेमेर स्वरूप देह प्रेमे विभावित ।
कृष्णेर प्रेयसी श्रेष्ठा जगते विदित ॥१२४

तथाहि ब्रह्मसंहितायां (५।३७)--

आनन्दचिन्मयरस प्रतिभाविताभि-
स्ताभिर्य एव निजरूपतया कलाभिः ।

गोलोक एव निवसत्यखिलात्मभूतो
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥३९॥

ब्रह्म संहिता में लिखित है—

प्रेम का अपर नाम-आनन्दचिन्मय रस है, उस के द्वारा भावनायुक्त, अर्थात् प्रथम श्रीकृष्ण के द्वारा भावित-पश्चात् उन सब के द्वारा श्रीकृष्ण प्रति भावित, एवं जो स्वरूप शक्ति की वृत्ति स्वरूपिणी हैं, उन सबके सहित जो अखिलात्मा, गोलोक में निवास करते रहते हैं, मैं उन आदि पुरुष गोविन्द का भजन करता हूँ ॥३९॥

सेइ महाभाव हय चिन्तामणिसार ।
कृष्णवाञ्छा पूर्ण करे एइ कार्य्य तार ॥१२५
महाभाव-चिन्तामणि राधार स्वरूप ।
ललितादि सखी ताँर कायव्यूहरूप ॥१२६
राधा प्रति कृष्णस्नेह सुगन्धि-उद्वर्त्तन ।
ताते अति सुगन्धि देह उज्ज्वल वरण ॥१२७
कारुण्यामृतधाराय स्नान प्रथम ।
तारुण्यामृतधाराय स्नान मध्यम ॥१२८
लावण्यामृतधाराय तदुपरि स्नान ।
निज लज्जा श्याम पट्टशाटी परिधान ॥१२९
कृष्ण-अनुराग रक्त द्वितीय वसन ।
प्रणय-मान कञ्चुलिकाय वक्ष आच्छादन १३०
सौन्दर्य्य कुङ्कुम सखीप्रणय चन्दन ।
स्मितकान्ति कर्पूर तिन अङ्गे विलेपन ॥१३१
कृष्णेर उज्ज्वलरस मृगमदभर ।
सेइ मृगमदे विचित्रित कलेवर ॥१३२
प्रच्छन्नमान वाम्य धम्मिल्य विन्यास ।
धीराधीरात्व गुण अङ्गे पटवास ॥१३३
राग ताम्बूलरागे अधर उज्ज्वल ।
प्रेम-कौटिल्य नेत्रयुगले कज्जल ॥१३४

सूद्दीप्त सात्त्विकभाव हर्षादि सञ्चारी ।
एइ सब भाव भूषण प्रति अङ्गे भरि ॥१३५
किलकिञ्चितादि भाव विंशति भूषित ।
गुणश्रेणी पुष्पमाला सर्व्वाङ्गे पूरित ॥१३६
सौभाग्यतिलक चारु ललाटे उज्ज्वल ।
प्रेमवैचित्त्य रत्न हृदये तरल ॥१३७
मध्य-वयःस्थिता सखीस्कन्धे करन्यास ।
कृष्णलीला मनोवृत्ति सखी आशपाश ॥१३८
निजाङ्ग-सौरभालये गर्व्व-पर्य्यङ्क ।
ताते बसि आछे सदा चिन्ते कृष्णसङ्ग ॥१३९
कृष्णनाम-गुण-यश अवतंश काणे ।
कृष्णनाम-गुण-यश प्रवाह वचने ॥१४०
कृष्णके कराय श्यामरस मधुपान ।
निरन्तर पूर्ण करे कृष्णेर सर्व्वकाम ॥१४१
कृष्णेर विशुद्ध-प्रेम-रत्नेर आकर ।
अनुपम-गुणगण पूर्णकलेवर ॥१४२

तथाहि श्रीगोविन्दलीलामृते (११।१२२) —

श्रीराधाकुन्दलतयोरुक्तिप्रत्युक्ती—

का कृष्णस्य प्रणयजनिभूः श्रीमती राधिकैका
कास्य प्रेयस्यनुपमगुणा राधिकैका न चान्या ।
जैह्म्यं केशे दृशि तरलता निष्ठुरत्वं कुचेऽस्याः
वाञ्छापूर्त्यै प्रभवति हरे राधिकैका न चान्या ।४०।

टीका—प्रथमः प्रश्नः ।—कृष्णस्य प्रणयजनिभूः प्रणयपात्री का ? उत्तरः—एका श्रीमती राधिका प्रश्नः—अस्य प्रेयसी का ? उत्तरः—अनुपमगुणा एका राधिका, न च अन्या ।—अस्याः केशे जैह्म्यं कौटिल्य दृशि नेत्रे तरलता चाञ्चल्यं कुचे निष्ठुरत्वं कठिनत्व हरेः कृष्णस्य वाञ्छापूर्त्यै वासनापूरणार्थं एका राधिका समर्था, न च अन्या प्रभवति ॥४०॥

गोविन्द लीलामृत में लिखित है—प्रथम प्रश्न—कृष्ण की प्रणय पात्री कौन है ? उत्तर,

एक मात्र श्रीराधा हैं, अपर कोई नहीं है, प्रश्न,- श्रीकृष्ण की प्रेयसी कौन है ? उत्तर, अनुपम गुण सम्पन्ना एकमात्र राधिका ही हैं,अपर नहीं, राधिका के केश में कुटिलता है, नेत्र में तरलता है, अर्थात् चाञ्चल्य है, वक्षोज द्वय में काठिन्य है, एकमात्र श्रीराधा ही श्रीकृष्ण की वाञ्छा पूर्ण करने में सक्षम हैं, अपर कोई नहीं ॥४०॥

याँहार सौभाग्यगुण वाञ्छे सत्यभामा ।
याँर ठाञि कलाविलास शिखे व्रजरामा ॥१४३
याँर सौन्दर्य्यादिगुण वाञ्छे लक्ष्मी पार्व्वती ।
याँर पातिव्रत्यधर्म्म वाञ्छे अरुन्धती ॥१४४
याँर सद्गुणगणेर कृष्ण ना पान पार ।
ताँर गुण गणिवे केमने जीव छार ॥१४५
प्रभु कहे जानिनु कृष्णराधा-प्रेमतत्त्व ।
शुनिते चाहिये दोँहार विलास-महत्त्व ॥१४६
राय कहे कृष्ण हय धीरललित ।
निरन्तर कामक्रीड़ा याँहार चरित ॥१४७

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे प्रथम-विभावलहर्य्यां (१२५)—

विदग्धो नवतारुण्यः परिहासविशारदः ।
निश्चिन्तो धीरललितः स्यात् प्रायः प्रेयसीवशः ।४१

टीका—विदग्धः विविधरसविशिष्टः, नवतारुण्यः नित्यनूतनः, परिहासविशारदः परिहासादिविषये निपुणः, निश्चिन्तः चिन्तारहितः, प्रायः प्रेयसीवशः धीरललितः स्यात् ।।४१।।

विविध रस विशिष्ट, नित्य नूतन भावयुक्त, परिहास विशारद, चिन्ताहीन अर्थात् सदानन्द एवं प्रायशः प्रेयसी का वशीभूत धीर ललित नायक होता है ।।४१।।

रात्रिदिन कुञ्जे क्रीड़ा करे राधासङ्ग ।
कैशोर वयस सफल कैल क्रीड़ारङ्गे ॥१४८

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे प्रथम-विभावलहर्य्यां (१२४)--

वाचा सूचितशर्व्वरीरतिकलाप्रागल्भ्यया राधिकां
व्रीड़ाकुञ्चितलोचनां विरचयन्नग्रे सखीनामसौ ।
तद्वक्षोरुहचित्रकेलिमकरीपाण्डित्यपारं गतः
कैशोरं सफलीकरोति कलयन् कुञ्जे विहारं हरिः ।४२

एकदा श्रीमती राधिका कुञ्जाभ्यन्तर में सखीवृन्द परिवेष्टिता होकर थीं, इस समय श्रीकृष्ण वहाँ आ गये । अनन्तर आसन में उपविष्ट होकर सहचरी वर्ग के सम्मुख में प्रागल्भ्य वाक्य के द्वारा रात्रि विलास का वर्णन आरम्भ करने से राधा लज्जिता होकर कुञ्चित नयना हो गई, उस समय कृष्ण उनके वक्षःस्थल में विचित्र चित्र रचना नैपुण्य प्रदर्शन कर कुञ्जाभ्यन्तर में विहार पूर्वक कैशोर वयस सफल किये थे ।।४२।।

कभु कहे एइ हय आगे कह आर ।
राय कहे इहा बइ बुद्धिगति नाहि आर ।१४९
ये वा प्रेमविलास-विवर्त्त एक हय ।
ताहा शुनि तोमार सुख हय कि ना हय १५०
एत कहि आपनकृत गीत एक गाइल ।
प्रेमे प्रभु स्वहस्ते तार मुख आच्छादिल ॥१५१

तथाहि गीतं भैरवी रागेण गीयते—

पहि लहि राग नयनभङ्ग भेल ।
अनुदिन बाढ़ल अबधि ना गेल ॥१५२
ना सो रमण ना हाम रमणी ।
दुँह मन मनोभव पेशल जानि ॥१५३
ए सखि सो सब प्रेमकाहिनी ।
कानुठामे कहबि विछुरल जानि ॥१५४
ना खोजलुँ दूती ना खोजलुँ आन ।
दुँहुकेरि मिलने मध्यत पाँचवाण ॥१५५
अब सोइ विराग तुँहु भेलि दूती ।

सुपुरुष प्रेमक ऐछन रीति ॥१५६

वर्द्धनरुद्र नराधिपमान।

रामानन्दराय कवि भाण ॥१५७

एक समय मान के अनन्तर दैवात् मिलित होकर परस्पर गमन करने के पश्चात् कृष्ण, सन्देह एवं उत्कण्ठा से 'आगामी काल किसी चतुरा सखी को भेजकर क्रुद्धा राधिका को विनय वचन से सन्तुष्ट करना होगा' इस प्रकार स्थिर करने पर उसी रात्रिमें राधिका स्वप्न देख रही थीं कि हरि के समीप से एक दूती आकर कृष्ण के वाक्य को कहने लगी-"अयि मानमयि राधिके! मैं तुम्हारा कान्त हूँ, एवं तुम मेरी कान्ता हो, सुतरां मेरा अपराध मेरी प्रार्थना से क्षमा करना तुम्हारे पक्ष में कर्त्तव्य है॥" इत्यादि सहेतुक साधारण प्रणय परायण हरि के अनुनय एवं स्तुति को अनुभव कर उस से असहिष्णु होकर उस दूती को स्वप्न में श्रीमती कही थी."हे सखि! पहले कटाक्ष भङ्गि के द्वारा पूर्वराग उत्पन्न हुआ था, वह राग निरन्तरवर्द्धित होकर निःसीम हुआ। कृष्ण मेरा पति नहीं हैं, मैं भी उनकी पत्नी नहीं हूँ, तथापि हम दोनों के चित्त काम के द्वारा पिष्ट हो गये हैं, यह मैं जानती हूँ, सुतरां सखि! तुम कृष्ण के पास ये सब प्रेम की बात को कहना, भूलना नहीं, तुम कृष्ण की दूती हो, कृष्ण को ही जब बात विस्मरण होती है, तब मेरा मन स्वाभाविक विस्मरण शील होगा, इस में सन्देह नहीं हैं। यह विचित्र नहीं है। मैं दूती का अनुसन्धान नहीं करती हूँ। एवं अपर किसी को भी सहायक नहीं करती हूँ। हम दोनों के मिलन में मध्यस्थ काम ही है। सम्प्रति वह तिरक्त है, सुतरां तुम उसकी दूती हुईहो, जो भी हो, सत् पुरुष के प्रेम की रीति इस प्रकार ही है।

तथाहि उज्ज्वलनीलमणौ स्थायिभावप्रकरणे (११०)-

श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

राधाया भवतश्च चित्तजतुनी स्वेदैर्विलाप्य क्रमाद्-
युञ्जन्नद्रि निकुञ्जकुञ्जरपते निर्धूतभेदभ्रमम्।
चित्राय स्वयमन्वरञ्जयदिह ब्रह्माण्डहर्म्योदरे-
भूयोभिर्नवराग हिङ्गुलभरैः शृङ्गारकारुः कृती॥४३॥

टीका—हे अद्रिनिकुञ्ज-कुञ्जरपते! शृङ्गारकारुः कृती कामशिल्पी इह ब्रह्माण्डहर्म्योदरे ब्रह्माण्डरूपनृपालये राधायाः च भवतः तव चित्तजतुनी भूयोभिः पुनः पुनः नवरागहिङ्गुलभरैः विलाप्य स्वेदैः कृत्वा स्वेदैः क्रमात् क्रमेण निर्धूतभेदभ्रमं निःशेषितभेदरूपमिथ्याज्ञानं युञ्जन् मिश्रीकुर्व्वन् सन् चित्राय चित्रकर्म्मकरणार्थं स्वयं अन्वरञ्जयत् ॥४३॥

उज्ज्वल नीलमणि ग्रन्थ के स्थायिभाव प्रकरण में उक्त है—हे अद्रि निकुञ्ज कुञ्जर पते! इस ब्रह्माण्ड रूप राज प्रासाद का काम शिल्पी तुम्हारे एवं श्रीमती राधिका के चित्त जतु को उभय के नवीनानुराग रूप हिङ्गुल वर्ण युक्त कर प्रेमानल के द्वारा क्रमशः अभेद रूप से संमिश्रण करके कैसा मनोरम अनुरञ्जित किया है॥४३॥

प्रभु कहे साध्यवस्तु अवधि एइ हय।

तोमार प्रसादे इहा जानिनु निश्चय ॥१५८

साध्यवस्तु साधन विना केह नाहि पाय।

कृपा करि कह इहा पावार उपाय ॥१५९

राय कहे, ये कहाओ सेइ कहि वाणी।

कि कहिये भाल मन्द किछुइ ना जानि ॥१६०

त्रिभुवनमध्ये ऐछे आछे कोन धीर।

ये तोमार मायानाटे हइवेक स्थिर ॥१६१

मोर मुखे वक्ता तुमि, तुमि हओ श्रोता।

अत्यन्त रहस्य शुन साधनेर कथा ॥१६२

राधाकृष्णेर लीला एइ अति गूढ़तर।

दास्य वात्सल्यादि भावेर ना हय गोचर ॥१६३

सबे एक सखीगणेर इहा अधिकार।

सखी हैते हय एइ लीलार विस्तार ॥१६४

सखी विना एइ लीला पुष्ट नाहि हय।

सखीलीला विस्तारिया सखी आस्वादय ॥१६५

सखी विना एइ लीलाय नाहि अन्येर गति ।
सखीभावे ताँहा येइ करे अनुगति ॥१६६
राधाकृष्ण-कुञ्जसेवा साध्य सेइ पाय ।
सेइ साध्य पाइते आर नाहिक उपाय ॥१६७

तथाहि गोविन्दलीलामृते (१०।१७)—

विभुरपि सुखरूप. स्वप्रकाशोऽपि भाव:
क्षणमपि न हि राधाकृष्णयो र्या ऋते स्वा: ।
प्रवहति रसपुष्टिं चिद्विभूतीरिवेश:
श्रयति न पदमासां क: सखीनां रसज्ञ: ॥४४॥

टीका —या: स्वा: स्वीया: चिद्विभूती: ऋते राधाकृष्णयो: सुखरूप: विभु: प्रभुत्वाद्यैश्वर्य्यं तथा तयोर्भाव: स्वप्रकाशोऽपि क्षणमपि रसपुष्टिं न प्रवहति प्राप्नोति, क: रिवेश: रसज्ञ: जन: आसां सखीनां पदं न श्रयति ?४४

राधा एवं कृष्ण के सुखविभु-एवं भाव स्व प्रकाश होने पर भी जिन सब की सहायता व्यतीत मुहूर्त्त काल के निमित्त भी रस पुष्टि नहीं होती है, कौन निपुण रसवित् व्यक्ति चिदैश्वर्य्या रूपा उन सखीवृन्द के पदाश्रय करके रह सकता है ? ॥४४॥

सखीर स्वभाव एक अकथ्य कथन ।
कृष्ण सह निजलीलार नाहि सखीर मन १७८
कृष्ण सह राधिकार लीला से कराय ।
निजकेलि हैते ताते कोटि सुख पाय ॥१६९
राधार स्वरूप कृष्णप्रेम-कल्पलता ।
सखीगण हय तार पल्लव पुष्प लता ॥१७०
कृष्णलीलामृते यदि लताके सिञ्चय ।
निज सेक हैते पल्लवाद्येर कोटि सुख हय १७१

तथाहि गोविन्दलीलामृते—(१०।१६)--

सख्य: श्रीराधिकाया व्रजकुमुदविधोर्ह्लादिनीनामशक्ते:
सारांश प्रेमवल्ल्या: किसलयदलपुष्पादितुल्या:- स्वतुल्या: ।
सिक्तायां कृष्णलीलामृतरसनिचयैरुल्लसन्त्याममुष्यां
जातोल्लासा: स्वसेकात् शतगुणमधिक सन्ति यत्तन्न चित्रम् ॥४५॥

टीका — व्रजकुमुदविधो: व्रजवासिनीकुमुदिनी-रूपिणी-गोपिकानां सम्बन्धे चन्द्रतुल्यस्य तस्य कृष्णस्य ह्लादिनीनामशक्ते: सारांशप्रेमवल्ल्या श्रीराधिकाया: सख्य: सखीसमूहा: स्वतुल्या: राधिकासमाना: किसलयदलपुष्पादितुल्या: नवपल्लव-पत्रकुसुमतुल्या: भवन्ति । कृष्णलीलामृतरसनिचयै: सिक्तायां उल्लसन्त्यां अमुष्यां राधायां स्वसेकात शतगणमधिकं यथा स्यात्तथा यत् जातोल्लासा: भवन्ति, तत् चित्रं आश्चर्य्यं न स्यात् ॥४५॥

गोविन्द लीलामृत में लिखा है --
श्रीमती राधिका ही व्रज कुमुद विधु श्रीकृष्ण की ह्लादिनी की सारांशरूप प्रेमलता है, सखीवृन्द-उस लता के किसलय कुसुमादि तुल्य है, उल्लासमयी राधिका में कृष्ण लीलासुधारस सिञ्चित होने से निज निज सिञ्चन की अपेक्षा शत गुण अधिक सुखी होती हैं, इस में वैचित्र्य क्या है ? ॥४५॥

यद्यपि सखीर कृष्णसङ्गमे नाहि मन ।
तथापि राधिकार यत्ने कराय सङ्गम ॥१७२
नाना छले कृष्णे प्रेरि सङ्गम कराय ।
आत्म कृष्णसङ्ग हैते कोटि सुख पाय ।१७३
अन्योन्ये विशुद्ध प्रेमे करे रस पुष्ट ।
ता सबार प्रेम देखि कृष्ण हय तुष्ट ॥१७४
सहजे गोपीर प्रेम नहे प्राकृत काम ।
कामक्रीड़ा-साम्ये तारे कहि काम नाम ॥१७५

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे साधनभक्ति-लहर्य्यां (१४३)--

प्रेमैव गोपरामाणां काम इत्यगमत् प्रथाम् ।
इत्युद्धवादयोऽप्येतं वाञ्छन्ति भगवत्प्रिया: ॥४६॥

गोपाङ्गना वृन्द के प्रेम ही काम नाम से अभिहित होता है । अत. उद्धव प्रभृति भगवत् प्रिय

वृन्द उसकी वाञ्छा करते हैं ॥४६॥

निजेन्द्रियसुखहेतु कामेर तात्पर्य्य ।
कृष्णसुखेर तात्पर्य्य गोपीभाववर्य्य ॥१७६

निजेन्द्रियसुखवाञ्छा नाहि गोपिकार ।
कृष्णे सुख दिते करे सङ्गेत विहार ॥१७७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३१।१०)—

यत्ते सुजातचरणाम्बुजरुहं स्तनेषु
भीताः शनैः प्रिय दधामहि कर्कशेषु ।
तेनाटवीमटसि तद्व्यथते न किं स्वित्
कूर्पादिभिर्भ्रमति धीर्भवदायुषां नः ॥४७॥

श्रीमद्भागवत में उक्त है– अनन्तर गोपाङ्गना गण प्रेम विभोर होकर क्रन्दन करते करते श्रीकृष्ण को कही थीं, प्रियतम: तुम्हारे जिस चरण कमल को वक्षोपरि व्यथा के भय से धीरे धीरे हम सब धारण करते हैं, उसी चरण कमलों के द्वारा तुम वन वन में विचरण करते रहते हो, तुम्हारे चरण कमल क्या सूक्ष्म प्रस्तर खण्डादि के द्वारा व्यथित नहीं होता है ? अवश्य ही व्यथित होता है, यह जानकर हम सब की बुद्धि अतीव विमुग्ध हो जाती है, कारण, तुम ही तो हमारी परमायु हो,।४७।

सेइ गोपीभावामृते यार लोभ हय ।
वेदधर्म्म त्यजि सेइ कृष्णेरे भजय ॥१७८

रागानुगामार्गे ताँरे भजे येइ जन ।
सेइ जन पाय व्रजे व्रजेन्द्रनन्दन ॥१७८

व्रजलोकेर कोन भाव लञा येइ भजे ।
भावयोग्य देह पाञा कृष्ण पाय व्रजे ॥१७९

ताहाते दृष्टान्त उपनिषद् श्रुतिगण ।
रागमार्गे भजि पाइल व्रजेन्द्र-नन्दन ॥१८०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८७।१९)--

निभृतमरुन्मनोऽक्षदृढ़योगयुजो हृदि य-
न्मुनय उपासते तदरयोऽपि ययुः स्मरणात् ।
स्त्रिय उरगेन्द्रभोगभुजदण्डविषक्तधियो
वयमपि ते समाः समदृशोऽङ्घ्रिसरोजसुधाः

टीका—निभृतमरुन्मनोक्ष-दृढ़-योग-युजः प्राणाश्च मनश्च अक्षानि च निभृतानि नियमितानि यैः ते च ते दृढ़ं योगं युञ्जन्तीति दृढ़योगयुजश्च तथा-भूताः मुनयः हृदि यत् त्वां उपासते, तत् अरयोऽपि स्मरणात् अरिभावेन निरन्तरं चिन्तनात् ययुः प्रापुः । स्त्रियोऽपि गोपबाला अपि [illegible] अङ्घ्रिसरोजसुधाः ययुः । कथम्भूताः स्त्रियः उरगेन्द्र-भोग-भुज-दण्ड-विषक्तधियः । वयमपि समाः गोपीसरोजसुधाः समदृशः सत्यः तवाङ्घ्रि सरोजसुधाः प्राप्नुमः ॥४८॥

श्रीमद्भागवत के श्रुति स्तुति अध्याय में उक्त है दृढ़ योग शील मुनिगण प्राण, मन, एवं इन्द्रिय प्रभृति को संयम करके जिस की उपासना करते हैं उसी को अरिगण शत्रुभाव से निरन्तर चिन्तन कर प्राप्त करते हैं, गोपाङ्गना गण ने भी अहिराज के समान आप के बाहुदण्ड से विषक्त चित्त होकर चरण नलिनामृत को प्राप्त किया है, हम सब भी उन सब के भावानुगत्य से उस चरण कमल की सुधा को प्राप्त करेंगे ॥४८॥

"समदृश" शब्दे कहे सेइ भाव अनुगति ।
"समा" शब्दे कहे श्रुतिर गोपीदेहप्राप्ति ॥१८१

"अङ्घ्रिपद्मसुधा" कहे कृष्णसङ्गानन्द ।
विधिमार्गे नाहि पाइये व्रजे कृष्णचन्द्र ॥१८२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।९।१६)—

नायं सुखापो भगवान् देहिनां गोपिकासुतः ।
ज्ञानिनां चात्मभूतानां यथा भक्तिमतामिह ॥४९॥

टीका—अयं भगवान् गोपिकानन्दन इह जगति भक्तिमतां भक्तियुक्तानां सम्बन्धे यथा सुखापः सुखलभ्यः स्यात्, तथा देहिनां च आत्मभूतानां सम्बन्धे न स्यात् ॥४९॥

यह यशोदानन्दन भगवान् भक्तिनिष्ठ व्यक्ति के

के पक्ष में जिस प्रकार सुखलभ्य हैं, उस प्रकार देहाभिमानी व्यक्ति वृन्द के पक्ष में एवं निरभिमानी ज्ञानि वृन्द के पक्ष में सुखलभ्य नहीं हैं ॥४६॥

अतएव गोपीभाव करि अङ्गीकार ।
रात्रि दिन चिन्ते राधाकृष्णेर विहार ॥१८३
सिद्धदेहे चिन्ति करे ताँहाञि सेवन ।
सखीभावे पाय राधाकृष्णेर चरण ॥१८४
गोपी अनुगति विना ऐश्वर्य्य ज्ञाने ।
भजिलेह नाहि पाय व्रजेन्द्रनन्दने ॥१८५
ताहाते दृष्टान्त लक्ष्मी करिला भजन ।
तथापि ना पाइल व्रजे व्रजेन्द्रनन्दन ॥१८६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।४७।५३)--

नायं श्रियोऽङ्ग उ नितान्तरतेः प्रसादः
स्वर्योषितां नलिनगन्धरुचां कुतोऽन्याः ।
रासोत्सवेऽस्य भुजदण्डगृहीतकण्ठ
लब्धाशिषां य उदगाद्व्रजसुन्दरीणाम् ॥५०।

भगवान् श्रीकृष्ण—रासोत्सव में प्रवृत्त होकर निज बाहु युगल के द्वारा व्रजाङ्गना वृन्द के कण्ठालिङ्गन पूर्वक जो प्रसन्नता व्यक्त किये थे, उनके वक्षःस्थल वासिनी लक्ष्मी एवं कमल गन्ध एवं कमल कान्ति मण्डित सुराङ्गना वृन्द के पक्ष में उस प्रकार प्रसाद लाभ करना दुर्लभ है ॥५०॥

एत शुनि प्रभु तारे कैल आलिङ्गन ।
दुइ जने गलागलि करेन क्रन्दन ॥१८७
एइमत प्रेमावेशे रात्रि गोङाइला ।
प्रातःकाले निज निज कार्य्ये दुँहे गेला ॥१८८
विदायसमये प्रभुर चरणे धरिया ।
रामानन्द कहे किछु विनति करिया ॥१८९
मोरे कृपा करिते प्रभुर इँहा आगमन ।
दिन दश रहि शोध मोर दुष्ट मन ॥१९०
तोमा वहि अन्य नाहि जीव उद्धारिते ।
तोमा वहि अन्य नाहि कृष्णप्रेम दिते ॥१९१
प्रभु कहे आइलाम शुनि तोमार गुण ।
कृष्णकथा शुनि शुद्ध कराइते मन ॥१९२
यैछे शुनिनु तैछे देखिनु तोमार महिमा ।
राधाकृष्ण-प्रेमरस-ज्ञानेर तुमि सीमा ॥१९३
दश दिनेर का कथा, यावत् आमि जीव ।
तावत् तोमार सङ्ग छाड़िते नारिब ॥१९४
नीलाचले तुमि आमि रहिब एक सङ्गे ।
तोमार सङ्गे वञ्चिब काल कृष्णकथा रङ्गे
॥१९५
एत बलि दुँहे निज निज कार्य्ये गेला ।
सन्ध्याकाले राय पुन आसिया मिलिला ॥१९६
अन्योन्ये मिलिया दुँहे निभृते वसिया ।
प्रश्नोत्तर-गोष्ठी करे आनन्दित हञा ॥१९७
प्रभु पुछेन रामानन्द करेन उत्तर ।
एइमत सेइ रात्रि कथा परस्पर ॥१९८
प्रभु कहे, कोन् विद्या विद्यामध्ये सार ।
राय कहे, कृष्णभक्ति विना विद्या नाहि आर
॥१९९
कीर्त्तिगणमध्ये जीवेर कोन् बड़ कीर्त्ति ।
कृष्णभक्त बलिया याहार हय ख्याति ॥२००
सम्पत्तिर मध्ये जीवेर कोन् सम्पत्ति गणि ।
राधाकृष्णे प्रेम यार सेइ बड़ धनी ।
दुःखमध्ये कोन् दुःख हय गुरुतर ।
कृष्णभक्तविरह विना दुःख नाहि आर २०२
मुक्तमध्ये कोन् जन मुक्त करि मानि ।
कृष्णप्रेम साधे, सेइ मुक्तशिरोमणि ॥२०३
गानमध्ये कोन् गान जीवेर निज धर्म्म ।
राधाकृष्णेर प्रेमकेलि ये गीतेर मर्म्म ॥२०४

श्रेयोमध्ये कोन् श्रेय: जीवेर हय सार ।
कृष्णभक्त-सङ्ग बिना श्रेय: नाहि आर ।२०५
काहार स्मरण जीव करे अनुक्षण ।
कृष्ण-नाम-गुण-लीला प्रधान स्मरण ॥२०६
ध्येयमध्ये जीवेर कर्त्तव्य कोन् ध्यान ।
राधाकृष्ण-पदाम्बुज ध्यान प्रधान ॥२०७
सर्व्व त्यजि जीवेर कर्त्तव्य काँहा वास ।
श्रीवृन्दावन-भूमि याँहा नित्य लीला रास २०८
श्रवणमध्ये जीवेर कोन् श्रेष्ठ श्रवण ।
राधाकृष्ण-प्रेमकेलि कर्णरसायन ॥२०९
उपास्येर मध्ये कोन् उपास्य प्रधान ।
श्रेष्ठ उपास्ययुगल राधाकृष्ण नाम ॥२१०
मुक्ति भुक्ति वाञ्छे येइ काँहा दुँहार गति ।
स्थावरदेह देवदेह यैछे अवस्थिति ॥२११
अरसज्ञ काक चुषे ज्ञान-निम्बफले ।
रसज्ञ कोकिल खाय प्रेमाम्र-मुकुले ॥२१२
अभागिया ज्ञानी आस्वादये शुष्क ज्ञान ।
कृष्णप्रेमामृतपान करे भाग्यवान् ॥२१३
एइमत दुइ जनेर कृष्णकथावेशे ।
नृत्य गीत रोदने हैल रात्रिशेषे ॥२१४
दुँहे निज निज कार्य्ये चलिला विहाने ।
सन्ध्याकाले राय आसि मिलिला आपने ।२१५
इष्ट-गोष्ठी कृष्णकथा कहि कतक्षण ।
प्रभुपदे धरि राय करे निवेदन ॥२१६
कृष्णतत्त्व राधातत्त्व प्रेमतत्त्व सार ।
रसतत्त्व लीलातत्त्व विविधप्रकार ॥२१७
एत तत्त्व मोर चित्ते कैले प्रकाशन ।
ब्रह्माके वेद यैछे पड़ाइल नारायण ॥२१८

अन्तर्यामी ईश्वरेर एइ रीति हय ।
बाहिरे ना कहे वस्तु प्रकाशे हृदय ॥२१…

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१।१)—

जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्वभिज्ञ: स्वरा…
तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत् सूरय:।
तेजो-वारि-मृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गोऽमृ…
धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि ॥…

टीका—परं परमेश्वरं धीमहि ध्यायेम:। परमे… किम्भूतम् ?—सत्यम् । सत्यत्वे हेतु:—यत्र परमे… त्रिसर्ग: त्रयाणां मायागुणानां तमो-रज:-सत्त्वा… सर्ग: अमृषा सत्य: यत् सत्यतया मिथ्या सर्गोऽ… सत्यवत् प्रतीयते तम्। दृष्टान्तो यथा—तेजोवारिमृ… यथा विनिमय:। पुन: किम्भूतम् ? स्वेन धाम्ना… निरस्तकुहकं मायिकोपाधि-सम्बन्धरहितम्। अस्य… जगत: जन्मादि सृष्टिस्थितिलयं यतो भवति, … धीमहीत्यर्थ:। तत्र हेतु:—अन्वयादितरतश्च अर्थे… अभिज्ञ:, स्वराट् स्वेनैव राजते य: स:। य: आदिक… ब्रह्मणे हृदा ब्रह्म वेदं तेने प्रकाशितवान्, यत् ब्रह्मणि… सूरय: मनीषिण: मुह्यन्ति ॥५१॥

अन्वय व्यतिरेक से जिनकी विद्यमानता है… इस जगत् की उत्पत्ति स्थिति होती हैं, एवं जगत् का… संहार होता है, जो स्वत: सिद्धज्ञान वान एवं सर्व… हैं, जिन्होंने आदि कवि ब्रह्मा के हृदय में विज्ञ… मोह जनक वेद को प्रकाश किया है, एवं जिस प्रकार… अग्नि, जल एवं मृत्तिका के विनिमय से एक द्रव्य में… अपर द्रव्य का भ्रम होता हैं, उस प्रकार सत्त्व, रज… एवं तम:-गुणत्रय को भूतादि सृष्टि मिथ्या होने पर… भी जिनकी सत्ता से सत्य रूप में प्रतीति होती है… एवं जो निज शक्ति से ही माया को पराभूत कर… विराजित हैं, हम सब उन परम सत्य रूपी परमेश्वर… का ध्यान करते हैं ।

जिस कारण के सहित अन्वित अथवा युक्त होने… के कारण कार्य्य का अस्तित्व विद्यमान होता है, उस… को अन्वय कारण करता है, एवं जिस कारण के… व्यतिरेक अर्थात् विच्छिन्न होने से कार्य्य का अस्तित्व…

विद्यमान नहीं रहता है, उस को व्यतिरेक कारण करते हैं। परमेश्वर उस विश्व के सहित उल्लिखित द्विविध कारण से युक्त हैं ।।५१।।

एक संशय मोर आछये हृदये ।
कृपा करि कह मोरे ताहार निश्चये ।।२२०
पहिले देखिलुँ तोमा सन्न्यासिस्वरूप ।
एवे तोमा देखि मुञि श्यामगोपरूप ।।२२१
तोमार सम्मुखे देखि काञ्चन-पञ्चालिका ।
तार गौरकान्त्ये तोमार श्याम अङ्ग ढाका ।।२२२
ताते एक प्रकट देखि सवंशीवदन ।
नाना भावे चञ्चल सदा कमलनयन ।।२२३
एइमत तोमा देखि हय चमत्कार ।
अकपटे कह प्रभु कारण इहार ।।२२४
प्रभु कहे कृष्णे तोमार गाढ़प्रेम हय ।
प्रेमेर स्वभाव एइ जानिह निश्चय ।।२२५
महाभागवत देखे स्थावर जङ्गम ।
ताँहा ताँहा हय ताँर कृष्णेर स्फुरण ।।२२६
स्थावर जङ्गम देखे ना देखे तार मूर्त्ति ।
सर्व्वत्र हय निज इष्टदेव-स्फूर्त्ति ।।२२७

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।४५)—

सर्व्वभूतेषु यः पश्येद्भगवद्भावमात्मनः ।
भूतानि भगवत्यात्मन्येष भागवतोत्तमः ।।५२।।

टीका—यः सर्व्वभूतेषु आत्मनः भगवद्भावं पश्येत्, यश्च भगवति आत्मनि च भूतानि पश्येत्, एषः जनः भागवतोत्तमः ।।५२।।

श्रीमद्भागवत के ११।२।४५ में उक्त है—
जो व्यक्ति समस्त प्राणियों में निज भगवद् भाव दर्शन करता है, एवं भगवान् एवं आत्मा में समस्त भूतों को देखता है, अर्थात् सर्वत्र परिपूर्ण भगवतत्त्व का दर्शन करता है, वही उत्तम भागवत है ।।५२।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३५।९)—

वनलतास्तरव आत्मनि विष्णुं
व्यञ्जयन्त्य इव पुष्पफलाढ्याः ।
प्रणतभारविटपा मधुधाराः
प्रेमहृष्टतनवो ववृषुः स्म ।।५३।।

टीका—पुष्पफलाढ्याः पुष्पफलविशिष्टाः प्रणतभारविटपाः वनलताः आत्मनि विष्णुं व्यञ्जयन्त्यः प्रकाशमानं सूचयन्त्यः इव प्रेमहृष्टतनवः मधुधाराः ववृषुः वर्षयामासुः, स्म विस्मये तरवश्च वृक्षसंघाश्च तथा इव ववृषुः ।।५३।।

श्रीमद् भागवत के १०।३५।९ में उक्त है—
फल एवं कुसुम भर से अवनत लतागण एवं तरु समूह अपने के मध्य में प्रकाश मान परमेश्वर को प्राप्त कर ही प्रेम हृष्ट कलेवर से मधुधारा वर्षण करने लगे थे ।।५३।।

श्रीराधाकृष्णे तोमार गाढ़ प्रेमा हय ।
याँहा ताँहा राधाकृष्ण तोमार स्फुरय ।।२२८
राय कहे प्रभु तुमि छाड़ भारि भुरि ।
मोर आगे निज रूप ना करिह चुरि ।।२२९
श्रीराधार भाव कान्ति करि अङ्गीकार ।
निज रस आस्वादिते कैले अवतार ।।२३०
निज गूढ़ कार्य्य तोमार प्रेम आस्वादन ।
आनुषङ्गे प्रेममय कैले त्रिभुवन ।।२३१
आपने आइला मोरे करिते उद्धार ।
एवे ये कपट कर कोन् व्यवहार ।।२३२
तबे प्रभु हासि ताँरे देखाल स्वरूप ।
रसराज महाभाव दुइ एकरूप ।।२३३
देखि रामानन्द हैला आनन्दे मूर्च्छिते ।
धरिते ना पारे देह पड़िला भूमिते ।।२३४

प्रभु ताँरे हस्त स्पर्शि कराइल चेतन ।
सन्न्यासीर वेश देखि विस्मित इहल मन ॥२३५
आलिङ्गन करि प्रभु कैल आश्वासन ।
तोमा विने एइरूप ना देखे कोन जन ॥२३६
मोर तत्त्व लीलासब तोमार गोचरे ।
अतएव एइरूप देखाइनु तोमारे ॥२३७
गौरदेह नहे मोर राधाङ्गस्पर्शन ।
गोपेन्द्रसुत विना तेँह ना स्पर्शे अन्य जन २३८
ताँर भावे भावित आमि करि आतममन ।
तबे कृष्णमाधुर्य्यररस करि आस्वादन ।२३९
तोमार ठाञि आमार गुप्त नहे कोन कर्म्म ।
लुकाइले प्रेमबले जान सब मर्म्म ॥२४०
गुप्त राखिह कथा ना करिह प्रकाश ।
आमार बातुल चेष्टा लोक करे उपहास ।२४१
आमि एक बातुल तुमि द्वितीय बातुल ।
अतएव तोमाय आमाय हइ समतुल ॥२४२
एइरूपे दश रात्रि रामानन्द सङ्गे ।
सुखे गोङाइल प्रभु कृष्णकथारङ्गे ॥२४३
निगूढ़ व्रजेर लीलारसेर विचार ।
अनेक हैल तार ना पाइल पार ॥२४४
तामा काँसा रूपा सोणा रत्न चिन्तामणि ।
केहो येन काँहो पोता पाय एकखनि ॥२४५
क्रमे उठाइते येन उत्तम वस्तु पाय ।
तैछे प्रश्नोत्तर कैल प्रभु रामराय ॥२४६
आर दिन राय-पाशे विदाय मागिला ।
विदायेर काले ताँरे एइ आज्ञा दिला ॥२४७
विषय छाड़िया तुमि याह नीलाचले ।
आमि तीर्थ करि ताँहा आसिब अल्पकाले २४८
दुइ जन नीलाचले रहिब एक सङ्गे ।
सुखे गोङाइब काल कृष्णकथारङ्गे ॥२४९
एत बलि रामानन्दे करि आलिङ्गन ।
ताँरे घरे पाठाइया करिला शयन ॥२५०
प्रातःकाले उठि प्रभु देखि हनुमान ।
ताँरे नमस्करि दक्षिण करिला गमन ॥२५१
विद्यापुरे नानामत लोक वैसे यत ।
प्रभु देखि वैष्णव हैल छाड़ि निज मत ॥२५२
रामानन्द हैला प्रभुर विरहे विह्वल ।
प्रभु-ध्याने रहे विषय छाड़िये सकल ॥२५३
संक्षेपे कहिल रामानन्देर मिलन ।
विस्तारि वर्णिते नारे सहस्रवदन ॥२५४
सहजे चैतन्यचरित घन दुग्धपूर ।
रामानन्द-चरित्र ताहे खण्ड प्रचुर ॥२५५
राधाकृष्ण-लीला ताते कर्पूर मिलन ।
भाग्यवान् येइ सेइ करे आस्वादन ॥२५६
येइ इहा एकबार पिये कर्णद्वारे ।
तार कर्ण लोभे इहा छाड़िते ना पारे ॥२५७
सर्व्वतत्त्वज्ञान हय इहार श्रवणे ।
प्रेमभक्ति हय राधाकृष्णेर चरणे ॥२५८
चैतन्येर गूढ़तत्त्व जानि इहा हैते ।
विश्वास करि शुन तर्क ना करिह चिते ॥२५९
अलौकिक लीला एइ परम निगूढ़ ।
विश्वासे पाइये तर्के हय अति दूर ॥२६०
श्रीचैतन्य-नित्यानन्द अद्वैतचरण ।
याहार सर्व्वस्व तारे मिले एइ धन ॥२६१
रामानन्दराये मोर कोटि नमस्कार ।
याँर मुखे कैल प्रभु रसेर विस्तार ॥२६२

दामोदर स्वरूपेर कड़चा अनुसारे ।
रामानन्द-मिलनलीला करिल प्रचारे ॥२६३
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२६४

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे रामानन्दसङ्गोत्सववर्णनं नाम अष्टमः परिच्छेदः ॥८॥



❀ नवमपरिच्छेद ❀

नानामतग्रहग्रस्तान् दाक्षिणात्यजनद्विजान् ।
कृपारिणा विमुच्यैतान् गौरश्चक्रे स वैष्णवान् ॥१

टीका—सः गौराङ्गः नानामतग्रहग्रस्तान् दाक्षिणात्यजनद्विजान् कृपारिणा विमुच्य, एतान् वैष्णवान् चक्रे कृतवान् ॥१॥

हस्ति के समान विभिन्न मतवादरूप ग्रह से ग्रस्त दाक्षिणात्यवासी जन गण को कृपा चक्र के द्वारा मुक्त कर गौर हरि वैष्णव किये थे ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
दक्षिणगमन प्रभुर अति विचक्षण ।
सहस्र सहस्र तीर्थ करिल दर्शन ॥२
सेइ सब तीर्थ स्पर्शि महातीर्थ कैल ।
सेइ छले सेइ देशेर लोक निस्तारिल ॥३
तीर्थयात्राय तीर्थक्रम कहिते ना पारि ।
दक्षिण वामे हय तीर्थ गमन फेराफेरि ॥४
अतएव नाममात्र करिये लिखन ।
कहिते ना पारि तार यथा अनुक्रम ॥५
पूर्व्ववत पथे याइते ये पाय दर्शन ।
येइ ग्रामे रहे सेइ ग्रामेर यत जन ॥६
सबेइ वैष्णव हय कहे "कृष्ण" "हरि" ।
अन्य ग्राम निस्तारये सब वैष्णव करि ॥७
दक्षिण देशेर लोक अनेक प्रकार ।
केह कर्म्मी, केह ज्ञानी, पाषण्डि अपार ॥८
सेइ सब लोक प्रभुर दर्शन प्रभावे ।
निज निज मत छाड़ि हइला वैष्णवे ॥९
वैष्णवेर मध्ये राम उपासक सब ।
केह तत्त्ववादी, केह हय श्रीवैष्णव ॥१०
से सब वैष्णव महाप्रभुर दर्शने ।
कृष्ण-उपासक हैञा लय कृष्णनामे ॥११

तथाहि—

राम राघव राम राघव राम राघव रक्ष माम् ।
कृष्ण केशव कृष्ण केशव कृष्ण केशव पाहि माम् ।२

राम राघव राम राघव राम राघव मेरी रक्षा करें । कृष्ण केशव कृष्ण केशव कृष्ण केशव मेरी रक्षा करें ॥२॥

एइ श्लोक पथे पड़ि करिल प्रयाण ।
गौतमी गङ्गाते याइ कैल ताँहा स्नान ॥१२
मल्लिकार्ज्जुन तीर्थे याइ महेश देखिल ।
ताँहा सब लोके कृष्णनाम लइयाइल ॥१३
रामदास महादेव करिल दर्शन ।
अहोबल नृसिंहेरे करिल गमन ॥१४
नृसिंह देखिया ताँरे कैल नति स्तुति ।
सिद्धवट गेला याँहा श्रीसीतापति ॥१५
रघुनाथ देखि कैल प्रणति स्तवन ।
ताँहा एक विप्र ताँरे कैल निमन्त्रण ॥१६
सेइ विप्र रामनाम निरन्तर लय ।

राम नाम बिना अन्य वचन ना कय ॥१७
सेइ दिन ताँर घरे रहिल भिक्षा करि ।
ताँरे कृपा करि आगे चलिला गौरहरि ॥१८
स्कन्दक्षेत्र तीर्थे कैल स्कन्द दरशन ।
त्रिमल्ल आइला ताँहा देखि त्रिविक्रम ॥१६
पुन सिद्धवट आइला सेइ विप्रघरे ।
सेइ विप्र कृष्णनाम लय निरन्तरे ॥२०
भिक्षा करि महाप्रभु तारे प्रश्न कैल ।
कह विप्र एइ तोमार कोन् दशा हैल ॥२१
पूर्व्वे तुमि निरन्तर कहिते रामनाम ।
एबे केन निरन्तर कह कृष्ण नाम ॥२२
विप्र कहे एइ तोमार दर्शन प्रभाव ।
तोमा देखि गेल मोर आजन्म स्वभाव ॥२३
बाल्यावधि रामनाम ग्रहण आमार ।
तोमा देखि कृष्णनाम आइल एक बार ॥२४
सेइ हैते कृष्णनाम जिह्वाते बसिल ।
कृष्णनाम स्फुरे रामनाम दूरे गेल ॥२५
बाल्यकाल हैते मोर स्वभाव एक हय ।
नामेर महिमा शास्त्र करिये सञ्चय ॥२६

तथाहि पद्मपुराणे श्रीरामचन्द्रस्य सहस्रनामस्तोत्रे अष्टमश्लोकः—

रमन्ते योगिनोऽनन्ते सत्यानन्दे चिदात्मनि ।
इति रामपदेनासौ परं ब्रह्माभिधीयते ॥३॥

टीका—यस्मात् योगिनः सत्यानन्दे चिदात्मनि ईश्वरे रमन्ते क्रीड़न्ते इति तस्माद्धेतोः रामपदेन असौ पर ब्रह्म अभिधीयते कथ्यते ।३॥

योगिवृन्द सच्चिदानन्द अनन्त ईश्वर का ध्यान कर आनन्दितः होते हैं, अतः राम शब्द से परमात्मा का बोध होता है ॥३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते षष्ठस्कन्धे नवमाध्याये त्रिचत्वारिंश-श्लोके श्रीधरगोस्वामिकृत टीकायां धृतो महाभारते उद्योगपर्व्वणि (७१।४)—

कृषिर्भू वाचकः शब्दो णश्च निर्वृ तिवाचकः ।
तयोरैक्यं परं ब्रह्म कृष्ण इत्यभिधीयते ॥४॥

टीका—कृषि: कृष्धातुः भूवाचकः, णश्च णप्रत्ययश्च निर्वृ तिवाचकः, तयोः उभयोः ऐक्यं परं ब्रह्म कृष्ण इति अभिधीयते ॥४॥

कृष् धातु भू वाचक–अर्थात् सत्ता वाचक है एवं 'ण' प्रत्यय निर्वृ ति अर्थात् आनन्द वाचक है उभय के संयोग से परब्रह्म कृष्ण पद निष्पन्न हुआ है ॥४॥

परं ब्रह्म दुइ नाम समान इहल ।
पुन आर शास्त्रे किछु विशेष पाइल ॥२७

तथाहि पद्मपुराणे श्रीरामचन्द्रस्य शतनामस्तोत्रे(४)

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्रनामभिस्तुल्यं रामनाम वरानने ॥५॥

टीका—हे वरानने ! हे शोभन-वदने ! हे रमे ! हे रमणीये ! हे रामे ! हे मनोहारिणि ! हे मनोरमे ! राम रामेति रामेति रामनाम सहस्रनामभिः तुल्यम् ॥५॥

पद्म पुराण के श्रीरामचन्द्र के सहस्र नाम स्तोत्र में लिखित है - हे वरानने ! हे पार्वति ! तीन बार रामनाम उच्चारण करने से सहस्र नामोच्चारण का फल लाभ होता है ॥५॥

तथाहि हरिभक्तिविलासे एकादशविलासे (१८५)—

सहस्रनाम्नां पुण्यानां त्रिरावृत्त्या तु यत फलम् ।
एकावृत्त्या तु कृष्णस्य नामैकं तत प्रयच्छति ॥६॥

टीका—पुण्यानां पातक हारिणां सहस्रनाम्नां त्रिरावृत्त्या वारत्रयोच्चारणेन तु यत फलं स्यात कृष्णस्य नामैकं एकावृत्त्या तु तत फलं प्रयच्छति ददाति ॥६॥

हरिभक्ति विलास के एकादश विलास में उक्त है

पापहारी सहस्रनाम का पाठ तीन बार करने से जो फल होता है, कृष्ण नाम का उच्चारण एक बार करने से ही वह फल होना है ।।६।।

एइ वाक्ये कृष्णनामेर महिमा अपार ।
तथापि लइते नारि शुन हेतु तार ।।२८
इष्टदेव राम, ताँर नामे सुख पाइ ।
सुख पाञा सेइ नाम रात्रि दिने गाइ ।।२९
तोमार दर्शने यबे कृष्णनाम आइल ।
ताँहार महिमा एइ मनेते लागिल ।।३०
सेइ कृष्ण तुमि साक्षात् इहा निर्द्धारिल ।
एत कहि विप्र प्रभुर चरणे पड़िल ।।३१
तारे कृपा करि प्रभु चलिला आर दिने ।
वृद्धकाशी आसि कैल शिव-दरशने ।।३२
ताँहा हैते चलि आगे गेला एकग्राम ।
ब्राह्मणसमाजे ताँहा करिला विश्राम ।।३३
प्रभुर प्रभावे लोक आइल दर्शने ।
लक्षार्व्वुद लोक आइसे नाहिक गणने ।।३४
गोसाञिर सौन्दर्य्य देखि ताते प्रेमावेश ।
सबे कृष्ण कहे, वैष्णव हैल सब देश ।।३५
तार्किक मीमांसक मायावादिगण ।
सांख्य पातञ्जल स्मृति पुराण आगम ।।३६
निज निज शास्त्र सभे उद्ग्राहे प्रचण्ड ।
सर्व्वमत दूषि प्रभु करे खण्ड खण्ड ।।३७
सर्व्वत्र स्थापये प्रभु वैष्णव सिद्धान्ते ।
प्रभुर सिद्धान्त केह ना पारे खण्डिते ।।३८
हारि हारि प्रभुमते करेन प्रवेश ।
एइमत वैष्णव प्रभु कैला दक्षिण देश ।।३९
पाषण्डिर गण आइल पाण्डित्य शुनिञा ।
गर्व्व करि आइल सङ्गे शिष्यगण लञा ।।४०
बौद्धाचार्य्य महापण्डित निज नवमते ।
प्रभु आगे उद्ग्राह करि लागिला कहिते ।।४१
यद्यपि असम्भाष्य बौद्ध अयुक्त देखिते ।
तथापि बलिला प्रभु गर्व्व खण्डाइते ।।४२
तर्कप्रधान बौद्धशास्त्र नवमते ।
तर्केइ खण्डिल प्रभु ना पारे स्थापिते ।।४३
बौद्धाचार्य्य नव नव प्रश्न उठाइल ।
दृढ़युक्ति तर्के प्रभु खण्ड खण्ड कैल ।।४४
दार्शनिक पण्डित सभाय पाइल पराजय ।
लोके हास्य करे बौद्धेर हैल लज्जा भय ।।४५
प्रभुके वैष्णव जानि बौद्ध घर गेला ।
सर्व्व बौद्ध मिलि तबे कुमन्त्रणा कैला ।।४६
अपवित्र अन्न एक थालिते करिया ।
प्रभु आगे आनिल विष्णुप्रसाद बलिया ।।४७
हेन काले महाकाय एक पक्षी आइल ।
ठोँटे करि अन्न सह थालि लैञा गेल ।।४८
बौद्धगणेर उपर अन्न पड़े अमेध्य हइया ।
बौद्धाचार्य्येर माथाय थालि पड़िल बाजिया।४९
तेरछे पड़िल थालि माथा काटा गेल ।
मूर्च्छित हैया आचार्य्य भूमिते पड़िल ।।५०
हाहाकार करि कान्दे सब शिष्यगण ।
सबे आसि प्रभुपदे लइल शरण ।।५१
तुमिह ईश्वर साक्षात् क्षम अपराध ।
जीयाह आमार गुरु करह प्रसाद ।।५२
प्रभु कहे सबे कह कृष्ण कृष्ण हरि ।
गुरुकर्णे कह कृष्णनाम उच्च करि ।।५३
तोमा सबार गुरु तबे पाइबे चेतन ।
सर्व्व बौद्ध मिलि करे कृष्णसङ्कीर्त्तन ।।५४

गुरुकर्णे कहे कह कृष्ण राम हरि।
चेतन पाइल आचार्य्य उठे हरि बलि ॥५५

कृष्ण कहि आचार्य्य प्रभुके करये विनय।
देखिया सकल लोक पाइल विस्मय ॥५६

एइमत कौतुक करि शचीर नन्दन।
अन्तर्द्धान कैल केह ना पाय दर्शन ॥५७

महाप्रभु चलि आइला त्रिपदी त्रिमल्ले।
चतुर्भुज विष्णु देखि गेला वेङ्कटारे ॥५८

त्रिपदी आसिया कैल श्रीरामदर्शन।
रघुनाथ-आगे कैल प्रणाम स्तवन ॥५९

स्वप्रभावे लोक सब कराञा विस्मय।
पाना नरसिंहे आइला प्रभु दयामय ॥६०

नृसिंहे प्रणति स्तुति प्रेमावेशे कैल।
प्रभुर प्रभावे लोक चमत्कार हैल ॥६१

शिवकाञ्ची आसि कैल शिव दरशन।
प्रभाते वैष्णव कैल सब शैवगण ॥६२

विष्णुकाञ्ची आसि देखिल लक्ष्मीनारायण।
प्रणाम करिया कैल बहुत स्तवन ॥६३

प्रेमावेशे नृत्य गीत बहुत करिल।
दिन दुइ रहि लोके कृष्णभक्त कैल ॥६४

त्रिमल्ल देखि गेला त्रिकाल-हस्ती स्थान।
महादेव देखि ताँरे करिला प्रणाम ॥६५

पक्षितीर्थ याइ कैल शिव दरशन।
वृद्धकोल-तीर्थ तबे करिल गमन ॥६६

श्वेतवराह देखि ताँरे नमस्कार करि।
पीताम्बर-शिव-स्थाने गेला गौरहरि ॥६७

शियाली-भैरवी देवी करिल दर्शन।
कावेरीर तीरे आइला शचीर नन्दन ॥६८

गोसमाज-शिव देखि आइला वेदावन।
महादेव देखि ताँरे करिला वन्दन ॥६९

अमृतलिङ्ग-शिव आसि दर्शन करिल।
सब शिवालये शैव वैष्णव करिल ॥७०

देवस्थाने आसि कैल विष्णुदरशन।
श्रीवैष्णवगण सने गोष्ठी अनुक्षण ॥७१

कुम्भकर्ण-कपालेर देखि सरोवर।
शिवक्षेत्रे आसि शिव देखे तेजायर ॥७२

पापनाशने विष्णु करि दरशन।
श्रीरङ्गक्षेत्रे तबे कैल आगमन ॥७३

कावेरीते स्नान करि देखि रङ्गनाथ।
स्तुति प्रणति करि मानिल कृतार्थ ॥७४

प्रेमावेशे कैल बहु गान नर्त्तन।
देखि चमत्कार हैल सर्व्वलोकेर मन ॥७५

श्रीवैष्णव एक वेङ्कटभट्ट नाम।
प्रभुरे निमन्त्रण कैल करिया सम्मान ॥७६

निज घरे लैञा कैल पादप्रक्षालन।
सेइ जल सवंशेते करिल भक्षण ॥७७

भिक्षा कराइया किछु कैल निवेदन।
चातुर्म्मास्य आसि प्रभु हैल उपसन्न ॥७८

"चातुर्म्मास्य कृपा करि रह मोर घरे।
कृष्णकथा कहि कृपाय निस्तार आमारे॥" ७९

तार घरे रहिला प्रभु कृष्णकथारसे।
भट्ट सङ्गे गोङाइला सुखे चारि मासे ॥८०

कावेरीते स्नान करि श्रीरङ्ग दर्शन।
प्रतिदिन प्रेमावेशे करेन नर्त्तन ॥८१

सौन्दर्य्य प्रेमावेश देखि सर्व्व लोक।
देखिवारे आइसे सबार खण्डे दुःख शोक ॥८२

लक्ष लक्ष लोक आइसे नाना देश हैते ।
सबे कृष्णनाम कहे प्रभुरे देखिते ॥८३
कृष्णनाम विने केह नाहि बोले आर ।
सबे कृष्णभक्त हैल लोके चमत्कार ॥८४
श्रीरङ्गक्षेत्रे वैसे यतेक ब्राह्मण ।
एक एक दिन सबे कैल निमन्त्रण ॥८५
एक एक दिने चातुर्म्मास्य पूर्ण इहल ।
कतक ब्राह्मण भिक्षार दिन ना पाइल ॥८६
सेइ क्षेत्रे रहे एक वैष्णव ब्राह्मण ।
देवालये वसि करे गीता आवर्त्तन ॥८७
अष्टादशाध्याय पड़े आनन्द आवेशे ।
अशुद्ध पड़ेन, लोके करे उपहासे ॥८८
केह हासे केह निन्दे ताहा नाहि माने ।
आविष्ट हैञा गीता पड़े आनन्दितमने ॥८९
पुलकाश्रु कम्प स्वेद यावत् पठन ।
देखि आनन्दित हैल महाप्रभुर मन ॥९०
महाप्रभु पुछिला तारे शुन महाशय ।
कोन् अर्थ जानि तोमार एत सुख हय ॥९१
विप्र कहे मूर्ख आमि शब्दार्थ ना जानि ।
शुद्धाशुद्ध गीता पड़ि गुरु-आज्ञा मानि ॥९२
अर्ज्जुनेर रथे कृष्ण हय रज्जुधर ।
बसियाछे हाते तोत्र श्यामल सुन्दर ॥९३
अर्ज्जुने कहिते आछेन हित उपदेश ।
ताहा देखि हय मोर आनन्द आवेश ॥९४
यावत् पड़ों तावत् पाङ ताँहार दरशन ।
एइ लागि गीतापाठ ना छाड़े मोर मन ॥९५
प्रभु कहे गीता पाठे तोमारि अधिकार ।
तुमि से जानह एइ गीतार अर्थ सार ॥९६

एत बलि सेइ विप्रे कैल आलिङ्गन ।
प्रभुर पाद धरि विप्र करेन स्तवन ॥९७
तोमा देखि ताँहा हइते द्विगुण सुख हय ।
सेइ कृष्ण तुमि हेन मोर मने लय ॥९८
कृष्णस्फूर्त्त्ये ताँर मन इहयाछे निर्म्मल ।
अतएव प्रभुर तत्त्व जानिला सकल ॥९९
तबे महाप्रभु ताँरे कराइल शिक्षण ।
एइ बात काँहा ना करिबे प्रकाशन ॥१००
सेइ विप्र महाप्रभुर महाभक्त हैल ।
चारि मास प्रभुर सङ्ग कभु ना छाड़िल १०१
एइमत भट्ट सेवे लक्ष्मीनारायण ।
ताँर भक्तिनिष्ठा देखि प्रभुर तुष्ट मन ॥१०२
निरन्तर ताँर सङ्गे हैल सख्यभाव ।
हास्य परिहास दुँहे सख्येर स्वभाव ॥१०३
प्रभु कहे भट्ट तोमार लक्ष्मी ठाकुराणी ।
कान्तवक्षः स्थिता पतिव्रताशिरोमणि ॥१०४
आमार ठाकुर कृष्ण गोप गोचारण ।
साध्वी हैञा केने चाहे ताँहार सङ्गम ॥१०५
एइ लागि सुखभोग छाड़ि चिरकाल ।
व्रत नियम करि तप करिला अपार ॥१०६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१६।३६)—

श्रीकृष्णं प्रति नागपत्नीवाक्यम्—

कस्यानुभावोऽस्य न देव विद्महे
तवाङ्घ्रिरेणुस्परशाधिकारः ।
यद्वाञ्छया श्रीर्ललनाचरत्तपो
विहाय कामान् सुचिरं धृतव्रता ॥७॥

श्रीमद् भागवत के दशम स्कन्ध १६-३६ में लिखित है – आप की कृपा ही कालिय के भाग्योदय का एक मात्र कारण है, किन्तु तपः प्रभृति कारण नहीं हैं। कारण, तपः प्रभृति के द्वारा ब्रह्मा प्रभृति

भी जिनकी प्रसन्नता को चाहते रहते हैं, यह ललना लक्ष्मी भी उन चरणार विन्द की स्पर्शेच्छा से तपः करती रहती हैं। इस सर्पने शुभ कर्माचरण क्या किया था, कौन जानता है ?॥७॥

भट्ट कहे कृष्ण नारायण एकइ स्वरूप।
कृष्णेते अधिक लीला वैदग्ध्यादि रूप ॥१०७
ताँर स्पर्शे नाहि याय पतिव्रता धर्म्म।
कौतुके लक्ष्मी चाहेन कृष्णेर सङ्गम ॥१०८

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे द्वितीय-साधनभक्तिलहर्य्यां (७२)—

श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

सिद्धान्ततस्त्वभेदेऽपि श्रीशकृष्णस्वरूपयोः।
रसेनोत्कृष्यते कृष्णरूपमेषा रसस्थितिः॥८॥

टीका—श्रीशकृष्णस्वरूपयोः नारायण-व्रजेन्द्र-सुतरूपयोः सिद्धान्तत अभेदेऽपि सति कृष्णरूपं रसेन शान्तादिरसबाहुल्यहेतुना उत्कृष्यते। एषा रसस्थितिः रसपर्य्याप्तिः स्यात् ॥८॥

श्रीरूप गोस्वामिपादोक्त भक्तिरसामृतसिन्धु में लिखित है—नारायण एवं कृष्ण रूप में स्वरूपतः अभिन्नता होने पर भी शान्तादि रस बाहुल्य होने के कारण—कृष्ण रूप का ही उत्कर्ष है, कारण, इस रूप में ही अखिल रस की पर्य्याप्ति है।

अर्थात् कृष्ण एवं नारायण एक तत्त्व है, किन्तु केबल मात्र कृष्ण में ही लीला वैदग्ध अधिक परिमाण में दृष्ट होता है। सुतरां लक्ष्मी नारायण की पत्नी होकर श्रीकृष्ण की चरणरेणु की स्पर्शा-भिलाषिणी होने से पातिव्रत्यधर्म में दोष नहीं होता है ॥८॥

कृष्णसङ्गे पतिव्रताधर्म्म नहे नाश।
अधिक लाभ पाइये इँहा रासविलास ॥१०९
विनोदिनी लक्ष्मीर हये कृष्णे अभिलाष।
इहाते कि दोष, केने कर परिहास ॥११०

प्रभु कहे दोष नाहि इहा आमि जानि।
रास ना पाइला लक्ष्मी इहा शास्त्रे शुनि ॥१११

तथाहि श्रीमद्भागवते—(१०।४७।६०)—

गोपीः प्रति उद्धववाक्यम्—

नायं श्रियोऽङ्ग उ नितान्तरतेः प्रसादः
स्वर्योषितां नलिनगन्धरुचां कुतोऽन्याः।
रासोत्सवेऽस्य भुजदण्डगृहीतकण्ठ-
लब्धाशिषां य उदगाद्व्रजसुन्दरीणाम् ॥९॥

श्रीमद्भागवत के १०।४७।६० में उक्त है—

गोपीवृन्द के प्रति अत्यन्त अपूर्व प्रसाद श्रीभगवान् का है। वक्षःस्थित लक्ष्मी के पक्ष में भी यह प्रसाद नहीं हुआ है, सुतरां कमल गन्धि एवं कमल वर्ण स्वर्गस्थ रमणीवृन्द का प्रसङ्ग तो दूर है। इससे अपर स्त्रीओं की कथा तो उठ ही नहीं सकती है। यह प्रसाद—रासोत्सव में भुज दण्ड के द्वारा गृहीत कण्ठ गोपियों के पक्ष में ही उदित हुआ था ॥९॥

तथाहि श्रीमद्भागवते १०।८७।१९)—

निभृतमरुन्मनोऽक्षदृढ़योगयुजो हृदि
यन्मुनय उपासते तदरयोऽपि ययुः स्मरणात्।
स्त्रिय उरगेन्द्रभोगभुजदण्डविषक्तधियो
वयमपि ते समाः समदृशोऽङ्घ्रिसरोजसुधाः॥१०॥

श्रीमद्भागवत के १०।८७।२३ में उक्त है—

आप का स्मरणानुभाव इस प्रकार ही विचित्र है—योगिगण जिस तत्त्व का ध्यान हृदय में करते हैं, हम सब श्रुति गण जिस तत्त्व को सम अर्थात् अपरिच्छिन्न रूप में देखते है, एवं स्त्री गण कामावेश से परिच्छिन्न रूप में ध्यान करती हैं, शत्रु वृन्द द्वेष भाव से ध्यान कर उसी को प्राप्त करते हैं ॥१०॥

श्रुति पाय लक्ष्मी ना पाय इथे कि कारण।
भट्ट कहे इँहा प्रवेशिते नारे मोर मन ॥११२
आमि जीव क्षुद्रबुद्धि सहजे अस्थिर।
ईश्वरेर लीला कोटि समुद्रगम्भीर ॥११३

तुमि साक्षात सेइ कृष्ण जान निज कर्म्म ।
यारे जानाह सेइ जाने तोमार लीलामर्म्म ॥११४

प्रभु कहे कृष्णेर एक स्वभाव विलक्षण ।
स्वमाधुर्य्ये करे सदा सर्व्व आकर्षण ॥११५

व्रजलोकेर भावे पाइ ताँहार चरण ।
ताँरे ईश्वर करि नाहि जाने व्रजजन ॥११६

केह ताँरे पुत्रज्ञाने उदूखले बान्धे ।
केह सखा-ज्ञाने जिनि चड़े ताँर कान्धे ॥११७

व्रजेन्द्रनन्दन ताँरे जाने व्रजजन ।
ऐश्वर्य्य-ज्ञाने नाहि सम्बन्ध मानन ॥११८

व्रजलोकेर भावे येइ करये भजन ।
सेइ जन पाय व्रजे व्रजेन्द्रनन्दन ॥११९

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।९।२१)--
परीक्षितं प्रति श्रीशुकवाक्यम्—

नायं सुखापो भगवान् देहिनां गोपिकासुतः ।
ज्ञानिनां चात्मभूतानां यथाभक्तिमतामिह ॥११

श्रीमद् भागवत के १०।९।२१ में लिखित है- यशोदानन्दन भगवान् भक्तिमान् व्यक्ति वृन्द के पक्ष में जिस प्रकार सुखलभ्य हैं, आत्मज्ञान सम्पन्न ज्ञानि वृन्द के पक्ष में उस प्रकार सुखलभ्य नहीं हैं । अर्थात् गोपिका देह व्यतीत श्रीकृष्ण सङ्गलाभ सम्भव नहीं होता है, श्रुतिगणोंने भी गोपिका के आनुगत्य से ही उनकी प्राप्त करने की इच्छा व्यक्त की ही है। कारण, लक्ष्मी गोपी आनुगत्य के विना ही यथावस्थित देह में श्रीकृष्ण सङ्गलाभ के निमित्त तपस्या करके भी वञ्चित हुई थीं ॥११॥

श्रुति सब गोपी सबेर अनुगत हैञा ।
व्रजेश्वरीसुत भजे गोपीभाव लैञा ॥१२०

व्यूहान्तरे गोपीदेह व्रजे यबे पाइल ।
सेइ देहे कृष्णसङ्गे रासक्रीड़ा कैल ॥१२१

गोपजाति कृष्ण गोपी प्रेयसी ताँहार ।
देवी वा अन्य स्त्री कृष्ण ना करे अङ्गीकार ॥१२२

लक्ष्मी चाहे सेइ देहे कृष्णेर सङ्गम ।
गोपिका-अनुगा हैञा ना कैल भजन ॥१२३

अन्य देहे ना पाइये रासविलास ।
अतएव "नायं श्लोके" कहे वेदव्यास ॥१२४

पूर्व्वे भट्टेर मने एक छिल अभिमान ।
श्रीनारायण हयेन स्वयं भगवान् ॥१२५

ताँहार भजन सर्व्वोपरि कक्षा हय ।
श्रीवैष्णवभजन एइ सर्व्वोपरि हय ॥१२६

एइ तार गर्व्व प्रभु करिते खण्डन ।
परिहासद्वारे उठाय एतेक वचन ॥१२७

प्रभु कहे भट्ट तुमि ना कर संशय ।
स्वयं भगवान् कृष्णेर एइ स्वभाव हय ॥१२८

कृष्णेर विलासमूर्त्ति श्रीनारायण ।
अतएव लक्ष्मी आदिर हरे तेँह मन ॥१२९

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।३।२८)—
शौनकादीन् प्रति सूतवाक्यम्—

एते चांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् ।
इन्द्रारिव्याकुलं लोकं मृड़यन्ति युगे युगे ॥१२॥

श्रीमद् भागवत के १।३।२८ में सूत शौनक को कहे थे—अवतार प्रसङ्ग जिन जिन का नामोल्लेख हुआ है, वे सब आदि पुरुष कारणंव शायी के अंश एवं कलास्वरूप शक्ति सम्पन्न हैं, असुर वृन्द के द्वारा प्रपीड़ित महीमण्डल में शान्ति स्थापन हेतु वे सब समय पर आविर्भूत होते रहते हैं । किन्तु कृष्ण स्वयं भगवान् हैं ॥१२॥

नारायण हैते कृष्णेर असाधारण गुण ।
अतएव लक्ष्मीर कृष्णे तृष्णा अनुक्षण ॥१३०

तुमि ये पड़िले श्लोक सेइ परमाण ।
सेइ श्लोके आइसे कृष्ण स्वयं भगवान् ॥१३१

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे द्वितीय साधनभक्तिलहर्य्यां (३२)—

श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

सिद्धान्ततस्त्वभेदेऽपि श्रीशकृष्णस्वरूपयोः ।
रसेनोत्कृष्यते कृष्णरूपमेषा रसस्थितिः ॥१३

वैकुण्ठाधिपति नारायण एवं कृष्ण स्वरूपतः अभिन्न होने पर भी अखिल रसामृतमूर्त्ति होने के कारण नारायण रूप से कृष्ण रूप का उत्कर्ष है ॥१३

स्वयं भगवत्त्वे कृष्ण हरे लक्ष्मीर मन ।
गोपिकार मन हरिते नारे नारायण ॥१३२
नारायणेर का कथा श्रीकृष्ण आपने ।
गोपिकारे हास्य करिते हय नारायणे ॥१३३
चतुर्भुजमूर्त्ति देखाय गोपीगण-आगे ।
सेइ कृष्णे गोपिकार नहे अनुरागे ॥१३४

तथाहि ललितमाधवे (६।१४)—

गोपीनां पशुपेन्द्रनन्दनजुषो भावस्य कस्तां कृती-
विज्ञातुं क्षमते दुरूहपदवीसञ्चारिणः प्रक्रियाम् ।
आविष्कुर्व्वति वैष्णवीमपि तनुं तस्मिन्भुजैर्जिष्णुभि
र्यासां हन्त चतुर्भिरद्भुतरुचिं रागोदयः कुञ्चति ।१४

ललित माधव में उक्त है—

व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण के प्रति गोपीवृन्द का जो भाव है, वह दुरूह पदवी पर अधिष्ठित है, सुतरां उसको विचार पूर्वक अवगत होना असम्भव है, कारण, समय विशेष में श्रीकृष्ण मनोहर चतुर्भुज धारी विष्णु मूर्त्ति को उन सब के सामने प्रकट करने पर गोपीओं का उनके प्रति भावोदय कुञ्चित होता है, अतएव गोपिवृन्द के समक्ष में चतुर्भुज मूर्त्ति में अधिक समय रहना श्रीकृष्ण के पक्ष में भी असम्भव है ॥१४॥

एत कहि प्रभु तार गर्व्व चूर्ण करिया ।
तारे सुख दिते कहे सिद्धान्त फिराइया ॥१३५

दुःख ना मानिह भट्ट कैनु परिहास ।
शास्त्रसिद्धान्त शुन याते वैष्णवविश्वास ॥१३६
कृष्ण नारायण यैछे एकइ स्वरूप ।
गोपी लक्ष्मी भेद नाहि हय एकरूप ॥१३७
गोपीद्वारे लक्ष्मी करे कृष्णसङ्गास्वाद ।
ईश्वरत्वे भेद मानिले हय अपराध ॥१३८
एकइ ईश्वर भक्तेर ध्यान-अनुरूप ।
एकइ विग्रहे करे नानाकार रूप ॥१३९

तथाहि लघुभागवतामृते परावस्थाप्रकरणे १४७

अङ्कधृत नारदपञ्चरात्रवचनम्—

मणिर्यथा विभागेन नीलपीतादिभिर्युतः ।
रूपभेदमवाप्नोति ध्यानभेदात्तथाच्युतः ॥१५॥

टीका—यथा मणिः इन्द्रमणिः सूर्य्यमणिरिति विभागेन पृथक् पृथक् प्रकारेण नीलपीतादिभिः विविधवर्ण्यैः युतः स्यात्, अच्युतः तथा ध्यानभेदात् आराधनाभेदेन रूपभेदं विविधरूपत्वं अवाप्नोति लभते ॥१५॥

जिस प्रकार एक ही मणि आधारादि विशेष से नील पीतादि विविध वर्ण रञ्जित होकर भिन्न भिन्न रूप से प्रतीयमान होती है, उसी प्रकार आराधना के भेद से भगवान् अच्युत भी विविध चित्त में विविध रूप से प्रतिभात होते हैं ॥१५॥

भट्ट कहे काँहा मुञि जीव पामर ।
काँहा तुमि सेइ कृष्ण साक्षात् ईश्वर ॥१४०
अगाध ईश्वरलीला किछु नाहि जानि ।
तुमि येइ कह सेइ सत्य करि मानि ॥१४१
मोरे पूर्ण कृपा कैल लक्ष्मीनारायण ।
ताँर कृपाय पाइनु तोमार चरणदर्शन ॥१४२
कृपा करि कहिले मोरे कृष्णेर महिमा ।
यार रूप गुणैश्वर्य्येर केह ना पाय सीमा ॥१४३

एवे से जानिनु कृष्णभक्ति सर्व्वोपरि ।
कृतार्थ करिले प्रभु मोरे कृपा करि ॥१४४
एत बलि भट्ट पड़े प्रभुर चरणे ।
कृपा करि प्रभु तारे दिल आलिङ्गने ॥१४५
चातुर्म्मास्य पूर्ण हैल भट्टेर आज्ञा लैञा ।
दक्षिण चलिला प्रभु श्रीरङ्ग देखिञा ॥१४६
सङ्गेते चलिला भट्ट ना याय भवने ।
तारे विदाय दिल प्रभु अनेक यतने ॥१४७
प्रभुर विच्छेदे भट्ट हैला अचेतन ।
एइ रङ्गलीला करे श्रीशचीनन्दन ॥१४८
ऋषभ पर्व्वत चलि आइला गौरहरि ।
नारायण देखि ताँहा स्तुति नति करि ॥१४९
परमानन्द पुरी ताँहा रहे चतुर्म्मास ।
शुनि महाप्रभु गेला पुरी गोसाञिपाश ॥१५०
पुरी गोसाञिर प्रभु कैल चरणवन्दन ।
प्रेमे पुरी गोसाञि ताँरे कैल आलिङ्गन ।१५१
तिन दिन प्रेमे दुँहे कृष्णकथारङ्गे ।
सेइ विप्रघरे दुँहे रहे एक सङ्गे ॥१५२
पुरी गोसाञि कहे आमि याव पुरुषोत्तमे ।
पुरुषोत्तम देखि गौड़ याव गङ्गास्नाने ॥१५३
प्रभु कहे तुमि पुन आइस नीलाचले ।
आमि सेतुबन्ध हैते आसिब अल्पकाले ॥१५४
तोमार निकटे रहि हेन वाञ्छा हय ।
नीलाचले आसिबे मोरे हइया सदय ॥१५५
एत बलि ताँर ठाञि एइ आज्ञा लञा ।
दक्षिण चलिला प्रभु हरषित हञा ॥१५६
परमानन्दपुरी तबे चलिला नीलाचले ।
महाप्रभु चलि तबे आइला श्रीशैले ॥१५७
शिवदुर्गा रहे ताँहा ब्राह्मणेर वेशे ।
महाप्रभु देखि दुँहार हैल उल्लासे ॥१५८
तिन दिन भिक्षा दिल करि निमन्त्रण ।
निभृते बसि गुप्त कथा कहे दुइ जन ॥१५९
ताँर सने महाप्रभु करि इष्टगोष्ठी ।
तार आज्ञा लैञा आइला पुरी कामकोष्ठी १६०
दक्षिण मथुरा आइला कामकोष्ठी हैते ।
ताँहा देखा हैल एक ब्राह्मण सहिते ॥१६
सेइ विप्र महाप्रभुर कैल निमन्त्रण ।
रामभक्त सेइ विप्र विरक्त महाजन ॥१६२
कृतमालाय स्नान करि आइला तार घरे ।
भिक्षा कि दिवेक, विप्र पाक नाहि करे ॥१६३
महाप्रभु कहे तारे, शुन महाशय ।
मध्याह्न हइल केने पाक नाहि हय ॥१६४
विप्र कहे, प्रभु मोर अरण्ये वसति ।
पाकेर मामग्री वने ना मिले सम्प्रति ॥१६५
वन्य फल मूल शाक आनिबे लक्ष्मण ।
तबे सीता करिवेन पाक प्रयोजन ॥१६६
तार उपासना जानि प्रभु तुष्ट हैला ।
आस्ते व्यस्ते सेइ विप्र रन्धन करिला ॥१६७
प्रभु भिक्षा कैल दिन तृतीय प्रहरे ।
अनिर्व्विण्ण सेइ विप्र उपवास करे ॥१६८
प्रभु कहे, विप्र काहे कर उपवास ।
केने एत दुःखे तुमि करह हुताश ॥१६९
विप्र कहे, जीवने मोर नाहि प्रयोजन ।
अग्नि जले प्रवेशिया छाड़िब जीवन ॥१७०
जगन्माता महालक्ष्मी सीता ठाकुराणी ।
राक्षसे स्पर्शिल ताँरे इहा कर्णे शुनि ॥१७१
ए शरीर धरिबारे कभु ना युयाय ।

एइ दुःखे ज्वले देह प्राण नाहि याय ॥१७२
प्रभु कहे, ए भावना ना करिह आर ।
पण्डित हइया केने ना कर विचार ॥१७३
ईश्वर-प्रेयसी सीता चिदानन्दमूर्त्ति ।
प्राकृत इन्द्रिय ताँरे देखिते नाहि शक्ति ॥१७४
स्पर्शिबार कार्य्य आछुक ना पाय दर्शन ।
सीतार आकृति माया हरिल रावण ॥१७५
रावण आसिते सीता अन्तर्द्धान कैल ।
रावणेर आगे माया-सीता पाठाइल ॥१७६
अप्राकृत वस्तु नहे प्राकृत-गोचर ।
वेदपुराणेते एइ कहे निरन्तर ॥१७७

तथाहि कूर्म्मपुराणे—

सीतयाराधितो वह्निश्छायासीतामजीजनत् ।
तां जहार दशग्रीवः सीता वह्निपुरं गता ॥
परीक्षासमये वह्निं छायासीता विवेश सा ।
वह्निः सीतां समानीय तत्पुरस्तादनीनयत् ॥१६

टीका—वह्निः अनलः सीतया आराधितः सेवितः सन् छायासीतां मायासीतां अजीजनत् । दशग्रीवः दशस्कन्धः तां मायासीतां जहार हृतवान् । सीता प्रकृतसीता तु वह्निपुरं वह्नेर्धाम गता । परीक्षासमये दशाननविनाशान्ते सीतायाः परीक्षण-समये सा छायासीता वह्निं अग्नि विवेश । वह्निः अनलदेवस्तु तत्पुरस्तात् सीतां प्रकृतसीतां समानीय अनीनयत् राघवाय अर्पयामास ॥१६॥

कूर्म्म पुराण में उक्त है—सीता वह्नि की उपासना करने पर वह्नि मायासीता को प्रकट किये थे। दशानन-उस मायासीता को ही हरण किया था, सत्य सीता अग्नि लोक में सुरक्षिता थी, रावण बध के पश्चात् अग्नि परीक्षा ग्रहण समय में छाया-सीता अग्नि में प्रविष्ट होने पर वह्नि प्रकृत सीता को ले आकर राम चन्द्र को समर्पण किये थे ॥१६

विश्वास करह तुमि आमार वचने ।
पुनरपि कुभावना ना करिह मने ॥१७८
प्रभुर वचने विप्रेर हैल विश्वास ।
भोजन करिल हैल जीवनेर आश ॥१७९
तारे आश्वासिया प्रभु करिला गमन ।
कृतमालाय स्नान करि आइला दुर्व्वसन ॥१८०
दुर्व्वसने रघुनाथे करि दरशन ।
महेन्द्रशैले परशुरामे करिला वन्दन ॥१८१
सेतुबन्धे आसि कैल धनुस्तीर्थे स्नान ।
रामेश्वर देखि ताँहा करिला विश्राम ॥१८२
विप्रसभाय शुने ताँहा कूर्म्मपुराण ।
तार मध्ये आइल पतिव्रता-उपाख्यान ॥१८३
मायासीता निल रावण शुनिल व्याख्याने ।
शुनि महाप्रभु हैला आनन्दित मने ॥१८४
पतिव्रताशिरोमणि जनकनन्दिनी ।
जगतेर माता सीता श्रीरामगेहिनी ॥१८५
रावण देखि सीता लैल अग्निर शरण ।
रावण हैते अग्नि कैला सीता आवरण ॥१८६
सीता लैञा राखिलेन पार्व्वतीर स्थाने ।
मायासीता दिया अग्नि वञ्चिला रावणे ॥१८७
रघुनाथ आसि यबे रावण मारिल ।
अग्निपरीक्षा दिते यबे सीतारे आनिल ॥१८८
तबे माया सीता अग्नि करि अन्तर्द्धान ।
सत्य सीता आनि दिल राम विद्यमान ॥१८९
शुनिया प्रभुर आनन्दित हैल मन ।
रामदास विप्रेर कथा हइल स्मरण ॥१९०
ए सब सिद्धान्त शुनि प्रभुर आनन्द हैल ।
ब्राह्मणेर स्थाने मागि सेइ पत्र लैल ॥१९१

नूतन पत्र लिखिया पुस्तके राखाइल ।
प्रतीति लागि पुरातन पत्र मागि लैल ॥१९२
पत्र लञा पुन दक्षिण मथुरा आइला ।
रामदास विप्रे दिया दुःख खण्डाइला ॥१९३
पत्र पाञा विप्रेर हैल आनन्दित मन ।
प्रभुर चरण धरि करये क्रन्दन ॥१९४
विप्र कहे तुमि साक्षात् श्रीरघुनन्दन ।
सन्न्यासीर वेशे मोरे दिले दरशन ॥१९५
महा दुःख हैते मोरे करिले निस्तार ।
आजि मोर घरे भिक्षा कर अङ्गीकार ॥१९६
मनोदुःखे भाल भिक्षा ना दिलु से दिने ।
मोर भाग्ये पुनरपि पाइनु दर्शने ॥१९७
एत बलि सुखे विप्र शीघ्र पाक कैल ।
उत्तम प्रकारे प्रभुके भिक्षा कराइल ॥१९८

सेइ रात्रि ताँहा रहि तारे कृपा करि ।
पाण्ड्यदेशे ताम्रपर्णी आइला गौरहरि ॥१९९
ताँहा आसि स्नान करि ताम्रपर्णीतीरे ।
नय त्रिपदी देखि बुले कुतूहले ॥२००
चियड़ताला तीर्थे देखि श्रीरामलक्ष्मण ।
तिलकाञ्ची आसि कैल शिवदरशन ॥२०१
गजेन्द्रमोक्षण तीर्थे देखि विष्णुमूर्त्ति ।
पानागाड़ि तीर्थे आसि देखे सीतापति ॥२०२
चामतानूरे आसि देखे श्रीरामलक्ष्मण ।
श्रीवैकुण्ठे विष्णु आसि कैल दरशन ॥२०३
मलयपर्व्वते कैल अगस्त्यवन्दन ।
कन्याकुमारी ताँहा कैल दरशन ॥२०४
आमलकीतलाते राम देखि गौरहरि ।
मल्लार देशेते आइला याँहा भट्टमारी ॥२०५

तमाल-कार्त्तिक देखि आइला वेतापानी ।
रघुनाथ देखि ताँहा वञ्चिला रजनी ॥२०६
गोसाञिर सङ्गे रहे कृष्णदास ब्राह्मण ।
भट्टमारी सह ताँर हैल दरशन ॥२०७
स्त्रीधन देखाञा तार लोभ जन्माइल ।
आर्य्य सरल विप्रेर बुद्धिनाश कैल ॥२०८
प्राते उठि आइला विप्र भट्टमारी घरे ।
ताहार उद्देशे प्रभु आइला सत्वरे ॥२०९
आसिया कहिल सब भट्टमारीगणे ।
आमार ब्राह्मण तुमि राख कि कारणे ॥२१०
तुमिह सन्न्यासी, देख आमिह सन्न्यासी ।
आमार दुःख देह तुमि न्याय नाहि वासि २११
शुनि सब भट्टमारी उठे अस्त्र लञा ।
मारिबारे आइसे सब चारि दिशे धाञा २१२
तार अस्त्र तार अङ्गे पड़े हाते हैते ।
खण्ड खण्ड हैल भट्टमारी पलाय चारिभिते २१३
भट्टमारी-घरे महा उठिल क्रन्दन ।
केशे धरि विप्र लञा करिला गमन ॥२१४
सेइ दिने चलि आइला पयस्विनीतीरे ।
स्नान करि गेला आदिकेशवमन्दिरे ॥२१५
केशव देखिया प्रेमे आविष्ट हइला ।
नति स्तुति नृत्य गीत बहुत करिला ॥२१६
प्रेम देखि लोकेर हइल महा चमत्कार ।
सर्व्व लोक कैल प्रभुर परम सत्कार ॥२१७
महाभक्तगण सह ताँहा गोष्ठी हैल ।
ब्रह्मसंहिताध्याय ताँहाइ पाइल ॥२१८
पुँथी पाञा प्रभुर आनन्द अपार ।
कम्प अश्रु स्वेद स्तम्भ पुलक विकार ॥२१९

सिद्धान्तशास्त्र नाहि ब्रह्मसंहिता सम ।
गोविन्द-महिमा-ज्ञान परम कारण ॥२२०
अल्प अक्षरे कहे सिद्धान्त अपार ।
सकल वैष्णवशास्त्रमध्ये अति सार ॥२२१
बहु यत्ने सेइ पुँथी निल लेखाइया ।
अनन्तपद्मनाभ आइला हरसित हञा ॥२२२
दिन दुइ पद्मनाभेर करि दरशन ।
आनन्दे देखिते आइला श्रीजनार्द्दन ॥२२३
दिन दुइ ताँहा करि कीर्त्तन नर्त्तन ।
पयोष्णी आसिया देखे शङ्कर-नारायण ॥२२४
सिंहारिमठ आइला शङ्कराचार्य्य-स्थाने ।
मत्स्यतीर्थ देखि कैल तुङ्गभद्राय स्नाने २२५
मध्वाचार्य्य-स्थाने आइला याँहा तत्त्ववादी ।
उड़ूपकृष्ण देखि हैला प्रेमोन्मादी ॥२२६
नर्त्तक गोपालकृष्ण परममोहने ।
मध्वाचार्य्ये स्वप्न दिया आइला तार स्थाने
॥२२७
गोपीचन्दन-भितर आछिला डिङ्गाते ।
मध्वाचार्य्य ठाञि कृष्ण आइल कोनमते २२८
मध्वाचार्य्ये आनि तारे करिल स्थापन ।
अद्यापि तार सेबा करे तत्त्ववादिगण ॥२३०
कृष्ण मूर्त्ति देखि प्रभु महासुख पाइल ।
प्रेमावेशे नृत्य गीत बहुक्षण कैल ॥२३१
तत्त्ववादिगण प्रभुके मायावादिज्ञाने ।
प्रथम दर्शने प्रभुर ना कैल सम्भाषणे ॥२३२
पाछे प्रेमावेश देखि हैल चमतकार ।
वैष्णव ज्ञानेते बहु करिल सतकार ॥२३३
ता सबार अन्तरे गर्व्व जानि गौरचन्द्र ।
ता सबा सहित गो॰ी करिल आरम्भ ॥२
तत्त्ववादी आचार्य्य शास्त्रे परम प्रवीन ।
तारे प्रश्न कैल प्रभु हैञा येन दीन ॥२३
साध्य साधन आमि ना जानि भालमते ।
साध्यसाधन श्रेष्ठ जानाह आमाते ॥२३
आचार्य्य कहे वर्णाश्रमधर्म्म कृष्णे समर्पण ।
एइ हय कृष्णभक्तेर श्रेष्ठ साधन ॥२३
पञ्चविध मुक्ति पाञा वैकुण्ठगमन ।
साध्यश्रेष्ठ हय एइ शास्त्रनिरूपण ॥२३
प्रभु कहे, शास्त्रे कहे श्रवण कीर्त्तन ।
कृष्ण प्रेम सेवा परम फलेर साधन ॥२३

तथाहि श्रीमद्भागवते (७।५।२३)—

श्रवणं कीर्त्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम् ।
अर्च्चनं वन्दनं दास्य सख्यमात्मनिवेदनम् ॥१

तथाहि श्रीमद्भागवते (७.५।२४)—

इति पुंसार्पिता विष्णौ भक्तिश्चेन्नवलक्षणा ।
क्रियेत भगवत्यद्धा तन्मन्येऽधीतमुत्तमम् ॥१८

टीका—विष्णोः श्रवणं गुणलीलानामादिश्रुति, कीर्त्तनं, स्मरणं हृदि चिन्तनं, पादसेवनं, अर्च्चनं पूजा, वन्दनं, नमस्कारः, दास्यं कर्मार्पणं, सख्यं तद् विश्वासादि, आत्मनिवेदनं शरीरसमर्पणं, इति नव लक्षणा भक्तिः पुंसा जनेन चेत् यदि भगवति अद्धा विश्वासेन अर्पिता सती क्रियेत अनुष्ठीयेत, तत् उत्तम अधीतं मन्ये ॥१८॥

श्रीमद् भागवत के ७।५।२३।२४ में लिखित है—भगवान् के नाम गुण लीला प्रभृति का श्रवण कीर्त्तन, स्मरण चिन्तन, पाद सेवन, अर्चन, वन्दन, नमस्कार, दास्य, सख्य, आत्मनिवेदन-रूप नवधा भक्ति का अनुष्ठान मानव यदि आत्म समर्पण पूर्वक करता है तो वही उत्तम अध्ययन होता है ॥१७-१८॥

श्रवण कीर्त्तन हैते कृष्णे हय प्रेमा ।
सेइ परम पुरुषार्थ पुरुषार्थ सीमा ॥२४०

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।४०)–

एवं व्रतः स्वप्रियनामकीर्त्या
जातानुरागो द्रुतचित्त उच्चैः ।
हसत्यथो रोदिति रौति गाय-
त्युन्मादवन्नृत्यति लोकबाह्यः ॥१९॥

श्रीमद् भागवत के ११-२-४० में उक्त है—

भजन करते करते भगवान् में ममत्व का उदय होने से जिस प्रकार अवस्था होती है, उसका वर्णन करते हैं–प्रिय श्रीहरिनाम कीर्त्तन करते करते प्रेमोदय होता है, अतएव चित्त स्निग्ध होता है, कदाचित् भक्त के द्वारा पराजित श्रीहरि को देखकर उच्चहास्य करता है, अभीतक उपेक्षित हूँ, यह जानकर रोदन करता है, अति उत्सुकता से कहता है, हे हरे ! मुझे अनुग्रह करो । अतिशय हर्ष से गान करता है, जित लिया जित लिया कह कर नृत्य करने लगता है, वह दाम्भिक वत् अपर को दिखाने के निमित्त वैसा नहीं करता है, किन्तु अननुसन्धान से उन्मादवत् ग्रह गृहीतवत् ही करता है,लोकापेक्षा रहित होकर करता है, विवश होकर ही उस प्रकार आचरण करता रहता है ॥१९॥

कर्म्मत्याग कर्म्मनिन्दा सर्व्वशास्त्रे कहे ।
कर्म्म हैते कृष्णप्रेमभक्ति कभु नहे ॥२४१

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।११।३२)--

उद्धवं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्--

आज्ञायैवं गुणान् दोषान्मयादिष्टानपि स्वकान् ।
धर्म्मान् संत्यज्य यः सर्व्वान् मां भजेत् स च सत्तमः । २०॥

श्रीमद्भागवत ११।११।३२ में उद्धव को श्रीकृष्ण कहे थे – वेद रूप में मैंने जो निज धर्म का आदेश किया है, उसको छोड़कर जो मेरा भजन करता है, वह भी पूर्वोक्तवत् श्रेष्ठतम है। अज्ञान से अथवा नास्तिकता से धर्म परित्याग कर भजन करता है। यह नहीं किन्तु स्वधर्म्माचरण से सत्त्व शुद्धि होती ही एवं आचरण न करने से नरक होता है,--यह जानकर भी भक्ति विक्षेप हेतु भक्ति अनुष्ठान के द्वारा है, पूर्वोक्त सब कुछ होगा, इस प्रकार दृढ़ निश्चय कर ही आश्रम धर्म वर्जन पूर्वक जो मेरा भजन करता है, वही व्यक्ति श्रेष्ठ है।

अथवा दशमी विद्धा एकादशी करना, कृष्ण पक्ष की एकादशी न करना, विष्णु के अनिवेदित अन्न के द्वारा श्राद्ध करना—प्रभृति जो भक्ति विरुद्ध आचरण है, उसको दोष जानकर एवं भक्ति आचरण के द्वारा सब कुछ होगा जान कर जो मेरा भजन करता है, वह श्रेष्ठ तम है ॥२०॥

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (१८ ६६)--

अर्ज्जुनं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्--

सर्व्वधर्म्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वां सर्व्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥२१

श्रीभगवद् गीता के अष्टादश अध्याय में उक्त है, वर्णाश्रमोचित धर्म समूह के प्रति आसक्ति परित्याग पूर्वक तुम मेरी शरण ग्रहण करो, मैं तुम को उक्त धर्माचरण न करने से जो प्रत्यवाय होगा, उस से मुक्त कर दूँगा। अतएव चिन्ता न करना ।२१

तथाहि श्रीमद्भागवते--(११।२०।९)--

उद्धवं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्--

तावत् कर्म्माणि कुर्व्वीत न निर्व्विद्येत यावता ।
मत्कथाश्रवणादौ वा श्रद्धा यावन्न जायते ॥२२

टीका—यावता न निर्व्विद्यते, वा किंवा यावत् मत्कथाश्रवणादौ श्रद्धा मति र्न जायते, तावत् पर्य्यन्तं नित्यनैमित्तिकानि कर्म्माणि कुर्व्वीत ॥२२॥

श्रीमद् भागवत के ११।२०।९ में उक्त है— जब तक काम्य कर्म फल में विरक्ति नहीं होती है, अर्थात् आसक्ति है, एवं जब तक मेरी कथा श्रवणादि में श्रद्धा नहीं होती है, तब तक ही नित्य नैमित्तकादि कर्म्म का अनुष्ठान करे ॥२२॥

पञ्चविध मुक्ति त्याग करे भक्तगण ।
फल्गु करि मुक्ति देखे नरकेर सम ॥२४२

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२९।११)---

देवहूतिं प्रति कपिलदेववाक्यम्---

सालोक्यसार्ष्टि-सामीप्यसारूप्यैकत्वमप्युत ।
दीयमानं न गृह्णन्ति बिना मत्सेवनं जनाः ॥२३

श्रीमद् भागवत के ३।२९।१३ में देवहूति के कपिल देव कहे थे—भक्त गण निष्काम हाते हैं, अतः श्रीभगवान् के सहित एकत्र वास, समान ऐश्वर्य्य, समीप में निवास, समान रूप एवं सायुज्य मुक्ति को देने पर भी नहीं चाहते हैं, कामना तो है ही नहीं, केवल सेवारत होकर रहते हैं ॥२३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (५।१४।४४)--

परीक्षितं प्रति श्रीशुकदेववाक्यम्--

यो दुस्त्यजान् क्षितिसुतस्वजनार्थदारान्
प्रार्थ्यां श्रियं सुरवरैः सदयावलोकाम् ।
नैच्छन्नृपस्तदुचितं महतां मधुद्विट्-
सेवानुरक्तमनसामभवोऽपि फल्गुः ॥२४॥

टीका—यः एवम्प्रकारोऽसौ नृपः दुस्त्यजान् क्षिति-सुत--स्वजनार्थदारान् राज्यपुत्र-बन्धु-कलत्राणि सुरवरैः इन्द्राद्यैः प्रार्थ्यां प्रार्थनीयां श्रियं सौभाग्यं सदयावलोकां न ऐच्छत, तत् उचितं, यस्मात् मधुद्विट्--सेवानुरक्तमनसां महतां अभवः अपि मोक्षोऽपि फल्गुः तुच्छः भवेत् ॥२४॥

श्रीमद् भागवत के ५।१४।४४ में उक्त है--

नृपति भरत दुष्परिहार्य्य राज्य, धन, बन्धु, पुत्र, भार्य्या एवं सुरवाञ्छनीय एवं तदीय करुणार्थिनी श्री को भी नहीं चाहते थे। कारण, सेवानुरागी महात्मवृन्द के पक्ष में मोक्ष सुख भी अति तुच्छ पदार्थ है ॥२४॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (६।१७।२८)--

श्रीदुर्गां प्रति श्रीशिववाक्यम्---

नारायणपराः सर्व्वे न कुतश्चन बिभ्यति ।
स्वर्गापवर्गनरकेष्वपितुल्यार्थदर्शिनः ॥२५॥

टीका—नारायणपराः भगवन्निष्ठाः सर्व्वे लोकाः कुतश्चन कस्यचिदपि सकाशात् न बिभ्यति। स्वर्गापवर्गनरकेष्वपि तुल्यार्थदर्शिनः भवन्ति ॥

श्रीमद् भागवत के ६।१७।२८ में लिखित है भगवन्निष्ठ व्यक्ति गण किसी से भीत नहीं होते। कारण, वे स्वर्ग मोक्ष एवं नरक में सम बुद्धि सम्पन्न हैं। अर्थात् भोग, मोक्षा एवं क्लेश में उन सब की एक ही प्रकार प्रयोजन बुद्धि है ॥२५॥

कर्म्म मुक्ति दुइ वस्तु त्यजे भक्तगण।
सेइ दुइ स्थाप तुमि साध्य साधन ॥२४
एइत वैष्णवेर नहे साध्य साधन।
सन्न्यासी देखिया आमा करह वञ्चन ॥
शुनि तत्त्वाचार्य्य हैला अन्तरे लज्जित।
प्रभुर वैष्णवता देखि हइला विस्मित ॥२४
आचार्य्य कहे तुमि येइ कह सेइ सत्य हय।
सर्व्वशास्त्रे वैष्णवेर एइ सुनिश्चय ॥२४
तथापि मध्वाचार्य्य ये करियाछे निर्व्बन्ध।
सेइ आचरिये सबे सम्प्रदाय सम्बन्ध ॥२४
प्रभु कहे, कर्म्मी ज्ञानी दुइ भक्तिहीन।
तोमार सम्प्रदाय देखि सेइ दुइ चिह्न ॥२४
सबे एक गुण देखि तोमार सम्प्रदाय।
सत्यविग्रह करि ईश्वरे करह निश्चय ॥२४
एइमत तार घरे गर्व्व चूर्ण करि।
फल्गुतीर्थ तबे चलि आइला गौरहरि ॥२५
त्रितकूप-विशालार करि दरशन।
पञ्चाप्सरा तीर्थ आइला शचीर नन्दन ॥२५
गोकर्ण-शिव देखि आइला द्वैपायनी।
शूर्पारक-तीर्थ आइला न्यासिशिरोमणि ॥२५
कोलापुरे लक्ष्मी देखि क्षीर भगवती।

लङ्घि गणेश देखि देखे चोरपार्वती ॥२५३
तथा हैते पाण्डुपुर आइला गौरचन्द्र ।
विठ्ठल ठाकुर देखि पाइला आनन्द ॥२५४
प्रेमावेशे कैल बहु नर्त्तन कीर्त्तन ।
प्रभुर प्रेम देखि सबार चमत्कार मन ॥२५५
ताँहा एक विप्र ताँरे निमन्त्रण कैल ।
भिक्षा करि ताँहा एक शुभवार्त्ता पाइल ।२५६
माधवपुरीर शिष्य श्रीरङ्गपुरी नाम ।
सेइ ग्रामे विप्र गृहे करेन विश्राम ॥२५७
शुनिया चलिला प्रभु ताँरे देखिबारे ।
विप्रगृहे बसियाछेन देखिल ताँहारे ॥२५८
प्रेमावेशे करे ताँरे दण्डपरणाम ।
पुलकाश्रु कम्प सब अङ्गे पड़े घाम ॥२५९
देखिया बिस्मित हैल श्रीरङ्गपुरीर मन ।
उठ उठ श्रीपाद बलि बलिल वचन ॥२६०
श्रीपाद धरह आमार गोसाञिर सम्बन्ध ।
ताहा बिना अन्यत्र नाहि एइ प्रेमार गन्ध ॥२६१
एत बलि प्रभुके उठाइञा कैल आलिङ्गन ।
गलागलि करि दुँहे करेन क्रन्दन ॥२६२
क्षणेके आवेश छाड़ि दुँहार धैर्य्य हैल ।
ईश्वर पुरीर सम्बन्ध प्रभु जानाइल ॥२६३
दुइ जने कृष्णकथा कहे रात्रि दिने ।
एइमत गोङाइल पाँच सात दिने ॥२६४
कौतुके पुरी ताँरे पुछिला जन्मस्थान ।
गोसाञि कौतुके निल नवद्वीप नाम ॥२६५
श्रीमाधवपुरीर सङ्गे श्रीरङ्गपुरी ।
पूर्व्वे आसियाछिला नदीया नगरी ॥२६६
जगन्नाथमिश्रघरे भिक्षा ये करिल ।
अपूर्व्व मोचार घण्ट ताँहा ये खाइल ॥२६७
जगन्नाथेर ब्राह्मणी महापतिव्रता ।
वात्सल्ये हय तेँह येन जगन्माता ॥२६८
रन्धने निपुणा नाहि ता सम त्रिभुवने ।
पुत्रसम स्नेहे कराय सन्नयासी भोजने ॥२६९
तार एक पुत्र योग्य करिया सन्नयास ।
शङ्करारण्य नाम तार अल्प वयस ॥२७०
एइ तीर्थे शङ्करारण्येर सिद्धिप्राप्ति हैला ।
प्रस्तावे श्रीरङ्गपुरी एतेक कहिला ॥२७१
प्रभु कहे पूर्व्वाश्रमे तेँह मोर भ्राता ।
जगन्नाथमिश्र मोर पूर्व्वाश्रमे पिता ॥२७२
एइमत दुइ जने इष्टगोष्ठी करि ।
द्वारका देखिते चलिला श्रीरङ्गपुरी ॥२७३
दिन चारि प्रभुके ताहा राखिल ब्राह्मण ।
भीमरथ स्नान करि विठ्ठल दर्शन ॥२७४
तबे महाप्रभु आइला कृष्णवेण्वा तीर ।
नाना तीर्थ देखि ताँहा देवतामन्दिर ॥२७५
ब्राह्मणसमाज सब वैष्णवचरित ।
वैष्णवसकल पड़े कृष्णकर्णामृत ॥२७६
कर्णामृत शुनि प्रभु आनन्द हइल ।
आग्रह करिया पुँथि लेखाइया निल ॥२७७
कर्णामृतसम वस्तु नाहि त्रिभुवने ।
याहा हैते हय शुद्ध कृष्णप्रेम ज्ञाने ॥२७८
सौन्दर्य्य माधुर्य्य कृष्णलीलार अवधि ।
से जाने ये कर्णामृत पड़े निरवधि ॥२७९
ब्रह्मसंहिता कर्णामृत दुइ पुँथि पाञा ।
महारत्नप्राय पाइ आइला सङ्गे लञा ॥२८०
तापी स्नान करि आइला माहिष्मती पुरे ।
नानातीर्थ देखे ताँहा नर्म्मदार तीरे ॥२८१

मनुतीर्थ देखि कैला निर्व्विन्ध्याय स्नान ।
ऋष्यमुख पर्व्वत आइला दण्डक अरण्य २८२
सप्ततात वृक्ष ताँहा काननभितर ।
अति वृद्ध अति स्थूल अति उच्चतर ॥२८३
सप्तताल देखि प्रभु आलिङ्गन कैल ।
सशरीरे सप्तताल वैकुण्ठे चलिल ॥२८४
शून्यस्थान देखि लोकेर हैल चमत्कार ।
लोके कहे ए सन्न्यासी राम अवतार ॥२८५
सशरीरे गेल ताल श्रीवैकुण्ठ धाम ।
ऐछे शक्ति कार हय बिने एक राम ॥२८६
प्रभु आसि कैला पम्पा सरोवरे स्नान ।
पञ्चवटी आसि ताँहा करिल विश्राम ॥२८७
नासिक त्र्यम्बक देखि गेला ब्रह्मगिरि ।
कुशावर्त्त आइला याँहा जन्मिला गोदावरी २८८
सप्तगोदावरी देखि तीर्थ बहुतर ।
पुनरपि आइला प्रभु विद्यानगर ॥२८९
रामानन्द राय शुनि प्रभुर आगमन ।
आनन्दे आसिया कैल प्रभुर मिलन ॥२९०
दण्डवत् हञा पड़े चरणे धरिञा ।
आलिङ्गन कैल प्रभु तारे उठाइञा ॥२९१
दुइ जन प्रेमावेशे करये क्रन्दन ।
प्रेमावेशे शिथिल हैल दुइ जनार मन ॥२९२
कतक्षणे दुइ जन सुस्थिर हइया ।
नाना इष्टगोष्ठी करे एकत्रे बसिया ॥२९३
तीर्थयात्राकथा प्रभु सकल कहिला ।
कर्णामृत ब्रह्मसंहिता दुइ पुँथि दिला ॥२९४
प्रभु कहे तुमि येइ सिद्धान्त कहिले ।
एइ दुइ पुँथि सेइ सब साक्ष्य दिले ॥२९५

रायेर आनन्द हैल पुस्तक पाइया ।
प्रभु सह आस्वादिल राखिल लिखिया ॥२९६
गोसाञि आइला ग्रामे हैल कोलाहल ।
गोसाञि देखिते लोक आइल सकल ॥२९७
लोक देखि रामानन्द गेला निजघरे ।
मध्याह्ने उठिला प्रभु भिक्षा करिबारे ॥२९८
रात्रिकाले राय पुन कैल आगमन ।
दुइ जन कृष्णकथाय करे जागरण ॥२९९
दुइ जने कृष्णकथा हय रात्रि दिने ।
परम आनन्दे गेल पाँच सात दिने ॥३००
रामानन्द कहे गोसाञि तोमार आज्ञा पाञा ।
राजाके लिखिनु आमि विनति करिया ॥३०१
राजा मोरे आज्ञा दिला नीलाचल याइते ।
चलिबार सज्जा आमि लागियाछि करिते ३०२
प्रभु कहे, एथा मोर ए निमित्त आगमन ।
तोमा लञा नीलाचले करिब गमन ॥३०३
राय कहे प्रभु आगे चल नीलाचल ।
मोर सङ्गे हाती घोड़ा सैन्य कोलाहल ॥३०४
दिन दशे इहा सब करि समाधान ।
तोमार पाछे पाछे आमि करिब प्रयाण ॥३०५
तबे महाप्रभु तारे आसिते आज्ञा दिञा ।
नीलाचल चलिला प्रभु आनन्दित हञा ॥३०६
येइ पथे पूर्व्वे प्रभु करिल गमन ।
सेइ पथे चलिला प्रभु देखि वैष्णवगण ॥३०७
याँहा याय उठे लोक हरिध्वनि करि ।
देखिया आनन्द बड़ पाइला गौरहरि ॥३०८
आलालनाथ आसि कृष्णदासे पाठाइला ।
नित्यानन्द आदि निज गणे बोलाइला ॥३०९

प्रभुर आगमन शुनि नित्यानन्द राय ।
उठिया चलिला, आनन्द थेह नाहि पाय ।।३१०
जगदानन्द, दामोदर, पण्डित मुकुन्द ।
नाचिया चलिला देहे ना धरे आनन्द ।।३११
गोपीनाथाचार्य्य चले आनन्दित हञा ।
प्रभुरे मिलिला सबे पथे लाग पाञा ।।३१२
प्रभु प्रेमावेशे सबा कैल आलिङ्गन ।
प्रेमावेशे सबे करे आनन्दे क्रन्दन ।।३१३
सार्व्वभौम भट्टाचार्य्य आनन्दे चलिला ।
समुद्रेर तीरे आसि प्रभुरे मिलिला ।।३१४
सार्व्वभौम महाप्रभुर पड़िला चरणे ।
प्रभु ताँरे उठाइया कैल आलिङ्गने ।।३१५
प्रेमावेशे सार्व्वभौम करेन क्रन्दने ।
सबा सङ्गे आइला प्रभु ईश्वर दर्शने ।।३१६
जगन्नाथ देखि प्रभुर प्रेमावेश हैल ।
कम्प स्वेद पुलकाश्रु शरीर भासिल ।।३१७
बहु नृत्य, कैल प्रेमाविष्ट हञा ।
पाण्डापाल सब आइला प्रसादमाला लञा ३१८
मालाप्रसाद पाञा तबे प्रभु स्थिर हैला ।
जगन्नाथेर सेवक सब आनन्दे मिलिला ।।३१९
काशी मिश्र आसि पड़िल प्रभुरे चरणे ।
मान्य करि प्रभु तारे कैल आलिङ्गने ।।३२०
जगन्नाथेर पड़िछा आसि प्रभुरे मिलिला ।
प्रभु लञा सार्व्वभौम निज घरे गेला ।।३२१
मोर घरे भिक्षा बलि निमन्त्रण कैला ।
दिव्य दिव्य महाप्रसाद अनेक आनाइला ३२२
मध्याह्न करिया प्रभु निजगण लञा ।
सार्व्वभौम-घरे भिक्षा करिल आसिया ।।३२३
भिक्षा कराइञा ताँरे कराइला शयन ।
आपने सार्व्वभौम करे पादसम्बाहन ।।३२४
प्रभु ताँरे पाठाइला भोजन करिते ।
सेइ रात्रि ताँरे घरे रहिला ताँर प्रीते ।।३२५
सार्व्वभौम सङ्गे आर लञा निजगण ।
तीर्थयात्रा कथा कहि कैला जागरण ।।३२६
प्रभु कहे, एत तीर्थ कैनु पर्य्यटन ।
तोमा सम वैष्णव ना देखिनु एक जन ।।३२७
एक रामानन्द राय बहु सुख दिल ।
भट्ट कहे, एइ लागि मिलिते कहिल ।।३२८
तीर्थयात्रा कथा एइ हैल समापन ।
सङ्क्षेपे कहिनु विस्तार ना याय वर्णन ।३२९
अनन्त चैतन्यकथा कहिते ना जानि ।
लोभे लज्जा खाञा, तार करि टानाटानि ३३०
प्रभुर तीर्थयात्रा कथा शुने येइ जन ।
चैतन्यचरणे पाय गाढ़ प्रेमधन ।।३३१
चैतन्यचरित शुन श्रद्धा भक्ति करि ।
मात्सर्य्य छाड़िया मुखे बल हरि हरि ।।३३२
एइ कलिकाले आर नाहि अन्य धर्म्म ।
वैष्णव वैष्णवशास्त्र एइ कहे मर्म्म ।।३३३
चैतन्यचन्द्रेर लीला अगाध गम्भीर ।
प्रवेश करिते नारि स्पर्शि रहि तीर ।।३३४
चैतन्यचरित श्रद्धाय शुने येइ जन ।
यतेक विचारे तत पाय महाधन ।।३३५
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ।।२६४

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे
दक्षिणदेशतीर्थभ्रमणं नाम नवमः परिच्छेदः

*

❀ दशम परिच्छेद ❀

तं वन्दे गौरजलदं स्वस्य यो दर्शनामृतैः ।
विच्छेदावग्रहम्लानभक्तशस्यान्यजीवयत् ॥१॥

टीका—यः स्वस्य स्वकीयस्य दर्शनामृतैः दर्शन रूपसुधाजलैः विच्छेदावग्रहम्लानभक्त-शस्यानि अजीवयत् जीवयामास, तं गौरजलदं गौरमेघं अहं वन्दे प्रणमामि ॥१॥

जो निज दर्शन रूप सुधा सेचन के द्वारा विच्छेद तापित भक्त रूप शस्य समूह को जीवन प्रदान करते हैं, मैं उन गौरचन्द्र रूप मेघ की वन्दना करता हूँ ।१

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
पूर्व्वे यबे महाप्रभु चलिला दक्षिणे ।
प्रतापरुद्र राजा तबे बोलाइला सार्व्वभौमे ॥२
बसिते आसन दिल करि नमस्कारे ।
महाप्रभुर वार्त्ता तबे पुछिल ताहारे ॥३
शुनिनु तोमार घरे एक महाशय ।
गौड़ हैते आइला तेँह महाकृपामय ॥४
तोमारे बहु कृपा कैला कहे सर्व्वजन ।
कृपा करि कराह मोरे ताँहार दर्शन ॥५
भट्ट कहे, ये शुनिले सेइ सत्य हय ।
ताँहार दर्शन तोमार घटन ना हय ॥६
विरक्त सन्न्यासी तिँहो रहये निर्ज्जने ।
स्वप्नेह ना करे तिँहो राज दरशने ॥७
तथापि प्रकारे तोमाय कराइताम दर्शन ।
सम्प्रति करिला तिँहो दक्षिण गमन ॥८
राजा कहे जगन्नाथ छाड़ि केन गेला ।
भट्ट कहे महान्तेर एइ एक लीला ॥९
तीर्थ पवित्र करिते करेन तीर्थभ्रमण ।
सेइ छले निस्तारये सांसारिक जन ॥१०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१३।१०)—
विदुरं प्रति श्रीयुधिष्ठिरवाक्यम्—

भवद्विधा भागवतास्तीर्थीभूताः स्वयं प्रभो ।
तीर्थीकुर्व्वन्ति तीर्थानि स्वान्तःस्थेन गदाभृता ॥२

श्रीमद्भागवत के १।१३।१० में श्रीयुधिष्ठिर श्रीविदुर को कहे थे—

हे प्रभो ! आप के सदृश भागवत वृन्द-स्वयं ही तीर्थ स्वरूप होते हैं, भगवदाज्ञालङ्घन कारी व्यक्ति गण के द्वारा तीर्थ समूह कलुपित होने पर आप सब हृदयस्थित गदाधर के द्वारा तीर्थ समूह को पवित्र करते हैं ।।२।।

वैष्णवेर एइ हय स्वभाव निश्चल ।
तिँहो जीव नहे हय स्वतन्त्र ईश्वर ॥११
राजा कहे ताँरे तुमि याइते केन दिले ।
पाये पड़ि यत्न करि केन ना राखिले ॥१२
भट्टाचार्य्य कहे तिँह ईश्वर स्वतन्त्र ।
साक्षात् कृष्ण तिँह नहे परतन्त्र ॥१३
तथापि राखिते ताँरे बहु यत्न कैल ।
ईश्वरेर स्वतन्त्र इच्छा राखिते नारिल ॥१४
राजा कहे, भट्ट तुमि विज्ञशिरोमणि ।
तुमि ताँरे कृष्ण कह ताहे सत्य मानि ॥१५
पुनरपि इँहा ताँर हबे आगमन ।
एकबार देखि करि सफल नयन ॥१६

भट्टाचार्य्य कहे, तिँह आसिबे अल्पकाले ।
रहिते ताँरे एक स्थान चाहिये विरले ॥१७
ठाकुरेर निकट हबे, हइब निर्ज्जने ।
ऐछे निर्णय करि देह एक स्थाने ॥१८
राजा कहे ऐछे काशीमिश्रेर सदन ।
ठाकुरेर निकट हय परम निर्ज्जन ॥१९
एत कहि राजा रहे उत्कण्ठित हञा ।
भट्टाचार्य्य काशीमिश्रे कहिल सब गिञा २०
काशीमिश्र कहे, आमि बड़ भाग्यवान् ।
मोर घरे प्रभुपादेर हबे अवस्थान ॥२१
एइमत पुरुषोत्तमवासी यत जन ।
प्रभुरे मिलिते सबार उत्कण्ठित मन ॥२२
सब लोकेर उत्कण्ठा यबे अत्यन्त बाड़िला ।
महाप्रभु दक्षिण हैते तबहिँ आइला ॥२३
शुनि आनन्दित हैल सबाकार मन ।
सबे मिलि सार्व्वभौमे कैल निबेदन ॥२४
प्रभु सह आमा सबार कराह मिलन ।
तोमार प्रसादे पाइ चैतन्यचरण ॥२५
भट्टाचार्य्य कहे कालि काशीमिश्रघरे ।
प्रभु याइवेन, ताँहा मिलाइब सबारे ॥२६
आर दिन महाप्रभु भट्टाचार्य्य सङ्गे ।
जगन्नाथ दरशन कैल महारङ्गे ॥२७
महाप्रसाद दिया ताँहा मिलिला सेबकगण ।
महाप्रभु सबाकारे कैल आलिङ्गन ॥२८
दर्शन करि महाप्रभु चलिला बाहिरे ।
भट्टाचार्य्य निल ताँरे काशीमिश्र-घरे ॥२९
काशीमिश्र पड़िला आसि प्रभुर चरणे ।
गृह सहित आत्मा ताँरे कैल निबेदने ॥३०
प्रभु चतुर्भुज मूर्त्ति ताँरे देखाइल ।
आत्मसात् करि ताँरे आलिङ्गन कैल ॥३१
तबे महाप्रभु ताँहा बसिला आसने ।
चौदिके बसिला नित्यानन्दादि भक्तगणे ॥३२
सुखी हैला प्रभु देखि बासार संस्थान ।
येइ बासा हय प्रभुर सर्व्वसमाधान ॥३३
सार्व्वभौम कहे, प्रभु तोमार योग्य बासा ।
तुमि अङ्गीकार कर एइ मिश्रेर आशा ॥३४
प्रभु कहे, एइ देह तोमा सबाकार ।
येइ तुमि कह सेइ सम्मत आमार ॥३५
तबे सार्व्वभौम प्रभुर दक्षिण पार्श्वे बसि ।
मिलाइते लागिला सब पुरुषोत्तमबासी ॥३६
एइ सब लोक प्रभु वैसे नीलाचले ।
उत्कण्ठित हञा आछे तोमा मिलिबारे ॥३७
तृषित चातक यैछे मेघे हाहाकार ।
तैछे एइ सब, सबा कर अङ्गीकार ॥३८
जगन्नाथ-सेवक एइ नाम जनार्द्दन ।
अनबसरे करे प्रभुर श्रीअङ्ग सेवन ॥३९
कृष्णदास नाम एइ स्वर्णवेत्रधारी ।
शिखिमाहाती एइ लिखन अधिकारी ॥४०
प्रद्युम्नमिश्र इँह वैष्णव प्रधान ।
जगन्नाथ महाशोआर इँह दास नाम ॥४१
मुरारिमाहाती शिखिमाहातीर भाइ ।
तोमार चरण बिना अन्य गति नाइ ॥४२
चन्दनेश्वर सिंहेश्वर मुरारि ब्राह्मण ।
विष्णुदास इँह ध्याय तोमार चरण ॥४३
प्रहरराज महापात्र इँह महामति ।
परमानन्द महापात्र इँहार संहति ॥४४

एइ सब वैष्णव एइ क्षेत्रेर भूषण ।
एकान्त भावे भजे सबे तोमार चरण ॥४५
तबे सबे पाये पड़े दण्डवत् हञा ।
सबा आलिङ्गन प्रभु प्रसाद करिञा ॥४६
हेन काले आइला ताँहा भवानन्द राय ।
चारि पुत्र सङ्गे पड़े महाप्रभुर पाय ॥४७
सार्व्वभौम कहे एइ राय भवानन्द ।
इँहार प्रथम पुत्र राय रामानन्द ॥४८
तबे महाप्रभु ताँरे कैल आलिङ्गन ।
स्तुति करि कहे रामानन्दविवरण ॥४९
रामानन्द हेन रत्न याहार तनय ।
ताँहार महिमा लोके कहन ना याय ॥५०
साक्षात् पाण्डु तुमि, तोमार पत्नी कुन्ती ।
पञ्चपाण्डव तोमार पञ्चपुत्र महामति ॥५१
राय कहे, आमि शूद्र विषयी अधम ।
मोरे स्पर्श तुमि एइ ईश्वरलक्षण ॥५२
निजगृहे वित्त भृत्य पञ्चपुत्र सने ।
आत्म सर्मापिनु आमि तोमार चरणे ॥५३
एइ बाणीनाथ रहिबे तोमार चरणे ।
यबे येइ आज्ञा सेइ करिबे सेवने ॥५४
आत्मीय ज्ञान करि सङ्कोच ना करिबे ।
येइ यबे इच्छा तोमार सेइ आज्ञा दिबे ॥५५
प्रभु कहे, कि सङ्कोच, नह तुमि पर ।
जन्मे जन्मे सवंशे तुमि आमार किङ्कर ॥५६
दिन पाँच सात भितरे आसिबे रामानन्द ।
ताँर सङ्गे पूर्ण हबे आमार आनन्द ॥५७
एत बलि प्रभु ताँरे कैल आलिङ्गन ।
ताँर पुत्रसब शिरे धरिल चरण ॥५८

तबे महाप्रभु ताँरे घरे पाठाइल ।
वाणीनाथ पट्टनायक निकटे राखिल ॥५९
भट्टाचार्य्य सब लोके विदाय करिल ।
तबे प्रभु कालाकृष्णदासे बोलाइल ॥६०
प्रभु कहे भट्ट शुन इहार चरित ।
दक्षिण गेलेन इँह आमार सहित ॥६१
भट्टमारी हैते गेला आमारे छाड़िया ।
भट्टमारी हैते इँहाय आनिल उद्धारिया ॥६२
एबे आमि इँहा आनि करिनु विदाय ।
याँहा ताँहा याह आमा सने नाहि दाय ॥६३
एत शुनि कृष्णदास कान्दिते लागिला ।
मध्याह्न करिते महाप्रभु उठि गेला ॥६४
नित्यानन्द जगदानन्द मुकुन्द दामोदर ।
चारि जने युक्ति तबे करिल अन्तर ॥६५
गौड़देशे पाठाइते चाहि एकजन ।
आइके कहिब याइ प्रभुर आगमन ॥६६
अद्वैत श्रीवास आदि यत भक्तगण ।
सबेइ आसिबे शुनि प्रभुर आगमन ॥६७
एइ कृष्णदासे दिब गौड़े पाठाइया ।
एत कहि तारे राखिल आश्वास करिया ॥६८
आर दिन प्रभु-ठाँइ कैल निवेदन ।
आज्ञा देह गौड़ देश पाठाइ एक जन ॥६९
तोमार दक्षिणगमन शुनि शची आइ ।
अद्वैतादि वैष्णव आछेन दुःख पाइ ॥७०
एक जन याइ कहे शुभ समाचार ।
प्रभु कहे कर सेइ ये इच्छा तोमार ॥७१
तबे सेइ कृष्णदासे गौड़े पाठाइल ।
वैष्णव सबारे दिते महाप्रसाद दिल ॥७२

तबे गौड़देश आइला कालाकृष्णदास ।
नवद्वीप गेला तिँह शची आइ पाश ॥७३
महाप्रसाद दिया ताँरे कैल नमस्कार ।
दक्षिण हैते आइला प्रभु कहे समाचार ॥७४
शुनि आनन्दित हैल शची मातार मन ।
श्रीनिवास आदि आर यत भक्तगण ॥७५
शुनिया सबार हैल परम उल्लास ।
अद्वैत आचार्य्य गृहे गेला कृष्णदास ॥७६
आचार्य्ये प्रसाद दिया कैल नमस्कार ।
सम्यक् कहिल महाप्रभुर समाचार ॥७७
शुनिया आचार्य्य गोसाञि परमानन्द हैला ।
प्रेमावेशे हुङ्कार बहु नृत्य गीत कैला ॥७८
हरिदास ठाकुरेर हैल परम आनन्द ।
वासुदेव दत्त गुप्त मुरारि शिवानन्द ॥७९
आचार्य्यरत्न आर पण्डित वक्रेश्वर ।
आचार्य्यनिधि आर पण्डित गदाधर ॥८०
श्रीराम पण्डित आर पण्डित दामोदर ।
श्रीमान् पण्डित आर विजय श्रीधर ॥८१
राघव पण्डित आर आचार्य्यनन्दन ।
कतेक कहिब आर यत प्रभुर गण ॥८२
शुनिया सबार हैल परम उल्लास ।
सबे मिलि आइला श्रीअद्वैतेर पाश ॥८३
आचार्य्येर कैल सबे चरण वन्दन ।
आचार्य्य गोसाञि कैल सबा आलिङ्गन ॥८४
दुइ तिन दिन आचार्य्य महोत्सब कैल ।
नीलाचल याइते तबे युक्ति दृढ़ हैल ॥८५
सबे मिलि नवद्वीपे एकत्र हइया ।
नीलाद्रि चलिल शचीमातार आज्ञा लञा ॥८६
प्रभुर समाचार शुनि कुलीनग्रामवासी ।
सत्यराज, रामानन्द मिलिला ताँहा आसि ८७
मुकुन्द, नरहरि रघुनन्दन खण्ड हैते ।
आचार्य्येर ठाञि आइला नीलाचल याइते ।८८
सेइ काले दक्षिण हैते परमानन्दपुरी ।
गङ्गा तीरे तीरे आइला नदीया नगरी ॥८९
आइर मन्दिरे सुखे करिल विश्राम ।
आइ ताँरे भिक्षा दिल करिया सम्मान ॥९०
प्रभु आगमन तिँह ताँहाइ शुनिल ।
शीघ्र नीलाचल याइते ताँर इच्छा हैल ॥९१
प्रभुर एक भक्त द्विज कमलाकर नाम ।
ताँरे लञा नीलाचल करिल पयाण ॥९२
सत्वरे आसिया तिँह मिलिला प्रभुरे ।
प्रभुर आनन्द हैल पाइञा ताँहारे ॥९३
प्रेमावेशे कैल ताँर चरणवन्दन ।
तिँह प्रेमावेशे कैल प्रभुरे आलिङ्गन ॥९४
प्रभु कहे तोमा सङ्गे रहिते वाञ्छा हय ।
मोरे कृपा करि कर नीलाद्रि आश्रय ॥९५
पुरी कहे तोमा सङ्गे रहिते वाञ्छा करि ।
गौड़ हैते आइलाम नीलाचल पुरी ॥९६
दक्षिण हइते शुनि तोमार आगमन ।
शचीर आनन्द हैल, यत भक्तगण ॥९७
सबेइ आसितेछेन तोमारे देखिते ।
ता सबार विलम्ब देखि आइलाम त्वरिते ।९८
काशीमिश्रेर आवासे निभृते एक घर ।
प्रभु ताँरे दिल आर सेवार किङ्कर ॥९९
आर दिने आइला स्वरूप दामोदर ।
प्रभुर अत्यन्त मर्म्मरसेर सागर ॥१००

पुरुषोत्तम आचार्य्य ताँर नाम पूर्व्वाश्रमे ।
नवद्वीपे छिला तिँह प्रभुर चरणे ॥१०१

प्रभुर सन्नयास देखि उन्मत्त हइया ।
सन्नयास ग्रहण कैल वाराणसी गिया ॥१०२

चैतन्यानन्द गुरु ताँर, आज्ञा दिला ताँरे ।
वेदान्त पड़िया पड़ाओ समस्त लोकेरे ॥१०३

परम विरक्त तिँह परम पण्डित ।
कायमने आश्रियाछे श्रीकृष्णचरित ॥१०४

निश्चिन्ते कृष्ण भजिव एइत कारण ।
उन्मादे करिला तिँह सन्नयास ग्रहण ॥१०५

सन्नयास करिल शिखा-सूत्र-त्यागरूप ।
योगपट्ट ना लइल नाम हइल स्वरूप ॥१०६

गुरु ठाञि आज्ञा मागि आइल नीलाचले ।
रात्रि दिन कृष्णप्रेम-आनन्द-विह्वले ॥१०७

पाण्डित्येर अवधि, कथा नाहि कार सने ।
निर्ज्जने रहेन सब लोक नाहि जाने ॥१०८

कृष्णरसतत्त्ववेत्ता देय प्रेम रूप ।
साक्षात् महाप्रभुर द्वितीय स्वरूप ॥१०९

ग्रन्थ श्लोक गीत केह प्रभु आगे आने ।
स्वरूप परीक्षा कैले पाछे प्रभु शुने ॥११०

भक्तिसिद्धान्त विरुद्ध सेइ, आर रसाभास ।
शुनिते ना हय प्रभुर चित्तेर उल्लास ॥१११

अतएव स्वरूप आगे करे परीक्षण ।
शुद्ध हय यदि, कराय प्रभुके श्रवण ॥११२

विद्यापति चण्डीदास श्रीगीतगोविन्द ।
एइ तिन गीते करे प्रभुर आनन्द ॥११३

सङ्गीते गन्धर्व्वसम, शास्त्रे वृहस्पति ।
दामोदरसम आर नाहि महामति ॥११४

अद्वैत नित्यानन्देर परम प्रियतम ।
श्रीवासादि भक्तगणेर हय प्राणसम ॥११५

सेइ दामोदर आसि दण्डवत हैला ।
चरणे पड़िया श्लोक पड़िते लागिला ॥११६

तथाहि श्रीचैतन्यचन्द्रोदयनाटके (८।१५)—

हेलोद्धूलितखेदया विशदया प्रोन्मीलदामोदया।
शाम्यच्छास्त्रविवादया रसदया चित्तार्पितोन्मादया।
शश्वद्भक्तिविनोदया समदया माधुर्य्यमर्य्यादया
श्रीचैतन्यदयानिधे तव दया भूयादमन्दोदया ॥३॥

टीका—हे श्रीचैतन्यचन्द्रदयानिधे ! तव दया अमन्दोदया कल्याणप्रकाशिनी भूयात । किम्भूता दया ?—हेलोद्धूलितखेदया हेलया उद्धूलितं उन्मूलितं खेदं याति प्राप्नोति लोको यया सा, विशदया विशदं याति यया सा, प्रोन्मीलदामोदया प्रकृष्टेन उन्मीलन्तं आमोदं याति यया सा, शाम्यच्छास्त्रविवादया शाम्यन्तं प्रशमितं शास्त्राणां विवादं तर्कं याति यया सा; रसदया रसं दयते या सा, चित्तार्पितोन्मादया चित्ते अर्पितं उन्मादं याति यया सा, शश्वद्भक्तिविनोदया शश्वत् सर्व्वदा भक्तिविनोदं याति यया सा, समदया समं दयते या सा, माधुर्य्यमर्य्यादया माधुर्य्याणां मर्य्यादां याति या सा ॥

हे दयानिधे श्रीचैतन्य देव ! भवदीय जिस दया से अनायास लोकों का दुःख विदूरित होता है, मन विमल होता है । एवं कृष्ण प्रेमानन्द स्फुरित होता है, जिस के प्रभाव से शास्त्र तर्क विदूरित होता है, जो चित्त को सरसकर विभोर करती है, जिस से सर्वदा भक्ति सुख एवं सर्वत्र सम दर्शन लाभ होता है, तथ समस्त माधुर्य्य का चरमोत्कर्ष मण्डित है, आप हम सब के मङ्गलार्थ उस दया को प्रकाशित करें ॥३॥

उठाइया महाप्रभु कैल आलिङ्गन ।
दुइ जन प्रेमावेशे हैला अचेतन ॥११७

कतक्षणे दुइ जन स्थिर यबे हैला ।

तबे महाप्रभु ताँरे कहिते लागिला ॥११८
तुमि ये आसिबे आजि स्वप्नेते देखिल ।
भाल हैल अन्ध येन दुइ नेत्र पाइल॥ ११९
स्वरूप कहे प्रभु मोर क्षम अपराध ।
तोमा छाड़ि अन्यत्र गेनु करिनु प्रमाद ॥१२०
तोमार चरणे मोर नाहि प्रेमलेश ।
तोमा छाड़ि पापी मुञि गेनु अन्य देश ॥१२१
मुञि तोमा छाड़िनु तुमि मोरे ना छाड़िला ।
कृपारज्जु गले बान्धि चरणे आनिला ॥१२२
तबे स्वरूप कैल नित्यानन्देर वन्दन ।
नित्यानन्द प्रभु कैल प्रेम आलिङ्गन ॥१२३
जगदानन्द मुकुन्द शङ्कर सार्व्वभौम ।
सबा सने यथायोग्य करिला मिलन ॥१२४
परमानन्दपुरीर कैल चरणवन्दन ।
पुरी गोसाञि तारे कैल प्रेम-आलिङ्गन ॥१२५
महाप्रभु दिला ताँरे निभृते वासाघर ।
जलादि परिचर्य्या लागि एक किङ्कर ॥१२६
आर दिन सार्व्वभौमादि भक्तगण सङ्गे ।
वसि आछेन महाप्रभु कृष्णकथारङ्गे ॥१२७
हेन काले गोविन्देर हैल आगमन ।
दण्डवत् करि कहे विनयवचन ॥१२८
ईश्वरपुरीर भृत्य गोविन्द मोर नाम ।
गोसाञिर आज्ञाय आइलाम तब स्थान १२९
सिद्धिप्राप्तिकाले गोसाञि आज्ञा कैल मोरे ।
चैतन्यनिकटे रहि सेव याइ तारे ॥१३०
काशीश्वर आसिबेन तीर्थ देखिया ।
प्रभु आज्ञाय तोमार पदे आइनु धाइया ॥१३१
गोसाञि कहे पुरीश्वर वात्सल्य करि मोरे ।
कृपा करि मोर ठाञि पाठाइला तोमारे ॥१३२
एत शुनि सार्व्वभौम प्रभुरे पुछिला ।
गोसाञि शूद्र सेवक काहाते राखिला ॥१३३
प्रभु कहे ईश्वर हय परम स्वतन्त्र ।
ईश्वरेर कृपा नहे वेदपरतन्त्र ॥१३४
ईश्वरेर कृपा जाति कुलादि ना माने ।
विदुरेर घरे कृष्ण करिला भोजने ॥१३५
स्नेहलेशापेक्षा मात्र ईश्वर कृपार ।
स्नेहवश हञा करे स्वतन्त्र आचार ॥१३६
मर्य्यादा हैते कोटि सुख स्नेह-आचरणे ।
परम आनन्द हय याहार श्रवणे ॥१३७
एत बलि गोविन्देरे कैल आलिङ्गन ।
गोविन्द करिल प्रभुर चरण वन्दन ॥१३८
कभु कहे, भट्टाचार्य्य करह विचार ।
गुरुर किङ्कर हय मान्य से आमार ॥१३९
इहाके आपन सेवा कराइते ना जुयाय ।
गुरु आज्ञा दियाछेन कि करि उपाय ॥१४०
भट्टाचार्य्य कहे, गुरु-आज्ञा बलवान् ।
गुरु-आज्ञा ना लङ्घिब शास्त्र परमाण १४१

तथाहि रघुवंशे सीतावनवासप्रसङ्गे (५३)--

स शुश्रुवान् मातरि भार्गवेण,
पितुर्नियोगात् प्रहृतं द्विषद्वत् ।
प्रत्यग्रहीदग्रजशासनतद्
आज्ञा गुरूणां ह्यविचारणीया ॥४॥

टीका—भार्गवेण भृगुरामेण पितुर्जमदग्नेः नियोगात् मातरि द्विषद्वत् अरिवत् प्रहृतं, शुश्रुवान् सन् तद्धेतोः अग्रजशासनं सीतावनवासदानरूपां रामाज्ञां प्रत्यग्रहीत् स्वीकृतवान् । हि यतः गुरूणां आज्ञा अविचारणीया ॥४॥

परशुराम पिता के आदेशानुसार शत्रुवत् जननी

रेणुका का मस्तक छेदन किये थे, यह सुनकर लक्ष्मण अग्रज रामचन्द्र के सीतावनवास रूप आदेश पालन में व्रती हुये थे, कारण, गुरु के आदेश को दोष गुण बिचार न करके पालन करना उचित है ॥४॥

तबे महाप्रभु तारे करि अङ्गीकार ।
आपन श्रीअङ्गसेवा दिला अधिकार ॥१४२
प्रभुर प्रिय भृत्य करि सबे करे मान ।
सकल वैष्णवेर गोविन्द करे समाधान ॥१४३
छोट बड़ कीर्त्तनिया दुइ हरिदास ।
रामाइ नन्दाइ रहे गोविन्देर पाश ॥१४४
गोविन्देर सङ्गे करे प्रभुर सेवन ।
गोविन्देर भाग्यसीमा ना याय वर्णन ॥१४५
आर दिन मुकुन्द दत्त कहे प्रभुस्थाने ।
ब्रह्मानन्द भारती आइला तोमार दर्शने ॥१४६
आज्ञा देह यदि ताँरे आनिये एथाइ ।
प्रभु कहे, गुरु तिँह याव ताँर ठाञि ॥१४७
एत बलि महाप्रभु सब भक्त सङ्गे ।
चलि आइला ब्रह्मानन्द भारतीर आगे ॥१४८
ब्रह्मानन्द परियाछे मृगचर्म्माम्बर ।
ताहा देखि प्रभुर दुःख हैल अन्तर ॥१४९
देखियाओ छद्म कैल येन देखि नाइ ।
मुकुन्देरे पुछे कोथाय भारती गोसाञि ॥१५०
मुकुन्द कहे, एइ देख आगे विद्यमान ।
प्रभु कहे तिँह नहे तुमि आगेयान ॥१५१
अन्येरे अन्य कह नाहि तोमार ज्ञान ।
भारती गोसाञि केने परिवेन चाम ॥१५२
शुनि ब्रह्मानन्द करे हृदये विचारे ।
मोर चर्म्माम्बर एइ ना भाय इहारे ॥१५३
भाल कहे चर्म्माम्बर दम्भ लागि परि ।

चर्म्माम्बर परिधाने संसार ना तरि ॥१५४
आजि हैते ना परिब एइ चर्म्माम्बर ।
प्रभु वहिर्व्वास आनाइला जानिया अन्तर ॥१५५
चर्म्म छाड़ि ब्रह्मानन्द परिल वसन ।
प्रभु आसि कैल ताँर चरण वन्दन ॥१५६
भारती कहे, तोमार आचार लोक शिखाइते ।
पुन ना करिबे नति भय पाइ चिते ॥१५७
सम्प्रति दुइ ब्रह्म इँहा चलाचल ।
जगन्नाथ अचल ब्रह्म, तुमित सचल ॥१५८
तुमि गौरवर्ण तिँह श्यामलवरण ।
दुइ ब्रह्मे कैल सब जगत तारण ॥१५९
प्रभु कहे, सत्य कह तोमार आगमने ।
दुइ ब्रह्म प्रकटिला श्रीपुरुषोत्तमे ॥१६०
ब्रह्मानन्द नाम तुमि गौरब्रह्म चल ।
श्यामब्रह्म जगन्नाथ वसियाछे अचल ॥१६१
भारती कहे, सार्व्वभौम मध्यस्थ हइया ।
इँहा सह आमार न्याय बुझ मन दिया ॥१६२
व्याप्य-व्यापक-भावे जीव ब्रह्म जानि ।
जीव व्याप्य, ब्रह्म व्यापक शास्त्रेते वाखानि १६३
चर्म्म घुचाइया कैले आमार शोधन ।
दोँहार व्याप्य-व्यापकत्वे एइ त कारण ॥१६४

तथाहि महाभारते दानधर्म्मे सहस्रनामस्तोत्रे

सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी ।
सन्न्यासकृत् समः शान्तो निष्ठाशान्तिपरायणः ॥५

महाभारत के दानधर्म्मस्थ सहस्रनामस्तोत्र में लिखित है—सुवर्ण वर्ण, हेमाङ्ग, वराङ्ग, चन्दनाङ्गदी सन्न्यासकृत् समः शान्त निष्ठा शान्ति परायण ॥५॥

एइ सब नामेर इँहो हयेन निजास्पद ।
चन्दनाक्त प्रसाद डोर श्रीभुज अङ्गद ॥१६५
भट्टाचार्य्य कहे, भारती देखि तोमार जय ।
प्रभु कहे, येइ कह सेइ सत्य हय ॥१६६
गुरु शिष्य न्याये सत्य शिष्य पराजय ।
भारती कहे, एहो नहे अन्य हेतु हय ॥१६७
भक्त ठाँइ तुमि हार ए तोमार स्वभाव ।
आर एक शुन तुमि आपन प्रभाव ॥१६८
आजन्म करिनु आमि निराकार ध्यान ।
तोमा देखि कृष्ण हैला मोर विद्यमान ॥१६९
कृष्णनाम मुखे स्फुरे मने नेत्रे कृष्ण ।
तोमाके तद्रूप देखि हृदय सतृष्ण ॥१७०
विल्वमङ्गल कहिल यैछे दशा आपनार ।
इहा देखि सेइ दशा हइल आमार ॥१७१

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे
शान्तभक्तिरसलहर्य्यां

विल्वमङ्गलवाक्यम्—

अद्वैतवीथीपथिकैरुपास्याः
स्वानन्दसिंहासनलब्धदीक्षाः ।
हठेन केनापि वयं शठेन
दासीकृता गोपवधूविटेन ॥६॥

टीका— अद्वैतवीथीपथिकैः उपास्याः उपासकाः, स्वानन्दसिंहासनलब्धदीक्षाः ब्रह्मानन्द-सिंहासनप्राप्त-दीक्षाः वयं केनापि शठेन गोपवधूविटेन नन्दसुतेन हठेन बलेन दासीकृताः ॥६॥

श्रीकृष्ण कर्णामृत में लिखित है—
ब्रह्मानन्दानुभव करने के निमित्त अद्वैत पथ के पथिकों की उपासना में हम सब नियुक्त थे । इस समय हठात् एक शठ लम्पट गोपवधु प्रियने हम सब को दासी बना लिया है ॥६॥

प्रभु कहे, कृष्ण तोमार गाढ़ प्रेमा हय ।
याँहा नेत्र पड़े ताँहा श्रीकृष्ण स्फूरय ॥१७२
भट्टाचार्य्य कहे, दुँहार सुसत्य वचन ।
आगे यदि कृष्ण देन साक्षात् दर्शन ॥१७३
प्रेम विना कभु नहे ताँर साक्षात् कार ।
इँहार कृपाते हय दर्शन इँहार ॥१७४
प्रभु कहे, विष्णु विष्णु ! कि कह सार्व्वभौम ।
अतिस्तुति हय एइ निन्दार लक्षण ॥१७५
एत बलि भारती लञा निजवासा आइला ।
भारती गोसाञि प्रभुर निकटे रहिला ॥१७६
रामभद्राचार्य्य आर भगवान् आचार्य्य ।
प्रभुपाशे रहिला दुँहे छाड़ि अन्य कार्य्य ॥१७७
काशीश्वर गोसाञि आइला आर दिने ।
सम्मान करिया प्रभु राखिल निज स्थाने ॥१७८
प्रभुरे करान लञा ईश्वर दर्शन ।
आगे लोकभिड़ सब करे निवारण ॥१७९
यत नद नदी यैछे समुद्रे मिलय ।
ऐछे महाप्रभुर भक्त ताँहा ताँहा हय ॥१८०
सबे आसि मिलिला प्रभुर श्रीचरणे ।
प्रभु कृपा करि सबारे राखिला निज स्थाने १८१
एइ त कहिनु प्रभुर वैष्णव मिलन ।
इहा येइ शुने पाय चैतन्य-चरण ॥१८२
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे-यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१८३

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे
वैष्णवमिलनं नाम दशमः
परिच्छेदः ॥१०॥



❀ एकादश परिच्छेद ❀

अत्युद्दण्डं ताण्डवं गौरचन्द्रः
कुर्व्वन् भक्तैः श्रीजगन्नाथगेहे ।
नानाभावालङ्कृताङ्गः स्वधाम्ना
चक्रे विश्वं प्रेमवन्यानिमग्नम् ॥१॥

टीका—गौरचन्द्रः नानाभावालङ्कृताङ्गः विविधभाव-भूषितविग्रहः सन् श्रीजगन्नाथ गेहे श्रीजगन्नाथमन्दिरे भक्तैः सह अत्युद्दण्डं ताण्डवं नृत्यं कुर्व्वन् सन् स्वधाम्ना विश्वं जगत् प्रेमवन्यानिमग्नं चक्रे ॥१॥

गौरचन्द्र विविध भाव विभूषण से समलङ्कृत होकर भक्तवृन्द के सहित जगन्नाथ मन्दिर में अतीव उद्धत नृत्य करके निज प्रभाव के द्वारा जगत् को प्रेम वन्या में निमग्न किये थे ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
आर दिन सार्व्वभौम कहे प्रभुस्थाने ।
अभयदान देह तबे करि निवेदने ॥२
प्रभु कहे, कह तुमि किछु नाहि भय ।
योग्य हैले करिब, अयोग्य हैले नय ॥३
सार्व्वभौम कहे, एइ प्रतापरुद्र राय ।
उत्कण्ठित हञा तोमा मिलिबारे चाय ॥४
कर्णे हस्त दिया प्रभु स्मरे नारायण ।
सार्व्वभौम कह केन अयोग्यवचन ॥५
सन्नचासी विरक्त आमार राजदरशन ।
स्त्री-दरशन-सम विषेर भक्षण ॥६

तथाहि श्रीचैतन्यचन्द्रोदयनाटके (८।२७)—

सार्व्वभौमं प्रति श्रीचैतन्यदेववाक्यम्—

निष्किञ्चनस्य भगवद्भजनोन्मुखस्य
पारं परं जिगमिषोर्भवसागरस्य ।
सन्दर्शनं विषयिणामथ योषिताञ्च
हा हन्त हन्त विषभक्षणतोऽप्यसाधुः ॥२॥

टीका—निष्किञ्चनस्य सर्व्वत्यागिनः पर केवलं भवसागरस्य संसारसमुद्रस्य पारं जिगमिषोः भगवद्भजनोन्मुखस्य विषयिणां अथ-अथवा योषिताञ्च सन्दर्शनं हा हन्त हन्त खेदे निन्दायाञ्च, विषभक्षणतः विषसेवनात् अपि असाधुः निन्दितं मन्यते ॥२॥

जो व्यक्ति समस्त विषयो को परित्याग पूर्वक संसार समुद्र से उत्तीर्ण होकर भगवद् भजनोन्मुख हुआ है, उसके पक्ष में विषय भोगी का दर्शन वा नारी दर्शन,—विष भक्षण से भी निन्दित है ॥२॥

सार्व्वभौम कहे, सत्य तोमार वचन ।
जगन्नाथसेवक राजा किन्तु भक्तोत्तम ॥७
प्रभु कहे, तथापि राजा कालसर्पाकार ।
काष्ठनारीस्पर्शे यैछे उपजे विकार ॥८

तथाहि श्रीचैतन्यचन्द्रोदयनाटके (८।२८)—

सार्व्वभौमं प्रति श्रीचैतन्यदेववाक्यम्—

आकारादपि भेतव्यं स्त्रीणां विषयिणामपि ।
यथाहेर्मनसः क्षोभस्तथा तस्याकृतेरपि ॥३॥

टीका—स्त्रीणामपि, तथा विषयिणां विषय-भोगिनां आकारादपि आलेख्यादपि भेतव्यम् । तत्र दृष्टान्तः यथा—अहेर्भुजङ्गात्, तथा तस्य भुजङ्गस्य आकृतेः मनसः क्षोभः स्यात् ॥३॥

भुजङ्ग दर्शन से चित्त में जिस प्रकार भीति का सञ्चार होता है, उस प्रकार भुजङ्ग की कृत्रिम मूर्ति को देखने पर भी भय होता है, उसी प्रकार स्त्री वृन्द के एवं विषय भोगि व्यक्ति वृन्द के दर्शन से भी भय होता है ।।३।।

ऐछे बात पुनरपि मुखे ना आनिबे ।
पुन यदि कह आमा एथा ना देखिबे ।।६

भय पाञा सार्व्वभौम निज घरे गेला ।
हेन काले प्रतापरुद्र पुरुषोत्तमे आइला ।।१०

रामानन्द राय आइला गजपति सङ्गे ।
प्रथमेइ प्रभुरे आसि मिलिलेन रङ्गे ।।११

राय प्रणति कैल, प्रभु कैल आलिङ्गन ।
दुइ जने प्रेमावेशे करेन क्रन्दन ।।१२

राय सने प्रभुर देखि स्नेहव्यवहार ।
सब भक्तगण मने हैल चमत्कार ।।१३

राय कहे, तोमार आज्ञाय राजाके कहिल ।
तोमार इच्छाय राजा मोरे विषय छाड़ाइल ।१४

आमि कहिनु आमा हैते ना हय विषय ।
चैतन्यचरणे रहों यदि आज्ञा हय ।।१५

तोमार नाम शुनि राजा आनन्दित हैला ।
आसन हैते उठि मोरे आलिङ्गन कैला ।।१६

तोमार नाम शुनि हैल महाप्रेमावेश ।
मोर हाते धरि कहे पीरिति विशेष ।।१७

तोमार ये वर्त्तन तुमि खाओ से वर्त्तन ।
निश्चिन्त हइया सेव प्रभुर चरण ।।१८

आमि छार योग्य नहि ताँर दरशने ।
ताँरे येइ सेबे तार सफल जीवने ।।१९

परम कृपालु तिँह व्रजेन्द्रनन्दन ।
कोन जन्मे मोरे अवश्य दिवे दरशन ।।२०

ये ताँर प्रेम आर्त्ति देखिल तोमाते ।
तार एक लेश प्रीति नाहिक आमाते ।।२१

प्रभु कहेन, तुमि कृष्णभकत प्रधान ।
तोमारे ये प्रीति करे सेइ भाग्यवान् ।।२२

तोमाते एतेक प्रीति हइल राजार ।
एइ गुणे कृष्ण तारे करिबे अङ्गीकार ।।२३

तथाहि लघुभागवते उत्तरखण्डे भक्तामृते सप्तमाङ्कधृत आदिपुराणे—

अर्ज्जुनं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्—

ये मे भक्तजनाः पार्थ न मे भक्ताश्च ते जनाः ।
मद्भक्तानाञ्च ये भक्तास्ते मे भक्ततमा मताः ।।४।।

टीका—हे पार्थ ! ये जनाः मे भक्तजनाः मद्भक्तपरायणाः, ते जनाः मे मम भक्ताश्च न. ये जनाः मद्भक्तानाञ्च भक्ताः, ते जनाः मे मम भक्ततमाः मताः अभिहिताः ।।४।।

हे पार्थ ! जो व्यक्ति मेरे प्रति भक्ति करते हैं, किन्तु मदीय भक्त वृन्द के प्रति भक्ति नहीं करते हैं, वे सर्वथा भक्त मध्य में परि गणित नहीं होते हैं, किन्तु जो व्यक्ति, मदीय भक्त वृन्द के प्रति भक्तिमान् हैं, वे ही श्रेष्ठ भक्त हैं ।।४।।

तथाहि लघुभागवतामृते पञ्चमाङ्के पद्मपुराणीयं उत्तरखण्डवचनम्—

आराधनानां सर्व्वेषां विष्णोराराधनं परम् ।
तस्मात् परतरं देवि तदीयानां समर्च्चनम् ।।५।।

टीका—हे देवि ! गिरिजे ! सर्व्वेषां सुराणां आराधनानां मध्ये विष्णोराराधनं परं, तस्मात् तदीयानां समर्च्चनं पूजनं परतरं स्यात् ।।५।।

हे देवि पार्वति ! निखिल देव वृन्द, की आराधना से श्रीविष्णु की आराधना ही श्रेष्ठ है, किन्तु उस से भी भगवद् भक्त वृन्द की पूजा श्रेष्ठतम है ।।५।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।१९।२१)—

उद्धवं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्—

मद्भक्तपूजाभ्यधिका सर्व्वभूतेषु मन्मतिः ।

मदर्थेऽङ्गचेष्टा च वचसा मद्गुणेरणम् ॥६॥

टीका – हे अङ्ग उद्धव ! (परिचर्य्यायां आदरः आस्था, सर्व्वाङ्गैः करणैः अभिवन्दनं), तथा मदर्थेषु मनसः चेष्टा, वचसा च, तथा सद्गुणे मयि अर्पणं कर्म्म-समर्पणं च, तथा सर्व्वकामविसर्ज्जनं अलं व्यर्थं, सर्व्वभूतेषु मद्भक्तपूजा अभ्यधिका स्यात्, इति मम सम्मतिः ॥६॥

श्रीमद् भागवत के ११।१९।२१ में उक्त है—हे उद्धव ! मदीय सेवा में आदर, अष्टाङ्ग, प्रणाम, मन एवं वाक्य की चेष्टा—मेरे निमित्त, वाणी के द्वारा मदीय गुण कीर्त्तन, एवं आदर पूर्वक मेरे भक्त की पूजा करना, प्राणिमात्र में मैं अवस्थित हूँ—इस प्रकार बुद्धि रखना ही भक्ति लाभ का उपाय है ॥६।

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायां (६।७।२०)--

मैत्रेयं प्रति बिदुरवाक्यम् -

दुरापा ह्यल्पतपसः सेवा वैकुण्ठवर्त्मसु ।
यत्रोपगीयते नित्यं देवदेवो जनार्द्दनः ॥७॥

टीका—वैकुण्ठवर्त्मसु भगवद्भक्तेषु सेवा पूजा अल्पतपसः जनस्य हि निश्चितं दुरापा दुर्ल्लभा, यत्र भक्तेषु देवदेवः जनार्द्दनः नित्यं निरन्तरं उपगीयते ।७

श्रीमद् भागवत् के ३।७।२० में लिखित है—भगवद् भक्त वृन्द का सङ्ग ही दुर्लभ है, वे ही विष्णु लोक गमन के द्वार स्वरूप हैं, इस प्रकार महत् जनों की सेवा से श्रीहरि कथा श्रवण होता है, उस से श्रीहरि में प्रेम-ममत्व होता है, उस से ही देहादि अनुसन्धान भी विनष्ट होता है । इस प्रकार महत् जनों की सेवा स्वल्पतपाः व्यक्ति के पक्ष में दुर्लभ है ॥७॥

पुरी, भारती, गोसाञि, स्वरूप, नित्यानन्द ।
चारि गोसाञिर कैल राय चरणाभिवन्द ।२४
जगदानन्द मुकुन्दादि यत भक्तगण ।
यथायोग्य सब भक्ते करिला मिलन ॥२५
प्रभु कहे, राय देखिले कमललोचन ।
राय कहे, एबे याइ पाब दरशन ॥२६
प्रभु कहे, राय तुमि कि कर्म्म करिला ।
ईश्वर ना देखि आगे एथा केने आइला ॥२७
राय, कहे, चरण रथ, हृदय सारथि ।
याँहा लैञा याय ताँहा याय जीव रथी ॥२८
आमि कि करिव मन इँहा लैञा आइल ।
जगन्नाथ दरशने विचार ना कैल ॥२९
प्रभु कहे, याह शीघ्र कर दरशन ।
ऐछे घर याइ कर कुटुम्बमिलन ॥३०
प्रभु-आज्ञा पाञा राय चलिला दर्शने ।
रायेर प्रेमभक्तिरीति बुझे कोन् जने ॥३१
क्षेत्रे आसि राजा सार्व्वभौमे बोलाइल ।
सार्व्वभौमे नमस्कारि ताँरे पुछिल ॥३२
मोर लागि प्रभुपदे कैल निवेदन ।
सार्व्वभौम कहे, कैल अनेक यतन ॥३३
तथापि ना करे तिँह राजदरशन ।
क्षेत्र छाड़ि पुन यदि करि निवेदन ॥३४
शुनिया राजार मने दुःख उपजिल ।
विषाद करिया किछु कहिते लागिल ॥३५
पापी नीच उद्धारिते ताँर अवतार ।
शुनि जगाइ माधाइ तिँह करिल उद्धार ॥३६
प्रतापरुद्र छाड़ि करिबेन जगत उद्धार ।
एइ प्रतिज्ञा करि जानि करियाछेन अवतार ॥३७

तथाहि श्रीचैतन्यचन्द्रोदयनाटके (८।३४)--

सार्व्वभौमं प्रति प्रतापरुद्रवाक्यम्--

अदर्शनीयानपि नीचजातीन्
संवीक्षते हन्त तथापि नो माम् ।
मदेकवर्ज्यं कृपयिष्यतीति
निर्णीय किं सोऽवततार देवः ॥८॥

टीका—सः गौरः अदर्शनीयानपि नीचजातीन् संवीक्षते, तथापि हन्त खेदे मां प्रतापरुद्रं नो पश्यति। सः देवः मदेकवर्ज्यं अखिलान् कृपयिष्यति, इति निर्णीय किं अवततार अवतीर्णोऽभूत ? ॥८॥

हाय ! गौरचन्द्र दर्शन के अयोग्य नीच जाति को भी दर्शन प्रदान करते हैं, तथापि मुझ को दर्शन नहीं देते हैं, वह प्रभु क्या मुझ को छोड़कर ही आर सब को कृपा करने के निमित्त अवतीर्ण हुये हैं ? ॥८॥

ताँर प्रतिज्ञा, ना करिब राजदरशन ।
मोर प्रतिज्ञा, ताँहा बिना छाड़िब जीवन ॥३८
यदि सेइ महाप्रभुर ना पाइ कृपाधन ।
किवा राज्य, किवा देह, सब अकारण ॥३९
एत शुनि भट्टाचार्य्य इहला चिन्तत ।
राजार अनुराग देखि हइला विस्मित ॥४०
भट्टाचार्य्य कहे, देव ! ना कर विषाद ।
तोमार उपरे हैवे अवश्य प्रसाद ॥४१
तेँह प्रेमाधीन तोमार प्रेम गाढ़तर ।
अवश्य करिबे कृपा तोमार उपर ॥४२
तथापि कहिये आमि एक उपाय ।
एइ उपाय करिह प्रभु देखिवे याहाय ॥४३
रथयात्रादिने प्रभु सब भक्त लञा ।
रथ-आगे नृत्य करेन प्रेमाविष्ट हञा ॥४४
प्रेमावेशे पुष्पोद्याने करेन प्रवेश ।
सेइ काले तुमि एका छाड़ि राजवेश ॥४५
कृष्णरासपञ्चाध्यायी करिते पठन ।
एकले गिया महाप्रभुर धरिबे चरण ॥४६
वाह्यज्ञान नाहि से काले कृष्णनाम शुनि ।
आलिङ्गन करिबेन तोमाय वैष्णव जानि ॥४७
रामानन्दराय आजि तोमार प्रेम गुण ।
प्रभु-आगे कहिल ताते फिरियाछे मन ॥४८
शुनि गजपतिमने सुख उपजिल ।
प्रभुरे मिलिते एइ युक्ति दृढ़ कैल ॥४९
स्नानयात्रा कबे हबे पुछिल भट्टेरे ।
भट्ट कहे, तिन दिन आछये यात्रारे ॥५०
स्नानयात्रा देखि प्रभु पाइल बड़ सुख ।
ईश्वरेर अनवसरे हैल महादुःख ॥५१
गोपीभावे प्रभु विरहे विह्वल हइया ।
आलालनाथे गेला प्रभु सबारे छाड़िया ॥५२
पाछे भक्तगण गेला प्रभुर चरणे ।
गौड़ हैते भक्त आइसे कैल निवेदने ॥५३
सार्व्वभौम नीलाचले आइला प्रभु लञा ।
प्रभु आइला राजार ठाञि कहिला आसिञा ५४
हेन काले आइला ताँहा गोपीनाथाचार्य्य ।
राजाके आशीर्व्वाद करि कहे शुन भट्टाचार्य्य ५५
गौड़ हैते वैष्णव आसियाछे दुइ शत ।
महाप्रभुर भक्त सब महाभागवत ॥५६
नरेन्द्र आसिया सबे हैला विद्यमान ।
ताँ सबार चाहि वासा प्रसाद समाधान ॥५७
राजा कहे, पड़िछारे आमि आज्ञा करिब ।
वासा-आदि ये चाहि पड़िछा सब दिब ॥५८
महाप्रभुर गण यत आइला गौड़ हैते ।
भट्टाचार्य्य एके एके देखाह आमाते ॥५९
भट्ट कहे, अट्टालिका कर आरोहण ।
गोपीनाथ चिने सबाके करावे दर्शन ॥६०
आमि काहो नाहि चिनि चिनिते मन हय ।
गोपीनाथाचार्य्य सबार करावे परिचय ॥६१

एत बलि तिन जन अट्टालि चड़िला ।
हेन काले वैष्णवगण निकटे आइला ॥६२
दामोदर, स्वरूप, गोविन्द तिन जन ।
माला प्रसाद लञा याय याँहा वैष्णवगण ।६३
प्रथमेइ महाप्रभु पाठाइला दुँहारे ।
राजा कहे, दुइ कोन् चिनाह आमारे ॥६४
भट्टाचार्य्य कहे, एइ स्वरूप दामोदर ।
महाप्रभुर इँह हय द्वितीय कलेवर ॥६५
द्वितीय गोविन्द भृत्य इँहा सबा दिया ।
माला पाठाञाछेन प्रभु गौरब करिया ॥६६
आदौ माला अद्वैतेरे स्वरूप पराइला ।
पाछे गोविन्द द्वितीय माला ताँरे दिल ॥६७
तबे गोविन्द दण्डवत् कैल आचार्य्येरे ।
तारे ना चिनेन आचार्य्य पुछिला दामोदरे ।६८
दामोदर कहेन, इँहार गोविन्द नाम ।
ईश्वरपुरीर सेवक अति गुणवान् ॥६९
प्रभुसेवा करिते इँहारे पुरी आज्ञा दिला ।
अतएव प्रभु इँहाके निकटे राखिला ॥७०
राजा कहे, यारे माला दिल दुइ जन ।
आश्चर्य्य तेज एइ बड़ महान्त कोन् जन ॥७१
आचार्य्य कहे, इँहार नाम अद्वैत आचार्य्य ।
महाप्रभुर मान्यपात्र सर्व्वशिरोधार्य्य ॥७२
श्रीवास पण्डित इँह पण्डित वक्रेश्वर ।
विद्यानिधि आचार्य्य इँह पण्डित गदाधर ॥७३
आचार्य्यरत्न इँह आचार्य्य पुरन्दर ।
गङ्गादास पण्डित इँह पण्डित शङ्कर ॥७४
एइ मुरारिगुप्त, एइ पण्डित नारायण ।
हरिदास ठाकुर एइ भुवन पावन ॥७५

एइ हरिभट्ट, एइ श्रीनृसिंहानन्द ।
एइ वासुदेव दत्त, एइ शिवानन्द ॥७६
गोविन्द, माधव आर वासुदेव घोष ।
तिन भाइ कीर्त्तने करे प्रभुर सन्तोष ॥७७
राघव पण्डित एइ आचार्य्यनन्दन ।
श्रीमान् पण्डित एइ श्रीकान्त नारायण ॥७८
शुक्लाम्बर एइ, एइ श्रीधर विजय ।
वल्लभसेन एइ पुरुषोत्तम सञ्जय ॥७९
कुलीनग्रामवासी एइ सत्यराज खान् ।
रामानन्द आदि एइ देख विद्यमान ॥८०
मुकुन्ददास, नरहरि, श्रीरघुनन्दन ।
खण्डवासी चिरञ्जीव आर सुलोचन ॥८१
कतेक कहिब एइ देख यत जन ।
श्रीचैतन्यगण सब चैतन्य जीवन ॥८२
राजा कहे, देखि आमार हैल चमत्कार ।
वैष्णवेर ऐछे तेज नाहि देखि आर ॥८३
कोटि-सूर्य्य-मम सबार उज्ज्वल वरण ।
कभु नाहि शुनि एइ मधुर कीर्त्तन ॥८४
ऐछे प्रेम ऐछे नृत्य ऐछे हरिध्वनि ।
काँहा नाहि देखि ऐछे काँहा नाहि शुनि ॥८५
भट्टाचार्य्य कहे, तोमार सुसत्य वचन ।
चैतन्येर सृष्टि एइ नामसङ्कीर्त्तन ॥८६
अवतरि चैतन्य कैल धर्म्मप्रचारण ।
कलिकालेर धर्म्म कृष्ण-नाम-संङ्कीर्त्तन ॥८७
सङ्कीर्त्तन-यज्ञे ताँर करे आराधन ।
सेइ त सुमेधा, आर कलिहत जन ॥८८

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।५।३२)—

कृष्णवर्णं त्विषाकृष्णं साङ्गोपाङ्गास्त्रपार्षदम् ।
यज्ञैः सङ्कीर्त्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः ॥६॥

श्रीमद् भागवत के ११।५।३२ में उक्त है—

श्रीमद् भागवत में कर भाजन निमि महाराज को कहे थे—कलियुग में श्रीकृष्णावतार का ही प्राधान्य है, अतएव कृष्णवर्ण अर्थात् 'कृष्ण' वर्ण द्वय जिनके मुख में सर्वदा है, एवं कृष्ण का ही वर्णन करते हैं, देह कान्ति--अकृष्ण है-अर्थात् पीत वर्ण है, अङ्ग नित्यानन्दाद्वैत, उपाङ्ग-तदवयवादि—श्रीवासादि भक्तवृन्द, अस्त्र एवं परिकर गदाधर गोविन्दादि पार्षद वृन्द समन्वित अवतीर्ण भगवान् कृष्ण की मानव गण नाम सङ्कीर्त्तन रूप यज्ञके द्वारा कलियुगमें पूजा करते हैं।

स्तवमाला ग्रन्थ में श्रीरूप गोस्वामी पादने कहा है—कलियुग में सुधी मानव गण नाम सङ्कीर्त्तन मय यज्ञ के द्वारा जिनकी आराधना करते हैं।

जो इन्द्र नीलमणिवत् उज्ज्वल कृष्ण वर्ण होने पर भी श्रीराधिका की देह कान्ति से मण्डित होकर गौर वर्ण हुये हैं,एवं सुधीगण जिनका वर्णन चतुर्थाश्रमी परमहंस वृन्द के आराध्य रूप में करते हैं, इस प्रकार चैतन्याकृति महापुरुष मेरे प्रति दया प्रकाश करें।।९।।

राजा कहे, शास्त्रप्रमाण चैतन्य हय कृष्ण ।
तबे केन पण्डित सब ताहाते वितृष्ण ॥८९
भट्ट कहे, ताँर कृपा-लेश हय यारे ।
सेइ से ताँहारे कृष्ण करि लैते पारे ॥९०
ताँर कृपा नाहि यारे पण्डित नहे केने ।
देखिले शुनिले तारे ईश्वर ना माने ॥९१

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१४।२९)---

तथापि ते देव पदाम्बुजद्वय-
प्रसादलेशानुगृहीत एव हि ।
जानाति तत्त्वं भगवन्महिम्नो
न चान्य एकोऽपि चिरं विचिन्वन् ॥१०

श्रीमद् भागवत के १०।१४।२९ में लिखित है-ब्रह्मा श्रीकृष्ण को कहे थे—देव ! हे भगवान् ! मुक्ति,—ज्ञान लभ्य होने पर भी आपके पदारविन्द युगल के प्रसाद लेश से अनुगृहीत व्यक्ति ही आपके महिमा तत्त्व को जान सकते हैं। तद्भिन्न अपर कोई असत् सङ्ग परित्याग पूर्वक चिरदिन परिमार्थ विचार करने पर भी उस को जान नहीं सकते हैं।।१०।।

राजा कहे, सबे जगन्नाथ ना देखिया ।
चैतन्येर वासाय आगे चलिला धाइया ॥९२
भट्ट कहे, एइ स्वाभाविक प्रेम-रीत ।
महाप्रभु मिलिते सबार उत्कण्ठित चित ॥९३
आगे ताँरे मिलि सबे ताँरे आगे लञा ।
ताँर सङ्गे जगन्नाथ देखिब आसिया ॥९४
राजा कहे, भवानन्देर पुत्र वाणीनाथ ।
महाप्रसाद लञा सङ्गे जन पाँच सात ॥९५
महाप्रभुर आलये करिल गमन ।
एत महाप्रसाद वा चाहि कि कारण ॥९६
भट्ट कहे, भक्तगण आइल जानिया ।
प्रभुर इङ्गिते प्रसाद याय ताँहा लइया ॥९७
राजा कहे, उपवास क्षौर तीर्थेर विधान ।
ताहा ना करिया केने खाव अन्न पान ॥९८
भट्ट कहे, तुमि कह सेइ विधि धर्म्म ।
एइ रागमार्गेर आछे सूक्ष्म धर्म्म कर्म्म ॥९९
ईश्वरेर परोक्ष आज्ञा क्षौर उपोषण ।
प्रभुर साक्षात् आज्ञा प्रसाद भक्षण ॥१००
ताँहा उपवास याँहा नाहि महाप्रसाद ।
प्रभु आज्ञा प्रसादत्याग हय अपराध ॥१०१
विशेष श्रीहस्ते प्रभु करिबे परिवेशन ।
एत लाभ छाड़ि कोन् करे उपोषण ॥१०२
पूर्व्वे प्रभु प्रसादान्न मोरे आनि दिल ।
प्राते शय्याय बसि आमि सेइ अन्न खाइल ॥१०३

यारे कृपा करि करे हृदये प्रेरण ।
कृष्णाश्रये छाड़ सेइ वेदलोक धर्म्म ॥१०४

तथाहि श्रीमद्भागवते (४।२९।४६)---

यदा यस्यानुगृह्णाति भगवानात्मभावित: ।
स जहाति मतिं लोके वेदे च परिनिष्ठिताम् ॥११

टीका—आत्मभावित: मनसि चिन्तित: सन् भगवान् यदा यस्य अनुगृह्णाति, तदैव स: लोके वेदे च परिनिष्ठितां मतिं जहाति ॥११॥

श्रीमद्भागवत के ४।२९।४६ में उक्त है—
जिस समय व्यक्ति निज आत्मा में भगवान् की बाध्य बाधकता की चिन्ता करता है, उस समय वह भगवदनुग्रह को प्राप्त करता है, उस से काम्यकर्म अनुष्ठान मार्ग में परिनिष्ठित बुद्धि को परित्याग करता है ॥११॥

तवे राजा अट्टालिका हैते आइला ।
काशीमिश्र पड़िछा पात्र दुँहा बोलाइया ॥१०५
प्रतापरुद्र आज्ञा दिल सेइ दुइ जने ।
प्रभुस्थाने आसियाछे यत भक्तगणे ॥१०६
सबारे स्वच्छन्द वासा स्वच्छन्द प्रसाद ।
स्वच्छन्दे दर्शन कराइल येन नहे बाद ॥१०७
प्रभुर आज्ञा धरिह दुँहे सावधान हैया ।
आज्ञा नहे ताहा करिह ईङ्गित बुझिया ॥१०८
एत बलि विदाय दिल सेइ दुइ जने ।
सार्व्वभौम देखि आइला वैष्णवमिलने ।१०९
गोपीनाथाचार्य्य भट्टाचार्य्य सार्व्वभौम ।
दूरे रहि देखे प्रभुर वैष्णव-मिलन ॥११०
सिंहद्वार डाहिने छाड़ि सब वैष्णवगण ।
काशीमिश्रगृह-पथे करिला गमन ॥१११
हेन काले महाप्रभु निजगण सङ्गे ।
वैष्णव मिलिया आसि पथे महारङ्गे ॥११२

अद्वैत करिल प्रभुर चरण वन्दन ।
आचार्य्यरे कैल प्रभु प्रेम आलिङ्गन ॥११३
प्रेमानन्दे हैल दुँहे परम अस्थिर ।
समय देखिया प्रभु हैला किछु धीर ॥११४
श्रीवासादि कैल प्रभुर चरण वन्दन ।
प्रत्येके करिला प्रभु प्रेम आलिङ्गन ॥११५
एके एके सब भक्ते कैल सम्भाषण ।
सबा लैया अभ्यन्तरे करिला गमन ॥११६
मिश्रेर आवास सेइ हय अल्प स्थान ।
असंख्य वैष्णव ताँहा हैल परिमाण ॥११७
आपन निकटे प्रभु सबा बसाइल ।
आपने श्रीहस्ते सबाय माल्य चन्दन दिल ।११८
भट्टाचार्य्य आचार्य्य आइला प्रभु-स्थाने ।
यथायोग्य मिलन करिल सबासने ॥११९
अद्वैतेरे प्रभु कहे विनयवचने ।
आजि आमि पूर्ण हैलाम तोमार आगमने १२०
अद्वैत कहे, ईश्वरेर एइ स्वभाव हय ।
यद्यपि आपने पूर्ण षड़ैश्वर्य्यमय ॥१२१
तथापि भक्त सङ्गे ताँर हय सुखोल्लास ।
भक्तसङ्गे करे नित्य विविध विलास ॥१२२
वासुदेव देखि प्रभु आनन्दित हैया ।
तारे किछु कहे तार अङ्गे हस्त दिया ॥१२३
यद्यपि मुकुन्द आमार सङ्गे शिशु हैते ।
ताहा हैते अधिक सुख तोमाके देखिते ॥१२४
वासु कहे, मुकुन्द आदौ पाइल तोमार सङ्ग ।
तोमार चरणप्राप्ति सेइ पुनर्ज्जन्म ॥१२५
छोट हैया मुकुन्द एवे हैला मोर ज्येष्ठ ।
तोमार कृपापात्र ताते सर्व्वगुणश्रेष्ठ ॥१२६

पुन प्रभु कहे, आमि तोमार निमित्ते ।
दुइ पुस्तक आनियाछि दक्षिण हइते ॥१२७
स्वरूपेर ठाञि आछे लह लेखाइया ।
वासुदेव आनन्द हैला पुस्तक पाइया ॥१२८
प्रत्येके सकल वैष्णव लिखिया लइल ।
क्रमे क्रमे दुइ पुस्तक जगत् व्यापिल ॥१२९
श्रीवासाद्ये कहे प्रभु करि महाप्रीत ।
तोमार चारि भाइर आमि हइ मूल्यक्रीत १३०
श्रीवास कहेन, केने कह विपरीत ।
कृपा मूल्ये चारि भाइ तोमार मूल्यक्रीत ॥१३१
शङ्कर देखिया प्रभु कहे दामोदरे ।
सगौरव प्रीति आमार तोमार उपरे ॥१३२
शुद्ध केवल प्रेम आमार इहार उपर ।
अतएव मोर सङ्गे राखह शङ्कर ॥१३३
दामोदर कहे, शङ्कर छोट आमा हैते ।
एबे आमार बड़ भाइ तोमार कृपाते ॥१३४
शिवानन्दे कहे प्रभु तोमार आमाते ।
गाढ़ अनुराग हय जानि आगे हैते ॥१३५
शुनि शिवानन्द सेन प्रेमाविष्ट हैया ।
दण्डवत् हैया पड़े श्लोक पड़िया ॥१३६

तथाहि श्रीचैतन्यचन्द्रोदयनाटके

निमज्जतोऽनन्तभवार्णवान्त-
श्चिराय मे कूलमिवासि लब्धः ।
त्वयापि लब्धं भगवन्निदानी-
मनुत्तमं पात्रमिदं दयायाः ॥१२॥

टीका—हे अनन्त ! भवार्णवान्तः संसारसागर-मध्ये चिराय चिरकालं व्याप्य निमज्जतः निपतितस्य मे मम सम्बन्धे लब्धः त्वमेव कूलमिव असि । हे भगवन् ! इदानीं दयायाः इदं अनुत्तमं नीचं पात्रं त्वयापि लब्धम् ॥१२॥

हे अनन्त ! बहुदिनावधि मैं संसार सागर में निमग्न था, आप ही उसके कूलस्वरूप हैं, आप को प्राप्त किया, एवं हे भगवन् ! आपने भी इस कुपात्र को प्राप्त किया ॥१२॥

प्रथमेइ मुरारिगुप्त प्रभुरे ना मिलिया ।
बाहिरे पड़िया आछे दण्डवत् हैया ॥१३७
मुरारि ना देखि प्रभु करे अन्वेषण ।
मुरारि लइते धाञा आइला बहुजन ॥१३८
तृण दुइ गुच्छ मुरारि दशने धरिया ।
महाप्रभुर आगे गेला दैन्यदीन हैया ॥१३९
मुरारि देखिल प्रभु उठिला मिलिते ।
पाछे पाछे भागे मुरारि लागिला बलिते ।१४०
मोरे ना छुँइह मुञि अधम पामर ।
तोमार स्पर्शयोग्य नहे पाप कलेबर ॥१४१
प्रभु कहे, मुरारि कर दैन्य सम्बरण ।
तोमार दैन्य देखि मोर विदीर्ण हय मन ॥१४२
एत बलि प्रभु तारे करि आलिङ्गन ।
निकटे बसाइया करे अङ्गसम्मार्जन ॥१४३
आचार्य्यरत्न, विद्यानिधि, पण्डित गदाधर ।
हरिभट्ट, गङ्गादास, आचार्य्य पुरन्दर ॥१४४
प्रत्येके सबार प्रभु करि गुणगान ।
पुनः पुनः आलिङ्गिया करिल सम्मान ॥१४५
सबारे सम्मानि प्रभुर इहल उल्लास ।
हरिदास ना देखिया कहे काँहा हरिदास ।१४६
दूरे हैते हरिदास गोसाञि देखिया ।
राजपथप्रान्ते पड़ि आछे-दण्डवत हैञा ॥१४७
मिलनस्थाने आसि प्रभुरे ना मिलिला ।
राजपथप्रान्ते दूरे पड़िया रहिला ॥१४८
भक्त सब धाञा आइला हरिदासे निते ।

प्रभु तोमाय मिलिते चाहे चलह तुरिते ॥१४९
हरिदास कहे, मुञि नीचजाति छार ।
मन्दिर निकट याइते नाहि अधिकार ॥१५०
निभृते टोटामध्ये यदि स्थान खानिक पाओ ।
ताँहा पड़ि रहों एका काल गोङाओ ॥१५१
जगन्नाथेर सेवक मोर स्पर्श नाहि हय ।
ताँहा पड़ि रहों मोर एइ वाञ्छा हय ॥१५२
एइ कथा लोक गिया प्रभुरे कहिल ।
शुनि महाप्रभु मने सुख बड़ पाइल ॥१५३
हेन काले काशीमिश्र पड़िछा दुइ जन ।
आसिया करिल प्रभुर चरण वन्दन ॥१५४
सर्व्व वैष्णवेरे देखि सुखी बड़ हैला ।
यथायोग्य सबार सने आनन्दे मिलिला ॥१५५
प्रभुपदे दुइ जन कैल निवेदन ।
आज्ञा देह वैष्णवेर करि समाधान ॥१५६
सबार करियाछि वासागृह संस्थान ।
महाप्रसादान्न सबार करि समाधान ॥१५७
प्रभु कहे, गोपीनाथ याह सबा लञा ।
याँहा याँहा कहे ताँहा वासा देह याञा ॥१५८
महाप्रसादान्न देह वाणीनाथस्थाने ।
सर्व्व वैष्णवेर एहो करिबे समाधाने ॥१५९
आमार निकटे एइ पुष्पेर उद्याने ।
एकखानि घर आछे परम निर्ज्जने ॥१६०
सेइ घर आमाके देह आछे प्रयोजन ।
निभृते बसिया ताँहा करिब स्मरण ॥१६१
मिश्र कहे, सब तोमार, माग कि कारण ।
आपन इच्छाय लह चाह येइ स्थान ॥१६२
आमि दुइ हइ तोमार दास आज्ञाकारी ।
येइ चाहि सेइ आज्ञा कर कृपा करि ॥१६३
एत कहि दुइ जन विदाय करिला ।
गोपीनाथ वाणीनाथ दुइ सङ्गे दिला ॥१६४
गोपीनाथे देखाइल सब वासाघर ।
वाणीनाथ ठाञि दिल प्रसाद विस्तर ॥१६५
वाणीनाथ आइला अन्न पिठा पाना लञा ।
गोपीनाथ आइला वासार संस्कार करिया ॥१६६
महाप्रभु कहे, शुन सब वैष्णवगण ।
निज निज वासा सबे करह गमन ॥१६७
समुद्रस्नान करि कर चूड़ा दरशन ।
तबे एथा आसि आजि करिबे भोजन ॥१६८
प्रभु नमस्करि सबे वासाते चलिला ।
गोपीनाथाचार्य्य सबाय वासस्थान दिला ॥१६९
तबे प्रभु आइला हरिदास मिलने ।
हरिदास करे प्रेमे नामसंकीर्त्तने ॥१७०
प्रभु देखि पड़े आगे दण्डवत हञा ।
प्रभु आलिङ्गन दिल तारे उठाइञा ॥१७१
दुइ जने प्रेमावेशे करेन क्रन्दने ।
प्रभुगुणे भृत्य विकल प्रभु भृत्यगुणे ॥१७२
हरिदास कहे, प्रभु ना छुँइह मोरे ।
मुञि नीच अस्पृश्य परम पामरे ॥१७३
प्रभु कहे, तोमा स्पर्शि पवित्र हइते ।
तोमार पवित्र धर्म्म नाहिक आमाते ॥१७४
क्षणे क्षणे कर तुमि सर्व्वतीर्थे स्नान ।
क्षणे क्षणे कर तुम यज्ञ तप दान ॥१७५
निरन्तर कर चारि वेद अध्ययन ।
द्विज न्यासी हैते तुमि परम पावन ॥१७६

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।३२।७)--

कपिलदेवं प्रति देवहूतिवाक्यम्--

अहोबत श्वपचोऽतो गरीयान्
यज्जिह्वाग्रे वर्त्तते नाम तुभ्यम् ।
तेपुस्तपस्ते जुहुवुः सस्नुरार्य्या
ब्रह्मानूचुर्नाम गृणन्ति ये ते ।।१३।।

टीका—अहोवत विस्मये, यज्जिह्वाग्रे तुभ्यं प्रीणयितुं तव नाम वर्त्तते विद्यते, स श्वपचः अपि अतः अस्मादेव हेतोः गरीयान् श्रेष्ठः। ये जनाः ते नाम गृणन्ति, ते तप तेपुः, जुहुवुः होमं कृतवन्तः, सस्नुः, त एव आर्य्याः सदाचारपरायणाः ब्रह्म वेदं अनूचुः अधीतवन्तः ।।१३।।

श्रीमद्भागवत के ३।३२।७ में कपिल देव को देवहूति कही थीं—हे प्रभो ! जिसकी रसना में तुम्हारानाम विद्यमान है, वह चण्डाल होने पर भी पूज्य है, जो तुम्हारे नाम ग्रहण करते रहते हैं, वे ही तपस्वी, होमकारी तीर्थ स्नानी सदाचारी आर्य्य एवं वेदाध्यायी हैं ।।१३।।

एत बलि तारे लञा गेला पुष्पोद्याने ।
अति निभृत सेइ गृहे दिल वासा स्थाने ।।१७७
एइ स्थाने रह कर नामसङ्कीर्त्तन ।
प्रतिदिन आसि आमि करिब मिलन ।।१७८
मन्दिरेर चक्र देखि करिह प्रणाम ।
एइ ठाञि तोमार आसिबे प्रसादान्न ।।१७९
नित्यानन्द, जगदानन्द, दामोदर, मुकुन्द ।
हरिदासे मिलि सबे पाइल आनन्द ।।१८०
समुद्रस्नान करि प्रभु आइला निजस्थान ।
अद्वैतादि गेला सिन्धु करिबारे स्नान ।।१८१
आसि जगन्नाथेर कैल चूड़ा दरशन ।
प्रभुर आवासे आइला करिते भोजन ।।१८२
सबारे बसाइल प्रभु योग्यक्रम करि ।
श्रीहस्ते परिवेशन कैल गौरहरि ।।१८३
अल्प अन्न ना आइसे दिते प्रभुर हाते ।
दुइ तिन जनार भक्ष्य देन एकेक पाते ।।१८४
प्रभु ना खाइले केह ना करे भोजन ।
ऊर्द्ध्वहस्ते बसिया रहिला भक्तगण ।।१८५
स्वरूप गोसाञि प्रभुरे कैल निबेदन ।
तुमि ना बसिले केह ना करे भोजन ।।१८६
तोमार सङ्गे सन्न्यासी रहे यत जन ।
गोपीनाथाचार्य्य तादेर करियाछे निमन्त्रण १८७
आचार्य्य आसियाछे भिक्षार प्रसादान्न लञा ।
पुरी, भारती आछे अपेक्षा करिया ।।१८८
नित्यानन्द लञा भिक्षा करिते वैस तुमि ।
वैष्णवेरे परिवेशन करितेछि आमि ।।१८९
तबे प्रभु प्रसादान्न गोविन्दहाते दिल ।
यत्न करि हरिदास ठाकुरे पाठाइल ।।१९०
आपने बसिला सब सन्न्यासी लइया ।
परिबेशन करे आचार्य्य हरषित हैया ।।१९१
स्वरूप गोसाञि, दामोदर, जगदानन्द ।
वैष्णवेरे परिवेशन करे तिन जन ।।१९२
नाना पिठा पाना खाय आकण्ठ पूरिया ।
मध्ये मध्ये हरि कहे उच्च करिया ।।१९३
भोजनसमाप्ति हैल कैल आचमन ।
सबारे पराइल प्रभु माल्य चन्दन ।।१९४
विश्राम करिते सबे निज वासा गेला ।
सन्ध्याकाले आसि पुन प्रभुरे मिलिला ।।१९५
हेन काले रामानन्द आइला प्रभुस्थाने ।
प्रभु मिलाइला ताँरे सब वैष्णव-सने ।।१९६
सबा लञा गेला प्रभु जगन्नाथालय ।

कीर्त्तन आरम्भ ताँहा कैला महाशय ॥१९७
सन्ध्याधूप देखि आरम्भिला सङ्कीर्त्तन ।
पड़िछा आनि दिल सबारे माल्य चन्दन १९८
चारि दिके चारि सम्प्रदाय करे सङ्कीर्त्तन ।
मध्ये नृत्य करे प्रभु शचीर नन्दन ॥१९९
अष्ट मृदङ्ग बाजे बत्रिश करताल ।
हरिध्वनि करे वैष्णव कहे भाल भाल ॥२००
कीर्त्तनेर महामङ्गलध्वनि ये उठिल ।
चतुर्द्दशलोक भरि ब्रह्माण्ड भेदिल ॥२०१
पुरुषोत्तमवासी लोक आइल देखिबारे ।
कीर्त्तन देखि उड़िया लोक हैल चमतकारे २०२
तबे प्रभु जगन्नाथेर मन्दिर बेड़िया ।
प्रदक्षिण करि बुले नर्त्तन करिया ॥२०३
आगे पाछे गान करे चारि सम्प्रदाय ।
आछाड़ेर काले धरे नित्यानन्द राय ॥२०४
अश्रु पुलक कम्प प्रस्वेद हुङ्कार ।
प्रेमेर विकार देखि लोके चमतकार ॥२०५
पिचकारिर धारा येन अश्रु नयने ।
चारिदिकेर लोक सब करये सिनाने ॥२०६
बेड़ानृत्य महाप्रभु करि कतक्षण ।
मन्दिरेर पाछे रहि करेन कीर्त्तन ॥२०७
चारिदिके चारि सम्प्रदाय उच्चस्वरे गाय ।
मध्ये ताण्डव नृत्य करे गौरराय ॥२०८
बहुक्षण नृत्य करि प्रभु स्थिर हैला ।
चारि महान्तेरे तबे नाचिते आज्ञा दिला २०९
अद्वैत आचार्य्य नाचे एक सम्प्रदाय ।
आर सम्प्रदाये नाचे नित्यानन्दराय ॥२१०
आर सम्प्रदाये नाचे पण्डित वक्रेश्वर ।

श्रीवास नाचेन आर सम्प्रदायभितर ॥२१
मध्ये रहि महाप्रभु करेन दर्शन ।
ताँहा एक ऐश्वर्य्य ताँर हैल प्रकटन ॥२
चारिदिके नृत्य गीत करे यत जन ।
सबे देखे करे प्रभु आमारे दर्शन ॥२१
चारि जनेर नृत्य प्रभुर देखिते अभिलाष ।
सेइ अभिलाषे करे ऐश्वर्य्य प्रकाश ॥२१
दर्शने आवेश ताँर देखि मात्र जाने ।
केमते चौदिके देखे इहा नाहि जाने ॥२१
पुलिन भोजने येन कृष्ण मध्यस्थाने ।
चौदिकेर सखा कहे चाहे आमापाने ॥२१
नृत्य करिते येइ आइसे सन्निधाने ।
महाप्रभु करे तारे दृढ़ आलिङ्गने ॥२१
महानृत्य महाप्रेम महासङ्कीर्त्तन ।
देखि प्रेमानन्दे भासे नीलाचलेर जन ॥२१
गजपति राजा शुनि कीर्त्तनमहत्त्वे ।
अट्टाली चड़िया देखे स्वगण सहिते ॥२१
सङ्कीर्त्तन देखि राजार हैल चमतकार ।
प्रभुरे मिलिते उतकण्ठा बाड़िल अपार ।
कीर्त्तन समापि प्रभु देखि पुष्पाञ्जलि ।
सर्व्व वैष्णव लञा वासा आइला गौरहरि ।
पड़िछा आनिया दिल प्रसाद विस्तर ।
सबारे बाँटिया ताहा दिलेन ईश्वर ॥२२
सबारे विदाय दिल करिते शयन ।
एइमत लीला करे शचीर नन्दन ॥२२
यावत् आछिला सबे महाप्रभुर सङ्गे ।
प्रतिदिन एइमत करे कीर्त्तन रङ्गे ॥२२

एइत कहिनु प्रभुर कीर्त्तन विलास ।
येइ इहा शुने हय चैतन्येर दास ॥२२५
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२२६

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्य खण्डे बेड़ासङ्कीर्त्तनवर्णनं नाम एकादश परिच्छेदः ॥११॥



❀ द्वादश परिच्छेद ❀

श्रीगुण्डिचामन्दिरमात्मवृन्दैः
संमार्ज्जयन् क्षालनतः स गौरः ।
स्वचित्तवच्छीतलमुज्ज्वलञ्च,
कृष्णोपवेशौपयिकं चकार ॥१॥

टीका—सः गौरः आत्मवृन्दैः स्वीयभक्तसमूहैः सह श्रीगुण्डिचामन्दिरं श्रीजगन्नाथविहारमन्दिरं सम्माज्र्जयन्, क्षालनतः प्रक्षालनकरणाद्धेतोः स्वचित्तवत् निजमनोवत् शीतलं उज्ज्वलञ्च कृष्णोपवेशौपयिकं चकार ॥१॥

गौरचन्द्र-स्वीय भक्तवृन्द के सहित गुण्डिचा नामक जगन्नाथ के विहार मन्दिर मार्ज्जन एवं प्रक्षालण करके निज मनो मन्दिर वत् शीतल एवं विमल करके उस देव के उपवेशनोचित किये थे ॥१

जय जय महाप्रभु श्रीकृष्णचैतन्य ।
जय जय नित्यानन्द जयाद्वैत धन्य ॥१
जय जय श्रीवासादि गौरभक्तगण ।
शक्ति देह करि येन चैतन्यवर्णन ॥२
पूर्व्वे दक्षिण हैते यबे प्रभु आइला ।
ताँरे मिलिते गजपति उत्कण्ठित हैला ॥३
कटक हैते पत्री दिल सार्व्वभौम ठाञि ।
प्रभु-आज्ञा हय यदि देखिबारे याइ ॥४
भट्टाचार्य्य लिखिला प्रभुर आज्ञा ना हइल ।
पुनरपि राजा ताँरे पत्री पाठाइल ॥५
प्रभुर निकटे यत आछे भक्तगण ।
मोर लागि ता सबारे करिह निवेदन ॥६
सेइ सब दयालु मोरे हइया सदय ।
मोर लागि प्रभुपदे करेन विनय ॥७
ता सबार प्रसादे मिँलो श्रीप्रभुर पाय ।
प्रभुकृपा बिना मोरे राज्य नाहि भाय ॥८
यदि मोरे कृपा ना करिबे गौरहरि ।
राज्य छाड़ि योगी हइ' हइब भिखारी ॥९
भट्टाचार्य्य पत्री देखि चिन्तित हइया ।
भक्तगण-पाश गेला से पत्री लइया ॥१०
सबारे मिलिया कहिला राजविवरण ।
पाछे सेइ पत्री सबारे कराइल दर्शन ॥११
पत्री देखि सबार मने हइल विस्मय ।
प्रभुर पदे गजपतिर एत भक्ति हय ॥१२
सबे कहे, प्रभु तारे कभु ना मिलिबे ।
आमि सब कहि यदि दुःख से मानिबे ॥१३
सार्व्वभौम कहे, सबे चल एकबार ।
मिलिते ना कहिब, कहिब राजव्यवहार ॥१४
एत कहि सबे गेला महाप्रभुस्थाने ।
कहिते उन्मुख सबे ना कहे वचने ॥१५
प्रभु कहे, कि कहिते सबार आगमन ।
देखि ये कहिते चाह ना कह कि कारण ॥१६
नित्यानन्द कहे, तोमाय चाहि निवेदिते ।
ना कहिले रहिते नारि कहिते भय चिते ॥१७

योग्यायोग्य सब तोमाय चाहि निबेदिते ।
तोमा ना मिलिले राजा चाहे योगी हैते ॥१८
यद्यपि शुनिया प्रभुर कोमल हैल मन ।
तथापि बाहिरे कहे निष्ठुर वचन ॥१९
तोमा सबार इच्छा एइ, आमा सबा लञा ।
राजाके मिलेन इँहो कटक याइञा ॥२०
परमार्थ याउक लोके करिबे निन्दन ।
लोक रहुँ, दामोदर करिबे भर्त्सन ॥२१
तोमा सबार आज्ञाय आमि ना मिलि राजारे ।
दामोदर कहे यदि, तबे मिलि तारे ॥२२
दामोदर कहे, तुमि स्वतन्त्र ईश्वर ।
कर्त्तव्याकर्त्तव्य सब तोमार गोचर ॥२३
आमि कोन् क्षुद्र जीव तोमारे बिधि दिव ।
आपने मिलिबे ताँरे ताहा ये देखिब ॥२४
राजा तोमार स्नेह करे तुमि स्नेहवश ।
तार स्नेहे कराबे तोमा ताहार परश ॥२५
यद्यपि ईश्वर तुमि परम स्वतन्त्र ।
तथापि स्वभावे हओ प्रेम-परतन्त्र ॥२६
नित्यानन्द कहे, ऐछे हय कोन जन ।
ये तोमारे कहे कर राजा दरशन ॥२७
किन्तु अनुरागी लोकेर स्वभाव एक हय ।
इष्ट ना पाइले निज पराण छाड़य ॥२८
याज्ञिक ब्राह्मणी हय ताहाते प्रमाण ।
कृष्ण लागि पति आगे छाड़िल पराण ॥२९
तैछे युक्ति करि यदि कर अवधान ।
तुमिह ना मिल तारे रहे तार प्राण ॥३०
एक वहिर्व्वास यदि देह कृपा करि ।
ताहा पाञा प्राण राखे तोमार आशा धरि ।३१

प्रभु कहे, तुमि सब परम विद्वान् ।
येइ भाल हय सेइ कर समाधान ॥३
तबे नित्यानन्दगोसाञि गोविन्देर पाश ।
मागिया लइल प्रभुर एक वहिर्व्वास ॥३
सेइ वहिर्व्वास सार्व्वभौम-पाश दिल ।
सार्व्वभौम सेइ वस्त्र राजारे पाठाइल ॥३
वस्त्र पाञा आनन्दित हैल राजार मन ।
प्रभुरूप करि करे वस्त्रेर पूजन ॥३
रामानन्दराय यबे दक्षिण हैते आइला ।
प्रभुसङ्गे रहिते यबे राजारे निवेदिला ॥३
तबे राजा सन्तोषे ताहारे आज्ञा दिला ।
आपन मिलन लागि साधिते लागिला ॥३
महाप्रभु महाकृपा करेन तोमारे ।
मोरे मिलाइते अवश्य साधिबे ताँहारे ॥३
एकसङ्गे दुइ जन क्षेत्रे यबे आइला ।
रामानन्दराय तबे प्रभुरे मिलिला ॥३
प्रभुपदे प्रेमभक्ति जानाइल राजार ।
प्रसङ्ग पाइञा ऐछे कहे बार बार ॥४
राजमन्त्री रामानन्द व्यवहारे निपुण ।
राजार प्रीति कहि द्रवाय महाप्रभुर मन ॥
उत्कण्ठाते प्रतापरुद्र नारे रहिबारे ।
रामानन्द साधिलेन प्रभुरे मिलिते ॥४
रामानन्द प्रभु-पाय कैल निवेदन ।
एकबार प्रतापरुद्रे देखाह चरण ॥४
प्रभु कहे, रामानन्द कह विचारिया ।
राजारे मिलिते युयाय सन्नयासी हइया ॥४
राजार मिलन भिक्षुर दुइ लोक नाश ।
परलोक रहुँ, लोके करे उपहास ॥४

रामानन्द कहे, तुमि ईश्वर स्वतन्त्र ।
कारे तोमार भय, तुमि नह परतन्त्र ॥४६
प्रभु कहे, आमि मनुष्य, आश्रमे सन्न्यासी ।
कायमनोवाक्ये व्यवहारे भय वासि ॥४७
सन्न्यासीर अल्प छिद्र सर्व्व लोके गाय ।
शुक्लवस्त्रे मसिबिन्दु यैछे ना लुकाय ॥४८
राय कहे, कत पापीर करियाछ अव्याहति ।
ईश्वरसेवक तोमार भक्त गजपति ॥४६
प्रभु कहे, पूर्ण यैछे दुग्धेर कलस ।
सुराबिन्दुपाते केह ना करे परश ॥५०
यद्यपि प्रतापरुद्र सर्व्वगुणवान् ।
ताहारे मलिन करे एक राजनाम ॥५१
तथापि तोमार यदि महाग्रह हय ।
तबे आनि मिलाह मोरे ताहार तनय ॥५२
"आत्मा वै जायते पुत्रः" एइ शास्त्रवाणी ।
पुत्रेर मिलने येन मिलिला आपनि ॥५३
तबे राय याइ सब राजाके कहिला ।
प्रभुर आज्ञाय तार पुत्र लञा आइला ॥५४
सुन्दर राजार पुत्र श्यामलवरण ।
कैशोर वयस दीर्घ चपल नयन ॥५५
पीताम्बर धरे अङ्गे रत्न-आभरण ।
कृष्णस्मरणेर तिँह हैला उद्दीपन ॥५६
ताँरे देखि महाप्रभुर कृष्णस्मृति हैला ।
प्रेमावेशे ताँरे मिलि कहिते लागिला ॥५७
एइ महाभागवत याहार दर्शने ।
व्रजेन्द्रनन्दन--स्मृति हय सर्व्वजने ॥५८
कृतार्थ हइलाम आमि इहार दर्शने ।
एत बलि पुन तारे कैल आलिङ्गने ॥५६
प्रभुस्पर्शे राजपुत्र हैल प्रेमावेश ।
स्वेद, कम्प, अश्रु, स्तम्भ, यतेक विशेष ॥६०
"कृष्ण कृष्ण" कहे नाचे करये रोदन ।
तार भाग्य देखि श्लाघा करे भक्तगण ॥६१
तबे महाप्रभु ताँरे धैर्य्य कराइल ।
नित्य आसि आमाय मिलिह एइ आज्ञा दिल ६२
विदाय लइया राय आइल राजपुत्र लञा ।
राजा सुख पाइल पुत्रेर चेष्टा देखिञा ॥६३
पुत्र आलिङ्गन करि प्रेमाविष्ट हैला ।
साक्षात् परश येन महाप्रभुर पाइला ॥६४
सेइ हैते भाग्यवान् राजार नन्दन ।
प्रभुर भक्तगणमध्ये हैला एकजन ॥६५
एइमत महाप्रभु भक्तगण सङ्गे ।
निरन्तर क्रीड़ा करे सङ्कीर्त्तन रङ्गे ॥६६
आचार्य्यादि भक्तगण करे निमन्त्रण ।
ताँहा ताँहा भिक्षा करे लञा भक्तगण ॥६७
एइमत नाना रङ्गे दिन कत गेल ।
श्रीजगन्नाथेर रथयात्रार दिवस आइल ॥६८
प्रथमेइ प्रभु काशीमिश्रेरे आनिया ।
पड़िछा पात्र सार्व्वभौम आनिल डाकिया ॥६६
तिन जनार पाशे प्रभु हासिया कहिल ।
गुण्डिचामन्दिरमार्ज्जन सेबा मागि निल ॥७०
पड़िछा कहे आमि सब सेवक तोमार ।
येइ तोमार इच्छा सेइ कर्त्तव्य आमार ॥७१
विशेषे राजार आज्ञा हैयाछे आमारे ।
येइ प्रभुर इच्छा सेइ शीघ्र करिबारे ॥७२
तोमार योग्य सेवा नहे मन्दिरमार्ज्जन ।
एहो एक लीला करये तोमार मन ॥७३

किन्तु घट सम्मार्ज्जनी बहुत चाहिये ।
आज्ञा देह आजि सब इँहा आनि दिये ॥७४
तबे एकशत घट शत सम्मार्ज्जनी ।
नूतन प्रभुर आगे पड़िछा दिल आनि ॥७५
आर दिन प्रभाते प्रभु लञा निजगण ।
श्रीहस्ते सबार अङ्गे लेपिल चन्दन ॥७६
श्रीहस्ते सबारे दिल एकेक मार्ज्जनी ।
सब गण लञा प्रभु चलिला आपनि ॥७७
गुण्डिचामन्दिर गेला करिते मार्ज्जन ।
प्रथमे मार्ज्जनी लञा करिल शोधन ॥७८
भितर मन्दिर उपर सब संमार्जिजल ।
सिंहासन माजि चारि भित शोधिल ॥७९
भितर मन्दिर कैल मार्ज्जन शोधन ।
पाछे तैछे शोधिलेन श्रीजगमोहन ॥८०
चारिपाशे शत भक्त सम्मार्ज्जनी करे ।
आपनि शोधये प्रभु शिखाय सबारे ॥८१
प्रेमोल्लासे गृह शोधे लय कृष्णनाम ।
भक्तगण "कृष्ण" कहे करे निज काम ॥८२
धूलिधूसर तनु देखिते शोभन ।
केह केह अश्रुजले करे सम्मार्ज्जन ॥८३
भोगमण्डप शोधि शोधिल प्राङ्गन ।
सकल आवास क्रमे करिल शोधन ॥८४
तृण धूलि झिँकर सब एकत्र करिया ।
वहिर्व्वासे करि फेलाय बाहिरे लइया ॥८५
प्रभु कहे, के कत करियाछ मार्ज्जन ।
तृणधूलिपरिमाणे जानिब परिश्रम ॥८६
एइमत भक्तगण करि निजवासे ।
तृणधूलि बाहिरे फेलाय परम हरिषे ॥८७

सबाकर झाँटियल एकत्र करिल ।
सबा हैते प्रभुर बोझा अधिक हइल ॥८८
एइमत अभ्यन्तर करिल मार्ज्जन ।
पुन सबाकारे दिल करिया वण्टन ॥८९
सूक्ष्मधूलि तृण काँकर सब कर दूर ।
भालमते शोध सब प्रभुर अन्तःपुर ॥९०
सब वैष्णव लञा यबे दुइबार शोधिल ।
देखि महाप्रभुर मने सन्तोष हइल ॥९१
आर शत जन जल शत घट भरि ।
प्रथमेइ लञा आछे कालापेक्षा करि ॥९२
जल आन बलि यबे महाप्रभु कैल ।
तबे शतघट आनि प्रभु-आगे दिल ॥९३
प्रथमे करिल प्रभु मन्दिर प्रक्षालन ।
ऊर्द्ध्व अध भित गृहमध्य सिंहासन ॥९४
खापरा भरिया जल ऊर्द्ध्वे चालाइल ।
सेइ जले उर्द्ध्व शोधि भित प्रक्षालिल ॥९५
प्रथमे करिल प्रभु मन्दिर प्रक्षालन ।
श्रीहस्ते करेन सिंहासनेर मार्ज्जन ॥९६
भक्तगण करे गृहमध्य प्रक्षालन ।
निज निज हस्ते करे मन्दिर मार्ज्जन ॥९७
केह जलघट देय महाप्रभुर करे ।
केह जल देय ताँर चरण उपरे ॥९८
केह लुकाइया करे सेइ जलपान ।
केह मागि लय, केह अन्ये करे दान ॥९९
घर धुइ प्रणालिकाय जल छाड़ि दिल ।
सेइ जल प्राङ्गण सब भरिया रहिल ॥१००
निज वस्त्रे कैल प्रभु गृह सम्मार्ज्जन ।
महाप्रभु निज वस्त्रे मार्ज्जिलेन सिंहासन १०१

शत घटजले हैल मन्दिर मार्ज्जन ।
मन्दिर शोधिया कैल येन निज मन ॥१०२
निर्म्मल शीतल स्निग्ध करिला मन्दिरे ।
आपन हृदय येन धरिल बाहिरे ॥१०३
शत शत लोक जल भरे सरोबरे ।
घाटे स्थल नाहि केह कूपे जल भरे ॥१०४
पूर्णकुम्भ लञा आइसे शत भक्तगण ।
शून्य घट लञा याय आर शत जन ॥१०५
नित्यानन्दाद्वैत स्वरूप भारती आर पुरी ।
इँहा बिना आर सब आने जल भरि ॥१०६
घटे घटे ठेकि कत घट भाङ्गि गेल ।
शत शत घट ताँहा लोके लञा आइल ॥१०७
जल भरे घर धोय करे हरिध्वनि ।
"कृष्ण हरि" ध्वनि विना आर नाहि शुनि ।१०८
"कृष्ण कृष्ण" कहि करे घट समर्पण ।
"कृष्ण कृष्ण" कहि करे घटेर प्रार्थन ॥१०९
येइ येइ कहे, सेइ कहे कृष्णनामे ।
कृष्णनाम हैला ताँहा सङ्केत सर्व्वकामे ॥११०
प्रेमावेशे प्रभु कहे कृष्ण कृष्ण नाम ।
एकले करेन प्रेमे शतजनेर काम ॥१११
शतहाते करे येन क्षालन मार्ज्जन ।
प्रतिजन-पाशे याइ करान शिक्षण ॥११२
भाल कर्म्म देखि तारे करे प्रशंसन ।
मन ना मानिले करे पण्डित-भर्त्सन ॥११३
तुमि भाल करियाछ शिखाह अन्येरे ।
एइमत भालकर्म्म सेह येन करे ॥११४
ए कथा शुनिया सबे सङ्कोचित हञा ।
भालमते करे कर्म्म सबे मन दिञा ॥११५
तबे प्रक्षालन कैल श्रीजगमोहन ।
भोगमण्डप तबे कैल प्रक्षालन ॥११६
नाटशाला धुइ धुइल चत्वर प्राङ्गण ।
पाकशाला आदि कैल सब प्रक्षालन ॥११७
मन्दिरेर चतुर्द्दिक प्रक्षालन कैल ।
सब अन्तःपुर भालमते धोयाइल ॥११८
हेन काले एक गौड़िया सुबुद्धि सरल ।
प्रभुर चरणयुगे दिल घटजल ॥११९
सेइ जल लञा आपने पान कैल ।
ताहा देखि प्रभुर मने दुःख रोष हैल ॥१२०
यद्यपि गोसाञि तारे हञाछे सन्तोष ।
शिक्षा लागि बाहिरे तथापि करे रोष ॥१२१
स्वरूप गोसाञि डाकि कहिल ताहारे ।
एइ देख तोमार गौड़ियार व्यवहारे ॥१२२
ईश्वरमन्दिरे मोर पद धोयाइल ।
सेइ जल लञा आपने पान कैल ॥१२३
एइ अपराधे मोर काँहा हबे गति ।
तोमार गौड़िया करे एतेक फैजति ॥१२४
तबे स्वरूप गोसाञि तार घाड़े हात दिञा ।
ढेका मारि पुरीर बाहिर कैल लञा ॥१२५
पुन आसि प्रभुर पाय करिल विनय ।
अज्ञ-अपराध क्षमा करिते युयाय ॥१२६
तबे महाप्रभु मने सन्तोष हइला ।
सारि करि दुइ पाशे सबा वसाइला ॥१२७
आपने बसिया माझे आपनार हाते ।
तृण काँटा कुटा सबे लागिला कुड़ाइते ॥१२८
के कत कुड़ाय सब एकत्र करिब ।
यार अल्प तार ठाञि पिठापाना लब ॥१२९

एइमत सब पुरी करिल शोधन।
शीतल निर्म्मल कैल येन निज मन ॥१३०
प्रणालिका छाड़ि यदि जल बहाइल।
नूतन नदी येन समुद्रे मिलिल ॥१३१
एइमत पुरीद्वार अग्रे पथ यत।
सकल शोधिल ताहा के वर्णिवे कत ॥१३२
नृसिंहमन्दिर भितर बाहिर शोधिल।
क्षणेक विश्राम करि नृत्य आरम्भिल ॥१३३
चारिदिके भक्तगण करेन कीर्त्तन।
मध्ये नृत्य करे प्रभु मत्तसिंह-सम ॥१३४
स्वेद, कम्प, वैवर्ण्याश्रु, पुलक, हुङ्कार।
निज अङ्ग धुइ आगे चले अश्रुधार ॥१३५
चारिदिके भक्त-अङ्ग कैल प्रक्षालन।
श्रावणमासेर मेघ येन करे वरिषण ॥१३६
महा उच्च सङ्कीर्त्तने आकाश भरिल।
प्रभुर उद्दण्ड नृत्ये भूमिकम्प हैल ॥१३७
स्वरूपेर उच्च गान प्रभुरे सदा भाय।
आनन्दे उद्दण्ड नृत्य करे गौरराय ॥१३८
एइमते कतक्षण नृत्य करिया।
विश्राम करिल प्रभु समय बुझिया ॥१३९
आचार्य्य गोसाञिर पुत्र श्रीगोपाल नाम।
नृत्य करिते तारे आज्ञा दिल भगवान् ॥१४०
प्रेमावेशे नृत्ये तिँह हइला मूर्च्छिते।
अचेतन हञा तिँह पड़िला भूमिते ॥१४१
आस्ते व्यस्ते आचार्य्य गोसाञि तारे कैल कोले
श्वासरहित देखिआ चार्य्य हइला विकले १४२
नृसिंहेर मन्त्र पड़ि मारे जलझाँटि।
सहुङ्कार शब्दे तेइ ब्रह्माण्ड याय फाटि ॥१४३

अनेक करिल तबु ना हय चेतन।
आचार्य्य-कान्दनाय कान्दे सब भक्तगण ॥१४४
तबे महाप्रभु तार बुके हात दिल।
उठह गोपाल बलि उच्चैस्वरे कैल ॥१४५
शुनितेइ गोपालेर हइल-चेतन।
हरि बलि नृत्य करे सब भक्तगण ॥१४६
एइ लीला वर्णियाछेन दास वृन्दावन।
अतएव संक्षेप करि करिनु वर्णन ॥१४७
तबे महाप्रभु क्षणेक विश्राम करिया।
सरोबरे जलक्रीड़ा कैल भक्त लञा ॥१४८
तीरे उठि परि सबे शुष्क वसन।
नृसिंहदेव नमस्करि गेला उपवन ॥१४९
उद्याने बसिला प्रभु भक्तगण लञा।
तबे वाणीनाथ आइला प्रसाद लइञा ॥१५०
काशीमिश्र तुलसी पड़िछा दुइ जन।
पञ्चशत लोक यत करये भक्षण ॥१५१
तत अन्न पिठा पाना सब पाठाइल।
देखिया प्रभुर चित्ते सन्तोष हइल ॥१५२
पुरी गोसाञि, महाप्रभु, भारती, ब्रह्मानन्द।
अद्वैत आचार्य्य आर प्रभु नित्यानन्द ॥१५३
आचार्य्यरत्न आचार्य्यनिधि श्रीवास गदाधर।
शङ्करारण्य, न्यायाचार्य्य, राघव, वक्रेश्वर १५४
प्रभु-आज्ञा पाञा वैसे आपने सार्व्वभौम।
पिण्डोपरि वैसे प्रभु लञा एत जन ॥१५५
तार तले तार तले करि अनुक्रम।
उद्यान भरि वैसे भक्त करिते भोजन ॥१५६
हरिदास बलि प्रभु डाके घने घन।
दूरे रहि हरिदास करे निवेदन ॥१५७

भक्तसङ्गे प्रभु करेन प्रसाद अङ्गीकार।
ए सङ्गे बसिते योग्य नाहि मुञि छार ॥१५८
पाछे मोरे प्रसाद गोविन्द दिबे बहिर्द्वारे।
मन जानि प्रभु पुन ना बलिला तारे ॥१५९
स्वरूप गोसाञि, जगदानन्द, दामोदर।
काशीश्वर, गोपीनाथ, बाणीनाथ, शङ्कर ।१६०
परिवेशन करे ताँहा एइ सात जन।
मध्ये मध्ये हरिध्वनि करे भक्तगण ॥१६१
पुलिनभोजन यैछे कृष्ण पूर्व्वे कैल।
सेइ लीला महाप्रभुर मने स्मृति हैल ॥१६२
यद्यपि प्रेमावेशे प्रभु हइला अधीर।
समय बुझिया तबु मन कैला स्थिर ॥१६३
प्रभु कहे मोरे देह लाफरा व्यञ्जने।
पिठा पाना अमृत-गोटिका देह भक्तगणे ।१६४
सर्व्वज्ञ प्रभु जानेन यारे येइ भाय।
तारे तारे सेइ देओयाय स्वरूप द्वाराय ।१६५
जगदानन्द बेड़ाय परिवेशन करिते।
प्रभुर पाते भाल द्रव्य देन आचम्बिते ॥१६६
यद्यपि दिले प्रभु तारे करेन रोष।
बले छले तबु देन दिले से सन्तोष ॥१६७
पुन आसि सेइ द्रव्य करे निरीक्षण।
तार भये प्रभु किछु करेन भक्षण ॥१६८
ना खाइले जगदानन्द करिबे उपवास।
ताँर आगे किछु खान मने एइ त्रास ॥१६९
स्वरूप गोसाञि भाल मिष्ट प्रसाद लञा।
प्रभुके निवेदन करे आगे दाण्डाइया ॥१७०
एइ महाप्रसाद अल्प कर आस्वादन।
देख जगन्नाथ कैछे करियाछेन भोजन ॥१७१
एत बलि किछु आगे करे समर्पण।
तार स्नेहे प्रभु किछु करेन भक्षण ॥१७२
एइमत दुइजन करे बार बार।
चित्र एइ दुइ भक्तेर स्नेहव्यवहार ॥१७३
सार्व्वभौमे प्रभु बसायेछेन निजपाशे।
दुइ भक्तेर स्नेह देखि सार्व्वभौम हासे ॥१७४
सार्व्वभौमे महाप्रभु प्रसाद उत्तम।
स्नेह करि बार बार करान भोजन ॥१७५
गोपीनाथाचार्य्य उत्तम महाप्रसाद आनि।
सार्व्वभौमे दिञा कहे सुमधुर वाणी ॥१७६
काँहा भट्टाचार्य्येर पूर्व्व जड़ व्यवहार।
काँहा एइ परमानन्द करह विचार ॥१७७
सार्व्वभौम कहे, आमि तार्किक कुबुद्धि।
तोमार प्रसादे आमार ए सम्पद् सिद्धि ॥१७८
महाप्रभु बिने केह नाहि दयामय।
काकेरे गरुड़ करे ऐछे कोन हय ॥१७९
तार्किक शृगाल सङ्गे भेउ भेउ करि।
सेइ मुखे एवे सदा कहि कृष्णहरि ॥१८०
काँहा बहिर्मुख तार्किक शिष्यगण सङ्ग।
काँहा एइ सङ्गसुधासमुद्रतरङ्ग ॥१८१
प्रभु कहे, पूर्व्वसिद्धिकृष्णे तोमार प्रीति।
तोमा सङ्गे आमा सबार हैल कृष्णे मति ।१८२
भक्तमहिमा बाड़ाइते भक्ते सुख दिते।
महाप्रभु सम आर नाहि त्रिजगते ॥१८३
तबे प्रभु प्रत्येके सब भक्तेरनाम लञा।
पिठापाना देयाइला प्रसाद करिया ॥१८४
अद्वैतनित्यानन्द वसियाछेन एक ठाञि।
दुइ जने क्रीड़ा-कलह लागिल तथाइ ॥१८५

अद्वैत कहे, अवधूत सङ्गे एक पङ्क्ति।
भोजन करि ना जानि ये हवे कोन गति ॥१८६
प्रभु त सन्न्यासी उहार नाहि अपचय ।
अन्नदोषे सन्न्यासीर दोष नाहि हय ॥१८७
"नान्नदोषेण मस्करी" एइ शास्त्रेर प्रमाण ।
गृहस्थ ब्राह्मण आमार एइ दोषस्थान ॥१८८
जन्म कुलशीलाचार ना जानि याहार ।
तार सङ्गे एकपङ्क्ति बड़ अनाचार ॥१८९
नित्यानन्द कहे, तुमि अद्वैत आचार्य्य ।
अद्वैत सिद्धान्ते बाधे शुद्धभक्ति कार्य्य ॥१९०
तोमार सिद्धान्तसङ्ग करे येइ जने ।
एक बस्तु विने सेइ द्वितीय ना माने ॥१९१
हेन तोमार सङ्गे मोर एकत्र भोजन ।
ना जानि तोमार सङ्गे कैछे हय मन ॥१९२
एइमत दुइ जने करे बोलाबुलि ।
व्याजस्तुति करे दुँहे यैछे गालागालि ॥१९३
तबे प्रभु सब वैष्णवेर नाम लञा ।
प्रसाद देन येन कृपा अमृत सिञ्चिञा ॥१९४
भोजन करि उठे सबे हरिध्वनि करि ।
हरिध्वनि उठिल सेइ स्वर्ग मर्त्य भरि ॥१९५
तबे महाप्रभु सब निज भक्तगणे ।
सबाके श्रीहस्ते दिला माल्यचन्दने ॥१९६
तबे परिवेशक स्वरूपादि सात जन ।
गृह-भितर बसि कैल प्रसाद भोजन ॥१९७
प्रभुर अवशेष गोविन्द राखिल धरिञा ।
सेइ अन्न किछु हरिदासे निल लञा ॥१९८
भक्तगण गोविन्द पाश प्रसाद मागि निल।
पाछे सेइ प्रसाद गोविन्द आपने पाइल ॥१९९

स्वतन्त्र ईश्वर प्रभु करे नाना खेला।
"धोयापाखाला"नाम कैला एइ एक लीला :
आर दिन जगन्नाथेर नेत्रोत्सव नाम।
महोत्सव हैल भक्तेर प्राण-समान ॥२०
पक्ष दिन दुःखी लोक प्रभु अदर्शने।
आनन्दित हैला जगन्नाथ दरशने ॥२०
महाप्रभु सुखे हैला सब भक्तगण।
जगन्नाथ दरशने करिला गमन ॥२०
आगे काशीश्वर याय लोक निवारिया।
पाछे गोविन्द याय लोक निवारिया ॥२०
पाछे आगे पुरी भारती दुँहार गमन।
स्वरूप अद्वैत दुइ पार्श्वे दुइ जन ॥२०
पाछे पार्श्वे चलि याय आर भक्तगण।
उत्कण्ठाय गेला जगन्नाथेर भवन ॥२०
दरशन लोभे करि मर्य्यादा लङ्घन।
भोगमण्डप यात्रा करे श्रीमुख दर्शन ॥२०
तृषार्थ प्रभुर नेत्र भ्रमरयुगल ।
गाढ़ासक्तेच पिये कृष्णेर वदनकमल ॥२०
प्रफुल्ल कमल जिनि नयनयुगल।
नीलमणिदर्पण गण्ड करे झलमल ॥२०
बान्धुलिर फुल जिनि अधर सुरङ्ग।
ईषत हसितकान्ति अमृततरङ्ग ॥२१
श्रीमुख-सौन्दर्य्य-मधु बाड़े क्षणे क्षणे।
कोटि कोटि भक्तनेत्रभृङ्ग करे पाने ॥२१
यत पिये तत तृष्णा बाड़े निरन्तर।
मुखाम्बुज छाड़ि नेत्र ना हय अन्तर ॥२१
एइमत महाप्रभु लञा भक्तगण।
मध्याह्न पर्य्यन्त कैल श्रीमुख दर्शन ॥२१

स्वेद कम्प अश्रुजल वहे अनुक्षण ।
दर्शनेर लोभे प्रभु करे सम्बरण ॥२१४
मध्ये मध्ये भोग लागे मध्ये दरशन ।
भोगेर समये प्रभु करे सङ्कीर्त्तन ॥२१५
दर्शन आनन्दे प्रभु सब पाशरिला ।
भक्तगण मध्याह्ने प्रभु लञा आइला ।२१६
प्रातःकाले रथयात्रा हवेक जानिया ।
सेवके लागाय भोग द्विगुण करिया ॥२१७
गुण्डिचामार्ज्जन लीला सङ्क्षेपे कहिल ।
याहा देखि शुनि पापीर कृष्णभक्ति हैल ।२१८
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे-यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२१९

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे गुण्डिचामन्दिरमार्ज्जनं नाम द्वादशः परिच्छेदः ॥१२॥



❀ त्रयोदश परिच्छेद ❀

**स जीयात् कृष्णचैतन्यः श्रीरथाग्रे ननर्त्त यः ।
येनासीज्जगतां चित्रं जगन्नाथोऽपि विस्मितः ॥१॥**

टीका—यश्चैतन्यः श्रीरथाग्रे जगन्नाथरथसम्मुखे ननर्त्त, येन नर्त्तनेन जगतां जगद्वासिनां चित्रं विस्मयः आसीत्, जगन्नाथोऽपि विस्मितः अभूत्, सः श्रीकृष्ण-चैतन्यो जीयात् जययुक्तो भूयात् ॥१॥

जो जगन्नाथ देव के रथ समीप में नृत्य करके जगद्वासी लोक समूह को विमोहित किये थे, एवं जिनके नृत्य के द्वारा जगन्नाथ प्रभु भी विस्मित हुये थे, वह, श्रीकृष्ण चैतन्यप्रभु जय युक्त हों ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
जय श्रोतृगण शुन करि एक मन ।
रथयात्राय नृत्य प्रभुर परममोहन ॥२
आर दिन महाप्रभुर हञा साबधान ।
रात्रे उठि गण सङ्गे कैला कृत्य स्नान ॥३
पाण्डुविजय देखिबारे करिल गमन ।
जगन्नाथ यात्रा कैल छाड़ि सिंहासन ॥४
आपने प्रतापरुद्र लञा पात्रगण ।
महाप्रभुर गणे कराय विजय दर्शन ॥५
अद्वैत नित्यानन्दादि सङ्गे भक्तगण ।
सुखे महाप्रभु देखे ईश्वर गमन ॥६
बलिष्ठ दयितागण येन मत्तहाती ।
जगन्नाथ विजय कराय करि हाताहाति ॥७
कतक दयिता करे स्कन्ध आलम्बन ।
कतक दयिता धरे श्रीपद्मचरण ॥८
कटितटे बद्ध दृढ़ स्थूल पट्टडोरि ।
दुइ दिके दयितागण उठाय ताहा धरि ॥९
उच्च दृढ़ तूलि सब पाति स्थाने स्थाने ।
एक तूलि हैते आर तूलि कराय गमने ॥१०
प्रभु-पदाघाते तूलि हय खण्ड खण्ड ।
तूला सब उड़ि याय शब्द हय प्रचण्ड ॥११
विश्वम्भर जगन्नाथ चालाइते शक्ति कार ।
आपन इच्छाय चले करिते विहार ॥१२
महाप्रभु "महिमा" बलि करे उच्च ध्वनि ।
नानावाद्य-कोलाहल, किछुइ ना शुनि ॥१३
तबे प्रतापरुद्र करे आपने सेवन ।
स्वर्णमार्ज्जनी लैया करे पथ संमार्ज्जन ॥१४

चन्दन-जले करेन पथ निषिञ्चने ।
तुच्छ सेबा करे वैसे राजसिंहासने ॥१५
उत्तम हइया राजा करे तुच्छसेवन ।
अतएव जगन्नाथेर कृपार भाजन ॥१६
महाप्रभु सुख पाइल से सेवा देखिते ।
महाप्रभुर कृपा पाइला से सेवा हइते ॥१७
रथेर साजनि देखि लोके चमतकार ।
सब हेममय रथ सुमेरु-आकार ॥१८
शत शत शुक्ल चामर दर्पण उज्ज्वल ।
उपरे पताका शत चान्दोया निर्म्मल ॥१९
घागर किङ्किणी बाजे घण्टार क्वणित ।
नाना चित्र पट्टवस्त्रे रथ विभूषित ॥२०
लीलाय चड़िला ईश्वर रथेर उपर ।
आर दुइ रथे चड़े सुभद्रा हलधर ॥२१
पञ्चदश दिन ईश्वर महालक्ष्मी लञा ।
ताँर सङ्गे क्रीड़ा कैल निभृते बसिञा ॥२२
ताँहार सम्मति लञा भक्तसुख दिते ।
रथे चड़ि बाहिर हैला विहार करिते ॥२३
सूक्ष्म श्वेत बालुपथ पुलिनेर सम ।
दुइदिके टोटा सब येन वृन्दावन ॥२४
रथे चड़ि जगन्नाथ करिल गमन ।
दुइ पार्श्वे देखि चले आनन्दितमन ॥२५
गौर सब रथ टाने करिया आनन्द ।
क्षणे शीघ्र चले रथ क्षणे चले मन्द ॥२६
क्षणे स्थिर हञा रहे टानिले ना चले ।
ईश्वरेच्छाय चले रथ ना चले कारो बले ॥२७
तबे महाप्रभु सब लञा निजगण ।
स्वहस्ते पराइला सबारे माल्यचन्दन ॥२८

परमानन्दपुरी आर भारती ब्रह्मानन्द ।
श्रीहस्ते चन्दन पाञा बाड़िल आनन्द ॥
अद्वैत आचार्य्य आर प्रभु नित्यानन्द ।
श्रीहस्त स्पर्शे दुँहे हइला आनन्द ॥
कीर्त्तनिया गणे दिला माल्यचन्दन ।
स्वरूप, श्रीवास तार मुख्य दुइ जन ॥
चारि सम्प्रदाय हैल चब्विश गायन ।
दुइ दुइ मार्द्दङ्गिक हैल अष्ट जन ॥
तबे महाप्रभु मने विचार करिया ।
चारि सम्प्रदाय कैल गायन बाँटिया ॥
नित्यानन्द, अद्वैत, हरिदास, वक्रेश्वरे ।
चारि जने आज्ञा दिल नृत्य करिबारे ॥
प्रथम सम्प्रदाय कैल स्वरूप प्रधान ।
आर पञ्च जन दिल तार पालिगान ॥
दामोदर, नारायण, दत्त गोविन्द ।
राघवपण्डित आर श्रीगोविन्दानन्द ॥
अद्वैत आचार्य्य ताँहा नृत्य करिते दिल ।
श्रीवास प्रधान आर सम्प्रदाय कैल ॥
गङ्गादास, हरिदास, श्रीमान् शुभानन्द ।
श्रीरामपण्डित ताँहा नाचे नित्यानन्द ॥
वासुदेव, गोपीनाथ, मुरारि याँहा गाय ।
मुकुन्द प्रधान कैल आर सम्प्रदाय ॥
श्रीकान्त, वल्लभसेन आर दुइ जन ।
हरिदास ठाकुर ताँहा करेन नर्त्तन ॥
गोविन्दघोष प्रधान कैल आर सम्प्रदाय ।
हरिदास, विष्णुदास, राघव याँहा गाय ॥
माधव, वासुदेव आर दुइ सहोदर ।
नृत्य करेन ताँहा पण्डित वक्रेश्वर ॥

कुलीनग्रामेर एक कीर्त्तनिया समाज ।
ताँहा नृत्य करे रामानन्द सत्यराज ॥४३
शान्तिपुर आचार्य्येर एक सम्प्रदाय ।
अच्युतानन्द नाचे ताँहा आर सब गाय ॥४४
खण्डेर सम्प्रदाय करे अन्यत्र कीर्त्तन ।
नरहरि नाचे ताँहा श्रीरघुनन्दन ॥४५
जगन्नाथ-आगे चारि सम्प्रदाय गाय ।
दुइ पार्श्वे दुइ पाछे एक सम्प्रदाय ॥४६
सात सम्प्रदाये बाजे चौद्द मादल ।
यार ध्वनि शुनि हैल वैष्णव पागल ॥४७
श्रीवैष्णवघटामेघे हइल बादल ।
कीर्त्तन आनन्द सह वर्षे नेत्र-जल ॥४८
त्रिभुवन भरि उठे सङ्कीर्त्तनध्वनि ।
अन्य वाद्यादिर ध्वनि किछुइ ना शुनि ॥४९
सात ठाञि बुले प्रभु हरि हरि बुलि ।
जय जय जगन्नाथ कहे हस्त तुलि ॥५०
आर एक शक्ति प्रभु करिल प्रकाश ।
एक काले सात ठाञि करेन विलास ॥५१
सबे कहे प्रभु आछेन एइ सम्प्रदाय ।
अन्य ठाञि नाहि याय आमार दयाय ॥५२
केह लक्षिते नारे अचिन्त्य प्रभुर शकति ।
अन्तरङ्ग भक्त जाने यार शुद्धभक्ति ॥५३
कीर्त्तन देखिया जगन्नाथ हरषित ।
संकीर्त्तन देखे रथ करिया स्थगित ॥५४
प्रतापरुद्रेर हैल परम विस्मय ।
देखिते विवश राजा हैला प्रेममय ॥५५
काशीमिश्रे कहे राजा प्रभुर महिमा ।
काशीमिश्र कहे,तोमार भाग्येर नाहि सीमा ।५६

सार्व्वभौम सह राजा करे ठाराठारि ।
आर केह नाहि जाने चैतन्येर चुरि ॥५७
यारे ताँर कृपा ताँरे से जानिते पारे ।
कृपा विने ब्रह्मादिक जानिते ना पारे ॥५८
राजार तुच्छ सेवा देखि प्रभुर प्रसन्न मन ।
से प्रसादे पाइल एइ रहस्य दर्शन ॥५९
साक्षाते ना देखा देन परोक्षे एत दया ।
के बुझिते पारे चैतन्येर एइ माया ॥६०
सार्व्वभौम काशीमिश्र दुइ महाशय ।
राजारे प्रसाद देखि हैला विस्मय ॥६१
एइमत लीला प्रभु करि कतक्षण ।
आपने गायेन नाचे निज भक्तगण ॥६२
कभु एकमूर्त्ति हय कभु बहुमूर्त्ति ।
कार्य्य-अनुरूप प्रभु प्रकाशये शक्ति ॥६३
लीलावेशे नाहि प्रभुर निजानुसन्धान ।
इच्छा जानि लीलाशक्ति करे समाधान ॥६४
पूर्व्वे यैछे रासादिलीला कैला वृन्दावने ।
अलौकिक लीला गौर करे क्षणे क्षणे ॥६५
भक्तगण अनुभवे नाहि जाने आन ।
श्रीभागवत शास्त्र ताहाते प्रमाण ॥६६
एइमत महाप्रभु करि नृत्य रङ्गे ।
भासाइल सब लोक प्रेमेर तरङ्गे ॥६७
एइमत हैल कृष्णेर रथ आरोहण ।
तार आगे नाचाइल प्रभु निजगण ॥६८
आगे शुन जगन्नाथेर गुण्डिचागमन ।
तार आगे प्रभु यैछे करिल नर्त्तन ॥६९
एइमत कीर्त्तन प्रभु करि कतक्षण ।
आपन उद्योगे नाचाइल भक्तगण ॥७०

आपने नाचिते यबे प्रभुर मन हैल ।
सात सम्प्रदाय तबे एकत्र करिल ॥७१

श्रीवास, रामाइ, रघु, गोविन्द, मुकुन्द ।
हरिदास, गोविन्दानन्द, माधव, गोविन्द ॥७२

उद्दण्ड नृत्ये यबे प्रभुर हैल मन ।
स्वरूपेर सङ्गे दिल एइ नव जन ॥७३

एइ दश जन प्रभुर सङ्गे गाय धाय ।
आर सब सम्प्रदाय चारिदिके रहि गाय ॥७४

दण्डवत् करि प्रभु युड़ि दुइ हात ।
ऊर्द्ध्वमुखे स्तुति करे देखि जगन्नाथ ॥७५

तथाहि हरिभक्तिविलासस्य तृतीयविलासधृतो विष्णुपुराणीय-प्रथमांशस्य ऊनविंशाध्याये पञ्चषष्टितमः श्लोकः महाभारतीयः श्लोकश्च-

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गो ब्राह्मणहिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥२॥

टीका—ब्रह्मण्यदेवाय नमः, गो ब्राह्मणहिताय गोब्राह्मणहितकारिणे, जगद्धिताय जगद्वासिनां उपकारिणे, कृष्णाय, गोविन्दाय नमो नमः ॥२॥

ब्रह्मण्यदेव, गो ब्राह्मण हित कारी जगद्वासी वृन्दके उपकारी कृष्ण गोविन्द की पुनः पुनः नमस्कार मैं करता हूँ ॥२॥

मुकुन्ददेववाक्यम्—

जयति जयति देवो देवकीनन्दनोऽसौ
जयति जयति कृष्णो वृष्णिवंशप्रदीपः ।
जयति जयति मेघश्यामलः कोमलाङ्गो
जयति जयति पृथ्वीभारनाशो मुकुन्दः ॥३॥

टीका—असौ देवकीनन्दनो देवो जयति जयति महोत्कर्षेण वर्त्तते, वृष्णिवंशप्रदीप। यदुकुलोज्ज्वलकारी कृष्णः जयति जयति, मेघश्यामलः कोमलाङ्गः कृष्णः जयति जयति, पृथ्वीभारनाश। धराभारहारको मुकुन्दः जयति जयति । मुक्ति ददातीति मुकुन्दः ॥३॥

देवकीनन्दन श्रीकृष्ण की जय हो, यदुकुल प्रदीप कृष्ण की जय हो, नवघन श्यामल कोमलाङ्ग कृष्ण जय युक्त हो, धराभार नाशक मुकुन्द की जय हो ॥३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।९०।१४)—

जयति जननिवासो देवकीजन्मवादो
यदुवरपरिषत् स्वैर्दोर्भिरस्यन्नधर्म्मम् ।
स्थिरचरवृजिनघ्नः सुस्मितश्रीमुखेन
व्रजपुरवनितानां वर्द्धयन् कामदेवम् ॥४॥

टीका—जननिवासः श्रीकृष्णः सर्व्वोत्-कर्षेण वर्त्तते । किम्भूतः ? देवकीजन्मवादः, देवक्यां जन्म इति वादः वादमात्रं यस्य सः । पुनः किम्भूतः ? यदुवरपरिषत् यदुपरा परिषत् यस्य सः । पुनः किम्भूतः ?—स्वैः दोर्भिः अधर्म्मं अस्यन् दूरीकुर्व्वन् । पुनः कथम्भूतः ?—स्थिरचरवृजिनघ्नः, स्थिरचराणां वृन्दावन-स्थित-स्थावर-जङ्गमादीनां वृजिनं दुःखं हन्ति यः सः, अथवा स्थिरचराणां जीवानां वृजिनं पापं हन्ति यः सः । पुनः किम्भूतः ?— सुस्मितश्रीमुखेन व्रजपुरवनितानां कामदेवं वर्द्धयन् ॥४॥

समस्त लोकों का जो आश्रय, देवकी से जन्म यह कथा जिनके पक्ष में अपवाद मात्र है, यदुकुल परिषद् जिनके सेवक हैं, जिन्होंने निज बल से अधर्म का विदूरित किया है, एव स्थावर जङ्गम का दुःख विनाश किया है, तथा सुस्मित श्रीमुख के द्वारा व्रज बधू एवं पुर बधू वृन्द के काम को वर्द्धित करते हैं इस प्रकार श्रीकृष्ण की जय हो ॥४॥

तथाहि पद्यावल्याम् श्रीश्रीभगवतः श्रीकृष्ण-चैतन्यदेवस्योक्तिः—

नाहं विप्रो न च नरपतिर्नापि वैश्यो न शूद्रो
नाहं वर्णी न च गृहपतिर्नो वनस्थो यतिर्वा ।
किन्तु प्रोद्यन्निखिल-परमानन्दपूर्णामृताब्धे-
र्गोपीभर्त्तुः पदकमलयोर्दासदासानुदासः ॥५॥

टीका—अहं विप्रः न, नरपतिः न, वैश्यः न, शूद्रः न, वर्णी क्षत्रियश्च न, गृहपतिः गृहस्थः न, वनस्थः वानप्रस्थः वा किंवा यतिः नो न, किन्तु

गोपीभर्त्तुः कृष्णस्य पदकमलयोः दासदासानुदासः। गोपीभर्त्तुः कथम्भूतस्य ?—प्रोद्यन्निखिलपरमानन्द-पूर्णामृताब्धेः उन्मीलन्निखिलपरमानन्दपूर्णामृत-सागरस्य ।।५।।

मैं ब्राह्मण नहीं हूँ, भूपति नहीं हूँ, शूद्र नहीं हूँ, क्षत्रिय नहीं हूँ, किंवा गृहस्थ वानप्रस्थ अथवा भिक्षु भी नहीं हूँ, किन्तु निखिल परमानन्द के पूर्ण प्रकाश एवं परिपूर्ण सुधासमूद्र स्वरूप गोपीनाथके दासके अनुदास हूँ ।।५।।

एत पढ़ि पुनरपि करिला प्रणाम ।
योड़ हाते भक्तगण वन्दे भगवान् ।।७६
उद्दण्ड नृत्ये प्रभु करिया हुङ्कार ।
चक्र भ्रमि भ्रमे यैछे अलात आकार ।।७७
नृत्ये प्रभुर याँहा याँहा पड़े पदतल ।
ससागरा मही शैल करे टलमल ।।७८
स्तम्भ, स्वेद, पुलकाश्रु, कम्प, वैवर्ण्य ।
नाना भावे विवशता, गर्व्व, हर्ष, दैन्य ।।७९
आछाड़ खाइया पड़ि भूमे गड़ि याय ।
सुवर्णपर्व्वत येन भूमिते लोटाय ।।८०
नित्यानन्द प्रभु दुइ हस्त प्रसारिञा ।
प्रभुके धरिते बुले आशे पाशे धाञा ।।८१
प्रभु-पाछे बुले आचार्य्य करिया हुङ्कार ।
हरिबोल "हरिबोल" बले बार बार ।।८२
लोक निबारिते हैल तिन मण्डल ।
प्रथम मण्डल नित्यानन्द महाबल ।।८३
काशीश्वर गोविन्दादि यत भक्तगण ।
हाताहाति करि हैल द्वितीयावरण ।।८४
बाहिरे प्रतापरुद्र लैया पात्रगण ।
मण्डली हइया करे लोक निवारण ।।८५
हरिचन्दनेर स्कन्धे हस्तआलम्बिया ।
प्रभुर नृत्य देखे राजा आविष्ट हइया ।।८६
हेन काले श्रीनिवास प्रेमाविष्ट-मन ।
राजार आगे रहि देखे प्रभुर नर्त्तन ।।८७
राजार आगे हरिचन्दन देखि श्रीनिवास ।
हस्ते तारे स्पर्शि कहे हआे एक पाश ।।८८
नृत्यावेशे श्रीनिवास किछुइ ना जाने ।
बार बार ठेले तार क्रोध हैल मने ।।८९
चापड़ मारिया तारे कैल निवारण ।
चापड़ खाइया क्रुद्ध हैला से हरिचन्दन ।।९०
क्रुद्ध हञा तारे किछु चाहे बलिबारे ।
आपने प्रतापरुद्र निबारिल तारे ।।९१
भाग्यवान् तुमि इहार हस्तस्पर्श पाइला ।
आमार भाग्ये नाहि तुमि कृतार्थ हइला ।।९२
प्रभुर नृत्य देखि लोकेर चमतकार ।
अन्य आछु जगन्नाथेर आनन्द अपार ।।९३
रथ स्थिर करि आगे ना करे गमन ।
अनिमिषनेत्रे करे नृत्य दरशन ।।९४
सुभद्रा बलरामेर हृदये उल्लास ।
नृत्य देखि दुइ जनार श्रीमुखे हैल हास ।।९५
उद्दण्ड नृत्ये प्रभुर अद्भुत विकार ।
अष्टसात्त्विक भावोदय हय समकाल ।।९६
मांस व्रण सह रोमवृन्द पुलकित ।
शिमुलिर वृक्ष येन कण्टके वेष्टित ।।९७
एकेक दन्तेर कम्प देखि लागे भय ।
लोके जाने दन्त सब खसिया पड़य ।।९८
सर्व्वाङ्गे प्रस्वेद छुटे ताते रक्तोद्गम ।
ज ज, ग ग, जज, गग, गद्गद वचन ।।९९
जलयन्त्र-धारा येन वहे अश्रुजल ।

आश पाश लोक यत भिजिल सकल ॥१००
देहकान्ति गौर कभु देखिये अरुण ।
कभु कान्ति देखि येन मल्लिकापुष्पसम ॥१०१
कभु स्तब्ध कभु प्रभु भूमिते पड़य ।
शुष्ककाष्ठसम हस्त पद ना चालय ॥१०२
कभु भूमि पड़े, कभु हय श्वासहीन ।
याहा देखि भक्तगणेर हय प्राण क्षीण ॥१०३
कभु नेत्र नासाय जल मुखे पड़े फेन ।
अमृतेर धारा चन्द्रबिम्बे वहे येन ॥१०४
सेइ फेन लइया शुभानन्द कैल पान ।
कृष्णप्रेमे मत्त तेँहो बड़ भाग्यवान् ॥१०५
एइमत ताण्डव नृत्य करि कतक्षण ।
भावविशेषे प्रभुर प्रवेशिल मन ॥१०६
ताण्डव नृत्य छाड़ि स्वरूपेरे आज्ञा दिल ।
हृदय जानिया स्वरूप गाइते लागिल ॥१०७

तथाहि पदम्—

सेइ त पराणनाथ पाइलुँ ।
याँहा लागि मदनदहने झुरि गेलुँ ॥१०८
एइ धुया उच्चैः स्वरे गाय दामोदर ।
आनन्दे मधुर नृत्य करेन ईश्वर ॥१०९
धीरे धीरे जगन्नाथ करिला गमन ।
आगे नृत्य करि चले शचीर नन्दन ॥११०
जगन्नाथे नेत्र दिया सबे गाय नाचे ।
कीर्त्तनिया सह प्रभु चले पाछे पाछे ॥११
जगन्नाथे मग्न प्रभुर नयन हृदय ।
श्रीहस्तयुगे करे गीतेर अभिनय ॥११२
गौर यदि आगे ना याय श्याम हय स्थिरे ।
गौर आगे याय श्याम चले धीरे धीरे ॥११३

एइमत गौर श्याम करे ठेलाठेलि ।
स्वरथ श्यामेरे राखे गौर महाबली ॥११
नाचिते नाचिते प्रभुर हैल भावान्तर ।
हस्त तुलि श्लोक पड़े करि उच्चैस्वर ॥१

तथाहि काव्यप्रकाशे (१।४)—

यः कौमारहरः स एव हि वरस्ता एव चैत्रक्ष-
स्ते चोन्मीलितमालतीसुरभयः प्रौढ़ाः कदम्बानिलाः।
सा चैवास्मि तथापि तत्र सुरतव्यापारलीलाविधौ
रेवारोधसि वेतसीतरुतले चेतः समुत्कण्ठयते ।६।

कृष्ण कृत अनुनय से यद्यपि विरह पीड़ा क
उपशम हुआ, तथापि श्रीमतीराधिका व्रज व्यतीत
कृष्ण सान्निध्य में भी तादृश प्रीति का अभाव
निबन्धन सत्वर कृष्ण का व्रजागमन प्रार्थना करके
निज अभिप्रेतार्थ साधक वाक्य को कृष्ण के समी
में सखी को कह रही है—हे सखि ! जिसने मेरा
कौमार काल अर्थात यौवन हरण किया है। सम्प्रति
वही मेरा वर है, वे सब चैत्र मासीया यामिनी
प्रस्फुटित मालती सौरभ, विकसित कदम्ब कानन
सम्बन्धीय समीर एवं वही मैं हूँ, तथापि, रेवातीरस्थ
अशोक मूल में जो विहार हुआ था, उस हेतु मन
समुत्कण्ठित हो रहा है ॥६॥

एइ श्लोक महाप्रभु पड़े बार बार ।
स्वरूप विने केह अर्थ ना जाने इहार ॥११६
एइ श्लोकेर अर्थ पूर्व्वे करियाछि व्याख्यान ।
श्लोकेर भावार्थ करि संक्षेपे आख्यान ॥११७
पूर्व्वे येन कुरुक्षेत्रे सब गोपीगण ।
कृष्णेर दर्शन पाञा आनन्दित-मन ॥११८
जगन्नाथ देखि प्रभुर से भाव उठिल ।
सेइ भावाविष्ट हैञा धूया गाओयाइल ॥११९
अवशेषे राधाकृष्णे कैल निवेदन ।
सेइ तुमि सेइ आमि से नवसङ्गम ॥१२०

तथापि आमार मन हरे वृन्दावन।
वृन्दावने उदय कराह आपन चरण ॥१२१
इँहा लोकारण्य हाती घोड़ा रथध्वनि।
ताँहा पुष्पारण्य भृङ्ग पिकनाद शुनि ॥१२२
इहा राजवेश सब सङ्गे क्षत्रियगण।
ताँहा गोपगण सङ्गे मुरलीवदन ॥१२३
व्रजे तोमार सङ्गे येइ सुख आस्वादन।
से सुख समुद्रे र इँहा नाहि एक कण ॥१२४
आमा लञा पुन लीला कर वृन्दावने।
तबे आमार मनोवाञ्छा हयत पूरणे ॥१२५
भागवते आछे एइ राधिका वचन।
पूर्व्वे ताहा सूत्रमध्ये करियाछि वर्णन ॥१२६
सेइ भावावेशे प्रभु पड़े एइ श्लोक।
श्लोकेर ये अर्थ केह नाहि जाने लोक ॥१२७
स्वरूपगोसाञि जाने ना करे अर्थ तार।
श्रीरूपगोसाञि कैल से अर्थ प्रचार ॥१२८
स्वरूपेर सङ्गे अर्थ करे आस्वादन।
नृत्यमध्ये सेइ श्लोक करेन पठन ॥१२९

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८२।४८)—

श्रीकृष्णं प्रति गोपीवाक्यम्—

आहुश्च ते नलिननाभ पदारविन्दं
योगेश्वरैर्हृदि विचिन्त्यमगाधबोधैः।
संसारकूपपतितोत्तरणावलम्ब
गेहं जुषामपि मनस्युदियात् सदा नः ॥७॥

श्रीमद् भागवत के १०-८२-४८ में उक्त है—हे नलिन नाभ ! अमल बुद्धि सम्पन्न योगेश्वर गण के द्वारा हृदय में चिन्तनीय, भवकूप में निपतित व्यक्ति वृन्द के उद्धार हेतु अवलम्बनीय तुम्हारे पदारविन्द युगल हम सब गृह वासिनी होने पर भी हम सब के मन में निरन्तर उदित हों ॥७॥

अस्यार्थः ।—यथा रागः ।

अन्येर ये अन्य मन, आमार मन वृन्दावन,
मने वने एक करि जानि।
ताँहा तोमार पदद्वय, कराह यदि उदय,
तबे तोमार पूर्ण कृपा मानि ॥१३०
प्राणनाथ ! शुन मोर सत्य निवेदन।
व्रज आमार सदन, ताँहा तोमार सङ्गम,
ना पाइले ना रहे जीवन ॥१३१
पूर्व्वे उद्धव द्वारे, एबे साक्षात् आमारे,
योगज्ञानेर कहिले उपाय।
तुमि विदग्ध कृपामय, जान आमार हृदय,
आमाय ऐछे करिते ना युयाय ॥१३२
चित्त काड़ि तोमा हैते, विषये चाहि लागाइते,
यत्न करि नारि काड़िबारे।
तारे ध्यान शिक्षा कर, लोक हासाइया मार,
स्थानास्थान ना कर विचारे ॥१३३
नहे गोपी योगेश्वर, तोमार पदकमल,
ध्यान करि पाइबे सन्तोष।
तोमार वाक्य परिपाटी, तार मध्ये कुटिनाटि
शुनि गोपीर बाड़े आर रोष ॥१३४
देह स्मृति नाहि यार, संसारकूप काँहा तार,
ताहा हैते ना चाहे उद्धार।
विरहसमूद्र-जले, काम-तिमिङ्गिले गिले,
गोपीगणे लह तार पार ॥१३५
वृन्दावन गोवर्द्धन, यमुनापुलिन वन,
सेइ कुञ्जे रासादिक लीला।
सेइ व्रजे व्रजजन, माता पिता बन्धुगण,
बड़ चित्र केमने पाशरिला ॥१३६

विदग्ध मृदु सद्‌गुण, सुशील स्निग्ध करुणी
ताहा तोमार नाहि दोषाभास ।
तबे ये तोमार मन, नाहि स्मरे व्रजजन,
से ग्रामार दुर्द्दैव विलास ॥१३७
ना गणि ग्रापन दुःख, देखि व्रजेश्वरीमुख,
व्रजजन-हृदय विदरे ।
किवा मार व्रजवासी, किवा जीयाग्रो व्रजे ग्रासि,
केने जीयाग्रो दुःख सहिबारे ॥१३८
तोमार ये ग्रन्य वेश, ग्रन्य सङ्ग ग्रन्य देश,
व्रजजने कभु नाहि भाय ।
व्रजभूमि छाड़िते नारे, तोमा ना देखिले मरे,
व्रजजनेर कि हवे उपाय ॥१३९
तुमि व्रजेर जीवन, तुमि व्रजेर प्राणधन,
तुमि व्रजेर सकल सम्पद ।
कृपार्द्र तोमार मन, ग्रासि जीयाग्रो व्रजजन,
वृजे उदय कराह निज पद ॥१४०

पुनर्यथा रागः—

शुनिया राधिकावाणी, वृजप्रेम मने जानि,
भावे व्याकुलित हैल मन ।
वृजलोकेर प्रेम शुनि, ग्रापनाके ऋणी मानि,
करेन कृष्ण तारे ग्राश्वासन ॥१४१
प्राणप्रिये ! शुन मोर ए सत्य वचन ।
तोमा सबार स्मरणे, झुरों मुञि रात्रि दिने,
मोर दुःख ना जाने कोन जन ॥१४२
वृजवासी यत जन, माता पिता सखागण,
सबे हय मोर प्राणसम ।
तार मध्ये गोपीगण, साक्षात मोर जीवन,
तुमि मोर जीवनेर जीवन ॥१४३
तोमा सबार प्रेमरसे, ग्रामाके करिला वशे,
ग्रामि तोमार ग्रधीन केवल ।
तोमा सबा छाड़ाइया, ग्रामा दूरदेशे लञा,
राखियाछे दुर्द्दैव प्रबल ॥१४४
प्रिया प्रिय-सङ्गहीना, प्रिय प्रियासङ्ग विना,
नाहि जीये ए सत्य प्रमाण ।
मोर दशा शुने यबे, तार एइ दशा हबे,
एइ भये दुँहे राखे प्राण ॥१४५
सेइ सती प्रेमवती, प्रेमवान् सेइ पति,
वियोगे ये वाञ्छे प्रियहिते ।
ना गणे ग्रापन दुःख, वाञ्छे प्रियजन-सुख,
सेइ दुइ मिले ग्रचिराते ॥१४६
राखिते तोमार जीवन, सेवि ग्रामि नारायण,
तार शक्त्ये ग्रासि निति निति ।
तोमा सने क्रीड़ा करि, निति याइ यदुपुरी,
ताँहा तुमि मान ग्रामा स्फूर्त्ति ॥१४७
मोर भाग्ये मो विषये, तोमार ये प्रेम हये,
सेइ प्रेम परम प्रबल ।
लुकाइया ग्रामा ग्राने, सङ्ग कराय तोमा सने
प्रकटेइ ग्रानिबे सत्वर ॥१४८
यादवेर प्रतिपक्ष, दुष्ट यत कंसपक्ष,
ताहा ग्रामि सब कैल क्षय ।
ग्राछे दुइ चारि जन, ताहा मारि वृन्दावन,
ग्राइलाम जानिह निश्चय ॥१४९
सेइ शत्रुगण हैते, वृजजने राखिते,
रहि राज्ये उदासीन हैञा ।
ये वा स्त्री पुत्र धने, करि वाह्य ग्रावरणे,
यदुगणेर सन्तोष लागिया ॥१५०

तोमार ये प्रेमगुणे, करे आमा आकर्षणे,
आनिबे आमा दिन दश विशे।
पुन आसि वृन्दावने, व्रजवधू तोमा सने,
विलसिब रात्रिदिवसे ॥१५१
एत ताँरे कहि कृष्ण, व्रज याइते सतृष्ण,
एक श्लोक पड़ि शुनाइल।
सेइ श्लोक शुनि राधा, खण्डिल सकल बाधा,
कृष्णप्राप्ति प्रतीत हइल ॥१५२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८२।४४)---

मयि भक्तिर्हि भूतानाममृतत्वाय कल्पते।
दिष्ट्या यदासीन्मत्स्नेहो भवतीनां मदापनः ॥८

श्रीकृष्ण कहे थे—हे गोपीवृन्द ! मेरे प्रति भक्ति ही प्राणि वृन्द के मोक्ष के हेतु होती है, सुतरां मेरे प्रति तुम सब का जो स्नेह है, यह अतीव कल्याण कर है, कारण वह मदीय प्रापक है ॥८॥

एइ सब अर्थ प्रभु स्वरूपेर सने।
रात्रि दिने घरे बसि करे आस्वादने ॥१५३
नृत्यकाले एइ भावे आविष्ट हइया।
श्लोक पड़ि नाचे जगन्नाथ-वदन चाञा ॥१५४
स्वरूपगोसाञिर भाग्य ना या वर्णन।
प्रभुते आविष्ट यार काय वाक्य मन ॥१५५
स्वरूपेर इन्द्रिये प्रभु निजेन्द्रियगण।
आविष्ट करिया करे गान आस्वादन ॥१५६
भावावेशे प्रभु कभु भूमिते बसिया।
तर्ज्जनीते भूमि लेखे अधोमुख हैञा ॥१५७
अङ्गुलीते क्षत हबे जानि दामोदर।
भये निज करे निवारये प्रभु कर ॥१५८
प्रभुर भावानुरूप स्वरूपेर गान।
यबे येइ रस ताहा करे मूर्त्तिमान् ॥१५९
श्रीजगन्नाथेर देखि श्रीमुखकमल।
ताहार उपर सुन्दर नयनयुगल ॥१६०
सूर्य्येर किरणे मुख करे झलमल।
माल्य वस्त्र अलङ्कार दिव्य परिमल ॥१६१
प्रभुर हृदये आनन्द-सिन्धु उथलिल।
उन्माद झञ्झावायु तत्क्षणे उठिल ॥१६२
आनन्द उन्मादे उठे भावेर तरङ्ग।
नानाभाव सैन्ये उपजिल युद्धरङ्ग ॥१६३
भावोदय, भावशान्ति, सन्धि, शावल्य।
सञ्चारी, सात्त्विक, स्थायी सबार प्रावल्य ।१६४
प्रभुर शरीर येन शुद्ध हेमाचल।
भावपुष्पमद्रु ताते पुष्पित सकल ॥१६५
देखिया लोकेर आकर्षये चित्त मन।
प्रेमामृत वृष्टे प्रभु सिञ्चे सर्व्वजन ॥१६६
जगन्नाथ सेबक यत राजपात्रगण।
यात्रिक लोक, नीलाचलवासी यत जन ॥१६७
प्रभुर नृत्य प्रेम देखि हय चमत्कार।
कृष्णप्रेम उपजिल हृदये सबार ॥१६८
प्रेमे नाचे गाय लोक करे कोलाहल।
प्रभुर नृत्य देखि सबे आनन्दे विह्वल ॥१६९
अन्येर का कथा जगन्नाथ, हलधर।
प्रभुर नृत्य देखि सुखे चलेन मन्थर ॥१७०
कभु सुखे नृत्य रङ्ग देखे रथ राखि।
से कौतुक ये देखिल सेइ तार साक्षी ॥१७१
एइमत प्रभु नृत्य करिते भ्रमिते।
प्रतापरुद्रेर आगे पड़िला भूमिते ॥१७२
संभ्रमे प्रतापरुद्र प्रभुके धरिल।
ताहाके देखिते प्रभुर वाह्यज्ञान हैल ॥१७३

राजा देखि महाप्रभु करेन धिक्कार ।
छि छि ! विषयिस्पर्श हइल आमार ॥१७४
आवेशे नित्यानन्द ना हैला सावधाने ।
काशीश्वर गोविन्द आछिला अन्य स्थाने ।१७५
यद्यपि राजार देखि हाड़िर सेवन ।
प्रसन्न हैआछे तारे मिलिबारे मन ॥१७६
तथापि आपन गण करिते सावधान ।
वाह्ये किछु रोषाभास कैला भगवान् ॥१७७
प्रभुर वचने राजार मने हैल भय ।
सार्व्वभौम कहे, तुमि ना कर संशय ॥१७८
तोमार उपरे प्रभुर प्रसन्न आछे मन ।
तोमा लक्ष्य करि शिखायेन निजगण ॥१७९
अवसर जानि आमि करिब निवेदन ।
सेइ काले याइ करह प्रभुर मिलन ॥१८०
तबे महाप्रभु रथ प्रदक्षिण हैञा ।
रथ पाछे याइ ठेले रथे माथा दिञा ॥१८१
ठेलिले चलिल रथ हड़ हड़ करि ।
चौदिकेर लोक उठे बलि हरि हरि ॥१८२
तबे प्रभु निज भक्तगण लञा सङ्गे ।
बलदेव सुभद्राग्रे नृत्य करे रङ्गे ॥१८३
ताँहा नृत्य करि जगन्नाथ आगे आइला ।
जगन्नाथ देखि नृत्य करिते लागिला ॥१८४
चलिया आइला रथ बलगण्डि स्थाने ।
जगन्नाथ रथ राखि देखे डाहिन बामे ॥१८५
बामे विप्रशासन नारिकेल-बन ।
डाहिने पुष्पोद्यान येन वृन्दावन ॥१८६
आगे नृत्य करे गौर लञा भक्तगण ।
रथ राखि जगन्नाथ करेन दर्शन ॥१८७

सेइ स्थाने भोग लागे आछये नियम ।
कोटि भोग जगन्नाथ करे आस्वादन ॥१८८
जगन्नाथेर छोट वड़ यत दासगण ।
निज निजोत्तम भोग करे समर्पण ॥१८९
राजा, राजमहिषीवृन्द, पात्रमित्रगण ।
नीलाचलवासी यत छोट बड़ जन ॥१९०
नानादेशेर यात्रिक, आर देशी यत जन ।
निज निज भोग ताहाँ कैल समर्पण ॥१९१
आगे, पाछे, दुइ पार्श्वे, पुष्पोद्याने वने ।
ये याँहा पाय भोग लागाय नाहिक नियमे १९२
भोगेर समये लोकेर महाभिड़ हैल ।
नृत्य छाड़ि महाप्रभु उपवने गेल ॥१९३
प्रेमावेशे महाप्रभु उपवन याञा ।
पुष्पोद्यान-गृहपिण्डाय रहिला पड़िञा ॥१९४
नृत्यपरिश्रमे प्रभुर देहे घन घर्म्म ।
सुगन्धि शीतल वायु करये सेवन ॥१९५
यत भक्त कीर्त्तनिया आसिया आरामे ।
प्रति वृक्षतले सबे करिला विश्रामे ॥१९६
एइत कहिल प्रभुर महासङ्कीर्त्तन ।
जगन्नाथेर आगे यैछे करिला नर्त्तन ॥१९७
रथाग्रे महाप्रभुर नृत्यविवरण ।
चैतन्याष्टके रूपगोसाञि करियाछेन वर्णन १९८

तदुक्तं श्रीरूपगोस्वामिना स्तवमालायाम्--

रथारूढ़स्यारादधिपदवी नीलाचलपते-
रदभ्रप्रेमोर्म्मिस्फुरितनटनोल्लासविवशः ।
सहर्षं गायद्भिः परिवृततनुर्वैष्णवजनैः
स चैतन्यः किं मे पुनरपि दृशोर्यास्यति पदम् ॥१९९

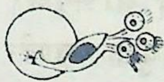
टीका—सः चैतन्यः मे मम दृशोः चक्षुषोः पद

पुनरपि यास्यति किं ?—किम्भूतः ?—रथारूढ़स्य नीलाचलपतेः आरात् समीपे अधिपदवी। पुनः कीदृशः ?—अदभ्र-प्रेमोर्म्मि-स्फुरित-नटनोल्लास-विवशः, अदभ्रं अनल्पं प्रेम तस्य ऊर्म्मिणा तरङ्गेण स्फुरितं यत् नटनं नर्त्तनं तस्य उल्लासेन विवशः। पुनः कीदृशः ?—सहर्षं सानन्दं यथा स्यात्तथा गायद्भिः वैष्णवजनैः परिवृततनुः ॥६॥

जो अनल्प प्रेम तरङ्ग में भासमान होकर नीलाचल पति के रथ समीप में आनन्द से नृत्य करते करते विवश होते थे, वैष्णव गण जिनके चतुर्दिक में सङ्कीर्त्तन करते थे, वह चैतन्य देव कब मेरे नयन गोचर होंगे ? ॥६॥

इहा येइ शुने सेइ गौरचन्द्र पाय।
सुदृढ़ विश्वास सह प्रेमभक्त हय ॥१६६
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२००

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्य खण्डे रथाग्रे नर्त्तनं नाम त्रयोदशः परिच्छेदः ॥१३॥



❀ चतुर्द्दश परिच्छेद ❀

गौरः पश्यन्नात्मवृन्दैः श्रीलक्ष्मीविजयोत्सवम्।
श्रुत्वा गोपीरसोल्लासं हृष्टः प्रेम्णा ननर्त्त सः ॥१॥

टीका—सः गौरः आत्मवृन्दैः सह श्रीलक्ष्मी-विजयोत्सवं नाम पर्व्वं पश्यन् सन् गोपीरसोल्लासं श्रुत्वा, हृष्टः सन् प्रेम्णा ननर्त्त ॥१॥

गौरचन्द्र निजभक्त वृन्द के सहित लक्ष्मीदेवी के विजयोत्सव नामक पर्व को देखकर गोपी रसोल्लास को सुनकर आनन्द चित्त से नृत्य किये थे।१

जय जय गौरचन्द्र श्रीकृष्णचैतन्य।
जय जय नित्यानन्द जयाद्वैत धन्य ॥१
जय जय श्रीवासादि गौरभक्तगण।
जय श्रोतृगण यार गौर प्राणधन ॥२
एइमत प्रभु आछे प्रेमेर आवेशे।
हेन काले प्रतापरुद्र करिला प्रवेशे ॥३
सर्व्वभौम उपदेशे छाड़ि राजवेश।
एकला वैष्णववेशे आइला सेइ देश ॥४
सब भक्तेर आज्ञा लैल योड़हात हैञा।
प्रभुपाद धरि पड़े साहस करिञा ॥५
आँखि बुजि प्रभुप्रेमे भूमेते शयन।
नृपति नैपुण्ये करे पाद सम्बाहन ॥६
रासलीलार श्लोक पढ़ि करये स्तवन।
"जयति तेऽधिकं" अध्याय करये पठन ॥७
शुनिते शुनिते प्रभुर सन्तोष अपार।
बल बल बलि उच्च बले बार बार ॥८
"तव कथामृतं" श्लोक राजा ये पड़िल।
उठि प्रेमावेशे प्रभु आलिङ्गन दिल ॥९
तुमि मोरे बहु दिले अमूल्य रतन।
मोर किछु दिते नाहि दिनु आलिङ्गन ॥१०
एत बलि सेइ श्लोक पड़े बार बार।
दुइ जनार अङ्गे कम्प नेत्रे जलधार ॥११

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३१।९)—

तव कथामृतं तप्तजीवनं
कविभिरीड़ितं कल्मषापहम्।
श्रवणमङ्गलं श्रीमदाततं
भुवि गृणन्ति ये भूरिदा जनाः ॥२॥

टीका—ये जनाः तव कथामृतं भुवि धरायां आततं विस्तारितं यथा स्यात्तथा गृणन्ति, ते भूरिदाः भूरिदातारः, अथवा भूरिदाः गतजन्मसु बहुदत्तवन्तः।

कथामृतं किम्भूतं ?—तप्तजीवनं। पुनः किम्भूतं ? –कविभिः ब्रह्मज्ञैः ईड़ितं संस्तुतम्। पुनः कथम्भूतम् ? कल्मषापहं पापनाशकं। पुनः किम्भूतं ?—श्रवण-मङ्गलं। पुनः किम्भुतं ?—श्रीमत् ॥२॥

श्रीमद् भागवत के १०।३१।६ में उक्त है-- तुम्हारे कथामृत प्रतप्त जनगण के जीवन स्वरूप है, कविगणों के द्वारा वह संस्तुत एवं पापहर है, उसको सुनने से ही कल्याण एवं शान्ति लाभ होता है। धरातल में जो जन उसका पान कराते हैं, वे ही भूरिदा हैं, अर्थात् अतिशय दाता एवं धन्य हैं ॥२॥

भूरिदा भूरिदा बलि करे आलिङ्गन।
इहा नाहि जाने एहो हय कोन् जन ॥१२
पूर्व्वे सेबा देखि तारे कृपा उपजिल।
अनुसन्धान बिने कृपा प्रसाद करिल ॥१३
एइ देखि चैतन्येर कृपा महाबल।
तार अनुसन्धान बिना करये सफल ॥१४
प्रभु कहे, के तुमि करिले मोर हित।
आचम्बिते आसि पियाओ कृष्णलीलामृत।१५
राजा कहे, आमि तोमार दासेर अनुदास।
भृत्येर भृत्य कर मोरे एइ मोर आश ॥१६
तबे महाप्रभु ताँरे ऐश्वर्य्य देखाइल।
काँहा ना कहिओ इहा निषेध करिल ॥१७
राजा हेन ज्ञान प्रभु ना कैल प्रकाश।
अन्तरे सब जाने प्रभु बाहिरे उदास ॥१८
प्रतापरुद्रेर भाग्य देखि भक्तगण।
राजाके प्रशंसे सबे आनन्दितमन ॥१९
दण्डवत् करि राजा बाहिरे चलिला।
षोड़हात करि सब भक्तेरे बन्दिला ॥२०
मध्याह्न करिल प्रभु लञा भक्तगण।
वाणीनाथ प्रसाद लैया कैल आगमन ॥२१
सार्व्वभौम रामानन्द वाणीनाथ दिञा।
प्रसाद पाठाइल राजा बहुत करिञा ॥२२
बलगण्डि-भोगेर प्रसाद उत्तम अनन्त।
निसकड़ि प्रसाद आइल यार नाहि अन्त ॥२३
छेना पाना पैड़ आम्र नारिकेल काँठाल।
नानाबिध कदलक आर बीज ताल ॥२४
नारङ्ग छोलङ्ग टाबा कमला बीजपुर।
बादाम छोहरा द्राक्षा पिण्डखर्ज्जूर ॥२५
मनोहर लाड़ु आदि शतेक प्रकार।
अमृतगुटिका आदि क्षीरसा अपार ॥२६
अमृतमण्डा छेनाबड़ा आर कर्पूरकेलि।
रसामृत सरभाजा आर सरपुली ॥२७
हरिबल्लभ सेवति कर्पूरमालती।
डालिम मरिचालाड़ु नवात अमृति ॥२८
पद्मचिनि चन्द्रकान्ति खाजा खण्डसार।
रियड़ी कदमा तिला खाजार प्रकार ॥२९
नारङ्ग छोलङ्ग आम्रवृक्षेर आकार।
फलफुल पत्रयुक्त खण्डेर बिकार ॥३०
दधि दुग्ध दधितक्र रसाला शिखरिणी।
सलवणमुद्गाङ्कुर आदा खानि खानि ॥३१
नेबु कोलि आदि नाना प्रकार आचार।
लिखिते ना पारि प्रसाद कतेक प्रकार ॥३२
प्रसादे पूरित हैल अर्द्ध उपवन।
देखिया सन्तोष हैल महाप्रभुर मन ॥३३
एइमत जगन्नाथ करेन भोजन।
एइ सुखे महाप्रभुर जुड़ाय नयन ॥३४
केया-पत्र द्रोणि आइल बोझा पाँच सात।
एकेक जने दशदोणा दिल एकेक पात ॥३५

कीर्त्तनियार परिश्रम जानि गौरराय ।
ता सबाके खाओयाइते प्रभुर मन धाय ॥३६
पाँति पाँति करि भक्तगण बसाइला ।
परिवेशन करिबारे आपने लागिला ॥३७
प्रभु ना खाइले केह ना करे भोजन ।
स्वरूपगोसाञि तबे कैला निवेदन ॥३८
आपने वैसह प्रभु भोजन करिते ।
तुमि ना खाइले केह ना पारे खाइते ॥३९
तबे महाप्रभु वैसे निजगण लञा ।
भोजन कराइल सबाके आकण्ठ पूरिञा ॥४०
भोजन करि बसिला प्रभु करि आचमन ।
प्रसाद उबरिल खाय सहस्रेक जन ॥४१
प्रभुर आज्ञाय गोविन्द दीनहीन जने ।
दुःखित काङ्गाल आनि कराइल भोजने ॥४२
काङ्गालेर भोजनरङ्ग देखे गौरहरि ।
हरिबोल बलि तारे उपदेश करि ॥४३
हरि हरि बोले काङ्गाल प्रेमे भासि याय ।
ऐछन अद्भुत लीला करे गौरराय ॥४४
इँहा जगन्नाथेर रथचलनसमय ।
गौड़ सब रथ टाने आगे ना चलय ॥४५
टानिते ना पारि गौड़ रथ छाड़ि दिला ।
पात्र मित्र लञा राजा व्यग्र हैया आइला ।४६
महामल्लगण लञा रथ चालाइते ।
आपने लागिला, रथ ना पारे टानिते ॥४७
व्यग्र हैञा राजा आनि मत्त हस्तिगण ।
रथ चालाइते रथे करिला योटन ॥४८
मत्तहस्तिगण टाने यार यत बल ।
एक पद ना चले रथ हइल अचल ॥४९

शुनि महाप्रभु आइला निजगण लञा ।
मत्त हस्ती रथ टाने देखे दाण्डाइञा ॥५०
अङ्कुशेर घाये हस्ती करये चीत्कार ।
रथ नाहि चले, लोके करे हाहाकार ॥५१
तबे महाप्रभु सब हस्ती घुचाइल ।
निजगणे रथ-काछि टानिबारे दिल ॥५२
आपने रथेर पाछे ठेले माथा दिया ।
हड़ हड़ करि रथ चलिला धाइया ॥५३
भक्तगण काछिते हात दिया मात्र धाय ।
आपने चलये रथ टानिते ना पाय ॥५४
महानन्दे लोक करे जय जय ध्वनि ।
जय जगन्नाथ वहि आर नाहि शुनि ॥५५
निमिषेके रथ गेला गुण्डिचार द्वार ।
चैतन्यप्रताप देखि लोके चमत्कार ॥५६
जय गौरचन्द्र, जय श्रीकृष्णचैतन्य ।
एइमत कोलाहल करे लोक धन्य ॥५७
देखिया प्रतापरुद्र पात्र मित्र सङ्गे ।
प्रभुर महिमा देखि प्रेमे फुले अङ्गे ॥५८
पाण्डुविजय तबे कैल सेबकगणे ।
जगन्नाथ बसिल आसि निज सिंहासने ॥५९
सुभद्रा बलदेव सिंहासनेते आइला ।
जगन्नाथेर स्नान भोग हइते लागिला ॥६०
अङ्गणेते महाप्रभु लञा भक्तगण ।
आनन्दे आरम्भिल प्रभु नर्त्तन कीर्त्तन ॥६१
आनन्देते महाप्रभुर प्रेम उथलिल ।
देखि सब लोक प्रेमसमुद्रे भासिल ॥६२
नृत्य करि सन्ध्याकाले आरति देखिल ।
आइटोटा आसि प्रभु विश्राम करिल ॥६३

अद्वैतादि भक्तगण निमन्त्रण कैल।
मुख्य मुख्य नव जन नव दिन पाइल ॥६४
आर भक्तगण चातुर्म्मास्य यत दिने।
एक एक दिन करि पड़िल वण्टने ॥६५
चारिमासेर दिन, मुख्य भक्त बाँटि निल।
आर भक्तगण अवसर ना पाइल ॥६६
एक दिन निमन्त्रण करे दुइ तिन मेलि।
एइमत महाप्रभुर निमन्त्रण-केलि ॥६७
प्रातःकाले स्नान करि देखि जगन्नाथ।
सङ्कीर्त्तन नृत्य करे भक्तगण साथ ॥६८
कभु अद्वैत नाचे कभु नित्यानन्द।
कभु हरिदास नाचे कभु अच्युतानन्द ॥६९
कभु वक्रेश्वर कभु आर भक्तगणे।
त्रिसन्ध्या कीर्त्तन करे गुण्डिचा प्राङ्गणे ॥७०
वृन्दावन आइला कृष्ण एइ प्रभुर ज्ञान।
कृष्णेर विरह-स्फूर्त्ति हैल अवसान ॥७१
राधासङ्गे कृष्णलीला एइ हैल ज्ञाने।
एइ रसे मग्न प्रभु हइला आपने ॥७२
नानोद्याने भक्तसङ्गे वृन्दावनलीला।
इन्द्रद्युम्नसरोबरे करे जलखेला ॥७३
आपने सकल भक्ते सिञ्चे जल दिया।
सब भक्तगण सिञ्चे चौदिके बेड़िया ॥७४
कभु एक मण्डल कभु अनेक मण्डल।
जलमण्डूक वाद्य बाजाय सबे करतल ॥७५
दुइ दुइ जन मेलि करे जलरण।
केह हारे जिने प्रभु करे दरशन ॥७६
अद्वैत नित्यानन्द करे जल फेलाफेलि।
आचार्य्य हारिया पाछे करे गालागालि ॥७७
विद्यानिधिर जलयुद्ध स्वरूपेर सने।
गुप्तदत्त जलयुद्ध करे दुइ जने ॥७८
श्रीवास सहिते जल खेले गदाधर।
राघवपण्डित सने खेले वक्रेश्वर ॥७९
सार्व्वभौम सह खेले रामानन्द राय।
गाम्भीर्य्य गेल दुँहार हैल शिशुप्राय ॥८०
महाप्रभु ताँहा दुँहार चाञ्चल्य देखिया।
गोपीनाथाचार्य्ये किछु कहेन हासिया ॥८१
पण्डित गम्भीर दुँहे प्रामाणिक जन।
बाल्यचाञ्चल्य करे, करह वर्ज्जन ॥८२
गोपीनाथ कहे, तोमार कृपा महासिन्धु।
उछलित कर यबे तार एक बिन्दु ॥८३
मेरु मन्दरपर्व्वत डुवाय यथा तथा।
एइ दुइ गण्डशैल इहार का कथा ॥८४
शुष्कतर्क खलि खाइते जन्म गेल यार।
तारे लीलामृत पियाओ ए कृपा तोमार ॥८५
हासि महाप्रभु तबे अद्वैत आनिल।
जलेर उपरे ताँरे शेषशय्या कैल ॥८६
आपने ताहार उपर करिल शयन।
शेषशायि-लीला प्रभु कैल प्रकटन ॥८७
श्रीअद्वैत निजशक्ति प्रकट करिया।
महाप्रभु लञा बुले जलेते भासिया ॥८८
एइमत जलक्रीड़ा करि कतक्षण।
आइटोटा आइला प्रभु लञा भक्तगण ॥८९
पुरी भारती आदि मुख्य भक्तगण।
आचार्य्येर निमन्त्रणे करिल भोजन ॥९०
वाणीनाथ आर यत प्रसाद आनिल।
महाप्रभुर गणे सेइ प्रसाद खाइल ॥९१

अपराह्णे आसि कैल दर्शन नर्त्तन ।
निशाते उद्याने आसि करिल शयन ॥६२
आर दिन आसि कैल ईश्वर दर्शन ।
प्राङ्गणे नृत्य गीत करिला कतक्षण ॥६३
भक्तगण सङ्गे प्रभु उद्याने आसिया ।
वृन्दावनविहार करे भक्तगण लञा ॥६४
वृक्षवल्ली प्रफुल्लित प्रभुर दर्शने ।
भृङ्ग पिक गाय, बहे शीतल पवने ॥६५
प्रति वृक्षतले प्रभु करेन नर्त्तन ।
वासुदेव दत्त मात्र करेन गायन ॥६६
एक एक वृक्षतले एक एक गाय ।
परम आवेशे एका नाचे गौरराय ॥६७
तबे वक्रेश्वरे प्रभु कहिल नाचिते ।
वक्रेश्वर नाचे प्रभु लागिला गाइते ॥६८
प्रभु सङ्गे स्वरूपादि कीर्त्तनिया गाय ।
दिग्‌विदिक् नाहि ज्ञान प्रेमेर बन्याय ॥६६
एइमत कतक्षण करि वनलीला ।
नरेन्द्रसरोबरे गेला करिते जलखेला ॥१००
जलक्रीड़ा करि पुन आइला उद्याने ।
भोजनलीला कैल तबे लञा भक्तगणे ॥१०१
नब दिन गुण्डिचाते रहे जगन्नाथ ।
महाप्रभु ऐछे लीला करे भक्त साथ ॥१०२
जगन्नाथवल्लभ नाम बड़ पुष्पाराम ।
नब दिन करे प्रभु तथाइ विश्राम ॥१०३
हेरापञ्चमीर दिन आइल जानिया ।
काशीमिश्रे कहे राजा यतन करिया ॥१०४
कालि हेरापञ्चमी श्रीलक्ष्मीर विजय ।
ऐछे उत्सब कर यैछे कभु नाहि हय ॥१०५
महोत्सब कर तैछे विशेष सम्भार ।
देखि महाप्रभुर यैछे हय चमत्कार ॥१०६
ठाकुरेर भाण्डारे आर आमार भाण्डारे ।
चित्रवस्त्र आर छत्र किङ्किणी चामरे ॥१०७
ध्वजपताका घण्टा दर्पण करह मण्डन ।
नानावाद्य नृत्य दोला करह साजन ॥१०८
द्विगुण करिया कर सब उपहार ।
रथयात्रा हैते येन हय चमत्कार ॥१०६
सेइ त करिह प्रभु लञा निजगण ।
स्वच्छन्दे आसिया येन करेन दर्शन ॥११०
प्रातःकाले महाप्रभु निजगण लञा ।
जगन्नाथ दर्शन कैल सुन्दराचल याञा ॥१११
नीलाचल आइला पुन भक्तगण सङ्गे ।
देखिते उत्कण्ठा हेरापञ्चमीर रङ्गे ॥११२
काशीमिश्र प्रभुके बहु आदर करिया ।
स्वगण सह भाल स्थाने बसाइल लञा ॥११३
रसविशेष प्रभुर शुनिते मन हैल ।
ईषत् हासिया तबे स्वरूपे पुछिल ॥११४
यद्यपि जगन्नाथ करे द्वारकाविहार ।
सहज प्रकट करे परम उदार ॥११५
तथापि वत्सरमध्ये हय एक बार ।
वृन्दाबन देखिबारे उत्कण्ठा अपार ॥११६
वृन्दावन सम एइ उपवनगण ।
ताहा देखिबारे उत्कण्ठित हय मन ॥११७
बाहिर हैते करे रथयात्रा छल ।
सुन्दराचल याय प्रभु छाड़ि नीलाचल ॥११८
नानापुष्पोद्याने ताँहा खेले रात्रिदिने ।
लक्ष्मीदेवी सङ्गे नाहि लय कि कारणे ॥११६

स्वरूप कहे, शुन प्रभु कारण इहार।
वृन्दावनक्रीड़ाय लक्ष्मीर नाहि अधिकार ॥१२०
वृन्दावनक्रीड़ाय कृष्णेर सहाय गोपीगण।
गोपी विने अन्ये कृष्णेर हरिते नारे मन ॥१२१
प्रभु कहे यात्रा छले कृष्णेर गमन।
सुभद्रा आर बलदेव सङ्गे दुइ जन ॥१२२
गोपीसङ्गे लीला यत करे उपवने।
निगूढ़ कृष्णेर भाव केह नाहि जाने ॥१२३
अतएव प्रकट कृष्णेर नाहि किछु दोष।
तबे केन लक्ष्मीदेवी करे एत रोष ॥१२४
स्वरूप कहे, प्रेमवतीर एइत स्वभाव।
कान्तेर औदास्यलेशे हय क्रोधभाव ॥१२५
हेन काले खचित याहे विविध रतन।
सुवर्णेर चौदोलाते करि आरोहण ॥१२६
छत्र चामर ध्वज पताका तोरण।
नानावाद्य आगे नाचे देवदासीगण ॥१२७
ताम्बुलसम्पुट झारि व्यजन चामर।
साथे याय दाशी शत दिव्यभूषाम्बर ॥१२८
अलौकिक ऐश्वर्य्य सङ्गे बहु परिबार।
क्रुद्ध हैञा लक्ष्मीदेवी आइला सिंहद्वार ॥१२९
श्रीजगन्नाथेर यत मुख्य भृत्यगण।
लक्ष्मीदासीगण तारे करेन बन्धन ॥१३०
बान्धिया आनिया पाड़े लक्ष्मीर चरणे।
चोरे येन दण्ड करि लय नानाधने ॥१३१
अचेतन रथ ताँर करेन ताड़न।
नानामत गालि देन दण्डेर वचन ॥१३२
महालक्ष्मीदासीगणेर प्रागल्भ्य देखिञा।
हासिते लागिला प्रभु निजगण लञा ॥१३३

[मध्यलीला

दामोदर कहे, ऐछे मानेर प्रकार।
त्रिजगते काँहा नाहि देखि शुनि आर ॥१
मानिनी निरुत्साहे छाड़े विभूषण।
भूमे वसि नखे लिखे मलिनवसन ॥१३
पूर्व्वे सत्यभामार शुनि एइबिध मान।
व्रज गोपीगणेर मान रसेर निदान ॥१३
जिहो निज सर्व्वसम्पत्ति प्रकट करिया।
प्रियेर उपरे याय सैन्य साजाइया ॥१३
प्रभु कहे, कह व्रजमानेर प्रकार।
स्वरूप कहे, गोपीमान नदी शतधार ॥१३
नायिकार स्वभाव प्रेमवृत्ति बहु भेद।
सेइ भेद नानाप्रकार मानेर उद्भेद ॥१३
सम्यक् गोपीर मान ना याय कथन।
एक दुइ भेदे करि दिग्दरशन ॥१४
माने केह हय धीरा केह त अधीरा।
एइ तिन भेद केह हय धीराधीरा ॥१४
धीरा कान्त दूरे देखि करे प्रत्युत्थान।
निकट आसिते करे आसन प्रदान ॥१४
हृदि कोप, मुखे कहे मधुर वचन।
प्रिय आलिङ्गिते ताँरे करे आलिङ्गन ॥१४
सरल व्यवहारे करे मानेर पोषण।
किंवा सोल्लुण्ठवाक्ये करे प्रिय निरसन ॥१४
अधीरा निष्ठुरवाक्ये करये भर्त्सन।
कर्णोत्पले ताड़े करे मालाय बन्धन ॥१४
धीराधीरा वक्रवाक्ये करे उपहास।
कभु स्तुति कभु निन्दा कभु वा उदास ॥१४
मुग्धा मध्या प्रगल्भा तिन नायिकार भेद।
मुग्धा नाहि जाने मानेर वैदग्ध्यी विभेद ।१

मुख आच्छादिया करे केवल रोदन ।
कान्तेर विनयवाक्ये हय परसन्न ॥१४८
मध्या प्रगल्भा धरे धीरादि विभेद ।
तार मध्ये सबार स्वभाव तिन भेद ॥१४९
केह प्रखरा केह मृदु केह हय समा ।
स्व-स्व भावे कृष्णेर बाड़ाय रससीमा ॥१५०
प्राखर्य्य मार्द्दव साम्य स्वभाव निर्द्दोष ।
सेइ सेइ स्वभावे कृष्णे कराय सन्तोष ॥१५१
एकथा शुनिते प्रभुर आनन्द अपार ।
कह कह दामोदर कहे बार बार ॥१५२
दामोदर कहे, कृष्ण रसिकशेखर ।
रस-आस्वादक, रसमय-कलेवर ॥१५३
प्रेममयवपु कृष्ण भक्तप्रेमाधीन ।
शुद्ध प्रेमरस गुणे गोपिका प्रवीण ॥१५४
गोपिकार प्रेमे नाहि रसाभाष दोष ।
अतएव कृष्णेर करे परम सन्तोष ॥१५५

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।३३।२५)--

परीक्षितं प्रति श्रीशुकदेववाक्यम्—

एवं शशाङ्कांशुविराजिता निशाः
स सत्यकामोऽनुरताबलागणः ।
सिषेव आत्मन्यवरुद्धसौरतः
सर्व्वाः शरत्काव्यकथारसाश्रयाः ॥३॥

टीका—सः सत्यकामः अनुरताबलागणः आत्मनि अन्तर्म्मनसि अवरुद्धसौरतः सन् एवं एवम्प्रकारेण सर्व्वाः निशाः सिषेव । किम्भूताः ?—शरत्काव्य-कथारसाश्रयाः । पुनः कथम्भूताः ?—शशाङ्कांशु-विराजिताः ॥३ ।

श्रीमद् भागवत के १०।३३।२५ में उक्त है—सत्य सङ्कल्प भगवान् कृष्ण मन में ही काम को अवरुद्ध कर, उन सब कौमुदीमयी कविवर्णिता, रस भाव परिपूरिता शारदीया रात्रि में अनुरता रमणी वृन्द के सहित क्रीड़ा किये थे ॥३॥

बामा एक गोपीगण दक्षिणा एक गण ।
नानाभावे कराय कृष्णे रस आस्वादन ॥१५६
गोपीगणमध्ये श्रेष्ठा राधाठाकुराणी ।
निर्म्मल उज्ज्वलरस प्रेमरत्न-खनि ॥१५७
वयसे मध्यमा तिँह स्वभावेते समा ।
गाढ़प्रेमे स्वभावे तिँह निरन्तर बामा ॥१५८
वाम्य स्वभावे मान उठे निरन्तर ।
ताँर वाम्ये उठे कृष्णेर आनन्दसागर ॥१५९

तथाहि उज्ज्वलनीलमणौ शृङ्गारभेदकथने (४२)-

श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

अहेरिव गतिः प्रेम्नः स्वभावकुटिला भवेत् ।
अतो हेतोरहेतोश्च यूनोर्मान उदञ्चति ॥४॥

प्रेम,—सर्प के समान स्वभावतः कुटिल होता है, अतः हेतु से हो, अथवा निर्हेतुक से ही हो युवक युवती का मान उदित होता ही रहता है ॥४॥

एत शुनि बाड़े प्रभुर आनन्दसागर ।
कह कह बले तबे, कहे दामोदर ॥१६०
अधिरूढ़ महाभाव सदा राधार प्रेम ।
विशुद्ध निर्म्मल येन दशवाण हेम ॥१६१
कृष्णदरशन यदि पाय आचम्बिते ।
नानाभावविभूषणे हय विभूषिते ॥१६२
अष्टसात्त्विक, हर्षादि, व्यभिचारी आर ।
सहजप्रेम विंशति भाव अलङ्कार ॥१६३
किलकिञ्चित, कुट्टमित, विलास, ललित ।
विव्वोक, मोट्टायित, आर मौग्ध्य, चकित ।१६४
एत भाव-भूषाय भूषित राधा-अङ्ग ।
देखिया उछले कृष्णेर सुखाब्धितरङ्ग ॥१६५

किलकिञ्चित भावभूषार शुन विवरण।
ये भूषाय भूषित राधा हरे कृष्णेर मन।१६६
राधा देखि कृष्ण यदि छुँइते करे मन।
दानघाटि पथे तबे करेन गमन॥१६७
यबे आसि माना करे पुष्प उठाइते।
सखी आगे चाहे यदि अङ्गे हस्त दिते॥१६८
एइ सब स्थाने किलकिञ्चित उद्गम।
प्रथमेइ हर्ष-सञ्चारी मूल कारण॥१६९

तथाहि उज्ज्वलनीलमणौ बिभावकथने (७१)

श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

गर्व्वाभिलाषरुदितस्मितासूयाभयक्रुधाम्।
सङ्करीकरणं हर्षादुच्यते किलकिञ्चितम्॥५॥

टीका—गर्व्वाभिलाषरुदितस्मितासूयाभयक्रुधां हर्षात् हेतोः सङ्करीकरणं किलकिञ्चितं अभिधीयते।५

प्रिय के दर्शन से हर्ष हेतु नायिका के चित्त में युगपत् उदित गर्व, अभिलाष, क्रन्दन, हास्य, असूया भीति एवं रोषनामक सञ्चारि भाव को किलकिञ्चित भाव कहते हैं॥५॥

आर सात भाव आसि सहजे मिलय।
अष्ट भाव सम्मिलने महाभाव हय॥१७०
गर्व्व, अभिलाष, भय, शुष्क, रुदित।
क्रोध, असूया सह आर मन्दस्मित॥१७१
नाना स्वादु अष्टभावे एकत्र मिलन।
याहार आस्वादे हय तृप्त कृष्णमन॥१७२
दधि, खण्ड, घृत, मधु, मरिच, कर्पूर।
एलाच्यादि मिलने यैछे रसाला मधुर॥१७३
एइ भाव युक्त देखि राधास्य-नयन।
सङ्गम हइते सुख पाय कोटिगुण॥१७४

तथाहि उज्ज्वलनीलमणौ विभावप्रकरणे

श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

अन्तःस्मेरतयोज्ज्वला जलकणव्याकीर्णपक्ष्माङ्कु
किञ्चित्पाटलिताञ्चला रसिकतोत्सिक्ता पुरः कुञ्च
रुद्धायाः पथि माधवेन मधुरव्याभुग्नतारोत्तरा
राधायाः किलकिञ्चितस्तवकिनी दृष्टिः श्रियं व
क्रियात्॥

टीका—कान्ताया राधायाः किलकिञ्चितस्तवकिनी दृष्टिः वः युष्माकं श्रियं कल्याणं क्रियात्। कान्ता किम्भूतायाः?—माधवेन पथि मार्गे रुद्धाया दृष्टिः किम्भूता?—अन्तर मनसि स्मेरतया उज्ज्व विकसिता। पुनः किम्भूता?—जलकणव्याकी पक्ष्माङ्कुरा अश्रुवारिविन्दुभिः व्याकीर्णः पक्ष्माङ्कु यस्याः सा। पुनःकिम्भूता?—किञ्चित पाटलिताञ्च पुनः कथम्भूता? रसिकोत्सिक्तारसेन उत्सा शालिनी। पुनः किम्भूता?—पुरः कुञ्चती अ मुदिता भवती। पुनः किम्भूता?—मधु व्याभुग्नतारोत्तरा सुन्दरं कुटिलञ्च यथा स्यात्त तारा उत्तरः ऊद्ध्वंगमनशीलं यस्या सा॥६॥

एक समय कृष्ण दान घाटी में अवस्थित इस समय राधिका उसीरास्ते से यज्ञीय हवि लेकर रही थी, कृष्ण—उनको देखकर शुक्ल ग्रहण से पथ रोध करने से आशु श्रीमती के नयन, अन्त हास्य से विकसित, पक्ष्मराजि अश्रुसे आकी प्रान्तभाग पाटलित एवं रसिकोत्सिक्तरस के द्वा उत्साह शाली अग्रदेश कुञ्चित एवं कुटिल त उत्तारक होकर किलकिञ्चित भाव से दृष्ट हुआ वह नयन तुम्हारे मङ्गल विधान करे॥६॥

तथाहि गोविन्दलीलामृते (६।१८)—

बाष्पव्याकुलितारुणाञ्चलचलन्नेत्रं रसोल्लासितं
हेलोल्लासचलाधरं कुटिलितभ्रूयुग्ममुद्यत्स्मित
कान्तायाः किलकिञ्चिताञ्चितमसौ वीक्ष्याननं सङ्ग
वानन्दं तमवाप कोटिगुणितं योऽभूद्गिरामगोचरः॥

टीका—असौ कृष्णः राधायाः आननं वदनं वीक्ष्य अवलोक्य सङ्गमात् कोटिगुणितं तं आनन्दं अवाप। यः आनन्दः गीर्गोचरः वाग्विषयः न अभूत्। आननं किम्भूतं ?—वाष्पव्याकुलितारुणाञ्चलन्नेत्रं वाष्पेन व्याकुलितः अरुणाञ्चलः तेन चलत् नेत्रं यस्मिन् तत्। पुनः किम्भूतं ?—हेलोल्लासचलाधरं हेलया उल्लासेन चलः चपलः अधरः यस्मिन् तत्। पुनः किम्भूतं ?—कुटिलितभ्रूयुग्मं। पुन कथम्भूतं ?—उद्यत्स्मितं प्रकटितस्मितम् पुनः किम्भूतं ?—किलकिञ्चिताञ्चितम् ॥७॥

श्रीराधिका के वास्पाकुलित अरुणाञ्चल चपल हुआ था, रसोल्लास एवं कामभावसे अधर कम्पित हो रहा है, भ्रूद्वय कुटिल हुए हैं; वदन पद्म में मृदु हास्य प्रकाशित है, एवं किलकिञ्चित भाव हेतु उल्लास सुव्यक्त हुआ है, श्रीकृष्ण इस प्रकार भाव पूर्ण श्रीराधा के वदन दर्शन से जिस प्रकार सुखी हुए थे, वह सुख सङ्गम से कोटि गुण अधिक तो है ही, वाणी का भी अगोचर है ॥७॥

एत शुनि प्रभुर हैल आनन्दित मन।
सुखाविष्ट हैया स्वरूपे कैल आलिङ्गन ॥१७५
विलासादि भावभूषार कहत लक्षण।
येइ भावे राधा हरे गोविन्देर मन ॥१७६
तबे त स्वरूप गोसाञि कहिते लागिल।
शुनि प्रभुभक्तगण महासुख पाइला ॥१७७
राधा बसि थाके किवा वृन्दावने याय।
ताँहा यदि आचम्बिते कृष्ण देखा पाय ॥१७८
देखितेइ नाना भाव हय विलक्षण।
सेइ वैलक्षण्येर नाम विलासभूषण ॥१७९

तथाहि उज्ज्वलनीलमणावनुभावप्रकरणे (६७)—

गतिस्थानासनादीनां मुखनेत्रादिकर्म्मणाम्।
तात्कालिकन्तु वैशिष्ट्यं विलासः प्रियसङ्गजम् ॥८

टीका—गतिस्थानासनादीनां, मुखनेत्रादिकर्म्मणां तात्कालिकं वैशिष्टयं विलासः कथ्यते। वैशिष्ट्यं किम्भूतं ?—प्रियसङ्गजम् ॥८॥

गमन स्थिति उपवेशन प्रभृति का एवं मुख नेत्रादि कर्म्म का तात् कालिक वैशिष्ट्य को विलास कहते हैं, यह प्रियसङ्गम से सञ्जात होता है ॥८॥

लज्जा हर्ष अभिलाष सम्भ्रम वाम्य भय।
एत भाव मिलि राधा चञ्चल करय १८०

तथाहि गोविन्दलीलामृते (९।११)—

पुरः कृष्णालोकात् स्थगितकुटिलास्या गतिरभूत्
तिरश्चीनं कृष्णाम्बरदरवृतं श्रीमुखमपि।
चलत्तारं स्फारं नयनयुगमाभुग्नमिति सा
विलासाख्यस्वालङ्करणवलितासीत् प्रियमुदे ॥९

टीका—पुरः समीपे कृष्णालोकात् श्रीकृष्ण-दर्शनाद्धेतोः अस्याः श्रीमत्याः गतिः तिरश्चीनं यथा स्यात्तथा स्थगितकुटिला अभूत्। यस्यां कृष्णाम्बर-दरवृतं श्रीमुखमपि बभूव। नयनयुगं चलत्तारं, तथा आभुग्नं, इति एवम्प्रकारेण सा गतिः विलासाख्य-स्वालङ्करणवलिता सती प्रियमुदे आसीत् ॥९॥

कृष्ण को सम्मुख में देखकर राधिका की गति स्थिर हो गई, वङ्किम भाव युक्त हो गई, राधाके वदन कमल नील वस्त्र से ईषत् अवगुण्ठित होने पर भी नेत्रद्वय विकसित-चञ्चल एवं कुटिल हुये थे एवं विलास भूषण से अलङ्कृत होकर वह प्रियतम के हर्षोत्पादन करने लगी ॥९॥

कृष्ण आगे राधा यदि रहे दाण्डाइया।
तिन अङ्गभङ्गे रहे भ्रू नाचाइया ॥१८१
मुखे नेत्रे करे नाना भावेर उद्गार।
एइ कान्ताभावेर नाम ललित अलङ्कार।१८२

तथाहि उज्ज्वलनीलमणावनुभावप्रकरणे (७५)—

विन्यासभङ्गिरङ्गानां भ्रूविलासमनोहरा।
सुकुमारा भवेद्यत्र ललितं तदुदीरितम् ॥१०

टीका—यत्र भावे अङ्गानां विन्यासभङ्गिः

सुकुमारा, तथा भ्रूविलासमनोहरा स्यात्, तत् ललितं उदीरितम् ॥१०॥

अङ्ग की विन्यास भङ्गि सुकुमार एवं भ्रूविलास सुन्दर होने से ललित नामक भाव होता है ॥१०॥

ललित भूषित यदि राधा देखे कृष्ण।
दुँहे दोहाँ मिलिबारे हयेन सतृष्ण ॥१८३

तथाहि गोविन्दलीलामृते (९।१४)--

ह्रिया तिर्य्यग्ग्रीवा चरणकटिभङ्गीसुमधुरा
चलच्चिल्लीवल्लीदलितरतिनाथोर्जितधनुः।
प्रियप्रेमोल्लासोल्लसितललिताललिततनुः
प्रियप्रीत्यै सासीदुदितललितालङ्कृतियुता ॥११

टीका—सा श्रीमती राधिका उदित-ललितालङ्कृतियुता सती प्रियप्रीत्यै आसीत्। किम्भूता सा?—ह्रिया तिर्य्यग्ग्रीवा। पुनः किम्भूता? चरणकटिभङ्गीसुमधुरा। पुनः किम्भूता?—चलच्चिल्लीवल्लीदलितरतिनाथोर्जितधनुः। पुनः किम्भूता?— प्रियप्रेमोल्लासोल्लसित-ललिता-लालिततनुः ॥११॥

श्रीराधिका ललित भावालङ्कार से अलङ्कृता होकर प्रिय को प्रीत करती थी, उस समय लज्जा से उनके ग्रीवादेश कुटिल होता, पद एवं कटि की भङ्गी मनोहर होती। भ्रूलता के चापल्य से कामके सतेज धनु भी पराजित हो जाती है, एवं प्रियतम के प्रति प्रेमोल्लास संवर्द्धित होकर ललित भाव से समस्त अङ्ग भावमय हो जाते थे ॥११॥

लोभे कृष्ण आसि करे कञ्चुकाकर्षण।
अन्तरे इच्छा बाहिरे राधा करे निवारण ।१८४
बाहिरे बामता क्रोध भितरे सुख मन।
कुट्टमित नाम एइ भावविभूषण ॥१८५

तथाहि उज्ज्वलनीलमणावनुभावप्रकरणे (७३)--

स्तनाधरादिग्रहणे हृत्-प्रीतावपि सम्भ्रमात्।
बहिः क्रोधो व्यथितवत् प्रोक्तं कुट्टमितंबुधैः ॥१२

टीका—स्तनाधरादिग्रहणे आलिङ्गनादिविषये हृत्प्रीतौ अपि सम्भ्रमात् व्यथितवत् बहिः क्रोधः स्यात्, ईदृशं भावलक्षणं कुट्टमितं बुधैः रसविद्भिः प्रोक्तम् ॥१२॥

प्रिय के द्वारा अङ्ग स्पर्श होने पर नायिका मन में सन्तोष होने पर भी लज्जा हेतु व्यथित बाहर रोष प्रकट करती है, इस अवस्था को विज्ञ व्यक्ति गण कुट्टमित कहते हैं ॥१२॥

कृष्णवाञ्छा पूर्ण हय करे पाणिरोध।
अन्तरे आनन्द राधा बाहिरे वाम्य क्रोध ॥१८६
व्यथा पाइया करे येन शुष्क रोदन।
ईषत् हासिया करे कृष्णके भर्त्सन ॥१८७

तथाहि गोस्वामिपादोक्त श्लोकः—

पाणिरोधमविरोधितवाञ्छं
भर्त्सनाश्च मधुरस्मितगर्भाः।
माधवस्य कुरुते करभोरु-
र्हारि शुष्करुदितञ्च मुखेऽपि ॥१३

टीका—करभोरुः श्रीमती राधिका माधवस्य पाणिरोधं कुरुते। पाणिरोधं किम्भूतं?—अविरोधित-वाञ्छं। सा राधा कृष्णाय मधुरस्मितगर्भाः भर्त्सनाश्च कुरुते। अपि च मुखेऽपि बहिर्भागेऽपि न तु अन्तरे, हारि शुष्करुदितञ्च कुरुते ॥१३॥

श्रीकृष्ण श्रीमती के अङ्ग स्पर्श करने पर करभोरु राधिका अनिच्छा से भी उसका प्रतिरोध करने लगी, एवं मधुर मृदु हास्य के सहित भर्त्सना भी करने लगी, तथा शुष्क रोदन करके माधव को आनन्दित करने लगी ॥१३॥

एइमत आर सब भावविभूषण।
याहाते भूषित राधा हरे कृष्णमन ॥१८८
अनन्त कृष्णेर लीला ना याय वर्णन।
आपने वर्णेन यदि सहस्रवदन ॥१८९
श्रीनिवास हासि कहे शुन दामोदर।

आमार लक्ष्मीर देख सम्पद् विस्तर ॥१९०
वृन्दावन-सम्पद् केवल फुल किशलय ।
गिरिधातु, शिखिपिञ्छ, गुञ्जाफलमय ॥१९१
वृन्दावन देखिबारे गेला जगन्नाथ ।
शुनि लक्ष्मीदेवी मने हैल आसोयाथ ॥१९२
एत सम्पत्ति छाड़ि केन गेला वृन्दावन ।
तारे हास्य करिते लक्ष्मी करिला साजन ॥१९३
तोमार ठाकुर देख एत सम्पत्ति छाड़ि ।
एत फुल-फल-लोभे गेला पुष्पबाड़ी ॥१९४
एइ कर्म्म करे काँहा विदग्धशिरोमणि ।
"लक्ष्मीर अग्रेते निज प्रभु देह आनि ॥" १९५
एत बलि महालक्ष्मीर सब दासीगण ।
कटिवस्त्रे बान्धि आने प्रभुर परिजन ॥१९६
लक्ष्मीर चरणे आनि कराय प्रणति ।
धनदण्ड लय आर कराय विनति ॥१९७
रथेर उपरे करे दण्डेर ताड़न ।
चोरप्राय करे जगन्नाथेर भृत्यगण ॥१९८
सब भृत्यगण कहे करि योड़ हात ।
कालि आनि तोमार आगे दिब जगन्नाथ ॥१९९
तबे लक्ष्मी शान्त हैया यान निजघर ।
आमार लक्ष्मीर सम्पद् वाक्य-अगोचर ॥२००
दुग्ध आउटे दधि मथे तोमार गोपीगणे ।
आमार ठाकुराणी वैसे रत्नसिंहासने ॥२०१
नारद प्रकृति श्रीवास करे परिहास ।
शुनि हासे महाप्रभुर यत निज दास ॥२०२
प्रभु कहे, श्रीवास तोमार नारदस्वभाव ।
ऐश्वर्य्य तोमारे भाय ईश्वरप्रभाव ॥२०३
दामोदर स्वरूप इँह शुद्ध व्रजवासी ।
ऐश्वर्य्य ना जाने रहे शुद्धप्रेमे भासि ॥२०४
स्वरूप कहेन, श्रीवास शुन सावधाने ।
वृन्दावन-सम्पद् तोमार नाहि पड़े मने ॥२०५
वृन्दावने साहजिक ये सम्पद् सिन्धु ।
द्वारका-वैकुण्ठ-सम्पद् तार एक बिन्दु ॥२०६
परमपुरुषोत्तम स्वयं भगवान् ।
कृष्ण याँहा धनी ताहा वृन्दावन-नाम ॥२०७
चिन्तामणिमय भूमि, चिन्तामणि भवन ।
चिन्तामणिगण दासी चरण भूषण ॥२०८
कल्पवृक्षलता याँहा साहजिक वन ।
पुष्पफल विने केह ना मागे अन्य धन ॥२०९
अनन्त कामधेनु याँहा चरे वने वने ।
दुग्धमात्र लये केह ना मागे अन्य धने ॥२१०
सहजे लोकेर कथा याँहा दिव्य गीत ।
सहज गमन करे येन नृत्य प्रतीत ॥२११
सर्व्वत्र जल याँहा अमृतसमान ।
चिदानन्दज्योति स्वादु याँहा मूर्त्तिमान् ।२१२
लक्ष्मी जिनि गुण याँहा लक्ष्मीर समाज ।
कृष्णवंशी करे याँहा प्रियसखी-काय ॥२१३

तथाहि ब्रह्मसंहितायां (५।६२)—

श्रियः कान्ताः कान्तः परमपुरुषः कल्पतरवो
द्रुमा भूमिश्चिन्तामणिगणमयी तोयममृतम् ।
कथा गानं नाट्यं गमनमपि वंशी प्रियसखी
चिदानन्दज्योतिः परमपि तदास्वाद्यमपि च ॥१४॥

टीका—यत्र कान्ताः श्रियः लक्ष्मीसमूहाः सन्ति, कान्तः परमपुरुषः कृष्णः, द्रुमाः पादपाः कल्पतरवः सन्ति, भूमिः चिन्तामणिगणमयी, तोयं वारि अमृतं, कथा गानं गमनमपि नाट्यं, यत्र वंशी भगवद् वाणी प्रियसखी इव उपदिशति । चिदानन्दज्योतिः ब्रह्मानन्द एव परमं श्रेष्ठं अपि तत् आस्वाद्यम् ॥१४

लक्ष्मी वृन्द ही वृन्दावनस्थ कान्ता, पुरुषोत्तम हरि ही उन सब के नायक हैं, वृक्ष समूह—कल्पवृक्ष, चिन्तामणिमय भूमि है, तत्रत्य सलिल अमृत है, कथा ही गान है, एवं गति ही नृत्य है, वहाँ भगवान् की वंशी सखी के समान उपदेश दात्री है, एवं परम चिदानन्द ज्योति हि आस्वादनीय है ॥१४॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ

विल्वमङ्गलवाक्यम्—

चिन्तामणिश्चरणभूषणमङ्गनानां
शृङ्गारपुष्पतरवस्तरवः सुराणाम्।
वृन्दावनं व्रजधनं ननु कामधेनु-
वृन्दानि चेति सुखसिन्धुरहो विभूतिः ॥१५

टीका—वृन्दावने अङ्गनानां व्रजवासिनीनां चरण भूषणं स्यात्। शृङ्गारपुष्पतरवः सुराणां तरवः, ननु वृन्दावनं व्रजधनं, कामधेनुवृन्दानि भवन्ति इत्यर्थः। इति एतैरुपादानैः अहो वृन्दावनस्य सुखसिन्धुः विभूतिश्च अनुभूयते ॥१५॥

चिन्तामणि ही वृन्दावनस्थ रमणीवृन्द के चरणालङ्कार है, क्रीड़ानुकूल कुसुम वृक्ष कल्पतरु है, एवं व्रज धन कामधेनु समूह हैं, इसके द्वारा वृन्दावन के सुख सागर एवं विभूति आश्चर्य्य रूप से प्रतीयमान होती रहती है ॥१५॥

शुनि प्रेमावेशे नृत्य करे श्रीनिवास।
कक्षतालि बाजाय, करे अट्ट अट्ट हास ॥२१४
राधार शुद्ध रस प्रभु आवेशे शुनिल।
सेइ रसावेशे प्रभु नृत्य आरम्भिल ॥२१५
रसावेशे प्रभुर नृत्य स्वरूपेर गान।
बल बल बलि प्रभु पाते निज कान ॥२१६
व्रजरसगीत शुनि प्रेम उथलिल।
पुरुषोत्तम ग्राम प्रभु प्रेमे भासाइल ॥२१७
लक्ष्मीदेवी यथाकाले गेला निज घर।
प्रभु नृत्य करे, हैल तृतीय प्रहर ॥२१८

चारि सम्प्रदाय गान करि शान्त हैल।
महाप्रभुर प्रेमावेश द्विगुण बाड़िल ॥२१९
राधा-प्रेमावेशे प्रभु हैला सेइ मूर्त्ति।
नित्यानन्द दूरे देखि करेन प्रणति ॥२२०
नित्यानन्द जानिया प्रभुर भावावेश।
निकट ना आइसे, रहे किछु दूरदेश ॥२२१
नित्यानन्द बिना प्रभुके धरे कोन् जन।
प्रभुर आवेश ना याय, ना रहे कीर्त्तन ॥२२२
भङ्गी करि स्वरूप सबार श्रम जानाइल।
भक्तगणेर श्रम देखि प्रभुर वाह्य हैल ॥२२३
सब भक्त लञा प्रभु गेला पुष्पोद्याने।
विश्राम करिया कैल माध्याह्निक स्नाने ॥२२४
जगन्नाथेर प्रसाद आइल बहु उपहार।
लक्ष्मीर प्रसाद आइल विविधप्रकार ॥२२५
सबा लञा नानारङ्गे करिल भोजन।
सन्ध्या स्नान करि कैल जगन्नाथदर्शन ॥२२६
जगन्नाथ देखि कैल नर्त्तन कीर्त्तन।
नरेन्द्रे जलक्रीड़ा करे लैञा भक्तगण ॥२२७
उद्याने आसिया करेन वन्य भोजन।
एइमत क्रीड़ा प्रभु कैल अष्ट दिन ॥२२८
आर दिने जगन्नाथेर भितर-विजय।
रथे चड़ि जगन्नाथ चले निजालय ॥२२९
पूर्व्ववत् कैल प्रभु लैञा भक्तगण।
परम आनन्दे करे कीर्त्तन नर्त्तन ॥२३०
जगन्नाथेर पुनः पाण्डुविजय आइल।
एक कटि पट्टडोरी ताँहा टुटि गेल ॥२३१
पाण्डुविजयेर तूलि फाटि फुटि याय।
जगन्नाथेर भरे तूला उड़िञा पलाय ॥२३२

कुलीनग्रामी रामानन्द, सत्यराज खान ।
तारे आज्ञा दिल प्रभु करिया सम्मान ॥२३३
एइ पट्टडोरीर तुमि हओ यजमान ।
प्रतिवर्ष आनिबे डोरी करिया निर्म्माण ।२३४
एत बलि दिला तारे छिँड़ा पट्टडोरी ।
इहा देखि करिबे डोरी अति दृढ़ करि ॥२३५
एइ पट्टडोरीते हय शेषेर अधिष्ठान ।
दशमूर्त्ति धरि येँह सेवे भगवान् ॥२३६
भाग्यवान् सत्यराज, वसु रामानन्द ।
सेवा आज्ञा पाञा हैल परम आनन्द ॥२३७
प्रतिवर्ष गुण्डिचाते सब भक्तसङ्गे ।
पट्टडोरी लञा आसे अति बड़ रङ्गे ॥२३८
तबे जगन्नाथ आसि बसिला सिंहासने ।
महाप्रभु घर आइला लैया भक्तगणे ॥२३९
एइमत भक्तगणे यात्रा देखाइल ।
भक्तगण लैया वृन्दावन-केलि कैल ॥२४०
चैतन्यप्रभुर लीला अनन्त अपार ।
सहस्रवदन यार नाहि पाय पार ॥२४१
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे-यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२४२

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे
हेरापञ्चमीयात्रादर्शनं नाम चतुर्द्दशः
परिच्छेदः ॥१४॥





❀ पञ्चदश परिच्छेद ❀

सार्व्वभौमगृहे भुञ्जन् स्वनिन्दकममोघकम् ।
अङ्गीकुर्व्वन् स्फुटं चक्रे गौरः स्वां भक्तवश्यताम् ।१

टीका—गौरः सार्व्वभौमगृहे भुञ्जन् स्वनिन्दकं अमघोकं अमोघनामानं द्विजं अङ्गीकुर्व्वन् प्रसादं कृत्वा, स्वां भक्तवश्यतां स्फुटं यथा स्यात् तथा चक्रे ।१

श्रीश्रीगौराङ्ग महाप्रभु वासुदेव सार्वभौम के गृह में भोजन करके श्रीमन्महाप्रभु निन्दक अमोघ नामक विप्र को सार्व्वभौम के सम्बन्धित होने के कारण अङ्गीकार पूर्वक स्वीय भक्तवश्यता का परिचय प्रदान किये थे ।।१।।

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
जय श्रीचैतन्यचरित श्रोता भक्तगण ।
चैतन्यचरितामृत यार प्राणधन ॥२
एइमत महाप्रभु भक्तगण सङ्गे ।
नीलाचले रहि करे नृत्य गीत रङ्गे ॥३
प्रथमवत्सरे जगन्नाथ दरशन ।
नृत्य गीत दण्डवत् प्रणाम स्तवन ॥४
उपल भोग लागिले करे बाहिरे विजय ।
हरिदासे मिलि आइसे आपन निलय ॥५
घरे आसि करे प्रभु नामसङ्कीर्त्तन ।
अद्वैत आसिया करे प्रभुर पूजन ॥६
सुगन्ध सलिले करे पाद्य आचमन ।
सर्व्वाङ्गे लेपन करे सुगन्धि चन्दन ॥७
गले माला देय माथे तुलसी मञ्चरी ।
योड़हस्ते स्तुति करे पदे नमस्करि ॥८

पूजापात्रे पुष्प तुलसी शेष ये आछिल ।
सेइ सब लञा प्रभु आचार्य्ये पूजिल ॥९

तथाहि —

राधे कृष्ण रमे विष्णो
सीते राम शिवे शिव ।
योऽसि सोऽसि नमो नित्यं
योऽसि सोऽसि नमोऽस्तु ते ॥२॥

टीका—हे राधे ! हे कृष्ण ! हे रमे ! हे विष्णो ! हे सीते ! हे राम ! हे शिवे ! हे शिव । यः असि, सः असि, नित्यं नमः, यः असि, सः असि, ते तुभ्यं नमः अस्तु ॥२॥

हे राधे ! हे कृष्ण ! हे रमे ! हे विष्णो ! हे सीते ! हे राम ! हे शिवे ! हे शिव ! तुम जो भी हो, सो होओ तुम को नमस्कार करता हूँ ॥२॥

योऽसि सोऽसि नमोऽस्तु ते एइ मन्त्र पड़े ।
मुखवाद्य करि प्रभु हासे आचार्य्येरे ॥१०
एइमत अन्योन्ये करे नमस्कार ।
प्रभुके निमन्त्रण आचार्य्य करे बार बार ॥११
आचार्य्येर निमन्त्रण आश्चर्य्य कथन ।
विस्तारि वर्णियाछेन दास वृन्दावन ॥१२
पुनरुक्ति भये ताहा ना कैल वर्णन ।
आर भक्तगण प्रभुके करे निमन्त्रण ॥१३
एकेक दिन एकेक भक्तगृहे महोत्सव ।
प्रभु सङ्गे ताँहा भोजन करे भक्त सब ॥१४
चारि मास रहिला सब महाप्रभु सङ्गे ।
जगन्नाथेर नाना यात्रा देखे महारङ्गे ॥१५
एइमत नानारङ्गे चातुर्म्मास्य गेला ।
कृष्णजन्मयात्राय प्रभु गोपवेश हैला ॥१६
कृष्णजन्मयात्रादिने नन्दमहोत्सव ।
गोपवेश हैला प्रभु लैया भक्त सब ॥१७

दधिदुग्धभार सबे निज कान्धे करि ।
महोत्सवस्थाने आइला बलि हरि हरि ॥१
कानाञि खुँटिया आछे नन्दवेश धरि ।
जगन्नाथ माहिती हैयाछे व्रजेश्वरी ॥१
आपने प्रतापरुद्र आर मिश्रकाशी ।
सार्व्वभौम आर पड़िछा पात्र तुलसी ॥२
जिहा सबा लञा प्रभु करे नृत्य रङ्ग ।
दधि दुग्ध हरिद्राजले भरे सबार अङ्ग ॥२
अद्वैत कहे, सत्य कहि ना करिह कोप ।
लगुड़ फिराइते पार तबे जानि गोप ॥२
तबे लगुड़ लइया प्रभु फिराइते लागिला ।
बार बार आकाशे तुलि लुफिया धरिला ॥२
शिरेर उपरे पृष्ठे सम्मुखे दुइ पाशे ।
पादमध्ये फिराय लगुड़ देखि लोक हासे ॥२
अलातचक्रेर प्राय लगुड़ फिराय ।
देखि सब लोक चित्ते चमत्कार पाय ॥२
एइमत नित्यानन्द फिराय लगुड़ ।
के जानिबे ताँहा दोँहार गोपभाव गूढ़ ॥२
प्रतापरुद्रेर आज्ञाय पड़िछा तुलसी ।
जगन्नाथेर प्रसाद एक वस्त्र लञा आसि ॥२
बहुमूल्य वस्त्र प्रभुर मस्तके बान्धिल ।
आचार्य्यादि प्रभुर सब गणे पराइल ॥२
कानाइ खुँटिया जगन्नाथ दुइ जन ।
आवेशे विलाइला घरे छिल यत धन ॥२
देखि महाप्रभु बड़ सन्तोष पाइल ।
पितामाता ज्ञाने दुँहाके नमस्कार कैल ॥३
परम आवेशे प्रभु आइला निज घर ।
एइमत लीला करे गौराङ्ग सुन्दर ॥३

विजयादशमी लङ्काविजयेर दिने ।
वानरसैन्य हैल प्रभु लैया भक्तगणे ॥३२
हनूमानावेशे प्रभु वृक्षशाखा लैञा ।
लङ्का गड़े चड़ि फेरे गड़ भाङ्गिया ॥३३
काँहा रे रावणा ! प्रभु कहे क्रोधावेशे ।
जगन्माता हरे पापी मारिमु सवंशे ॥३४
गोसाञिर आवेश देखि लोके चमत्कार ।
सर्व्वलोके जय जय बले बार बार ॥३५
एइमत रासयात्रा आर दीपावली ।
उत्थानद्वादशीयात्रा देखिल सकलि ॥३६
एक दिन महाप्रभु नित्यानन्द लैञा ।
दुइ भाइ युक्ति कैल निभृते बसिञा ॥३७
किवा युक्ति कैल दुँहे केह नाहि जाने ।
फले अनुमान पाछे कैल भक्तगणे ॥३८
तबे महाप्रभु सब भक्त बोलाइल ।
गौड़देश याह सबे विदाय करिल ॥३९
सबारे कहिल प्रभु, प्रत्यब्द आसिया ।
गुण्डिचा देखिया यावे आमारे मिलिया ॥४०
आचार्य्येरे आज्ञा दिल करिया सम्मान ।
आचण्डालादि करिह कृष्णभक्ति दान ॥४१
नित्यानन्दे आज्ञा दिल याह गौड़देशे ।
अनर्गल प्रेमभक्ति करिह प्रकाशे ॥४२
रामदास गदाधर आदि कतजने ।
तोमार सहाय लागि दिल तोमा सने ॥४३
मध्ये मध्ये आमि तोमार निकटे याइब ।
अलक्षिते रहि तोमार नृत्य देखिब ॥४४
श्रीवासपण्डिते प्रभु करि आलिङ्गन ।
कण्ठे धरि कहे तारे मधुर वचन ॥४५
तोमार गृहे कीर्त्तने आमि नित्य नाचिब ।
तुमि देखा पाबे आर केह ना देखिब ॥४६
एइ वस्त्र माताके दिह ए सब प्रसाद ।
दण्डवत् करि क्षमाइह अपराध ॥४७
ताँर सेवा छाड़ि आमि करियाछि सन्न्यास ।
धर्म्म नहे कैल आमि निज धर्म्मनाश ॥४८
ताँर प्रेमवश आमि, ताँर सेवा धर्म्म ।
ताँहा छाड़ि करियाछि वातुलेर कर्म्म ॥४९
वातुल बालकेर माता नाहि लय दोष ।
एत जानि माता मारे मानिबे सन्तोष ॥५०
कि कार्य्य सन्न्यासे मोर प्रेम निज धन ।
ये काले सन्न्यास कैल छन्न हैल मन ॥५१
नीलाचले आछि मुञि ताँहार आज्ञाते ।
मध्ये मध्ये याइ ताँर चरण देखिते ॥५२
नित्य याइ देखोँ मुञि ताँहार चरणे ।
स्फूर्त्ति ज्ञाने तिँहो ताहा सत्य नाहि माने ।५३
एक दिन शाल्यन्न व्यञ्जन पाँच सात ।
शाक मोचाघण्ट मृष्ट पटोल निम्बपात ॥५४
लेबु आदाखण्ड दधि दुग्ध खण्डसार ।
शालग्रामे समर्पिलेन बहु उपहार ॥५५
प्रसाद लइया कोले करेन क्रन्दन ।
निमाञिर प्रिय मोर ए सब व्यञ्जन ॥५६
निमाइ नाहिक घरे के करे भोजन ।
मोर ध्याने अश्रुजले भरिल नयन ॥५७
शीघ्र याइ मुञि सब करिनु भक्षण ।
शून्य पात्र देखि अश्रु करिला मार्ज्जन ॥५८
के अन्न व्यञ्जन खाइल शून्य केने पात ।
हेन बुझि बालगोपाल खाइलेन भात ॥५९

किवा मोर मन कथाय भ्रम हैया गेल ।
किवा कोन जन्तु आसि सकल खाइल ॥६०
किवा आमि भ्रमे पाते अन्न ना बाड़िल ।
एत चिन्ति पाकपात्र याइया देखिल ॥६१
अन्नव्यञ्जनपूर्ण देखि सकल भाजन ।
देखिया संशय किछु चमत्कार मन ॥६२
ईशान द्वाराय पुन स्थान लेपाइल ।
पुनरपि गोपालेरे अन्न समर्पिल ॥६३
एइमत यबे करे उत्तम रन्धन ।
मोरे खाओयाइते करे उत्कण्ठा क्रन्दन ॥६४
ताँर प्रेमे आसि मोरे कराय भोजने ।
अन्तरे मानये सुख वाह्ये नाहि माने ॥६५
एइ विजया-दशमीते हैल एइ रीति ।
ताँहाके पुछिञा ताँर कराइह प्रतीति ॥६६
एतेक कहिते प्रभु विह्वल हइला ।
लोक विदाय करिते प्रभु धैर्य्य करिला ।६७
राघवपण्डिते कहे वचन सरस ।
तोमार निष्ठाप्रेमे आमि हइ तोमार वश ।६८
इँहार कृष्णसेबार कथा शुन सर्व्वज ।
परमपवित्र सेबा अति सर्व्वोत्तम ॥६९
आर द्रव्य बहु शुन नारिकेलेर कथा ।
पाँचगण्डा करि नारिकेल विकाय यथा तथा ७०
बाड़ीते कत शत वृक्ष लक्ष लक्ष फल ।
तथापि शुनेन यथा मिष्ट नारिकेल ॥७१
एकेक फलेर मूल्य दिञा चारि चारि पण ।
दश क्रोश हैते आनाय करिया यतन ॥७२
प्रति दिन पाँच छय फल छोलाइया ।
सुशीतल करिते राखे छले डुवाइया ॥७३

भोगेर समये पुन छोलि संस्करि ।
कृष्णे समर्पण करे मुखे छिद्र करि ॥७४
कृष्ण सेइ नारिकेलजल पान करि ।
कभु शून्यफल राखेन, कभु जल भरि ॥७५
जलशून्य फल देखि पण्डित हरषित ।
फल भाङ्गि शस्य कैल सतपात्रपूरित ॥७६
शस्य समर्पिया करे बाहिरे धेयान ।
शस्य खाञा कृष्ण करे शून्य भाजन ॥७७
कभु शस्य खान पुन पात्र भरे शाँसे ।
श्रद्धा बाड़े पण्डितेर, प्रेमसिन्धु भासे ॥७८
एक दिन दश फल संस्कार करिया ।
भोग लागाइते सेवक आइल लइया ॥७९
अवसर नाहि हय विलम्ब हइल ।
फलपात्र हाते सेवक द्वारेते रहिल ॥८०
द्वारेर उपर भिते तेँह हात दिल ।
सेइ हाते फल छुँइला पण्डित देखिल ॥८१
पण्डित कहे, द्वारे लोक करे यातायाते ।
तार पदधूलि उड़ि लागे उपर भिते ॥८२
सेइ भिते हात दिया फल परशिला ।
कृष्णयोग्य नहे फल अपवित्र हैला ॥८३
एत बलि फल फेले प्राचीर लङ्घिया ।
ऐछे पवित्र प्रेम जगत जिनिया ॥८४
तबे आर नारिकेल संस्कार कराइल ।
परम पवित्र करि भोग लागाइल ॥८५
एइमत कला आम्र नारिकेल काँठाल ।
याँहा याँहा दूर ग्रामे शुने आछे भाल ॥८६
बहु मूल्य दिया आने करिया यतन ।
पवित्र संस्कार करि करे निवेदन ॥८७

एइमत व्यञ्जनेर शाक मूल फल ।
एइमत चिंड़ा हुड़ुम सन्देश सकल ॥८८
एइमत पिठा पाना क्षीर उदन ।
परम पवित्र आर करे सर्व्वोत्तम ॥८९
काशन्दि आचार आदि अनेक प्रकार ।
गन्ध वस्त्र अलङ्कार सब दिव्य सार ॥९०
एइमत प्रेमे सबा करे अनुपम ।
याहा देखि सब लोकेर जुड़ाय नयन ॥९१
एत बलि राघवेरे कैल आलिङ्गन ।
एइमत सम्मानिल सब भक्तगण ॥९२
शिवानन्द सेने कहे करिया सम्मान ।
वासुदेव दत्तेर तुमि करिह समाधान ॥९३
परम उदार इँहो ये दिने ये आइसे ।
सेइ दिने व्यय करे नाहि राखे शेषे ॥९४
गृहस्थ हयेन इँहो चाहिये सञ्चय ।
सञ्चय ना कैले कुटुम्बभरण ना हय ॥९५
इँहार घरेर आय व्यय सब तोमार स्थाने ।
सरखेल हैञा तुमि करिह समाधाने ॥९६
प्रतिवर्ष आमार सब भक्तगण लैञा ।
गुण्डिचाय आसिबे सबाय पालन करिञा ।९७
कुलीनग्रामीरे कहे सम्मान करिया ।
प्रत्यब्द आसिबे यात्राय पट्टडोरी लैया ॥९८
गुणराजखान् कैला श्रीकृष्णविजय ।
ताँहा एकवाक्य तार आछे प्रेममय ॥९९
नन्देर नन्दन कृष्ण मोर प्राणनाथ ।
एइ वाक्ये विकाइनु तार वंशेर हात ॥१००
तोमार का कथा तोमार ग्रामेर कुक्कुर ।
सेइ मोर प्रिय अन्य जन रहु दूर ॥१०१
तबे रामानन्द आर सत्यराज खान् ।
प्रभुर चरणे किछु कैल निवेदन ॥१०२
गृहस्थ विषयी आमि कि मोर साधने ।
श्रीमुखे आज्ञा कर प्रभु निवेदि चरणे ।१०३
प्रभु कहे, कृष्णसेवा, वैष्णवसेवन ।
निरन्तर कर कृष्णनामसङ्कीर्त्तन ॥१०४
सत्यराज कहे, वैष्णव चिनिव केमने ।
के वैष्णव कह तार सामान्य लक्षणे ॥१०५
प्रभु कहे, यार मुखे शुनि एकबार ।
कृष्णनाम, पूज्य सेइ श्रेष्ठ सबाकार ॥१०६
एक कृष्ण नामे करे सर्व्वपाप क्षय ।
नवविध भक्ति पूर्ण नाम हैते हय ॥१०७
दीक्षा पुरश्चर्य्याविधि अपेक्षा ना करे ।
जिह्वास्पर्शे आचण्डाले सबारे उद्धारे ॥१०८
आनुषङ्गफले करे संसारेर क्षय ।
चित्त आकर्षिये करे कृष्णप्रेमोदय ॥१०९

तथाहि पद्यावल्यां श्रीलक्ष्मीधरकृत श्लोकः—

आकृष्टिः कृतचेतसां सुमनसामुच्चाटनं चांहसा-
माचाण्डालममुकलोकसुलभो वश्यश्च मुक्तिश्रियः ।
नो दीक्षां न च सत्क्रियां न च पुरश्चर्य्यां मनागीक्षते
मन्त्रोऽयं रसनास्पृगेव फलति श्रीकृष्णनामात्मकः ।३

टीका—अयं श्रीकृष्णनामात्मकः कृष्णनामसमन्वितः मन्त्रः रसनास्पृक् एव जिह्वास्पर्शमात्रेणैव फलति । अयं मन्त्रः दीक्षां, तथा सत्क्रियां, तथा पुरश्चर्य्यां, नो न ईक्षते अपेक्षते । मन्त्रः किम्भूतः ?—कृतचेतसां सुमनसां साधूनां आकृष्टिः, च पुनः अंहसां उच्चाटनम् । पुनः किम्भूतः ?--आचाण्डालं यथा तथा अमुकलोक-सुलभः । पुनः कीदृशः ?—मुक्तिश्रियः मुक्तिरूप-कल्याणस्य वश्यः ।।३।।

श्रीकृष्ण नामात्मक मन्त्र, जिह्वा स्पर्श मात्र से ही फल प्रद है, उस में दीक्षा, सत् क्रिया, साधु सेवा,

एवं पुरश्चरण की अपेक्षा नहीं है। इस से सुमना: व्यक्ति वृन्द के मन आकृष्ट होता है, पातक विनष्ट होता है, यह आचाण्डाल समस्त लोकों के पक्ष में सुलभ है, एवं इससे मुक्ति भी वशीभूत होती है ॥३॥

अतएव यार मुखे एक कृष्ण नाम।
सेइ वैष्णव करि तार परम सम्मान ॥११०
खण्डेर मुकुन्ददास, श्रीरघुनन्दन।
नरहरिदास मुख्य एइ तिन जन ॥१११
मुकुन्ददासेरे पुछे श्रीशचीनन्दन।
तुमि पिता पुत्र तोमार श्रीरघुनन्दन ॥११२
किवा रघुनन्दन पिता तुमि ताहार तनय ?
निश्चय करिया कह याउक संशय ॥११३
मुकुन्द कहे, रघुनन्दन मोर पिता हय।
आमि तार पुत्र एइ आमार निश्चय ॥११४
आमा सबार कृष्णभक्ति रघुनन्दन हैते।
अतएव रघु पिता आमार निश्चिते ॥११५
शुनि हर्षे कहे, प्रभु, कहिले निश्चय।
याहा हैते कृष्णभक्ति सेइ गुरु हय ॥११६
भक्तेर महिमा प्रभु कहिते पाय सुख।
भक्तेर महिमा कहिते हय पञ्चमुख ॥११७
भक्तगणे कहे शुन मुकुन्देर प्रेम।
निगूढ़ निर्म्मल प्रेम येन दग्ध हेम ॥११८
वाह्ये राजवैद्य इँह करे राजसेबा।
अन्तरे कृष्णेर प्रेम इँहार जानिवेक केवा।११९
एक दिन म्लेच्छराजार उच्च टुङ्गिते।
चिकित्सार वात कहे ताँहार अग्रेते ॥१२०
हेन काले एक मयूरपुच्छेर आड़ानि।
राजार शिरोपरि धरे एक भृत्य आनि ॥१२१
मयूरपुच्छ देखि मुकुन्द प्रेमाविष्ट हैला।
अति उच्च टुङ्गि हैते भूमिते पड़िला ॥१२२
राजार ज्ञान राजवैद्येर हइल मरण।
आपने नामिया राजा कराइल चेतन ॥१२३
राजा कहे, व्यथा तुमि पाइले कोन् ठाञि।
मुकुन्द कहे अतिबड़ व्यथा नाहि पाइ ॥१२४
राजा कहे, मुकुन्द तुमि पड़िला कि लागि।
मुकुन्द कहे, मोर एक व्याधि आछे मृगी।१२५
महाविदग्ध राजा सेइ सब बात जाने।
मुकुन्देरे हैल तार महासिद्ध ज्ञाने ॥१२६
रघुनन्दन-सेबा करे कृष्णेर मन्दिरे।
द्वारे पुष्करिणी तार बान्धाघाट तीरे ॥१२७
कदम्बेर वृक्ष एक फुटे बारमासे।
नित्य दुइ पुष्प हय कृष्ण अवतंसे ॥१२८
मुकुन्देरे कहे पुन मधुर वचन।
तोमार ये कार्य्य धर्म्मे धन उपार्ज्जन ॥१२९
रघुनन्दनेर कार्य्य श्रीकृष्ण सेवन।
कृष्ण सेबा विना इँहार अन्यत्र नाहि मन ॥१३०
नरहरि रह आमार भक्तगण सङ्गे।
एइ तिन कार्य्य सदा कर तिन जने ॥१३१
सार्व्वभौम, विद्यावाचस्पति दुइ भाइ।
दुइ जने कृपा करि कहेन गोसाञि ॥१३२
दारु-जल-रूपे कृष्ण प्रकट सम्प्रति।
दरशने स्नाने करे जीवेर मुकति ॥१३३
दारु-ब्रह्मरूपे साक्षात् श्रीपुरुषोत्तम।
भागीरथी साक्षात् हन जलब्रह्मसम ॥१३४
सार्व्वभौम कर दारुब्रह्म आराधन।
वाचस्पति कर जलब्रह्मेर सेबन ॥१३५

मुरारि गुप्तेरे गौर करि आलिङ्गन ।
तार भक्तिनिष्ठा कहे, शुन भक्तगण ॥१३६
पूर्व्वे आमि इँहारे लोभाइल बार बार ।
परम मधुर गुप्त व्रजेन्द्रकुमार ॥१३७
स्वयं भगवान् सर्व्व-अंशी सर्व्वाश्रय ।
विशुद्ध निर्म्मल प्रेम सर्व्वरसमय ॥१३८
विदग्ध चतुर धीर रसिकशेखर ।
सकल सद्गुणवृन्द रत्न-रत्नाकर ॥१३६
मधुर चरित्र कृष्णेर मधुर विलास ।
चातुर्य्य वैदग्ध्ये करे येँह लीला रास ॥१४०
सेइ कृष्ण भज तुमि हओ कृष्णाश्रय ।
कृष्ण विना उपासना मने नाहि लय ॥१४१
एइमत बार बार शुनिया वचन ।
आमार गौरवे किछु फिरि गेल मन ॥१४२
आमारे कहेन आमि तोमार किङ्कर ।
तोमार आज्ञाकारी आमि नहि स्वतन्तर ॥१४३
एत बलि घर गेला चिन्ते रात्रिकाले ।
रघुनाथत्याग चिन्ति हइला विकले ॥१४४
केमने छाड़िब रघुनाथेर चरण ।
आजि रात्रे राम मोर कराह मरण ॥१४५
एइमत सर्व्वरात्रि करेन क्रन्दन ।
मने स्वास्थ्य नाहि रात्रि कैल जागरण ।१४६
प्रातः काले आसि मोर धरिया चरण ।
कान्दिते कान्दिते किछु करे निवेदन ॥१४७
रघुनाथ-पाये मुञि वेचियाछि माथा ।
छाड़िते ना पारि राम मने पाइ व्यथा ॥१४८
श्रीरघुनाथचरण छाड़न ना याय ।
तोमार आज्ञाभङ्ग हय कि करि उपाय ॥१४६

ताते मोरे एइ कृपा कर दयामय ।
तोमार आगे मृत्यु हउक याउक संशय ॥१५०
एत शुनि आमि मने बड़ सुख पाइल ।
इँहारे उठाइया तबे आलिङ्गन दिल ॥१५१
साधु साधु गुप्त तोमार सुदृढ़ भजन ।
आमार वचने तोमार ना टलिल मन ॥१५२
एइमत सेवकेर प्रीति चाहि प्रभु-प्राय ।
प्रभु छाड़ाइले पद छाड़ान नाहि याय ॥१५३
तोमार भावनिष्ठा जानिबार तरे ।
तोमारे आग्रह आमि कैनु बारे बारे ॥१५४
साक्षात् हनूमान् तुमि श्रीरामकिङ्कर ।
तुमि केन छाड़िबे ताँर चरण-कमल ॥१५५
सेइ मुरारि गुप्त एइ मोर प्राणसम ।
इँहार दैन्य शुनि देखि फाटे मोर मन ॥१५६
तबे वासुदेवे प्रभु करि आलिङ्गन ।
ताँर गुण कहे हैया सहस्रबदन ॥१५७
निजगुण शुनि वासुदेव लज्जा पाञा ।
निवेदन करे प्रभुर चरणे धरिञा ॥१५८
जगत् तारिते प्रभु तोमार अवतार ।
मोर निवेदन एक कर अङ्गीकार ॥१५६
करिते समर्थ तुमि महादयामय ।
तुमि मन कर तबे अनायासे हय ॥१६०
जीवेर दुःख देखि मोर हृदय विदरे ।
सब जीवेर पाप प्रभु देह मोर शिरे ॥१६१
जीवेर पाप लैञा मुञि करि नरकभोग ।
सकल जीवेर प्रभु घुचाओ भव-रोग ॥१६२
एत शुनि महाप्रभुर चित्त द्रविला ।
अश्रु कम्प स्वरभङ्ग बलिते लागिला ॥१६३

तोमार ए विचित्र नहे तुमि ये प्रह्लाद ।
तोमार उपरे कृष्णेर सम्पूर्ण प्रसाद ॥१६४
कृष्ण सेइ सत्य करे येइ मागे भृत्य ।
भृत्यवाञ्छा विना कृष्णेर नाहि अन्य कृत्य १६५
ब्रह्माण्डजीवेर तुमि वाञ्छिले निस्तार ।
विना पापभोगे हवे सबार उद्धार ॥१६६
असमर्थ नहे कृष्ण धरे सर्व्वबल ।
तोमाके वा केने भुञ्जाइवे पापफल ॥१६७
तुमि यार हित वाञ्छ से हैल वैष्णव ।
वैष्णवेर पाप कृष्ण दूर करे सब ॥१६८

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (५।६०)—

यस्त्विन्द्रगोपमथवेन्द्रमहो स्वकर्म्म-
बन्धानुरूपफलभाजनमातनोति ।
कर्म्माणि निर्द्दहति किन्तु च भक्तिभाजां
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥४॥

टीका—यस्तु इन्द्रगोपं नन्दगोपं अथवा इन्द्रं अहो आश्चर्य्ये स्वकर्म्मबन्धानुरूपफलभाजनं आतनोति, किन्तु च पुनः भक्तिभाजां कर्म्माणि निदहति, तं आदिपुरुषं गोविन्दं अहं भजामि ॥४॥

जो कीट विशेष से आरम्भ कर देवराज इन्द्र पर्य्यन्त समस्त व्यक्ति को स्वस्व कर्मानुरूप फल प्रदान करते रहते हैं, किन्तु भक्तिमान् व्यक्ति वृन्द के कर्म दग्ध कर देते हैं, मैं उन आदि पुरुष गोविन्द का भजन करता हूँ ॥४॥

तोमार इच्छामात्र हवे ब्रह्माण्डमोचन ।
सर्व्व मुक्त करिते कृष्णेर नाहि किछु श्रम १६९
एकइ डुम्बर वृक्षे लागे बहु फले ।
कोटि ब्रह्माण्ड भासे विरजार जले ॥१७०
तार एक फल यदि पड़ि नष्ट हय ।
तथापि वृक्ष ना माने निज अपचय ॥१७१
तैछे एक ब्रह्माण्ड यदि मुक्त हय ।
तबु अल्प हानि कृष्णेर मने नाहि लय ॥१७२
अनन्त ऐश्वर्य्य कृष्णेर वैकुण्ठादिधाम ।
तार गड़खाइ कारणार्णव नाम ॥१७३
ताते भासे माया लञा अनन्त ब्रह्माण्ड ।
गड़खाइते भासे येन राइपूर्ण भाण्ड ॥१७४
तार एक राइ-नाशे हानि नाहि मानि ।
ऐछे एक अण्डनाशे कृष्णेर नाहि हानि ॥१७५
सब ब्रह्माण्ड सह यदि मायार हय क्षय ।
तथापि ना माने कृष्ण निज अपचय ॥१७६
कोटि कामधेनु-पतिर छागी यैछे मरे ।
षड़ैश्वर्य्यपति कृष्णेर माया किवा करे ॥१७७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८७।१०)---

जय जय जह्यजामजित दोषगृभीतगुणां
त्वमसि यदात्मना समवरुद्धसमस्तभगः ।
अगजगदोकसामखिलशक्त्यवबोधक ते
क्वचिदजयात्मना च चरतोऽनुचरेन्निगमः ॥५॥

टीका—हे अजित ! जयः जयः । केन व्यापारेण? अगजगदोकसां स्थावर-जङ्गम-देहविशिष्टजीवानां अजां अविद्यां जहि । किम्भूतां ?—दोषगृभीतगुणां । यद् यस्मात् त्वं आत्मना समवरुद्धसमस्तभगः लब्धाखिलैश्वर्य्यः असि । हे अखिलशक्त्यवबोधक ! क्वचित् अजया आत्मना च चरतः क्रीड़तस्ते तव निगमो वेदः अनुचरेत् ॥५॥

हे अजित ! आप की जय हो, स्थावर जङ्गम प्रभृति देहि वृन्द के आनन्दादि को आच्छादित करके रखने निमित्त अविद्या निज बल प्रकाश करती रहती है । आप उसको विनष्ट करें । कारण, आप ही स्वरूपतः अखिल ऐश्वर्य्य में स्थित हैं । एवं आपने ही अन्तर्य्यामिरूप में निखिल भूतों में शक्ति विधान करते रहते हैं । आप को छोड़कर अपर किसी में माया विनष्ट करने की शक्ति नहीं है ।

सृष्टि काल में जब आप स्वीय महिमा से

मुशोभित थे, उस समय भी माया के द्वारा कार्य्य करते रहते थे। श्रुति समूह भवदीय इस अवस्था का वर्णन करती रहती हैं ।।५।।

एइमत सब भक्तेर कहि से से गुण ।
सबाके विदाय दिला करि आलिङ्गन ।।१७८
प्रभुर विच्छेदे भक्त करये क्रन्दन ।
भक्तेर विच्छेदे प्रभुर विषण्ण हैल मन ।।१७९
गदाधरपण्डित रहिला प्रभु-पाशे ।
यमेश्वर प्रभु तार कराइला आवासे ।।१८०
पुरी गोसाञि, जगदानन्द, स्वरूप, दामोदर ।
दामोदरपण्डित, आर गोविन्द, काशीश्वर।।१८१
एइ सब सङ्गे प्रभु वैसे नीलाचले ।
जगन्नाथ दर्शन नित्य करे प्रात:काले ।।१८२
एक दिन प्रभु-पाशे आसि सार्व्वभौम ।
योड़हात करि किछु कैल निवेदन ।।१८३
एबे सब वैष्णव गौड़देश गेला ।
एबे प्रभुर निमन्त्रणेर अवसर हैला ।।१८४
एबे मोर घरे भिक्षा कर मास भरि ।
प्रभु कहे, धर्म्म नहे करिते ना पारि ।।१८५
सार्व्वभौम कहे, भिक्षा कर विश दिन ।
प्रभु कहे एहो नहे यतिधर्म्मचिह्न ।।१८६
सार्व्वभौम कहे कर दिन पञ्चदश ।
प्रभु कहे, तोमार भिक्षा एक दिवस ।।१८७
तबे सार्व्वभौम प्रभुर चरणे धरिया ।
दश दिन कर कहे विनति करिया ।।१८८
प्रभु क्रमे क्रमे पञ्च दिन घाटाइल ।
पञ्चदिने तार भिक्षा नियम करिल ।।१८९
तबे सार्व्वभौम करे आर निवेदन ।
तोमार सङ्गे सन्न्यासी आछे दश जन १९०
पुरीगोसाञिर पञ्च दिन भिक्षा मोर घरे ।
पूर्व्वे आमि कहियाछि तोमार गोचरे ।।१९१
दामोदर, स्वरूप हय बान्धव आमार ।
कभु तोमार सङ्गे यावे कभु एकेश्वर ।।१९२
आर अष्ट सन्न्यासीर भिक्षा दुइ दुइ दिवसे ।
एकेक दिने एकेक जन पूर्ण हइल मासे ।।१९३
बहुत सन्न्यासी यदि आइसे एक ठाञि ।
सन्धान करिते नारि अपराध पाइ ।।१९४
तुमि निज छाया सङ्गे आसिबे मोर घर ।
कभु सङ्गे आसिबेन स्वरूप दामोदर ।।१९५
प्रभुर ईङ्गित पाञा आनन्दितमन ।
सेइ दिन कैल महाप्रभुर निमन्त्रण ।।१९६
षाठीर माता नाम भट्टाचार्य्येर गृहिणी ।
प्रभुर महाभक्ता तेँह स्नेहेते जननी ।।१९७
घरे आसि भट्टाचार्य्य ताँरे आज्ञा दिल ।
आनन्दे षाठीर माता पाक चड़ाइल ।।१९८
भट्टाचार्य्य-गृहे सब द्रव्य आछे भरि ।
येवा शाक फलादि आनाइल आहरि ।।१९९
आपने भट्टाचार्य्य करे पाकेर सब कर्म्म ।
षाठीर माता विचक्षणा जाने पाकमर्म्म ।।२००
पाकशालार दक्षिणे दुइ भोगालय ।
एक घरे शालग्रामेर भोग-सेवा हय ।।२०१
आर घर महाप्रभुर भिक्षार लागिया ।
निभृते करियाछेन नूतन करिया ।।२०२
वाह्ये एक द्वार तार प्रभु प्रवेशिते ।
पाकशालाय एक द्वार परिवेशन करिते ।।२०३
बत्रिशा कलार एक आङ्गटिया पाते ।
उवारिल तिन मन तण्डुलेर भाते ।।२०४

पीत सुगन्धि घृते अन्न सिक्त कैल ।
चारि दिके पाते धृत वहिया चलिल ॥२०५
केयापात्र कलार खोला डोङ्गा सारि सारि ।
चारि दिके राखियाछे नाना व्यञ्जन भरि २०६
दश प्रकार शाक निम्ब सुकतार झोल ।
मरिचेर झाल, छेनाबड़ा बड़िघोल ॥२०७
दुग्धतुम्बी, दुग्धकुष्माण्ड, वेशारि लाफरा ।
मोचाघण्ट, मोचाभाजा, विविध शाकरा २०८
वृद्ध कुष्माण्डबड़िर व्यञ्जन अपार ।
फुलबड़ि फलमूले विविध प्रकार ॥२०९
नव निम्बपत्र सह भाजा वार्त्ताकी ।
फुलबड़ि पटोल भाजा कुष्माण्ड मानचाकी २१०
भृष्ट माष, मुद्गग-सूप अमृत निन्दय ।
मधुराम्ल, बड़ा अम्लादि, अम्ल पाँच छय ।२११
मुद्गबड़ा, माषबड़ा, कलाबड़ा मिष्ट ।
क्षीरपुली, नारिकेली, आर यत पिष्ट ॥२१२
कांजिबड़ा, दुग्धचिड़ा, दुग्धलक्लकी ।
आर यत पिठा कैल कहिते ना शकि ॥२१३
घृतसिक्त परमान्न मृत्कुण्डिका भरि ।
चाँपाकला घन दुग्ध आम्र ताँहा धरि ॥२१४
रसाला मथित दधि सन्देश अपार ।
गौड़े उत्कले यत भक्ष्येर प्रकार ॥२१५
श्रद्धा करि भट्टाचार्य्य सब कराइल ।
शुभ्र पीठ उपरे शुभ्र वसन धरिल ॥२१६
दुइ पाशे सुगन्धि शीतलजल-झारि ।
अन्नव्यञ्जन उपरि देन तुलसी मञ्जरी ॥२१७
अमृतगुटिका पिठापाना आनाइल ।
जगन्नाथ प्रसाद सब पृथक् धरिल ॥२१८

हेनकाले महाप्रभु मध्याह्न करिया ।
एकले आइला ताँर हृदय जानिया ॥
भट्टाचार्य्य कैल ताँर पाद प्रक्षालन ।
घरेर भितर गेला करिते भोजन ॥
अन्नादि देखिया प्रभु विस्मित हइया ।
भट्टाचार्य्ये कहेन किछु भङ्गि करिया ॥
अलौकिक एइ सब अन्न व्यञ्जन ।
दुइ प्रहर भितरे कैछे हैल रन्धन ॥
शत चुलाय यदि शत जन पाक करे ।
तबु शीघ्र एत व्यञ्जन रान्धिते ना पारे ॥
कृष्णे भोग लागाआछ अनुमान करि ।
उपरे देखिये याते तुलसीमञ्जरी ॥
भाग्यवान् तुमि, सफल तोमार उद्योग ।
राधाकृष्णे लागाआछ एतादृश भोग ॥
अन्नेर सौरभ वर्ण परम मोहन ।
राधाकृष्ण साक्षात् इहा करियाछेन भोजन ॥
तोमार अनेक भाग्य कत प्रशंसिव ।
आमि भाग्यवान् इहार अवशेष पाव ॥
कृष्णेर आसन-पीठ राख उठाइया ।
मोरे प्रसाद देह भिन्न पात्रेते करिया ॥
भट्टाचार्य्य कहे, प्रभु ना कर विस्मय ।
ये खाइबे तार शक्त्येच भोग सिद्ध हय ॥
ना मोर उद्योगे ना गृहिणीर रन्धने ।
याँर शक्त्येच भोगसिद्धि सेइ ताहा जाने ॥
एइत आसने बसि करह भोजन ।
प्रभु कहे पूज्य एइ कृष्णेर आसन ॥
भट्ट कहे, अन्न पीठ समान प्रसाद ।
अन्न खाइबे, पीठे बसिते काँहा अपराध ॥

कभु कहे, भाल बलिले शास्त्र-आज्ञा हय ।
कृष्णेर सकल शेष भृत्य आस्वादय ॥२३३

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।६।४५)—

त्वयोपभुक्तस्रग्गन्धवासोऽलङ्कारचर्च्चिताः ।
उच्छिष्टभोजिनो दासास्तव मायां जयेम हि ॥६॥

टीका – तव उच्छिष्टभोजिनः दासाः वयं तव मायां हि निश्चितं जयेम । वयं किम्भूताः ?— त्वयोपभुक्त-स्रग्गन्ध-वासोऽलङ्कारचर्च्चिताः ॥६॥

श्रीमद् भागवत के ११।६।४५ में —
उद्धव श्रीकृष्ण को कहे थे – हम सब आपके किङ्कर हैं, हम सब आप की उच्छिष्ट भोजन कर एवं आपके उद्देश में निवेदित माल्य, गन्ध, वसन एवं विभूषण से भूषित होकर माया को जय करने में समर्थ होंगे ।६

तथापि एतेक अन्न खाओयान ना याय ।
भट्ट कहे, जानि खाओ यतेक युयाय ॥२३४
नीलाचले भोजन तुमि कर बायान्न बार ।
एक एक भोग अन्न खाओ शत शत भार २३५
द्वारकाते षोलसहस्र महिषीमन्दिरे ।
अष्टादश माता आर यादवेर घरे ॥२३६
व्रजे ज्येठा खुड़ा मामा पिसादि गोपगण ।
सखा-वृन्द सबार घरे द्विसन्ध्या भोजन ॥२३७
गोवर्द्धनयज्ञे खाइले अन्न राशि राशि ।
तार लेखे मोर अन्न नहे एक ग्रासी ॥२३८
तुमि त ईश्वर, मुञि क्षुद्र कोन् छार ।
एकग्रास माधुकरी कर अङ्गीकार ॥२३९
एत शुनि हासि प्रभु बसिला भोजने ।
जगन्नाथप्रसाद भट्ट देन हर्षमने ॥२४०
हेन काले अमोघ नाम भट्टेर जामाता ।
कुलीन-निन्दक तेँह षाठीकन्यार भर्त्ता ॥२४१
भोजन देखिते चाहे आसिते ना पारे ।
लाठि हाते भट्टाचार्य्य आछेन दुयारे ॥२४२
तेँह यदि प्रसाद दिते हैला आनमन ।
अमोघ आसि अन्न देखि करये निन्दन ॥२४३
एइ अन्ने तृप्त हय दश बार जन ।
एकेला सन्नयासी करे एतेक भोजन ! ॥२४४
शुनितेइ भट्टाचार्य्य उलटि चाहिल ।
ताँर अवधान देखि अमोघ पलाइल ॥२४५
भट्टाचार्य्य लाठि लञा मारिते धाइला ।
पलाइला अमोघ तार लाग ना पाइला ।२४६
तारे गालि शाप दिते भट्टाचार्य्य आइला ।
निन्दा शुनि महाप्रभु हासिते लागिला ।२४७
शुनि षाठी-माता बुके शिरे हात मारे ।
षाठी आजि राँड़ी हउक बले बारे बारे ॥२४८
दोँहार दुःख देखि प्रभु दुँहा प्रबोधिया ।
दुँहार इच्छाते भोजन कैल तुष्ट हैया ॥२४९
आचमन कराइया भट्ट दिल मुखवास ।
तुलसीमञ्जरी लवङ्ग एलाचि सुवास ॥२५०
सर्व्वाङ्गे पराइल प्रभुर माल्य चन्दन ।
दण्डवत् हैया कहे दैन्यवचन ॥२५१
निन्दा कराइते तोमा आनिनु निज घरे ।
एइ अपराध प्रभु क्षमा कर मोरे ॥२५२
प्रभु कहे, निन्दा नहे सहज कहिल ।
इहाते तोमार किवा अपराध हैल ॥२५३
एत बलि महाप्रभु चलिला भवने ।
भट्टाचार्य्य ताँर घरे गेला ताँर सने ॥२५४
प्रभु-पाये पड़ि बहु आत्मनिन्दा कैल ।
ताँरे शान्त करि प्रभु घरे पाठाइल ॥२५५

घरे आसि भट्टाचार्य्य षाठीर माता सने ।
आपना निन्दिया किछु कहेन वचने ॥२५६
चैतन्यगोसाञिर निन्दा शुनिले याहा हैते ।
तारे बध कैल हय पाप प्रायश्चित्ते ॥२५७
किंवा निज प्राण यदि करि विमोचन ।
दुइ नहे योग्य, दुइ शरीर ब्राह्मण ॥२५८
पुन सेइ निन्दकेर मुख ना देखिब ।
परित्याग कैनु तार नाम ना लइब ॥२५९
षाठीके कह, छाड़ुक, से हैल पतित ।
पतित हैले भर्त्ता त्यजिते उचित ॥२६०

तथाहि श्रीमद्भागवते (७।११।२८)—

सन्तुष्टाऽलोलुपा दक्षा धर्म्मज्ञा प्रियसत्यवाक् ।
अप्रमत्ता शुचिः स्निग्धा पतिञ्च पतितं त्यजेत् ॥७

टीका—तथाहि किञ्च सन्तुष्टा यथा-लाभेन, तावन्मात्रेऽपि भोगेऽलोलुपा, दक्षा अनलसा, प्रिया सत्या च वाक् यस्याः सा, सर्व्वत्रापि अप्रमत्ता अवहिता, शुचिः स्निग्धा पतितं महापातकदूषितं, यथाह याज्ञवल्क्यः "आशुद्धेः संप्रतीक्ष्योहि महापातक-दूषितः" इति पतिं च त्यजेत् परिहरेत् ॥७॥

यथा लाभ सन्तोष अर्थात् स्वल्प से ही जिस को सन्तोष होता है, जो लोभ रहित है, अनलस है, है, धर्मज्ञ है, जो प्रिय सत्यभाषिणी, अप्रमत्ता, शुचि, स्निग्धा, साध्वी स्त्री के पक्ष में महा पातक दूषित पति को परित्याग करना विधेय है ॥७॥

सेइ रात्रे अमोघ काँहा पलाइया गेल ।
प्रातःकाले तारे विसूचिका व्याधि हैल ॥२६१
अमोघ मरे शुनि कहे भट्टाचार्य्य ।
सहाय हैया दैव कैल मोर कार्य्य ॥२६२
ईश्वरेते अपराध फले ततक्षण ।
एत बलि पड़े दुइ शास्त्रेर वचन ॥२६३

तथाहि महाभारते वनपर्व्वणि—

युधिष्ठिरं प्रति भीमवाक्यम्—

महता हि प्रयत्नेन हस्त्यश्वरथपत्तिभिः ।
अस्माभिर्यदनुष्ठेयं गन्धर्व्वैस्तदनुष्ठितम् ॥८

टीका—हि यतः महता प्रयत्नेन हस्त्यश्वरथा... करणैः अस्माभिः यत् अनुष्ठेयं, तत् गन्ध... अनुष्ठितम् ॥८॥

हे राजन् ! गज, अश्व, रथ, पदाति... प्रभृति के आनुकूल्य के द्वारा महत् प्रयत्न से हम... को जो कार्य्य करना था गन्धर्वों ने उसको ... किया है । अतएव शोक करना नहीं चाहिये ॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (४।१०।५६)—

परीक्षितं प्रति श्रीशुकवाक्यम्—

आयुः श्रियं यशो धर्म्मं लोकानाशिष एव च ।
हन्ति श्रेयांसि सर्व्वाणि पुंसो महदतिक्रमः ॥९

टीका—महदतिक्रमः पुंसः आयुः श्रियं ... धर्म्मं लोकान् आशिषः सर्व्वाणि श्रेयांसि कल्या... हन्तिः ॥९॥

श्रीमद् भागवत के १०।४।४६ में उक्त है-महद् वृन्द की अवज्ञा करने से आयुः, श्री यश... इह लोक पर लोक एवं आशीर्वाद प्रभृति ... मङ्गल विनष्ट हो जाते हैं ॥९॥

गोपीनाथाचार्य्य गेला प्रभुर दर्शने ।
प्रभु तारे पुछिल भट्टाचार्य्य-विवरणे ॥२...
आचार्य्य कहे, उपवास कैल दुइ जने ।
विसूचिका व्याधिते अमोघ छाड़ये जीवने ॥२...
शुनि कृपामय प्रभु आइला धाइया ।
अमोघेरे कहे तार बुके हस्त दिया ॥२...
सहजे निर्म्मल एइ ब्राह्मण-हृदय ।
कृष्णेर वसिते एइ योग्य स्थल हय ॥२...
मात्सर्य्य-चण्डाल केन इँहा बसाइले ।
परम पवित्र स्थान अपवित्र कैले ॥२...

सार्व्वभौम सङ्गे तोमार कलमष हैल क्षय ।
कलमष घुचिले जीव कृष्णनाम लय ॥२६९
उठह अमोघ तुमि कह कृष्णनाम ।
अचिरे तोमारे कृपा करिबे भगवान् ॥२७०
शुनि कृष्ण कृष्ण बलि अमोघ उठिला ।
प्रेमोन्मादे मत्त हैया नाचिते लागिला ॥२७१
कम्पाश्रु पुलक स्वेद स्तम्भ स्वरभङ्ग ।
प्रभु हासे देखि तार प्रेमेर तरङ्ग ॥२७२
प्रभुर चरणे धरि करये विनय ।
अपराध क्षम मोर प्रभु दयामय ॥२७३
एइ छार मुखे तोमार करिल निन्दने ।
एत बलि आपन गाले चड़ाय आपने ॥२७४
चड़ाइते चड़ाइते गाल फुलाइल ।
हाते धरि गोपीनाथाचार्य्य निषेधिल ॥२७५
प्रभु आश्वासन करे स्पर्शि तार गात्र ।
सार्व्वभौमसम्बन्धे तुमि मोर स्नेहपात्र ॥२७६
सार्व्वभौमगृहे दास दासी ये कुक्कुर ।
सेह मोर प्रिय अन्य जन बहुदूर ॥२७७
अपराध नाहि, सदा लह कृष्णनाम ।
एत बलि प्रभु आइला सार्व्वभौमस्थान २७८
प्रभु देखि सार्व्वभौम धरिला चरणे ।
प्रभु तारे आलिङ्गिया बसिला आसने ॥२७९
प्रभु कहे, अमोघ शिशु किवा तार दोष ।
केने उपवास कर केने तारे रोष ॥२८०
उठ स्नान करि देख जगन्नाथमुख ।
शीघ्र आसि भोजन कर तबे मोर सुख ॥२८१
तावत् रहिब आमि एथाय बसिया ।
यावत् ना खाइबे तुमि प्रसाद आनिया ॥२८२
प्रभु-पद धरि भट्ट कहिते लागिला ।
मरित अमोघ तारे केने जियाइला ॥२८३
प्रभु कहेन, अमोघ शिशु तोमार बालक ।
बालक-दोष ना लय पिता याहाते पालक ॥२८४
एबे वैष्णव हैल तार गेल अपराध ।
ताहार उपरे एवे करह प्रसाद ॥२८५
भट्ट कहे, चल प्रभु ईश्वर दर्शने ।
स्नान करि ताँहा मुञि आसिछि एखाने ।२८६
प्रभु कहे, गोपीनाथ इँहाइ रहिवा ।
इँह प्रसाद पाइले वार्त्ता आमारे कहिवा २८७
एत बलि प्रभु गेला ईश्वरदर्शने ।
भट्ट स्नान स्मरण करि करिला भोजने ।२८८
सेइ अमोघ हैल प्रभुर भक्त एकान्त ।
प्रेमे नृत्य, कृष्णनाम लय महाशान्त ॥२८९
ऐछे चित्र लीला करे शचीर नन्दन ।
येइ देखे शुने तार विस्मय हय मन ॥२९०
ऐछे भट्टगृहे करेन भोजनविलास ।
तार मध्ये नाना चित्र चरित्र प्रकाश ॥२९१
सार्व्वभौमघरे एइ भोजन-चरित ।
सार्व्वभौम प्रीति याँहा हैल विदित ॥२९२
षाठीर मातार प्रेम आर प्रभुर प्रसाद ।
भक्त सम्बन्धे याँहा क्षमिला अपराध ॥२९३
श्रद्धा करि एइ लीला शुने येइ जन ।
अचिराते पाय सेइ चैतन्यचरण ॥२९४
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२९५

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्य खण्डे सार्व्वभौमगृहे भोजनविलासो नाम पञ्चदशः परिच्छेदः ॥१३॥

❁ षोड़श परिच्छेद ❁

गौड़ोद्यानं गौरमेघ: सिञ्चन् स्वालोकनामृतै: ।
भवाग्निदग्धजनतावीरुध: समजीवयत् ।।१।।

टीका—गौरमेघ: गौररूप: जलद: स्वालोकनामृतै: स्वीयदर्शनरूपसुधासलिलै: करणै: गौड़ोद्यानं गौड़देशमिव कुसुमकाननं सिञ्चन् सन् भवाग्नि-दग्धजनतावीरुध: समजीवयत् जीवयामास ।।१।।

गौरमेघ स्वीय दर्शन सुधासे गौड़देशरूप कुसुम कानन को सिक्त करके संसारानल तप्त लोक रूप लतिका वृन्द को जीवन प्रदान किये थे ।।१।।

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ।।१
प्रभुर हैल इच्छा याइते वृन्दावन ।
शुनिया प्रतापरुद्र हैला विमन ।।२
सार्व्वभौम रामानन्द आनि दुइ जन ।
दुँहाके कहेन राजा विनय-वचन ।।३
नीलाद्रि छाड़ि प्रभुर मन अन्यत्र याइते ।
तोमरा करह यत्न ताँहारे राखिते ।।४
ताँहा बिना एइ राज्य मोरे नाहि भाय ।
गोसाञि राखिते करिह नाना उपाय ।।५
रामानन्द सार्व्वभौम दुइ जना स्थाने ।
तबे युक्ति करे प्रभु याइते वृन्दावने ।।६
दुँहे कहे, रथयात्रा कर दरशन ।
कार्त्तिक आइले तबे करिह गमन ।।७
कार्त्तिक आइले कहे, एबे महा शीत ।
दोलयात्रा देखि याइह एइ भाल रीत ।।८
आजि कालि करि उठाय विविध उपाय ।
याइते सम्मति ना देय, विच्छेदेर भय ।।९
यद्यपि स्वतन्त्र प्रभु नाहि निवारण ।
भक्त-इच्छा विना तबु ना करे गमन ।।१०
तृतीय वतसरे सब गौड़ेर भक्तगण ।
नीलाचले चलिते सबार हैल मन ।।११
सबे मेलि गेला अद्वैत आचार्य्येर पाशे ।
प्रभु देखिते आचार्य्य चलिला उल्लासे ।।१२
यद्यपि प्रभुर आज्ञा गौड़ेते रहिते ।
नित्यानन्द प्रभुके प्रेमभक्ति प्रकाशिते ।।१३
तथापि चलिला महाप्रभुके देखिते ।
नित्यानन्देर प्रेमचेष्टा के पारे बुझिते ।।१४
आचार्य्यरत्न, विद्यानिधि, श्रीवास, रामाइ ।
वासुदेव, मुरारि, गोविन्द तिन भाइ ।।१५
राघव पण्डित निज झालि साजाइया ।
कुलीनग्रामवासी चले पट्टडोरी लञा ।।१६
खण्डवासी नरहरि, श्रीरघुनन्दन ।
सर्व्व भक्त चले, तार के करे गणन ।।१७
शिवानन्द सेन करे घाटि समाधान ।
सबाके पालन करि सुखे लैञा यान ।।१८
सबार सर्व्व कार्य्य करेन, देन वासा स्थान ।
शिवानन्द जाने उड़िया पथेर सन्धान ।।१९
से वतसर प्रभु देखिते सब ठाकुराणी ।
चलिला आचार्य्य सङ्गे अच्युत जननी ।।२०
श्रीवास पण्डित सङ्गे चलिला मालिनी ।
शिवानन्द सङ्गे चले ताँहार गृहिणी ।।२१

शिवानन्देर बालक नाम चैतन्यदास ।
तिँह चलियाछे, प्रभु देखिते उल्लास ॥२२
आचार्य्यरत्न सङ्गे ताँहार गृहिणी ।
ताँहार प्रेमेर कथा कहिते ना जानि ॥२३
सब ठाकुराणी महाप्रभुके भिक्षा दिते ।
प्रभुर नाना प्रिय द्रव्य निल घर हैते ॥२४
शिवानन्द सेन करे सब समाधान ।
घाटियाल प्रबोधि देन सबारे वासा स्थान ॥२५
भक्ष्य दिया करेन सबार सर्व्वत्र पालने ।
परम आनन्दे यान प्रभुर दर्शने ॥२६
रेमुणा आसिया कैल गोपीनाथ दरशन ।
आचार्य्य करिल ताँहा कीर्त्तन नर्त्तन ॥२७
नित्यानन्देर परिचय सब लोक सने ।
बहुत सम्मान आसि कैल सेवकगणे ॥२८
सेइ रात्रि सब महान्त ताहाञि रहिला ।
वार क्षीर आनि सेवक आगेते धरिला ॥२९
क्षीर वाँटि सबारे दिल प्रभु नित्यानन्द ।
क्षीर प्रसाद पाइया सबार बाड़िल आनन्द ॥३०
माधव पुरीर कथा गोपालस्थापन ।
ताँहारे गोपाल यैछे मागिल चन्दन ॥३१
ताँर लागि गोपीनाथ क्षीर चुरि कैल ।
महाप्रभुर मुखे आगे ए कथा शुनिल ॥३२
सेइ कथा सबार मध्ये कहे नित्यानन्द ।
शुनिया आचार्य्य मने बाड़िल आनन्द ॥३३
एइमत चलि चलि कटक आइला ।
साक्षिगोपाल देखि से दिन रहिला ॥३४
साक्षिगोपालेर कथा कहे नित्यानन्द ।
शुनिया वैष्णवमने बाड़िल आनन्द ॥३५

प्रभुके मिलिते सबार उत्कण्ठा अन्तरे ।
शीघ्र करि आइला सबे श्रीनीलाचले ॥३६
आठारनालाय आइला गोसाञि शुनिया ।
दुइ माला पाठाइला गोविन्द हात दिया ॥३७
दुइ माला गोविन्द दुइ जने पराइल ।
अद्वैत, अवधूत गोसाञि बड़ सुख पाइल ॥३८
ताँहाञि आरम्भ कैल कृष्णसंकीर्त्तन ।
नाचिते नाचिते चलि आइला दुइ जन ॥३९
पुनः माला दिया स्वरूपादि निजगण ।
आगु बाड़ि पाइल शचीर नन्दन ॥४०
नरेन्द्र आसिया ताँहा सबारे मिलिला ।
महाप्रभुर दत्त माला सबारे पराइला ॥४१
सिंहद्वार निकटे आइला शुनि गौर राय ।
आपने आसिया प्रभु मिलिला सबाय ॥४२
सबा लैञा कैल जगन्नाथ दरशन ।
सबा लैञा आइला पुनः आपन भवन ॥४३
वाणीनाथ, काशीमिश्र प्रसाद आनिल ।
स्वहस्ते सबारे प्रभु प्रसाद खाओयाइल ॥४४
पूर्व्ववत्सरेर यार येइ वासा स्थान ।
ताँहा सबा पाठाइया कराइल विश्राम ॥४५
एइमत भक्तगण रहिल चारि मास ।
प्रभुर सहिते करे कीर्त्तनविलास ॥४६
पूर्व्ववत् रथयात्रा काल यबे आइल ।
सबा लैञा गुण्डिचामन्दिर प्रक्षालिल ॥४७
कुलीनग्रामी पट्टडोरी जगन्नाथे दिल ।
पूर्व्ववत् रथ अग्रे नर्त्तन करिल ॥४८
बहु नृत्य करि पुनः चलिला उद्याने ।
वापी तीरे ताँहा याइ करिला विश्रामे ॥४९

राढ़ एक विप्र तिँह नित्यानन्द दास ।
महाभाग्यवान् तिँह नाम कृष्णदास ॥५०
घट भरि प्रभुर तिँह अभिषेक कैल ।
ताँर अभिषेके प्रभु महातृप्त हैल ॥५१
बलगण्डि भोगेर बहु प्रसाद आइल ।
सबा सङ्गे महाप्रभु प्रसाद खाइल ॥५२
पूर्व्ववत् रथयात्रा कैल दरशन ।
हेरापञ्चमी यात्रा देखेन लञा भक्तगण ॥५३
आचार्य्य गोसाञि प्रभुर कैल निमन्त्रण ।
तार मध्ये कैल यैछे झड़ वरिषण ॥५४
विस्तारि वर्णियाछेन दास वृन्दावन ।
श्रीवास प्रभुरे तबे कैल निमन्त्रण ॥५५
प्रभुर प्रिय व्यञ्जन सब रान्धेन मालिनी ।
भक्त्ये दासी अभिमान, स्नेहेते जननी ॥५६
आचार्य्यरत्न आदि यत मुख्य भक्तगण ।
मध्ये मध्ये प्रभुरे करेन निमन्त्रण ॥५७
चातुर्म्मास्य अन्ते पुनः नित्यानन्द लञा ।
किवा युक्ति करे नित्य निभृते वसिया ॥५८
आचार्य्यगोसाञि प्रभुके कहे ठारे ठोरे ।
आचार्य्य तर्ज्जा पड़े केह बुझिते ना पारे ॥५९
ताँर मुख देखि हासे शचीर नन्दन ।
अङ्गीकार जानि आचार्य्य करेन नर्त्तन ॥६०
किवा प्रार्थना किवा आज्ञा केह ना बुझिल ।
आलिङ्गन करि प्रभु ताँरे विदाय दिल ॥६१
नित्यानन्द कहे, प्रभु शुनह श्रीपाद ।
एइ आमि मागि तुमि करह प्रसाद ॥६२
प्रतिवर्ष नीलाचले तुमि ना आसिवा ।
गौड़े रहि मोर इच्छा सफल करिबा ॥६३
ताहा सिद्ध करे हेन अन्य ना देखिये ।
आमार दुष्कर कर्म्म तोमा हैते हये ॥६४
नित्यानन्द कहे, आमि देह तुमि प्राण ।
देह प्राण भिन्न नहे एइत प्रमाण ॥६५
अचिन्त्य शक्त्ये कर तुमि ताहार घटन ।
ये कराह सेइ करि नाहिक नियम ॥६६
ताँरे विदाय दिल प्रभु करि आलिङ्गन ।
एइमत विदाय दिल सब भक्तगण ॥६७
कुलीन ग्रामी पूर्व्ववत् कैल निवेदन ।
प्रभु आज्ञा कर आमार कर्त्तव्य साधन ॥६८
प्रभु कहे, वैष्णव-सेवा नामसंकीर्त्तन ।
दुइ कर शीघ्र पाबे श्रीकृष्ण-चरण ॥६९
तिँह कहे, के वैष्णव, कि तार लक्षण ।
तबे हासि कहे प्रभु, जानि ताँर मन ॥७०
कृष्णनाम निरन्तर याहार वदने ।
से वैष्णव-श्रेष्ठ, भज ताहार चरणे ॥७१
वर्षान्तरे पुनः तारा ऐछे प्रश्न कैल ।
वैष्णवेर तारतम्य प्रभु शिक्षाइल ॥७२
याँहार दर्शने मुखे आइसे कृष्णनाम ।
ताँहारे जानिह तुमि वैष्णव-प्रधान ॥७३
क्रम करि कहे प्रभु वैष्णव-लक्षण ।
वैष्णव, वैष्णवतर, आर वैष्णवतम ॥७४
एइमत सब वैष्णव गौड़े चलिला ।
विद्यानिधि से वत्सर नीलाद्रि रहिला ॥७५
स्वरूप सहिते ताँर हय सख्य प्रीति ।
दुइ जनार कृष्ण-कथाय एकत्रइ स्थिति ॥७६
गदाधर पण्डिते तेँह पुनः मन्त्र दिल ।
ओड़न षष्ठीर दिने यात्रा ये देखिल ॥७७

जगन्नाथ परे तथा माड़ुया वसन ।
देखिया सघृण हैल विद्यानिधिर मन ॥७८
सेइ रात्रे जगन्नाथ ब्लाइ आसिया ।
दुइ भाइ चड़ान ताँरे हासिया हासिया ॥७९
गाल फुलिल, आचार्य्य अन्तरे उल्लास ।
विस्तारिया वर्णियाछेन वृन्दावन दास ॥८०
एइमत प्रत्यब्द आइसे गौड़ेर भक्तगण ।
प्रभु सङ्गे रहि करे यात्रा दरशन ॥८१
तार मध्ये ये ये वर्ष आछये विशेष ।
विस्तारिया आगे ताहा करिब विशेष ॥८२
एइमत महाप्रभुर चारि वत्सर गेल ।
दक्षिण यात्रा आसिते दुइ वत्सर लागिल ।८३
आर दुइ वत्सर चाहे वृन्दावन याइते ।
रामानन्द हठे प्रभु ना पारे चलिते ॥८४
पञ्चम वत्सरे गौड़ेर भक्तगण आइला ।
रथ देखि ना रहिला गौड़े चलिला ॥८५
तबे प्रभु सार्व्वभौम रामानन्द स्थाने ।
आलिङ्गन करि कहे मधुर वचने ॥८६
बहुत उत्कण्ठा मोर याइते वृन्दावने ।
तोमार हठे दुइ वत्सर ना कैल गमन ॥८७
अवश्य चलिब, दुँहे करह सम्मति ।
तोमा दुँहा विना मोर नाहि अन्य गति ॥८८
गौड़ देश हय मोर दुइ समाश्रय ।
जननी जाह्नवी एइ दुइ दयामय ॥८९
गौड़ देश दिया याब ता सबा देखिया ।
तुमि दुँहे आज्ञा देह प्रसन्न हइया ॥९०
शुनिया प्रभुर वाणी मने विचारय ।
प्रभु सने अति हठ कभु भाल नय ॥९१
दुँहे कहे, एबे वर्षा चलिते नारिवा ।
विजया दशमी आइले अवश्य याइबा ॥९२
आनन्दे महाप्रभु वर्षा कैल समाधन ।
विजया दशमी दिने करिल पयान ॥९३
जगन्नाथेर प्रसाद प्रभु यत पाइयाछिला ।
कड़ार चन्दन डोर सब सङ्गे लैला ॥९४
जगन्नाथेर आज्ञा मागि प्रभाते चलिला ।
उड़िया गौड़िया भक्ते यत्ने निवारिला ॥९५
निजगण सङ्गे प्रभु भवानीपुर आइला ।
प्रसाद भोजन करि तथाय रहिला ॥९६
वाणीनाथ बहु प्रसाद दिल पाठाइया ।
रामानन्द आइला पाछे दोलाय चड़िया ॥९७
प्रातःकाले चलि प्रभु भुवनेश्वर आइला ।
सङ्गेर भक्तगण आसि तथाइ मिलिला ॥९८
कटक आसिया कैल गोपाल दर्शन ।
स्वप्नेश्वर विप्र कैल प्रभुर निमन्त्रण ॥९९
रामानन्द राय सब गण निमन्त्रिल ।
बाहिर उद्याने आसि प्रभु बासा कैल ॥१००
भिक्षा करि वकुलतले करिल विश्राम ।
प्रतापरुद्र ठाञि राय करिल पयान ॥१०१
शुनि आनन्दित राजा शीघ्र आइला ।
प्रभु देखि दण्डवत भूमेते पड़िला ॥१०२
पुनः उठे पुनः पड़े प्रणये विह्वल ।
स्तुति करे पुलकाङ्ग पड़े अश्रुजल ॥१०३
ताँर भक्ति देखि प्रभुर तुष्ट हैल मन ।
उठि महाप्रभु तारे कैल आलिङ्गन ॥१०४
पुनः स्तुति करि राजा करये प्रणाम ।
प्रभुर कृपा अश्रुते ताँर देह हैल स्नान ॥१०५

सुस्थ करि रामानन्द राजा वसाइला ।
कायमनोवाक्ये प्रभु तारे कृपा कैला ॥१०६
ऐछे ताँहारे कृपा कैल गौड़राय ।
प्रतापरुद्र संत्राता नाम हैल याय ॥१०७
राजपात्रगण कैल प्रभुर वन्दन ।
राजारे विदाय दिल शचीर नन्दन ॥१०८
बाहिरे आसि राजा आज्ञापत्र लेखाइल ।
निज राज्ये यत विषयी ताहारे पाठाइल ।१०९
ग्रामे ग्रामे नूतन आवास करिबा ।
पाँच सात नव गृहे सामग्री भरिबा ॥११०
आनि प्रभुके लञा ताँहा उत्तरिबा ।
रात्रि दिवा वेत्र हस्ते सेवाय रहिबा ॥१११
दुइ महापात्र हरिचन्दन मङ्गराज ।
ताँरे आज्ञा दिला राजा कर सर्व्व काज ११२
एक नव नौका आनि राख नदीतीरे ।
याँहा स्नान करि प्रभु यान नदीपारे ॥११३
ताँहा स्तम्भ रोपण कर महातीर्थ करि ।
नित्य स्नान करिब ताँहा, ताँहा येन मरि ।११४
चतुर्द्वारे करह उत्तम नव्य वास ।
रामानन्द याह तुमि महाप्रभु-पाश ॥११५
सन्ध्याते चलिबे प्रभु नृपति शुनिल ।
हस्ती उपर ताम्बुगृहे स्त्रीगण चड़ाइल ॥११६
प्रभु चलिबार पथे रहे सारि हञा ।
सन्ध्याते चलिला प्रभु निजगण लञा ॥११७
चित्रोत्पला नदी आसि घाटे कैल स्नान ।
महिषी सकल देखे करये प्रणाम ॥११८
प्रभुर दर्शने सबे हैल प्रेममय ।
कृष्ण कृष्ण कहे नेत्रे अश्रु वरिषय ॥११९

एमन कृपालु नाहि शुनि त्रिभुवने ।
कृष्णप्रेमा हय याँर दूर दरशने ॥१२०
नौकाते चड़िया प्रभु हैल नदी पार ।
ज्योत्स्नावती रात्रे चलि आइला चतुर्द्वार १२१
रात्रे तथा रहि प्राते स्नानकृत्य कैल ।
हेन काले जगन्नाथेर महाप्रसाद आइल ।१२२
राजार आज्ञाय पड़िछा प्रति दिने दिने ।
बहुत प्रसाद पाठाय दिया बहु जने ॥१२३
स्वगण सहिते प्रभु प्रसाद अङ्गीकरि ।
उठिया चलिला प्रभु बलि हरि हरि ॥१२४
रामानन्द, मङ्गराज, श्रीहरिचन्दन ।
सङ्गे सेबा करि चले एइ तिन जन ॥१२५
प्रभु सङ्गे पुरी गोसाञि, स्वरूप, दामोदर ।
जगदानन्द, मुकुन्द, गोविन्द, काशीश्वर ।१२६
हरिदास ठाकुर, आर पण्डित वक्रेश्वर ।
गोपीनाथाचार्य्य, आर पण्डित दामोदर ।१२७
रामाइ, नन्दाइ, आर बहु भक्तगण ।
प्रधान कहिल सबार के करे गणन ॥१२८
गदाधर पण्डित तबे सङ्गे चलिला ।
क्षेत्रसन्न्यास ना छाड़िह प्रभु निषेधिला १२९
पण्डित कहे, याँहा तुमि सेइ नीलाचल ।
क्षेत्रसन्न्यास मोर याइक रसातल ॥१३०
प्रभु कहे, इँहा कर गोपीनाथ सेवन ।
पण्डित कहे, कोटि सेबा त्वत्पाददर्शन ॥१३१
प्रभु कहे, सेबा छाड़िबे आमार लागे दोष ।
इँहा रहि सेबा कर आमार सन्तोष ॥१३२
पण्डित कहे, सब दोष आमार उपर ।
तोमा सङ्गे ना याइब याव एकेश्वर ॥१३३

आइ देखिते याव आमि, ना याव तोमा लागि ।
प्रतिज्ञा सेवा त्यागदोष तार आमि भागी ।१३४
एत बलि पण्डित गोसाञि पृथक् चलिला ।
कटक आमि प्रभु ताँरे सङ्गे आनाइला ।१३५
पण्डितेर चैतन्यप्रेम बुझन ना याय ।
प्रतिज्ञा श्रीकृष्ण-सेवा छाड़िल तृणप्राय ।१३६
ताँहार चरित्रे प्रभु अन्तरे सन्तोष ।
ताँहार हाते धरि कहे करि प्रणय-रोष ॥१३७
प्रतिज्ञा-सेवा छाड़िबे ए तोमार उद्देश ।
से सिद्ध हइल, छाड़ि आइला दूर देश ॥१३८
आमार सङ्गे रहिते चाह वाञ्छ निज सुख ।
तोमार दुइ धर्म्म याय आमार हय दुःख ।१३९
मोर सुख चाह यदि नीलाचले चल ।
आमार शपथ यदि आर किछु बल ॥१४०
एत बलि महाप्रभु नौकाते चड़िला ।
मूर्च्छित हइया तथा पण्डित पड़िला ॥१४१
पण्डित लञा याइते सार्व्वभौमे आज्ञा दिला ।
भट्टाचार्य्य कहे, उठ ऐछे प्रभुर लीला ॥१४२
तुमि जान कृष्ण निज प्रतिज्ञा छाड़िला ।
भक्तकृपाय भीष्मेर प्रतिज्ञा राखिला ॥१४३

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।९।३७)—

युधिष्ठिरं प्रति भीष्मवाक्यम्—

स्वनिगममपहाय मत्प्रतिज्ञा-
मृतमधिकर्त्तुमवप्लुतो रथस्थः ।
धृतरथचरणोऽभ्ययाच्चलद्गु-
र्हरिरिव हन्तुमिभं गतोत्तरीयः ॥२॥

टीका—स्वनिगमं अपहाय परित्यज्य मत्प्रतिज्ञा ऋतं सत्यं यथा स्यात्तथा अधिकर्त्तुं रथस्थः सन् अवप्लुतः सहसा अवतीर्णः सन् यः अभ्ययात् । इभं गजं हन्तुं हरिः सिंह इव । कथम्भूतः ?—धृतरथचरणः । पुनः किम्भूतः ?—गतोत्तरीयः पतितोत्तरीयः । ईदृशः कृष्णः मे गतिरस्तु इत्यर्थः ॥२॥

इन्होंने निज प्रतिज्ञा परित्याग पूर्वक मेरी प्रतिज्ञा रक्षा हेतु पार्थ के रथसे अवतरण कर रथचक्र धारण कर सिंह जिस प्रकार हस्ती विनाशार्थ प्रधावित होता है, उस प्रकार मेरे और धावित हुये, उस समय इनके प्रतिपदक्षेप से वसुमती विकम्पित हो रही थी, एवं इनके उत्तरीय वसन भी स्खलित हो गया था ॥२॥

एइमत प्रभु तोमार विच्छेद सहिया ।
तोमार प्रतिज्ञा रक्षा कैल यत्न करिया ॥१४४
एइमत कहि ताँरे प्रबोध करिला ।
दुइजने शोकाकुल नीलाचले आइला ॥१४५
प्रभु लागि धर्म्म कर्म्म छाड़े भक्तगण ।
भक्तधर्म्महानि प्रभुर ना हय सहन ॥१४६
प्रेमेर विवर्त्त इहा शुने येइ जन ।
अचिरे मिलये तारे चैतन्य-चरण ॥१४७
दुइ राजपात्र येइ प्रभु सङ्गे याय ।
याजपुर आसि प्रभु तारे दिलेन विदाय ॥१४८
प्रभु विदाय दिल राय यान ताँर सने ।
कृष्णकथा रामानन्द सने रात्रि दिने ॥१४९
प्रति ग्रामे राज आज्ञाय राजभृत्यगण ।
नव्य गृहे नाना द्रव्य करये सेवन ॥१५०
एइमत चलि प्रभु रेमुणा आइला ।
तथा हइते रामानन्द राये विदाय दिला १५१
भूमिते पड़िला राय नाहिक चेतन ।
राय कोले करि प्रभु करये क्रन्दन ॥१५२
रायेर विदायकथा ना याय सहन ।
कहिते ना पारि एइ ताहार वर्णन ॥१५३
तबे ओढ्रदेश सीमा-प्रभु चलि आइला ।

तथा राजा अधिकारी प्रभुरे मिलिल ॥१५४

दिन दुइ चारि तिँहो करिल सेवन।
आगे चलिबार सेइ कहे विवरण ॥१५५

मद्यप यवन राजार आगे अधिकार।
तार भये पथे केह नारे चलिबार ॥१५६

पिछलदा पर्य्यन्त सब तार अधिकार।
तार भये नदी केह हैते नारे पार ॥१५७

दिन कत रह सन्धि करि तार सने।
तबे सुखे नौकाते कराइव गमने ॥१५८

सेइ काले से यवनेर एक अनुचर।
उड़िया-कटक आइल करि वेशान्तर ॥१५९

प्रभुर सेइ अद्भुत चरित्र देखिया।
हिन्दुचर कहे सेइ यवन-पाश गिया ॥१६०

एक सन्न्यासी आइल जगन्नाथ हैते।
अनेक सिद्ध पुरुष हय ताहार सहिते ॥१६१

निरन्तर करे सबे कृष्णसंकीर्त्तन।
सबे हासे नाचे गाय करये क्रन्दन ॥१६२

लक्ष लक्ष लोक आइसे ताँरे देखिबारे।
ताँरे देखि पुनरपि याइते नारे घरे ॥१६३

सेइ सब लोक हय वाउलेर प्राय।
कृष्ण कहि नाचे कान्दे गड़ागड़ि याय ॥१६४

कहिबार कथा नहे देखिले से जानि।
ताँहार प्रभावे ताँरे ईश्वर करि मानि ॥१६५

एत कहि सेइ चर हरि-कृष्ण गाय।
हासे कान्दे नाचे गाय वाउलेर प्राय ॥१६६

एत शुनि यवनेर मन फिरि गेल।
आपन विश्वास-प्रभु स्थाने पाठाइल ॥१६७

विश्वास आसिया प्रभुर चरण वन्दिल।
कृष्ण कृष्ण कहि प्रेमे विह्वल हइल ॥१६८

धैर्य्य हैञा उड़िया कहे नमस्कार।
तोमा स्थाने पाठाइल म्लेच्छ अधिकारी ॥१६९

तुमि यदि आज्ञा देह एखाने आसिया।
यवन अधिकारी याय प्रभुके मिलिया ॥१७०

बहुत उत्कण्ठा तार करियाछे विनय।
तोमा सने एइ सन्धि नाहि युद्धभय ॥१७१

शुनि महापात्र कहे हइया विस्मय।
मद्यप यवनेर चित्त ऐछे के करय ॥१७२

आपने महाप्रभु तार मन फिराइल।
दर्शन स्मरणे यार जगत् तरिल ॥१७३

एत बलि विश्वासेरे कहिल वचन।
भाग्य तार आसि करुक प्रभुर दर्शन ॥१७४

प्रतीति करि यदि निरस्त्र हइया।
आसिवेक पाँच सात भृत्य सङ्गे लैया ॥१७५

विश्वास याइया तारे सकल कहिल।
हिन्दुवेश धरि सेइ यवन आइल ॥१७६

दूर हैते प्रभु देखि भूमेते पड़िया।
दण्डवत् करे अश्रु पुलकित हैया ॥१७७

महापात्र आनिल तारे करिया सम्मान।
योड़हाते प्रभु आगे लय कृष्णनाम ॥१७८

अधम यवनकुले केन जन्माइल।
विधि मोरे हिन्दुकुले केने ना जन्माइल ॥१७९

हिन्दु हैले पाइताम तोमार चरणसन्निधान।
व्यर्थ मोर एइ देह, याउक पराण ॥१८०

एत शुनि महापात्र आविष्ट हइया।
प्रभुके करेन स्तुति चरणे धरिया ॥१८१

चण्डाल पवित्र याँर श्रीनाम श्रवणे।

हेन तोमार एइ जीव पाइल दर्शने ॥१८२

इहार ये एइ गति कि इहा विस्मय ।
तोमार दर्शन प्रभाव एइ मत हय ॥१८३

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।३३।६)—

कपिलदेवं प्रति देवहूतिवाक्यम्—

यन्नामधेयश्रवणानुकीर्त्तनात्,
यत्प्रह्वणाद्यत्स्मरणादपि क्वचित् ।
श्वादोऽपि सद्यः सवनाय कल्पते,
कुतः पुनस्ते भगवन्नु दर्शनात् ॥३॥

टीका—हे भगवन् ! क्वचिदपि यन्नामधेय-श्रवणानुकीर्त्तनात्, यत्-प्रह्वणात् यस्य तव प्रणमनात् यत् स्मरणात्, श्वादः श्वपचोऽपि सद्यः सवनाय सोमयागाय कल्पते, नु भोः पुनः ते तव दर्शनात् कुतः ? तव दर्शनात् किं भवति तत् न वेद्मि इत्यर्थः ॥३॥

श्रीमद् भागवत के ३।३३।६ में उक्त है—

कपिल देवके प्रति देवहूति बोली थीं—

हे भगवन् ! त्वदीय नाम श्रवण, कीर्त्तन, अथवा त्वदीय स्मरण, अथवा प्रणाम करने से चण्डाल भी आशु पवित्र होकर सोमयाग कारी ब्राह्मण के समान पूज्य होता है, तब तुम्हारे दर्शन से सुतरां अनिर्वचनीय फल होता है ॥३॥

तबे महाप्रभु तारे कृपा दृष्टि करि ।
आश्वासिया कहे तुमि कह कृष्ण-हरि ॥१८४

सेइ कहे, मोरे यदि कैले अङ्गीकार ।
एक आज्ञा देह सेबा करि ये तोमार ॥१८५

गो ब्राह्मण-वैष्णव-हिंसा करेछि अपार ।
से पाप हइते मोर हउक निस्तार ॥१८६

तबे मुकुन्द दत्त कहे, शुन महाशय ।
गङ्गातीर याइते महाप्रभुर मन हय ॥१८७

ताँहा याइते कर तुमि सहाय प्रकार ।
एइ बड़ आज्ञा एइ बड़ उपकार ॥१८८

तबे सेइ महाप्रभुर चरण वन्दिया ।
सबार चरण वन्दि चले हृष्ट हैया ॥१८९

महापात्र तार सने कैल कोलाकोलि ।
अनेक सामग्री दिया करिल मिताली ॥१९०

प्रातःकाले सेइ बहु नौका साजाइया ।
प्रभुके आनिते दिल विश्वासे पाठाइया ॥१९१

महापात्र चलि आइल महाप्रभुर सने ।
म्लेच्छ आसि कैल प्रभुर चरण वन्दने ॥१९२

एक नवीन नौका, तार मध्ये एक घर ।
स्वगण चड़ाइल प्रभु ताहार उपर ॥१९३

महापात्रे महाप्रभु करिल विदाय ।
कान्दिते कान्दिते सेइ तीरे रहि चाय ॥१९४

जल दस्युभये सेइ यवन चलिल ।
दश नौका भरि सेइ सैन्य सङ्गे दिल ॥१९५

मन्त्रेश्वर दुष्ट नदे पार कराइल ।
पिछलदा पर्य्यन्त सेइ यवन आइल ॥१९६

तारे विदाय दिल प्रभु सेइ ग्राम हैते ।
से काले तार प्रेम-चेष्टा ना पारि वर्णिते ।१९७

अलौकिक लीला करे श्रीकृष्णचैतन्य ।
येइ इहा शुने तार जन्म देह धन्य ॥१९८

सेइ नौका चढ़ि प्रभु आइला पानिहाटी ।
नाविके पराइल प्रभु निज कृपा शाटी ॥१९९

प्रभु आइला बलि लोकेर हैल कोलाहल ।
मनुष्य भरिल सब किवा जल स्थल ॥२००

राघव पण्डित आसि प्रभु लञा गेला ।
पथे याइते लोक-भिड़ कष्टे सृष्टे आइला २०१

एक दिन प्रभु तथा करिया निवास ।
प्राते कुमारहट्टे आइला याँहा श्रीनिवास २०२

ताँहा हैते आगे गेला शिवानन्द-घर ।
वासुदेव-गृहे पाछे आइला ईश्वर ॥२०४
वाचस्पति-गृहे प्रभु येमत रहिला ।
लोक-भिड़भये यैछे कुलिया आइला ॥२०५
माधवदास गृहे तथा शचीर नन्दन ।
लक्ष कोटि लोक तथा पाइल दरशन ॥२०६
सात दिन रहि तथा लोक निस्तारिला ।
सब अपराधिगणे प्रकारे तारिला ॥२०७
शान्तिपुर आचार्य्येर गृहेते आइला ।
शचीमाता मिलि ताँर दुःख खण्डाइला ॥२०८
तबे रामकेलि ग्राम प्रभु यैछे गेला ।
नाटशाला हैते प्रभु पुनः फिरि आइला ॥२०९
शान्तिपुरे पुन कैल दश दिन वास ।
विस्तारि वर्णियाछेन वृन्दावन दास ॥२१०
अतएव इहा ताहा ना कैल विस्तार ।
पुनरुक्ति हय ग्रन्थ बाड़ये अपार ॥२११
तार मध्ये मिलिला यैछे रूप सनातन ।
नृसिंहानन्द कैल यैछे पथेर साजन ॥२१२
सूत्रमध्ये सेइ लीला आमिह वर्णिल ।
अतएव पुनः ताहा इँहा ना लिखिल ॥२१३
पुनरपि प्रभु यदि शान्तिपुर आइला ।
रघुनाथदास आसि प्रभुरे मिलिला ॥२१४
हिरण्य गोबर्द्धन नाम दुइ सहोदर ।
सप्तग्राम बार लक्ष मुद्रार ईश्वर ॥२१५
महैश्वर्य्ययुक्त दुँहे वदान्य ब्राह्मण्य ।
सदाचार सत्कुल धार्म्मिक-अग्रगण्य ॥२१६
नदीयावासी ब्राह्मणेर उपजीव्यप्राय ।
अर्थ भूमि ग्राम दिया करेन सहाय ॥२१७
नीलाम्बरचक्रवर्त्ती आराध्य दुँहार ।
चक्रवर्त्ती करे दुँहाय भ्रातृव्यवहार ॥२१८
मिश्रपुरन्दरेर पूर्व्वे करियाछेन सेवने ।
अतएव प्रभु भाल जाने दुइ जने ॥२१९
सेइ गोबर्द्धनेर पुत्र रघुनाथदास ।
बाल्यकाल हैते तिँह विषये उदास ॥२२०
सन्न्यास करि प्रभु यबे शान्तिपुर आइला ।
तबे आसि रघुनाथ प्रभुरे मिलिला ॥२२१
प्रभुर चरणे पड़े प्रेमाविष्ट हैया ।
प्रभुर पादस्पर्श कैल करुणा करिया ॥२२२
तार पिता सदा करे आचार्य्य सेवन ।
अतएव आचार्य्य तारे हैला प्रसन्न ॥२२३
आचार्य्य प्रसादे पाइल प्रभुर उच्छिष्ट पात ।
प्रभुर चरण देखे दिन पाँच सात ॥२२४
प्रभु ताँरे विदाय दिया गेला नीलाचल ।
तिँह घरे आसि हैल प्रेमेते पागल ॥२२५
बार बार पलाय तिँह नीलाद्रि याइते ।
पिता ताँरे बान्धि राखेन आनि पथ हैते ॥२२६
पञ्च पाइक ताँरे राखे रात्रि दिने ।
चारि सेवक दुइ ब्राह्मण रहे तार सने ॥२२७
एकादश जन ताँरे राखे निरन्तर ।
नीलाचल याइते ना पाय दुःखित अन्तर ॥२२८
एबे यदि महाप्रभु शान्ति पुर आइला ।
शुनिया पितारे रघुनाथ निवेदिला ॥२२९
आज्ञा देह याइया देखि प्रभुर चरण ।
अन्यथा ना रहे मोर शरीरे जीवन ॥२३०
शुनि ताँर पिता बहु लोक द्रव्य दिया ।
पाठाइल ताँरे शीघ्र आसिह वहिया ॥२३१

सात दिन शान्तिपुरे प्रभु सङ्गे रहे ।
रात्रि दिवसे एइ मन: कथा कहे ॥२३२
रक्षकेर हाते मुञि केमने छुटिब ।
केमने प्रभुर सङ्गे नीलाचले याब ॥२३३
सर्व्वज्ञ गौराङ्ग प्रभु जानि ताँर मन ।
शिक्षारूपे कहे ताँरे आश्वासवचन ॥२३४
स्थिर हञा घरे याह, ना हओ वातुल ।
क्रमे क्रमे पाय लोक भवसिन्धुकूल ॥२३५
मर्कट-वैराग्य ना कर लोक देखाइया ।
यथायोग्य विषय भुञ्ज अनासक्त हञा ।२३६
अन्तरनिष्ठा कर वाह्य लोकव्यवहार ।
अचिराते कृष्ण तोमाय करिवेन उद्धार २३७
वृन्दावन देखि यबे आसि नीलाचले ।
तबे तुमि आमा पाश आसिह कोन छले २३८
से छल से काले कृष्ण स्फुराबे तोमारे ।
कृष्णकृपा यारे, तारे के राखिते पारे ॥२३६
एत कहि महाप्रभु तारे विदाय दिल ।
घरे आसि प्रभुर शिक्षा तिँह आचरिल ॥२४०
वाह्य वैराग्य बातुल सकल छाड़िया ।
यथायोग्य कार्य्य करे अनासक्त हञा ॥२४१
देखि ताँर पिता माता बड़ सुख पाइल ।
तार आवरण किछु शिथिल हइल ॥२४२
इँहा प्रभु एकेक करि सब भक्तगण ।
अद्वैत नित्यानन्द यत भक्त जन ॥२४३
सबा आलिङ्गन करि कहेन गोसाञि ।
तबे आज्ञा देह आमि नीलाचले याइ ॥२४४
सबा सहित इँहा आमार हइल मिलन ।
ए वर्ष नीलाद्रि केह ना करिह गमन ॥२४५

इँहा हैते अवश्य आमि वृन्दावन याव ।
सबे आज्ञा देह तबे निर्व्विघ्ने आसिब ॥२४६
मातार चरण धरि बहु विनय कैल ।
वृन्दावन याइते ताँर आज्ञा निल ॥२४७
तबे नवद्वीपे ताँरे दिल पाठाइया ।
नीलाद्रि चलिला सङ्गे भक्तगण लञा ॥२४८
सेइ सब लोक पथे करेन सेवन ।
सुखे नीलाचल आइला शचीर नन्दन ॥२४६
प्रभु आसि जगन्नाथ दरशन कैल ।
महाप्रभु आइला ग्रामे कोलाहल हैल ॥२५०
आनन्दित भक्तगण आसिया मिलिला ।
प्रेम-आलिङ्गन प्रभु सबारे करिला ॥२५१
काशीमिश्र, रामानन्द, प्रद्युम्न, सार्व्वभौम ।
वाणीनाथ, शिखि आदि यत भक्तगण ॥२५२
गदाधर पण्डित आसि प्रभुरे मिलिला ।
सबार अग्रेते प्रभु कहिते लागिला ॥२५३
वृन्दावन याव आमि गौड़देश दिया ।
निज मातार, गङ्गार चरण देखिया ॥२५४
एइ मने करि कैल गौड़ेरे गमन ।
सहस्रेक सङ्गे हैल निज भक्तगण ॥२५५
लक्ष लक्ष लोक आइसे कौतुक देखिते ।
लोकेर संघट्टे पथ ना पारि चलिते ॥२५६
यथा रहि तथा घर प्राचीर हय चूर्ण ।
यथा नेत्र पड़े तथा लोक देखि पूर्ण ॥२५७
कष्ट सृष्ट करि गेलाम रामकेलि ग्राम ।
आमार ठाञि आइला रूप सनातन नाम २५८
दुइ भाइ भक्तराज कृष्णकृपापात्र ।
व्यवहारे राजमन्त्री, हय राजपात्र ॥२५६

विद्या-भक्ति-बुद्धि-बले परम प्रवीण ।
तबु आपनाके माने तृण हैते हीन ॥२६०
तार दैन्य देखि शुनि पाषाण विदरे ।
आमि तुष्ट हञा तबे कहिनु ताहारे ॥२६१
उत्तम हञा हीन करि मान आपनारे ।
अचिरे करिबे कृष्ण तोमार उद्धारे ॥२६२
एत कहि आमि यबे विदाय तारे दिल ।
गमनकाले सनातन प्रहेली कहिल ॥२६३
याँर सङ्गे हय एइ लोक लक्ष कोटि ।
वृन्दावन यावार एइ नहे परिपाटी ॥२६४
तबे ताहा शुनि आमि ना कैनु अवधान ।
प्राते चलि गेलाङ कानाइर नाटशाला ग्राम ॥२६५
रात्रिकाले मने आमि विचार करिल ।
सनातन मोरे किवा प्रहेली कहिल ॥२६६
भाल त कहिल मोर एत लोक सङ्गे ।
लोक देखि कहिबे मोरे "एइ एक ढङ्गे" २६७
दुर्ल्लभ दुर्गम सेइ निर्ज्जन वृन्दावन ।
एकाकी याइव किवा सङ्गे एक जन ॥२६८
माधवेन्द्रपुरी तथा गेला एकेश्वरे ।
दुग्धदान छले कृष्ण साक्षात् हैल ताँरे ।२६९
बादियार बाजि पाति चलिलाम तथारे ।
बहु सङ्गे वृन्दावन गमन ना करे ॥२७०
एकला याइए किवा सङ्गे एकजन ।
तबे से शोभये वृन्दावनेरे गमन ॥२७१
वृन्दावन याव काँहा एकाकी हइया ।
सैन्य सङ्गे चलियाछि ढाक बाजाइया ॥२७२
धिक् धिक् आमारे बलि हइलाम स्थिर ।
निवर्त्त हइया पुनः आइलाम गङ्गातीर ॥२७३
भक्तगणे राखिया आइनु स्थाने स्थाने ।
आमा सङ्गे आइल सबे पाँच छय जने ।२७४
निर्व्विघ्नेते एबे कैछे याव वृन्दावन ।
सबे मेलि युक्ति देह हइया परसन्न ॥२७५
गदाधरे छाड़ि गेनु इँहो दुःख पाइल ।
सेइ हेतु वृन्दावन याइते नारिल ॥२७६
तबे गदाधर पण्डित प्रेमाविष्ट हैञा ।
प्रभु पाद धरि कहे विनय करिञा ॥२७७
तुमि याँहा रह प्रभु ताँहा वृन्दावन ।
ताँहा यमुना गङ्गा सर्व्व तीर्थगण ॥२७८
तबु वृन्दावन याह लोक शिक्षाइते ।
सेइत करिबे तोमार येइ लय चित्ते ॥२७९
एइ आगे आइल प्रभु वर्षा चारि मास ।
एइ चारि मास कर नीलाचले बास ॥२८०
पाछे सेइ आचरिवा येइ तोमार मन ।
आपन इच्छाय चल रह के करे बारण ॥२८१
शुनि सब भक्त कहे प्रभुर चरणे ।
सबाकार इच्छा पण्डित कैल निवेदने ॥२८२
सबार इच्छाय प्रभु चारि मास रहिला ।
शुनिया प्रतापरुद्र आनन्दित हैला ॥२८३
सेइ दिन गदाधर कैल निमन्त्रण ।
ताँहा भिक्षा कैल प्रभु लञा भक्तगण ॥२८४
भिक्षाते पण्डितेर स्नेह, प्रभुर आस्वादन ।
मनुष्येर शक्त्ये दुइ ना याय वर्णन ॥२८५
एइमत गौरलीला अनन्त अपार ।
संक्षेपे कहिये, कथन ना याय विस्तार २८६
सहस्र वदने कहे आपने अनन्त ।

तबु एक लीलार तिँह नाहि पाय अन्त ॥२८७
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे-यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२८८

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे
पुनर्गौड़गमनविलासो नाम षोड़शः
परिच्छेदः ॥१६॥



❀ सप्तदश परिच्छेद ❀

गच्छन् वृन्दावनं गौरो व्याघ्रेभैणखगान् वने ।
प्रेमोन्मत्तान् सहोन्नृत्यान् विदधे कृष्णजल्पिनः ॥१

टीका—गौरः वृन्दावनं गच्छन् सन् वने वनमार्गे व्याघ्रेभैणखगान् व्याघ्र-गज-मृग-पक्षिणः प्रेमोन्मत्तान् तथा कृष्णजल्पिनः विदधे कृतवान् । व्याघ्रेभैणखगान् कीदृशान्?—सह उन्नृत्यान् प्रभुणा सह नृत्यरतान् ॥१

श्रीगौरचन्द्र, वृन्दावन, गमन करते करते व्याघ्र, गज, मृग एवं विहग वृन्द को कृष्ण नाम ग्रहण कराकर प्रेममग्न किये थे। वे सब प्रेमोन्मत्त होकर प्रभु के सहित नृत्य करने लगे थे ॥१॥

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्त वृन्द ॥१
शरतकाल हैल प्रभुर चलिते हैल मति ।
रामानन्द, स्वरूप सङ्गे निभृते युकति ॥२
मोर सहाय कर यदि तुमि दुइ जन ।
तबे आमि याइ देखि श्रीवृन्दावन ॥३
रात्रे उठि वनपथे पलाइया याब ।
एकाकी याइब काहो सङ्गे ना लइब ॥४
केह यदि सङ्ग लैते पाछे उठि धाय ।
सबाके राखिबे येन केह नाहि याय ॥५
प्रसन्न हैञा आज्ञा दिबा ना मानिबा दुःख ।
तोमा सबार सुखे पथे हवे मोर सुख ॥६
दुइजन कहे तुमि ईश्वर स्वतन्त्र ।
येइ इच्छा सेइ करिबा नह परतन्त्र ॥७
किन्तु आमा दुँहार शुन एक निबेदने ।
तोमार सुखे आमार सुख कहिले आपने ॥८
आमा दँहार मने तबे बड़ सुख हय ।
एक निवेदन यदि धर दयामय ॥९
उत्तम ब्राह्मण एक सङ्गे अवश्य चाहि ।
भिक्षा करि भिक्षा दिबे याबे पात्र वहि ॥१०
बनपथे याइते नाहि भोज्यान्न ब्राह्मण ।
आज्ञा कर सङ्गे चले विप्र एक जन ॥११
प्रभु कहे, निज सङ्गी काहो ना लइब ।
एक जने निले आनेर मने दुःख हैब ॥१२
नूतन सङ्गी हैबे स्निग्ध यार मन ।
ऐछे यबे पाइ तबे लइए एक जन ॥१३
स्वरूप कहे, एइ बलभद्र भट्टाचार्य्य ।
तोमाते सुस्निग्ध बड़ पण्डित साधु आर्य्य ॥१४
प्रथमेइ तोमा सङ्गे आइला गौड़ हैते ।
इहार इच्छा आछे सर्व्व तीर्थ करिते ॥१५
इँहार सङ्गे आछे विप्र एक भृत्य ।
इँहो पथे करिबेन सेबा भिक्षाकृत्य ॥१६
इहा सङ्गे लह यदि, सबार हय सुख ।
बनपथे याइते तोमार नहे कोन दुःख ॥१७
एइ विप्र वहि निबे वस्त्राम्बु-भाजन ।
भट्टाचार्य्य भिक्षा दिबे करि भिक्षाटन ॥१८
ताहार वचन प्रभु अङ्गीकार कैल ।
बलभद्र भट्टाचार्य्ये सङ्गे करि निल ॥१९

पूर्व्वरात्रे जगन्नाथ देखि आज्ञा लञा ।
शेष रात्रे उठि प्रभु चलिला लुकाइया ॥२०
प्रातःकाले भक्तगण प्रभु ना देखिया ।
अन्वेषण करि फिरे व्याकुल हइया ॥२१
स्वरूप गोसाञि सबाय कैल निवारण ।
निवृत्त हइ रहे सबे जानि प्रभुर मन ॥२२
प्रसिद्ध पथ छाड़ि प्रभु उपपथे चलिला ।
कटक डाहिने करि वने प्रवेशिला ॥२३
निर्ज्जन वने चलेन प्रभु कृष्णनाम लञा ।
हस्ती व्याघ्र पथ छाड़े प्रभुके देखिया ॥२४
पाले पाले व्याघ्र हस्ती गण्डार शूकरगण ।
तार मध्ये आवेशे प्रभु कहेन गमन ॥२५
देखि भट्टाचार्य्येर मने हय महाभय ।
प्रभुर प्रतापे तारा एक पाश हय ॥२६
एक दिन पथे व्याघ्र करियाछे शयन ।
आवेशे तार गाये प्रभुर लागिल चरण ॥२७
प्रभु कहे, कह कृष्ण, व्याघ्र उठिल ।
कृष्ण कृष्ण कहि व्याघ्र नाचिते लागिल ॥२८
आर दिने वने प्रभु करे नदीस्नान ।
मत्त हस्तियूथ आइल करिते जलपान ॥२९
प्रभु जलकृत्य करेन आगे हस्ती आइल ।
कृष्ण कह बलि प्रभु जल फेलि माइल ॥३०
सेइ जलबिन्दुकण लागे यार गाय ।
सेइ कृष्ण कृष्ण कहे, प्रेमे नाचे गाय ॥३१
केह भूमे पड़े, केह करये चीनकार ।
देखि भट्टाचार्य्येर मने हय चमत्कार ॥३२
पथे याइते करे प्रभु उच्च संकीर्त्तन ।
मधुर कण्ठध्वनि शुनि आइसे मृगीगण ॥३३

डाइने बामे ध्वनि शुनि याय प्रभु सङ्ग ।
प्रभु तार अङ्ग मुछे, श्लोक पड़े रङ्गे ॥३४

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२१।११)—

वेणुगीतं श्रुत्वा गोपीवाक्यम्—

धन्याः स्म मूढ़गतयोऽपि हरिण्य एता
या नन्दनन्दनमुपात्तविचित्रवेशम् ।
आकर्ण्य वेणुरणितं सह कृष्णसाराः
पूजां दधुर्व्विरचितां प्रणयावलोकैः ॥२॥

टीका—हे सखि ! मूढ़मतयोऽपि विवेकरहिता अज्ञाना अपि तिर्य्यग्जातयः एता हरिण्यः धन्याः स्म । याः वेणुरणितं वेणुशब्दं आकर्ण्य सहकृष्णसाराः उपात्तविचित्रवेशं गृहीताद्भुतवेशं नन्दनन्दनं प्रति प्रणयावलोकैः विरचितां पूजां दधुः कृतवत्यः ॥२॥

श्रीमद्भागवत के १०।२१।११ में उक्त है- हे सखि ! ये सब वन चारिणी हरिणी वृन्द तिर्य्यग् जाति के होने पर भी धन्य हैं, कारण-वेणु णाद सुनकर ये निज पति कृष्ण सारवृन्द के सहित विचित्र वेश धारी कृष्ण के प्रति प्रणय दर्शन द्वारा सम्मान प्रदान करती रहती हैं ॥२॥

हेन काले व्याघ्र तथा आइल पाँच सात ।
व्याघ्र मृगी मिलि चले महाप्रभुर साथ ॥३५
देखि महाप्रभुर वृन्दावनस्मृति हैल ।
वृन्दावनगुणवर्णन श्लोक पड़िल ॥३६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१३।६०)

परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्—

यत्र नैसर्गदुर्व्वैराः सहासन्नृमृगादयः ।
मित्राणीवाजितावासद्रुतरुट्तर्षणादिके ॥३॥

टीका—यत्र वृन्दावने नैसर्गदुर्व्वैराः स्वभाववैरवन्तः नृ- मृगादयः मित्राणि इव सह एकत्र आसन् । वृन्दावने किम्भूते ?—अजितावासद्रुतरुट्तर्षणादिके ॥३॥

श्रीमद् भागवत के १०।१३।६० में लिखित है-
श्रीशुक परीक्षित को कहे थे--

वृन्दावन श्रीकृष्ण का नित्य निवास स्थल है। इस हेतु लोभ, रोष, प्रभृति वहाँ से अपसृत हुये हैं, एवं मनुष्य एवं सिंहादि जीवगण परस्पर के प्रति स्वत: सिद्ध शत्रु भाव को छोड़कर मित्र भाव से निवास करते रहते हैं ॥३॥

कृष्ण कृष्ण कह करि प्रभु यबे कैल।
कृष्ण कहि व्याघ्र मृग नाचिते लागिल ॥३७
नाचे कान्दे व्याघ्रगण मृगीगण सङ्गे।
बलभद्र भट्टाचार्य्य देखे अपूर्व्व रङ्गे ॥३८
व्याघ्र मृग अन्योन्ये करे आलिङ्गन।
मुखे मुख दिया करे अन्योन्ये चुम्बन ॥३९
कौतुक देखिया प्रभु हासिते लागिला।
ता सबाके ताँहा छाड़ि आगे चलि गेला ॥४०
मयूरादि पक्षिगण प्रभुके देखिया।
सङ्गे चले, कृष्ण बले नाचे मत्त हआ ॥४१
हरिबोल बलि प्रभु करे उच्चध्वनि।
वृक्षलता प्रफुल्लित सेइ ध्वनि शुनि ॥४२
झारिखण्डे स्थाबर जङ्गम आछे यत।
कृष्ण नाम दिया कैल प्रेमेते उन्मत्त ॥४३
येइ ग्राम दिया यान याँहा करेन स्थिति।
से सब ग्रामेर लोकेर हय कृष्णभक्ति ॥४४
केह यदि तार मुखे शुने कृष्ण नाम।
तार मुखे आन शुने, तार मुखे आन ॥४५
सबे कृष्ण-हरि बलि नाचे कान्दे हासे।
परम्परा सम्बन्धे वैष्णव हैल सर्व्व देशे ॥४६
यद्यपि प्रभु लोकसंघट्टेर त्रासे।
प्रेम गुप्त करे, बाहिरे ना करे प्रकाशे ॥४७
तथापि ताँर दर्शन-श्रवण-प्रभाबे।
सकल देशेर लोक हइल वैष्णबे ॥४८
गौड़ बङ्ग उत्कल दक्षिण देशे गिया।
लोक निस्तार कैल आपने भ्रमिया ॥४९
मथुरा यावार छले आसि झाड़िखण्ड।
भिल्लप्राय लोक ताँहा परम पाषण्ड ॥५०
नाम प्रेम दिया कैल सबार निस्तार।
चैतन्येर गूढ़ लीला बुझिते शक्ति कार ॥५१
बन देखि भ्रम हय एइ वृन्दावन।
शैल देखि मने हय सेइ गोबर्द्धन ॥५२
याँहा नदी देखे ताँहा मानये कालिन्दी।
महा प्रेमावेशे नाचे प्रभु पड़े कान्दि ॥५३
पथे याइते भट्टाचार्य्य शाक मूल फल।
याँहा येइ पायेन ता। लयेन सकल ॥५४
ये ग्रामे रहेन प्रभु तथाय ब्राह्मण।
पाँच सात जन आसि करे निमन्त्रण ॥५५
केह अन्न आनि देय भट्टाचार्य्यस्थाने।
केह दुग्ध दधि, केह घृत खण्ड आने ॥५६
याँहा विप्र नाहि ताँहा शूद्र महाजन।
आसि सबे भट्टाचार्य्ये करे निमन्त्रण ॥५७
भट्टाचार्य्य पाक करे बन्य व्यञ्जन।
वन्य व्यञ्जने प्रभुर आनन्दित मन ॥५८
दुइ चारि दिनेर अन्न राखेन संहति।
याँहा शून्य बन लोकेर नाहिक बसति ॥५९
ताँहा सेइ अन्न भट्टाचार्य्य करेन पाक।
फलमूले व्यञ्जन करेन वन्य नाना शाक ॥६०
परम सन्तोष प्रभुर बन्य भोजने।
महासुख पान ये दिन रहेन निर्ज्जने ॥६१
भट्टाचार्य्य सेबा करे स्नेहे यैछे दास।
ताँर प्रिय बहे जलपात्र वहिर्व्वास ॥६२

निर्भ्भरेर उष्णोदके स्नान तिन बार ।
दुइ सन्ध्या अग्नितापे काष्ठ अपार ॥६३
निरन्तर प्रेमावेशे निर्ज्जने गमन ।
सुख अनुभवि प्रभु कहेन वचन ॥६४
शुन भट्टाचार्य्य आमि गेलाम बहु देश ।
बनपथे दुःखेर काँहा नाहि पाइ लेश ॥६५
कृष्ण कृपालु आमाय बहु कृपा कैल ।
बनपथे आनि आमाय बड़ सुख दिल ॥६६
पूर्व्वे वृन्दावन याइते करिलाम विचार ।
माता, गङ्गा, भक्तगण देखिब एकबार ॥६७
भक्तगण सङ्गे अवश्य करिब मिलन ।
भक्तगण सङ्गे लये याब वृन्दावन ॥६८
एत भावि गौड़देशे करिनु गमन ।
माता, गङ्गा, भक्त देखि सुखी हैल मन ॥६९
भक्तगण लञा तबे चलिलाम रङ्गे ।
लक्षकोटि लोक ताँहा हैल आमा सङ्गे ॥७०
सनातन मुखे कृष्ण आमा शिक्षाइला ।
ताँहा विघ्न करि बनपथे लञा आइला ॥७१
कृपार समुद्र, दीन हीने दयामय ।
कृष्णकृपा विना कोन सुख नाहि हय ॥७२
भट्टाचार्य्ये आलिङ्गिया ताँहारे कहिल ।
"तोमार प्रसादे आमि एत सुख पाइल ॥"७३
तिँह कहे, "तुमि कृष्ण, तुमि दयामय ।
अधम जीव मुञि, मोरे हइला सदय ॥७४
मुञि छार, मोरे तुमि सङ्गे लञा आइला ।
कृपा करि मोर हाते प्रभु भिक्षा कैला ॥७५
अधम काकेरे कैले गरुड़समान ।
स्वतन्त्र ईश्वर तुमि स्वयं भगवान् ॥"७६

तथाहि भावार्थदीपिकायां श्रीमद्भागवतस्य प्रथम
श्लोक--व्याख्यारम्भे
श्रीधरस्वामिवाक्यम्---

मूकं करोति वाचालं पङ्गुं लङ्घयते गिरिम्।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दमाधवम् ॥४॥

टीका—यत्-कृपा मूकं वाक् शक्ति शून्यं वाचालं करोति, पङ्गुं गतिशक्तिविहीन जनं गिरिं लङ्घयते, तं परमानन्दमाधवं अहं वन्दे ॥४॥

जिनकी कृपा से वाक् शक्ति हीन व्यक्ति भी वक्ता होता है एवं पङ्गु व्यक्ति भी पर्वत लङ्घन करने में सक्षम होता है. मैं उन सच्चिदानन्द माधव की वन्दना करता हूँ ॥४॥

एइमत बलभद्र करेन स्तवन ।
प्रेमे सेवा करि तुष्ट कैल प्रभुर मन ॥७७
एइमत नाना सुखे प्रभु आइला काशी ।
मध्याह्न स्नान कैल मणिकर्णिकाते आसि ७८
सेइ काले तपनमिश्र करे गङ्गास्नान ।
प्रभु देखि हैल ताँर किछु विस्मय ज्ञान ॥७९
पूर्व्वे शुनियाछि प्रभु करियाछेन सन्न्यास ।
निश्चय करिले हय हृदये उल्लास ॥८०
प्रभुर चरण धरि करेन रोदन ।
प्रभु ताँरे उठाइया कैल आलिङ्गन ॥८१
प्रभु लञा गेला विश्वेश्वर दरशने ।
तबे आसि देखे बिन्दुमाधवचरणे ॥८२
घरे लञा आइला प्रभुके, आनन्दित हैञा ।
सेबा करि नृत्य करे वस्त्र उड़ाइया ॥८३
प्रभुर चरणोदक सवंशे करिल पान ।
भट्टाचार्य्येर पूजा कैल करिया सम्मान ॥८४
प्रभुर निमन्त्रण करि घरे भिक्षा दिल ।
बलभद्र भट्टाचार्य्ये पाक कराइल ॥८५

भिक्षा करि महाप्रभु करिला शयन ।
मिश्रपुत्र रघु करे पादसम्बाहन ॥८६
प्रभुर शेषान्न मिश्र सवंशे खाइला ।
प्रभु आइला शुनि चन्द्रशेखर आइला ॥८७
मिश्रेर सखा तिँह प्रभुर पूर्व्वदास ।
वैद्यजाति लिखनवृत्ति वाराणसीवास ॥८८
आसि प्रभुर पदे पड़ि करेन रोदन ।
कृपाय उठि प्रभु ताँरे कैल आलिङ्गन ॥८९
चन्द्रशेखर कहे, प्रभु बड़ कृपा कैला ।
आपने आसिया भृत्ये दरशन दिला ॥९०
आपन प्रारब्धे बसि बाराणसीस्थाने ।
माया-ब्रह्म शब्द विना नाहि शुनि काने ॥९१
षड़्दर्शनव्याख्या विना कथा नाहि एथा ।
मिश्र कृपा करि मोरे शुनान कृष्णकथा ॥९२
निरन्तर दुँहे चिन्ति तोमार चरण ।
सर्व्वज्ञ ईश्वर तुमि दिला दरशन ॥९३
शुनि महाप्रभु याबेन श्रीवृन्दावन ।
दिन कत रहि ताँर भृत्य दुइ जन ॥९४
मिश्र कहे, प्रभु यावत् काशीते रहिबा ।
मोर निमन्त्रण विना अन्य ना मानिबा ॥९५
एइमत महाप्रभु दुइ भृत्येर बशे ।
इच्छा नाहि तबु तथा रहिल दिन दशे ॥९६
महाराष्ट्री विप्र आसे प्रभु देखिबारे ।
प्रभुर रूप प्रेम देखि हय चमत्कारे ॥९७
विप्र सब निमन्त्रण, प्रभु नाहि माने ।
प्रभु कहे आजि मोर हयेछे निमन्त्रणे ॥९८
एइमत प्रति दिन करेन वञ्चन ।
सन्नचासीर सङ्ग भये ना माने निमन्त्रण ॥९९

प्रकाशानन्द श्रीपाद सभाते बसिया ।
वेदान्त पड़ान बहु शिष्यगण लञा ॥१००
एक विप्र देखि आइला प्रभुर व्यवहार ।
प्रकाशानन्द आगे कहे चरित्र ताँहार ॥१०१
एक सन्नचासी आइला जगन्नाथ हैते ।
ताँहार महिमा प्रताप ना पारि वर्णिते ॥१०२
प्रकाण्ड शरीर, शुद्ध काञ्चनवरण ।
आजानुलम्बित भुज, कमलनयन ॥१०३
यत किछु ईश्वरेर सर्व्व सल्लक्षण ।
सकल देखिये ताँते अद्भुत कथन ॥१०४
ताँहा देखि ज्ञान हये एइ नारायण ।
येइ ताँरे देखे करे कृष्णसंकीर्त्तन ॥१०५
महाभागवत लक्षण शुनि भागवते ।
से सब लक्षण प्रकट देखिये ताँहाते ॥१०६
निरन्तर कृष्णनाम जिह्वा ताँर गाय ।
दुइ नेत्रे अश्रु वहे गङ्गाधाराप्राय ॥१०७
क्षणे नाचे हासे गाय करये क्रन्दन ।
क्षणे हुहुङ्कार करे सिंहेर गर्ज्जन ॥१०८
जगतमङ्गल ताँर कृष्णचैतन्यनाम ।
नाम रूप गुण ताँर सब अनुपाम ॥१०९
देखिले से जानि ताँरे ईश्वरेर रीति ।
अलौकिक कथा शुनि के करे प्रतीति ॥११०
शुनिया प्रकाशानन्द बहुत हासिला ।
विप्रे उपहास करि कहिते लागिला ॥१११
शुनियाछि गौड़देशे सन्नचासी भावुक ।
केशवभारती शिष्य लोक प्रतारक ॥११२
चैतन्य नाम तार भावुक गण लञा ।
देशे देशे ग्रामे बुले नाचिञा गाहिञा ॥११३

येइ ताँरे देखे सेइ ईश्वर करि कहे ।
ऐछे मोहनविद्या ये देखे से मोहे ॥११४

सार्व्वभौम भट्टाचार्य्य पण्डित प्रबल ।
शुनि चैतन्येर सङ्गे हइल पागल ॥११५

सन्नयासी नाममात्र, महा इन्द्रजाली ।
काशीपुरे ना विकाबे तार भावकाली ॥११६

वेदान्त श्रवण कर, ना याइह तार पाश ।
उच्छृङ्खल लोक सङ्गे दुइ लोकनाश ११७

एत शुनि सेइ विप्र महादुःख पाइल ।
कृष्ण कृष्ण कहि तथा हैते उठि गेल ॥११८

प्रभुर दर्शने शुद्ध हञाछे तार मन ।
प्रभु आगे दुःखी हञा कहे विवरण ॥११९

शुनि महाप्रभु तबे ईषत् हासिला ।
पुनरपि सेइ विप्र प्रभुरे पुछिला ॥१२०

तार आगे यबे आमि तोमार नाम लैल ।
सेहो तोमार नाम जाने आपने कहिल ॥१२१

तोमार दोष कहिते करे नामेर उच्चार ।
चैतन्य चैतन्य करि कहे तिनबार ॥१२२

तिनबारे कृष्णनाम ना आइल तार मुखे ।
अवज्ञाते नाम लय शुनि पाइ दुःखे ॥१२३

इहार कारण मोरे कह कृपा करि ।
तोमा देखि मुख मोर बले कृष्ण-हरि ॥१२४

प्रभु कहे, मायावादी कृष्ण-अपराधी ।
ब्रह्म आत्मा चैतन्य कहे निरबधि ॥१२५

अतएव तार मुखे ना आइसे कृष्णनाम ।
कृष्णनाम कृष्णस्वरूप दुइत समान ॥१२६

नाम विग्रह स्वरूप तिन एकरूप ।
तिने भेद नाहि, तिन चिदानन्दरूप ॥१२७

देह देहीर नाम नामीर कृष्णे नाहि भेद ।
जीवेर धर्म्म, नाम, देह, स्वरूप, विभेद ॥१२८

तथाहि हरिभक्तिविलासस्यैकादशविलासे
विष्णुधर्म्मोत्तरवचनम्—

नामचिन्तामणिः कृष्णश्चैतन्यो रसविग्रहः ।
पूर्णः शुद्धो नित्यमुक्तोऽभिन्नात्मा नामनामिनोः ॥५

टीका—कृष्णः नामचिन्तामणिः स्यात् स एव चैतन्यः, स एव रसविग्रह, पूर्णः, शुद्धः तथा नित्यं नामनामिनोः अभिन्नात्मा उक्तः ॥५॥

नाम चिन्तामणि ही कृष्ण हैं नाम एवं नामी कोई भेद नहीं है, दोनों उभय ही एक ही है, कृष्ण एवं कृष्ण नाम अभिन्न है, उभय ही चिन्तामणि के समान समस्त अभीष्ट प्रदान करते हैं, उभय ही पूर्ण, शुद्ध, सर्वदा मुक्त अर्थात् माया अथवा अज्ञान स्पर्श शून्य हैं, एवं उभय ही आनन्द--तथा चैतन्य स्वरूप हैं ॥५॥

अतएव कृष्णेर नाम देह, विलास ।
प्राकृतेन्द्रियग्राह्य नहे हय स्वप्रकाश ॥१२९

कृष्णनाम कृष्णगुण कृष्णलीलावृन्द ।
कृष्णेर स्वरूप सम सब चिदानन्द ॥१३०

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे साधन-
भक्तिलहर्य्यां षड़शीतितमश्लोके--

श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्-

अतः श्रीकृष्णनामादि न भवेद् ग्राह्यमिन्द्रियैः ।
सेवोन्मुखे हि जिह्वादौ स्वयमेव स्फुरत्यदः ॥६॥

टीका— अतः अतएव श्रीकृष्णनामादि इन्द्रियैः ग्राह्यं न भवेत् । सेवोन्मुखे जिह्वादौ अदः स्वयमेव हि निश्चितं स्फुरति ॥६॥

सुतरां श्रीकृष्णनामादि इन्द्रिय के अगोचर हैं, भजनोन्मुख पुरुष की रसना के अग्रभाग में स्वतः ही स्फुरित होते हैं ॥६॥

ब्रह्मानन्द हैते पूर्णानन्द लीलारस ।
ब्रह्मज्ञानी आकर्षिया करे आत्मवश ॥१३१

तथाहि श्रीमद्भागवते (१२।१२।६९)—

शौनकादीन् प्रति सूतवाक्यम्—

स्वसुखनिभृतचेतास्तद्व्युदस्तान्यभावो-
ऽप्यजितरुचिरलीलाकृष्टसारस्तदीयम् ।
व्यतनुत कृपया यस्तत्त्वदीपं पुराणं,
तमखिलवृजिनघ्नं व्याससूनुं नतोऽस्मि ॥७॥

टीका—स्वसुखनिभृतचेताः निजसुखेनैव पूर्णचेताः तद्व्युदस्तान्यभावः तेनैव चेतसा त्यक्तविषयभाव अपि अजितरुचिरलीलाकृष्टसारः तदीयं तत्त्वदीपं परमार्थबोधकं पुराणं यः शुकदेवः व्यतनुत प्रकाशितवान् । तं अखिलवृजिनघ्नं समस्तपातकहारकं व्याससूनुं व्यासनन्दनं नतोऽस्मि ॥७॥

श्रीमद् भागवत के १२।१२।६९ में उक्त है—
व्यास पुत्र शुकदेव को मैं प्रणाम करता हूँ । जिन्होंने जगत् के पापनाश किया है, अर्थात् ईश्वर विमुखता का निरसन किया है, उनका मन-ब्रह्मानन्द में निमग्न है, अर्थात् ब्रह्मानन्द पूर्ण है, उस मन में अन्य वस्तु का स्थान नहीं है, तथापि श्रीकृष्ण के मनोहर लीला श्रवण में उत्सुक हुये थे । अतएव जन साधारण में श्रीमद् भागवत का प्रकाश कृपा पूर्वक आप किये थे, श्रीमद्भागवत में ही परमतत्त्व प्रकाशित हुआ है ॥७

ब्रह्मानन्द हैते पूर्णानन्द कृष्णगुण ।
अतएव आकर्षये आत्मारामेर मन ॥१३२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।७।१०)—

आत्मारामाश्च मुनयो निर्ग्रन्था अप्युरुक्रमे ।
कुर्व्वन्त्यहैतुकीं भक्ति-मित्थम्भूतगुणो हरिः ॥८॥

श्रीमद्भागवत के १-७-१० में लिखित है-
अहङ्कार ग्रन्थि विमुक्त आत्माराम मुनिवृन्द भी उरुक्रम हरि के प्रति अहैतुकी भक्ति करते रहते हैं, कारण श्रीहरि आत्माराम गणाकर्षिगुण सम्पन्न हैं ।८

इँहो सब रहु कृष्णचरण सम्बन्धे ।
आत्मारामेर मन हरे तुलसीर गन्धे ॥१३३

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।१५।४३)—

कुमारादीन् प्रति ब्रह्मवाक्यम्—

तस्यारविन्दनयनस्य पदारविन्द-
किञ्जल्कमिश्रतुलसीमकरन्दवायुः ।
अन्तर्गतः स्वविवरेण चकार तेषां,
संक्षोभमक्षरजुषामपि चित्ततन्वोः ॥९॥

टीका—तस्य अरविन्दनयनस्य पद्मपलाशलोचनस्य भगवतः पदारविन्दकिञ्जल्कमिश्रतुलसीमकरन्दवायुः पदारविन्दयोः पादकमलयोः किञ्जल्कैः केशरैः मिश्रा या तुलसी तस्याः मकरन्देन युक्तो वायुः स्वविवरेण नासारन्ध्रेण अन्तर्गतः सन् अक्षरजुषामपि ब्रह्मानन्दसेविनामपि तेषां मुनीनां चित्ततन्वोः संक्षोभं चकार ॥९॥

श्रीमद् भागवत के ३।१५।४३ में उक्त है—
सनकादि मुनि वृन्द ब्रह्मानन्द में निमग्न होने पर भी कमल नयन भगवान के चरण कमल के केशर मिश्रित तुलसी के मकरन्द वाही अनिल नासा विवर में प्रविष्ट होने से उन सब के हृदय में आनन्द सञ्चार हुआ एवं शरीर में पुलकोद्गम हुआ ॥९॥

अतएव कृष्णनाम ना आइसे तार मुखे ।
मायावादिगण याते महा वहिर्म्मुखे ॥१३४
भावकालि वेचिते आमि आइलाम काशीपुरे।
ग्राहक नाहि ना बिकाय लैञा याब घरे ।१३५
भारि बोझा लञा आइलाम केमने लैञा याब
अल्प स्वल्प मूल्य पाइले एथाइ वेचिब ॥१३६
एत बलि सेइ विप्रे आत्मसात् करि ।
प्राते उठि मथुराय चलिला गौरहरि ॥१३७
सेइ तिन सङ्गे चले, प्रभु निषेधिला ।
दूर हैते तिन जने घरे पाठाइला ॥१३८

प्रभुर विरहे तिने एकत्र मिलिया ।
प्रभुगुण गान करे प्रेमे मत्त हञा ॥१३९
प्रयाग आसिया प्रभु कैल वेणीस्नान ।
माधव देखिया प्रेमे कैल नृत्य गान ॥१४०
यमुना देखिया प्रेमे पड़े झाँप दिया ।
आस्ते आस्ते भट्टाचार्य्य उठाय धरिया ॥१४१
एइमत तिन दिन प्रयागे रहिला ।
कृष्णनाम प्रेम दिया लोक निस्तारिला १४२
मथुरा चलिते प्रेमे यथा रहि याय ।
कृष्णनाम प्रेम दिया लोकेरे नाचाय ॥१४३
पूर्व्वे येमन दक्षिण याइते लोक निस्तारिल ।
पश्चिम देश तैछे सब वैष्णव करिल ॥१४४
पथे याँहा याँहा हय यमुनादर्शन ।
ताँहा झाँप दिया पड़े प्रेमे अचेतन ॥१४५
मथुरा निकटे आइला मथुरा देखिया ।
दण्डवत् हञा पड़े प्रेमाविष्ट हञा ॥१४६
मथुरा आसिया कैल विश्रामतीर्थे स्नान ।
जन्मस्थाने केशव देखि करिल प्रणाम ॥१४७
प्रेमानन्दे नाचे गाय सघने हुङ्कार ।
प्रभुर प्रेमावेश देखि लोके चमत्कार ॥१४८
एक विप्र पड़े प्रभुर चरण धरिया ।
प्रभु सङ्गे नृत्य करे प्रेमाविष्ट हैञा ॥१४९
दुँहे प्रेमे नृत्य करि करे कोलाकुलि ।
हरि कृष्ण कह बल दुँहे बाहु तुलि ॥१५०
लोक हरि हरि बोले, कोलाहल हैल ।
केशव सेवक प्रभुके माला पराइल ॥१५१
लोके कहे प्रभु देखि हइया विस्मय ।
ए रूप ए प्रेम लौकिक कभु नय ॥१५२

याँहार दर्शने लोक प्रेमे मत्त हञा ।
हासे कान्दे नाचे गाय कृष्णनाम लञा ॥१५३
सर्व्वथा निश्चित इँहो कृष्ण-अवतार ।
मथुरा आइला लोकेर करिते निस्तार ॥१५४
तबे महाप्रभु सेइ ब्राह्मण लइया ।
ताँहारे पुछिला किछु निभृते बसिया ॥१५५
आर्य्य सरल तुमि वृद्ध ब्राह्मण ।
काँहा हैते पाइले तुमि एइ प्रेमधन ॥१५६
विप्र कहे, श्रीपाद श्रीमाधवेन्द्रपुरी ।
भ्रमिते भ्रमिते आइला मथुरा नगरी ॥१५७
कृपा करि तिँह मोर निलये आइला ।
मोरे शिष्य करि मोर हाते भिक्षा कैला ॥१५८
गोपाल प्रकट करि सेबा कैल महाशय ।
अद्यापिह ताँर सेबा गोबर्द्धने हय ॥१५९
शुनि प्रभु कैल ताँर चरण वन्दन ।
भय पाञा प्रभु पाय पड़िल ब्राह्मण ॥१६०
प्रभु कहे, तुमि गुरु आमि शिष्य-प्राय ।
गुरु हञा शिष्ये नमस्कार ना युयाय ॥१६१
शुनिया विस्मित विप्र कहे भय पाञा ।
ऐछे बात कह केन सन्न्यासी हइया ॥१६२
किन्तु तोमार प्रेम देखि मने अनुमानि ।
माधवेन्द्रपुरीर सम्बन्ध धर जानि ॥१६३
कृष्णप्रेम ताँहा याँहा ताँहार सम्बन्ध ।
ताँहा बिना एइ प्रेमेर काँहा नाहि गन्ध ॥१६४
तबे भट्टाचार्य्य तारे सम्बन्ध कहिल ।
शुनि आनन्दित विप्र नाचिते लागिल ॥१६५
तबे विप्र प्रभु लञा आइल निज घरे ।
आपन इच्छाय प्रभु नाना सेबा करे ॥१६६

भिक्षा लागि भट्टाचार्य्य कराइल रन्धन ।
तवे महाप्रभु हासि बलिला वचन ॥१६७
पुरीगोसाञि तोमार घरे करियाछेन भिक्षा ।
मोरे तुमि भिक्षा देह एइ मोर शिक्षा ॥१६८

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (३।२१)--
अर्ज्जुनं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः ।
स यत् प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्त्तते ॥१०॥

श्रीमद् भगवद् गीता में श्रीकृष्ण अर्जुन को कहे थे--श्रेष्ठ व्यक्ति गण जिस प्रकार आचरण करते हैं, अपर व्यक्तिगण उसी प्रकार आचरण अनुकरण से करते हैं। श्रेष्ठ व्यक्ति गण जिसको प्रमाणित करते हैं, उसी का अनुवर्त्तन लोक करते रहते हैं ॥१०॥

यद्यपि सनोड़िया हय सेइत ब्राह्मण ।
सनोड़िया घरे सन्नचासी ना करे भोजन १६९
तथापि पुरी देखि ताँर वैष्णव आचार ।
शिष्य करि ताँर भिक्षा कैल अङ्गीकार १७०
महाप्रभु ताँरे यदि भिक्षा मागिल ।
दैन्य करि सेइ विप्र कहिते लागिल ॥१७१
तोमारे भिक्षा दिव बड़ भाग्य आमार ।
तुमि ईश्वर, नाहि तोमार विधि व्यवहार १७२
मूर्खलोक करिबेक तोमार निन्दन ।
सहिते ना पारिब सेइ दुष्टेर वचन ॥१७३
प्रभु कहे, श्रुति स्मृति यत ऋषिगण ।
सब एकमत नहे भिन्न भिन्न क्रम ॥१७४
धर्म्मस्थापन हेतु साधु व्यवहार ।
पुरीगोसाञिर आचरण सेइ धर्म्मसार ॥१७५

तथाहि एकादशीतत्त्वे दशमीविद्धैकादशीप्रकरणे
धृतहिमाद्रिनिबन्धीयव्यासवचनम्—

तर्कोऽप्रतिष्ठः श्रुतयो विभिन्ना,
नासावृषिर्यस्य मतं न भिन्नम् ।
धर्म्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां
महाजनो येन गतः स पन्थाः ॥११॥

टीका—तर्कः अप्रतिष्ठः कर्त्तव्याकर्त्तव्यनिरूपणे अक्षमः केवलं वादानुवादरूपः, श्रुतयः वेदादयः विभिन्नाः, असौ ऋषिः न स्यात्, यस्य मतं न भिन्नं धर्म्मस्य तत्त्वं गुहायां कन्दरे निहित, अतएव येन पथा महाजनः गतः, स एव पन्थाः आश्रयणीयः ॥११॥

मानव मति प्रभव तर्क युक्ति के द्वारा कर्त्तव्य निरूपित नही होता है, वेद भी विभिन्न प्रकार हैं, इस प्रकार मुनि विरल हैं, जिनकी विचार धारा पृथक् नहीं है। कर्म का यथार्थ स्वरूप अति गुप्त कन्दरा में निहित है। सुतरां शास्त्रज्ञ, अनुभवी एवं आचरण शील व्यक्ति गण जिस प्रकार आचरण किये हैं, उस पथ को अवलम्बन करना ही श्रेयस्कर है ॥११॥

तबे सेइ विप्र प्रभुके भिक्षा कराइल ।
मधुपुरीर लोक सब देखिते आइल ॥१७६
लक्षसंख्य लोक आइसे नाहिक गणन ।
बाहिर हइया प्रभु दिल दरशन ॥१७७
बाहु तुलि बले प्रभु, बल हरिध्वनि ।
प्रेमे मत्त नाचे लोक करि हरिध्वनि ॥१७८
यमुनार चव्विश घाटे प्रभु कैल स्नान ।
सेइ विप्र प्रभुके देखाय तीर्थस्थान ॥१७९
स्वयम्भू, विश्राम, दीर्घविष्णु, भूतेश्वर ।
महाविद्या, गोकर्णादि देखिला सकल ॥१८०
बन देखिबारे यदि प्रभुर मन हैल ।
सेइत ब्राह्मण प्रभु सङ्गे लइल ॥१८८
मधुवन, ताल, कुमुद, बहुल बन गेला ।

ताँहा ताँहा स्नान करि प्रेमाविष्ट हैला ॥१८२
पथे गाभीघटा चरे, प्रभुके देखिया ।
प्रभुके बेड़ये आसि हुङ्कार करिया ॥१८३
गाभी देखि स्तब्ध प्रभु प्रेमेर तरङ्गे ।
वात्सल्ये गाभी प्रभुर चाटे सब अङ्गे ॥१८४
सुस्थ हये प्रभु करे अङ्गकण्डूयन ।
प्रभु सङ्गे चले नाहि छाड़े धेनुगण ॥१८५
कष्टे सृष्टे धेनु सब राखिल गोयाल ।
प्रभुकण्ठध्वनि शुनि आइसे मृगपाल ॥१८६
मृग मृगी मुख देखि प्रभु-अङ्ग चाटे ।
भय नाहि करे, सङ्गे याय बाटे बाटे ॥१८७
पिक भृङ्ग प्रभुके देखि पञ्चम गाय ।
शिखिगण नृत्य करि प्रभु आगे याय ॥१८८
प्रभु देखि वृन्दावनेर स्थावर जङ्गम ।
आनन्दित बन्धु येन देखे बन्धुगण ॥१८९
ता सबार प्रीति देखि प्रभु भावावेशे ।
सबा सने क्रीड़ा करे हञा तार बशे ॥१९०
प्रति वृक्ष लता प्रभु करेन आलिङ्गन ।
पुष्पादि ध्याने करेन कृष्णे समर्पण ॥१९१
अश्रु, कम्प, पुलक, प्रेमे शरीर अस्थिरे ।
कृष्णबोल कृष्णबोल बले उच्चैःस्वरे ॥१९२
प्रभु देखि वृन्दावनेर वृक्ष लतागण ।
अङ्कुर पुलक, मधु अश्रु वरिषण ॥१९३
फुल फल भरि डाल पड़े प्रभु-पाय ।
बन्धु देखि बन्धु येन भेट लञे याय ॥१९४
स्थावर जङ्गम मिलि करे कृष्णध्वनि ।
प्रभुर गम्भीर स्वरे येन प्रतिध्वनि ॥१९५
मृगेर गला धरि प्रभु करेन रोदन ।
मृगेर पुलक अङ्ग, अश्रु नयन ॥१९६
वृक्षडाले शुक शारी दिल दरशन ।
ता देखि प्रभुर किछु शुनिते हैल मन ॥१९७
शुक शारिका प्रभुर हाते उड़ि पड़े ।
प्रभुके शुनाञा कृष्णेर गुणश्लोक पड़े ॥१९८

तथाहि श्रीगोविन्दलीलामृते (१३।२९)—
शारिकां प्रति शुकवाक्यम्—

सौन्दर्यं ललनादिधैर्य्यदलनं लीला रमास्तम्भिनी,
वीर्य्यं कन्दुकिताद्रिवर्य्यममलाः पारे परार्द्धं गुणाः।
शीलं सर्व्वजनानुरञ्जनमहो यस्यायमस्मत्प्रभु
र्विश्वं विश्वजनीनकीर्त्तिरवतात् कृष्णो जगन्मोहनः ॥१२॥

टीका—हे शारिके ! अस्माकं प्रभुः अयं जगत्-मोहनः कृष्णः अहो विश्वं अवतां रक्षतु। स किम्भूतः? विश्वजनीनकीर्त्तिः । यस्य सौन्दर्यं ललनादि धैर्य्यदलनं,लीला रमास्तम्भिनी,वीर्य्यं कन्दुकिताद्रिवर्य्यं गुणाः परार्द्धं पारे अमलाः, शीलं चरित्रं सर्व्वजनानुरञ्जनम् ॥१२॥

श्रीगोविन्द लीलामृत में शारिका के प्रति शुक का कथन है—हमारे प्रभु विश्व विमोहन हरि जगत् की रक्षा करें। अहो इनकी कीर्त्ति कलाप विश्व विश्रुत हैं, अर्थात् समस्त व्यक्ति को सुखदायी हैं। इनके सौन्दर्य्य ललनावृन्द के धैर्य्य दलन कारी हैं, इनके लीलादि लक्ष्मी का स्तम्भित करते रहते हैं, इन के वीर्य्य के प्रभाव से अद्रि वर्य्य गोवर्धन भी क्रीड़नक बने थे । एवं इनके गुण अतीव विमल है एवं चरित-सर्व जन रञ्जन है ॥१२॥

शुकमुखे शुनि तबे कृष्णेर वर्णन ।
शारिका पड़ये तबे राधिका वर्णन ॥१९९

तथाहि गोविन्दलीलामृते (१३)—
शुकं प्रति शारिकावाक्यम्—

श्रीराधिकायाः प्रियता स्वरूपता,
सुशीलता नर्त्तनगानचातुरी।

गुणानि सम्पत् कविता च राजते,
जगन्मनोमोहनचित्तमोहिनी ॥१३

टीका—श्रीराधिकायाः प्रियता प्रेम, स्वरूपता, सुशीलता, नर्त्तनगानचातुरी, सम्पत गुणानि, कविता च राजते, यतः सा राधा जगन्मनोमोहनचित्तमोहिनी स्यात् ॥१३॥

शुक के प्रति शारिका का वाक्य इस प्रकार है—श्रीमती राधिका का प्रेम, सौन्दर्य्य, सच्चरित्रता नृत्यगीत पटुता ऐश्वर्य्य, गुण, एवं वाग्मिता प्रभृति सद् गुणावली मनोहर शोभासे मण्डित है, एवं विश्व-मोहन श्रीकृष्ण की मनो मोहिनी श्रीराधिका हैं ॥१३

पुनः शुक कहे कृष्ण मदनमोहन ।
तबे आर श्लोक शुक करिल पठन ॥२००

तथाहि श्रीगोविन्दलीलामृते ग्रन्थकारस्य श्लोकद्वयम् -

वंशीधारी जगन्नारीचित्तहारी स सारिके ।
विहारी गोपनारीभिर्जीयान्मदनमोहनः ॥१४॥

टीका—हे शारिके ! सः वंशीधारी जगन्नारी-चित्तहारी गोपनारीभिर्विहारी मदन-मोहनः श्रीकृष्ण जीयात् ॥१४॥

हे शारिके ! समस्त रमणी वृन्द के मनोहारी, वंशीधारी गोप बाला विहारी मदन मोहन श्रीकृष्ण जय युक्त हों ॥१४॥

पुनः शारी कहे शुके करि परिहास ।
एत शुनि प्रभुर हैल विस्मय प्रेमोल्लास ।२०१

राधा सङ्गे यदा भाति तदा मदनमोहनः ।
अन्यथा विश्वमोहोऽपि स्वयं मदनमोहितः ॥१५

टीका—यदा यस्मिन् समये सः कृष्णः राधासङ्गे भाति शोभते, तदा मदनमोहनः स्यात, अन्यथा सति विश्वमोहोऽपि स्वयं सः प्रभुः मदनमोहितः भवेत् ।१५

जिस समय श्रीकृष्ण राधिका सङ्ग प्राप्त करते हैं उस समय ही मदन मोहन होते हैं। अन्यथा विश्व मोहन प्रभु होकर भी स्वयं मदन मोहित होते हैं ॥१५॥

शुक शारी उड़ि पुनः गेला वृक्षडाले ।
मयूरेर नृत्य प्रभु देखे कुतूहले ॥२०२
मयूरेर कण्ठ देखि प्रभुर कृष्णस्मृति हैला ।
प्रेमावेशे महाप्रभु भूमिते पड़िला ॥२०३
प्रभुके मूर्च्छित देखि सेइत ब्राह्मण ।
भट्टाचार्य्य सङ्गे करे प्रभुसन्तर्पण ॥२०४
आस्ते व्यस्ते महाप्रभुर लञा बहिर्वास ।
जलसेक करे अङ्गे वस्त्रेर वातास ॥२०५
प्रभुकर्णे कृष्णनाम कहे उच्च करि ।
चेतन पाइया प्रभु यान गड़ागड़ि ॥२०६
कण्टक दुर्गम बने अङ्ग क्षत हैल ।
भट्टाचार्य्य कोले करि प्रभु सुस्थ कैल ॥२०७
कृष्णावेशे प्रभुर प्रेमे गरगर मन ।
बोल बोल करि उठे करेन नर्त्तन ॥२०८
भट्टाचार्य्य सेइ विप्र कृष्णनाम गाय ।
नाचिते नाचिते पथे प्रभु चलि याय ॥२०९
प्रभुर प्रेमावेश देखि ब्राह्मण विस्मित ।
प्रभुर रक्षा लागि विप्र हइला चिन्तित ॥२१०
नीलाचले छिला यैछे प्रेमावेश मन ।
वृन्दावन याइते पथे हैला शतगुण ॥२११
सहस्र गुण प्रेम बाड़े मथुरादर्शने ।
लक्षगुण प्रेम बाड़े भ्रमे यबे वने ॥२१२
अन्य देशे प्रेम उछले वृन्दावन नामे ।
साक्षात भ्रमये एबे सेइ वृन्दावने ॥२१३
प्रेमे गरगर मन रात्रि दिवसे ।
स्नानभिक्षादि निर्व्वाह करेन अभ्यासे ॥२१४
एइमत प्रेम यावत भ्रमिला बार बन ।
एकत्र लिखिल, सर्व्वत्र ना याय वर्णन ॥२१५

वृन्दावने हैल प्रभुर यतेक विकार।
कोटि ग्रन्थे अनन्त लिखे ताहार विस्तार।२१६
तबु लिखिबारे नारे तार एक कण।
उद्देश करिते करि दिक् दरशन ॥२१७
जगन भासिल चैतन्यलीलार पाथारे।
यार यत शक्ति तत पाथारे सातारे ॥२१८
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२१९

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्य खण्डे श्रीवृन्दावनगमनं नाम सप्तदशः परिच्छेदः ॥१७॥



❀ अष्टादश परिच्छेद ❀

वृन्दावने स्थिरचरान्नन्दयन् स्वावलोकनैः।
आत्मानञ्च तदालोकाद्गौराङ्गः परितोऽभ्रमत् ॥१

टीका—गौराङ्गः स्वावलोकनैः स्वीयदर्शनप्रदानैः स्थिरचरान् स्थावरजङ्गमान् तदालोकात् आत्मानञ्च नन्दयन् सन् वृन्दावने परितः समन्तात् अभ्रमत ॥१

श्रीगौराङ्ग देव वृन्दावन धामस्थित स्थावर जङ्गम समूह को दर्शन देकर आनन्दित कर एवं उन सब को देखकर स्वयं आनन्दित होकर व्रज मण्डल में भ्रमण करने लगे ॥१॥

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
एइमत महाप्रभु नाचिते नाचिते।
आरिटग्रामे आसि वाह्य हैल आचम्बिते ॥२
राधाकुण्डवार्त्ता प्रभु पुछे लोकस्थाने।
केह नाहि कहे, सङ्गेर ब्राह्मण ना जाने ॥३
तीर्थ लुप्त जानि प्रभु सर्व्वज्ञ भगवान्।
दुइ धान्यक्षेत्रे अल्प जले कैल स्नान ॥४
देखि ग्रामी लोकेर बड़ विस्मित हैल मन।
प्रेमे प्रभु करे राधाकुण्डेर स्तवन ॥५
सब गोपी हैते राधा कृष्णेर प्रेयसी।
तैछे राधाकुण्ड प्रिय प्रियार सरसी ॥६

तथाहि लघुभागवतामृते उत्तरखण्डे एकचत्वारिंशाङ्क-धृतपद्मपुराणवचनम्—

यथा राधा प्रिया विष्णोस्तस्याः कुण्डं प्रियं तथा।
सर्व्वगोपीषु सैवैका विष्णोरत्यन्तवल्लभा ॥२॥

जिस प्रकार श्रीराधा श्रीविष्णु के प्रीत्यास्पद है, श्रीराधा के कुण्ड भी उसी प्रकार श्रीविष्णु के प्रिय है, समस्त गोपिकाओं के मध्य में श्रीराधा ही एकमात्र अत्यन्त वल्लभा है ॥२॥

सेइ कुण्डे नित्य कृष्ण राधिकार सङ्गे।
जले जलकेलि करे तीरे रासरङ्गे ॥७
सेइ कुण्डे येइ एकबार करे स्नान।
तारे राधासम कृष्ण प्रेम करे दान ॥८
कुण्डेर माधुरी येन राधार मधुरिमा।
कुण्डेर महिमा येन राधार महिमा ॥९

तथाहि श्रीगोविन्दलीलामृते (७।१०१)—

श्रीराधेव हरेस्तदीयसरसी प्रेष्ठाद्भुतैः स्वैर्गुणै-
र्यस्यां श्रीयुतमाधवेन्दुरनिशं प्रीत्या तया क्रीडति।
प्रेमास्मिन् वत राधिकेव लभते यस्यां सकृत्स्नानकृत्
तस्या वै महिमा तथा मधुरिमा केनास्तु वर्ण्यः क्षितौ ॥३॥

टीका—तदीयसरसी राधाकुण्डं स्वैः अद्भुतैः गुणैः श्रीराधेव श्रीराधासदृशी हरेर्मुरारेः प्रेष्ठा वल्लभा भवेत। यस्यां श्रीयुतमाधवेन्दुः श्रीमान् कृष्णचन्द्रः प्रीत्या तया श्रीमत्या सह अनिशं निरन्तरं

क्रीड़ति विहरति, यस्यां सकृत्स्नानकृत् जनः, वत विस्मये, अस्मिन् हरौ राधिका इव प्रेम लभते। तस्याः सरस्याः महिमा, तथा मधुरिमा वै निश्चितं क्षितौ भुवि केन जनेन वर्ण्यः अस्तु ? ।।३।।

श्रीगोविन्द लीलामृत में लिखित है—

श्रीराधा के समान ही श्रीराधा के सरोवर श्रीराधा कुण्ड श्रीहरि के प्रिय है, जिस में माधवेन्दु निरन्तर प्रीति पूर्वक श्रीराधिकाके सहित क्रीड़ा करते रहते हैं, जो लोक श्रीराधाकुण्ड एकवार स्नान करता है, उसको राधिका के समान प्रीति प्रदान श्रीहरि करते हैं, अतएव श्रीराधा कुण्ड की महिमा एवं मधुरिमा का वर्णन कौन कर सकता है ।।३।।

एइमत स्तुति करे प्रेमाविष्ट हैञा ।
तीरे नृत्य करे कुण्डलीला स्मरिया ।।१०
कुण्डेर मृत्तिका लञा तिलक करिल ।
भट्टाचार्य्य द्वारा मृत्तिका सङ्गे करि लैल ११
तबे चलि आइला प्रभु सुमनः सरोबरे ।
ताँहा गोवर्द्धन देखि हइला विह्वले ।।१२
गोवर्द्धन देखि प्रभु हैला दण्डवत् ।
एक शिला आलिङ्गिया हइला उन्मत्त ।।१३
प्रेमे मत्त चलि आइला गोवर्द्धन ग्राम ।
हरिदेव देखि ताँहा करिला प्रणाम ।।१४
मथुरा-पद्मेर पश्चिमदले यार बास ।
हरिदेब नारायण आदि परकाश ।।१५
हरिदेव आगे नाचे प्रेमे मत्त हञा ।
सब लोक देखिते आइसे आश्चर्य्य शुनिया ।१६
प्रभुर प्रेम सौन्दर्य्य देखि लोके चमत्कार ।
हरिदेवेर भृत्य प्रभुर करिल सत्कार ।।१७
भट्टाचार्य्य ब्रह्मकुण्डे पाक याञा कैल ।
ब्रह्मकुण्डे स्नान करि प्रभु भिक्षा कैल ।।१८
से रात्रि रहिला हरिदेवेर मन्दिरे ।
रात्रे महाप्रभु करे मनेते विचारे ।।१९
गोवर्द्धन उपरे आमि कभु ना चड़िब ।
गोपाल देवेर दर्शन केमने पाइब ।।२०
एत मने करि प्रभु मौन धरि रहिला ।
जानि गोपाल म्लेच्छभय भङ्गी उठाइला ।।२१

तथाहि श्रीचैतन्यचरितामृतग्रन्थकारस्य—

अनारुरुक्षवे शैलं स्वस्मै भक्ताभिमानिने ।
अवरुह्य गिरेः कृष्णो गौराय स्वमदर्शयत् ।।४

टीका—कृष्णः गिरेः गोवर्द्धनाचलात् अवरुह्य शैलं गोवर्द्धनगिरिं अनारुरुक्षवे आरोहणं कर्त्तुं अनिच्छवे गौराय स्वयं अदर्शयत् आत्मानं दर्शितवान्। किम्भूताय ?-- स्वस्मै स्वीयाय गोपालाय भक्ताभिमानिने ।।४।।

गोपाल रूपी श्रीहरि निज भक्ताभिमानी गौरचन्द्र को गोवर्द्धन पवतारोहण में अनिच्छु देखकर स्वयं पर्वत से अवतरण करके उनको दर्शन प्रदान किये थे ।।४।।

अन्नकूट नाम ग्रामे गोपालेर स्थिति ।
राजपुत लोकेर सेइ ग्रामेते वसति ।।२२
एकजन आसि रात्रे ग्रामीके बलिल ।
तोमार ग्राम मारिते तुड़ुकधारी साजिल २२
आजि रात्रे पलाह ना रहिओ एक जन ।
ठाकुर लइया भागह आसिबे कालयवन ।।२३
शुनिया ग्रामेर लोक चिन्तित हइल ।
प्रथमे गोपाल लञा गाठुँलि ग्रामे थुइल ।।२४
विप्रगृहे गोपालेर निभृते सेवन ।
ग्राम उजाड़ हैल, पलाइल सर्व्वजन ।।२५
ऐछे म्लेच्छभये गोपाल भागे बारे बारे ।
मन्दिर छाड़ि कुञ्जे रहे किवा ग्रामान्तरे ।२६

प्रातः काले प्रभु मानसगङ्गाय करि स्नान ।
गोवर्द्धन परिक्रमाय करिला प्रयाण ॥२७
गोवर्द्धन देखि प्रभु प्रेमाविष्ट हञा ।
नाचिते नाचिते चलिला श्लोक पड़िया ॥२८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२१।१८)—

हन्तायमद्रिरबला हरिदासवर्य्यो,
यद्रामकृष्णचरणस्परशप्रमोदः ।
मानं तनोति सह गोगणयोस्तयोर्यत्,
पानीयसूयवसकन्दरकन्दमूलैः ॥५॥

टीका—हन्त आनन्दे, हे अबलाः !—अयं अद्रिः गोवर्द्धनगिरिः हरिदासवर्य्यः कृष्णभक्तेषु प्रधानः । यत् यतः रामकृष्णचरणस्पर्शप्रमोदः रामकृष्णपादपद्मस्पर्शेन पुलकितः । किञ्च यत् यतः सह-गोगणयोः गोभिः सह सखिवृन्देन च सह विद्यमानयोः तयोः रामकृष्णयोः पानीयसूयवसकन्दरकन्दमूलैः पानीयवारिभिः मोहनतृणैः शीतलच्छाय-गह्वरैः मूलकादिभिश्च मानं पूजां तनोति विस्तारयति ॥५

श्रीमद् भागवत के १०।२१।१८ में लिखित है-हे सखि ! यह गोवर्द्धन पर्वत, कृष्ण भक्त वृन्द के मध्य में प्रधान है, कारण—पर्वतराज गोवर्द्धन राम कृष्ण के चरण स्पर्श से पुलकित होकर पानीय जल, नूतन नूतन तृण, शीतल छाया, कन्दर एवं विविध प्रकार फल मूलादि के द्वारा राम कृष्ण की एवं गो वृन्द की तथा तदीय वयस्यवृन्द की सेवा कर रहा है । ५॥

गोविन्द कुण्डादि तीर्थे प्रभु कैल स्नान ।
ताँहा शुनिल गोपाल गेल गाँठुली ग्राम ॥२९
सेइ ग्रामे गिया कैल गोपाल दर्शन ।
प्रेमावेशे प्रभु करे कीर्त्तन नर्त्तन ॥३०
गोपालेर सौन्दर्य्य देखि प्रभुर आवेश ।
एइ श्लोक पड़ि नाचे, हैल दिन शेष ॥३१

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ—
श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

वामस्तामरसाक्षस्य भुजदण्डः स पातु वः ।
क्रीड़ाकन्दुकतां येन नीतो गोवर्द्धनो गिरिः ॥६

टीका—तामरसाक्षस्य कमलनयनस्य हरेः सः वामः भुजदण्डः वः युष्मान् पातु अवतु, येन बाहुदण्डेन गोवर्द्धनः गिरिः कन्दुकतां नीतः ॥६॥

जिनके वाम भुजदण्ड गोवर्धन पर्वत को कन्दुकवत् उत्तोलन किया था, कमल नयन श्रीहरि के वह भुजदण्ड तुम सब की रक्षा करे ॥६॥

एइमत तिन दिन गोपाल देखिला ।
चतुर्थ दिवसे गोपाल स्वमन्दिरे गेला ॥३२
गोपाल सङ्गे चलि आइला नृत्य गीत करि ।
आनन्द-कोलाहले लोक बले हरि हरि ॥३३
गोपाल मन्दिरे गेला प्रभु रहिला तले ।
प्रभुर वाञ्छा पूर्ण सब करिल गोपाले ॥३४
एइमत गोपालेर करुण स्वभाव ।
सेइ भक्त जनेर देखिते हय भाव ॥३५
देखिते उत्कण्ठा हय, ना चड़े गोवर्द्धने ।
कोन छले गोपाल आसि उत्तरे आपने ॥३६
कभु कुञ्जे रहे, कभु रहे ग्रामान्तरे ।
सेइ भक्त ताँहा आसि देखये ताँहारे ॥३७
पर्व्वते ना चड़े दुइ रूप सनातन ।
एइरूपे ता सबारे दिराछेन दर्शन ॥३८
वृद्धकाले रूप गोसाञि ना पारे याइते ।
वाञ्छा हैल गोपालेर सौन्दर्य्य देखिते ॥३९
म्लेच्छभये आइल गोपाल मथुरानगरे ।
एक मास रहिल विठलेश्वरघरे ॥४०
तबे रूपगोसाञि सब निजगण लैञा ।

एक मास दर्शन कैल मथुराय रहिञा ॥४१
सङ्गे गोपालभट्ट, दास रघुनाथ ।
रघुनाथभट्ट गोसाञि, आर लोकनाथ ॥४२
भूगर्भ गोसाञि, आर श्रीजीव गोसाञि ।
श्रीयादव आचार्य्य, आर गोविन्द गोसाञि ४३
श्रीउद्धव दास, आर माधव दुइ जन ।
श्रीगोपाल दास, आर दास नारायण ॥४४
गोविन्द भक्त, आर वाणी कृष्णदास ।
पुण्डरीकाक्ष, ईशान, आर लघु हरिदास ॥४५
एइ सब मुख्य भक्त लञा निज सङ्गे ।
श्रीगोपाल दर्शन कैल बहु रङ्गे ॥४६
एक मास रहि गोपाल गेला निज स्थाने ।
श्रीरूप गोसाञि आइला श्रीवृन्दावने ॥४७
प्रस्तावे कहिल गोपाल कृपार आख्याने ।
तबे महाप्रभु गेला श्रीकाम्यबने ॥४८
प्रभुर गमनरीति पूर्व्वे ये लिखिल ।
सेइमत वृन्दावने यावत् देखिल ॥४९
ताँहा लीलास्थली देखि गेला नन्दीश्वर ।
नन्दीश्वर देखि प्रेमे हइला विह्वल ॥५०
पावनादि सब कुण्डे स्नान करिया ।
लोकेरे पुछिल पर्व्वत उपरे याइया ॥५१
किछु देवमूर्त्ति हय पर्व्वत उपरे ।
लोक कहे, मूर्त्ति हय गोफार भितरे ॥५२
दुइ दिके माता पिता पुष्टकलेबर ।
मध्ये एक शिशु हय त्रिभङ्ग सुन्दर ॥५३
शुनि महाप्रभु मने आनन्द पाइया ।
तिन मूर्त्ति देखिला सेइ गोफा उखाड़िया ॥५४
व्रजेन्द्र व्रजेश्वरीर कैल चरणवन्दन ।
प्रेमावेशे कृष्णेर कैल सर्व्वाङ्ग स्पर्शन ॥५५
सबदिन प्रेमावेशे नृत्यगीत कैला ।
ताँहा हैते महाप्रभु खदिरबन आइला ॥५६
लीलास्थल देखि ताँहा गेला शेषशायी ।
लक्ष्मी देखि एइ श्लोक पड़ेन गोसाञि ॥५७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३१।१९)---

यत्ते सुजातचरणाम्बुजरुहं स्तनेषु
भीताः शनैः प्रिय दधीमहि कर्कशेषु ।
तेनाटवीमटसि तद्व्यथते न किं स्वित्,
कूर्पादिभिर्भ्रमति धीर्भवदायुषां नः ॥७॥

श्रीमद् भागवत के १०।३१।१९ में उक्त है– हे प्रिय ! तुम्हारे सुकुमार चरणकमल को हमारे कठिन वक्षोज से व्यथित न हो, इस भय से धीरे धीरे हम सब धारण करते रहती हैं, किन्तु तुम तो उसी चरण से वन भ्रमण करते रहते हो, वह पदाम्बुज क्या करिल काँटे कंकरों से व्यथित नहीं होता है ? कैसे व्यथित नहीं होगा ? हमारे जीवन सर्वस्व तुम्हीं हो, उस भ्रमण वृत्तान्त को सोचकर हमारी बुद्धि घुमने लगती है । अर्थात् दुःखी होती है ॥७॥

तबे खेलातीर्थ देखि भाण्डीरबन आइला ।
यमुनाते पार हैञा भद्रबन गेला ॥५८
श्रीवन देखि पुनः गेला लोहबन ।
महावन गिया जन्मस्थान दरशन ॥५९
यमलार्ज्जुनभङ्गादि देखिल सेइ स्थल ।
प्रेमावेशे प्रभुर मन हैल टलमल ॥६०
गोकुल देखिया आइल मथुरा नगरे ।
जन्मस्थान देखि रहे सेइ विप्रघरे ॥६१
लोकेर सङ्घट्ट देखि मथुरा छाड़िया ।
एकान्ते अक्रूर तीर्थे रहिल आसिया ॥६२
आर दिन आइल प्रभु देखिते वृन्दावन ।
कालीयह्रदे स्नान कैल आर प्रस्कन्दन ॥६३

द्वादश आदित्य हैते केशि तीर्थ आइला ।
रासस्थली देखि प्रेमे मूर्च्छित हइला ॥६४
चेतन पाइया पुनः गड़ागड़ि याय ।
हासे कान्दे नाचे पड़े उच्चैस्वरे गाय ॥६५
एइ रङ्गे सेइ दिन तथा गोङाइला ।
सन्ध्याकाले अक्रूरे आसि भिक्षा निर्व्वाहिला ६६
प्राते वृन्दावने कैल चीरघाटे स्नान ।
तेँतुल तलाते आसि करिल विश्राम ॥६७
कृष्णलीलाकालेर वृक्ष पुरातन ।
तार तले पिँड़ि बान्धा परम चिक्कण ॥६८
निकटे यमुना वहे शीतल समीर ।
वृन्दावन-शोभा देखि यमुनार नीर ॥६९
तेँतुलतले बसि करेन नामसंकीर्त्तन ।
मध्याह्न करि आसि करे अक्रूरे भोजन ॥७०
अक्रूरेर लोक आइसे प्रभुके देखिते ।
लोक भिड़े स्वच्छन्दे नारे कीर्त्तन करिते ७१
वृन्दावने आसि प्रभु बसिया एकान्ते ।
नाम संकीर्त्तन करे मध्याह्न पर्य्यन्ते ॥७२
तृतीय प्रहरे लोक पाय दरशन ।
सबाके उपदेश करेन नाम संकीर्त्तन ॥७३
हेनकाले आइला वैष्णव कृष्णदास नाम ।
राजपूत जाति गृहस्थ यमुनापारे ग्राम ॥७४
केशि स्नान करि सेइ कालिदहे याइते ।
आमलि तलाय गोसाञि देखे आचम्बिते ॥७५
प्रभुर रूप प्रेम देखि हैल चमत्कार ।
प्रेमावेशे प्रभुके करे नमस्कार ॥७६
प्रभु कहे, के तुमि, काँहा तोमार घर ।
कृष्णदास कहे, मुञि गृहस्थ पामर ॥७७
राजपुत जाति मुञि, पारे मोर घर ।
मोर इच्छा हय हइ वैष्णवकिङ्कर ॥७८
किन्तु आजि एक मुञि स्वप्न देखिनु ।
सेइ स्वप्न परतेक तोमा आसि पाइनु ॥७९
प्रभु तारे कृपा कैल आलिङ्गन करि ।
प्रेमे मत्त हैल सेइ नाचे, बले हरि ॥८०
प्रभु सङ्गे मध्याह्ने अक्रूर तीर्थे आइला ।
प्रभुर अवशिष्ट पात्र प्रसाद पाइला ॥८१
प्राते प्रभु सङ्गे आइला जलपात्र लञा ।
प्रभु सङ्गे रहे गृह स्त्री पुत्र छाड़िया ॥८२
वृन्दावने पुनः कृष्ण प्रकट हइल ।
याँहा ताँहा लोक सब कहिते लागिल ॥८३
एकदिन मथुरार लोक प्रातः काले ।
वृन्दावन हैते आइसे करि कोलाहले ॥८४
प्रभु देखि कैल लोक चरण वन्दन ।
प्रभु कहे काँहा हैते कैले आगमन ॥८५
लोक कहे, कृष्ण प्रकट कालीदहेर जले ।
कालि-शिरे नृत्य करे फणी रतन ज्वले ॥८६
साक्षात् देखिल लोक नाहिक संशय ।
शुनि हासि कहे प्रभु, सब सत्य हय ॥८७
एइमत तिन रात्रि लोकेर गमन ।
सबे आसि कहे कृष्ण पाइल दर्शन ॥८८
प्रभु आगे कहे लोक श्रीकृष्ण देखिल ।
सरस्वती एइ वाक्य सत्य कराइल ॥८९
महाप्रभु देखि सत्य कृष्ण दरशन ।
निज ज्ञाने सत्य छाड़ि असत्ये सत्यभ्रम ॥९०
भट्टाचार्य्य तबे कहे, प्रभुर चरणे ।
आज्ञा देह याँहा करि कृष्ण दरशने ॥९१

तबे तारे कहेन प्रभु चापड़ मारिञा ।
मूर्खेर वाक्ये मूर्ख हैला पण्डित हइञा ॥९२
कृष्ण केने दरशन दिबे कलिकाले ।
निज भ्रमे मूर्ख लोक करे कोलाहले ॥९३
वातुल ना हइञो घरे रहत बसिया ।
कृष्णदर्शन करिह कालि रात्रे याञा ॥९४
प्रातः काले भव्य लोक प्रभुस्थाने आइला ।
कृष्ण देखि आइला प्रभु ताहारे पुछिला ॥९५
लोक कहे, रात्रे कैवर्त्त नौकाते चड़िया ।
कालिदहे मत्स्य मारे देउटि ज्वालिया ॥९६
दूर हैते ताहा देखि लोकेर हय भ्रम ।
कालिय-शरीरे कृष्ण करिछे नर्त्तन ॥९७
नौकाते कालिय-ज्ञान दीपे रत्नज्ञाने ।
जालियाके मूढ़ लोक कृष्ण करि माने ॥९८
वृन्दावने कृष्ण आइला सेह सत्य हय ।
कृष्णके देखिल लोक इहा मिथ्या नय ॥९९
किन्तु काहों कृष्ण देखे काहो भ्रम माने ।
स्थाणु पुरुष यैछे विपरीत ज्ञाने ॥१००
प्रभु कहे, काँहा पाइले कृष्ण दरशन ।
लोक कहे, सन्न्यासी तुमि जङ्गम नारायण १०१
वृन्दावने हैले तुमि कृष्ण अवतार ।
तोमा देखि सर्व्व लोक हइल निस्तार ॥१०२
प्रभु कहे, विष्णु विष्णु इहा ना कहिओ ।
जीवाधमे कृष्ण ज्ञान कभु ना करिओ ॥१०३
सन्न्यासी चित्कण जीव किरणकणसम ।
षड़ैश्वर्य्यपूर्ण कृष्ण हय सूर्य्योपम ॥१०४
जीव ईश्वरतत्त्व कभु नहे सम ।
ज्वलदग्निराशि यैछे स्फुलिङ्गेर कण ॥१०५

तथाहि भगवत्सन्दर्भे धृतसर्व्वज्ञसूक्तम्—

ह्लादिन्या सम्बिदाश्लिष्टः सच्चिदानन्द ईश्वरः ।
स्वाविद्यासंवृतो जीवः संक्लेशनिकराकरः ॥८॥

टीका—ईश्वरः ह्लादिन्या आनन्दशक्त्या, तथा सम्बिदा ज्ञानशक्त्या, आश्लिष्टः समन्वितः सन् सच्चिदानन्दः स्यात् । जीवः स्वाविद्यासंवृतः निजमाया-वेष्टितः सन् संक्लेशनिकराकरः जनन मरणादि-दुःखसमूहानां निवासः ॥८॥

ह्लादिनी आनन्द शक्ति एवं सम्बित् अर्थात् ज्ञान शक्ति सम्पन्न ईश्वर अखण्ड सच्चिदानन्द है, किन्तु जीव माया शक्ति से आवृत होकर विभिन्न क्लेश समूह का आकर हुआ है ॥८॥

येइ मूढ़ कहे जीव ईश्वर हय सम ।
सेइ त पाषण्डी हय दण्डे तारे यम १०६

तथाहि हरिभक्तिविलासस्य प्रथमविलासे---

यस्तु नारायणं देवं ब्रह्मरुद्रादिदैवतैः ।
समत्वेनैव वीक्षेत स पाषण्डी भवेद्ध्रुवं ॥९॥

टीका—यः जनः नारायणं देवं ब्रह्मरुद्रादिदैवतैः सह समत्वेनैव वीक्षेत सः ध्रुवं पाषण्डी भवेत् ॥९॥

जो व्यक्ति ब्रह्म रुद्रादि देववृन्द के सहित नारायण देवको तुल्य समझता है, वह नि सन्देह पाषण्डी नाम से अभिहित होना है ॥९॥

लोक कहे तोमाते कभु नहे जीव मति ।
कृष्णेर सदृश तोमार आकृति प्रकृति १०७
आकृते तोमाके देखि व्रजेन्द्रनन्दन ।
देहकान्ति पीताम्बर कैल आच्छादन ॥१०८
मृगमद वस्त्रे बान्धि कभु ना लुकाय ।
ईश्वरस्वभाव तोमार ढाका नाहि याय ॥१०९
अलौकिक प्रकृति तोमार बुद्धि-अगोचर ।
तोमा देखि कृष्णप्रेमे जगत पागल ॥११०

स्त्री बाल वृद्ध ग्रार चण्डाल यवन।
येइ तोमार एकबार पाय दरशन ॥१११
कृष्ण नाम लये नाचे हइये उन्मत्त।
ग्राचार्य्य हैञा सेइ तारिल जगत ॥११२
दर्शने ग्राछुक कार्य्य ये तोमार नाम शुने।
सेइ कृष्णप्रेमे मत्त तारे त्रिभुवने ॥११३
तोमार नाम शुनि हय श्वपच पावन।
ग्रलौकिक शक्ति तोमार ना याय कथन ॥११४

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।३३।७)—

कपिलदेवं प्रति देवहूतिवाक्यम्—

यन्नामधेयश्रवणानुकीर्त्तनात्,
यत्-प्रह्वणाद् यत्-स्मरणादपि क्वचित्।
श्वादोऽपि सद्यः सवनाय कल्पते,
कुतः पुनस्ते भगवन्नु दर्शनात् ॥१०॥

कपिलदेव को देवहूति बोली थीं, जिनके नाम श्रवण, कीर्त्तन स्मरण एव वन्दन करने से चण्डाल भी सद्य सोमयाजी ब्राह्मणवत् सम्माननीय होता है, हे भगवन्! आप का दर्शन से जो मानव पवित्र होगा, इस में आश्चर्य्य क्या है? ॥१०॥

एइमत महिमा तोमार तटस्थ लक्षण।
स्वरूप लक्षणे तुमि व्रजेन्द्रनन्दन ॥११५
सेइ सब लोके प्रभु प्रसाद करिल।
कृष्णप्रेमे मत्त लोक निज घरे गेल ॥११६
एइमत कत दिन ग्रक्रूरे रहिला।
कृष्णनाम प्रेम दिया लोक निस्तारिला ॥११७
माधवपुरीर शिष्य सेइत ब्राह्मण।
मथुरार घरे घरे करान निमन्त्रण ॥११८
मथुरार यत लोक ब्राह्मण सज्जन।
भट्टाचार्य्यस्थाने ग्रासि करे निमन्त्रण ॥११९

एक दिन दश विश ग्राइसे निमन्त्रण।
भट्टाचार्य्य एकमात्र करेन ग्रहण ॥१२०
ग्रवसर ना पाय लोक निमन्त्रण दिते।
सेइ विप्रे साधे लोक निमन्त्रण निते ॥१२१
कान्यकुब्ज दाक्षिणात्य वैदिक ब्राह्मण।
दैन्य करि करे महाप्रभुर निमन्त्रण ॥१२२
प्रातःकाले ग्रक्रूरे ग्रासि रन्धन करिया।
प्रभुके भिक्षा देन शालग्रामे समर्पिया ॥१२३
एक दिन ग्रक्रूर घाटेर उपरे।
बसि महाप्रभु किछु करेन विचारे ॥१२४
एइ घाटे ग्रक्रूर वैकुण्ठ देखिल।
व्रजवासी लोक गोकुल दर्शन पाइल ॥१२५
एत बलि झाँप दिल जलेर उपरे।
डुविया रहिल प्रभु जलेर भितरे ॥१२६
देखि कृष्णदास कान्दि फुकार करिल।
भट्टाचार्य्य शीघ्र ग्रासि प्रभुरे उठाइल ॥१२७
तबे भट्टाचार्य्य सेइ ब्राह्मण लइया।
युक्ति करिला किछु निभृते बसिया ॥१२८
ग्राजि ग्रामि ग्राछिलाम उठाइल प्रभुरे।
वृन्दावने डुबे यदि के उठाबे ताँरे ॥१२९
लोकेर संघट्ट ग्रार निमन्त्रणेर जञ्जाल।
निरन्तर ग्रावेश प्रभुर ना देखिये भाल ॥१३०
वृन्दावन हैते यदि प्रभुरे काढ़िये।
तबे मङ्गल हय एइ भाल युक्ति हये ॥१३१
विप्र कहे, प्रयागे प्रभु लये याइ।
गङ्गातीर पथे याइ तबे सुख पाइ ॥१३२
सोरोक्षेत्रे ग्रागे याञा करि गङ्गास्नान।
सेइ पथे प्रभु लञा करिये प्रयाण ॥१३३

माघ मास हैल आसि एबे यदि याइये ।
मकरे प्रयागस्नान कथोदिन पाइये ॥१३४
आपनार दुःख किछु करि निबेदन ।
मकर पञ्चमी प्रयाग करह सूचन ॥१३५
गङ्गातीर पथे सुख जानाइह ताँरे ।
भट्टाचार्य्य आसि तबे कहिल प्रभुरे ॥१३६
सहिते ना पारि आमि लोकेर गड़बड़ि ।
निमन्त्रण लागि लोक करे हुड़ाहुड़ि ॥१३७
प्रातःकाले आइसे लोक तोमाके ना पाय ।
तोमाके ना पाञा लोक मोर माथा खाय ।१३८
तबे सुख हय यबे गङ्गापथे याइ ।
एबे यदि याइ मकरे गङ्गास्नान पाइ ॥१३९
उद्विग्न इहल प्राण सहिते ना पारि ।
प्रभुर ये आज्ञा हय सेइ शिरे धरि ॥१४०
यद्यपि वृन्दावनत्यागे नाहि प्रभुर मन ।
भक्त-इच्छा करिते कहे मधुर वचन ॥१४१
तुमि आमाय आनि देखाइले वृन्दावन ।
एइ ऋण आमि नारिब करिते शोधन ॥१४२
ये तोमार इच्छा आमि सेइत करिब ।
याँहा लञा याह तुमि ताँहाइ याइब ॥१४३
प्रातःकाले महाप्रभु प्रातःस्नान कैल ।
वृन्दावन छाड़िब जानि प्रेमावेश हैल ॥१४४
बाह्य बिकार नाहि प्रेमाविष्ट मन ।
भट्टाचार्य्य कहे चल याइ महावन ॥१४५
एत बलि महाप्रभु नौकाय बसिया ।
पार करि भट्टाचार्य्य चलिला लइया ॥१४६
प्रेमिक कृष्णदास आर सेइत ब्राह्मण ।
गङ्गापथे याइबार विज्ञ दुइजन ॥१४७
याइते एक वृक्षतले प्रभु सबा लैञा ।
बसिला सबार पथश्रान्ति देखिया ॥१४८
से वृक्ष निकटे चरे बहु गाभीगण ।
देखि महाप्रभु अति उल्लसित मन ॥१४९
आचम्बिते एक गोप वंशी बाजाइल ।
शुनि महाप्रभु महा प्रेमावेश हैल ॥१५०
अचेतन हैञा प्रभु भूमिते पड़िल ।
मुखे फेन पड़े नासाय श्वास रुद्ध हैल ॥१५१
हेनकाले ताँहा आसोयार दश आइला ।
म्लेच्छ पाठान घोड़ा हैते उत्तरिला ॥१५२
प्रभुके देखिया म्लेच्छ करये विचार ।
एइ यति-पाश छिल सुवर्ण अपार ॥१५३
एइ पञ्च बाटोयार धुतूरा खाओयाइया ।
मारि डारियाछे यतिर सब धन लइया १५४
यबे सेइ पाठान पञ्च जनेरे बान्धिल ।
काटिते चाहे गौड़िया काँपिते लागिल ॥१५५
कृष्णदास राजपुत निर्भय से बड़ ।
सेइ विप्र निर्भय मुखे बड़ दड़ ॥१५६
विप्र कहे, तोमार पातसार दोहाइ ।
चल तुमि आमि सिकदार-पाश याइ ॥१५७
ए यति आमार गुरु, आमि माथुर ब्राह्मण ।
पातसाहार आगे आछे आमार शत जन १५८
एइ यति व्याधे कभु हयेत मूर्च्छित ।
अवहि चेतन पाब हइब सम्बित ॥१५९
क्षणेक इहा वैस बान्धि राखह सबारे ।
इहाके पुछिया तबे मारिह आमारे ॥१६०
पाठान कहे, तुमि पश्चिमा दुइ जन ।
गौड़िया ठक एइ काँपे तिन जन ॥१६१

कृष्णदास कहे, आमार घर एइ ग्रामे ।
शतेक तुरुकी आछे दुइ शत कामाने ॥१६२
एखनि आसिबे सब आमि यदि फुकारि ।
घोड़ा पिड़ा लुटि लबे तोमा सबा मारि ।१६३
गौड़िया बाटपाड़ नहे तुमि बाटपाड़ ।
तीर्थवासी लुट ? आर चाह मारिबार ।१६४
शुनिया पाठानमने सङ्कोच हइल ।
हेनकाले महाप्रभु चेतन पाइल ॥१६५
हुङ्कार करिया उठे बले हरि हरि ।
प्रेमावेशे नृत्य करे ऊर्द्ध्वबाहु करि ॥१६६
प्रेमावेशे प्रभु यबे करेन चीतकार ।
म्लेच्छेर हृदये येन लागे शेलधार ॥१६७
भय पाञा म्लेच्छ छाड़ि दिल पञ्च जन ।
प्रभु ना देखिल निजगणेर बन्धन ॥१६८
भट्टाचार्य्य आसि प्रभुके धरि वसाइल ।
म्लेच्छगण देखि महाप्रभुर वाह्य हैल ॥१६९
म्लेच्छगण आसि प्रभुर वन्दिल चरण ।
प्रभु आगे कहे, एइ ठक पाँच जन ॥१७०
एइ पञ्च मिलि तोमाय धुतुरा खाओयाइया ।
तोमार धन लइल तोमाय पागल करिया १७१
प्रभु कहेन, ठक नहे मोर सङ्गी जन ।
भिक्षुक सन्न्यासी मोर नाहि किछु धन ।१७२
मृगी व्याधिते आमि हइ अचेतन ।
एइ पाँच दया करि करेन पालन ॥१७३
सेइ म्लेच्छमध्ये एक परम गम्भीर ।
काल वस्त्र परे ताते लोके कहे पीर ॥१७४
चित्त आर्द्र हैल प्रभुके देखिया ।
निर्व्विशेष ब्रह्म स्थापे स्वशास्त्र उठाइया १७५

अद्वय ब्रह्मवाद सेइ करिल स्थापन ।
तारि शास्त्र युक्ते प्रभु करिल खण्डन ॥१७६
येइ येइ कहिल प्रभु सकलि खण्डिल ।
उत्तर ना आइसे मुखे महा स्तब्ध हैल ॥१७७
प्रभु कहे, तोमार शास्त्रे स्थाप निर्व्विशेष ।
ताहा खण्डि सविशेष स्थापियाछे शेष ॥१७८
तोमार शास्त्रे कहे शेषे एकइ ईश्वर ।
सर्व्वैश्वर्य्यपूर्ण तिँह श्यामकलेवर ॥१७९
सच्चिदानन्ददेह पूर्णब्रह्म स्वरूप ।
सर्व्वात्मा सर्व्वज्ञ नित्य सर्व्वादिस्वरूप ॥१८०
सृष्टि स्थिति प्रलय ताँहा हैते हय ।
स्थूल सूक्ष्म जगतेर तिँह समाश्रय ॥१८१
सर्व्वश्रेष्ठ सर्व्वाराध्य कारणेर कारण ।
ताँर भक्त्ये हय जीवेर संसारतारण ॥१८२
ताँर भक्ति विना जीवेर ना याय संसार ।
ताँहार चरणे प्रीति पुरुषार्थ सार ॥१८३
मोक्षादि आनन्द यार नहे एक कण ।
पूर्णानन्दप्राप्ति ताँर चरण सेवन ॥१८४
कर्म्म योग ज्ञान आगे करिया स्थापन ।
सब खण्डि स्थापे ईश्वर ताहार सेवन ॥१८५
तोमार पण्डित सबार नाहि शास्त्रज्ञान ।
पूर्व्वापर विधिमध्ये पर बलवान् ॥१८६
निज शास्त्र देख तुमि विचार करिया ।
कि लिखियाछे शेष निर्णय करिया ॥१८७
म्लेच्छ कहे, येइ कह सेइ सत्य हय ।
शास्त्रे लिखियाछे केह लैते ना पारय ॥१८८
निर्व्विशेष गोसाञि लैञा करेन व्याख्यान ।
साकार गोसाञि सेव्य कारो नाहि ज्ञान ।१८९

सेइत गोसाञि तुमि साक्षात् ईश्वर ।
मोरे कृपा कर मुञि अयोग्य पामर ॥१९०
अनेक देखिनु मुञि म्लेच्छशास्त्र हैते ।
साध्य साधन वस्तु नारि निर्द्धारिते ॥१९१
तोमा देखि जिह्वा मोर बले कृष्णनाम ।
आमि बड़ ज्ञानी एइ गेल अभिमान ॥१९२
कृपा करि बल मोरे साध्य साधने ।
एत बलि पड़े महाप्रभुर चरणे ॥१९३
प्रभु कहे, उठ, कृष्णनाम तुमि लैले ।
कोटि जन्मेर पाप गेल पवित्र हइले ॥१९४
कृष्ण कह कृष्ण कह कैल उपदेश ।
सबे कृष्ण कहे, सबार हैल प्रेमावेश ॥१९५
रामदास बलि प्रभु तार कैल नाम ।
आर एक पाठान तार नाम विजुली खान ।१९६
अल्प वयस तार राजार कुमार ।
रामदास आदि पाठान चाकर ताहार ॥१९७
कृष्ण बलि पड़े सेह महाप्रभुर पाय ।
प्रभु श्रीचरण दिल ताहार माथाय ॥१९८
ता सबारे कृपा करि प्रभुत चलिला ।
सेइत पाठान सब वैरागी हइला ॥१९९
पाठान वैष्णव बलि हैल तार ख्याति ।
सर्व्वत्र गाइये बुले महाप्रभुर कीर्त्ति ॥२००
सेइ विजुली खान हैल महाभागवत ।
सर्व्व तीर्थे हैल तार परम महत्त्व ॥२०१
ऐछे लीला करे प्रभु श्रीकृष्णचैतन्य ।
पश्चिम आसिया कैल यवनादि धन्य ॥२०२
सोरोक्षेत्रे आसि प्रभु कैल गङ्गास्नान ।
गङ्गातीरपथे कैल प्रयागे पयान ॥२०३
सेइ विप्र कृष्णदासे प्रभु विदाय दिला ।
योड़हाते दुइजन कहिते लागिला ॥२०४
प्रयाग पर्य्यन्त दुँहे तोमा सङ्गे याव ।
तोमार चरण सङ्ग पुनः काँहा पाव ॥२०५
म्लेच्छ देश केह काँहा करये उतपात ।
भट्टाचार्य्य आर्य्य कहिते ना जाने बात २०६
शुनि महाप्रभु ईषत् हासिते लागिला ।
सेइ दुइजन प्रभुर सङ्गे चलि आइला ॥२०७
येइ येइ जन प्रभुर पाइला दरशन ।
सेइ सेइ प्रेमे करे कृष्णसंकीर्त्तन ॥२०८
तार सङ्गे अन्यान्य, तार सङ्गे आन ।
एइमत वैष्णव कैल सब देश ग्राम ॥२०९
दक्षिण याइते यैछे शक्ति प्रकाशिल ।
सेइ मत पश्चिमदेश प्रेमे भासाइल ॥२१०
एइमत चलि प्रभु प्रयाग आइला ।
दश दिन त्रिवेणीते मकरस्नान कैला ॥२११
वृन्दावनगमन प्रभुर चरित्र अनन्त ।
सहस्र वदन यार नाहि पाय अन्त ॥२१२
ताहा के कहिते पारे क्षुद्र जीव हैञा ।
दिग्-दरशन कैल सूत्र करिञा ॥२१३
अलौकिक लीला प्रभुर अलौकिक रीति ।
शुनिलेओ भाग्यहीनेर ना हय प्रतीति ॥२१४
आद्योपान्त चैतन्यलीला अलौकिक जान ।
श्रद्धा करि शुन इहा, सत्य करि मान ॥२१५
येइ तर्क करे इहा, सेइ मूर्खराज ।
आपनार मुण्डे आपनि पाड़े बाज ॥२१६
चैतन्यचरित एइ अमृतेर सिन्धु ।
जगत आनन्दे भासाय यार एक बिन्दु ॥२१७

श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२१९

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्य खण्डे श्रीवृन्दावनदर्शनविलासो नाम अष्टादशः परिच्छेदः ॥१८॥



❀ ऊनविंश परिच्छेद ❀

वृन्दावनीयां रसकेलिवार्त्तां,
कालेन लुप्तां निजशक्तिमुत्कः ।
सञ्चार्य्य रूपे व्यतनोत् पुनः सः
प्रभुर्विधौ प्रागिव लोकसृष्टिम् ॥१॥

टीका—प्रागिव प्रभुः ईश्वरः विधौ ब्रह्मणि निजशक्ति सञ्चार्य्यं लोकसृष्टि व्यतनोत्, तथा सः चैतन्यः उत्कः उत्कण्ठितः सन् रूपे श्रीरूपगोस्वामिनि वृन्दावनीयां रसकेलिवार्त्तां पुनः मुहुः व्यतनोत् ।१।

प्राचीन काल में प्रभु भगवान् जिस प्रकार ब्रह्मा में शक्ति सञ्चार पूर्वक लोक सृष्टि कार्य्य किये थे, उसी प्रकार श्रीचैतन्य देव भी रूप गोस्वामि को शक्ति प्रदान कर श्रीराधा कृष्ण की लुप्त वृन्दावन लीला का प्रकाश किये थे ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
श्रीरूप सनातन रहे रामकेलि ग्रामे ।
प्रभुके मिलिया गेल आपन भवने ॥२
दुइ भाइ विषयत्यागेर उपाय सृजिल ।
बहु धन दिया ब्राह्मण बरिल ॥३
कृष्णमन्त्रे कराइल दुइ पुरश्चरण ।
अचिराते पाइबारे चैतन्यचरण ॥४

श्रीरूप गोसाञि तबे नौकाते भरिञा ।
आपनार घर आइला बहु धन लैञा ॥५
ब्राह्मण वैष्णवे दिल तार अर्द्ध धने ।
एक चौठि धन दिल कुटुम्बभरणे ॥६
दण्ड बन्ध लागि चौठि सञ्चय करिल ।
भाल भाल विप्र स्थाने स्थाप्य राखिल ॥७
गौड़े राखिल मुद्रा दश हाजारे ।
सनातन व्यय करे, रहे मुदिघरे ॥८
श्रीरूप शुनिला प्रभुर नीलाद्रिगमन ।
बनपथे याबेन प्रभु श्रीवृन्दावन ॥९
रूप गोसाञि नीलाचले पाठाइला दुइजन ।
प्रभु यबे वृन्दावने करेन गमन ॥१०
शीघ्र आसि मोरे तार दिबे समाचार ।
शुनिया तदनुरूप करिब व्यवहार ॥११
एथा सनातन गोसाञि भाबे मने मन ।
राजा मोरे प्रीति करे से मोर बन्धन ॥१२
कोनमते राजा यदि मोरे क्रुद्ध हय ।
तबे अव्याहति करिल निश्चय ॥१३
अस्वास्थ्येर छद्म करि रहे निज घरे ।
राजकार्य्य जाड़िल ना याय राजद्वारे ॥१४
लोभी कायस्थगण राजकार्य्य करे ।
आपने स्वगृहे करे शास्त्रेर बिचारे ॥१५
भट्टाचार्य्य पण्डित विश त्रिश लैञा ।
भागवत विचार करे सभाते वसिञा ॥१६
आर दिन गौड़ेश्वर सङ्गे एक जन ।
आचम्बिते गोसाञि-सभाते कैल आगमन ॥१७
पातसा देखिया सबे सम्भ्रमे उठिला ।
सम्भ्रमे आसन दिया राजा बसाइला ॥१८

राजा कहे, तोमार स्थाने वैद्य पाठाइल ।
वैद्य कहे, व्याधि नाहि सुस्थ ये देखिल ॥१९
आमार ये किछु कार्य्य सब तोमा लैञा ।
कार्य्य छाड़ि रहिला तुमि घरेते बसिञा ॥२०
मोर यत कार्य्य काम सब कैले नाश ।
कि तोमार हृदये आछे कह मोर पाश ॥२१
सनातन कहे, नहे आमा हैते काम ।
आर एक जन दिया कर समाधान ॥२२
तबे क्रुद्ध हञा राजा कहे आरबार ।
तोमार बड़ भाइ करे दस्युव्यवहार ॥२३
जीव पशु मारि कैल चाकला सब नाश ।
एथा तुमि कैले मोर सर्व्वकार्य्य नाश ॥२४
सनातन कहे, तुमि स्वतन्त्र गौड़ेश्वर ।
येइ येइ दोष करे देह तार फल ॥२५
एत शुनि गौड़ेश्वर उठि घरे गेला ।
पलाइबे बलि सनातनेरे बान्धिला ॥२६
हेनकाले गेल राजा उड़िया मारिते ।
सनातने कहे, तुमि चल मोर साथे ॥२७
तिँहो कहे, याबे तुमि देवताय दुःखदिते ।
मोर शक्ति नाहि तोमार सङ्गे याइते ॥२८
तबे तारे बान्धि राखि करिला गमन ।
एथा नीलाचल हैते प्रभु चलिला वृन्दावन ।२९
तबे सेइ दुइ चर रूप-ठाँइ आइला ।
वृन्दावन चलिला प्रभु आसिया कहिला ॥३०
शुनिया श्रीरूप लिखिल सनातन ठाञि ।
वृन्दावने चलिला चैतन्य गोसाञि ॥३१
आमि दुइ भाइ चलिलाम ताँहारे मिलिते ।
तुमि यैछे तैछे छुटि आइस ताँहा हैते ॥३२
दश सहस्र मुद्रा तथा आछे मुदिस्थाने ।
ताहा दिया कर शीघ्र आत्मविमोचने ॥३३
यैछे तैछे छुटि तुमि आइस वृन्दावन ।
एत लिखि दुइ भाइ करिला गमन ॥३४
अनुपम मल्लिक तार नाम श्रीवल्लभ ।
रूप गोसाञिर छोट भाइ परम वैष्णव ॥३५
ताँहा लञा श्रीरूप प्रयाग आइला ।
महाप्रभु ताहा शुनि आनन्दित हैला ॥३६
प्रभु चलियाछेन विन्दुमाधव दर्शने ।
लक्ष लक्ष लोक आइसे प्रभुर मिलने ॥३७
केह कान्दे केह हासे केह नाचे गाय ।
कृष्ण कृष्ण बलि केह गड़ागड़ि याय ॥३८
गङ्गायमुना प्रयाग नारिल डुबाइते ।
प्रभु डुबाइला कृष्ण प्रेमेर वन्याते ॥३९
भिड़ देखि दुइ भाइ रहिला निर्ज्जने ।
प्रभुर आवेश हैल माधव दर्शने ॥४०
प्रेमावेशे नाचे प्रभु हरिध्वनि करि ।
ऊर्द्ध्व बाहु करि बले बल हरि हरि ॥४१
प्रभुर महिमा देखि लोके चमत्कार ।
प्रयागे प्रभुर लीला नारि वर्णिवार ॥४२
दाक्षिणात्य विप्र सने आछे परिचय ।
सेइ विप्र निमन्त्रिया निल निजालय ॥४३
विप्रगृहे आसि प्रभु निभृते बसिला ।
श्रीरूप वल्लभ दुँहे आसिया मिलिला ४४
दुइ गुच्छ तृण दुँहे दशने धरिञा ।
प्रभु देखि दूरे पड़े दण्डवत हैञा ॥४५
नाना श्लोक पड़ि उठे पड़े बार बार ।
प्रभु देखि प्रेमावेश हइल दुँहार ॥४६

श्रीरूप देखि प्रभुर प्रसन्न हैल मन।
उठ उठ रूप आइस बलिला वचन ॥४७
कृष्णेर करुणा किछु ना याय वर्णन।
विषयकूप हैते काड़िल दुइ जन ॥४८

तथाहि हरिभक्तिविलासस्य बशमविलासे एकनवत्यङ्कधृतं इतिहाससमुच्चयोक्त भगवद्वाक्यम्-

न मे भक्तश्चतुर्व्वेदी मद्भक्तः श्वपचः प्रियः।
तस्मै देयं ततो ग्राह्यं स च पूज्यो यथा ह्यहं ।२

टीका—चतुर्व्वेदी चतुर्व्वेदपाठकः जनः मे भक्तः न, मद्भक्तः श्वपचोपि प्रियः स्यात्। तस्मै भक्ताय मया प्रेम देयं, ततः तस्मात् प्रेम ग्राह्यं, अहं यथा, स च तथा पूज्यः ॥२॥

चतुर्वेदाध्यायी होने से ही जो मेराभक्त होता है, ऐसा नहीं, मेरे प्रति भक्ति होने से चण्डाल भी मेरा प्रिय होता है। मैं मेरे भक्त को प्रेम प्रदान करता हूँ, एवं उस के प्रेम का विषय भी बनता हूँ, मैं जिस प्रकार जगत् पूज्य हूँ, मेरा भक्त भी उस प्रकार सब के सम्माननीय है॥२॥

एइ श्लोक पड़ि दुँहारे कैल आलिङ्गन।
कृपाते दुँहार माथाय धरिल चरण ॥४९
प्रभुकृपा पाञा दुँहे दुइ हात युड़ि।
दीन हञा स्तुति करि विनय आचरि ॥५०

तथाहि श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

नमो महावदान्याय कृष्णप्रेमप्रदाय ते।
कृष्णाय कृष्णचैतन्यनाम्ने गौरत्विषे नमः॥३॥

टीका—महावदान्याय उदारचरिताय, कृष्णप्रेम प्रदाय ते, कृष्णचैतन्यनाम्ने, गौरत्विषे गौरवर्णाय, कृष्णाय कृष्णस्वरूपाय नमः॥३॥

उदार चरित कृष्णप्रेम प्रदाता श्रीकृष्णचैतन्य नामा, गौरकान्ति कृष्ण स्वरूप को प्रणाम करता हूँ।३

तथाहि गोविन्दलीलामृते (१।२)—

योऽज्ञानमत्तं भुवनं दयालु--

रुल्लाघयन्नप्यकरोत् प्रमत्तं।
स्वप्रेमसम्पत्सुधयाद्भुतेहं
श्रीकृष्णचैतन्यममुं प्रपद्ये ॥४॥

टीका—यः दयालुः कृपालुः सन् अज्ञानमत्तं भुवनं उल्लाघयन् अज्ञानरोगेभ्यः मोचयित्वा अपि स्वप्रेमसम्पत् सुधया प्रमत्तं अकरोत्, अमुं अद्भुतेहं अद्भुतचेष्टितं श्रीकृष्णचैतन्यं प्रभुं प्रपद्ये ॥४॥

जिन्होंने दया करके अज्ञानमत्त जनगण को विमुक्त करके स्वीय प्रेम सम्पदामृत में निमग्न किया, मैं उन अद्भुत चेष्टित-श्रीकृष्णचैतन्य की शरण ग्रहण करता हूँ॥४॥

तबे महाप्रभु तारे निकटे वसाइला।
सनातनेर वार्त्ता कह ताहारे पुछिला ॥५१
रूप कहेन तिँह बन्दी राज-घरे।
तुमि यदि उद्धार, तबे हइबे उद्धारे ॥५२
प्रभु कहेन, सनातनेर हइयाछे मोचन।
अचिराते आमा सह हइबे मिलन ॥५३
मध्याह्न करिते विप्र प्रभुके कहिला।
रूप गोँसाइ से दिवस तथाइ रहिला ॥५४
भट्टाचार्य्य दुइ भाइ निमन्त्रण कैल।
प्रभुर शेष प्रसादपात्र दुइ भाइ पाइल ॥५५
त्रिवेणी उपर प्रभुर वासाघर स्थान।
दुइ भाइ वासा कैल प्रभुसन्निधान ॥५६
से काले वल्लभभट्ट रहे आम्बुली ग्रामे।
महाप्रभु आइला शुनि आइला ताँर स्थाने ५७
तिँह दण्डवत् कैल, प्रभु, कैल आलिङ्गन।
दुइ जने कृष्णकथा हैल कतक्षण ॥५८
कृष्णकथाय महाप्रभुर प्रेम उथलिल।
भट्टेर सङ्कोचे प्रभु सम्बरण कैल ॥५९
अन्तरे गर गर प्रेम नहे सम्बरण।

देखि चमत्कार हैल वल्लभभट्टेर मन ।६०
तबे भट्ट महाप्रभुके निमन्त्रण कैल ।
महाप्रभु दुइ भाइ ताहारे मिलाइल ॥६१
दुइ भाइ दूर हैते भूमिते पड़िया ।
भट्टे दण्डवत् कैल अति दीन हैया ॥६२
भट्ट मिलिबारे याय, दुँहे पलाय दूरे ।
अस्पृश्य पामर मुञि ना छुँइह मोरे ॥६३
भट्टे विस्मय हैल, प्रभुर हर्ष मन ।
भट्टेरे कहिला प्रभु तार विवरण ॥६४
इहाँ ना स्पर्शिह इह जाति अति हीन ।
वैदिक याज्ञिक तुमि कुलीन प्रवीण ॥६५
दोंहार मुखे निरन्तर कृष्णनाम शुनि ।
भट्ट कहे, प्रभुर किछु ईङ्गित भङ्गी जानि ६६
दोंहार मुखे कृष्णनाम करिछे नर्त्तन ।
इहों तो अधम नहे हय सर्व्वोत्तम ॥६७

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।३३।८)

कपिलदेवं प्रति देवहूतिवाक्यम्—
अहो बत श्वपचोऽतो गरीयान्
यज्जिह्वाग्रे वर्त्तते नाम तुभ्यं ।
तेपुस्तपस्ते जुहुवुः सस्नुरार्य्या
ब्रह्म नूचूर्नाम गृणन्ति ये ते ॥५॥

कपिल देव के प्रति देवहूति का कथन यह है, आश्चर्य्य यह है कि—जिस की जिह्वा में तुम्हारे नाम विलसित है, उस के द्वारा ही तप, होम प्रभृति सत्कर्म्म का अनुष्ठान सम्पन्न हुआ है ॥५॥

शुनि महाप्रभु तारे बहु प्रशंसिला ।
प्रेमाविष्ट हैञा श्लोक पड़िते लागिला ॥६८

तथाहि हरिभक्तिसुधोदये (३।१२)

शुचिः सद्भक्तिदीप्ताग्निदग्धदुर्ज्जातिकल्मषः ।
श्वपाकोपि बुधैः श्लाघ्यो न वेदज्ञोऽपि नास्तिकः ।६

टीका—बुधैः विचक्षणैः श्वपाकोऽपि चण्डालोऽपि श्लाघ्यः, नास्तिकः वेदज्ञोऽपि न श्लाघ्यः । श्वपाकः किम्भूतः ?—सद्भक्तिदीप्ताग्निदग्धदुर्ज्जातिकल्मषः। पुनः शुचिः ॥६॥

सद् भक्ति रूप ज्वलन्त अनल के द्वारा जिस के हीन जातीय पातक पुञ्ज दग्धी भूत होकर चित्त विमल हुआ है बुद्धिमान् व्यक्ति गण उस प्रकार चण्डाल को सम्मान प्रदान करते हैं, किन्तु नास्तिक व्यक्ति वेदवित् होने पर भी उन सब के द्वारा उस प्रकार सम्मानित नहीं होता है ॥६॥

तथाहि हरिभक्तिसुधोदये (३।११)—

भगवद्भक्तिहीनस्य जातिः शास्त्रं जपस्तपः ।
अप्राणस्यैव देहस्य मण्डनं लोकरञ्जनं ॥७॥

टीका—भगवद्भक्तिहीनस्य जातिः सद्वंशे उत्पत्तिः, शास्त्रं पाण्डित्यं, जपः नामजपः तपः चान्द्रायणप्रभृति, समस्तं विफलं भवति । तत्र दृष्टान्तो यथा,—अप्राणस्य प्राणविहीनस्य देहस्य मण्डनं भूषणं जनविमोहनमेव ॥७॥

हरिभक्ति सुधोदय में वर्णित है—
भगवद् भक्ति रहित जन के पक्ष में सद् वंश में जन्म पाण्डित्य जप, तप, सभी विफल होते हैं, जिस प्रकार प्राण हीन पुत्तलिका को जन मनोरञ्जनार्थ सज्जित किया जाता है, भक्ति हीन का गुण भी उस प्रकार होता है ॥७॥

प्रभुर प्रेमावेश आर प्रभाव भक्तिसार ।
सौन्दर्य्यादि देखि भट्टेर हैल चमत्कार।६९
स्वगणे प्रभुके भट्ट नौकाते चड़ाइया ।
भिक्षा दिते निज घरे चलिला लइया ॥७०
यमुनार जल देखि चिक्कण श्यामल ।
प्रेमावेशे महाप्रभु हइला विह्वल ॥७१
हुङ्कार करि यमुनार जले दिल झाँप ।
प्रभु देखि सबार मने हैल भय काँप ॥७२

आस्ते व्यस्ते सबे धरि प्रभु उठाइला।
नौकार उपरे प्रभु नाचिते लागिला ॥७३
महाप्रभुर भरे नौका करे टलमल।
डुबिते लागिला नौका झलके भरे जल ॥७४
यदि भट्टेर आगे प्रभुर धैर्य्य हैल मन।
दुर्व्वार उद्भट प्रेम नहे सम्वरण ॥७५
देश पात्र देखि प्रभु यबे धैर्य्य हैला।
आम्बुलीर घाटे नौका आसि उत्तरिला ॥७६
भये भट्ट सङ्गे रहि मध्याह्न कराइया।
निज गृहे आनिला प्रभुके सङ्गे लइया ॥७७
आनन्दित हञा भट्ट दिल दिव्यासन।
आपने करिल प्रभुर पाद प्रक्षालन ॥७८
सवंशे सेइ जल मस्तके धरिल।
नूतन कौपीन वहिर्व्वास पराइल ॥७९
गन्ध पुष्प धूप दीपे महापूजा कैला।
भट्टाचार्य्ये मान्य करि पाक कराइला ॥८०
भिक्षा कराइला प्रभुके सस्नेह यतने।
रूप गोसाञि दुइ भाइर कराइला भोजने ८१
भट्टाचार्य्य श्रीरूपे देयाइला अवशेष।
तबे सेइ प्रसाद कृष्णदास पाइल शेष ॥८२
मुखवास दिया प्रभुके कराइल शयन।
आपने भट्ट करेन प्रभुर पादसम्बाहन ॥८३
प्रभु पाठाइला तारे करिते भोजने।
भोजन करि आइला तिँह प्रभुर चरणे ।८४
हेनकाले आइला रघुपति उपाध्याय।
तिरोहिता पण्डित बड़ वैष्णव महाशय ॥८५
आसि तिँह कैल प्रभुर चरण वन्दन।
कृष्णे मति रहु बले प्रभुर वचन ॥८६
शुनि आनन्दित हैल उपाध्यायेर मन।
प्रभु ताँरे कैल कह कृष्णेर वर्णन ॥८७
निज कृत कृष्णलीलाश्लोक पड़िल।
शुनि महाप्रभुर महाप्रेमावेश हैल ॥८८

तथाहि पद्यावल्यां श्रीनन्दप्रणामे प्रथमाङ्कधृत-
रघुपत्युपाध्यायश्लोके तस्यैव वाक्यम्—

श्रुतिमपरे स्मृतिमपरे भारतमन्ये भजन्तु भवभीताः।
अहमिह नन्दं वन्दे यस्यालिन्दे परं ब्रह्म ॥८॥

टीका—भवभीताः संसारपातकभीताः अपरे ऋषयः श्रुतिं, अपरे सज्जनाः स्मृतिं स्मृत्यनुमोदितं ईश्वरं, अन्ये सन्तः भारतं महाभारतप्रोक्तं साकारं भजन्तु। अहन्तु इह वृन्दारण्ये नन्दं वन्दे, यस्य अलिन्दे प्राङ्गणे परं ब्रह्म विचरति ॥८॥

कतिपय व्यक्ति भवभीत होकर वेदानुमोदित निराकार पर ब्रह्म की उपासना करते हैं, अपर व्यक्ति स्मृत्यनुमोदित ईश्वरः की उपासना करते हैं, एवं भारतादि इतिहास पुराण प्रसिद्ध साकार ब्रह्म की उपासना भी कतिपय व्यक्ति करते हैं, किन्तु मैं वृन्दावनस्थ सौभाग्य शाली नन्द की वन्दना करता हूँ, जिन के प्राङ्गण में निरन्तर पर ब्रह्म विहार करते रहते हैं ॥८॥

आगे कह प्रभु वाक्ये उपाध्याय कहिल।
रघुपति उपाध्याय नमस्कार कैल ॥८९

तथाहि पद्यावल्यां एकनवत्यङ्कधृतरघुपत्युपाध्यायोक्त
श्लोके तस्यैव वाक्यम्—

कं प्रति कथयितुमीशे सम्प्रति को वा प्रतीतिमायातु।
गोपतितनयाकुञ्जे गोपबधूटीविटं ब्रह्म ॥९॥

टीका—गोपति-तनयाकुञ्जे यमुनातीरस्थ-कुञ्ज-कानने गोपबधूटीविटं ब्रह्म विराजते। एतत् कं प्रति कथयितुं ईशे समर्थो भवामि ? संप्रति को वा प्रतीतिं आयातु प्रत्ययं करोतु ॥९॥

यमुना तीरवर्ती कुञ्जकानन में पूर्ण ब्रह्म

नवीना गोपबालावृन्द के मन श्चौर रूप में विराजित है, यह बात किसको कह सकता हूँ ? एवं मेरी बात में किसको विश्वास होगा ? ॥६॥

प्रभु कहेन कह तिँहो पड़ कृष्णलीला ।
प्रेमावेशे प्रभुर देह मन ग्रालुइला ॥६०
प्रेम देखि उपाध्याय हैल चमत्कार ।
मनुष्य नहे इह कृष्ण करिल निर्द्धार ॥६१
प्रभु कहे, उपाध्याय, श्रेष्ठ मान काय ? ।
'श्याममेव परं रूपं' कहे उपाध्याय ॥६२
श्यामरूपेर वासस्थान श्रेष्ठ मान काय ? ।
'पुरी मधुपुरी वरा' कहे उपाध्याय ॥६३
बाल्य पोगण्ड कैशोर श्रेष्ठ मान काय ? ।
'वयः कैशोरकं ध्येयं' कहे उपाध्याय ॥६४
रसगणमध्ये तुमि श्रेष्ठ मान काय ।
आद्य एव परो रसः कहे उपाध्याय ॥६५
प्रभु कहे, भाल तत्त्व शिखाइला मोरे ।
एत बलि श्लोक पड़े गद्गद स्वरे ॥६६

तथाहि पद्यावल्यां त्रिसप्ततितमाङ्कधृत-
माधवेन्द्रपुरीकृत-श्लोकः—

श्याममेव परं रूपं पुरी मधुपुरी वरा ।
वयः कैशोरकं ध्येयमाद्य एव परो रसः ॥१०॥

टीका—रूपाणां मध्ये श्यामं रूपं परं श्रेष्ठं, पुरीणां मध्ये मधुपुरी वरा प्रधाना, वयसां मध्ये कैशोरकं ध्येयं, रसानां मध्ये आद्य एव परः ॥१०॥

ईश्वर स्वरूप के रूपों के मध्य में श्याम रूप ही प्रधान है । पुरीके मध्य में मधुपुरी ही श्रेष्ठ है, वयस के मध्य में कैशोरावस्था ही ध्यान योग्य है, एवं रस के मध्य में मधुर रस ही सर्वोत्तम है ॥१०॥

प्रेमावेशे प्रभु ताँरे कैल ग्रालिङ्गन ।
प्रेमे मत्त हञा तिँह करेन नर्त्तन ॥६७
देखि वल्लभभट्ट मने चमत्कार हैल ।
दुइ पुत्र ग्रानि प्रभुर चरणे पड़िल ॥६८
प्रभु देखिबारे ग्रामेर सब लोक ग्राइल ।
प्रभु दर्शने सब लोक कृष्णभक्त हैला ॥६९
ब्राह्मण सकल करेन प्रभुर निमन्त्रण ।
वल्लभभट्ट ताँहा सब करे निवारण ॥१००
प्रेमोन्मादे पड़े गोसाञि मध्य यमुनाते ।
प्रयागे चालाब इहाँ ना दिब रहिते ॥१०१
यार इच्छा प्रयाग याइ करिबे निमन्त्रण ।
एत बलि प्रभु लञा करिल गमन ॥१०२
गङ्गापथे महाप्रभु नौकाते बसाइया ।
प्रयागे ग्राइला भट्ट गोसाञि लइया ॥१०३
लोकभिड़भये प्रभु दशाश्वमेधे याञा ।
रूप गोसाञिके शिक्षा करान शक्ति सञ्चारिया ॥१०४
कृष्णतत्त्व भक्तितत्त्व रसतत्त्व प्रान्त ।
सब शिखाइल प्रभु भागवतसिद्धान्त ॥१०५
रामानन्द-पाशे यत सिद्धान्त शुनिल ।
रूपे कृपा करि ताहा सब सञ्चारिल ॥१०६
श्रीरूपहृदये प्रभु शक्ति सञ्चारिला ।
सर्व्व तत्त्व निरूपिया प्रवीण करिला ॥१०७
शिवानन्द सेनेर पुत्र कवि कर्णपूर ।
रूपेर मिलनग्रन्थे लिखियाछेन प्रचुर ॥१०८

तथाहि चैतन्यचन्द्रोदयनाटके नवमाङ्के चतुरधिक-
शततमश्लोके द्वयोर्म्मिलने सार्व्वभौमं प्रति
वार्त्ताहारिवाक्यम्—

कालेन वृन्दावनकेलिवार्त्ता,
लुप्तेति तां ख्यापयितुं विशिष्य ।

कृपामृतेनाभिषिषेच देव-
स्तत्रैव रूपञ्च सनातनञ्च ॥११॥

टीका—कालेन वृन्दावनकेलिवार्त्ता लुप्ता आसीत् इति तां वार्त्तां ख्यापयितुं विशिष्य देवः श्रीचैतन्यः कृपामृतेन करणेन तत्रैव च रूपं सनातनञ्च अभिषिषेच ॥११॥

कालक्रम से राधाकृष्ण की वृन्दावन लीला वार्त्ता विलुप्त हो गई थी, उसका प्रचारार्थ श्रीचैतन्य देव कृपा पूर्वक श्रीरूप एवं श्रीसनातन गोस्वामी को प्रयाग एवं काशी में उस विषय में अभिषिक्त किये थे ॥११॥

तथाहि चैतन्यचन्द्रोदयनाटके (९।७०) रूपानुग्रहे प्रतापरुद्रं प्रति वार्त्ताहारिवाक्यम्—

यः प्रागेव प्रियगुणगणैर्गाढ़बद्धोऽपि मुक्तो,
गेहाध्यासाद्रस इव परो मूर्त्त एवाप्यमूर्त्तः।
प्रेमालापैर्दृढ़तरपरिष्वङ्गरङ्गैः प्रयागे,
तं श्रीरूपं सममनुपमेनानुजग्राह देवः ॥१२॥

टीका—यः श्रीरूपः प्रागेव प्रियगुणगणैः गाढ़-बन्धोऽपि प्रेमालापैः तथा दृढ़तरपरिष्वङ्गरङ्गैः गृहाध्यासात् भवमोहात् मुक्तः सन् अमूर्त्तः अप्येव परः रसः मूर्त्तः इव शोभयामास, देवः चैतन्यः अनुपमेन समं तं श्रीरूप प्रयागे अधुना अनुजग्राह ।१२

जो श्रीरूप गोस्वामी पहले से ही श्रीचैतन्यदेव के गुणों से आबद्ध होने के कारण संसार में बद्ध नहीं हुये, शृङ्गार रस रूप हीन होने पर भी जिनके मध्य में मूर्त्तिमान हो गया था। अर्थात् श्रीरूप-गोस्वामी के वर्णन में शृङ्गार रस जैसे मूर्त्तिमान हो गया था, अनुपम के सहित उन श्रीरूप गोस्वामी को प्रयाग में श्रीचैतन्यदेव प्रेमालाप एवं प्रगाढ़ आलिङ्गन के द्वारा अनुग्रह किये थे ॥१२॥

तथाहि चैतन्यचन्द्रोदयनाटके (९।७५) शक्तिसञ्चारे प्रतापरुद्रं प्रति सार्व्वभौमवाक्यम्—

प्रियस्वरूपे दयितस्वरूपे, प्रेमस्वरूपे सहजाभिरूपे।
निजानुरूपे प्रभुरेकरूपे, ततान रूपे स्वविलासरूपे ।१३

टीका—प्रभुः रूपे रूप-गोस्वामिनि ततान विस्तारयामास। रूपे किम्भूते ?—प्रियस्वरूपे, पुनः दयितरूपे, पुनः प्रेमस्वरूपे, पुनः सहजाभिरूपे, पुनः निजानुरूपे, पुनःएकरूपे, पुनः स्वविलासरूपे ॥१३

श्रीचैतन्य देव श्रीरूप गोस्वामीको प्रेम प्रदान किये थे। श्रीरूपगोस्वामी श्रीचैतन्य देव के भक्त, प्रिय, एकात्मा एवं उनके समान ही स्वभावतः सुन्दर थे, इस प्रकार अभिन्नात्मा श्रीरूप गोस्वामी में श्रीराधा कृष्ण के लीला विलास का तात्पर्य्य संक्रमित किये थे ॥१३॥

एइमत कर्णपूर लिखे स्थाने स्थाने।
प्रभु कृपा कैल यैछे रूप सनातने ॥१०९
महाप्रभुर यत बड़ बड़ भक्त मात्र।
रूप सनातन सवार कृपा-गौरव पात्र ॥११०
केह यदि देशे याय देखि वृन्दावन।
तारे प्रश्न करेन प्रभुर पारिषदगण ॥१११
"कह ताँहा कैछे रहे रूप सनातन।
कैछे रहे, कैछे वैराग्य, कैछे भोजन ॥११२
कैछे अष्टप्रहर करेन श्रीकृष्णभजन।"
तबे प्रशंसिया कहे सेइ भक्तगण ॥११३
"अनिकेतन दुँहे रहे, यत वृक्षगण।
एकेक वृक्षेर तले एकेक रात्रि शयन ॥११४
विप्रगृहे स्थूल भिक्षा काँहा माधुकरी।
शुष्क रुटी चाना चिवाय भोग परिहरि ॥११५
करोया मात्र हाते काँथा छिँड़ा बहिर्व्वास।
कृष्णकथा कृष्णनाम नर्त्तन उल्लास ॥११६
अष्टप्रहर कृष्णभजन चारि दण्ड शयने।
नाम संकीर्त्तन प्रेमे नहे सेह दिने ॥११७
कभु भक्तिरसशास्त्र करये लिखन।
चैतन्यकथा शुने करे चैतन्यचिन्तन ॥"११८

एइ शुनि महान्तेर महासुख हय ।
चैतन्येर कृपा याँहा ताँहा कि विस्मय ॥११९

चैतन्येर कृपा रूप लिखियाछे आपने ।
रसामृतसिन्धु ग्रन्थेर मङ्गलाचरणे ॥१२०

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे भक्तिसामान्य लहर्य्यां द्वितीय-श्लोके—
श्रीरूप-गोस्वामिवाक्यम्—

हृदि यस्य प्रेरणया प्रवर्त्तितोऽहं वराकरूपोऽपि ।
तस्य हरेः पदकमलं वन्दे चैतन्यदेवस्य ॥१४॥

टीका—हृदि मम चेतसि यस्य प्रेरणया इङ्गितेन वराकरूपोऽपि अहं रसकीर्त्तने प्रवर्त्तितः, तस्य हरेः चैतन्यदेवस्य पदकमलं चरणपद्मं वन्दे ॥१४॥

भक्ति रसामृतसिन्धु में स्वयं ही श्रीरूप गोस्वामी लिखे हैं, मैं क्षुद्र होने पर भी अन्तः करण में जिनकी प्रेरणा से श्रीराधा कृष्ण भक्ति विषयक ग्रन्थ रचना में प्रवृत्त हूँ। उन चैतन्यदेव की वन्दना करता हूँ ॥१४॥

एइमत दश दिन प्रयागे रहिया ।
श्रीरूपे शिक्षा दिल शक्ति सञ्चारिया ॥१२१

प्रभु कहेन, "शुन रूप भक्तिरसेर लक्षण ।
सूत्ररूपे कहि विस्तार ना याय वर्णन ॥१२२

पारावार शून्य गम्भीर भक्तिरससिन्धु ।
तोमा चाखाइते तार कहि एक बिन्दु ॥१२३

एइ त ब्रह्माण्ड भरि अनन्त जीवगण ।
चौराशि लक्ष योनिते करये भ्रमण ॥१२४

केशाग्र शतेक भाग पुनः शतांश करि ।
तार सम सूक्ष्म जीवेर स्वरूप विचारि ॥१२५

तथाहि श्रीमद्भागवते दशमस्कन्धे सप्ताशीतितमाध्याये षड्‌विंशश्लोकव्याख्यायां धृतः श्रुतिः—

केशाग्रशतभागस्य शतांशसदृशात्मकः ।
जीवः सूक्ष्मस्वरूपोऽयं संख्यातीतो हि चित्कणः ॥१५

टीका—अयं जीवः जीवात्मा केशाग्रशतभागस्य शतांशसदृशात्मकः, सूक्ष्मस्वरूपः, हि निश्चितं संख्यातीतः, चित्कणः चित्स्वरूपस्य भगवतः अंशः ।

केशाग्रेति । अयं जीवश्चितः परमात्मनः कणः,—विभिन्नांश रूपः पुञ्जायमानस्याग्नेः स्फुलिङ्ग इव, यथाग्नेर्बहवः क्षुद्राविस्फुलिङ्गा व्युच्चरन्ति, एवमेवात्मनः सर्वे जीवाभिद्यन्ते इत्यादि श्रुतेः । केशाग्र शत भागस्य केशाग्र शत भागैक भागस्य शतांशस्य शतांशस्य शतांशैकांशस्य सदृश आत्मा स्वरूपं यस्य सः, एतत्तु सूक्ष्मत्वे तात्पर्य्यम् । अतएव सूक्ष्मः—अत्यणु स्वरूप यस्येति सः । अतएव संख्यातेति अनन्तः, जातावेक वचनम् ॥१५॥

केशाग्र शत भाग के एकभाग, उसके शतांश के एकांश सदृश जिसका स्वरूप अतिशय सूक्ष्म है, वह चित् परमाणु जीव अनन्त है। अर्थात् जीव शक्ति विशिष्ट परमात्मा का अंश जीव है ॥१५॥

तथाहि पञ्चदश्यां चित्रदीपे त्र्यशीतितमः श्लोकः—

बालाग्रशतभागस्य शतधा कल्पितस्य च ।
भागो जीवः स विज्ञेयो इति चाह परा श्रुतिः ॥१६

टीका—सः जीवः शतधा कल्पितस्य बालाग्रशत भागस्य भागः विज्ञेयः, इति परा श्रुतिः आह ॥१६

जीवात्मा को केशाग्र के शतांश कल्पित एकांश जानना होगा। पराश्रुति इस प्रकार कहती है ॥१६

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।१६।११)—

गुणिनामप्यहं सूत्रं महताञ्च महानहम् ।
सूक्ष्मानामप्यहं जीवो दुर्ज्जयानामहं मनः ॥१७

टीका—अहं जीवः सूक्ष्माणामपि सूक्ष्मः ॥१७॥

श्रीमद् भागवत के ११।१६।११ में उक्त है—सूक्ष्म पदार्थों के मध्य में मैं जीवात्मा हूँ। अर्थात् जीवात्मा मेरी विभूति है ॥१७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८७।२६)—
श्रीकृष्णमुद्दिश्य वेदस्तुतिः—

अपरिमिता ध्रुवास्तनुभृतो यदि सर्व्वगता-
स्तर्हि न शास्यतेति नियमो ध्रुव नेतरथा ।

अजनि च यन्मयं तदविमुच्य नियन्तृ भवेत्,
सममनुजानतां यदमतं मतदुष्टतया ॥१८॥

टीका—हे ध्रुव ! तनुभृतः देहधारिणः जीवाः यदि अपरिमिताः, ध्रुवाः नित्याः, सर्व्वगताः सन्ति, तर्हि जीवानां शास्यता भवति इति यः नियमः सः न स्यात्, इतरथा न स्यादिति न। च पुनः यन्मयं अजनि, तत् अविमुच्य अपरित्यज्य नियन्तृ भवेत्। किञ्च समं अनुजानतां यत् अमतं। तत्र हेतुः,--मतदुष्टतया मतस्य दोषश्रवणात् ॥१८॥

टीका—ननु प्रोक्तानां जीवानां किं स्वरूपमित्यपेक्षायां प्रथमं परमत व्याक्षेपेण तेषां स्वरूपमाहुरपरिमिता इति।

अपरिमिता असंख्याः प्रतिमहाकल्पं कोटिशमुच्चमाणेष्वपि जीवेषु अनादिना कालेनापि तेषां बाहुल्याभावस्यादर्शनात्। ध्रुवाः—वैष्णवानां मते नित्या एव स्युः। भक्त्या तेषामविद्योपाधि लिङ्ग देहादिषु लीनेषु विशुद्ध चिद् देहाविर्भावात् किन्तु अनन्ता ध्रुवाश्च यदि सर्व गता व्यापकाः स्यु स्ततस्तया साम्याच्छास्यता न स्यात्। इतरथा उक्ताद् व्यापकत्वादेरन्य प्रकारेण। तमेवाहुः—अजनीति, यन्मयं-यद्वह्निमयं विस्फुलिङ्गादिकं अजनि तद् वह्निरूपं अविमुच्य स्वीयतया तत् स्वीकृत्य तस्य विस्फुलिङ्गादे र्नियामकं भवेन, निजांशत्वात् क्षुद्रत्वाच्च। द्विविधा हि चिच्छक्तिः। परमोत्तमा सामान्या चा तत्राद्या—श्रीभगवत्येव विराजते यस्या वृत्ति विशेष स्तत् प्रसादेव पारिषद गणे, अन्तिमा तु काल प्रधान जीवादिषु वर्त्तते। इत्यतः सामान्या चिच्छक्ति वृत्ति विशिष्टा वह्ने र्विस्फुलिङ्गा इव महाप्रलयान्ते परमात्म लक्षण महाचैतन्यरूपाद् वासुदेवाच्चिद्रूपा अनाद्यविद्याभाजो जीवा अभिव्यक्ति यान्तीति श्रीभगवन्नियम्या एवामी।

ननु श्रीविष्णु धर्मोत्तरे—,कल्पानां जनसाम्यं हि मुक्ति नैवोपपद्यते, कदाचिदपि धर्म्मज्ञ तत्र पृच्छामि कारणम्। एकैकस्मिन्नरे मुक्ति कल्पे कल्पे न ते द्विज। अभविष्ट जगच्चान्यं कालस्यादेरभारतः। इति वज्रेण पृष्टः मार्कण्डेयः प्राह। जीवस्यान्य सर्गेण नरेमुक्ति मुपागते। अचिन्त्यशक्ति र्भगवान् जगत् पूरयते सदा। ब्रह्मणासह मुच्यन्ते ब्रह्म लोक मुपागताः। सृज्यन्ते च महाकल्पे तद्विधाश्चापरा जनाः। सर्वे जीवास्तथैवस्युः सर्व कल्पास्तथा नृपेति।

जीवानां सर्ग श्रवणात् कथन्ते अनादय उच्यन्ते ? सत्यम्। कूटीभूत कर्म कदम्बा अप्यनुपस्थित कर्मभोग रहितत्वात् भगवन्माया शक्ति वृत्ति विशेष गह्वर एवानन्ताः खलु जीवानां गण लीनावर्त्तन्ते, तेषां मध्ये केषाञ्चित्तत्र कल्पे प्रादुर्भावनमेव सर्गः, नतु नूतन जीवसृष्टिरिति सर्व वादिनां सम्मतम्।

वैष्णव सिद्धान्ते च अणव एव आराग्र मात्रत्वेन श्रुत्या प्रतिपादनात्। तथा सूक्ष्माणामप्यहं जीव इति भगवद् वचनात्। बालाग्र शतशोभागः कल्पितो यः सहस्रधास्तस्यापि शतशोभागो जीव इत्यभिधीयते इति विष्णु धर्मोत्तर वचनाच्च तेषामणुत्वेऽपि देहव्यापि चैतन्यं सम्भवत्येव यथा गृहेक देशस्थो दीपः सर्वं गृहं तेजसा व्याप्नोति तथायमणुरपि चेतना लक्षणेन स्व प्रभाव विशेषेण सर्वं देहं चेतयति, यथा अयस्कान्तः स्वसन्निहितं लोहञ्चालयतीति। तथा च ब्रह्माण्ड पुराणे-अणुमात्रोऽप्ययं जीवः स्व देहं व्याप्यस्तिष्ठति। यथा व्याप्य शरीराणि हरिचन्दन विप्रुष इति।

किन्तु यद्यपि सामान्यतः सर्व जीवानां स्वरूपमिदमुक्तं। तथापि भक्ति प्रभावेणाविर्भूता लौकिक शक्तीनां भगवत् प्रियाणां स्वरूपं सर्वतो विलक्षणमेव तेहि भक्तेचकप्रियतयैव श्रीभगवन्तमनुभवन्ति तदितरेतु सर्वत्र समतयैवेति तन्निन्दति-सममिति। प्रियेषु प्रियेतरेषु च श्रीभगवन्त सममनु जानतां।

यद्वा जीवानां नियम्यत्वात्तैस्त्वां सममनु जानतां मतस्य ज्ञानस्य दुष्ट तयातद्मतं अज्ञान मेवेत्यर्थः।

यद्वा, ननु भवन्तु ते जीवा स्तस्य नियम्या रुद्रादयस्तु तत समा एवेत्याहु सममिति। रुद्रादिनापि

त्वां समं तुल्यमिति ॥१८॥

हे ध्रुव ! जीव को अपरिमित, एवं सर्वगत-अर्थात् व्यापक स्वीकार करने से, वे आपके शासनाधीन हैं, यह नियम व्याहत होगा। किन्तु उक्त सिद्धान्त स्वीकार न करने से ही इस नियम अव्याहत रहता है।

जिस प्रकार वह्नि से विस्फुलिङ्ग उत्पन्न होता है, वह्नि निजांश एवं क्षुद्र स्फुलिङ्ग को निज रूप में अङ्गीकार कर उसका नियामक होता है, उस प्रकार तुम्हारे विभिन्नांश जीव को स्व स्वरूप मानकर नियामक सिद्ध हो सकता है।

इस प्रकार जीव के सहित समज्ञान से जो लोक आप को देखते हैं, उन सब का ज्ञान दोषाश्रित है।१८

"तार मध्ये स्थावर जङ्गम दुइ भेद।
जङ्गमे तिर्य्यक् जल-स्थलचर भेद ॥१२६
तार मध्ये मनुष्य जाति अति अल्पतर।
तार मध्ये म्लेच्छ पुलिन्द बौद्ध शबर॥१२७
वेदनिष्ठमध्ये अर्द्धेक बेद मुखे माने।
वेदनिषिद्ध पाप करे धर्म्म नाहि गणे ॥१२८
धर्म्मचारिमध्ये बहुत कर्म्मनिष्ठ।
कोटि कर्म्मनिष्ठमध्ये एक ज्ञानी श्रेष्ठ॥१२६
कोटि ज्ञानिमध्ये हय एक जन मुक्त।
कोटि मुक्तमध्ये दुर्ल्लभ एक कृष्णभक्त।१३०
कृष्णभक्त निष्काम अतएव शान्त।
भुक्ति-मुक्ति-सिद्धि-कामी सकलि अशान्त।'१३१

तथाहि श्रीमद्भागवते (६।१४।५)—
शुकदेवं प्रति परीक्षितवाक्यम्—
मुक्तानामपि सिद्धानां नारायणपरायणः।
सुदुर्ल्लभः प्रशान्तात्मा कोटिष्वपि महामुने॥१९

टीका—हे महामुने ! मुक्तानां अतएव सिद्धानां कोटिष्वपि प्रशान्तात्मा नारायणपरायणः सुदुर्ल्लभः ॥१६॥

श्रीमद्भागवत के ६।१४।५ में उक्त है—
हे महामुने ! कोटि कोटि सिद्धि प्राप्त मुक्त पुरुषों के मध्य में नारायण परायण प्रशान्तात्मा मनुष्य सुदुर्ल्लभ है ॥१६॥

"ब्रह्माण्ड भ्रमिते कोन भाग्यवान् जीव।
गुरु-कृष्ण-प्रसादे पाय भक्तिलताबीज ॥१३२
माली हञा करे सेइ बीज आरोपण।
श्रवण-कीर्त्तन-जले करये सेचन ॥१३३
उपजिया बाड़े लता ब्रह्माण्ड भेदि याय।
विरजा ब्रह्मलोक भेदि परव्योम पाय ॥१३४
तबे याय तदुपरि गोलोक वृन्दावन।
कृष्ण चरण कल्पवृक्षे करे आरोहण ॥१३५
ताँहा विस्तारित हञा फले प्रेमफल।
इहा माली सेचे श्रवण-कीर्त्तनादि-जल ॥१३६
यदि वैष्णव अपराध उठे हातिमाता।
उपाड़े बा छिण्डे, तार शुकि याय पाता १३७
तारे माली यत्न करि करे आबरण।
अपराध-हस्ती यैछे ना हय उद्गम ॥१३८
किन्तु यदि लतार अङ्गे उठे उपशाखा।
भुक्ति मुक्ति बाञ्छा यत असंख्य तार लेखा १३६
निषिद्धाचार कुटिनाटि जीव-हिंसन।
लाभ पूजा प्रतिष्ठादि यत उपशाखागण १४०
सेकजल पाञा उपशाखा बाड़ि याय।
स्तब्ध हञा मूलशाखा बाड़िते ना पाय ॥१४१
प्रथमे उपशाखा करये छेदन।
तबे मूलशाखा बाड़ि याय वृन्दावन॥१४२
प्रेमफल पाकि पड़े माली आस्वादय।
लता अवलम्बि माली कल्पवृक्ष पाय ॥१४३
ताँहा सेइ कल्पवृक्षेर करये सेवन।

सुखे प्रेमफलरस करे आस्वादन ॥१४४
एइत परम फल परम पुरुषार्थ ।
यार आगे तृणतुल्य चारि पुरुषार्थ ॥"१४५

तथाहि ललितमाधवे (५।२)—

पौर्णमासीवाक्यं श्रुत्वा नेदिष्ठस्यवाक्यम्—
ऋद्धा सिद्धिव्रजविजयिता सत्यधर्म्मा समाधि-
र्ब्रह्मानन्दो गुरुरपि चमत्कारयत्येव तावत् ।
यावत् प्रेम्नां मधुरिपुवशीकारसिद्धौषधीनां,
गन्धोऽप्यन्तः करणसरणीपान्थतां न प्रयाति ।२०

टीका—ऋद्धा समृद्धिशालिनी सिद्धिव्रजविजयिता अणिमादिसिद्धिसमूहस्य उत्कर्षः सत्यधर्म्मा सत्य-धर्म्मजः समाधिः, ब्रह्मानन्दः गुरुरपि तावत् पर्य्यन्तं चमत्कारयति, यावत् मधुरिपुवशीकारसिद्धौषधीनां प्रेम्णां गन्धोऽपि अन्तः करणसरणीपान्थतां न प्राप्नोति ॥२०॥

जब तक हृदय में कृष्णवशीकरणशील सिद्धोषधिरूप प्रेम का अनुभव नहीं होता है, तब तक ही समृद्धि शाली सिद्धि समूह, सत्यधर्मोत्पन्न योगादि एव महान् ब्रह्मानन्द भी अन्तः करण को आकर्षण करने में सक्षम हाता है ॥२०॥

"शुद्धभक्ति हैते हय प्रेम उत्पन्न ।
अतएव शुद्धभक्तिर कहिये लक्षण ॥१४६
अन्य वाञ्छा अन्य पूजा छाड़ि ज्ञानकर्म्म ।
आनुकूल्ये सर्व्वेन्द्रिये कृष्णानुशीलन ॥१४७
एइ शुद्धभक्ति इहा हैते प्रेम हय ।
पञ्चरात्रे भागवते एइ लक्षण कय ॥"१४८

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे भक्ति सामान्यलहर्य्यां एकादशाङ्कधृत-नारदपञ्चरात्रम्—

सर्व्वोपाधिविनिर्म्मुक्तं तत्परत्वेन निर्म्मलं ।
हृषीकेन हृषीकेशसेवनं भक्तिरुच्यते ॥२१॥

टीका—हृषीकेन इन्द्रियाचरणेन यत् हृषीकेश-सेवनं भगवदनुशीलनं,सा भक्तिः उच्यते अभिधीयते । हृषीकेशसेवनं किम्भूतं ?— सर्व्वोपाधिविनिर्म्मुक्तं अन्यवासनाविहीनं, पुनः तत्परत्वेन निर्म्मलं ॥२१॥

सर्वेति । सर्वैरुपाधिभि रन्यवाञ्छादिभि र्विनिर्मुक्तं अन्याभिलाषिताशून्य मित्यर्थः । निर्म्मलं ज्ञान कर्म्मादि संमिश्रण रहितं ज्ञान कर्म्माद्यनावृत-मित्यर्थः । तत् परत्वेन आनुकूल्येन हृषीकेश सेवनं तदनुशीलनं भक्तिः शुद्धेति शेषः ।

भक्ति व्यतीत भुक्ति मुक्ति प्रभृति वाञ्छा को परित्यागकर एकाग्र मनसे एवं विशुद्ध भावसे इन्द्रियों के द्वारा जो कृष्णानुशीलन है, वही भक्ति है ॥२१॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२९।११-१२)—

मद्गुणश्रुतिमात्रेण मयि सर्व्वगुहाशये ।
मनोगतिरविच्छिन्ना यथा गङ्गाम्भसोऽम्बुधौ ॥
लक्षणं भक्तियोगस्य निर्गुणस्य ह्युदाहृतं ।
अहैतुक्यव्यवहिता या भक्तिः पुरुषोत्तमे ॥२२

श्रीमद् भागवत के ३२९--११-१२ में लिखित है- मदीय गुण श्रवण मात्रसे सागरगामी जाह्नवी जलके समान सर्वान्तिर्यामी मुझ में अविच्छिन्ना, फलानुसन्धान शून्या, भेद दर्शन रहिता मनोगति रूपा जो भक्ति वही निर्गुण भक्ति योग का लक्षण है ॥२२॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२९।१३)—

सालोक्य-सार्ष्टि सामीप्य सारूप्यैकत्वमप्युत ।
दीयमानं न गृह्णन्ति विना मत्सेवनं जनाः ॥२३

मदीय सेवा को छोड़कर भक्तवृन्द सालोक्य, सार्ष्टि, सारूप्य, सामीप्य एवं एकत्व रूप पञ्चविध मुक्ति को ग्रहण नहीं करते हैं ।

अर्थात् भक्तगण — सेवा को छोड़कर कुछ भी ग्रहण नहीं करते हैं, यदि कदाचित ग्रहण करते हैं तो, सेवा के निमित्त करते हैं । भगवान् के समान लोक में वासको सालोक्य कहते हैं, समान ऐश्वर्य्य को सार्ष्टि कहते हैं, निकट में अवस्थिति सामीप्य है, सारूप्य--समान रूप, एकत्व- सायुज्य, भगवत सायुज्य एवं ब्रह्म सायुज्य भेद से सायुज्य द्विविध हैं ॥२३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२९।१४)--

देवहूतिं प्रति कपिलदेववाक्यम्--

स एव भक्तियोगस्य आत्यन्तिक उदाहृतः ।
येनातिव्रज्य त्रिगुणान् मद्भावायोपपद्यते ॥२४॥

उस प्रकार भक्ति योग को आत्यन्तिक भक्ति योग कहते हैं, जिस भक्ति योग के द्वारा सत्त्व, रज, तम नामक गुणत्रय को अतिक्रम करके भक्ति प्राप्ति होती है ॥२४॥

भुक्ति मुक्ति आदि वाञ्छा यदि मने हय ।
साधन करिले प्रेम उत्पन्न ना हय ॥१४९

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे द्वितीय-लहर्य्यां षोड़श-श्लोके--

भुक्ति-मुक्ति-स्पृहा यावत् पिशाची हृदि वर्त्तते ।
तावद्भक्तिसुखस्यात्र कथमभ्युदयो भवेत् ॥२५॥

टीका—यावत पिशाची पिशाचीसदृशी भक्ति मुक्तिस्पृहा हृदि वर्त्तते, तावत् अत्र हृदये भक्तिसुखस्य अभ्युदयः कथं भवेत् ? ॥२५॥

पिशाची सदृशी भुक्ति मुक्ति स्पृहा यावत हृदय में रहती हैं, तावत् उस हृदय में भक्ति सुख का हृदय कैसे हो सकता है ? ॥२५॥

"साधन भक्ति हैते हय रतिर उदय ।
रति गाढ़ हैले तारे प्रेम नाम कय ॥१५०
प्रेम वृद्धि क्रमे नाम स्नेह मान प्रणय ।
राग अनुराग भाव महाभाव हय ॥१५१
यैछे वीज इक्षु, रस, गुड़, खण्ड, सार ।
शर्करा, सिता, मिश्री, उत्तम मिश्री आर ।१५२
एइ सब कृष्णभक्ति रस स्थायी भाव ।
स्थायिभावे मिले यदि विभाव अनुभाव १५३
सात्त्विक व्याभिचारी भावेर मिलने ।
कृष्णभक्ति रस हय अमृत आस्वादने ॥१५४
यैछे दधि सिता घृत मरीच कर्पूर ।
मिलने रसाला हय अमृत मधुर ॥१५५
भक्तभेदे रतिभेद पञ्च परकार ।
शान्तरति दास्यरति सख्यरति आर ॥१५६
वात्सल्यरति मधुर रति पञ्चविभेद ।
रतिभेदे कृष्णभक्ति रस पञ्चभेद ॥१५७
शान्त दास्य सख्य वात्सल्य मधुर रस नाम ।
कृष्णभक्ति रस मध्ये ए पञ्च प्रधान ॥'१५८

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे स्थायिभावलहर्य्यां (६३)

श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्--

हास्योऽद्भुतस्तथा वीरः करुणो रौद्र इत्यपि ।
भयानकः स बीभत्स इति गौणश्च सप्तधा ॥२६॥

टीका—हास्यः, अद्भुतः, वीरः, करुणः, रौद्रः, इत्यपि भयानकः एवं सः बीभत्सः इति सप्तधा गौणो रसः अस्ति ॥२६॥

शान्त दास्य सख्य वात्सल्य मधुर रस मुख्य पञ्चविध गौणरस हैं. हास्य, अद्भुत, वीर, करुण; रौद्र, भयानक एवं बीभत्स ॥२६॥

हास्याद्भुत वीर करुण रौद्र बीभत्स भय ।
पञ्चविध भक्ते गौण सप्तरस हय ॥१५९
पञ्चरस स्थायी व्यापी रहे भक्तमने ।
सप्त गौण आगन्तुक पाइये कारणे ॥१६०
शान्त भक्त नव योगेन्द्र सनकादि आर ।
दास्यभाव भक्त सर्व्वत्र सेवक अपार ॥१६१
सख्य भक्त श्रीदामादि पुरे भीमार्ज्जुन ।
वात्सल्य भक्त माता पिता गुरुजन ॥१६२
मधुर रस भक्त मुख्य व्रजे गोपीगण ।
महिषीगण लक्ष्मीगण असंख्य गणन ॥१६३
पुनः कृष्णरति हय दुइ त प्रकार ।
ऐश्वर्य्यज्ञानमिश्रा, केवला, भेद आर ॥१६४

गोकुले केवला रति ऐश्वर्य्य ज्ञानहीन ।
पुरीद्वये वैकुण्ठाद्ये ऐश्वर्य्य प्रवीण ॥१६५
ऐश्वर्य्यज्ञान प्राधान्ये सङ्कोचित प्रीति ।
देखिले ना माने ऐश्वर्य्य केवलार रीति १६६
शान्तदास्यरसे ऐश्वर्य्य काँहा उद्दीपन ।
वात्सल्ये सख्ये मधुर रसे सङ्कोचन ॥१६७
वसुदेव देवकीर कृष्ण चरण वन्दिल ।
ऐश्वर्य्य ज्ञाने दुँहार मने भय हैल ॥१६८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।४४।१५)--

परीक्षितं प्रति शुकदेववाक्यम्--

देवकी वसुदेवश्च विज्ञाय जगदीश्वरौ ।
कृतसंवन्दनौ पुत्रौ सस्वजाते न शङ्कितौ । २७॥

टीका—देवकी वसुदेवश्च कृतसंवन्दनौ पुत्रौ जगदीश्वरौ विज्ञाय शङ्कितौ सन्तौ न सस्वजाते न आलिङ्गितवन्तौ ॥२७॥

श्रीमद्भागवत के १०।४४।५१ में उक्त है—राम कृष्ण प्रणत होने से देवकी एवं वसुदेव पुत्रबुद्धि परित्याग कर ईश्वर ज्ञान से शङ्कित होकर स्नेहालिङ्गण नहीं किये किन्तु करबद्ध होकर स्तव करने लगे ॥२७॥

कृष्णेर विश्वरूप देखि अर्ज्जुनेर हैल भय ।
सखाभावे धार्ष्टचक्षमाय करिया विनय १६९

तथाहि श्रीभगवद्गीतायाम् (११।४४)—

श्रीकृष्णं प्रति अर्ज्जुनवाक्यम्—

सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं,
हे कृष्ण हे यादव हे सखेति ।
अजानता महिमानं तवेदं,
तत् क्षामये त्वामहमप्रमेयं ॥२८॥

टीका—अप्रमेयं अचिन्त्यप्रभावं त्वां सखेति मत्वा प्रसभं सहसा तव महिमानं इदं विश्वरूपञ्च अजानता मया हे कृष्ण हे यादव हे सखेति यत् उक्तं, तत् क्षामये ॥२८॥

श्रीभगवद् गीता के ११।४४ के उक्त है—अर्ज्जुन श्रीकृष्ण को कहे थे—तुम अप्रमेय हो, तुम्हारी महिमा एवं विश्वरूप अज्ञान होने के कारण तुम्हें 'हे कृष्ण, हे यादव, हे सखा, इत्यादि जो सम्बोधन मैंने किया है, उसको क्षमा करो ॥२८॥

कृष्ण यदि रुक्मिणीरे करिल परिहास ।
कृष्ण छाड़िबेन जानि रुक्मिणीर हैल त्रास १७०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।६०।२४)—

परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्—

तस्याः सुदुःखभय-शोकविनष्टबुद्धे--
र्हस्तात् श्लथद्वलयतो--व्यजनं पपात ।
देहश्च विक्लवधियः सहसैव मुह्यन्
रम्भेव वातविहता प्रविकीर्य्य केशान् ॥२९॥

टीका—सुदुःखभयशोकविनष्ट बुद्धेः तस्याः रुक्मिण्याः श्लथद्वलयतः हस्तात् व्यजनं पपात । विक्लवधियः तस्याः देहश्च सहसैव मुह्यन् सन् वातविहता रम्भेव केशान् प्रविकीर्य्य पपात ॥२९॥

श्रीमद् भागवत के १०।६०।२४ में उक्त है—दुःख, भीति, एवं शोक हेतु हत ज्ञान होने के कारण रुक्मिणी के हस्त से वलय स्खलित एवं व्यजन निपतित हुआ, उनकी बुद्धि विवश होने से मूर्च्छा उपस्थित हुई, शरीर केशपाश विस्तार कर पवन ताड़ित कदलीतरुवत् भूपतित हुआ ॥२९॥

केवलार शुद्धप्रेम ऐश्वर्य्य ना जाने ।
ऐश्वर्य्य देखिले निज सम्बन्ध ना माने ॥१७१

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८।४५)—

परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्—

त्रय्या चोपनिषद्भिस्तु साङ्ख्ययोगैश्च सात्वतैः ।
उपगीयमानमाहात्म्यं हरिं सामन्यतात्मजं ॥३०

टीका—त्रय्या वेदत्रयैः इन्द्रादिरूपेण, उपनिषद्भिः ब्रह्मेति, साङ्ख्ययोगैः पुरुष इति, सात्वतैः भक्तिशास्त्रैः भगवानिति उपगीयमान-माहात्म्यं हरिं सा

यशोमती आत्मजं अमन्यत ॥३०॥

श्रीमद्भागवत के १०।८।४५ में लिखित हैं--

श्रीमद्भागवत के शुकदेव कहे थे --वेद में इन्द्रादि नाम से परीक्षित को शुकदेव कहे थे --वेद में इन्द्रादि नामसे उपनिषद् में ब्रह्म नाम से, सांख्य में पुरुष नाम से योग शास्त्र में, भक्तिशास्त्र में भगवान् शब्द से जो कीर्तित हैं, उनको उन्होंने पुत्र ज्ञान किया ॥३०॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (९।१४) —

परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्—

तं मत्वात्मजमव्यक्तं मर्त्यलिङ्गमधोक्षजं ।
गोपिकोलूखले दाम्ना बबन्ध प्राकृतं यथा ॥३१

टीका—गोपिका यशोमती तं कृष्णं मर्त्यलिङ्गं अधोक्षजं आत्मजं मत्वा यथा प्राकृतं उलूखले दाम्ना बबन्ध ॥३१॥

श्रीमद्भागवत के १०।९।१४ में उक्त है--
यशोदा ने नरदेह धारी इन्द्रियातीत भगवान् को आत्मज ज्ञान से शिशु के समान रज्जु द्वारा उदूखल में बन्धन किया ॥३१॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१८।२४)--

परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्--

उवाह कृष्णो भगवान् श्रीदामानं पराजितः ।
वृषभं भद्रसेनश्च प्रलम्बो रोहिणीसूतं ॥३२॥

टीका—भगवान् कृष्णः पराजितः सन् श्रीदामानं उवाह, च पुनः भद्रसेनः वृषभं, प्रलम्बः रोहिणीसुतं उवाह ॥३२॥

भगवान् हरि क्रीड़ा में परास्त होकर श्रीदाम को भद्रसेन कृष्ण को एवं प्रलम्बासुर रोहिणी सुतको पृष्ठ से वहन किये थे ॥३२॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३०।३६--३८)--

परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्--

हित्वा गोपीः कामयाना मामसौ भजते प्रियः ।
ततो गत्वा वनोद्देशं दृप्ता केशवमब्रवीत् ॥
न पारयेऽहं चलितुं नय मां यत्र ते मनः ।
एवमुक्तः प्रियामाह स्कन्धमारुह्यतामिति ।
ततश्चान्तर्दधे कृष्णः सा वधूरन्वतप्यत ॥३३॥

टीका—कामयाना गोपीः हित्वा असौ प्रियः मां भजते, तदनन्तर वनोद्देश गत्वा दृप्ता सती केशवं अब्रवीत, अहं चलितुं न पारये, ते तव यत्र मनः मां तत्र नय । कृष्णः एवं उक्तः सन् प्रियां "स्कन्धं आरुह्यतां" इति आह । ततः कृष्णः अन्तर्दधे, सा वधूः अन्वतप्यत ॥३३॥

परीक्षित को श्रीशुकदेव भागवत १०।३०।३६-३८ में कहे हैं—जो सब गोपी काम साधनार्थ आई थीं उन सब को छोड़कर प्रिय मुझ को प्रीति करते हैं, इस प्रकार विचार कर गोपी वनोद्देश में जाकर गर्वित स्वर से कृष्ण को बोली, "मैं चल नहीं सकती हूँ मुझ को वहन कर तुम्हारे अभिमत स्थान में ले चलो, यह सुन कर कृष्ण बोले -तब मेरे स्कन्ध आरोहण करो, अनन्तर कृष्ण तिरोहित होने से वह गोपी अनुताप करने में प्रवृत्त हो गई ॥३३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३१।१६)--

श्रीकृष्णमुद्दिश्य गोपीवाक्यम्--

पतिसुतान्वयभ्रातृबान्धवा-
नतिविलङ्घ्य तेऽन्त्यच्युतागताः ।
गतिविदस्तवोद्गीतमोहिताः,
कितव योषितः कस्त्यजेन्निशि ॥३४॥

टीका—हे अच्युत ! पतिसुतान्वय-भ्रातृबान्धवान् पति-पुत्र-भ्रातृ-बान्धवांश्च अतिविलङ्घ्य ते तव अन्ति समीपं आगताः वयं, गतिविदः तव उद्गीतमोहिताः, हे कितव शठ ! एवम्प्रकाराः योषितः निशि कः त्यजेत् ? ॥३४॥

भा० १०।३१।१६ में उक्त है—
हे अच्युत ! हम सब पति, पुत्र, भाई बन्धु को छोड़कर तुम्हारे पास आई हैं, तुमने हमारे आगमनाभिप्राय जाना है। तुम्हारे उच्च सङ्गीत से हम सब मुग्ध है, हे कितव-शठ ! इस प्रकार नारी समूह को निशीथ में कौन व्यक्ति वर्जन करता है ? ॥३४॥

शान्तिरसे स्वरूप बुद्धेच कृष्णैकनिष्ठता ।
शमो मन्निष्टता बुद्धेरिति श्रीमुख-गाथा १७२

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे शान्त भक्तिरसलहर्य्यां (२१)·

श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

शमो मन्निष्ठताबुद्धेरिति श्रीभगवद्वचः ।
तन्निष्ठा दुर्घटा बुद्धेरेतां शान्तिरतिं विना ॥३५

टीका—बुद्धेः मन्निष्ठता शमः इति श्रीभगवद्वचं, एतां शान्तिरतिं विना बुद्धेः तन्निष्ठा दुर्घटा दुरापा ।३५

मुझ में निष्ठा प्राप्त बुद्धि ही शम शब्द से अभिहित होता है । यह भगवद् वाक्य है । इस प्रकार शान्ति रति व्यतीत भगवान् में एकाग्रता नहीं हो सकती है ॥३५॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।१९।३३)—

उद्धवं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्—

शमो मन्निष्ठता बुद्धेर्दम इन्द्रियसंयमः ।
तितिक्षा दुःखसंमर्षो जिह्वोपस्थजयोधृतिः ॥३६

टीका—बुद्धेः मन्निष्ठता शमः इति उच्यते । इन्द्रियसंयमः दमः, दुःखसंमर्षः तितिक्षा, जिह्वोपस्थ-जयः धृतिः उच्यते ॥३६॥

श्रीमद् भागवत के ११।१९।३६ में भगवान् उद्धव को कहे हैं—मुझ में निष्ठा बुद्धि का नाम ही शम है, एवं इन्द्रिय संयम को दम कहते हैं, दुःख सहिष्णुताको तितिक्षा एवं जिह्वोपस्थ वशीकरण को धृति कहते हैं ॥३६॥

कृष्ण विना तृष्णात्याग तार कार्य्य मानि ।
अतएव शान्त, कृष्णभक्त, एक जानि ॥१७३

तथाहि श्रीमद्भागवते (६।१७।२८)—

नारायणपराः सर्व्वे न कुतश्चन बिभ्यति ।
स्वर्गापवर्गनरकेष्वपि तुल्यार्थदर्शिनः ॥३७॥

भा० ६।१७।२८ में उक्त है—नारायण परायण व्यक्ति स्वर्ग, अपवर्ग एवं नरक में तुल्य दृष्टि रखते हैं, अतः वह किसी से भी भीत नहीं होते हैं ॥३७॥

स्वर्ग मोक्ष कृष्णभक्त नरक करि माने ।
कृष्णनिष्ठा तृष्णात्याग शान्तेर दुइ गुणे १७४

एइ दुइ गुण व्यापे सब भक्त जने ।
आकाशेर शब्दगुण येन भूतगणे ॥१७५
शान्तेर स्वभाव कृष्णे ममता-गन्धहीन ।
परंब्रह्म परमात्मा ज्ञान प्रवीण ॥१७६
केवल स्वरूपज्ञान हय शान्तरसे ।
पूर्णैश्वर्य्य प्रभुर ज्ञान अधिक हय दास्ये ॥१७७
ईश्वरज्ञान सम्भ्रम गौरब प्रचुर ।
सेबा करि कृष्णे सुख देन निरन्तर ॥१७८

शान्तेर गुण दास्ये आछे अधिक सेवन ।
अतएव दास्यरसेर एइ दुइ गुण १७९
शान्तेर गुण दास्येर सेवन सख्ये दुइ हय ।
दास्येर सम्भ्रम गौरब सेबा सख्य विश्वासमय ॥१८०
कान्धे चड़े कान्धे चड़ाय करे क्रीड़ा रण ।
कृष्ण सेवे कृष्णे कराय आपन सेवन ॥१८१
विश्रम्भ प्रधान सख्य गौरब-सम्भ्रम-हीन ।
अतएव सख्यरसेर तिन गुण चिह्न ॥१८२
ममता अधिक कृष्णे, आतमसम ज्ञान ।
अतएव सख्य रसे वश भगवान् ॥१८३
वात्सल्ये शान्तेर गुण, दास्येर सेवन ।
से सेवनेर नाम इहा लालन पालन ॥१८४
सख्येर गुण असङ्कोच, अगौरब सार ।
ममताधिक्ये ताड़न भर्त्सन व्यवहार ॥१८५

आपनाके पालक ज्ञान कृष्णे पाल्यज्ञान ।
चारिरसेर गुणे वात्सल्य अमृतसमान ।१८६
से अमृतानन्दे भक्तसह डुबेन आपने ।
कृष्णभक्त गुण कहे ऐश्वर्य्य ज्ञानिगणे १८७

तथाहि हरिभक्तिविलासस्य षोड़शविलासे
एकोनशताङ्कधृतपद्मपुराणवचनम्---
इतीदृक्स्वलीलाभिरानन्दकुण्डे
स्वघोषं निमज्जन्तमाख्यापयन्तं ।
तदीयेशितज्ञैः स्वभक्तैर्जितस्त्वं,
पुनः प्रेमतस्त्वां शतावृत्ति वन्दे ॥३८॥

टीका—प्रेमतः प्रेम्णा अहं त्वां शतावृत्ति यथा स्यात्तथा वन्दे । त्वां किम्भूतां ?—इतिदृक्--स्व लीलाभिः आनन्दकुण्डे हर्षस्वरूपे निमज्जन्तं । पुनः किम्भूतं ?—स्वघोषं आख्यापयन्तं । त्वं किम्भूतः ? तदीयेशितज्ञैः स्वभक्तैः पुनः पुनर्व्वारं जितः पराभूतोऽसि ॥३८॥

हे प्रभो ! इस प्रकार लीला प्रचार के द्वारा व्रज को तुम त्वदीय सुख स्वरूप में निमग्न कर रहे हो, एवं व्रज की महिमा का विस्तार कर रहे हो, तुम्हारे ऐश्वर्य्याभिज्ञ भक्त वृन्द के प्रेम से स्वयं पराभूत हो रहे हो, सुतरां मैं शत शत बार तुम को नमस्कार कर रहा हूँ ॥३८॥

मधुर रसे कृष्णनिष्ठा सेवा अतिशय ।
सख्ये असङ्कोच लालन ममताधिक्य हय ।१८८
कान्तभावे निजाङ्ग दिया करेन सेवन ।
अतएव मधुररसेर हय पञ्चगुण ॥१८९
आकाशादिर गुण येन पर पर भूते ।
एक दुइ तिन क्रमे पञ्च पृथिवीते ॥१९०
एइमत मधुरे सब भावसमाहार ।
अतएव स्वादाधिक्ये करे चमत्कार ॥१९१
एइ भक्तिरसेर करिल दिग्‌दरशन ।
इहार विस्तार मने करिह भावन ॥१९२
भाविते भाविते कृष्ण स्फुरये अन्तरे ।
कृष्णकृपाय अज्ञ पाय रससिन्धुपारे ॥१९३
एत बलि प्रभु तारे करिल आलिङ्गन ।
वाराणसी चलिबारे प्रभुर हैल मन ॥१९४
प्रभाते उठिया यबे करिल गमन ।
तबे ताँर पदे रूप करिल निवेदन ॥१९५
आज्ञा हय आइसो मुञि श्रीचरण सङ्गे ।
सहिते ना पारि मुञि विरह तरङ्गे ॥१९६
प्रभु कहे, तोमार कर्त्तव्य आमार वचन ।
निकटे आसियाछ तुमि याह वृन्दावन ॥१९७
वृन्दावन हैते तुमि गौड़देश दिया ।
आमारे मिलिबे नीलाचलेते आसिया ॥१९८
तारे आलिङ्गिया प्रभु नौकाते चड़िला ।
मूर्च्छित हइया तिँह ताहाञि पड़िला ॥१९९
दाक्षिणात्य विप्र ताँरे घरे लञा गेला ।
तबे दुइ भाइ वृन्दावनेते चलिला ॥२००
महाप्रभु चलि चलि आइला वाराणसी ।
चन्द्रशेखर मिलिला ग्रामेर बाहिरे आसि २०१
रात्रे तेँह स्वप्न देखे प्रभु आइला घरे ।
प्रातः काले आसि रहे ग्रामेर बाहिरे ॥२०२
आचम्बिते प्रभु देखि चरणे पड़िला ।
आनन्दित हञा निज गृहे लञा गेला ॥२०३
तपन मिश्र शुनि आसि प्रभुरे मिलिला ।
इष्टगोष्ठी करि प्रभुर निमन्त्रण कैला ।२०४
निज निज घरे लञा प्रभुके भिक्षा कराइल ।
भट्टाचार्य्ये चन्द्रशेखर निमन्त्रण कैल ॥२०५
भिक्षा कराइया मिश्र कहे पाय धरि ।
एक भिक्षा मागि मोरे देह कृपा करि ॥२०६
यावत् तोमार हय काशीपुरे स्थिति ।
मोर घर बिना भिक्षा ना करिबा कति २०७
प्रभु जानेन दिन पाँच सात से रहिब ।
सन्न्यासीर सङ्गे भिक्षा काँहा ना करिब २०८

एत जानि तार भिक्षा करिल अङ्गीकार ।
बासा निष्ठा करिल चन्द्रशेखरेर घर ॥२०९
महाराष्ट्री विप्र आसि ताँहारे मिलिला ।
प्रभु ताँरे स्नेह करि कृपा प्रकाशिला ॥२१०
महाप्रभु आइला शुनि शिष्ट शिष्ट जन ।
ब्राह्मण क्षत्रिय आसि करे दरशन ॥२११
श्रीरूप उपरे प्रभुर यत कृपा हैल ।
अत्यन्त विस्तारकथा संक्षेपे कहिल ॥२१२
श्रद्धा करि एइ कथा शुने येइ जने ।
प्रेमभक्ति पाय सेइ चैतन्यचरणे ॥२१३
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे-यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२१४

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे
श्रीरूपानुग्रहो नाम ऊनविंशः
परिच्छेदः ॥१६॥



❀ विंश परिच्छेद ❀

वन्देऽनन्ताद्भुतैश्वर्य्यं श्रीचैतन्यमहाप्रभुं ।
नीचोऽपि यत्प्रसादात् स्यात् भक्तिशास्त्र प्रवर्त्तकः ।१

टीका--यत्प्रसादात् नीचोऽपि भक्तिशास्त्रप्रवर्त्तकः स्यात्, तं अनन्ताद्भुतैश्वर्य्यं श्रीचैतन्यमहाप्रभुं वन्दे ।१

जिनकी प्रसन्नता से नीच व्यक्ति भी भक्ति शास्त्र प्रणयन करने में सक्षम होता है, मैं उन अनन्त, अद्भुतैश्वर्य्यवान् चैतन्य प्रभु को नमस्कार करता हूँ ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१

एथा गौड़े सनातन आछे बन्दिशाले ।
श्रीरूप गोस्वामीर पत्र आइल हेनकाले ॥२
पत्र पाञा सनातन आनन्दित हैला ।
यवन रक्षक-पाश कहिते लागिला ॥३
तुमि एक जिन्दापीर महाभाग्यवान् ।
केताव कोराण शास्त्रे आछे तोमार ज्ञान ।४
एक बन्दी छाड़ि यदि निज धन दिया ।
संसार हइते तारे मुक्त करेन गोसाञा ॥५
पूर्व्वे आमि तोमार करियाछि उपकार ।
तुमि आमा छाड़ि कर प्रत्युपकार ॥६
पाँच सहस्र मुद्रा दिव, कर अङ्गीकार ।
पुण्य अर्थ दुइ लाभ हइबे तोमार ॥७
तबे सेइ यवन कहे, शुन महाशय ।
तोमारे छाड़िये किन्तु करि राजभय ॥८
सनातन कहे, तुमि ना कर राजभय ।
दक्षिण गियाछे यदि लेउटि आइसय ॥९
ताँहाके कहिओ, सेइ वाह्यकृत्ये गेल ।
गङ्गार निकट, गङ्गा देखि झाँप दिल ॥१०
अनेक देखिल तार लागि ना पाइल ।
दाँड़ुका सहित डुबि काँहा बहि गेल ॥११
किछु भय नाहि, आमि एदेशे ना रब ।
दरवेश हञा आमि मक्काके याइब ॥१२

तथापि यवनमन प्रसन्न ना देखिल ।
सात हाजार मुद्रा तार आगे राशि कैल ॥१३
लोभ हइल यवनेर मुद्रा देखिया ।
रात्रे गङ्गा पार कैल दाँड़ुका काटिया ॥१४
गड़िद्वारपथ छाड़िल नारे ताहा याइते ।
रात्रि दिने चलि आइल पातड़ा पर्व्वते ॥१५

तथा एक भूमिक हय तार ठाञि गेला ।
पर्व्वत पार कर आमाय विनति करिला ।१६
सेह भूञा सङ्गे हय हात गणिता ।
भूञा-काने कहे सेइ जानि एइ कथा ॥१७
इहार ठाञि सुवर्णेर अष्टमोहर हय ।
शुनि आनन्दित भूञा सनातने कर ॥१८
रात्रे पर्व्वत पार करिब निज लोक दिया ।
भोजन करह तुमि रन्धन करिया ॥१९
एत बलि अन्न दिल करिया सम्मान ।
सनातन आसि तबे कैल नदीस्नान ॥२०
दुइ उपवासे कैल रन्धन भोजने ।
राजमन्त्री सनातन विचारिल मने ॥२१
एइ भूञा केने मोरे सम्मान करिल ।
एत चिन्ति सनातन ईशाने पुछिल ॥२२
तोमार ठाञि जानि किछु द्रव्य आछय ।
ईशान कहे, मोर ठाञि सात मोहर हय ।२३
शुनि सनातन तारे करिल भर्त्सन ।
सङ्गे केने आनियाछ एइ काल यम ॥२४
तबे सेइ सात मोहर हस्तेते करिया ।
भूञा काछे याञा कहे मोहर धरिया ॥२५
एइ सुवर्ण सात मोहर आछिल आमार ।
इहा लञा धर्म्म देखि कर मोरे पार ॥२६
राजबन्दी आमि गड़िद्वार याइते ना पारि ।
पुण्य हबे पर्व्वत आमा देह पार करि ॥२७
भूञा हासि कहे आमि जानियाछि पहिले ।
अष्ट मोहर हय तोमार सेवक-आँचले ॥२८
तोमा मारि मोहर लइताम आजि रात्रे ।
भाल हैल कहिला तुमि छुटिलाम पाप हैते ।२९
सन्तुष्ट हइलाम आमि मोहर ना लइब ।
पुण्य लागि पर्व्वत तोमा पार करि दिब ॥३०
गोसाञि कहे, केह द्रव्य लइबे आमा मारि ।
आमार प्राण रक्षा कर द्रव्य अङ्गीकरि ।३१
तबे गोसाञिर सङ्गे चारि पाइक दिल ।
रात्रे रात्रे बनपथे पर्व्वत पार कैल ॥३२

पार हञा गोसाञि तबे पुछिल ईशाने ।
जानि शेष द्रव्य किछु आछे तोमा स्थाने ।३३
ईशान कहे, एक मोहर आछे अबशेष ।
गोसाञि कहे, मोहर लञा याह तुमि देश ।३४
तारे विदाय दिया गोसाञि चलिला एकेला ।
हाते करोया छिँड़ा कन्था निर्भय इहला ॥३५
चलि चलि गोसाञि तबे आइला हाजिपुरे ।
सन्ध्याकाले वसिला एक उद्यानभितरे ॥३६
सेइ हाजिपुरे रहे श्रीकान्त ताहार नाम ।
गोसाञिर भगिनीपति करे राजकाम ॥३७
तिन लक्ष मुद्रा राजा दियाछे तार सने ।
घोड़ा मूलच लञा पाठाय पात्‌सार स्थाने ३८
टुङ्गिर उपर बसि सेइ गोसाञिके देखिल ।
रात्रे एक जन सङ्गे गोसाञि-पाश आइल ।३९
दुइ जन मिलि तथा इष्टगोष्ठी कैल ।
बन्धन-मोक्षण कथा सकलि कहिल ॥४०

तिँह कहे दिन दुइ रह एइ स्थाने ।
भद्र कराइया छाड़ मलिन वसने ॥४१
गोसाञि कहे, एकक्षण इहा ना रहिब ।
गङ्गापार करि देह एखणि चलिब ॥४२
यत्नकरि तिँह एक भोटकम्बल दिल ।
गङ्गापार करि दिल गोसाञि चलिल ॥४३

तबे बाराणसी गोसाञि आइला कतदिने ।
शुनि आनन्दित हैल प्रभुर आगमने ॥४४
चन्द्रशेखर-घरे आसि दुयारे बसिला ।
महाप्रभु जानि चन्द्रशेखरे कहिला ॥४५
द्वारे एक वैष्णव हय बोलाह ताहारे ।
चन्द्रशेखर देखे वैष्णव नाहिक दुयारे ॥४६
द्वारेते वैष्णव नाहि प्रभुके कहिल ।
केह हय ? करि प्रभु ताहारे पुछिल ॥४७
तिँह कहे एक दरबेश आछे द्वारे ।
ताँरे आन प्रभु वाक्ये कहिल ताहारे ॥४८
प्रभु तोमाय बोलाय, आइस दरवेश ।
शुनि आनन्दे सनातन करिल प्रवेश ॥४९
ताँहारे अङ्गने देखि प्रभु धाञा आइला ।
ताँरे आलिङ्गन करि प्रेमाविष्ट हैला ॥५०
प्रभुस्पर्शे प्रेमाविष्ट हैला सनातन ।
मोरे ना छुइह कहे गद्गद वचन ॥५१
दुइ जने गलागलि रोदन अपार ।
देखि चन्द्रशेखरेर हैल चमतकार ॥५२
तबे प्रभु ताँर हात धरि लञा गेला ।
पिण्डार उपर आपन पाशे वसाइला ॥५३
श्रीहस्ते करेन ताँर अङ्ग सम्मार्ज्जन ।
तिंह कहे, मोरे प्रभु ना कर स्पर्शन ॥५४
प्रभु कहे तोमा स्पर्शि आत्म पवित्रिते ।
भक्तिबले पार तुमि ब्रह्माण्ड शोधिते ॥५५

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१३।१०।)—
विदुरं प्रति युधिष्ठिरवाक्यम्—

भवद्विधा भागवतास्तीर्थीभूता स्वयं प्रभो ।
तीर्थीकुर्व्वन्ति तीर्थानि स्वान्तस्थेन गदाभृता ॥२

भा० १।१३।१० में उक्त है, श्रीविदुर को महाराज युधिष्ठिर कहे थे---

हे प्रभो ! आप के समान भगवद् भक्त वृन्द ही स्वयं तीर्थ स्वरूप हैं, भगवदाज्ञा लङ्घन कारी व्यक्ति गण के संस्पर्श से दूषित तीर्थ समूह को आप सब निज हृदयस्थ गदाधर के द्वारा पवित्र कर के पुनर्वार तीर्थत्व प्राप्त कराते रहते हैं ॥२॥

तथाहि हरिभक्तिविलासस्य दशमविलासे एकनवत्यङ्कधृतं इतिहाससमुच्चयोक्त भगवद्वाक्यम्--

न मे भक्तश्चतुर्व्वेदी मद्भक्तः श्वपचः प्रियः ।
तस्मै देयं ततोग्राह्यं स च पूज्यो यथा ह्यहं ॥३

चतुर्वेद अध्ययन परायण होने से ही जो मेरा भक्त होगा, यह नहीं मेरे प्रति भक्ति होने से ही चण्डाल भी मेरा प्रिय होता है। मैं मदीय भक्त को प्रेम प्रदान करता हूँ, एवं उसका प्रेम भी ग्रहण करता हूँ, मैं जिस प्रकार जगत् पूज्य हूँ, मेरा भक्त भी उस प्रकार सब के पूज्य हैं ॥३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (७।९।९)--
श्रीनृसिंहदेवं प्रति प्रह्लादवाक्यम्—

विप्राद्द्विषड् गुणयुतादरविन्दनाभ-
पदारविन्दविमुखात् श्वपचं वरिष्ठं ।
मन्ये तदर्पितमनोवचनेहितार्थ-
प्राणं पुनाति स कुलं न तु भूरिमानः ॥४॥

टीका----द्विषड् गुणयुतात् विप्रात् द्विजादपि श्वपचं चण्डालं वरिष्ठं मन्ये। विप्रात् कीदृशात्?-अरविन्दनाभपदारविन्दविमुखात् भगवतः पादपद्म-विमुखात्। श्वपचं किम्भूतं ?--तदर्पितमनोवचने-हितार्थप्राणं। सः ईदृश श्वपचः कुलं पुनाति पवित्री करोति, भूरिमानस्तु विप्रः आत्मानमपि न पुनाति।४

भा० ७।९।९ में लिखित है--श्रीनृसिंह देवको प्रह्लाद कहे थे--जिस का मन, वाक्य, चेष्टा, धन प्रभृति भगवान् में अर्पित हैं, तादृश चण्डाल भी भगवच्चरणारविन्द विमुख द्वादश गुण सम्पन्न ब्राह्मण से भी श्रेष्ठ है, कारण, वह चण्डाल, निज वंश को पवित्र करता है किन्तु उक्त अहङ्कारी विप्र आत्मा को भी पवित्र करने में असमर्थ है ॥४॥

तोमा देखि, तोमा स्पर्शि गाइ तोमार गुण ।
सर्व्वेन्द्रियफल एइ शास्त्र निरूपण ॥५६
तथाहि हरिभक्तिसुधोदये (१३।२)--

अक्ष्णोः फलं त्वादृशदर्शनं हि,
तन्वाः फलं त्वादृशगात्रसङ्गः ।
जिह्वाफलं त्वादृशकीर्त्तनं हि,
सुदुर्ल्लभा भागवता हि लोके ॥५॥

टीका—हि निश्चितं लोके भागवताः सुदुर्ल्लभाः । हि यत. त्वादृशदर्शनं अक्ष्णोः फलं, त्वादृशगात्रसङ्गः तन्वाः देहधारणस्य फलं, त्वादृशकीर्त्तनं हि यतः जिह्वाफलम् ॥५॥

इस संसार में भागवत वृन्द का साक्षात लाभ दुर्लभ है। कारण, उस प्रकार भक्त दर्शन से नेत्र सफल होता है, गात्र सङ्ग से देह धारण का साफल्य होता है, एवं गुण वर्णन से जिह्वा सफल होती है।५

एत कहि कहे प्रभु, शुन सनातन ।
कृष्ण बड़ दयामय पतितपावन ॥५७
महारौरब हैते तोमाय करिल उद्धार ।
कृपार समुद्र कृष्ण गम्भीर अपार ॥५८
सनातन कहे, कृष्ण आमि नाहि जानि ।
आमार उद्धार हेतु तोमा कृपा मानि ॥५९
केमने छुटिला बलि प्रभु प्रश्न कैल ।
आद्योपान्त सब कथा तिँह शुनाइल ॥६०
प्रभु कहे, तोमार दुइ भाइ प्रयागे मिलिला ।
रूप अनुपम दुँहे वृन्दावन गेला ॥६१
तपनमिश्रेरे आर चन्द्रशेखरेरे ।
प्रभु-आज्ञाय सनातन मिलिला दुँहारे ॥६२
तपनमिश्र ताँरे तबे कैल निमन्त्रण ।
प्रभु कहे, क्षौर कराह, याह सनातन ॥६३
चन्द्रशखरेरे प्रभु कहे बोलाइया ।
एइ वेश दूर कर, याह इहा लञा ॥६४
भद्र कराइया ताँरे गङ्गास्नान कराइल ।
शेखर आनिया ताँरे नूतन वस्त्र दिल ॥६५
सेइ वस्त्र सनातन ना कैल अङ्गीकार ।
शुनिया प्रभुर मने आनन्द अपार ॥६६
मध्याह्न करि प्रभु गेला भिक्षा करिबारे ।
सनातन लञा गेल तपनमिश्र-घरे ॥६७
पाद प्रक्षालन करि भिक्षाते वसिला ।
सनातने भिक्षा देह मिश्रेरे कहिल ॥६८

मिश्र कहे, सनातनेर किछु कृत्य आछे ।
तुमि भिक्षा कर, प्रसाद ताँरे दिब पाछे ।६९
भिक्षा करि महाप्रभु विश्राम करिल ।
मिश्र प्रभुर शेषपात्र सनातने दिल ॥७०
मिश्र सनातने दिल नूतन वसन ।
वस्त्र नाहि निल तिँह करे निवेदन ॥७१
मोरे वस्त्र दिते यदि तोमार हय मन ।
निज परिधान एक देह पुरातन ॥७२
तबे मिश्र पुरातन एक धुति दिल ।
तिँह दुइ वहिर्व्वास कौपीन करिल ॥७३
महाराष्ट्री द्विजे प्रभु मिलाइला सनातने ।
सेइ विप्र तबे ताँरे कैल निमन्त्रणे ॥७४
सनातन तुमि यावत काशीते रहिबे ।
तावत् आमार घरे भिक्षा से करिबे ॥७५
सनातन कहे, आमि माधुकरी करिब ।
ब्राह्मणेर घरे केन एकत्र भिक्षा लब ॥७६
सनातनेर वैराग्ये प्रभुर आनन्द अपार ।
भोटकम्बल पाने प्रभु चाहे बारे बार ॥७७
सनातन जानिल एइ प्रभुरे ना भाय ।
भोट त्याग करिबारे चिन्तिल उपाय ॥७८

एत चिन्ति गेला गङ्गाय मध्याह्न करिते ।
एक गौड़िया दियाछे कान्था धूजा शुकाइते ७९
तारे कहे, आरे भाइ कर उपकारे ।
एइ भोट लञा एइ काँथा देह मोरे ॥८०
सेइ कहे, हास्य कर प्रामाणिक हञा ।
बहुमूल्य भोट दिबे केने काँथा लञा ॥८१
तिँह कहे, हास्य नहे, कहि सत्य बाणी ।
भोट लह तुमि, देह मोरे काँथाखानि ॥८२
एत बलि काँथा लइल भोट तारे दिया ।
गोसाञिर ठाञि आइल काँथा गले दिया ।८३
प्रभु कहे, तोमार भोट-कम्बल कोथा गेल ।
प्रभुपदे सब कथा गोसाञि कहिल ॥८४
प्रभु कहे, इहा आमि करियाछि विचार ।
विषय-रोग खण्डाइल कृष्ण ये तोमार ॥८५
से केन राखिबे तोमार शेष विषय-भोग ।
रोग खण्डि सद्वैद्य ना राखे शेष रोग ॥८६
तिन मुद्रार भोट गाय माधुकरी ग्रास ।
धर्म्महानि हय लोके करे उपहास ॥८७
गोँसाइ बले ये खण्डिल कुविषय-भोग ।
ताँर इच्छाय गेल मोर शेष विषय-रोग ॥८८
प्रसन्न हइया प्रभु तारे कृपा कैल ।
ताँर कृपाय प्रश्न करिते ताँर शक्ति हैल ।८९
पूर्व्वे यैछे राय-पाश प्रभु प्रश्न कैल ।
ताँर शक्त्येय रामानन्द तार उत्तर दिल ॥९०
इहाँ प्रभुर शक्त्येय प्रश्न करे सनातन ।
आपने महाप्रभु करे तत्त्व निरूपण ॥९१

कृष्णस्वरूपमाधुर्य्यैश्वर्य्यभक्तिरसाश्रयं ।
तत्त्वं सनातनायेशः कृपयोपदिदेश सः ॥६॥

टीका—सः ईशः कृपया कृष्णस्वरूप माधुर्य्यैश्वर्य्यभक्तिरसाश्रयं तत्त्वं सनातनाय उपदिदेश ॥६

ईश्वर श्रीकृष्णचैतन्यदेव कृपा करके सनातन गोस्वामी को कृष्ण स्वरूप तत्त्व, माधुर्य्य, ऐश्वर्य्य तत्त्व, भक्ति एवं रस तत्त्व का उपदेश प्रदान किये थे ॥६॥

तबे सनातन प्रभुर चरणे धरिया ।
दैन्य विनति करे दन्ते तृण लञा ॥९२
नीचजाति नीचसङ्गी पतित अधम ।
कुविषय-कूपे पड़ि गोङाइनु जनम ॥९३
आपनार हिताहित किछुइ ना जानि ।
ग्राम्य व्यवहारे पण्डित ताइ सत्य मानि ॥९४
कृपा करि यदि मोरे करियाछ उद्धार ।
आपन कृपाते कह कर्त्तव्य आमार ॥९५
के आमि ? केन आमाय जारे तापत्रय ।
इहा नाहि जानि केमने हित हय ॥९६
साध्य-साधन-तत्त्व पुछिते ना जानि ।
कृपा करि सब तत्त्व कहत आपनि ॥९७
प्रभु कहे, कृष्णकृपा तोमाते पूर्ण हय ।
सब तत्त्व जान, तोमार नाहि तापत्रय ॥९८
कृष्णशक्ति धर तुमि, जान तत्त्वभाव ।
जानि दार्ढ्य लागि पुछे साधुर स्वभाव ॥९९

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे साधन-भक्तिलहर्य्यां पञ्चमाङ्कधृतनारदीयपुराणम्—

सद्धर्म्मस्यावबोधाय येषां निर्बन्धिनी मतिः ।
अचिरादेव सर्व्वार्थः सिध्यत्येषामभीप्सितः ॥७

टीका—येषां अवबोधाय निर्बन्धिनी मतिर्भवेत्, एषां अभीप्सितः सर्व्वार्थः अचिरादेव सिध्यति ॥७॥

श्रीभक्तिरसामृत ग्रन्थ के साधनभक्ति प्रकरण में उक्त है—जिन सब साधु की भगवद्धानारूप-

सद्धर्म के विमल भजनार्ज्जन विषय में निश्चयात्मिका बुद्धि होती है, उन सब के अभिलषितार्थ सत्वर सिद्ध होता है ॥७॥

योग्य पात्र हस्रो तुमि भक्ति प्रवर्त्ताइते ।
क्रमे सब तत्त्व शुन, कहिये तोमाते ॥१००
जीवेर स्वरूप हय कृष्णेर नित्य दास ।
कृष्णेर तटस्था शक्ति भेदाभेद प्रकाश १०१
सूर्य्यांश किरण येन अग्नि ज्वालाचय ।
स्वाभाविक कृष्णेर तिन शक्ति हय ॥१०२

तथाहि भगवत्सन्दर्भे सत्त्वं रजस्तम इति त्रिविदेक-मित्यस्य व्याख्यायां धृतो विष्णुपुराणीय प्रथमांशस्य (३२।५०)--

एकदेशस्थितस्याग्नेर्ज्योत्स्ना विस्तारिणी यथा ।
परस्य ब्रह्मणः शक्तिस्तथेदमखिलं जगत् ॥८॥

टीका—एकदेशस्थितस्य अग्नेः ज्योत्स्ना यथा विस्तारिणी बहुस्थानव्यापिनी, तथा परस्य ब्रह्मणः शक्तिः इदं अखिलं जगत् व्याप्नोति ॥८॥

एकदेशस्थित वह्नि की ज्योत्स्ना जिस प्रकार अधिक दूर व्यापिनी होती है, उस प्रकार पर ब्रह्म की शक्ति भी इस दृश्यमान जगत् को व्याप्तकर विद्यमान है ॥८॥

कृष्णेर स्वाभाविक तिन शक्ति परिणति ।
चिच्छक्ति, जीवशक्ति, आर मायाशक्ति ॥१०३

तथाहि विष्णुपुराणे (१।३।२) -

शक्तयः सर्व्वभावानामचिन्त्यज्ञानगोचराः ।
यतोऽतो ब्रह्मणस्तास्तु सर्गाद्या भावशक्तयः ।
भवन्ति तपतां श्रेष्ठ पावकस्य यथोष्णता ॥९॥

टीका—हे तपतां श्रेष्ठ ! पावकस्य उष्णता यथा तथा सर्व्वभावानां मणिमन्त्रादीनां शक्तयः अचिन्त्य ज्ञानगोचराः तर्कातीतं यद्ज्ञानं कार्य्याणामुपपत्ति-प्रमाणकं तस्य गोचराः सन्ति । यतः अतः ब्रह्मणः ताः तु तथाविधाः सर्गाद्या भावशक्तयः भवन्ति सन्ति ॥९॥

हे तपोधन ! अग्नि की उष्णता शक्ति के समान मणि मन्त्रादि में अचिन्त्य एवं बुद्धि के अगोचर शक्ति विद्यमान है, उस प्रकार ब्रह्म में भी स्वाभाविकी शक्ति है, अर्थात ब्रह्म के स्वरूप से अभिन्न सर्गादि विविध शक्ति हैं ॥९॥

तथाहि विष्णुपुराणे (६।७।६१)--

विष्णुशक्तिः परा प्रोक्ता क्षेत्रज्ञाख्या तथापरा ।
अविद्या कर्म्मसंज्ञान्या तृतीय शक्तिरिष्यते ॥१०॥

श्रीविष्णु पुराण में उक्त है—

श्रीविष्णु की तीन शक्ति हैं, परा-सच्चिदानन्द रूपा, अपरा--क्षेत्रज्ञाख्या जीव स्वरूपा, तथा अविद्या वहिरङ्गा मायाशक्ति कर्मनाम से अभिहिता है ॥१०

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।९।६०)--

यया क्षेत्रज्ञशक्तिः सा वेष्टिता नृप सर्व्वगा ।
संसारतापानखिला-नवाप्नोत्यत्र सन्ततान् ॥
तया तिरोहितत्वाच्च शक्तिः क्षेत्रज्ञसंज्ञिता ।
सर्व्वभूतेषु भूपाल तारतम्येन वर्त्तते ॥११॥

हे नृप ! जिस माया शक्ति के द्वारा वेष्टित होकर क्षेत्रज्ञ शक्ति अर्थात् जीवशक्ति इस संसार में व्याप्त होकर अनन्त भोग करती है ।

माया के द्वारा स्वरूप तिरोहित होने के कारण क्षेत्रज्ञ शक्ति समस्त प्राणीयों में सामान्य विशेष रूप से दृष्ट होती है ॥११॥

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायां (६।५)--

अर्ज्जुनं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्--

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मामिकां ।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्य्यते जगत् ॥१२॥

श्रीमद् भगवद् गीता में लिखित है--हे महावाहो अर्ज्जुन ! पूर्वाक्ता अपरा शक्ति--जड़ स्वरूपा होने के कारण निकृष्टा है, इस से परा अर्थात् श्रेष्ठा शक्ति जीव नाम से अभिहिता है । हे महावाहो ! निज कर्म के द्वारा यह शक्ति जगत् को धारण कर है । इस को तुम जानो ॥१२॥

कृष्ण भुलि सेइ जीव अनादि वहिर्म्मुख ।
अतएव माया तारे देय संसारदुःख ॥१०४
कभु स्वर्गे उठाय कभु नरके डुवाय ।
दण्डच जने राजा येन नदीते चुवाय ॥१०५

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।३५)--

भयं द्वितीयाभिनिवेशतः स्या-
दीशादपेतस्य विपर्ययोऽस्मृतिः ।
तन्माययातो बुध आभजेत्तं,
भक्त्यैकयेशं गुरुदेवतात्मा ॥१३॥

टीका—ईशात् अपेतस्य विमुखस्य तन्मायया अस्मृतिः विपर्य्ययः, ततो द्वितीयाभिनिवेशत अन्य-विषये दृढ़मयो-योगात भयं भवति, अतः बुधः एकया भक्त्या तं आभजेत् । बुधः कीदृशः-गुरुदेवतात्मा ।१३

ईश्वरीय मायाशक्ति के द्वारा फगवद् वहिर्मुख का स्वरूप विस्मरण होता है, एवं देह में आत्म बुद्धि होती है । "ईश्वर से मैं स्वतन्त्र हूँ" इस प्रकार ज्ञान हेतु भीति--अर्थात् मृत्यु उपस्थित होती है। सुतरां बुद्धिमान् व्यक्ति गुरु रूप देवता में प्रीति करके श्रीहरि का भजन एकान्त भक्ति योग से करे ॥१३

साधु-शास्त्र-कृपाय यदि कृष्णोन्मुख हय ।
सेइ जीव निस्तारे, माया ताहारे छाड़य ।१०६

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायां (७।१४)-

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥१४॥

टीका—दैवी गुणमयी मम शक्तिः एषा माया दुरत्यया दुस्तरा । हि निश्चितं ये जनाः मामेव प्रपद्यन्ते, ते एतां मायां तरन्ति ।१४॥

श्रीमद् भगवद् गीता में उक्त है—
दैवी गुणमयी मेरी यह शक्ति अत्युद्भुता दुर्लंङ्घ्य है, किन्तु जो व्यक्ति मेरी शरणागत होकर शुद्ध भक्ति योग से मेरी उपासना करता है, वह माया कबल से मुक्त हो जाता है ॥१४॥

मायामुग्ध जीवेर नाहि कृष्णस्मृतिज्ञान ।
जीवेरे कृपाय कैल कृष्ण वेद पुराण ॥१०७
शास्त्र गुरु आत्मा रूपे आपना जानान ।
कृष्ण मोर प्रभु त्राता जीवेर हय ज्ञान ॥१०८
वेद शास्त्रे कहे सम्बन्ध अभिधेय प्रयोजन ।
कृष्णप्राप्य सम्बन्ध भक्ति प्राप्त्येर साधन ।१०९
अभिधेय नाम भक्ति, प्रेम प्रयोजन ।
पुरुषार्थशिरोमणि प्रेम महाधन ॥११०
कृष्णमाधुर्य्य सेवानन्द प्राप्तिर कारण ।
कृष्णसेवा करे कृष्णरस आस्वादन ॥१११
इहाते दृष्टान्त यैछे दरिद्रेर घरे ।
सर्व्वज्ञ आसि दुःख देखि पुछये ताहारे ॥११२
तुमि केन एत दुःखी ? तोमार आछे पितृधन ।
तोमारे ना कहि, अन्यत्र छाड़िल जीवन ११३
सर्व्वज्ञेर वाक्ये करे धनेर उद्देश ।
ऐछे वेद पुराण जीवे कृष्ण-उपदेश ॥११४
सर्व्वज्ञेर वाक्ये मूलधन अनुबन्ध ।
सर्व्वशास्त्रे उपदेशे श्रीकृष्ण सम्बन्ध ॥११५
बापेर धन आछे जाने धन नाहि पाय ।
सर्व्वज्ञ कहे तारे प्राप्तिर उपाय ॥११६
एइ स्थाने आछे धन यदि दक्षिणे खुदिबे ।
भीमरुल बरुली उठिबे धन ना पाइबे ॥११७
पश्चिमे खुदिबे ताँहा यक्ष एक हय ।
से विघ्न करिबे धन हाते ना पड़य ॥११८
उत्तरे खुदिबे आछे कृष्ण अजागरे ।
धन नाहि पाबे, खुदिते गिलिबे सबारे ॥११९
पूर्व्वदिके ताते माटी अल्प खुदिते ।
धनेर जाड़ि पड़िबेक तोमार हातेते ॥१२०

ऐछे शास्त्र कहे, कर्म्म ज्ञान योग त्यजि ।
भक्तेय कृष्ण वश हय, भक्तेय ताँरे भजि ।।१२१

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।१४।२०)—
उद्धवं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्—

न साधयति मां योगो न सांख्यः धर्म्म उद्धव ।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्म्ममोर्ज्जिता ।।१५

तथाहि श्रीमद्भागवते ११.१४।२१)—

भक्त्याहमेकया ग्राह्यः श्रद्धयात्मा प्रियः सतां ।
भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकानपि सम्भवात् ।।१६

श्रीमद्भागवत के ११।१४।२१ में उक्त है—श्रीकृष्ण उद्धव को कहे थे—हे उद्धव ! मद्विषयक दृढ़ा भक्ति मुझ को जिस प्रकार वशीभूत करती है-योग, साङ्ख्य स्वधर्माचरण, तपस्या, दान प्रभृति के द्वारा मैं उस प्रकार वशीभूत नहीं होता हूँ ।।१५।।

टीका—श्रद्धया एकया भक्त्या अहं ग्राह्यः । अहं किम्भूतः ?--सतां प्रियः आत्मा । मन्निष्ठा भक्तिः श्वपाकानपि चण्डालानपि सम्भवात् पुनाति ।।१६।।

भा० ११।१४।२१ में लिखित है--एकमात्र श्रद्धा समन्वित भक्ति के द्वारा ही साधु वृन्द मुझ को प्रिय आत्मा रूप में प्राप्त करते हैं, मेरे प्रति निष्ठा भक्ति होने पर चण्डाल भी जाति दोष से मुक्त हो जाता है ।।१६।।

अतएव भक्ति कृष्णप्राप्तिर उपाय ।
अभिधेय बलि तारे सर्व्वशास्त्रे गाय ।।१२२
धन पाइले यैछे सुखभोग फल पाय ।
सुखभोग हैते दुःख आपनि पलाय ।।१२३
तैछे भक्तिफल कृष्णे प्रेम उपजाय ।
प्रेम कृष्णास्वाद हैले भव नाश पाय ।।१२४
दारिद्रयनाश भवक्षय प्रेमेर फल नय ।
भोग प्रेमसुख मुख्य प्रयोजन हय ।।१२५
वेदशास्त्रे कहे सम्बन्ध अभिधेय प्रयोजन ।
कृष्ण कृष्णभक्ति प्रेम तिन महाधन ।।१२६
वेदादि सकल शास्त्रे कृष्ण मुख्य सम्बन्ध ।
तार ज्ञाने आनुषङ्गे याय मायाबन्ध ।।१२७

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे व्यभिचारिलहर्य्यां ऊनषष्ठ्यङ्कधृतं पाद्मे वैशाख माहात्म्यम्—

व्यामोहाय चराचरस्य जगतस्ते ते पुराणागमास्तां तामेव हि देवतां परमिकां जल्पन्तु कल्पावधि ।
सिद्धान्ते पुनरेक एव भगवान् विष्णुः समस्तागमव्यापारेषु विवेचनव्यतिकरं नीतेषु निश्चीयते ।।१७

टीका—चराचरस्य जगतः व्यामोहाय ते ते प्रसिद्धाः पुराणागमाः रचिताः, तां तां परमिकां तेषु देवतां एव हि कल्पावधि जल्पन्तु, पुनः सिद्धान्ते समस्तागमव्यापारेषु विवेचनव्यतिकरं नीतेषु सत्सु एक एव भगवान् विष्णुः निश्चीयते ।।१७।।

भक्ति रसामृतसिन्धु के दक्षिण विभाग में लिखित है,—चराचर विश्व के मोहार्थ विविध पुराण एवं आगम शास्त्र समूह विरचित हुये हैं, एवं तन्निरूपित देवगण भी मानव वृन्द के द्वारा पूजित होते हैं । किन्तु निखिल शास्त्र विचार से यही प्रतिपन्न होता है कि श्रीविष्णु ही एक मात्र भगवान् हैं ।।१७।।

गौण मुख्य वृत्ति किवा अन्वय व्यतिरेके ।
वेदेर प्रतिज्ञा केवल कहये कृष्णके ।।१२८

तथाहि श्रीमद्भागवते(११।२१।४२)—
उद्धवं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्—

किं विधत्ते किमाचष्टे किमनूद्य विकल्पयेत् ।
इत्यस्याहृदयं लोके नान्यो मद्वेद कश्चन ।।१८।।

टीका—विधिवचनैः किं विधत्ते, मन्त्रवचनैः किं आचष्टे, ज्ञानकाण्डे किं अनूद्य विकल्पयेत, इति अस्याः श्रुतेः हृदयं तात्पर्य्यं लोके मत् मत्तः अन्यः कश्चन न वेद ।।१८।।

भा० ११।२१।४२ में उक्त है—वेद के कर्म काण्ड में किस का विधान है, ज्ञान काण्ड किस को अवलम्बन कर विकल्प अर्थात् तर्क करता है, श्रुति

का तात्पर्य्य क्या है ? मैं ही इस को जानता हूँ, अपर कोई भी व्यक्ति इस को नहीं जानते हैं ॥१८

तथाहि श्रीमद्भागवते(१०।२१।४३)—

उद्धवं प्रति श्रीभगवद्वाक्यम्—

मां विधत्तेऽभिधत्ते मां विकल्प्यापोह्यते ह्यहं ।
एतावान् सर्व्व वेदार्थः शब्द आस्थाय मां भिदां ।
मायामात्रमनूद्यान्ते प्रतिषिध्य प्रसीदति ॥१९॥

टीका—श्रुतिः मां विधत्ते, मां ईश्वरं अभिधत्ते, मां विकल्प्य यत् अपोह्यते, तत् अहं हि निश्चितं, एतावानेव सर्व्ववेदार्थः, शब्दः मां आस्थाय भिदां मायामात्रं अनूद्य कथयित्वा अन्ते प्रतिषिध्य प्रसीदति विरमति ॥१९॥

श्रीमद् भागवत के ११।२१।४३ में उक्त है—
भगवान् उद्धव को कहे हैं—श्रुति समूह यज्ञ रूप में मेरा वर्णन करती हैं, देवता रूप में मुझ को ही कहती है, एवं मुझ को आश्रय कर वितर्क करती हैं, यही निखिल वेद का अर्थ है ।

वेद समूह प्रथमतः मुझ को परमातमा रूप में आश्रय कर पश्चात् भेदात्मिका माया को दिखाकर उसका प्रत्याख्यान पूर्वक निवृत्त व्यापार होते हैं ।१९

कृष्णेर स्वरूप अनन्त वैभव अपार ।
चिच्छक्ति मायाशक्ति जीवशक्ति आर ॥१२९
वैकुण्ठ ब्रह्माण्डगण शक्तिकार्य्य हय ।
स्वरूप शक्ति,शक्ति कार्य्येर,कृष्ण समाश्रय ॥१३०

तथाहि श्रीमद्भागवते(१०।१) —

दशमे दशमं लक्ष्यमाश्रिताश्रयविग्रहम् ।
श्रीकृष्णाख्यं परं धाम जगद्धाम नमामि तत् ॥२०॥

श्रीमद् भागवत के दशम स्कन्ध की स्वामिकृत टीका के प्रारम्भ में उक्त है—
श्रीकृष्ण नामक दशम पदार्थ ही दशम स्कन्ध का लक्ष्य है । श्रीकृष्ण ही आश्रित पदार्थ समूह के आश्रय विग्रह हैं, परम धाम एवं जगत् के निवास स्थान स्वरूप हैं ॥२०॥

कृष्णेर स्वरूप विचार शुन सनातन ।
अद्वयज्ञानतत्त्व व्रजे व्रजेन्द्रनन्दन ॥१३१
सर्व्वादि सर्व्व-अंशी किशोर शेखर ।
चिदानन्द देह सर्व्वाश्रय सर्व्वेश्वर ॥१३२

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम्(५।१)—

ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्दविग्रहः ।
अनादिरादिर्गोविन्दः सर्व्वकारणकारणः ॥२१॥

ब्रह्म संहिता के पञ्चमाध्याय में उक्त है,—
सच्चिदानन्द स्वरूप श्रीकृष्ण ही परम ईश्वर हैं। वह गोविन्द हैं, अनादि अर्थात् उत्पत्ति हीन हैं, एवं आदि अर्थात् उत्पत्ति के कारण हैं, एवं सर्व कारण कारण--अर्थात् सर्वोत्पत्ति के उपाय स्वरूप माया के उत्पत्ति हेतु हैं, अर्थात् उनके आदि कोई नहीं है, वह गोविन्द एवं सव कारण कारण माया के भी आदि कारण हैं ॥२१॥

स्वयं भगवान् कृष्ण गोविन्द पर नाम ।
सर्व्वैश्वर्य्यपूर्ण याँर पूर्ण नित्यधाम ॥१३३

तथाहि श्रीमद्भागवते(१।३।२८)—

एते चांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् ।
इन्द्रारिव्याकुलं लोकं मृड़यन्ति युगे युगे ॥२२॥

भा० १।३।२८ में लिखित है—
पूर्वोक्त अवतार समूह कारणार्णवशायी नारायण के अंश कला हैं, अर्थात् स्वल्प शक्ति समन्वित अवतार हैं । किन्तु कृष्ण, स्वयं साक्षात् भगवान् ही हैं। कारण, युग युग में लोक स्वेच्छाचारी व्यक्तियों के द्वारा पीड़ित होने पर अवतीर्ण होकर पीड़ितों को सुखी करते हैं ॥२२॥

ज्ञान योग भक्ति तिन साधनेर वशे ।
ब्रह्म आत्मा भगवान् त्रिविध प्रकाशे ॥१३४

तथाहि श्रीमद्भागवते(१।२।११)—

वदन्ति तत्तत्त्वविदस्तत्त्वं यज्ज्ञानमद्वयम् ।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते ॥२३॥

भा० १।२।११ में उक्त है—एक अद्वय ज्ञान कोही तत्त्व वेत्तागण तत्त्व कहते हैं। वही ब्रह्म, परमात्मा एवं भगवान् शब्द से अभिहित होते हैं ॥२३॥

ब्रह्म अङ्गकान्ति ताँर निर्विशेष प्रकाशे ।
सूर्य्य येन चर्म्मचक्षे-ज्योतिर्म्मय भासे ॥१३५

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (५।४६)—
यस्य प्रभाप्रभवतो जगदण्डकोटि-
कोटिष्वशेषवसुधादि विभूतिभिन्नं ।
तद्ब्रह्म निष्कलमनन्तमशेषभूतं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥२४॥

ब्रह्म संहिता के पञ्चमाध्याय में उक्त है, कोटि कोटि ब्रह्माण्ड में पृथिवी, जल, तेज: वायु, एवं आकाशादि से पृथक् रूप में प्रसिद्ध निष्कल, अनन्त, एवं अशेष स्वरूप जो प्रसिद्ध ब्रह्म तत्त्व है, वह भी जिनके प्रभाशील देह की कान्ति है, उन गोविन्द का मैं भजन करता हूँ ॥२४॥

परमात्मा यिँह तिँह कृष्णेर एक अंश ।
आत्मार आत्मा हन कृष्ण सर्व्व-अवतंस १३६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१४।५२)—
कृष्णमेनमवेहि त्वमात्मानमखिलात्मनां।
जगद्धिताय सोऽप्यत्र देहीवाभाति मायया ॥२५

टीका—एनं कृष्णं त्वं अखिलात्मनां आत्मानं अवेहि। यः जगद्धिताय अपि अत्र जगति मायया देहीव देहधारीव आभाति ॥२५॥

श्रीमद् भागवत के १०।१४।५२ में उक्त है—श्रीकृष्ण को निखिलदेह धारियों की आत्मा है, जानना चाहिये। कृष्ण जगत् वासियों के हितार्थ इस जगत् में शरीर धारियों के समान प्रतीत होते हैं।२५

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (१०।४२)—
अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन ।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥२६

श्रीमद् भगवद् गीता में उक्त है—भगवान् अर्जुन को कहे थे-हे अर्जुन! मेरी विभूति के सम्बन्ध में तुम्हें अधिक जानने की आवश्यकताही क्या है ? निश्चित जानना-यह दृश्यमान जगत् मदीय एकांश में स्थित है ॥२६॥

भक्तेच भगवानेर अनुभव पूर्ण रूप ।
एकइ विग्रहे ताँर अनन्त स्वरूप ॥१३७
स्वयं रूप तदेकात्मरूपावेश नाम ।
प्रथमेइ तिन रूपे रहे भगवान् ॥१३८
स्वयं रूपे स्वयं प्रकाश दुइ रूपे स्फूर्त्ति ।
स्वयं रूपे एक कृष्ण व्रजे गोपमूर्त्ति ॥१३९
प्राभव वैभव रूपे द्विविध प्रकाशे ।
एक वपु बहुरूप यैछे हैल रासे ॥१४०
महिषीविवाहे हैला बहुविध मूर्त्ति ।
प्राभव विलास एइ शास्त्रपर सिद्धि ॥१४१
सौभर्य्यादि प्राय सेइ कायव्यूह नय ।
कायव्यूह हैले नारदेर विस्मय ना हय ॥१४२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।६९।२)—
चित्रं बतैतदेकेन वपुषायुगपत् पृथक् ।
गृहेषु द्व्यष्टसाहस्रं स्त्रिय एक उदावहत् ॥२७

भा० १०।६९।२ में उक्त है--अहो यह अतीव आश्चर्य्य कर है कि एक ही श्रीकृष्ण-एक ही समय में एक ही शरीर से षोड़श सहस्र स्त्री को षोड़श सहस्र भवनों में पृथक् पृथक् रूप से विवाह किये थे ॥२७॥

सेइ वपु सेइ आकृति पृथक् यदि भासे ।
भावावेशभेदे नाम वैभव प्रकाशे ॥१४३
अनन्त प्रकाशे कृष्णेर नाहि मूर्त्तिभेद ।
आकार वर्ण अस्त्र भेद नाम विभेद ॥१४४

तथाहि श्रीमद्भागवते(१०।४७।७)—

अन्ये च संस्कृतात्मानो विधिनाभिहितेन ते ।
यजन्ति त्वन्मयास्त्वां वै बहुमूर्त्यैकमूर्त्तिकं ।।२८।।

टीका - अभिहितेन विधिना संस्कृतात्मान: विमलचित्ता: सन्त: अन्ये ते जना: त्वन्मया: वै निश्चितं बहुमूर्त्तैक मूर्त्तिकं त्वां यजन्ति ।।२८।।

भा० १०।४७।७ में लिखित है—वैष्णवादि मन्त्र में दीक्षित व्यक्ति गण दीक्षा के द्वारा शुद्ध चित्त होकर आप के कथित पाञ्चरात्र शास्त्र के अनुसार तन्मय होकर बासुदेव सङ्कर्षण अनिरुद्ध रूप से अनेक मूर्त्तियों का एवं नारायण रूप से एक मूर्त्ति का जो भजन करते है वह आप का ही भजन करते है ।।२८

वैभव प्रकाश कृष्णेर श्रीबलराम ।
वर्णमात्र भेद सब कृष्णेर समान ।।१४५
वैभवप्रकाश यैछे देवकीतनुज ।
द्विभुज स्वरूप कभु हय चतुर्भुज ।।१४६
ये काले द्विभुज नाम वैभव प्रकाश ।
चतुर्भुज हैले नाम प्राभवविलास ।।१४७
स्वयं रूपे गोपवेश गोप अभिमान ।
बासुदेवेर क्षत्रियवेश आमि क्षत्रिय ज्ञान ।१४८
सौन्दर्य्य ऐश्वर्य्य माधुर्य्य वैदग्ध्यविलास ।
व्रजेन्द्रनन्दने इहा अधिक उल्लास ।।१४९
गोविन्देर माधुरी देखि वासुदेवेर क्षोभ ।
से माधुरी आस्वादिते उपजये लोभ ।।१५०

तथाहि ललितमाधवे(४।१०)—

उद्गीर्णाद्भुतमाधुरीपरिमलस्याभीरलीलस्य मे
द्वैतं हन्त समक्षयन् मुहुरसौ चित्रीयते चारण ।
चेत: केलिकुतूहलोत्तरलितं सत्यं सखे मामकं
यस्य प्रेक्ष्य स्वरूपतां व्रजबधूस्वारूप्यमन्विच्छति ।।२९

टीका--हे सखे ! असौ चारण: गन्धर्व्व: मे मम द्वैतं हन्त विस्मये, समक्षयन् सन्दर्शयन् सन् मुहु: पुन: पुन: चित्रीयते । मे किम्भूतस्य ?—उद्गीर्णाद्भुत-माधुरीपरिमलस्य प्रसारिताश्चर्य्यमाधुर्य्य-गन्धस्य । पुन: किम्भूतस्य ?--आभीरलीलस्य गोपशिशुभि: सह क्रीड़मानस्य । यस्य नर्त्तकस्य स्वरूपतां प्रेक्ष्य अवलोक्य मामकं चेत: सत्यं व्रजवधू स्वारूप्यं गोपाङ्गनासङ्गं अन्विच्छति अभिलषति । चेत: किम्भूतं ?--केलिकुतूहलोत्तरलितं क्रीड़ाविषये यत् औत्सुक्यं तेन चपलितं ।।२९।।

हे सखे ! यह कारण अर्थात् गन्धर्व नर्त्तक मदीय द्वितीय रूप अर्थात् द्वि भुज मुरलीधारी रूप का अभिनय करके चमत्कार रूप से मुझ को विमोहित कर रहा है । अहो ! उस रूप की कैसी माधुर्य्यगन्ध उद्भूत हो रही है, वह गोपशिशुवृन्द के सहित खेल रहा है । इस नटकी अभिनव माधुरी को देख मेरा चित्त केलि कुतूहल में चपल होकर व्रजनारी वृन्द के सङ्ग लाभ हेतु समुत्कण्टित हो रहा है ।२९

मथराय यैछे गन्धर्व्वनृत्य दरशने ।
पुन: द्वारकाते यैछे चित्र विलोकने ।।१५१

तथाहि ललितमाधवे(८।२८)—

अपरिकलितपूर्व्व: कश्चमत्कारकारी
स्फुरति मम गरीयानेष माधुर्य्यपूर: ।
अयमहमपि हन्त प्रेक्ष्य यं लुब्धचेता:
सरभससुपभोक्तुं कामये राधिकेव ।।३०।।

मणि भित्तिमें निज प्रतिविम्ब अवलोकन कर श्रीहरि उत्सुकता से कहे थे, अहो ! मेरी माधुरी कैसी निरतिशय आश्चर्य्य कर है । इसके पहले कभी भी यह देखी नहीं गई, अधिक और क्या कहूं, उस को देखकर लुब्ध होकर कौतुक के सहित श्रीमती-राधिकाके समान उपभोग करने के अभिलाषी हूँ ।३०

सेइ वपु भिन्नाभासे किछु भिन्नाकार ।
भावावेशाकृतिभेदे तदेकात्म नाम तार ।।१५२
तदेकात्मरूपेर विलास स्वांश दुइ भेद ।
विलास स्वांशेर भेद विविध विभेद ।।१५३

वैभव भेदे विलास द्विधाकार ।
प्राभव वैभव भेदे विलास अनन्त प्रकार ॥१५४
विलासेर विलास भेद अनन्त प्रकार ॥१५४
प्राभव विलास वासुदेव सङ्कर्षण ।
प्रद्युम्न अनिरुद्ध मुख्य चारि जन ॥१५५
व्रजे गोपभाव रामेर पुरे क्षत्रिय भावन ।
वर्ण वेश भेद ताते विलास तार नाम ॥१५६
वैभव प्रकाशे आर प्राभव विलासे ।
एक मूर्त्ये बलदेव भाव भेद भासे ॥१५७
आदि चतुर्व्यूह केह नाहि इहार सम ।
अनन्त चतुर्व्यूहगणेर प्राकट्यकारण ॥१५८
कृष्णेर एइ चारि प्राभव विलास ।
द्वारका मथुरा पुरे नित्य इहार वास ॥१५९
एइ चारि हैते चव्विश मूर्त्ति परकाश ।
अस्त्रभेद नामभेद वैभव विलास ॥१६०
पुनः कृष्ण चतुर्व्यूह लञा पूर्व्व रूपे ।
परव्योममध्ये वैसे नारायणरूपे ॥१६१
ताहा हैते पुनः चतुर्व्यूह परकाशे ।
आवरणरूपे चारि दिके यार वासे ॥१६२
चारि जनेर पुनः पृथक् तिन तिन मूर्त्ति ।
केशवादि यथा हैते विलासेर पूर्त्ति ॥१६३
चक्रादि धारण भेदे नामभेद सब ।
वासुदेव मूर्त्ति केशव नारायण माधव ॥१६४
सङ्कर्षण मूर्त्ति गोविन्द विष्णु श्रीमधूसूदन ।
ए अन्य गोविन्द नहे व्रजेन्द्रनन्दन ॥१६५
प्रद्युम्न मूर्त्ति त्रिविक्रम वामन श्रीधर ।
अनिरुद्धमूर्त्ति हृषीकेश पद्मनाभ दामोदर ।१६६
द्वादश मासेर देवता एइ बार जन ।
मार्गशीर्षे केशव, पौषे नारायण ॥१६७
माघेर देवता माधव, गोविन्द फाल्गुने ।
चैत्रे विष्णु, वैशाखे श्रीमधुसूदने ॥१६८
ज्यैष्ठे त्रिविक्रम, आषाढ़े वामन देवेश ।
श्रावणे श्रीधर, भाद्रे देव हृषीकेश ॥१६९
आश्विने पद्मनाभ कार्त्तिके दामोदर ।
राधादामोदर अन्य व्रजेन्द्र-कोङर ॥१७०
द्वादश तिलक मन्त्र द्वादश तार नाम ।
आचमने एइ नामे स्पर्शि तत्तत स्थान ॥१७१
एइ चारि जनेर विलास अष्ट जन ।
ता सबार नाम कहि शुन सनातन ॥१७२
पुरुषोत्तम अच्युत नृसिंह जनार्द्दन ।
हरि कृष्ण अधोक्षज उपेन्द्र अष्ट जन ॥१७३
वासुदेवेर विलास अधोक्षज पुरुषोत्तम ।
सङ्कर्षणेर विलास उपेन्द्र अच्युत दुइ जन १७४
प्रद्युम्नेर विलास नृसिंह जनार्द्दन ।
अनिरुद्धेर विलास हरि कृष्ण दुइ जन ॥१७५
एइ चव्विश मूर्त्ति प्राभव विलास प्रधान ।
अस्त्रधारण भेदे धरे भिन्न भिन्न नाम ॥१७६
इहार मध्ये याहार हय आकार वेश भेद ।
सेइ सेइ हय विलास वैभव विभेद ॥१७७
पद्मनाभ त्रिविक्रम नृसिंह वामन ।
हरि कृष्ण आदि हय आकारे विलक्षण ॥१७८
कृष्णेर प्राभव विलास वासुदेवादि चारि जन ।
सेइ चारि जनार विलास विंशति गणन ।१७९
इँहा सबार पृथक् वैकुण्ठ परव्योमधामे ।
पूर्व्वादि अष्ट दिके तिन तिन क्रमे ॥१८०
यद्यपि परव्योम सबाकार नित्य धाम ।
तथापि ब्रह्माण्डे कारो काँहो सन्निधान ॥१८१

परव्योम धामे नारायणेर नित्य स्थिति ।
परव्योम उपरि कृष्ण-लोकेर विभूति ॥१८२
एक कृष्ण—लोक हय त्रिविधप्रकार ।
गोकुलाख्य मथुराख्य द्वारकाख्य आर ॥१८३
मथुराते केशवेर नित्य सन्निधान ।
नीलाचले पुरुषोत्तम जगन्नाथ नाम ॥१८४
प्रयागे माधव, मन्दारे श्रीमधुसूदन ।
आनन्दारण्ये वासुदेव, पद्मनाभ जनार्द्दन ।१८५
विष्णुकाञ्चीते विष्णु रहे, हरि मायापुरे ।
ऐछे आर नाना मूर्त्ति ब्रह्माण्डभितरे ॥१८६
एइमत ब्रह्माण्डमध्ये सबार प्रकाश ।
सप्तदीपे नवखण्डे याँहार विलास ॥१८७॥
सर्व्वत्र प्रकाश ताँर भक्ते सुख दिते ।
जगतेर अधर्म्म नाशि धर्म्म स्थापिते ॥१८८॥
इहार मध्ये कारओ अवतारे गणन ।
यैछे विष्णु त्रिविक्रम नृसिंह वामन ॥१८९॥
अस्त्रधृति-भेद नाम-भेदेर कारण ।
चक्रादिधारण भेद शुन सनातन ॥१९०॥
दक्षिणाधो-हस्त हैते वामाधः पर्य्यन्त ।
चक्रादि शस्त्र धारणेर गणनार अन्त ॥१९१
सिद्धार्थसंहिता करे चव्विश मूर्त्ति गणन ।
तार मत आगे कहि चक्रादि धारण ॥१९२
वासुदेव गदा-शङ्ख-चक्र-पद्म धर ।
सङ्कर्षण गदा-शङ्ख-पद्म-चक्र कर ॥१९३॥
प्रद्युम्न शङ्ख-चक्र-गदा-पद्म धर ।
अनिरुद्ध चक्र-गदा-शङ्ख-पद्म कर ॥१९४
परव्योमे वासुदेवादि निज निज अस्त्रधर ।
तार मत कहि येइ सब अस्त्रकर ॥१९५

श्रीकेशव पद्म-शङ्ख-चक्र-गदाधर ।
नारायण शङ्ख-पद्म-गदा-चक्रकर ॥१९६॥
श्रीमाधव गदा-चक्र-शङ्ख-पद्मकर ।
श्रीगोविन्द चक्र-गदा-पद्म-शङ्खधर ॥१९७॥
विष्णुमूर्त्ति गदा-पद्म-चक्र-शङ्खकर ।
मधुसूदन शङ्ख-चक्र-पद्म-गदाकर ॥१९८॥
त्रिविक्रम पद्म-गदा-चक्र-शङ्खकर ।
श्रीवामन शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधर ॥१९९॥
श्रीधर पद्म-चक्र-गदा-शङ्खकर ।
हृषीकेश गदा-शङ्ख-पद्म-चक्रधर ॥२००॥
पद्मनाभ शङ्ख-पद्म-चक्र-गदाकर ।
दामोदर पद्म-शङ्ख-गदा-चक्रधर ॥२०१॥
पुरुषोत्तम चक्र-पद्म-शङ्ख-गदाधर ।
अच्युत गदा-पद्म-शङ्ख-चक्रधर ॥२०२॥
नृसिंह चक्र-पद्म-गदा-शङ्खधर ।
गदाधर शङ्ख-पद्म-चक्र-गदाकर ॥२०३॥
श्रीहरि शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मकर ।
श्रीकृष्ण शङ्ख-गदा-चक्र-पद्मकर ॥२०४॥
अधोक्षज गदा-पद्म-शङ्ख-चक्रकर ।
उपेन्द्र शङ्ख-गदा-पद्म-चक्रकर ॥२०५॥
हयशीर्ष पञ्चरात्रे कहे षोल जन ।
तार मते कहि एवे चक्रादि धारण ॥२०६॥
केशव भेद पद्म-शङ्ख-गदा-चक्रधर ।
माधव भेद चक्र-गदा-पद्म-शङ्खकर ॥२०७
नारायण भेद नाना अस्त्र-भेद-धर ।
इत्यादिक भेद एइ सब अस्त्रकर ॥२०८॥
स्वयं भगवान् आर लीला पुरुषोत्तम ।
एइ दुइ नाम धरे व्रजेन्द्रनन्दन ॥२०९॥

पुरीर आवरण नाम पुरीर सब देशे ।
नवव्यूहरूपे नव मूर्त्ति परकाशे ॥२१०॥

तथाहि लघुभागवतामृते पूर्व्वखण्डे पादविभूतिकथने पञ्चदशाङ्कधृतसात्वततन्त्रम्—

चत्वारो वासुदेवाद्या नारायणनृसिंहकौ ।
हयग्रीवो वराहश्च ब्रह्मा चेति नवोदिता ॥३१॥

टीका - वासुदेवाद्याः चत्वारः, नारायणनृसिंहौ द्वौ हयग्रीवः, वराहः, ब्रह्मा च त्रय इति नवमूर्त्तयः उदिताः अभिहिताः ॥३१॥

वासुदेवादि चार—अर्थात् वासुदेव, सङ्कर्षण, प्रद्युम्न एवं अनिरुद्ध, नारायण, नृसिंह, हयग्रीव, वराह एवं ब्रह्मा ये नव मूर्त्ति परमेश्वर की नव व्यूह-रूपाद विभूति हैं ॥३१॥

प्रकाश विलासेर एइ कैल विवरण ।
स्वांशेर भेद कहि एवे शुन सनातन ॥२११॥
सङ्कर्षण मत्स्यादिक दुइ भेद तार ।
पुरुषावतार सङ्कर्षण मत्स्यादि अवतार ॥२१२
अवतार हय कृष्णेर षड़्विध प्रकार ।
पुरुषावतार एक लीलावतार आर ॥२१३॥
गुणावतार आर मन्वन्तरावतार ।
युगावतार आर शक्त्यावेशावतार ॥२१४॥
बाल्य पौगण्ड हय विग्रहेर धर्म्म ।
एत रूपे लीला करे व्रजेन्द्रनन्दन ॥२१५॥
अनन्त अवतार कृष्णेर नाहिक गणन ।
शाखा-चन्द्र न्याय करि दिग्‌दरशन ॥२१६॥

तथाहि श्रीमद्भागवते(१ ३।२६)—
शौनकादीन् प्रति सूतवाक्यम्—

अवतारा ह्यसंख्येया हरेः सत्त्वनिधेर्द्विजाः ।
यथाविदासिनः कूल्याः सरसः स्युः सहस्रशः ॥३२॥

टीका—हे द्विजाः ! हि निश्चितं सत्त्वनिधेः हरेः अवतारा: असंख्येयाः भवन्ति । यथा अविदासिनः सरसः सकाशात् सहस्रशः कूल्याः क्षुद्रप्रवाहाः स्युः ॥३२॥

श्रीमद्भागवत के १।३।२६ मे उक्त है—सूत शोनक प्रभृति को कहे थे—हे विप्रवृन्द ! जिस प्रकार अपक्षय हीन जलनिधि से सहस्र सहस्र क्षुद्र सलिल प्रवाह निर्गत होते हैं। उसी प्रकार सत्त्वनिधि ईश्वर श्रीहरि से भी अगणनीय अवतार होते हैं ॥३२॥

प्रथमेइ करे कृष्ण पुरुषावतार ।
सेइत पुरुष हय त्रिविधप्रकार ॥२१७॥

तथाहि लघुभागवतामृते पूर्व्वखण्डे अवतारप्रकरणे नवमाङ्कधृतं सात्वततन्त्रम्—

विष्णोस्तु त्रीणि रूपाणि पुरुषाख्यान्यथो विदुः ।
एकन्तु महतः स्रष्टृ द्वितीयन्त्वण्डसंस्थितम् ।
तृतीयं सर्व्वभूतस्थं तानि ज्ञात्वा विमुच्यते ॥३३॥

श्रीविष्णु के पुरुष नामक तीन रूप हैं, प्रथम पुरुष कारणार्णवशायी है, एवं महत्तत्त्व की स्रष्टा है, द्वितीय पुरुष गर्भोदशायी है, जिनको प्रद्युम्न कहते हैं, तृतीय पुरुष अनिरुद्ध है, जो समस्त भूतों में परमात्मा रूप में रहते हैं। इन तीन रूपों को जानने से मानव मुक्त होता है ॥३३॥

अनन्त शक्तिमध्ये कृष्णेर तिन शक्ति प्रधान ।
इच्छाशक्ति क्रियाशक्ति ज्ञानशक्ति नाम ॥२१८
इच्छाशक्तिप्रधान कृष्ण इच्छाय सर्व्वकर्त्ता ।
ज्ञानशक्तिप्रधान वासुदेव चित्ताधिष्ठाता ॥२१९
इच्छा ज्ञान क्रिया विना ना हय सृजन ।
तिनेर तिन शक्ति मिलि प्रपञ्च रचन ॥२२०॥
क्रियाशक्ति प्रधान सङ्कर्षण बलराम ।
प्राकृताप्राकृत सृष्टि करेन निर्म्माण ॥२२१॥
अहङ्कारेर अधिष्ठाता कृष्णेर इच्छाय ।
गोलोक वैकुण्ठ सृजे चिच्छक्ति द्वाराय ।२२२

यद्यपि असृज्य नित्य चिच्छक्तिविलास ।
तथापि सङ्कर्षण-इच्छाय ताहार प्रकाश ।२२३

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (५।२)—

सहस्रपत्रं कमलं गोकुलाख्यं महत् पदम् ।
तत्कर्णिकारं तद्धाम तदनन्तांशसम्भवम् ।।३४।।

टीका—तद्धाम गोकुलाख्यं भवेत् । धाम कीदृश ? सहस्रपत्रं कमलमिव । पुनः कम्भूतं ? महत्पदं सर्व्वोत्तमस्थलं अथवा महत्तत्त्वानां स्थितिस्थानं । पुनः किम्भूतं ? तत्कर्णिकारं । पुनः तदनन्तांश-सम्भवम् ।।३४।।

गोकुल नामक स्थान ही उन भगवान् के आवास स्थल हैं। वह स्थान सहस्रदल कमलके समान है, एवं महत्तत्त्व प्रभृति की निवास अर्थात् अधिष्ठान स्थल है। उस सहस्रदल कमल की कर्णिका के समान मध्य भाग है, वह उसमें अनन्त ब्रह्माण्डकी वीज अन्तर्निहित है ।।३४।।

मायाद्वारे सृजेन तिँहब्रह्माण्डेर गण ।
जड़रूपा प्रकृति नहे ब्रह्माण्ड कारण ।।२२४
जड़ हैते सृष्टि नहे ईश्वरशक्ति विने ।
ताहाते सङ्कर्षण करेन शक्ति आधाने ।।२२५
ईश्वरेर शक्तये सृष्टि करये प्रकृति ।
लौह येन अग्निशक्तये धरे दाहशक्ति ।।२२६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।४६।३१)—

एतौ हि विश्वस्य च बीजयोनी,
रामः मुकुन्दः पुरुषः प्रधानं ।
अन्वीय भूतेषु विलक्षणस्य,
ज्ञानस्य चेशात इमौ पुराणौ ।।३५।।

टीका—रामः बलदेवः मुकुन्दश्च कृष्णश्च एतौ द्वौ हि निसंशयं विश्वस्य वीजयोनी भवतः । पुरुषः प्रधानं भूतेषु अन्वीय विलक्षणस्य ज्ञानस्य च ईशाते ईश्वरौ भवतः । इमौ पुराणौ अनादी ।।३५।।

श्रीमद्भागवत के १०।४६।३१ में उद्धव नन्दको कहे थे—हे नन्द ! श्रीकृष्ण एवं बलराम उभय विश्व के निमित्तोपादान कारण हैं, दोनों ही भूत समूह में अनुप्रविष्ट हो विविध भेद ज्ञानके नियन्ता हुये हैं, कारण दोनों पुराण पुरुष हैं ।।३५।।

सृष्टि हेतु येइ मूर्त्ति प्रपञ्चावतरे ।
सेइ ईश्वरमूर्त्ति अवतार नाम धरे ।।२२७
मायातीत परव्योमे सबार अवस्थान ।
विश्वे अवतरि धरे अवतार नाम ।।२२८
मायाके अवलोकिते श्रीसङ्कर्षण ।
पुरुषरूपे अवतीर्ण हैला प्रथम ।।२३०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।३।१)—

जगृहे पौरुषं रूपं भगवन्महदादिभिः ।
सम्भूतं षोड़शकलमादौ लोकसिसृक्षया ।।३६।

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।६।४०)

आद्योऽवतारः पुरुषः परस्य,
कालः स्वभावः सदसन्मनश्च ।
द्रव्यं विकारो गुण इन्द्रियाणि,
विराट् स्वराट् स्थास्नु चरिष्णु भूम्नः ।।३७।।

श्रीमद्भागवत के १।३।१ में उक्त है,—भगवान् लोक सृजन हेतु प्रथमतः महत्तत्त्व, अहङ्कारतत्त्व एवं पञ्चतन्मात्र के द्वारा षोड़षकला विशिष्ट पौरुषरूप अर्थात् एकादश इन्द्रिय एवं पञ्चमहाभूत ये षोड़श अंशयुक्त विराट् मूर्त्ति परिग्रह किये थे ।।३६।।

श्रीमद्भागवत के २।६।४० में उक्त है—प्रकृति प्रवर्त्तक पुरुष ही परब्रह्म भगवान् के आद्य अवतार हैं। अनन्तर काल, स्वभाव, कार्य्य कारण रूपिणी प्रकृति, महत्तत्त्व, महाभूतः अहङ्कार तत्त्व, सत्त्वादिगुण इन्द्रिय समूह, विराट्देह, वैराज पुरुष, स्थावर एवं जङ्गम हुये हैं ।।३७।।

सेइ पुरुष विरजाते करिला शयन ।
कारणाब्धिशायी नाम जगत-कारण ।।२३१

कारणाब्धिपारे मायार नित्य अवस्थिति ।
विरजार पारे परव्योमे नाहि गति ॥२३२॥

तथाहि श्रीमद्‌भागवते (२।६।१०)

प्रवर्त्तते यत्र रजस्तमस्तयोः,
सत्वञ्च मिश्रं न च कालविक्रमः ।
न यत्र माया किमुतापरे हरे-
रनुव्रता यत्र सुरासुरार्चिचताः ॥३८॥

टीका—यत्र रजः तमश्च न प्रवर्त्तते, तयोः मिश्रं न च प्रवर्त्तते, यत्र कालविक्रमः न प्रवर्त्तते, यत्र माया न स्यात, अपरे रागप्रभृतयश्च न सन्ति। किमुत वक्तव्यं, यत्र सुरासुरार्चिचताः हरेः अनुव्रताः वर्त्तन्ते ॥३८॥

भा० २।६।१० में लिखित हैं—
जहाँ रजो गुण अथवा तमोगुण का प्रभाव दृष्ट नहीं होता है, एवं उक्त गुणद्वय संयुक्त सत्व गुण भी जहाँ नहीं है, एवं कालकृत विनाश तथा माया का प्रवेश भी नहीं है। लोभ एवं मोहादि उपद्रव वहाँ से विदूरित है, वहाँ देव दानवादि भगवान् के परिषद् गण सर्वदा रहते हैं ॥३८॥

मायार ये दुइ वृत्ति माया आर प्रधान ।
माया निमित्त हेतु विश्वेर प्रकृति उपादान २३३
सेइ पुरुष माया पाने करे अवधान ।
प्रकृति क्षोभित करि करे वीर्य्याधान ॥२३४
स्वाङ्गविशेषाभासरूपे प्रकृतिस्पर्शन ।
जीवरूप वीज ताते कैल समर्पण ॥२३५

तथाहि श्रीमद्‌भागवते (३।२६।१६)--

दैवात् क्षुभितधर्म्मिण्यां स्वस्यां योनौ परः पुमान् ।
आधत्त वीर्य्यं सासूत महत्तत्त्वं हिरण्मयं ॥३६॥

टीका—दैवात् परः पुमान् क्षुभित-धर्म्मिण्यां योनौ वीर्य्यं आधत्त अर्पयामास । सा प्रकृतिः हिरण्मयं महत्तत्त्वं असूत प्रसूतवती ॥३६॥

श्रीमद् भागवत के ३।२६।१६ में लिखित है—
काल से प्रकृति क्षुब्ध होने पर परम पुरुष उस प्रकृति के अभिव्यक्ति स्थल में निज जीवरूप चैतन्य वीज का आधान करते हैं। उस समय प्रकृति वैचित्र्यमय महत्तत्त्व को प्रसव करती है ॥३६

तथाहि श्रीमद् भागवते (३।५।२६)—

विदुरं प्रति मैत्रेयवाक्यम्—

कालवृत्त्या तु मायायां गुणमय्यामधोक्षजः ।
पुरुषेणात्मभूतेन वीर्य्यमाधत्त वीर्य्यवान् ॥४०॥

टीका—तु किन्तु कालवृत्त्या गुणमय्यां मायायां वीर्य्यवान् अधोक्षजः आत्मभूतेन पुरुषेण वीर्य्यं आधत्त ॥४०॥

श्रीमद् भागवत के ३।५।२६ में लिखित है, परम पुरुष कालवृत्ति अर्थात् काल शक्ति के द्वारा चिच्छक्ति युक्त निज अंश रूप पुरुष के द्वारा क्षुभित प्रकृति में चैतन्यमय जीव शक्ति आधान करते हैं ॥४०॥

तबे महतत्त्व हैते त्रिविध अहङ्कार ।
याहा हैते देवतेन्द्रिय भूतेर प्रचार ॥२३६
सर्व्व तत्त्व मिलि सृजिल ब्रह्माण्डेर गण ।
अनन्त ब्रह्माण्ड ताँर नाहिक गणन ॥२३७
एइ महतस्रष्टा पुरुष महाविष्णु नाम ।
अनन्त ब्रह्माण्ड ताँर लोमकूपे धाम ॥२३८
गवाक्षे उड़िया यैछे रेणु आर याय ।
पुरुष निश्वास सह ब्रह्माण्ड बाहिराय ॥२३९
पुनरपि विश्वास सह याय अभ्यन्तर ।
अनन्त ऐश्वर्य्य ताँर सब मायापर ॥२४०

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (४।४५)—

यस्यैकनिश्वसितकालमथावलम्ब्य,
जीवन्ति लोमविलजा जगदण्डनाथाः ।
विष्णुर्म्महान् स इह यस्य कलाविशेषो,
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥४१॥

ब्रह्मसंहिता में उक्त है—जिनके एक निश्वसित

काल को आलम्बन कर तल्लोग विवरस्थित अखिल अखिल ब्रह्माण्डनाथ ब्रह्मादि जीवित रहते हैं, उन महाविष्णु जिन गोविन्द की कला है, मैं उन आदि-पुरुष गोविन्द का भजन करता हूँ ॥४१॥

समस्त ब्रह्माण्डगणेर इहो अन्तर्यामी ।
कारणाब्धिशायी सब जगतेर स्वामी ॥२४१
एइत कहिल प्रथम पुरुषेर तत्त्व ।
द्वितीय पुरुषेर एबे शुनह महत्त्व ॥२४२
सेइ पुरुष अनन्तकोटि ब्रह्माण्ड सृजिञा ।
एकैक मूर्त्ते प्रवेशिला बहुमूर्त्ति हञा ॥२४३
प्रवेश करिया देखे सब अन्धकार ।
रहिते नाहिक स्थान करिल विचार ॥२४४
निजाङ्ग-:स्वेदजले ब्रह्माण्डार्द्ध भरिल ।
सेइ जले शेषशय्याय शयन करिल ॥२४५
ताँर नाभिपद्म हैते उठिल एक पद्म ।
सेइ पद्म हइल ब्रह्मार जन्मसद्म ॥२५६
सेइ पद्मनाले हैल चौद्द भुवन ।
तिँहो ब्रह्मा हैञा सृष्टि करिल सृजन ॥२५७
विष्णुरूप हैञा करेन जगत पालने ।
गुणातीत विष्णु, स्पर्श नाहि माया सने ॥२५८
रुद्ररूप धरि करेन जगत संहार ।
सृष्टि स्थिति प्रलय इच्छाय याँहार ॥२४९
ब्रह्मा विष्णु शिव ताँर गुणावतार ।
सृष्टि स्थिति प्रलये तिनेर अधिकार ॥२५०
हिरण्यगर्भ अन्तर्यामी गर्भोदकशायी ।
सहस्रशीर्षादि करि वेदे याँरे गाइ ॥२५१
एइ द्वितीय पुरुष ब्रह्माण्ड--ईश्वर ।
मायार आश्रय हय तबु मायापार ॥२५२

तृतीय पुरुष विष्णु. गुण-अवतार ।
दुइ अवतार भितर गणना ताँहार ॥२५३
विराट् व्यष्टि जीवेर तिँह अन्तर्यामी ।
क्षीरोदकशायी तिँह पालनकर्त्ता स्वामी ॥२५४
पुरुषावतारेर एइ कहिल निरूपण ।
लीलावतार एबे शुन सनातन ॥२५५
लीलावतार कृष्णेर ना याय गणन ।
प्रधान करिया करि दिग्दरशन ॥२५६
मतस्य कूर्म्म रघुनाथ नृसिंह वामन ।
वराहादि लेखा यार ना पाय गणन ॥२५७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२।४०)—

मत्स्याश्वकच्छपवराहनृसिंहहंस-
राजन्यविप्र-विबुधेषु कृतावतारः ।
त्वं पासि नस्त्रिभुवनञ्च तथाधुनेश
भारं भुवो हर यदूत्तम वन्दनं ते ॥४२

टीका—हे ईश ! मत्स्याश्व-कच्छप नृसिंह-वराह-हंस-राजन्य--विप्र-विबुधेषु कृतावतारः सन् त्वं नः अस्मान् तथा त्रिभुवनञ्च पासि रक्षसि, तथा अधुना हे यदूत्तम ! भुवः धरण्याः भारं हर, अतएव ते तुभ्यं वन्दनं स्यात् ॥४२॥

श्रीमद् भागवत १०।२।४० में लिखित है—देव गण स्तुति करते हुये कहे हैं, हे प्रभो ! आने यथा समय मीन, अश्व, कूर्म्म, वराह, नृसिंह, हंस, क्षत्रिय, विप्र, एवं सुरदेह में अवतार ग्रहण कर हम सब की एव त्रिभुवन की रक्षा जिस प्रकार की है. हे यदुत्तम ! उसी प्रकार अधुना धरा का भार अपनोदन पूर्वक हम सब की रक्षा आप करें। हे यदुत्तम ! हम सब आप को नमस्कार करते हैं ।४२।

लीलावतारेर कैल दिग्दरशन ।
गुणावतारेर एबे शुन विवरण ॥२५८
ब्रह्मा विष्णु शिव तिन गुण-अवतार ।
त्रिगुणाङ्गी करि करेन सृष्टचादि व्यवहार २५९

भक्तिमिश्र कृत पुण्ये कोन जीवोत्तम ।
रजोगुणे विभावित करि तार मन ॥२६०

गर्भोदकशायी द्वारा शक्ति सञ्चारि ।
व्यष्टि सृष्टि करेन कृष्ण ब्रह्मा रूप धरि ।२६१

तथाहि ब्रह्मसंहितायां (५।४९)—

भास्वान् यथाश्मसकलेषु निजेषु तेजः,
स्वीयं कियत् प्रकटयत्यपि तद्वदत्र ।
ब्रह्मा य एव जगदण्डविधानकर्त्ता,
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥४३॥

टीका—यः एव गोविन्दः जगदण्ड विधानकर्त्ता ब्रह्मा, तमादिपुरुषं गोविन्दं अहं भजामि । कः इव ? यथा भास्वान् भास्करः निजेषु अश्मशकलेषु स्वीयं तेजः कियदपि प्रकटयति, तद्वत ॥४३॥

ब्रह्मसंहिता के पञ्चमाध्याय में उक्त है--जिस प्रकार दिवाकर के तेज के कुछ अंश प्राप्त कर तदधिकारस्थित सूर्य्य कान्त मणि समूह दीप्ति शील होते हैं, उस प्रकार ब्रह्माण्ड विधाता ब्रह्मा समूह में सृष्टि कार्य्य हेतु जिन्होंने निज स्वल्प तेज निहित किये हैं, मैं उन आदि पुरुष गोविन्द का मैं भजन करता हूँ ॥४३॥

कोन कल्पे यदि योग्य जीव नाहि पाय ।
आपने ईश्वर तवे अंशे ब्रह्मा हय ॥२६२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।६८।३७)—

यस्याङ्घ्रिपङ्कजरजोऽखिललोकपालै-
र्मौल्युत्तमैर्धृतमुपासिततीर्थतीर्थं ।
ब्रह्मा भवोऽहमपि यस्य कला कलायाः,
श्रीश्चोद्वहेम चिरमस्य नृपासनः क्व ॥४४॥

भा० १०।६८।३७ में श्रीबलराम कहे थे—लोक पाल गण—जिनकी योगिकुल तीर्थ स्वरूप चरण पद्म रजः को मस्तकोपरि धारण करते हैं, ब्रह्मा, शिव, एवं मैं भी जिनकी अंश कला हूँ, एवं जिनकी चरण रजः हम सतत वहन करते रहते हैं, उनको नृपासन की आवश्यकता क्या है ? ॥४४॥

निजांश कला ये कृष्ण तमोगुण अङ्गीकरि ।
संहारार्थे माया सङ्गे रुद्ररूप धरि ॥२६३

माया सङ्गे विकारे रुद्र भिन्नाभिन्नरूप ।
जीवतत्त्व हय तिँह कृष्णेर स्वरूप ॥२६४

दुग्ध येन अम्लयोगे दधिरूप धरे ।
दुग्धान्तर वस्तु नहे दुग्ध हैते नारे ॥२६५

तथाहि ब्रह्मसंहितायां (५।५१)—

क्षीरं यथा दधि विकारविशेषयोगात् ।
संजायते न तु ततः पृथगस्ति हेतुः ।
यः शम्भुतामपि तथा समुपैति कार्य्यात्
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥४५॥

टीका--यः कार्य्यात सृष्टिक्रिया--करणाद्धेतोः शम्भुतां शम्भुमूर्त्ति अपि तथा समुपैति, यथा क्षीरं पयः विकार-विशेषयोगात् दधि संजायते, तु पुनः ततः दध्नः पृथक् हेतुः न अस्ति, तमादि-पुरुषं गोविन्दं भजामि ॥४५॥

ब्रह्म संहिता के पञ्चमाध्याय में उक्त है--दुग्ध जिस प्रकार अम्ल के संयोग से दधिरूप में परिणत होता है, किन्तु दधि पुनर्वार दुग्धरूप धारण कर नहीं सकती है, उस प्रकार सृष्टि कार्य्यार्थं जो शम्भु रूप धारण करते हैं, मैं उन आदि पुरुष गोविन्द का भजन करता हूँ ॥४५॥

शिव महाशक्तिसङ्गी तमोगुणावेश ।
मायातीत गुणातीत विष्णु परमेश ॥२६६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८८।३—

शिवः शक्तियुतः शश्वत् त्रिलिङ्गो गुणसंवृतः ।
वैकारिकस्तैजसश्च तामसश्चेत्यहं त्रिधा ॥४६॥

टीका—शिवः शश्वत् सर्व्वदा त्रिलिङ्गः, तथा गुणसंवृतः सत्त्वादिगुणसंयुक्तः, अतएव शक्तियुतो भवेत्, वैकारिकः तैजसः तामसः च इति त्रिधा अहं अहङ्कारः स्यात ॥४६॥

श्रीमद्भागवत के १०।८८।३ में उक्त है—शम्भु,

निरन्तर त्रिलिङ्ग--अर्थात् त्रिगुण विशिष्ट एवं शक्ति युक्त हैं, अहङ्कार त्रिविध हैं, वैकारिक, तैजस एवं तामस, इस हेतु उनको त्रिलिङ्ग कहते हैं ॥४६॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८८।५)--

हरिर्हि निर्गुणः साक्षात् पुरुषः प्रकृतेः परः।
स सर्व्वदृगुपद्रष्टा तं भजन्निर्गुणो भवेत् ॥४७॥

टीका—हि खलु हरिः साक्षात् निर्गुण गुणातीतो पुरुषः, सः उपद्रष्टा सन् सर्व्वदृक्, अतएव प्रकृतेः परः। तं भजन् सन् निर्गुणो भवेत् ॥४७॥

श्रीमद्भागवत १०।८८।५ में उक्त है—श्रीहरि ही साक्षात् निर्गुण पुरुष है, श्रीहरि सर्वदृक् अर्थात् साक्षिरूप में समस्त पर्य्यवेक्षण करते रहते हैं। सुतरां आप प्रकृत्यतीत हैं, उनकी उपासना करने से उपासक गुणातीत होता है, अर्थात् मायातीत होता है ॥४७॥

पालनार्थ स्वांश विष्णु रूपे अवतार।
सत्त्वगुण द्रष्टान्त ताते गुण मायापार ॥२६७
स्वरूप ऐश्वर्य्य पूर्ण कृष्णसम प्राय।
कृष्ण-अंशी तिँह अंश वेदे हेन गाय ॥२६८

तथाहि ब्रह्मसंहितायां (५.५२)--

दीपार्च्चिरेव हि दशान्तरमभ्युपेत्य,
दीपायते विवृतहेतुसमानधर्म्मा।
यस्तादृगेव हि च विष्णुतया विभाति,
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥४८॥

टीका—हि निश्चितं यथा दीपार्च्चिः एव दशान्तरं वर्त्तिकान्तरं अभ्युपेत्य लब्ध्वा विवृतहेतु-समानधर्म्मा सन् दीपायते। यः गोविन्दः तादृगेव हि विष्णुतया विभाति, अहं तमादिपुरुषं गोविन्दं भजामि ॥४८॥

ब्रह्म संहिता के पञ्चमाध्य में लिखित है—जिस प्रकार दीपाग्नि वर्त्तिकान्तर प्राप्त होने से ज्योतिः विस्तार पूर्वक पूर्व प्रदीपवत् समान धर्मा होता है, उस प्रकार जो विष्णु रूप में प्रकाशित हुये हैं, मैं उन आदि पुरुष गोविन्द का भजन करता हूँ ॥४८

ब्रह्मा शिव आज्ञाकारी भक्त अवतार।
पालनार्थे विष्णु कृष्णेर स्वरूप आकार ।२६९

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।६।३२)--

सृजामि तन्नियुक्तोऽहं हरो हरति तद्वशः।
विश्वं पुरुषरूपेण परिपाति त्रिशक्तिधृक् ॥४९॥

टीका—अहं तन्नियुक्तः सन् विश्वं सृजामि, हरः तद्वशः सन् हरति, त्रिशक्तिधृक् सः पुरुषरूपेण परिपाति रक्षति ॥४९॥

श्रीमद् भागवत के २।६।३२ में उक्त है--मैं (ब्रह्मा) तदीय आदेश से ही विश्व सृष्टि करता हूँ, महेश्वर भी उनको अधीन होकर विश्व संहार करते हैं, वह परमात्मा त्रिगुण माया शक्ति ग्रहण पूर्वक विष्णु रूप में विश्व का रक्षणावेक्षण करते हैं ॥४९॥

मन्वन्तरावतार एवे शुन सनातन।
असंख्य गणन तार शुनह कारण ॥२७०
ब्रह्मार एक दिने हय चौद्द मन्वन्तर।
चौद्द अवतार ताँहा करेन ईश्वर ॥२७१
ए चौद्द एक दिने, मासे चारि शत विश।
ब्रह्मार वत्सरे पञ्चसहस्र चल्लिश ॥२७२
शतेक वत्सर हय जीवन ब्रह्मार।
पञ्च लक्ष चल्लिश सहस्र मन्वन्तरावतार २७३
अनन्त ब्रह्माण्डे ऐछे करह गणन।
महाविष्णुर एक श्वास ब्रह्मार जीवन ।२७४
महाविष्णुर निश्वासेर नाहिक पर्य्यन्त।
एक मन्वन्तरावतारेर देख लेखार अन्त ।२७५
स्वायम्भुवे यज्ञ, स्वारोचिषे विभु नाम।
उत्तमे सत्यसेन, तामसे हरि अभिधान ॥२७६

रैवते वैकुण्ठ, चाक्षुषे अजित, वैवस्वते वामन।
सावर्णे सार्व्वभौम, दक्षसावर्णे ऋषभ गणन ॥२७७
ब्रह्मसावर्णे विष्वक्सेन, धर्म्मसेतु धर्म्मसावर्णे।
रुद्रसावर्णे सुधामा, योगेश्वर देवसावर्णे।२७८
इन्द्रसावर्णे वृहद्भानु अभिधान।
एइ चौद्द मन्वन्तरे चौद्द अवतार नाम ॥२७९
युगावतार कहि एवे शुन सनातन।
सत्य त्रेता द्वापर कलियुगेर वर्णन ॥२८०
शुक्ल रक्त कृष्ण पीत क्रमे चारि वर्ण।
चारि वर्ण धरि कृष्ण करेन युगधर्म्म ॥२८१

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८।१३)--

आसन् वर्णास्त्रयो ह्यस्य गृह्णतोऽनुयुगं तनुः।
शुक्लो रक्तस्तथा पीत इदानीं कृष्णतां गतः।५०

श्रीमद् भागवत के १०।८।१३ में उक्त है--- गर्गाचार्य्य नन्द को सम्बोधन कर कहे थे--यह बालक प्रति युग में देह धारण करता रहता है, इस के शुक्ल रक्त एवं पीत--ये त्रिविध वर्ण हो चुके हैं, सम्प्रति यह कृष्णत्व प्राप्त हुआ है, सुतरां इसका नाम कृष्ण होगा ॥५०॥

सत्ययुगे ध्यान धर्म्म करये शुक्ल मूर्त्ति धरि।
कर्द्दमके वर दिला यिँह कृपा करि ॥२८२
कृष्णध्यान करे लोक ज्ञान-अधिकारी।
त्रेताय धर्म्म यज्ञ कराय रक्तवर्ण धरि ॥२८३
कृष्णपादार्च्चन हय द्वापरेर धर्म्म।
कृष्णवर्णे कराय लोके कृष्णार्च्चन कर्म्म।२८४

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।५।२७)--

द्वापरे भगवान् श्यामः पीतवासा निजायुधः।
श्रीवत्सादिभिरङ्कैश्च लक्षणैरुपलक्षितः ॥५१॥

श्रीमद् भागवत के ११।५।२७ में उक्त है—द्वापर युग में भगवान् श्याम वर्ण अर्थात् अतसी कुसुम तुल्य वर्ण, पीताम्बर, निजायुध चक्रादि धारी एवं श्रीवत्स कौस्तुभ चिह्न से युक्त होकर अवतीर्ण होते हैं ॥५१॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।५।२७)

नमस्ते वासुदेवाय नमः सङ्कर्षणाय च।
प्रद्युम्नायानिरुद्धाय तुभ्यं भगवते नमः ॥५२॥

टीका--ते तुभ्यं वासुदेवाय नमः, सङ्कर्षणाय नमः, तुभ्यं प्रद्युम्नाय, अनिरुद्धाय भगवते नमः ॥५२

श्रीमद् भागवत के ११।५।२९ में उक्त है—आप वासुदेव हैं--आप को नमस्कार, आप सङ्कर्षण हैं, आप को नमस्कार, हे प्रभो ! आप प्रद्युम्न एवं अनिरुद्ध हैं, आप को नमस्कार करता हूँ ॥५२॥

एइ मन्त्रे द्वापरे करे कृष्णार्च्चन।
कृष्णनाम सङ्कीर्त्तन कलियुगेर धर्म्म ॥२८५
पीतवर्ण धरि तबे कैल प्रवर्त्तन।
प्रेमभक्ति दिला लोके लञा भक्तगण ॥२८६
धर्म्म प्रवर्त्तन करे व्रजेन्द्रनन्दन।
प्रेमे गाय नाचे लोके करे सङ्कीर्त्तन ॥२८७

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।५।५२)--

कृष्णवर्णं त्विषाकृष्णं साङ्गोपाङ्गास्त्रपार्षदं।
यज्ञैः संकीर्त्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः ॥५३॥

श्रीमद् भागवत के ११।५।३२ में करभाजन निमि को कहे थे—

विवेकिव्यक्तिगण कृष्ण वर्ण इन्द्रनीलमणिवत् ज्योतिः सम्पन्न अङ्ग उपाङ्ग-अस्त्र एवं परिकर के सहित भगवान् अवतीर्ण होने से नाम सङ्कीर्त्तन रूप यज्ञ के द्वारा उनकी अर्च्चना करते हैं ॥५३॥

आर तिन युगे ध्यानादिते येइ फल हय।
कलियुगे कृष्णनामे सेइ फल पाय ॥२८८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१२।३।४२)--

कलेर्द्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः।
कीर्त्तनादेव कृष्णस्य मुक्तबन्धः परं व्रजेत् ॥

कृते यद्ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः ।
द्वापरे परिचर्य्यायां कलौ तद्धरिकीर्त्तनात् ॥५४॥

टीका—हे राजन् ! हि निश्चितं दोषनिधेः दोष-सागरस्य कलेः एकः महान् गुणः अस्ति । तत् कार्य्यं किं ?—कृष्णस्य कीर्त्तनात् एव मुक्तबन्धः सन् परं धाम व्रजेत्, लोक इति शेषः । किञ्च कृते सत्ये विष्णुं ध्यायतः तथा त्रेतायां मखैः यजतः यत् फलं भवेत्, तथा द्वापरे परिचर्य्यायां यत् फल स्यात्, तत् कलौ हरिकीर्त्तनादेव भवति ॥५४॥

श्रीमद्भागवत के १२।३।५०-५२ उक्त है—दोष सागर कलियुग का एक महान् गुण है, कि—श्रीहरि नाम सङ्कीर्त्तन के द्वारा ही मानव संसार बन्धन से मुक्त होकर परम धाम प्राप्त करता है ।

सत्य युग में विष्णु भजन के द्वारा त्रेता में यज्ञादि द्वारा एवं द्वापर में परिचर्य्या द्वारा जो फल लाभ होता है, कलिकाल में केवल मात्र श्रीहरिनाम सङ्कीर्त्तन के द्वारा ही वह फल लाभ होता है ॥५४ ।

तथाहि हरिभक्तिविलासस्य एकादशविलासे ऊनचत्वारिंशदधिकद्विशताङ्कधृतो विष्णुपुराणीयः (६।२।१७) श्लोकः—

ध्यायन् कृते यजन् यज्ञैस्त्रेतायां द्वापरेऽर्च्चयन् ।
यदाप्नोति तदाप्नोति कलौ संकीर्त्य केशवं ॥५५॥

टीका—कृते सत्ये ध्यायन्, त्रेतायां यज्ञैः, द्वापरे अर्च्चयन् यत् पदं आप्नोति कलौ केशवं संकीर्त्य तत् पदं लभते ॥५५॥

सत्ययुग में ध्यान के द्वारा, त्रेता युग में यज्ञ के द्वारा द्वापर में अर्च्चन के द्वारा जो फल होता है, कलियुग में केवल श्रीहरि नाम सङ्कीर्त्तन से ही वह फल लाभ होता है ॥५५॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।५।३६)—

कलिं सभाजयन्त्यार्य्या गुणज्ञाः सारभागिनः ।
यत्र संकीर्त्तनेनैव सर्व्वस्वार्थोऽपि लभ्यते ॥५६॥

टीका—गुणज्ञाः सारभागिनः आर्य्याः कलिं सभाजयन्ति । यत्र संकीर्त्तनेन एव सर्व्वस्वार्थः अपि लभ्यते ॥५६॥

श्रीमद् भागवत के ११।५।३६ में उक्त है—गुणज्ञ सारग्राही साधु गण कलियुग में एक मात्र नाम सङ्कीर्त्तन के सर्वार्थ सिद्ध होता है, यह जानकर उस युग की प्रशंसा करते हैं ॥५६॥

पूर्व्ववत् लिखि यबे गुणावतारगण ।
असंख्य संख्या तार ना हय गणन ॥२८९
चारि युगावतारेर एइत गणन ।
शुनि भङ्गी करि ताँरे पुछे सनातन ॥२९०
राजमन्त्री सनातन बुद्ध्ये बृहस्पति ।
प्रभुर कृपाते पुछेन असङ्कोच-मति ॥२९१
अति क्षुद्र जीव मुञि नीच नीचाचार ।
केमने जानिव कलिते कोन् अवतार ॥२९२
प्रभु कहे, अन्यावतार शास्त्र द्वारा जानि ।
कलि अवतार तैछे शास्त्र द्वारा मानि ॥२९३
सर्व्वज्ञ मुनिर वाक्ये शास्त्र प्रमाण ।
आमा सबा जीवेर हय शास्त्र द्वारा ज्ञान २९४
अवतार नाहि कहे आमि अवतार ।
मुनि सब जानि करे लक्षण विचार ॥२९५

तथाहि श्रीमद्भागवते(१०।१०।३०)—

यस्यावतारा ज्ञायन्ते शरीरिष्वशरीरिणः ।
तैस्तैरतुल्यातिशयैर्वीर्य्यैर्देहिष्वसङ्गतैः ॥५७॥

टीका—शरीरिषु अशरीरिणः यस्य अवताराः तैस्तैः अतुल्यातिशयैः वीर्य्यैः ज्ञायन्ते । वीर्य्यैः किम्भूतैः ?—देहिषु असङ्गतैः असम्भवैः । ५७॥

श्रीमद्भागवत के १०।१०।३० में उक्त है—देहिवृन्द के मध्य में विद्यमान होकर भी जो दैहिक धर्मशून्य हैं, उन भगवान् के अवतार समूह देहिवृन्द के पक्ष में असम्भव अनिर्वचनीय अद्भुत एवं अतुल्य वीर्य्य के द्वारा ज्ञात होते हैं ॥५७॥

स्वरूप लक्षण आर तटस्थ लक्षण ।
एइ दुइ लक्षणे वस्तु जाने मुनिगण ॥२९६
आकृते प्रकृते जानि स्वरूप लक्षण ।
कार्य्य द्वारा ज्ञान एइ तटस्थ लक्षण ॥२९७
भागवतारम्भे व्यास मङ्गलाचरणे ।
परमेश्वर निरूपिल ए दुइ लक्षणे ॥२९८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१।१)—

जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्,
तेने ब्रह्महृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत् सूरयः ।
तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गोऽमृषा,
धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि ।५८

श्रीमद् भागवत के १।१।१ में उक्त है– जो अन्वय व्यतिरेक कारण से कार्य्य समूह में विद्यमान हेतु इस जगत् का सृजन, पालन, एवं संहार होता रहता है, जो सर्वज्ञ एवं स्वतः सिद्ध ज्ञानवान् हैं, जो आदि कवि ब्रह्मा के हृदय में ज्ञानिगण विमोहक वेद को प्रकाश किये हैं, एवं अग्नि जल एवं मृत्तिका के विनिमय से एक द्रव्य में अपर द्रव्य का भ्रम उत्पन्न होता है, उस प्रकार सत्त्व, रजः, एवं तमः,- गुणत्रय की भूतादि सृष्टि मिथ्या होने पर भी सत्य रूप से प्रतीत होती हैं, एवं जो निज तेज के द्वारा मायिक उपाधि विहीन है हम सब उन परम सत्य परमेश्वर का ध्यान करते हैं ॥५८॥

एइ श्लोके पर शब्दे कृष्ण निरूपण ।
सत्य शब्दे कहे ताँर स्वरूप लक्षण ॥२९९
विश्वसृष्ट्यादिक कैल वेद ब्रह्माके पड़ाइल ।
अर्थाभिज्ञता स्वरूपशक्त्येच माया दूर कैल ३००
एइ सब कार्य्य ताँर तटस्थ लक्षण ।
अन्य अवतार ऐछे जाने मुनिगण ॥३०१
अवतार काले हय जगते गोचर ।
एइ दुइ लक्षणे केह जानेन ईश्वर ॥३०२
सनातन कहे याते ईश्वर लक्षण ।
पीतवर्ण, कार्य्य प्रेमदान संकीर्त्तन ॥३०३
कलिकाले सेइ कृष्णावतार निश्चय ।
सुदृढ़ करिया कह याउक संशय ॥३०४
प्रभु कहे चातुराली छाड़ सनातन ।
भक्त्यावेशावतारेर शुन विवरण ॥३०५
शक्त्यावेशावतार कृष्णेर असंख्य गणन ।
दिग्दरशन करि मुख्य मुख्य जन ॥३०६
शक्त्यावेश दुइ रूप, गौण मुख्य देखि ।
साक्षात् शक्त्ये अवतार, आभासे विभूति लिखि ॥३०७
सनकादि नारद पृथु परशुराम ।
जीवरूप ब्रह्मा आवेशावतार नाम ॥३०८
वैकुण्ठे शेष धरा धरये अनन्त ।
एइ मुख्यावेशावतार विस्तारे नाहि अन्त ३०९
सनकाद्ये ज्ञानशक्ति नारदे शक्ति भक्ति ।
ब्रह्माय सृष्टिशक्ति, अनन्ते भूधारणशक्ति ।३१०
शेषे स्व-सेवनशक्ति पृथुते पालन ।
परशुरामे दुष्टनाश वीर्य्यसञ्चारण ॥३११

तथाहि लघुभागवतामृते पूर्व्वखण्डे आवेशप्रकरणे चतुर्थ--श्लोके –

श्रीरूपगोस्वामिवचनम्—

ज्ञानशक्त्यादिकलया यत्राविष्टो जनार्द्दनः ।
त आवेशा निगद्यन्ते जीवा एव महोत्तमाः ॥५९॥

टीका – ज्ञानशक्त्यादिकलया यत्र जनार्द्दनः आविष्टो भवेत्, ते महोत्तमाः जीवा एव, ते आवेशाः निगद्यन्ते उच्यन्ते ॥५९॥

भगवान् ज्ञान शक्त्यादि शक्ति प्रकाश कर जिस जीव में आविष्ट होते हैं, उस प्रकार शक्ति प्रकाश निबन्धन वे सब महोत्तम जीव आवेश अवतार

कहे जाते हैं ॥५९॥

विभूति कहिये यैछे गीता एकादशे ।
जगत व्यापिल कृष्णेर शक्तिभावावेशे ॥३१२

तथाहि श्रीमद्भगवद्‌गीतायाम् (१०।४०)—

यद् यद्विभूतिमत् सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव या ।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोऽशसम्भवं ॥६०॥

टीका—हे पार्थ ! यत् यत् सत्त्वं विभूतिमत् ऐश्वर्य्यसमन्वितं, श्रीमत् सम्पत्तिमत्, ऊर्जितं एव वा, तत्तत् एव त्वं मम तेजोऽंशसम्भवं अवगच्छ अवेहि ॥६०॥

श्रीमद्भगवद् गीता में उक्त है—हे पार्थ ! जो सब पदार्थ ऐश्वर्य्य विशिष्ट, सम्पत्ति शील एवं बल प्रभावाधिक्य युक्त हैं, उन सब को मदीय तेजांश विभूति जाननी चाहिये ॥६०॥

तथाहि श्रीमद्भगवद्‌गीतायाम् (१०।४२)

अर्ज्जुनं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्—

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्ज्जुन ।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥६१॥

श्रीमद् भगवद् गीता में अर्जुन को श्रीकृष्ण कहे थे—हे अर्जुन ! मेरी विभूति के सम्बन्ध में अधिक जानने की आवश्यकता नहीं है । यह निश्चित रूप से जानना होगा कि यह जगत् मदीय एकांश में अवस्थित है ॥६१॥

एइत कहिल शक्त्यावेश अवतार ।
बाल्य पौगण्ड धर्म्मेर शुनह विचार ॥३१३

किशोर शेखर धर्म्मी व्रजेन्द्रनन्दन ।
प्रकटलीला करिवारे यबे करे मन ॥३१४

आदौ प्रकट कराय माता पिता भक्तगणे ।
पाछे प्रकट हय जन्मादिक लीलाक्रमे ॥३१५

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे
विभावलहर्य्यां सप्तविंशति--श्लोके—
श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्--

वयसो विविधत्वेऽपि सर्व्वभक्तिरसाश्रयः ।
धर्म्मी किशोर एवात्र नित्यलीलाविलासवान् ॥६२॥

टीका—वयसः विविधत्वे अपि सर्व्वभक्तिरसाश्रयः अत्र वृन्दावने किशोरः धर्म्मी एव सन् नित्यलीलाविलासवान् भवेत् ॥६२॥

वयोधर्म का अर्थात् बाल्य पौगण्डादि का वैचित्र्य विद्यमान होने पर भी समस्त भक्ति रस के आश्रय भगवान् हरि वृन्दारण्य में कैशोर धर्मी होकर नित्य लीला में नियुक्त हैं ॥६२॥

पूतनाबधादि यत लीला क्षणे क्षणे ।
सब लीला नित्य प्रकट करे अनुक्रमे ॥३१६

अनन्त ब्रह्माण्ड ताँर नाहिक गणन ।
कोन लीला कोन ब्रह्माण्डे करे प्रकटन ॥३१७

एइमत सब लीला येन गङ्गाधार ।
से से लीला प्रकट करे व्रजेन्द्रकुमार ॥३१८

क्रमे बाल्य पौगण्ड किशोरता प्राप्ति ।
रास आदि लीला करे कैशोरे नित्य स्थिति ३१९

नित्य लीला कृष्णेर सर्व्वशास्त्रे कय ।
बुद्धिते ना पारि लीला केमने नित्य हय ॥३२०

दृष्टान्त दिया कहि तबे लोक सब जाने ।
कृष्णलीला नित्य ज्योतिश्चक्रप्रमाणे ॥३२१

ज्योतिश्चक्रे सूर्य्य येन फिरे रात्रिदिने ।
सप्तद्वीपाम्बुधि लङ्घि फिरे क्रमे क्रमे ॥३२२

रात्रि दिने हय षष्टिदण्ड परिमाण ।
तिन सहस्र छयशत पल यार नाम ॥३२३

सूर्य्योदय हइते षष्टिपल क्रमोदय ।
सेइ एकदण्ड, अष्टदण्डे प्रहर हय ॥३२४

एक दुइ तिन चारि प्रहरे अन्त हय ।
चारि प्रहर रात्रि गेले पुनः सूर्य्योदय ॥३२५
ऐछे कृष्णोर लीलामण्डल चौद्द मन्वन्तरे ।
ब्रह्माण्डमण्डल व्यापि क्रमे क्रमे फिरे ॥३२६
सप्तोयाशत वत्सरे कृष्णोर प्रकट प्रकाश ।
ताहा यैछे व्रजपुरे करिला विलास ॥३२७
अलातचक्रप्राय सेइ लीलाचक्र फिरे ।
सब लीला सब ब्रह्माण्डे क्रमे उदय करे ॥३२८
जन्म बाल्य पौगण्ड कैशोर प्रकाश ।
पूतनाबधादि करि मौषलान्त विलास ॥३२९
कोन ब्रह्माण्डे कोन लीला हय अवस्थान ।
ताते नित्यलीला कहे निगम पुराण ॥३३०
गोलोक गोकुलधाम विभु कृष्णसम ।
कृष्णेच्छाय ब्रह्माण्डगणे ताहार संक्रम ॥३३१
अतएव गोलोकेतार नित्य विहार ।
ब्रह्माण्डगणे क्रमे प्रकटच ताहार ॥३३२
व्रजे कृष्णे सर्व्वैश्वर्य्य प्रकाशे पूर्णतम ।
पुरीद्वये परव्योमे पूर्णतर पूर्ण ॥३३३

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे
विभावलहर्य्यां (११०)।--

हरिः पूर्णतमः पूर्णतरः पूर्ण इति त्रिधा ।
श्रेष्ठमध्यादिभिः सर्व्वैर्नाट्ये यः परिकीर्त्तितः ॥६३॥

टीका—हरिः पूर्णतमः, पूर्णतरः, पूर्णः, श्रेष्ठ-मध्यादिभिः सर्व्वैः गुणैः त्रिधा इति यः नाटये परिकीर्त्तितः ॥६३॥

भगवान् कृष्ण,—पूर्णतम, पूर्णतर पूर्ण, एवं श्रेष्ठ मध्यादि अधिक गुणों के द्वारा तीन प्रकार प्रकाशित होते हैं, इसका वर्णन नाटच शास्त्र में हुआ है ॥६३॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ (११०)—

प्रकाशिताखिलगुणः स्मृतः पूर्णतमो बुधैः ।
असर्व्वव्यञ्जकः पूर्णतरः पूर्णोऽल्पदर्शकः ॥६४॥

टीका– सः हरिः प्रकाशिताखिलगुणः सुतरां बुधैः सुधिभिः पूर्णतमः स्मृतः कीर्त्तितः । पूर्णतरः असर्व्वव्यञ्जकः, पूर्णः अल्पदर्शकः स्यात् स इति शेषः ॥६४॥

पूर्णतर शब्द से अखिल गुण प्रकाशक का बोध होता है, पूर्णतर शब्द से समस्त गुणों का प्रकाशक का बोध नहीं होता है, एवं पूर्ण शब्द से स्वल्प गुण का प्रकाश का बोध होता है ॥६४॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे
विभावलहर्य्यां (११२)—

कृष्णस्य पूर्णतमता व्यक्ताभूत गोकुलान्तरे ।
पूर्णता पूर्णतरता द्वारकामथुरादिषु ॥६५॥

टीका—कृष्णस्य पूर्णतमता गोकुलान्तरे व्यक्ता अभूत्,द्वारकामथुरादिषु पूर्णता, पूर्णतरता च अभूत् ६५

मधुरता पूर्ण गोकुलाख्य स्थान में श्रीकृष्ण की पूर्णतमता प्रकाशित है । एवं तदीय पूर्णता एवं पूर्णतरता ज्ञानैश्वर्य्यादि पूर्ण मथुरा द्वारकादि स्थान में प्रकाशित है ॥६५॥

एइ कृष्ण व्रजे पूर्णतम भगवान् ।
आर सब स्वरूप पूर्णतर पूर्ण नाम ॥३३४
संक्षेपे कहिल कृष्णेर स्वरूप विचार ।
अनन्त कहिते नारे इहार विस्तार ॥३३५
अनन्त स्वरूप कृष्णेर नाहिक गणन ।
शाखाचन्द्रन्याये करि दिग्‌दरशन ॥३३६
इहा येइ शुने पड़े सेइ भाग्यवान् ।
कृष्णेर स्वरूप तत्त्वेर हय किछु ज्ञान ॥३३७
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥३३८

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे सम्बन्धतत्त्वनिरूपणे श्रीभगवत् स्वरूपभेदविचारो नाम विंशतितमः परिच्छेदः २०

❀ एकविंश परिच्छेद ❀

अगत्येकगतिं नत्वा हीनार्थाधिकसाधकं।
श्रीचैतन्यं लिखाम्यस्य माधुर्य्यैश्वर्य्यशीकरं ॥१॥

टीका अगत्येकगतिं अगतीनां गतिहीनानां एकगतिं एकमात्राश्रयं श्रीचैतन्यं नत्वा प्रणम्य अस्य चैतन्यदेवस्य माधुर्य्यैश्वर्य्यशीकरं लिखामि। चैतन्यं किम्भूतं?—हीनार्थाधिकसाधकं निःसम्बलानां उपाय-स्वरूपं ॥१॥

गतिहीन व्यक्ति वृन्द की एकमात्र गति, अवलम्बन हीन व्यक्ति गण के पक्ष में उपाय स्वरूप श्रीचैतन्य देवको प्रणाम कर तदीय माधुर्य्यमयी ऐश्वर्य्य कणा को लिपिबद्ध कर रहा हूँ ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
सर्व्वस्वरूपेर धाम परव्योम धामे।
पृथक् पृथक् वैकुण्ठ, नाहिक गणने ॥२
शतसहस्रायुत लक्षकोटि योजन।
एकैक वैकुण्ठेर विस्तार वर्णन ॥३
सब वैकुण्ठ व्यापक आनन्द चिन्मय।
पारिषद षड़ैश्वर्य्यपूर्ण सब हय ॥४
अनन्त वैकुण्ड एक एक देश यार।
से परव्योमेर केवा गनये विस्तार ॥५
अनन्त वैकुण्ठ परव्योम यार दलश्रेणी।
सर्व्वोपरि कृष्णलोक कर्णिकाय गणि ॥६
एइमत षड़ैश्वर्य्य पूर्ण अवतार।
ब्रह्मा शिव अन्त ना पाय जीव कोन छार ॥७

तथाहि श्रीमद्भागवते(१०।१४।२१)—

श्रीकृष्णं प्रति ब्रह्मस्तुतिः—

को वेत्ति भूमन् भगवन् परात्मन्,
योगेश्वरोतीर्भवतस्त्रिलोक्यां।
क्वाहो कथं वा कति वा कदेति,
विस्तारयन् क्रीड़सि योगमायां ॥२॥

टीका—हे भूमन्! हे भगवन्! हे परात्मन्! हे योगेश्वर! भवतः ऊतीः लीलाः अहो आश्चर्यं, त्रिलोक्यां त्रिभुवनमध्ये क्व कुत्र कथं वा कति वदा वा स्युः, इति कः वेत्ति जानाति? त्वं योगमायां विस्तारयन् सन् क्रीड़सि ॥२॥

श्रीमद् भागवत के १०।१४।२१ में ब्रह्मा श्रीकृष्ण को कहे थे—हे भूमन्! हे भगवन्! हे परात्मन्! हे योगेश्वर! आप त्रिभुवन के मध्य में कहाँ कितनी लीला प्रकट करते हैं, उस को कौन जान सकते हैं? आप योगमाया अर्थात् स्वरूप शक्ति का विस्तार कर सर्व्वदा क्रीड़ा करते रहते हैं ॥२॥

एइमत कृष्णेर दिव्य सद्गुण अनन्त।
ब्रह्मा शिव सनकादि ना पाय यार अन्त ॥८

तथाहि श्रीमद्भागवते(१०।१४।७)

गुणात्मनस्तेऽपि गुणान् विमातुं,
हितावतीर्णस्य क ईशिरेऽस्य।
कालेन यैर्वा विमिताः सुकल्पै--
र्भूपांशवः खे मिहिका द्युभासः ॥३॥

टीका—गुणात्मनः सर्व्वगुणविशिष्टस्य ते तव गुणान् विमातुं गणयितुं के ईशिरे सक्षमा बभूवुः? तव किम्भूतस्य?—अस्य जगतः हितावतीर्णस्य जगद्रक्षणाय अवतीर्णस्य। वा सुकल्पैः अतिविचक्षणैः कालेन बहुजन्मना भूपांशवः पृथ्वीपरमाणवः विमिता

सम्यक् गणिताः भवेयुः। तथा खे शून्ये मिहिकाः शिशिरकणाः अपि तथा द्युभासः गणिताः भवेयुः ॥३

श्रीमद् भागवत के १०।१४।७ में ब्रह्मा श्रीकृष्ण को कहे हैं—हे भगवन् ! आप निखिल गुणों के अधिष्ठान स्थल हैं। विविध गुण प्रकाशपूर्वक विश्वरक्षणार्थ अवतीर्ण होते रहते हैं, कौन व्यक्ति आप के गुणों का परिमाण करने में सक्षम हैं ? अति विचक्षण व्यक्तिगण अनेक जन्मों के द्वारा धरणी की परमाणु कणा का एवं हिमकणा का परिमाण करने में सक्षम होते हैं, किन्तु आप के गुणों का परिमाण कर नहीं सकते हैं ॥३॥

ब्रह्मादि रहु सहस्रवदन अनन्त ।
निरन्तर गाय मुखे ना पाय गुणेर अन्त ॥९

तथाहि श्रीमद्भागवते(२।७।४१)—

नारदं प्रति ब्रह्मवाक्यम्—

नान्तं विदाम्यहममी मुनयोऽग्रजास्ते,
मायाबलस्य पुरुषस्य कुतोऽवरा ये ।
गायन् गुणान् दशशताननं आदिदेवः,
शेषोऽधुनापि समवस्यति नास्य पारं ॥४॥

टीका—पुरुषस्य भगवतः मायाबलस्य अन्तं अहं न विदानि न जानामि। ते तव अग्रजाः अमी मुनयः न जानन्ति। अवराः कनिष्ठाः ये जनाः, ते कुतः ? दशशताननः आदिदेवः अनन्तः अस्य गुणान् गायन् सन् अधुना अपि पारं न समवस्यति न लभते ।४

श्रीमद् भागवत के २।७।४१ में नारद के प्रति ब्रह्मा कहे थे—हे नारद ! मैं ब्रह्मा होकर भी उन भगवान् की माया का सम्यक् ज्ञान करने में अक्षम हूँ, तुम्हारे अग्रज मुनि वृन्द भी जान नहीं सकते हैं, तुम्हारे पश्चाज्जात कनिष्ठ व्यक्ति गण कैसे जान सकते हैं ? आदिदेव अनन्त सहस्रमुख से निरन्तर तदीय गुण कीर्त्तन करते रहते हैं, किन्तु अधुना भी सम्यक् जानने में असमर्थ हैं ॥४॥

सेइ रहु सर्व्वज्ञ शिरोमणि कृष्ण ।
निज गुणेर अन्त ना पान, हयेन सतृष्ण ॥१०

तथाहि श्रीमद्भागवते(१०।८७।४१)—

श्रीकृष्णमुद्दिश्य श्रुतिवाक्यम्—

द्युपतय एव ते न ययुरन्तमनन्ततया,
त्वमपि यदन्तराण्डनिचया ननु सावरणाः ।
ख इव रजांसि वान्ति वयसा सह यत् श्रुतय-
स्त्वयि हि फलन्त्यतन्निरसनेन भवन्निधनाः ॥५॥

टीका—हे प्रभो ! ते तव अन्तं द्युपतयः ब्रह्मादय एव न ययुः। अनन्ततया यत् यस्य तव अन्तरा मध्ये ननु सावरणाः अण्डनिचयाः वान्ति। वयसा खे शून्ये रजांसि इव सह युगपत् एव। यत् श्रुतयः त्वयि हि निश्चितं फलन्ति। किम्भूताः ?—अतन्निरसनेन भवन्निधनाः भवति निधनं समाप्तिर्यासां ताः ॥५॥

श्रीमद् भागवत के १०।८७।४१ में श्रुति श्रीकृष्ण को कही थी,—हे प्रभो ! आप अनन्त हैं, सुतरां अमर वृन्द भी आप की इयत्ता को नहीं जान सकते हैं, नभोमार्ग में परमाणु भ्रमणवत् सावरण ब्रह्माण्ड समूह काल चक्र के सहित आप के मध्य में युगपत् परिभ्रमण करते रहते हैं, इस हेतु श्रुति समूह भवदीय कथा को समाप्त करने में असमर्थ होकर अवशेष में आप में ही पर्य्यवसित करती रहती है ।५

सेइ रहो व्रजे यबे कृष्ण अवतार ।
तार चरित्र विचारिते मन ना पाय पार ॥११
प्राकृताप्राकृत सृष्टि कैल एकक्षणे ।
अशेष वैकुण्ठजाण्ड स्वस्वनाथ सने ॥१२
एइत अन्यत्र नाहि शुनये अद्भुत ।
याहार श्रवणे चित्त हय अवधूत ॥१३
कृष्णवत्सै रसङ्ख्यातैः शुकदेववाणी ।
कृष्ण सङ्गे कत गोप संख्या नाहि जानि १४
एकैक गोप करे ये वत्स चारण ।
कोटि अर्व्वुद पद्म शङ्ख ताहार गणन ॥१५

वेत्र वेणु दल शृङ्ग वस्त्र अलङ्कार ।
गोपगणेर यत तार नाहि लेखा पार ॥१६

सबे हैल चतुर्भुज वैकुण्ठेर पति ।
पृथक् पृथक् ब्रह्माण्डेर ब्रह्मा करे स्तुति ॥१७
एक कृष्णदेह हैते सबार प्रकाशे ।
क्षणेके सबाइ सेइ शरीरे प्रवेशे ॥१८

इहा देखि ब्रह्मा हैला मोहित विस्मित ।
स्तुति करि एइ पाछे करिला निश्चित ॥१६
ये कहे कृष्णेर वैभव मुञि सब जानों ।
से जानुक, कायमने मुञि एइ मानों ॥२०

एइ ये तोमार अनन्त वैभवामृतसिन्धु ।
मोर वाङ्मनो गम्य नहे एक विन्दु ॥२१

तथाहि श्रीमद्भागवते(१०।१४।३८)—

श्रीकृष्णं प्रति ब्रह्मवाक्यम्—

जानन्त एव जानन्तु किं बहूक्त्या न मे प्रभो ।
मनसो वपुषो वाचो वैभवं तव गोचरं ॥६॥

टीका—हे प्रभो ! बहूक्त्या किं फलं ? जानन्तः तवैश्वर्य्यं जानीम इति वदन्तः जनाः जानन्तु एव । तव वैभवं मे मम मनसः वपुषः देहस्य वाचः वचनस्य न गोचरः ॥६॥

श्रीमद् भागवत के १०।१४।३८ में ब्रह्मा श्रीकृष्ण को कहे थे—हे प्रभो वृथा वाग्जाल विस्तार से क्या लाभ होगा ? "तुम्हारे वैभव को जानता हूं, इस प्रकार जो कहते हैं, वे कहें, किन्तु वह मदीय कायमनो वाक्य का अगोचर है ॥६॥

कृष्णेर महिमा रहु केवा तार ज्ञाता ।
वृन्दावन स्थानेर देख आश्चर्य्य विभुता ॥२२
षोल क्रोश वृन्दावन शास्त्रे परकाशे ।
ताहार एक देशे ब्रह्माण्डजाण्ड भासे ॥२३

अपार ऐश्वर्य्य कृष्णेर नाहिक गणन ।
शाखाचन्द्र न्याये करि दिग्दरशन ॥२४
ऐश्वर्य्य कहिते स्फुरिल ऐश्वर्य्यसागर ।
मनेन्द्रिय डुविल, प्रभु हइला फाँफर ॥२५
भागवतेर एइ श्लोक पड़िला आपने ।
अर्थ आस्वादिते सुखे करेन व्याख्याने ॥२६

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२।२१)—

विदुरं प्रति उद्धववाक्यम्—

स्वयन्त्वसाम्यातिशयस्त्र्यधीशः,
स्वाराज्यलक्ष्म्याप्तसमस्तकामः ।
बलिं हरद्भिश्चिरलोकपालैः,
किरीटकोटीड़ितपादपीठः ॥७॥

टीका—यः कृष्णः स्वयन्तु ईदृशः तस्य तत्कैङ्कर्य्यं अस्मान् विग्लापयति । सः किम्भूतः ?—असाम्यातिशयः । तत्र हेतुमाह,—त्र्यधीश त्रिलोकानां त्रिगुणानां वा ईशः । पुनः किम्भूतः ?—स्वाराज्यलक्ष्म्याप्तसमस्तकामः स्वाराज्यमेव लक्ष्मीः तया हेतुना आप्ताः समस्ताः कामाः येन सः । बलिं करं पूजनं वा यः हरद्भिः चिरलोकपालैः ब्रह्मभिः विष्णुभिः रुद्रैः शेषैश्च किरीटकोटीड़ितपादपीठः, किरीटकोट्या ईड़ितं पादपीठं यस्य सः ॥७॥

श्रीमद् भागवत के ३।२।२१ में विदुर के उद्धव कहे थे—वह श्रीकृष्ण त्रिभुवन के ईश्वर हैं, उनके तुल्य एवं अधिक कोई नहीं हैं, आनन्द लक्ष्मी लाभार्थ वह निखिल भोगैश्वर्य्य के अधीश्वर हैं, लोक पालवृन्द उनकी पूजोपचार प्रदान पूर्वक नमस्कार करने पर उन सब के मस्तकस्थित किरीटाग्र तदीय पाद पीठ को स्पर्श करता रहता है । अर्थात् उनके पाद पीठ के वे सब निरन्तर नमन करते रहते हैं ॥७॥

परम ईश्वर कृष्ण स्वयं भगवान् ।
ताँर बड़, ताँर सम केह नाहि आन ॥२७

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (५।१)—

ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्दविग्रहः ।
अनादिरादिर्गोविन्दो सर्व्वकारणकारणं ॥८॥

ब्रह्मसंहिता में उक्त है—सच्चिदानन्द स्वरूप श्रीकृष्ण ही परम ईश्वर हैं, वह गोविन्द अनादि अर्थात् उत्पत्ति हीन हैं आदि अर्थात् उत्पत्ति कारण हैं, सर्व कारण कारण--सर्वोत्पत्ति के उपाय स्वरूप माया के उत्पत्ति हेतु हैं, अर्थात् उनसे आदि और कोई नहीं हैं, वह गोविन्द हैं, एवं सर्व कारण माया का भी कारण हैं ।।८।।

ब्रह्मा विष्णु हर एइ सृष्टेर ईश्वर ।
तिने आज्ञाकारी कृष्णेर कृष्ण अधीश्वर ॥२८

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।६।३१)—

श्रीकृष्णं प्रति ब्रह्मवाक्यम्--

सृजामि तन्नियुक्तोऽहं हरो हरति तद्वशः ।
विश्वं पुरुषरूपेण परिपाति त्रिशक्तिधृक् ॥६॥

श्रीमद् भागवत के २।६।३२ में ब्रह्मा श्रीनारद को कहे थे---मैं ब्रह्मा श्रीकृष्ण के आदेश से ही विश्व सृष्टि कार्य्य करता रहता हूँ. महेश्वर भी उनके अधीन होकर विश्व संहार करते रहते हैं, एवं परमात्मा स्वयं श्रीविष्णु रूप धारण कर पुरुष रूप के द्वारा विश्व पालन करते रहते हैं ॥६॥

ए सामान्य त्र्यधीश्वरेर शुन अर्थ आर ।
जगत्कारण तिनि पुरुषावतार ॥२६
महाविष्णु पद्मनाभ क्षीरोदक-स्वामी ।
एइ तिन स्थूल सूक्ष्म सर्व्व-अन्तर्यामी ॥३०
एइ तिन सर्व्वाश्रय जगत ईश्वर ।
एहो कला अंश यार कृष्ण अधीश्वर ॥३१

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम (५।४५)—

यस्यैकनिश्वसितकालमथावलम्ब्य,
जीवन्ति लोमविलजा जगदण्डनाथाः ।
विष्णुर्महान् स इह यस्य कलाविशेषो,
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥१०॥

ब्रह्म संहिता में लिखित है---जिन के एक निश्वास काल को अवलम्बन कर उनके लोमविवर स्थित अखिल ब्रह्माण्ड नाथ ब्रह्मादि जीवन धारण करते हैं, उन महाविष्णु जिनके अंश विशेष हैं, मैं उन आदि पुरुष गोविन्द का भजन करता हूँ ॥१०॥

एइ अर्थ वाह्य, गूढ़ अर्थ शुन आर ।
तिन आवासस्थान कृष्णेर शास्त्रे ख्याति यार ३२
अन्तःपुर लोगोक श्रीवृन्दावन ।
याँहा नित्यस्थिति माता पिता बन्धुगण ॥३३
मधुर ऐश्वर्य्य माधुर्य्य कृपादि भाण्डार ।
योगमाया दासी याँहा रासादि लीलासार ।३४

तथाहि गोस्वामिपादोक्तश्लोकः:—

करुणानिकुरम्बकोमले,
मधुरैश्वर्य्यविशेषशालिनि ।
जयति व्रजराजनन्दने,
न हि चिन्ताकणिकाभ्युदेति नः ॥११॥

टीका—व्रजराजनन्दने नन्दसुते जयति सति नः अस्माकं चिन्ताकणिका हि निश्चितं न अभ्युदेति । नन्दनन्दने किम्भुते?—करुणानिकुरम्बकोमले करुणा-समूहेन कोमलचरित्रे । पुनः कीदृशे ?—मधुरैश्वर्य्य-विशेषशालिनि मधुरिमाश्रितैश्वर्य्यसमन्विते ॥११॥

करुणाहेतु कोमल चरित्र एवं माधुर्य्यैश्वर्य्य समन्वित नन्दनन्दन की जय श्री जब वर्द्धित हो रही है, तब हम सबको कुछ भीति का कारण नहीं है ।११

तार तले परव्योम विष्णुलोक नाम ।
नारायण आदि अन्त स्वरूपेर धाम ॥३५
मध्यम आवास कृष्णेर षड़ैश्वर्य्यभाण्डार ।
अनन्त स्वरूपे याँहा करेन विहार ॥३६
अनन्त वैकुण्ठ याँहा भाण्डार कोठरि ।
पारिषदगण षड़ैश्वर्य्य आछे भरि ॥३७

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (५।४३)—

गोलोकनाम्नि निजधाम्नि तले च तस्य,
देवीमहेशहरिधामसु तेषु तेषु ।
ते ते प्रभावनिचया विहिताश्च येन,
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥१२॥

टीका—गोलोकनाम्नि गोलोकाख्ये निजधाम्नि भगवान् राजते। तस्य च गोलोकधाम्नः तले तेषु तेषु तत्तन्नाम-प्रथितेषु देवीमहेशहरिधामसु ते ते प्रभावनिचयाः येन भगवता विहिताः स्थापिताः, अहं तमादिपुरुषं गोविन्दं भजामि ॥१२॥

ब्रह्म संहिता में उक्त है—गोलोकनामक स्थान ही श्रीहरि का निज धाम हैं। इस लोक के तल देश में क्रमशः महेश धाम देवीधाम में जिन्होंने तत्तत संज्ञक देवतावृन्द को स्थापित किये हैं, मैं उन आदि पुरुष गोविन्द का भजन करता हूँ ॥१२॥

तथाहि लघुभागवतामृते पूर्व्वखण्डे श्रीविष्णोर्धामकथने सप्ताशीत्यङ्क--धृत-पाद्मोत्तरखण्डम्--

प्रधानपरमव्योम्नोऽन्तरे विरजा नदी ।
वेदाङ्गस्वेदजनितैस्तोयैः प्रस्राविता शुभा ॥१३॥

टीका—विरजानाम्नी नदी वेदाङ्गस्वेद-जनितैः वेदाङ्गात् क्षरितः यः स्वेदः घर्म्मः तेन उत्पादितैः तोयैः वारिभिः शुभा सती प्रधानपरव्योम्नः गोलोकभवनस्य अन्तरे मध्ये प्रस्राविता प्रवाहिता।१३

विरजा नाम्नी नदी वेदाङ्गस्वेद जनित स्वेद वारि से शोभिता होकर सर्वोत्तम गोलोक धाम के मध्य में प्रवाहित हो रही है ॥१३॥

तथाहि श्रीमद्भागवतामृते पूर्व्वखण्डे विष्णोर्धाम-कथने अष्टाशीत्यङ्कधृत-पाद्मोत्तरखण्डम्—

तस्याः पारे परव्योम त्रिपाद्भूतं सनातनं ।
अमृतं शाश्वतं नित्यमनन्तं परमं पदं ॥१४॥

टीका—तस्याः पारे तटोपान्ते सनातनं ब्रह्ममय, त्रिपाद्भूतं त्रिपादै-श्वर्य्यसमन्वितं, अमृतं अमरधाम, शाश्वतं नित्यं अनन्तं असीमं, परमं पदं अत्युत्तम-स्थानं परव्योम नाम धाम शोभते। १४॥

विरजा नदी के तट देश में ब्रह्ममय त्रिपादै-श्वर्य्य समन्वित, अमृत, नित्य, अनन्त परमोत्कृष्ट धाम शोभित है ॥१४॥

तार तले बाह्यावास विरजार पार।
अनन्त ब्रह्माण्ड याँहा कोठरि अपार ॥३८

देवीधाम नाम तार, जीव यार वासी।
जगल्लक्ष्मी राखि, याँहा रहे मायादासी ॥३९

एइ तिन धामे रहये कृष्ण अधीश्वर।
गोलोक परव्योम प्रकृतिर पर ॥४०

चिच्छक्ति विभूति धाम त्रिपादैश्वर्य्य नाम।
मायिक विभूति एक पर अभिमान ॥४१

तथाहि लघुभागवतामृते पूर्व्वखण्डे त्रिपादभूमिकथने चतुर्थाङ्कधृत--पाद्मोत्तरखण्डम्—

त्रिपाद्विभूतेर्धामत्वात् त्रिपाद्भूतं हि तत्पदं।
विभूतिर्मायिकी सर्व्वा प्रोक्ता पादात्मिका यतः ॥१५

टीका—हि निश्चितं तत्पदं तस्य ईशस्य स्थानं त्रिपाद्विभुतेः त्रिपादैश्वर्य्यस्य धामत्वात् त्रिपाद्भुतं कथितं। यतः सर्व्वा मायिकी विभूतिः पादात्मिका एकपादा प्रोक्ता अभिहिता ॥१५॥

श्रीभगवान् के वह स्थान त्रिपादविभूति का धाम होने के कारण त्रिपाद् भूत नामसे कथित होता है। कारण, समस्त प्रकार मायिकी विभूति एक पाद विभूति नाम से प्रसिद्ध है ॥१५॥

त्रिपाद विभूति कृष्णेर वाक्य-अगोचर।
एकपाद विभूतिर शुनह विस्तार ॥४२

अनन्त ब्रह्माण्डेर यत ब्रह्मा रुद्रगण।
चिरलोकपाल शब्दे ताहार गणन ॥४३

एक दिन द्वारकाते कृष्ण देखिबारे।
ब्रह्मा आइला द्वारपाल जानाइला कृष्णेरे ॥४४

कृष्ण कहेन, कोन् ब्रह्मा, कि नाम ताहार।
द्वारी आसि ब्रह्माके पुछे आरबार ॥४५

विस्मित हइया ब्रह्मा द्वारीके कहिला ।
कह गिया सनकपिता चतुर्म्मुख आइला ॥४६
कृष्णे जानाइया द्वारी ब्रह्मा लञा गेला ।
कृष्णेर चरणे ब्रह्मा दण्डवत् कैला ॥४७
कृष्ण मान्य पूजा करि ताँरे प्रश्न कैल ।
कि लागि तोमार इहा आगमन हैल ॥४८
ब्रह्मा कहे, ताहा पाछे करिव निवेदन ।
एक संशय मने हय करह छेदन ॥४९
कोन् ब्रह्मा, पुछिले तुमि कोन् अभिप्राय ।
आमा वहि जगते आर कोन् ब्रह्मा हय ॥५०
शुनि हासि कृष्ण तबे करिलेन ध्याने ।
असंख्य ब्रह्मार गण आइल ततक्षणे ॥५१
दश विश शत सहस्रायुत लक्ष वदन ।
कोट्यर्व्बुद मुख कारो ना याय गणन ॥५२
रुद्रगण आइला लक्ष कोटि वदन ।
इन्द्रगण आइला लक्ष कोटि नयन ॥५३
देखि चतुर्म्मुख ब्रह्मा फाँफर हइला ।
हस्तिगणमध्ये येन शशक रहिला ॥५४
आसि सब ब्रह्मा कृष्ण-पादपीठ-आगे ।
दण्डवत करि पड़े मुकुट पीठे लागे ॥५५
कृष्णेर अचिन्त्य शक्ति लिखिते केह नारे ।
यत ब्रह्मा तत मूर्त्ति एकइ शरीरे ॥५६
पादपीठ-मुकुटाग्र-संघट्टे उठे ध्वनि ।
पादपीठ स्तुति करे मुकुट हेन जानि ॥५७
योड़हाते ब्रह्मा रुद्रादि करये स्तवन ।
वड़ कृपा करिले प्रभु, देखाइले चरण ॥५८
भाग्य मोरे बोलाइला दास अङ्गीकरि ।
कोन् आज्ञा हय ताहा करि शिरे धरि ॥५९
कृष्ण कहे, तोमा सबा देखिते चित्त हैल ।
ताहा लागि एक ठाञि सबा ोलबाइल ॥६०
सुखी हओ सबे, किछु नाहि दैत्यभय ।
तारा कहे, तोमार प्रसादे सर्व्वत्रइ जय ॥६१
सम्प्रति पृथिवीते येबा हैत भार ।
अवतीर्ण हञा ताहा करिले संहार ॥६२
द्वारकादि विभूतिर एइ त प्रमाण ।
आमारि ब्रह्माण्डे कृष्ण, सबार हैल ज्ञान ॥६३
कृष्णसह द्वारकार वैभव अनुभव हैल ।
एकत्र मिलने केह काँहो ना देखिल ॥६४
तबे कृष्ण सर्व्व ब्रह्मागणे विदाय दिला ।
दण्डवत हैञा सबे निज घरे गेला ॥६५
देखि चतुर्म्मुख ब्रह्मार हैल चमत्कार ।
कृष्णेर चरणे आसि करिल नमस्कार ॥६६
ब्रह्मा वले, पूर्व्वे आमि ये निश्चय करिल ।
तार उदाहरण आमि आजि त देखिल ॥६७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१४।३८)—

जानन्त एव जानन्तु किं बहूक्त्या न मे प्रभो ।
मनसो वपुषो वाचो वैभवं तव गोचरं ॥१६॥

श्रीमद् भागवत के १०।१४।३८ में ब्रह्मा श्रीकृष्ण को कहे थे– हे प्रभो ! हे भगवन् ! वृथावाग् जाल विस्तार से क्या लाभ ? "तुम्हारे वैभव को जानता हूँ।" इस प्रकार जो लोक कहते हैं, वे जानें, किन्तु वह मदीय काय वाक्य मन का अगोचर है ॥१६॥

कृष्ण कहेन एइ ब्रह्माण्ड पञ्चाशत कोटि योजन ।
अति क्षुद्र ताते तोमार चारि वदन ॥६८
कोन ब्रह्माण्ड शतकोटि, कोन लक्षकोटि ।
कोन-नियुत कोटि, कोन कोटि-कोटि ॥६९
ब्रह्माण्डानुरूप ब्रह्मार शरीर वदन ।
एइरूपे पालि आमि ब्रह्माण्डेर गण ॥७०

एकपाद विभूतिर इहार नाहि परिमाण ।
त्रिपाद विभूतिर केबा करे परिमाण ॥७१

तथाहि लघुभागवतामृते पूर्व्वखण्डे श्रीविष्णोर्धाम-
कथने अष्टाविंशत्यङ्कधृत-:पाद्मोत्तरखण्डम्–

तस्याः पारे परव्योम त्रिपाद्भूतं सनातनं ।
अमृतं शाश्वतं नित्यं अनन्तं परमं पदम् ॥१७॥

विरजा नदी के अपर तट भाग में सनातन ब्रह्ममय त्रिपादैश्वर्य्य समन्वित अमृत, नित्य, अनन्त, परमोत्कृष्ट परव्योम नामक स्थान शोभित है ॥१७॥

तबे कृष्ण ब्रह्मारे दिलेन विदाय ।
कृष्णेर विभूतिस्वरूप जानन ना याय ॥७२
अधीश्वर शब्देर अर्थ गूढ़ आर हय ।
"त्रि" शब्दे कृष्णेर तिन लोक कय ॥७३
गोलोकाख्य गोकुल, मथुरा, द्वारावती ।
एइ तिन लोके कृष्णेर सहज नित्यस्थिति ।७४
अन्तरङ्ग पूर्णैश्वर्य्य पूर्ण तिन धाम ।
तिनेर अधीश्वर कृष्ण स्वयं भगवान् ॥७५
पूर्व्व उक्त ब्रह्माण्डेर यत दिक्पाल ।
अनन्त वैकुण्ठावरण चिर लोकपाल ॥७६
ता सबार मुकुट कृष्णपादपीठ-आगे ।
दण्डवत्-काले तार मणि पीठे लागे ॥७७
मणिपीठे ठेकाठेकि उठे झनझनि ।
पीठेर स्तुति करे मुकुट हेन अनुमानि ॥७८
निज चिच्छक्ते कृष्ण नित्य विराजमान ।
चिच्छक्ति सम्पत्तिर षड़ैश्वर्य्य नाम ॥७९
सेइ स्वाराज्यलक्ष्मी करे नित्य पूर्णकाम ।
अतएव वेदे कहे स्वयं भगवान् ॥८०
कृष्णेर ऐश्वर्य्य अपार अमृतेर सिन्धु ।
अवगाहिते नारि तार छुँइल एक बिन्दु ॥८१

ऐश्वर्य्य कहिते प्रभुर कृष्णस्फूर्त्ति हैल ।
माधुर्य्ये मजिल मन एक श्लोक पड़िल ॥८२

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२।१२)–
विदुरं प्रति उद्धववाक्यम्--

यन्मर्त्यलीलौपयिकं स्वयोग-
मायाबलं दर्शयता गृहीतं ।
विस्मापनं स्वस्य च सौभगर्द्धेः,
परं पदं भूषण--भूषणाङ्गं ॥१८॥

टीका—यत् कृष्णरूपं मर्त्यलीलौपयिकं मर्त्य-लीलायोग्यं, स्वयोगमायाबलं दर्शयता गृहीत, स्वस्य च स्वकीयस्यापि विस्मापनं विस्मयकारकं, सौभगर्द्धेः सौभाग्याधिक्यस्य अथवा सौभाग्यसम्पत्तेः परं प्रधानं पदं स्थानं, भूषणभूषणाङ्गं परमसुन्दरमित्यर्थः ॥१८

श्रीमद्भागवत के ३।२।१२ श्लोक में विदुर को उद्धव कहे थे—भगवान् श्रीकृष्ण के वह रूप मर्त्य लीला के योग्य है । श्रीकृष्ण--निजा स्वरूप शक्ति का प्रभाव प्रदर्शनार्थ उस प्रकार रूप का प्रकट किये हैं, उस से स्वयं ही विस्मित हुये हैं, वह सौभाग्य अतिशय का परमपद है, अर्थात् पराकाष्ठा है, एवं परम सुन्दर है ॥१८॥

यथा रागः ।

कृष्णेर यतेक खेला, सर्व्वोत्तम नरलीला,
नरवपु ताहार स्वरूप ।
गोप वेश वेणुकर, नवकिशोर नटवर,
नरलीलार हय अनुरूप ॥८३
कृष्णेर मधुर रूप शुन सनातन ।
ये रूपेर एक कण, डुवाय सब त्रिभुवन,
सर्व्व प्राणी करे आकर्षण ॥८४
योगमाया चिच्छक्ति, विशुद्ध सत्त्व परिणति,
तार शक्ति लोके देखाइते ।

एइ रूप-रतन भक्तगणेर गूढ़धन,
प्रकट कैल नित्य लीला हैते ॥८५
रूप देखि आपनार, कृष्णेर हैल चमत्कार,
आस्वादिते मने उठे काम ।
स्वसौभाग्य यार नाम, सौन्दर्य्यादि गुणग्राम,
एइ रूप नित्य तार धाम ॥८६
भूषणेर भूषण अङ्ग, ताहे ललित त्रिभङ्ग,
तार उपर भ्रूधनु-नर्त्तन ।
तेरछ नेत्रान्त वाण, तार दृढ़ सन्धान,
बिन्धे राधा-गोपीगण-मन ॥८७
ब्रह्माण्डादि परव्योम, ताँहा ये स्वरूपगण,
ता सबार बले हरे मन ।
पतिव्रता-शिरोमणि, यारे कहे वेदवाणी,
आकर्षये सेइ लक्ष्मीगण ॥८८
चड़ि गोपीर मनोरथे, मन्मथेर मनमथे,
नाम धरे मदनमोहन ।
जिनि पञ्चशर दर्प, स्वयं नव कन्दर्प,
रास करे लञा गोपीगण ॥८९
निज सम सखा सङ्गे, गो-गण चारण रङ्गे,
वृन्दावने स्वच्छन्द विहार ।
यार वेणुध्वनि शुनि, स्थावर जङ्गम प्राणी,
पुलक कम्प बहे अश्रुधार ॥९०
मुक्ताहार वकपाँति, इन्द्रधनु पिञ्छ तथि,
पीताम्बर विजलीसञ्चार ।
कृष्ण नवजलधर, जगत शस्य उपर,
वरिषये लीलामृतधार ॥९१
माधुर्य्य भगवत्तासार, व्रजे कैल परचार,
ताहा शुक व्यासेर नन्दन ।
स्थाने स्थाने भागवते, वर्णियाछे जानाइते,
ताहा शुनि नाचे भक्तगण ॥९२
कहिते कृष्णेर रसे, श्लोक पड़े प्रेमावेशे,
प्रेमे सनातन-हाते धरि ।
गोपीभाग्य कृष्णगुण, ये करिल वर्णन,
भावावेशे मथुरानागरी ॥९३

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।४४।१४)—

गोप्यस्तपः किमचरन् यदमुष्य रूपं,
लावण्यसारमसमोर्द्ध्वमनन्यसिद्धं ।
दृग्भिः पिबन्त्यनुसवाभिनवं दुराप--
मेकान्तधाम यशसः श्रिय ऐश्वरस्य ॥१६॥

श्रीमद् भागवत के १०।२१।६ में मथुरा वासी रमणी वृन्द कही थीं--गोपिकाओं ने कोनसी तपस्या की, जिस से यह मनोमोहन का दर्शन उन सब को दिवा निशि होता रहता है । इन्होंने असमोर्द्ध्व लावण्य धारण किया है, उनके समान लावण्य शाली अपर कोई नहीं है, एवं अधिक भी नहीं है, विभूषणादि धारण से इस प्रकार लावण्य मण्डित हैं, यह नहीं किन्तु यह स्वभावसिद्ध है, एवं ऐश्वर्य्य, यश, लक्ष्मी का आश्रय स्थल है, सुतरां यह निरतिशय दुराप है ॥१६॥

तारुण्यामृत पारावार, तरङ्ग लावण्यसार,
ताते से आवर्त्त भावोद्गम ।
वंशीध्वनि चक्रवात, नारीर मन तृणपात,
ताहा डुवाय, ना हय उद्गम ॥९४
सखि हे ! कोन् तप कैल गोपीगणे ।
कृष्णरूप सुमाधुरी, पिबि पिबि नेत्र भरि,
श्लाघ्य करे जन्म तनु मने ॥९५
ये माधुरीर ऊर्द्ध्व आन, नाहि यार समान,
परव्योम स्वरूपेर गणे ।

यिँह सब अवतारी, परव्योमेर अधिकारी,
ए माधुर्य्य नाहि नारायणे ॥९६

ताते साक्षी सेइ रमा, नारायणेर प्रियतमा,
पतिव्रतागणेर उपास्या ।
तिँह ये माधुर्य्य लोभे, छाड़ि सब कामभोगे,
व्रत करि करिल तपस्या ॥९७

सेइत माधुर्य्य सार, अन्य सिद्धि नाहि तार,
तिँहो माधुर्य्यादि गुणखनि ।
आर सब परकाशे ताँर दत्तगुण भासे,
याहा यत प्रकाश कार्य्य जानि ॥९८

गोपीभाव-दर्पण, नव नव क्षणे क्षण,
तार आगे कृष्णेर माधुर्य्य ।
दोँहे करि हुड़ाहुड़ि, बाड़े मुख नाहि मोड़ि,
नव नव दोँहार प्राचुर्य्य ॥९९

कर्म्म तप योग ज्ञान, विधि भक्ति जप ध्यान,
इहा हैते माधुर्य्य दुर्लभ ।
केवल ये रागमार्गे, भजे कृष्णे अनुरागे,
तारे कृष्ण माधुर्य्य सुलभ ॥१००

सेइ रूप व्रजाश्रय, ऐश्वर्य्य-माधुर्य्यमय,
दिव्य गुणगण रत्नालय ।
आनेर वैभव सत्ता, कृष्णदत्त भगवत्ता,
कृष्ण सर्व्व-अंशी सर्व्वाश्रय ॥१०१

श्री, लज्जा, दया कीर्त्ति, धैर्य्य, वैशारदी मति,
एइ सब कृष्णे प्रतिष्ठित ।
सुशील मृदु वदान्य, कृष्णसम नाहि अन्य,
कृष्ण करे जगतेर हित ॥१०२

कृष्ण देखि यत जन, कैल निमिष निन्दन,
व्रजे बिधि निन्दे गोपीगण ।
सेइ सब श्लोक पढ़ि, महाप्रभु अर्थ करि,
स्व माधुर्य्य करे आस्वादन ॥१०३

तथाहि श्रीमद्भागवते (९।२४।५६)—

यस्याननं मकरकुण्डलचारुकर्ण-
भ्राजत्कपोलसुभगं सुविलासहासं ।
नित्योत्सवं न ततृपुर्दृशिभिः पिबन्त्यो,
नार्य्यो नराश्च मुदिताः कुपिता निमेश्च ॥२०॥

टीका—यस्य भगवतः आननं मुखं दृशिभिः नयनैः पिबन्त्यः नार्य्यः पिबन्तः नराश्च मुदिताः पुलकिताः सन्तः न ततृपुः, च पुनः निमे निमेषं प्रति कुपिताः बभूवुः। आननं किम्भूतं?—मकरकुण्डल चारुकर्ण-भ्राजत्कपोलसुभगं मकरकुण्डलाभ्यां यौ चारू कर्णौ ताभ्यां भ्राजन्तौ कपालौ ताभ्यां सुभगं मनोहरं। पुनः किम्भुतं?—सविलासहास विलासेन सह हासो यस्मिन् तत्। पुनः किम्भुतं?—नित्योत्सवं नित्यं उत्सवो यस्मिन् तत् ॥२०॥

श्रीमद्भागवत के ९-२४-५६ में श्रीशुक देव कहे थे—भगवान् श्रीकृष्ण के वदन कमल को नयनों के द्वारा नरनारी गण पान करते थे—किन्तु उन सब के नयन अतृप्त ही रह जाते, अतः नयनों में निमेष सृजन हेतु निमेषोन्मेष निबन्धन निमेष के प्रति क्रुद्ध होते थे, उन भगवान् के कर्ण युगल में मकर कुण्डल आनन श्री को समुज्ज्वल करते थे, मुखपद्म में विलास के सहित हास्य बिराजित थे। इस हेतु वहाँ नित्योत्सव होता रहता है।२०।

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३१।१५—)

अटति यद्भवानह्नि काननं,
त्रुटि युगायते त्वामपश्यतां ।
कुटिलकुन्तलं श्रीमुखञ्च ते,
जड़ उदीक्षतां पक्ष्मकृद्दृशां ॥२१॥

श्रीमद् भागवत के १०।३१।१५ में गोपिकाओं ने कही—हे नाथ! तुम जब दिवस में वन गमन करते हो उस समय तुम्हारे अदर्शन से क्षण काल भी युग के समान निरतिशय दुर्यापनीय होता है

और जिस समय गृह में प्रत्यावर्त्तन करते हो उस समय तुम्हारे मुख दर्शन कर निमेष व्यवधान भी असहनीय होता है, और मन में होता है कि नयनों में पलक सृजन कर्त्ता ब्रह्मा मन्द बुद्धि के हैं। कारण, उन्होंने कृष्ण दर्शन कारी नयनों में निमेष का सृजन किया है ॥२१॥

यथा रागः।

कामगायत्री मन्त्ररूप, हय कृष्ण स्वरूप,
सार्द्ध चव्विश अक्षर तार हय।
से अक्षर चन्द्रचय, कृष्णे करि उदय,
त्रिजगत् कैल काममय ॥१०४
सखि हे कृष्णमुख द्विजराज-राज।
कृष्णवपु सिंहासने, बसि राज्य शासने,
करे सङ्गे चन्द्रेर समाज ॥१०५
दुइ गण्ड सुचिक्कण, जिनि मणिदर्पण,
सेइ दुइ पूर्णचन्द्र जानि।
ललाटे अष्टमी इन्दु, ताहाते चन्दनबिन्दु,
सेइ एक पूर्णचन्द्र मानि ॥१०६
कर नख चाँदेर हाट, वंशी उपर करे नाट,
तार गीत मुरलीर तान।
पदनखचन्द्रगण, तले करे नर्त्तन,
नूपुरेर ध्वनि यार गान ॥१०७
नाचे मकर कुण्डल, नेत्र लीलाकमल,
विलासी राजा सतत नाचाय।
भ्रू धनु नासा वाण, धनुर्गुण दुइ कान,
नारी-मन लक्ष्य बिन्धे ताय ॥१०८
एइ चान्देर बड़ नाट, पसारि चान्देर हाट,
विना मूले विलाय निजामृत।
काहों स्मित ज्योत्स्नामृते, काहाके अधरामृते,
सब लोके करे आप्यायित ॥१०९
विपुल आयतारुण, मदन-मद-घूर्णन,
मन्त्री यार ए दुइ नयन।
लावण्य-केलि-सदन, जन-नेत्र-रसायन,
सुखमय गोविन्द-वदन ॥११०
यार पुण्यपुञ्जफले, से मुखदर्शन मिले,
दुइ आँखि कि करिवे पाने।
द्विगुण बाड़े तृष्णा लाभ, पीते नारे मनःक्षोभ,
दुःखे करे विधिर निन्दने ॥१११
ना दिलेक लक्ष कोटि, सबे दिल आँखि दुटि,
ताते दिल निमेष आच्छादने।
विधि जड़ तपोधन, रसशून्य तार मन,
नाहि जाने योग्य सृजने ॥११२
ये देखिवे कृष्णानन, तार करे द्विनयन,
विधि हैञा हेन अविचार।
मोर यदि बोल धरे, कोटि आँखि तार करे,
तवे जानि योग्य सृष्टि तार ॥११३
कृष्णाङ्ग माधुर्य्यसिन्धु, मुख सुमधुर इन्दु,
अति मधुस्मित सुकिरण।
ए तिने लागिल मन, लोभे करे आस्वादन,
श्लोक पढ़े स्वहस्त चालन ॥११४

तथाहि कर्णामृते द्विनवति-श्लोके बिल्वमङ्गलवाक्यम्—

मधुरं मधुरं वपुरस्य विभो-
र्मधुरं मधुरं वदनं मधुरम्।
मधुगन्धि मृदुस्मितमेतदहो,
मधुरं मधुरं मधुरं मधुरम् ॥२२॥

टीका—अस्य विभोः ईश्वरस्य वपुः मधुरं विश्वमनोमोहनं, तथा मधुरं नयनमनसोः आनन्द-जननं। अस्य वदनं आननं मधुरं, पुनः मधुरं सुधास्वादनं। एतत् मृदुस्मितं मृदुहास्यं मधुगन्धि कमलमधुगन्धविशिष्टं। अहो विस्मये, अस्य सर्व्वं

मधुरं मधुरं मधुरं ॥२२॥

अहो, भगवान् कृष्ण के देह अतीव सुन्दर है, मानन पद्म अतीव मधुर हैं, मृदुहास्य भी मनोहर मधु गन्धि है, आश्चर्य्य यह है कि—इनके समस्त ही मधुर मधुर मधुर हैं ॥२२॥

यथा रागः ।

सनातन कृष्णमाधुर्य्य अमृतेर सिन्धु ।
मोर मन सन्निपाति, सब पिते करे मति,
दुर्द्दैव वैद्य ना देय एकबिन्दु ॥११५
कृष्णाङ्ग लावण्यपूर, मधुर हैते सुमधुर,
ताते येइ मुख सुधाकर ।
मधुर हैते सुमधुर, ताहा हैते सुमधुर,
तार येइ स्मित ज्योत्स्नाभर ॥११६
मधुर हैते सुमधुर, ताहा हैते सुमधुर,
ताहा हैते अति सुमधुर ।
आपनार एक कणे, व्यापे सब त्रिभुवने,
दशदिक व्यापे यार पूर ॥११७
स्मित किरण सुकर्पूरे, पैशे अधर मधुपुरे,
सेइ मधु माताय त्रिभुवने ।
वंशी-छिद्र आकाशे, तार गुण शब्दे पैशे,
ध्वनिरूपे पाइया परिणामे ॥११६
से ध्वनि चौदिके धाय, अण्ड भेदि वैकुण्ठे याय,
बले पैशे जगतेर काने ।
सबा मातोयाल करि, बलात्कारे आने धरि,
विशेषतः युवतीर गण ॥११७
ध्वनि बड़ उद्धत, पतिव्रतार भाङ्गे व्रत,
पतिकोल हैते टानि आने ।
वैकुण्ठेर लक्ष्मीगणे, येइ करे आकर्षणे,
तार आगे केवा गोपीगणे ॥११८
नीवि खसाय पति आगे, गृहकर्म्म कराय त्यागे,
बले धरि आने कृष्णस्थाने ।
लोकधर्म्म लज्जा भय, सब ज्ञान लुप्त हय,
ऐछे नाचाय सब नारीगणे ॥११६
कानेर भितर वासा करे, आपनि ताँहा सदा स्फुरे,
अन्य शब्द ना देय प्रवेशिते ।
आन कथा ना शुने कान, आन बोलिते बोले आन,
एइ कृष्णेर वंशीर चरिते ॥१२०
पुनः कहे वाह्यज्ञाने, आन कहिते कहिल आने,
कृष्णकृपा तोमार उपरे ।
मोर चित्तभ्रम करि, निजैश्वर्य्य स्वमाधुरी,
मोर मुखे शुनाय तोमारे ॥१२१
आमित वाउल, आन कहिते आन कहि ।
कृष्णेर माधुर्य्य-स्रोते आमि याइ वहि ॥१२२
तबे महाप्रभु एक क्षण मौन करि रहे ।
मने धैर्य्य करि पुनः सनातने कहे ॥१२३
कृष्णेर माधुरी आर महाप्रभुर मुखे ।
इहा येइ शुने सेइ भासे प्रेमसुखे ॥१२४
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१२५

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे सम्बन्ध तत्त्वविचारे श्रीकृष्णैश्वर्य्यमाधुर्य्यवर्णनं नाम एकविंशः परिच्छेदः ॥२१॥





द्वाविंश परिच्छेद ।

वन्दे श्रीकृष्णचैतन्यदेवं तं करुणार्णवं ।
कलावप्यतिगूढ़ेयं भक्तिर्येन प्रकाशिता ॥१॥

टीका—येन कलौ कलिकाले अतिगूढ़ापि अति-गोपनीयापि इयं भक्तिः प्रकाशिता, तं करुणार्णवं दयाम्बुद्रं श्रीकृष्णचैतन्यदेवं अहं वन्दे ॥१॥

जिन्होंने कलिकाल में अतीव गोपनीया इस भक्ति का प्रकाश किया है, मैं उन दयार्णव श्रीचैतन्य देवकी वन्दना करता हूँ ॥१॥

जय जय श्रीकृष्ण-चैतन्य नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
एइ त कहिल सम्बन्धतत्त्वेर विचार ।
वेदशास्त्रे उपदेशे कृष्ण एक सार ॥२
एबे कहि शुन अभिधेय लक्षण ।
याहा हैते पाइ कृष्ण, कृष्ण-प्रेमधन ॥३
कृष्णभक्ति अभिधेय सर्व्वशास्त्रे कय ।
अतएव मुनिगण करियाछे निश्चय ॥४

तथाहि मुनिवाक्यम्—

श्रुतिर्म्माता पृष्टा दिशति भवदाराधनविधिं,
यथा मातुर्व्वाणी स्मृतिरपि तथा वक्ति भगिनी ।
पुराणाद्या ये वा सहजनिवहास्ते तदनुगाः,
अतः सत्यं ज्ञातं मुरहर भवानेव शरणं ॥२॥

टीका—हे मुरहर ! श्रुतिः एव माता पृष्टा जिज्ञासिता सती यथा भवदाराधनविधिं दिशति उपदिशति, तथा तेन प्रकारेण मातुः वाणी भगिनी-रूपा स्मृतिरपि वक्ति वदति । वा किंवा ये सहज-निवहाः पुराणाद्याः स्युः, ते च तदनुगाः, अतः भवानेव शरणं सत्यं ज्ञातं ॥२॥

श्रुति मेरी मा है, उनको पूछने पर उन्होंने आप की आराधना करने की बात कही है, स्मृति मेरी भगिनी है, उसको पूछने पर उसने मा के समान आप की आराधना करने को कही है, पुराण मेरा भाई है, उसने भी वही बात कही है, मा-श्रुति, बहिन--स्मृति, भाई पुराण—सब की एक ही बात है, दो बात है ही नहीं, हे मुरारि ! मैंने सत्य को जान लिया है, आप ही एकमात्र आश्रय हैं ॥२॥

अद्वय ज्ञानतत्त्व कृष्ण स्वयं भगवान् ।
स्वरूपशक्तिरूपे ताँर हय अवस्थान ॥५
स्वांश विभिन्नांश रूपे हइया विस्तार ।
अनन्त वैकुण्ठ ब्रह्माण्डे करेन विहार ॥६
स्वांश विस्तार चतुर्व्यूह अवतारगण ।
विभिन्नांशे जीव ताँर शक्तिते गणन ॥७
सेइ विभिन्नांश जीव दुइत प्रकार ।
एक नित्य मुक्त, एकेर नित्य संसार ॥८
नित्यमुक्त नित्य कृष्णचरणे उन्मुख ।
कृष्णपारिषद नाम भुञ्जे सेवासुख ॥९
नित्यबद्ध कृष्ण हैते नित्य वहिर्मुख ।
नित्य संसार भुञ्जे नरकादि दुःख ॥१०
सेइ दोषे मायापिशाची दण्ड करे तारे ।
आध्यात्मिक तापत्रय तारे जारि मारे ॥११
काम क्रोधेर दास हञा तार लाथि खाय ।
भ्रमिते भ्रमिते यदि साधु-वैद्य पाय ॥१२
ताँर उपदेशमन्त्रे पिशाची पलाय ।
कृष्णभक्ति पाय तबे कृष्णनिकटे याय ॥१३

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पश्चिमविभागे प्रीतिभक्ति-लहर्य्यां अपराधभञ्जने षष्ठ—श्लोकः—

कामादीनां कति न कतिधा पालिता दुर्निदेशा
स्तेषांजाता मयि न करुणा न त्रपा नोपशान्तिः।
उत्सृज्यैतानथ यदुपते साम्प्रतं लब्धबुद्धि
स्त्वामायातः शरणमभयं मां नियुङ्क्ष्वात्मदास्ये ॥३।

टीका—कामादीनां दुर्निदेशाः कति न कतिधा पुनःपुनः पालिताः आचरिताः, तथापि तेषां मयि विषये करुणा दया न जाता। किंवा तेषां त्रपा लज्जा न, उपशान्तिः विरामश्च न। हे यदुपते! अथ अनन्तरं एतान् कामादीन् उत्सृज्य विहाय साम्प्रतं इदानीं लब्धबुद्धिः सन् अभयं निर्भीकं त्वां शरणं आयातः प्राप्तः, मां आत्मदास्ये नियुङ्क्ष्व ॥३॥

मैंने अनेक दिनों से काम प्रभृति का पाप उपदेश पालन कर चूका हूँ, किन्तु उस से भी मेरे प्रति उन सब की करुणा नहीं हुई; अथवा वे सब लज्जित भी नहीं हुये, शान्त भी नहीं हुए। हे यदुनाथ! उन सबों को छोड़कर अधुना मेरा आत्म ज्ञान हुआ है, अतः आपके अभय चरणों में शरण ग्रहण किया। आप मुझ को निज दास्य में अर्थात् सेवा कार्य्य में नियुक्त करें ॥३॥

कृष्णभक्ति हय अभिधेय प्रधान।
भक्तिमुख निरीक्षक कर्म्म योग ज्ञान ॥१४
एइ सब साधनेर अति तुच्छ फल।
कृष्णभक्ति विना ताहा दिते नारे बल ॥१५

तथाहि श्रीमद्भागवते(१।५।१२)—

नैष्कर्म्यमप्यच्युतभाववर्ज्जितं,
न शोभते ज्ञानमलं निरञ्जनं।
कुतः पुनः शश्वदभद्रमीश्वरे,
न चार्पितं कर्म यदप्यकारणं ॥४॥

टीका—नैष्कर्म्यं निष्कार्म ब्रह्म तदेकाकारत्वात निष्कर्म्मतारूपं नैष्कर्म्यं निरञ्जनं निरूपाधिकं ज्ञानं अच्युतभाववर्ज्जितं चेत् अलं न शोभते। पुनः शश्वत् अकारणं हेतुशून्यं अभद्रं यत् कर्म्म, तदपि ईश्वरे न च अर्पितं चेत्, कुतः शोभते? ॥४॥

श्रीमद् भागवत के १।५।१२ में लिखित है— जब निरुपाधिक विमल ब्रह्म ज्ञान भी हरि भक्ति रहित होने से शोभित नहीं होता है, अर्थात् मुक्ति प्रदान करने में सक्षम नहीं है, तब क्या निष्काम कर्म्म, अथवा काम्य कर्म्म भगवान् को अर्पित न होने से शोभित नहीं होता है, अर्थात् फल प्रदान करने में सक्षम नहीं होता है ॥४॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।४।१७)—

परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्—

तपस्विनो दानपरा यशस्विनो,
मनस्विनो मन्त्रविदः सुमङ्गलाः।
क्षेमं न विन्दन्ति विना यदर्पणं,
तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ॥५॥

टीका—तपस्विनः, दानपराः, यशस्विनः, मनस्विनः मन्त्रविदः, सुमङ्गलाः यत् यस्मिन् भगवति अर्पणं विना क्षेमं कल्याणं न विन्दन्ति, तस्मै सुभद्रश्रवसे सुकल्याणयशस्विने नमः नमः ॥५॥

श्रीमद् भागवत के २।४।१७ में लिखित है- तपः शील, दाता, यशस्वी, योगी, मन्त्रवेत्ता एवं सदाचारी ये सब व्यक्ति निज निज तपस्यादि कर्म जिन को समर्पण न करने से कल्याण लाभ नहीं होता है, उन कल्याण स्वरूप यशस्वी भगवान् को पुनः पुनः नमस्कार करता हूँ ॥५॥

केवल ज्ञान मुक्ति दिते नारे भक्ति विने।
कृष्णोन्मुख सेइ मुक्ति हय विना ज्ञाने ॥१६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१४।४)

श्रेयःसृतिं भक्तिमुदस्य ते विभो,
क्लिश्यन्ति ये केवलबोधलब्धये।
तेषामसौ क्लेशल एव शिष्यते,
नान्यद्यथा स्थूलतुषावघातिनां ॥६॥

टीका—हे विभो! ये साधकाः श्रेयःसृतिं

ते तव भक्ति उदस्य विहाय केवलबोधलब्धये केवल शुष्कज्ञानप्राप्त्यर्थं क्लिश्यन्ति परिश्रमं कुर्व्वन्ति तेषां असौ क्लेशलः श्रम एव हि शिष्यते, यथा स्थूलतुषाव घातिनां नान्यत् फलं स्यात् ॥६॥

श्रीमद् भागवत के १०।१४।४ में ब्रह्मा श्रीकृष्ण को कहे थे – हे विभो ! जो लोक सर्व प्रकार कल्याण कर भक्ति को वर्जन कर केवल मात्र शुष्क ज्ञान लाभ हेतु क्लेश करते हैं, वे तुषावघाती व्यक्ति के समान फललाभ करने में सक्षम नहीं होते हैं, परिश्रम मात्र ही सार होता है। तण्डुल लाभ हेतु जो लोक धान्य परित्याग पूर्वक तुष का अवहनन करते हैं, उन सब को तुषावघाती कहते हैं ॥६॥

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (७।१४)–

अर्ज्जुनं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्—

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥७॥

श्रीमद् भगवद् गीता में उक्त है– मदीय माया अत्यद्भुता, गुणमयी एवं दुरत्यया है, जो सब व्यक्ति शुद्ध भक्तियोग के द्वारा उपासना करते हैं, वे मदीय उक्त माया से परित्राण प्राप्त करते हैं ॥७॥

कृष्णेर नित्यदास जीव ताहा भुलि गेल ।
एइ दोषे माया तार गलाय बान्धिल ॥१७
ताते कृष्ण भजे, करे गुरुर सेवन ।
मायाजाल छुटे, पाय कृष्णेर चरण ॥१८
चारि वर्णाश्रमी यदि कृष्ण नाहि भजे ।
स्वधर्म्म करिलेओ से रौरवे पड़ि मजे ॥१९

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।५।२)--

मुखबाहूरुपादेभ्यः पुरुषस्याश्रमैः सह ।
चत्वारो जज्ञिरे वर्णा गुणैर्व्विप्रादयः पृथक् ॥८॥

टीका—पुरुषस्य ईश्वरस्य मुखबाहूरुपादेभ्यः चत्वारः वर्णाः विप्रादयः आश्रमैः सह जज्ञिरे । गुणैः सत्वरजस्तमोभिः विप्रादयः पृथक् कृताः ॥८॥

श्रीमद् भागवत के ११।५।२ में उक्त है— परम पुरुष ईश्वर के मुख बाहु, ऊरु, एवं चरण से विप्रादि वर्ण चतुष्टय ब्रह्मचर्य्यादि आश्रम चतुष्टय के सहित उत्पन्न हुये हैं, एवं सत्त्व रजः तमोगुण के भेद से भिन्न भिन्न श्रेणी में विभक्त हुये हैं ॥८॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।५।३)--

जनकं प्रति योगेन्द्रवाक्यम्—

य एषां पुरुषं साक्षादात्मप्रभवमीश्वरं ।
न भजन्त्यवजानन्ति स्थानाद् भ्रष्टाः पतन्त्यधः ॥९

टीका—एषां मध्ये ये जनाः आत्मप्रभवं साक्षात् ईश्वरं पुरुषं न भजन्ते, अवजानन्ति, ते स्थानात् भ्रष्टाः सन्तः अधः पतन्ति ॥९॥

श्रीमद् भागवत के ११।५।३ में उक्त है—वर्ण चतुष्टय के मध्य में जो सब व्यक्ति पुरुष रूपी साक्षात् ईश्वर का भजन नहीं करते हैं, किंवा जान कर भी अवज्ञा प्रदर्शन करते हैं, वे वर्णाश्रम धर्म से भ्रष्ट होकर अधोगामी होते हैं ॥९॥

ज्ञान जीवन्मुक्ति दशा पाइनु करि माने ।
वस्तुतः बुद्धि शुद्ध नहे कृष्णभक्ति विने ॥२०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२।३२)—

श्रीकृष्णं प्रति देवस्तुतिः—

येऽन्येऽरविन्दाक्ष विमुक्तमानिन-
स्त्वय्यस्तभावादविशुद्धबुद्धयः ।
आरुह्य कृच्छ्रेण परं पदं ततः,
पतन्त्यधोऽनादृतयुष्मदङ्घ्रयः ॥१०॥

टीका—हे अरविन्दाक्ष ! हे कमलानन ! त्वयि अस्तभावात् अविशुद्धबुद्धयः, सुतरां विमुक्त-मानिनः ये अन्ये जनाः कृच्छ्रेण परिश्रमेण परं पदं आरुह्य अनादृतयुष्मदङ्घ्रयः सन्तः ततः स्थानात् अधः पतन्ति ॥१०॥

श्रीमद् भागवत के १०।२।३२ में लिखित है-- हे कमल नयन ! यदि आप के प्रति भक्ति नहीं होती है तो बुद्धि शुद्धि नहीं होती है। इस प्रकार

अशुद्ध मना व्यक्तिगण अपने को मुक्त अभिमान करते हैं, वे अनेक परिश्रम से मोक्ष के सन्निकट में उपस्थित होकर भी आप को अवज्ञा करने के कारण अधोगामी होते हैं ॥१०॥

कृष्ण सूर्य्यसम, माया हय अन्धकार ।
याँहा कृष्ण ताँहा नाहि मायार अधिकार ।२१

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।७।४६)—

शश्वत् प्रशान्तमभयं प्रतिबोधमात्रं
शुद्धं समं सदसतः परमात्मतत्त्वम् ।
शब्दो न यत्र पुरुषकारकवान् क्रियार्थो
माया परत्यभिमुखे च विलज्जमाना ।
तद् वै पदं भगवतः परमस्य पुंसो
ब्रह्मेति यद्विदुरजस्रसुखं विशोकम् ॥११

टीका—मुनयः यत् ब्रह्म इति विदुः तत् वै परमस्य पुंसः भगवतः पदम् । तत् च ब्रह्म अजस्रसुखं विशोकं शश्वत् प्रशान्तं समम् अभयं प्रतिबोधमात्रं शुद्धं सदसतः परम् आत्मतत्त्वं च यत्र च ब्रह्मणि शब्दः पुरुषकारकवान् क्रियार्थः च न अस्ति, माया च अभिमुखे स्थातुं विलज्जमाना इव यस्मात् परैति दूरतः अपसरति ॥११॥

मुनिवृन्द सबसे बृहत्तमत्व हेतु जिस तत्त्व को ब्रह्म रूप से जानते हैं, वही तत्त्व श्रीभगवान् के निर्विकल्प सत्ता रूप है । ब्रह्म साक्षात् कार के पश्चात् विचित्र रूपादि विकल्प विशेष विशिष्ट श्रीभगवान् का साक्षात् कार होता है, अतः श्रीभगवत् स्वरूप का अन्तर्गत ही ब्रह्म है, एवं वह श्रीभगवत् साक्षात् कार का सोपान स्वरूप है ।

वह ब्रह्म—ज्ञान स्वरूप एवं अजस्र सुखस्वरूप है, आत्मतत्त्व—अर्थात् समस्त आत्माओं का मूल कारण है, स्वप्रकाशत्व एवं निरुपाधि परम प्रेमास्पदत्व हेतु उस उस रूप में प्रकाशित होता है ।

नित्य प्रशान्त, क्षोभ रहित अभय, विशोक, उत्पत्ति विकार, प्राप्ति एव संस्कार ये चतुर्विध कार्य फल का प्रकाशक कर्म काण्ड रूप शब्द उनका बोधक नहीं होता है ।

आप शुद्ध हैं, इन्द्रिय जन्यत्वादि दोष रहित, सम, उच्चनीच भाव शून्य कार्य्य समूह एवं कारण समूह के उपरिस्थित हैं, अधिक कहना व्यर्थ है, स्वयं माया भी उनके अभिमुख में अवस्थान करने में लज्जित होकर दूर को हठ जाती है ॥११॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।५।१३)

नारदं प्रति ब्रह्मवाक्यम्—

विलज्जमानया यस्य स्थातुमीक्षापथेऽमुया ।
विमोहिता विकत्थन्ते ममाहमिति दुर्धियः ॥१२

टीका—यस्य ईश्वरस्य ईक्षापथे नयन-मार्गे स्थातुं विलज्जमानया अमुया विमोहिताः दुर्धियः ममाहमिति विकत्थन्ते श्लाघन्ते ॥१२॥

श्रीमद्भागवत के २।५।१३ में लिखित है—जिन ईश्वर के नयन मार्ग में-"इन्होंने मेरी कपटता को जान लिया है, यह जान कर लज्जित होकर रह नहीं सकती है, किन्तु जीव को मुग्ध करती है, जिस से जीवगण मैं मेरा इस प्रकार अभिमान ग्रस्त होते रहते हैं ।१२॥

कृष्ण तोमार हङ यदि बले एकबार ।
मायाबन्ध हैते कृष्ण तारे करे पार ॥२१

तथाहि हरिभक्तिविलासस्य (११)

सकृदेव प्रपन्नो यस्तवास्मीति च याचते ।
अभयं सर्व्वदा तस्मै ददाम्येतद्व्रतं मम ॥१३॥

टीका—सकृदेव यो जनः तवास्मीति च याचते, अहं सर्व्वदा तस्मै अभयं ददामि, एतत् मम व्रतं ॥१३॥

श्रीहरिभक्ति विलास के ११।३६७ में उक्त है-" मैं तुम्हारा ही हूँ" इस प्रकार एकवार मात्र कह कर जो प्रार्थना करता है, मैं उसको सर्वदा अभय प्रदान करता हूँ, यही मेरा व्रत है ॥१३॥

मुक्ति-भक्ति-सिद्धिकामी सुबुद्धि यदि हय ।
गाढ़ भक्तियोगे तबे कृष्णके भजय ॥२२

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।३।१०)—

परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्—

अकाम: सर्व्वकामो वा मोक्षकाम उदारधी: ।
तीव्रेण भक्तियोगेन यजेत पुरुषं परं ।।१४।।

टीका—उदारबुद्धि: उदारमति: अकाम: एकान्तभक्त: सर्व्वकाम: मोक्षकाम: वा तीव्रेण भक्ति योगेन परं पूर्णं पुरुषं यजेत ।।१४।।

श्रीमद् भागवत के २।३।१० में लिखित है-- जो व्यक्ति उदारमति, अथवा निष्काम, कामना समन्वित, किंवा मुमुक्षु है, वह एकान्त तीव्र भक्ति योग के द्वारा परम पुरुष का भजन करे ।।१४।।

अन्य कामी यदि करे कृष्णेर भजन ।
ना मागिले कृष्ण तारे देन स्वचरण ।।२३
कृष्ण कहे "आमा भजे मागे विषयसुख ।
अमृत छाड़ि विष मागे एत बड़ मूर्ख ।।२४
आमि विज्ञ एइ मूर्खे विषय केने दिव ।
स्वचरणामृत दिया विषय भुलाइव ।।" २५

तथाहि श्रीमद्भागवते (५।१९।२६)—

श्रीकृष्णमुद्दिश्य देवस्तुति:—

सत्यं दिशत्यर्थितमर्थितो नृणां,
नैवार्थदो यत् पुनरर्थिता यत: ।
स्वयं विधत्ते भजतामनिच्छता-
मिच्छापिधानं निजपादपल्लवं ।।१५।।

टीका—अर्थित: सन् नृणां अर्थितं दिशति इति सत्यं, तथापि अर्थद: परमार्थप्रद: न एव स्यात्, यत् यत: पुनरर्थिता भवति किन्तु अनिच्छतां भजतां सम्बन्धे इच्छापिधानं सर्व्वाशापरिपूरकं निजपद-पल्लवं स्वयमेव विधत्ते ।।१५।।

श्रीमद् भागवत के ५।१९।२६ में देवगण कहे थे—ईश्वर प्रार्थी की प्रार्थना को पूर्ण करते हैं, यह सत्य है, किन्तु परमार्थ प्रदान नहीं करते हैं, इस हेतु वह पुनर्वार प्रार्थी होता है, किन्तु कामना रहित भक्त को समस्त आशा परिपूरक निज चरण पल्लव प्रदान कदते रहते हैं ।।१५।।

काम लागि कृष्ण भजे पाय कृष्णरसे ।
काम छाड़ि दास हैते हय अभिलाषे ।।२६

तथाहि हरिभक्तिसुधोदये (७।२८)

श्रीकृष्णं प्रति ध्रुववाक्यम्—

स्थानाभिलाषी तपसि स्थितोऽहं,
त्वां प्राप्तवान् देवमुनीन्द्रगुह्यं ।
काचं विचिन्वन्नपि दिव्यरत्नं,
स्वामिन् कृतार्थोऽस्मि वरं न याचे ।।१६

टीका—हे देव ! अहं स्थानाभिलाषी राजसिंहासनेच्छु: सन् तपसि स्थित: मुनीन्द्रगुह्यं त्वां प्राप्तवान् । काचं विचिन्वन् जन: दिव्यरत्नं यथा लभते तद्वत् । हे स्वामिन् ! अहं कृतार्थोऽस्मि, वरं न याचे ।।१६।।

हरिभक्ति सुधोदय ग्रन्थ में लिखित हैं— श्रीकृष्ण को ध्रुव कहे थे—हे प्रभो ! मनुष्य काच अनुसन्धान करते करते जिस प्रकार दिव्यरत्न प्राप्त करता है, उस प्रकार मैं भी राज सिंहासन लाभार्थ तपस्याकर मुनीन्द्र दुर्ल्लभ धनस्वरूप तुम को प्राप्त किया । हे भगवन् ! उस से ही मैं कृतार्थ हूँ, अन्य वर प्रार्थना नहीं चाहता हूँ ।।१६।।

संसार भ्रमिते कोन भाग्ये केह तरे ।
नदीर प्रवाहे यैछे काष्ठ लागे तीरे ।।२७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३८।५)—

श्रीकृष्णमुद्दिश्य अक्रूरवाक्यम्—

मैवं ममाधमस्यापि स्यादेवाच्युतदर्शनं ।
ह्रियमाण: कालनद्या क्वचित्तरति कश्चन ।।१७

टीका—मा एवं स्यात्, किन्तु अधमस्यापि मम अच्युतदर्शनं ईश्वरदर्शनं स्यादेव । कुत: ? कालनद्या ह्रियमाण: कश्चन क्वचित् तरति । यथा नद्या ह्रियमाणानां तृणगुल्मादीनां मध्ये किञ्चित्

कदाचित् तरति, तथा कर्म्मणा कालेन ह्रियमाणानां जीवानां मध्ये कश्चन जनः तरेत् इति तात्पर्य्यं ॥१७

श्रीमद् भागवत के १०।३८।५ में श्रीकृष्ण को लक्ष्य कर अक्रूर कहे थे—मेरी यह आशङ्का सत्य नहीं है, मैं अत्यन्त नीच होने पर भी भगवत् दर्शन लाभ करूँगा। नदी के स्रोतो वेगसे तृणादि प्रवाहित होने से जैसे कोई एक कदाचित् तट देश को प्राप्त करता रहता है, उस प्रकार काल नदी के प्रवाह से प्रवाहित जीव समूह के मध्य में कदाचित एक व्यक्ति उत्तीर्ण हो सकता है ॥१७॥

कोन भाग्ये कारो संसार क्षयोन्मुख हय।
साधु सङ्गे तार कृष्णे रति उपजय ॥२८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।५१।५३)

श्रीकृष्णं प्रति मुचुकुन्दवाक्यम्—

भवापवर्गो भ्रमतो यदा भवेत्,
जनस्य तर्ह्यच्युत सत्समागमः।
सत्सङ्गमो यर्हि तदैव सद्गतौ,
परावरेशे त्वयि जायते रतिः ॥१८॥

टीका—हे अच्युत! भ्रमतो जनस्य यदा भवापवर्गः बन्धनाशनं भवेत्, तर्हि तदा सत्समागमः साधुभिः सह मिलनं स्यात्। यर्हि यदा सत्सङ्गमो भवेत्, तदेव सर्व्वनिवृत्त्या सद्गतौ परावरेशे त्वयि रतिः जायते ॥१८॥

श्रीमद् भागवत के १०।५१।५३ में मुचकुन्द श्रीकृष्ण को कहे थे हे अच्युत! त्वदीय कृपा से जब संसारी व्यक्ति का संसार बन्धन क्षय होता है, तब सत्सङ्ग लाभ उसको होता है, सत्सङ्ग होने से ही परमगति मिलती है, एवं परावरेश रूप आपके प्रति प्रीति होती है, आप के प्रति प्रीति होने से ही मुक्ति होती है ॥१८।

कृष्ण यदि कृपा करेन कोन भाग्यवाने।
गुरु अन्तर्यामिरूपे शिखाय आपने ॥२९

तथाहि श्रीमद्भागवते(११।२९।६)—

श्रीकृष्णं प्रति उद्धववाक्यम्—

नैवोपयन्त्यपचितिं कवयस्तवेश,
ब्रह्मायुषापि कृतमृद्धमुदः स्मरन्तः।
योऽन्तर्बहिस्तनुभृतामशुभं विधुन्व-
न्नाचार्य्यचैत्त्यवपुषा स्वगतिं व्यनक्ति ॥१९

टीका—श्रीमद् भागवत के ११।२९।६ में उद्धव श्रीकृष्ण को कहे थे—हे ईश! आप अन्तर एवं बाहर अन्तर्य्यामी रूप में एवं आचार्य्य रूप में देहि वृन्द के अशुभ विनाश करते करते उन सब के निकट स्वरूप प्रकाश करते रहते हैं, आप के कर्म्म समूह का स्मरण कर विज्ञ व्यक्ति गण आनन्द विभोर होकर ब्रह्मा की परिमित आयुष्काल में भी आप को सम्यक् रूप से जानने में असमर्थ हैं ॥१९॥

साधुसङ्गे कृष्णभक्त्ये श्रद्धा यदि हय।
भक्तिफल प्रेम हय संसार याय क्षय ॥३०

तथाहि श्रीमद्भागवते(११।२०।८)—

यदृच्छया मत्कथादौ जातश्रद्धस्तु यः पुमान्।
न निर्व्विण्णो नातिसक्तो भक्तियोगोऽस्यसिद्धिदः ॥२०

टीका—यः पुमान् यदृच्छया मत्कथादौ जातश्रद्धः सन् निर्व्विण्णः न, अतिसक्तः न भवति, अस्य भक्तियोगः सिद्धिदः ॥२०॥

श्रीमद् भागवत के ११।२०।८ में लिखित है जो सौभाग्य से मेरी कथा में श्रद्धाशील होकर कर्म फलादि में अतिशय विरक्त अथवा अतिशय आसक्त नहीं होता है, उसके पक्ष में भक्तियोग सिद्धिप्रद होता हैं ॥२०॥

महत्कृपा विना कोन कर्म्मे भक्ति नय।
कृष्णप्राप्ति दूरे रहु संसार नहे क्षय ॥३१

तथाहि श्रीमद्भागवते (५।१२।१२)—

रहूगणं प्रति भरतवाक्यम्—

रहूगणैतत्तपसा न याति,
न चेज्यया निर्व्वपणाद्गृहाद्वा।

न च्छन्दसा नैव जलाग्निसूर्य्यैं--

विना महत्पादरजोऽभिषेकं ॥२१॥

टीका--हे रहूगण ! एतत् ईश्वरज्ञानं महत्-पादरजोभिषेकं साधुपरिचर्य्यां विना तपसा न याति, इज्यया वैदिकक्रियया च न भवति, निर्व्वपणात् अन्नादिविभागात् गृहाद्वा छन्दसा वेदपर्य्यालोचनेन न, जलाग्नि सूर्य्यैः नैव याति ॥२१॥

श्रीमद् भागवत ५।१२।१२ में रहूगण के प्रति भरत कहे थे—हे रहूगण ! इस प्रकार भगवद् ज्ञान साधु सेवा व्यतीत, तपस्या, वैदिका क्रिया अन्नदान, परोपकार, वेदाध्ययन, जलदान, सूर्य्य आराधना, अग्नि की आराधना के द्वारा नहीं होता है ॥२१॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (७।५।३२)—

गुरुपुत्रं प्रति प्रह्लादवाक्यम्—

नैषां मतिस्तावदुरुक्रमाङ्घ्रिं,

स्पृशत्यनर्थापगमो यदर्थः ।

महीयसां पादरजोऽभिषेकं,

निष्किञ्चनानां न वृणीत यावत् ॥२२॥

टीका—निष्किञ्चनानां विषयाभिमान-रहितानां महीयसां सज्जनानां पादरजोऽभिषेकं यावत् न वृणीत, तावत् एषां मतिः उरुक्रमाङ्घ्रि भगवच्चरणकमलं न स्पृशति न लभते। यदर्थः अनार्थापगमः संसारनाशः स्यात् ॥२२॥

श्रीमत् भागवत के ७।५।३२ में उक्त है--जब तक विषयाभिमान रहित साधु वृन्द की चरण धूली से अभिषिक्त होने का सौभाग्य नहीं होता है, तब तक भगवान् के चरण कमल में प्रीति नहीं होती है, उस प्रकार मति न होने से अनर्थ अर्थात् संसार बन्धन विनष्ट नहीं होता है ॥२२॥

साधुसङ्ग साधुसङ्ग सर्व्व शास्त्रे कय ।

लवमात्र साधु सङ्ग सर्व्वसिद्धि हय ॥३२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१८।१३)—

शौनकादीन् प्रति सूतवाक्यम्—

तुलयाम लवेनापि न स्वर्गं नापुनर्भवं ।

भगवत्सङ्गिसङ्गस्य मर्त्यानां किमुताशिषः ॥२३

टीका—भगवत्सङ्गिसङ्गस्य हरिभक्तानां सङ्गस्य लवेनापि लेशेनापि स्वर्गं न तुलयाम, न अपुनर्भवं मोक्षं तुलयाम, मर्त्यानां मानवानां आशिषः न तुलयाम, इति किमुत वक्तव्यम् ॥२३॥

श्रीमद् भागवत के १।१८।१३ में शौनक प्रभृति के प्रति सूत कहे थे, विष्णु भक्त वृन्द के अत्यल्प काल सङ्ग जो फल प्रदान करता है, उस के सहित स्वर्ग, मोक्ष, की तुलना नहीं हो सकती है, मरण धर्मशील मनुष्य वृन्द के अति तुच्छ राज्यादि सुख के सहित उसकी तुलना कैसे करूँगा ? ॥२३॥

कृष्ण कृपालु अर्ज्जुनेरे लक्ष्य करिया ।

जगतेरे राखियाछे उपदेश दिया ॥३३

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (१८।६४)—

सर्व्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः ।

इष्टोऽसि मे दृढमिति ततो वक्ष्यामि ते हितम् ॥२४

टीका—सर्व्वगुह्यतमं गुह्यादपि गुह्यतमं परमं श्रेष्ठं मे मम वचः भूयः शृणु। त्वं मे मम दृढं इष्टः प्रियः असि, ततः तस्माद्धेतोः ते हितं वक्ष्यामि ॥२४॥

श्रीमद् भगवद् गीता में श्रीकृष्ण कहे हैं—जो सब प्रकार गोपनीय से भी गोपनीय है, उस परम श्रेष्ठ वाक्य को तुमको कहता हूँ, सुनो तुम मेरा अत्यन्त प्रिय हो। इस हेतु तुमको हित वाक्य कहता हूँ ॥२४॥

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (१८।६५)—

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।

मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे ॥२५॥

टीका - त्वं मन्मनाः मद्गतचित्तः भव, मद्याजी मयि यजनवान् भव, मां नमस्कुरु, एवं कृते सति मामेव एष्यसि। त्वं मे मम प्रियः इष्टः असि, तस्माद्धेतोः सत्यं ते प्रतिजाने प्रतिज्ञां करोमि ॥२५॥

श्रीमद् भगवद्गीता के १८।६५ में श्रीकृष्ण

कहे हैं—तुम चित्तार्पण मुझ को करो मेरा पूजन करो, मुझको नमस्कार करो, इस प्रकार करने से तुम मुझ को प्राप्त करोगे। तुम मेरा प्रिय हो, इस हेतु में सत्य कर ही इस प्रकार कहता हूँ ॥२५॥

पूर्व्व आज्ञा वेदकर्म्म धर्म्म योग ज्ञान।
सब साधि शेषे एइ आज्ञा बलवान् ॥३४
एइ आज्ञाबले भक्तेर श्रद्धा यदि हय।
सर्व्व कर्म्म त्याग करि से कृष्ण भजय ॥३५

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२०।९)—

उद्धवं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्—

तावत् कर्म्माणि कुर्व्वीत न निर्व्विद्येत यावता।
मत्कथाश्रवणादौ वा श्रद्धा यावन्न जायते ॥२६॥

श्रीमद् भागवत के ११।२०।९ में उद्धव के प्रति श्रीकृष्ण कहे थे—तब तक काम्य कर्माचरण में निर्वेद नहीं होता है, अथवा मदीय कथा श्रवण प्रभृति में श्रद्धा नहीं होती है, तब तक काम्य कर्माचरण करना चाहिये ॥२६॥

श्रद्धा शब्दे विश्वास कहे सुदृढ़ निश्चय।
कृष्णभक्ति कैले सर्व्व कर्म्म कृत हय ॥३५

तथाहि श्रीमद्भागवते (४।३१।१२)—

प्रचेतसं प्रति नारदवचनम्—

यथा तरोर्म्मूलनिषेचनेन,
तृप्यन्ति तत्स्कन्धभुजोपशाखाः।
प्राणोपहाराच्च यथेन्द्रियाणां,
तथैव सर्व्वार्हणमच्युतेज्या ॥२७॥

टीका—यथा तरोः पादपस्य मूलनिषेचनेन तत्-स्कन्धभुजोपशाखा तृप्यन्ति, च पुनः यथा प्राणोपहारात् प्राणभोजनात् इन्द्रियाणां प्रीतिः स्यात्, तथा अच्युतेज्या एव हरेरुपासनमेव सर्व्वार्हणं सर्व्व-देवार्च्चनं भवेत् ॥२७॥

श्रीमद् भागवत के ४।३१।१२ में प्रचेता के प्रति श्रीनारद कहे थे—

जिस प्रकार तरु के मूलदेश में जल सेचन करने से उस के स्कन्ध, शाखा, उपशाखा प्रभृति की परिपुष्टि होती हैं, उस प्रकार भगवान् कृष्ण की उपासना करने से ही समस्त देवता की पूजा हो जाती है। पृथक् रूपसे उन सब देवता की उपासना नहीं करनी पड़ती है ॥२७॥

श्रद्धावान् जन हय भक्ति अधिकारी।
उत्तम मध्यम कनिष्ठ श्रद्धा अनुसारी ॥३७
शास्त्रयुक्तेर शुनि पुनः दृढ़ श्रद्धा यार।
उत्तम अधिकारी सेइ तारये संसार ॥३८
शास्त्रयुक्ति नाहि जाने, दृढ़ श्रद्धावान्।
मध्यम अधिकारी सेइ महा भाग्यवान् ॥३९
याहार कोमल श्रद्धा से कनिष्ठजन।
क्रमे क्रमे तिँह भक्त हइवेन उत्तम ॥४०
रति-प्रेमतारतम्ये भक्त तरतम।
एकादश स्कन्धे तार करियाछे लक्षण ॥४१

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।४५)—

सर्व्वभूतेषु यः पश्येद् भगवद्भावमात्मनः।
भूतानि भगवत्यात्मन्येष भागवतोत्तमः ॥२८॥

श्रीमद् भागवत के ११।२।४५ में धार्मिक का लक्षण कहते हैं—जो व्यक्ति समस्त जीवों के मध्य में आत्मा रूपमें विद्यमान भगवान् का दर्शन करते हैं, एवं परमात्मा रूप भगवान् में समस्त जीवों को देखते हैं वे ही भगवान् के श्रेष्ठ भक्त हैं ॥२८॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।४६)—

जनकं प्रति योगेन्द्रव वचन—

ईश्वरे तदधीनेषु बालिशेषु द्विषत्सु च।
प्रेममैत्रीकृपोपेक्षा यः करोति स मध्यमः ॥२९॥

टीका—यः जनः ईश्वरे, तदधीनेषु तद्भक्तिपरायणेषु बालिशेषु उदासीनेषु द्विषत्सु शत्रुषु च प्रेममैत्रीकृपोपेक्षाः करोति, सः मध्यमः ॥२९॥

श्रीमद् भागवत के ११।२।४६ में उक्त है— जो व्यक्ति--भगवान् भगवद् भक्त भगवद् भक्ति विषय में अनभिज्ञ, एवं उदासीन--शत्रु ये चतुर्विध के प्रति—क्रमशः प्रीति, मैत्री, कृपा एवं उपेक्षा करते हैं उनको मध्यम भक्त कहते हैं ।।२६।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।४७)—

जनकं प्रति योगेन्द्रवाक्यम् -

अर्च्चायामेव हरये पूजां यः श्रद्धयेहते ।
न तद्भक्तेषु चान्येषु स भक्तः प्राकृतः स्मृतः ।।३०

टीका—यः जनः अर्च्चायां प्रतिमायां श्रद्धया हरये पूजां ईहते करोति, तद्भक्तेषु अन्येषु च, सुतरां न करोति, सः प्राकृतः भक्तः स्मृतः अभिहितः ।।३०।।

श्रीमद् भागवत के ११।२।४७ में उक्त है— जो व्यक्ति श्रद्धा पूर्वक प्रतिमा में भगवान् की अर्चना करते हैं, किन्तु भगवद् भक्त की अथवा अपर किसी की अर्चना नहीं करते हैं, उनको प्राकृत भक्त कहा जाता है, अर्थात् प्रारम्भिक भक्त हैं, तादृश व्यक्ति शनैः शनैः भक्ति के अधिकारी होते हैं ।।३०।।

सर्व्व महागुणगण वैष्णवशरीरे ।
कृष्णभक्ते कृष्णेर गुण सकल सञ्चरे ।।४२

तथाहि श्रीमद्भागवते(५।१८।१२)—

यस्यास्ति भक्तिर्भगवत्यकिञ्चना,
सर्व्वैर्गुणैस्तत्र समासते सुराः ।
हरावभक्तस्य कुतो महद्गुणाः,
मनोरथे नासति धावतो वहिः ।।३१।।

श्रीमद् भागवत के ५।१८।१२ में उक्त है— भगवान् में जिनकी उत्तमा भक्ति है, उन में देवता वृन्द निज निज गुणों के द्वारा अवस्थान करते हैं, एवं आप निखिल सद्गुण सम्पन्न होते हैं । किन्तु श्रीकृष्ण में जिनकी भक्ति नहीं है, उनमें महद् गुण कैसे हो सकता है ? वे तो विषय भोगेच्छु होकर विषय से विषयान्तर में धावित होते रहते हैं ।।३१

एइ सब गुण हय वैष्णवलक्षण ।
सब कहा ना याय करि दिग्दरशन ।।४३
कृपालु अकृतद्रोह सत्यसार सम ।
निर्द्दोष वदान्य मृदु शुचि अकिञ्चन ।।४४
सर्व्वोपकारक शान्त कृष्णैकशरण ।
अकाम निरीह स्थिर विजितषड़्गुण ।।४५
मितभुक् अप्रमत्त मानद अमानी ।
गम्भीर करुण मैत्र कवि दक्ष मौनी ।।४६

तथाहि श्रीमद्भागवते(३।२५।२१)—

तितिक्षवः कारुणिकाः सुहृदः सर्व्वदेहिनां ।
अजातशत्रवः शान्ताः साधवः साधुभूषणाः ।।३२

टीका—साधुलक्षणमाह यथा,—तितिक्षवः क्लेशसहिष्णवः, कारुणिकाः, सर्व्वदेहिनां अखिलशरीरिणां सुहृदः, अजातशत्रवः शत्रुशून्याः, शान्ताः औद्धत्यरहिताः, साधवः सरलाः, साधुभूषणाः साधव एव भूषणानि येषां ते, अथवा साधु सुशीलमेव भूषणं येषां ते ।।३२।।

श्रीमद् भागवत के ३।२५।२१ में साधु का लक्षण लिखित है— साधुगण दुःख सहिष्णु, दयालु, समस्त प्राणीओं के सुहृत्, अजात शत्रु, शान्त सरल एवं साधु वृन्द ही उनके भूषण हैं, अथवा सुशीलता ही उनका भूषण है ।।३२।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (५।५।२)—

महत्सेवां द्वारमाहुर्व्विमुक्ते-
स्तमोद्वारं योषितां सङ्गिसङ्गं ।
महान्तस्ते समचित्ताः प्रशान्ताः,
विमन्यवः सुहृदः साधवो ये ।।३३।।

टीका—महत्सेवां विमुक्तेर्द्वारं, योषितां सङ्गिसङ्गं तमोद्वारं आहुः कथयन्ति । ये समचित्ताः सर्व्वत्रः समदर्शिनः, प्रशान्ताः, विमन्यव अक्रोधाः, सुहृद्भावयुक्ताः, साधवः सदाचारपरायणाः, ते महान्तःउच्यन्ते ।।३३।।

श्रीमद् भागवत के ५।५।२ में उक्त है—विज्ञ व्यक्ति गण महत् सेवा को भगवत् प्राप्ति रूप मुक्ति का द्वारमानते हैं, एवं नारी सङ्गी के सङ्ग को तमोद्वार अर्थात् नरक के द्वार मानते हैं। जो व्यक्ति सर्वत्र समदर्शी, सबके प्रति बन्धु भावापन्न, प्रशान्त, क्रोध शून्य एवं सदाचार रत हैं, उन सब का ही महत् कहा जा सकता है ॥३३॥

कृष्णभक्तिजन्म--मूल हय साधुसङ्ग।
कृष्णप्रेम जन्मे, तेँह पुनः मुख्य अङ्ग ॥४७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।५१।५३)

भवापवर्गो भ्रमतो यदा भवेत्,
जनस्य तर्ह्यच्युत सत्समागमः।
सत्सङ्गमो यर्हि तदैव सद्गतौ,
परावरेशे त्वयि जायते रतिः ॥३४॥

श्रीमद् भागवत के १०।५१।५३ में श्रीकृष्ण के प्रति मुचुकुन्द कहे थे—
हे अच्युत ! आप की कृपा से जिस समय संसारी व्यक्ति का संसार बन्धन क्षय होता है, उस समय सत्सङ्ग लाभ होता है। सत सङ्ग लाभ होने से ही परमा गति होती है, एवं परावरेश रूप आप में प्रीति होती है,प्रीति होने से जीव मुक्त होता है ॥३४

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।३०)—

अत अत्यन्तिकं क्षेमं पृच्छामो भवतोऽनघाः।
संसारेऽस्मिन् क्षणार्द्धोऽपि सत्सङ्गः सेवधिर्नृणां ।३५

टीका—हे अनघाः निष्पापाः ! अतः भवतः युष्मान् आत्यन्तिकं क्षेमं कल्याणं पृच्छामः, यतः अस्मिन् संसारे क्षणार्द्धः अपि सत्सङ्गः साधुसङ्गः नृणां सेवधिः ॥३५॥

श्रीमद् भागवत के ११।२।३० श्रीविदेह ने कहा—हे अनघ तापसवृन्द ! सम्प्रति आप सब से आत्यन्तिक कल्याण कर विषय को पूछता हूँ ! इस संसार में क्षणार्द्ध काल भी यदि साधु सङ्ग लाभ होता है, तो परमनिधि प्राप्ति होती है ॥३५॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२५।२५)—

सतां प्रसङ्गान्मम वीर्य्यसम्विदो,
भवन्ति हृत्कर्णरसायनाः कथाः।
तज्जोषणादाश्वपवर्गवर्त्मनि
श्रद्धा रतिर्भक्तिरनुक्रमिष्यति ॥३६

श्रीमद् भागवत के ३।२५।२५ में देवहूति को कपिल देव कहे थे—साधु वृन्दके समागम से मेरा प्रभाव सूचक हृदय प्रीति कर एवं श्रुति मनोहर कथा समूह आलोचित होती हैं। उस के श्रवण के द्वारा आशु मत् सम्बन्धीय भक्तिमार्ग में क्रमशः श्रद्धा रति एवं भक्ति का उदय होता है ॥३६॥

असत्सङ्गत्याग एइ वैष्णव आचार।
स्त्रीसङ्गी एक असाधु कृष्णाभक्त आर ॥४८

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।३१।३)--

न तथास्य भवेन्मोहो बन्धश्चान्यप्रसङ्गतः।
योषित्सङ्गाद्यथा पुंसो यथा तत्सङ्गिसङ्गतः ।३७

टीका—अस्य मोहः, च बन्धः अन्यप्रसङ्गतः तथा न भवेत्, यथा योषित् सङ्गात् नारीसङ्गात्, यथा च तत्सङ्गिसङ्गतः स्यात् ॥३७॥

श्रीमद् भागवत के ३।३१।३ में लिखित है—योषित् सङ्ग एवं रमणी सङ्गी के सङ्ग जिस प्रकार मोह एवं बन्धन के हेतु है, अपर सङ्ग उस प्रकार नहीं है ॥३७॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।३१।३३)--

सत्य शौचं दया मौनं बुद्धिर्ह्रीः, श्रीर्यशः क्षमा।
शमो दमो भगश्चेति यत्सङ्गाद्याति संक्षयं ॥३८

टीका—यत्सङ्गात्, सत्यं, शौचं, दया, मौनं, बुद्धिः, ह्रीः, श्रीः, यशः, क्षमा, शमः, दमः, भगः ऐश्वर्य्यं संक्षयं याति, असत्सङ्गो निन्द्य इति शेषः ।३८

श्रीमद् भागतत के ३।३१।३३ में लिखित है—सत्य, शौच, दया, सत् प्रवृद्धि, बुद्धि, लज्जा, श्री, यश, क्षम, शम, दम, ऐश्वर्य्य ये सब असत् सङ्ग से क्षय होते हैं ॥३८॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।३१।३४)—

सत्यं शौचं दया मौनं बुद्धिर्ह्रीः श्रीर्यशः क्षमा।

तेष्वशान्तेषु मूढ़ेषु खण्डितात्मस्वसाधुषु।

सङ्गं न कुर्य्याच्छोच्येषु योषित्क्रीड़ामृगेषु च ॥३९

टीका—तेषु असाधुषु सङ्गं न कुर्य्यात्। किम्भूतेषु ?—अशान्तेषु, पुनः मूढ़ेषु, पुनः खण्डितात्मसु, देहात्मबुद्धिषु पुनः शोच्येषु, पुनश्च योषित्क्रीड़ामृगेषु नारीणां क्रीड़ामृगरवरूपेषु तद्वशेषु इत्यर्थः ॥३९॥

श्रीमद् भागवत के ३।३१।३४ में उक्त है--जो अशान्त, मूर्ख देहात्माभिमानी, शोचयोग्य एवं रमणी वृन्दके क्रीड़ा मृग तुल्य वशीभूत हैं, तादृश असाधु वृन्द के सङ्ग परित्याग करना चाहिये ॥३९॥

तथाहि हरिभक्तिविलासस्य दशमविलासे चतुर्विंशत्यधिकद्विशताङ्कधृतकात्यायनसंहितावचनम्—

वरं हुतवहज्वालापञ्जरान्तर्व्यवस्थितिः।
न शौरिचिन्ताविमुखजनसंवासवैशसं ॥४०॥

टीका—हुतवहज्वालापञ्जरान्तर्व्यवस्थितिः वह्निशिखायां स्थितस्य लौहमययन्त्रस्य मध्ये अवस्थानं वरं स्यात्, तथापि शौरिचिन्ताविमुखजनसंवासवैशसं, कृष्णचिन्तापराङ्मुखजनेन सह एकत्र वासविशेषं न कुर्य्यात् ॥४०॥

वरं प्रज्वलित अनल के मध्य गत लौह यन्त्र में वास करे, तथापि कृष्ण चिन्ता विमुख व्यक्ति के सहित एकत्र अवस्थान न करे ॥४०॥

तथाहि गोस्वामिपादोक्तपादम्—

मा द्राक्षीः क्षीणपुण्यान् क्वचिदपि।
भगवद्भक्तिहीनान् मनुष्यान् ॥४१॥

टीका—भगवद्भक्तिहीनान् हरिभक्तिरहितान् क्षीणपुण्यान् क्वचिदपि मा द्राक्षीः न पश्येः ॥४१॥

कृष्णभक्ति रहित क्षीण पुण्य व्यक्ति वृन्द का दर्शन कभी भी न करे ॥४१॥

एत सब छाड़ि आर वर्णाश्रमधर्म्म।
अकिञ्चन हैञा लय कृष्णेर शरण ॥४९

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (१८।६५)-

सर्व्वधर्म्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्व्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥४२

श्रीभगवद् गीता के अष्टादशाध्याय में लिखित है-धर्मानुष्ठान समूह को परित्याग कर मेरी शरण ग्रहण करो, मैं तुम को समस्त पापों से मुक्त कर दूँगा। तुम शोक न करो ॥४२।

भक्तवत्सल कृतज्ञ समर्थ वदान्य।
हेन कृष्ण छाड़ि पण्डित नाहि भजे अन्य ।५०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।४८।२६)—

कः पण्डितस्त्वदपरं शरणं समीया-
द्भक्तप्रियादृतगिरः सुहृदः कृतज्ञात्।
सर्व्वान्ददाति सुहृदो भजतोऽभिकामा-
नात्मानमप्युपचयापचयौ न यस्य ॥४३॥

टीका—कः पण्डितः त्वदपरं त्वत्तः अन्यं शरणं समीयात् व्रजेत्? त्वत्तः किम्भूतात्?--भक्तप्रियात्, पुनः ऋतगिरः सत्यभाषिणः, पुनः सुहृदः बन्धुभावापन्नस्य, पुनः कृतज्ञात्। भवान् भजतः आराधयतः सुहृदः सम्बन्धे सर्व्वान् अखिलान् अभिकामान् तथा आत्मानमपि ददाति। यस्य तव उपचयापचयौ ह्रासवृद्धी न भवतः ॥४३॥

श्रीमद् भागवत के १०।४८।२६ में अक्रूर श्रीकृष्ण को कहे थे—हे भगवान्! आप भक्त प्रिय, सत्य भाषी, सुहृत् एवं कृतज्ञ हैं, कौन पण्डित आप को छोड़कर अन्य देवता का आश्रय ग्रहण करेगा? आप आराधना परायण सुहृद को समस्त काम्य विषय प्रदान तो करते ही है, अपने को भी दान कर देते हैं। इससे आप का अपचय अथवा उपचय नहीं होता है ॥४३

विज्ञ जनेर हय यदि कृष्णगुणज्ञान।
अन्य त्यजि भजे ताते उद्धव प्रमाण ॥५१

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२।२३)

अहो बकीयं स्तनकालकूटं
जिघांसयापाययदप्यसाध्वी ।
लेभे गतिं धात्र्युचितां ततोऽन्यं,
कं वा दयालुं शरणं व्रजेम ॥४४

टीका—अहो ! बकी पूतना जिघांसया हन्तुमिच्छया स्तनकालकूटं यं भगवन्तं अपाययत्, सा असाध्वी अपि धात्र्युचितां गतिं लेभे। ततः तस्मात् अन्यं कं वा दयालुं व्रजेम ॥४४॥

श्रीमद्भागवत के ३।२।२३ में उद्धव ने कहा है--अहो ! पूतना असाध्वी होकर भी जिनका बध करने की कामना से स्तन युगल में विष लेपन पूर्वक स्तन्य पान कराकर धात्री गति को प्राप्त किया। तादृश दयालु अन्य कौन हैं, जिनकी शरण ले सकता हूँ ? ४४

शरणागत अकिञ्चनेर एकइ लक्षण ।
तार मध्ये प्रवेशये आत्मसमर्पण ॥५२

तथाहि हरिभक्तिविलासस्य एकादशविलासे
सप्तदशाधिकचतुःशताङ्कधृतवैष्णवतन्त्रम्—

आनुकूल्यस्य संकल्पः प्रातिकूल्यविवर्ज्जनं ।
रक्षिष्यतीति विश्वासो गोप्तृत्वे वरणं तथा ॥
तत्क्रियात्मविनिक्षेपः षड़्विधा शरणागतिः ॥४५

टीका—शरणागतिः शरणागतस्य लक्षणं षड़्विधा स्यात्। तल्लक्षणानि यथा,—आनुकूल्यस्य ईश्वरानुकूलसेवनस्य संकल्पः ग्रहणं, प्रातिकूल्य-विवर्ज्जनं तत्प्रतिकूलविषयपरिहारः, स रक्षिष्यति इति विश्वासः तथा गोप्तृत्वे वरणं, आत्मार्पणं तत्क्रियात्मविनिक्षेपः, शरणागतिः शरणविषये निष्ठाबुद्धिः ॥४५॥

भगवदाराधना के अनुकूल विषय ग्रहण एवं तत् प्रतिकूल विषय वर्जन, "आप मेरी रक्षा करेंगे" इस प्रकार विश्वास, तथा रक्षक आप हैं--इस बुद्धि से उनको स्वीकार करना, एवं समर्पित आत्मा होकर उनका कार्य्य करना, तदीय शरण विषय में निष्ठा, ये छै शरणागत के लक्षण हैं।

आत्म निःक्षेपः कार्पण्यं षड़्विधा शरणागतिः"
पाठान्तर ॥४५॥

तथाहि हरिभक्तिविलासस्य एकादशविलासे
अष्टदशाधिकचतुःशताङ्कधृतवैष्णवतन्त्रम्—

तवाऽस्मीति वदन् वाचा तथैव मनसा विदन् ।
तत्-स्थानमाश्रितस्तन्वा मोदते शरणागतः ॥४६

टीका—शरणागतः तव अस्मि इति वाचा वदन्, तथैव तं ईश्वरं मनसा विदन् तन्वा देहेन तत्-स्थानं आश्रितः सन् मोदते पुलकितः स्यात् ॥४६॥

"मैं तुम्हारा हूँ" इस प्रकार मनमें करके तदीय विद्यमानता का अनुभव कर शरीर के द्वारा तदीय लीलास्थल में वासकर पुलकित होना--शरणागतका लक्षण है ॥४६॥

शरण लैआ करे कृष्णे आत्मसमर्पण ।
कृष्ण तारे तत्काले करेन आत्मसम ॥५३

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२९।३४)—

मर्त्त्यो यदा त्यक्तसमस्तकर्म्मा,
निवेदितात्मा विचिकीर्षितो मे ।
तदामृतत्वं प्रतिपद्यमानो,
मयात्मभूयाय च कल्पते वै ॥४७॥

टीका—मर्त्त्यं मानवः यदा त्यक्तसमस्तकर्म्मा सन् मे मद्विषये निवेदितात्मा स्यात, तदा मे विचिकीर्षितः मदाराधनां कर्त्तुमिच्छन् सन् अमृतत्वं प्रतिपद्यमानः वै निश्चितं मया सह आत्मभूयाय कल्पते ॥४७॥

श्रीमद् भागवत के ११।२९।३४ में उद्धव को भगवान् कहे थे—मानव, जिस समय समस्त काम्य कर्म वर्जन पूर्वक मेरी सेवा करने के इच्छुक होकर आत्मसमर्पण करता है, उस समय वह मोक्ष लाभ करता है, अथवा मेरे समान ऐश्वर्य्य लाभ करता है। अर्थात् मोक्ष लाभ एवं ऐश्वर्य्य लाभ करने का योग्य होता है ॥४७॥

एवे साधनभक्ति कहि, शुन सनातन ।
याहा हैते पाइ कृष्णप्रेम महाधन ॥५४

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे द्वितीय-
लहर्य्यां द्वितीयश्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्--

कृतिसाध्या भवेत् साध्यभावा सा साधनाभिधा ।
नित्यसिद्धस्य भावस्य प्राकट्यं हृदि साध्यता ॥४८

टीका—सा साधनाभिधा साधनाख्यभक्तिः कृतिसाध्या भवेत् । सा किम्भूता ?— साध्यभावा साध्यः साधनीयः भावः यया सा । नित्यसिद्धस्य स्वभावतः सिद्धस्य भावस्य हृदि यत् प्राकट्यं प्रकटीकरणं तत् साध्यता स्यात् ॥४८॥

प्रयत्न पूर्वक जो सब कार्य्य किये जाते हैं, एवं जो भावोत्पन्न करने में समर्थ है – उसको साधन करते हैं, भक्ति प्रकरण में नित्यसिद्ध भक्त वृन्द के हृदय में जो भक्ति विराजित है, उन सब भक्त वृन्दके आनुगत्य से श्रवण कीर्त्तनादिनवाङ्ग का अनुष्ठान करते करते उस भक्ति का प्रादुर्भाव साधक हृदय में होना ही साधन भक्ति का कार्य्य है, यहाँ गौण कार्य्य कारण भाव है ॥४८॥

श्रवणादि क्रिया तार स्वरूप लक्षण ।
तटस्थ लक्षणे उपजाय प्रेमधन ॥५५
नित्यसिद्ध कृष्णप्रेम साध्य कभु नय ।
श्रवणादि शुद्धचित्ते करये उदय ॥५६
एइत साधन भक्ति दुइत प्रकार ।
एक वैधीभक्ति, रागानुगा भक्ति आर ॥५७
रागहीन जन भजे शास्त्रेर आज्ञाय ।
वैधीभक्ति बलि तारे सर्व्व शास्त्रे गाय ॥५८

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।१।५—)

तस्माद्भारत सर्व्वात्मा भगवान् हरिरीश्वरः ।
श्रोतव्यः कीर्त्तितव्यश्च स्मर्त्तव्यश्चेच्छताभयं ॥४९

टीका—हे भारत ! तस्माद्धेतोः अभयं मुक्ति इच्छता सर्व्वात्मा ईश्वरः भगवान् हरि श्रोतव्यः, कीर्त्तितव्यः, च पुनः स्मर्त्तव्यः ॥४९॥

तथाहि श्रीमद्भागवते(११।५।२)—

मुखबाहूरुपादेभ्यः पुरुषस्याश्रमैः सह ।
चत्वारो जज्ञिरे वर्णा गुणैर्व्विप्रादयः पृथक् ॥५०

श्रीमद् भागवत के ११।५।२ में उक्त है—परम पुरुष ईश्वर के मुख, बाहु, ऊरु, एवं चरण से विप्रादि वण ब्रह्मचर्य्यादि आश्रय चतुष्टय के सहित उत्पन्न होकर गुणानुसार भिन्न भिन्न श्रेणी से विभक्त हुये हैं।

श्रीमद् भागवत के १०।५।३ में उक्त है—वर्ण चतुष्टय के मध्य में जो सब व्यक्ति आत्म जन्मा पुरुष रूपी साक्षात् ईश्वर का भजन नहीं करते हैं, अथवा जानकर भी अवज्ञा करते हैं, वे वर्णाश्रम से भ्रष्ट होकर अधोगामी होते हैं ॥५०॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे साधनभक्ति-
लहर्य्यां षष्ठाङ्कधृतपद्मपुराणम्---

स्मर्त्तव्यः सततं विष्णुर्व्विस्मर्त्तव्यो न जातुचित् ।
सर्व्वे विधिनिषेधाः स्युरेतयोरेव किङ्कराः ॥५१

टीका—सततं सर्व्वदा विष्णुः स्मर्त्तव्यः, जातुचित् कदाचिदपि न विस्मर्त्तव्यः, सर्व्वे विधिनिषेधाः एतयोः स्मृति-विस्मरणयोः किङ्कराः स्युः ॥५१॥

भगवान् का स्मरण निरन्तर करना कर्त्तव्य है, कभी भी विस्मृत नहीं होना चाहिये। यावतीय विधि एवं निषेध-उक्त स्मृति एवं विस्मृति के ही अधीन हैं ॥५१॥

विविधाङ्ग साधनभक्ति बहुत विस्तार !
संक्षेपे कहिये किछु साधनाङ्ग सार ॥५९
गुरुपदाश्रय, दीक्षा, गुरुर सेवन ।
सद्धर्म्मशिक्षापृच्छा, साधुमार्गानुगमन ॥६०
कृष्णप्रीते भोगत्याग, कृष्णतीर्थे वास ।
यावत् निर्व्वाह प्रतिग्रह, एकादशुचपवास ।६१

धात्र्यश्वत्थ-गो-विप्र-वैष्णव पूजन ।
सेवा नामापराधादि दूरे वर्ज्जन ॥६२
अवैष्णव सङ्गत्याग बहु शिष्य ना करिबे ।
बहु ग्रन्थ कलाभ्यास व्याख्यान वर्ज्जिबे ॥६३
हानि लाभ सम, शोकादिवश ना हइबे ।
अन्य देव अन्य शास्त्र निन्दा ना करिबे ॥६४
विष्णु वैष्णव निन्दा, ग्राम्यवार्त्ता ना शुनिबे ।
प्राणिमात्रे मनोवाक्ये उद्वेग ना दिबे ॥६५
श्रवण कीर्त्तन स्मरण पूजन वन्दन ।
परिचर्य्या दास्य सख्य आत्मनिवेदन ॥६६
अग्रे नृत्य गीत विज्ञप्ति दण्डवत् नति ।
अभ्युत्थान अनुव्रज्या तीर्थगृहे गति ॥६७
परिक्रमा स्तवपाठ जप सङ्कीर्त्तन ।
धूप माल्य गन्ध महाप्रसाद भोजन ॥६८
आरात्रिक महोत्सव श्रीमूर्त्तिदरशन ।
निज प्रिय दान ध्यान तदीय सेवन ॥६९
तदीय, तुलसी, वैष्णव, मथुरा, भागवत ।
एइ चारि सेवा हय कृष्णेर अभिमत ॥७०
कृष्णार्थे अखिल चेष्टा तत्कृपावलोकन ।
जन्मदिनादि महोत्सब लैञा भक्तगण ॥७१
सर्व्वदा शरणागति कार्त्तिकादि व्रत ।
चतुःषष्टि अङ्ग एइ परम महत्त्व ॥७२
साधुसङ्ग नामकीर्त्तन भागवत श्रवण ।
मथुरावास श्रीमूर्त्तिर श्रद्धाये सेवन ॥७३
सकल साधन श्रेष्ठ एइ पञ्च अङ्ग ।
कृष्णप्रेम जन्माय एइ पाँचेर अल्प सङ्ग ॥७४

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे साधनभक्तिलहर्य्यां भक्त्यङ्गे चत्वारिंश-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्--

स्वजातीयाशये स्निग्धे साधौ सङ्गः स्वतो वरे।
श्रीमद्भागवतार्थानामास्वादो रसिकैः सह ॥५२॥

टीका—साधौ सङ्गः कर्त्तव्यः। साधौ किम्भूते? स्वजातीयाशये एकधर्म्माश्रिते। पुन कीदृशे?--स्निग्धे कोमलचरित्रे। पुनः किम्भूते?--स्वतः आत्मनः वरे प्रधाने। ईदृशैः रसिकैः भक्तिमद्भिः सह श्रीमद्भागवतार्थानां आस्वादः कर्त्तव्य ॥५२॥

एकधर्माश्रित कोमल चरित्र एवं अपने से श्रेष्ठ साधुवृन्द का सङ्ग करना चाहिये। इस प्रकार रसवित भक्त के सहित श्रीमद् भागवत का अर्थ आस्वादन करना चाहिये ॥५२॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे साधनभक्तिलहर्य्यां द्विचत्वारिंश-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्-

श्रद्धा विशेषतः प्रीतिः श्रीमूर्त्तेरङ्घ्रिसेवने।
नामसङ्कीर्त्तनं श्रीमन्मथुरामण्डले स्थितिः ॥५३॥

टीका—श्रीमूर्त्तेः अङ्घ्रिसेवने श्रद्धा, विशेषतः प्रीतिः कर्त्तव्या, नामसङ्कीर्त्तनं कर्त्तव्य, श्रीमन्मथुरामण्डले स्थितिः कर्त्तव्या ॥५३॥

श्रीमूर्त्ति की सेवा में श्रद्धा, एवं प्रीति होनी चाहिये, एवं तदीय नाम सङ्कीर्त्तन करना एवं वृन्दावन में निवास करना कर्त्तव्य है ॥५३॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे साधनभक्तिलहर्य्यां दशाधिकशत-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्-

दुरूहाद्भुतवीर्य्येऽस्मिन् श्रद्धा दूरेऽस्तु पञ्चके।
यत्र स्वल्पोऽपि सम्बन्धः सद्धियां भावजन्मने ॥५४

टीका—दुरूहाद्भुतवीर्य्ये अस्मिन् पञ्चके मत सङ्गादि पूर्व्वकथितपञ्चविषये श्रद्धा दूरे अस्तु, तत्र विषये स्वल्पोऽपि सम्बन्धः सद्धियां सद्बुद्धीनां भावजन्मने सक्षमो भवति ॥५४॥

पूर्वोक्त अतिदुरूह एवं विस्मय कर सत्सङ्गादि पञ्च विषय में श्रद्धा तो दूर की बात है, किञ्चिन्मात्र सम्बन्ध होने से ही बुद्धिमान व्यक्ति के हृदय में भावोत्पन्न होता है ॥५४॥

एक अङ्ग साधे केह साधे वहु अङ्ग ।
निष्ठा हैले उपजाय प्रेमेर तरङ्ग ॥७५
एक अङ्गे सिद्धि पाइल वहु भक्तगण ।
अम्बरीषादि भक्तेर बहु अङ्ग साधन ॥७६

तथाहि पद्यावल्यां भक्तमाहात्म्ये द्वितीयाङ्कधृत-
दाक्षिणात्य-श्रीवैष्णवकृत श्लोकः
तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ साधनभक्तिलहर्य्यां
द्विशनाङ्कधृतग्रन्थान्तरम्--

श्रीविष्णोः श्रवणे परीक्षिदभवद्वैयासकिः कीर्त्तने,
प्रह्लादः स्मरणे तदङ्घ्रिभजने लक्ष्मीः पृथुः पूजने ।
अक्रूरस्त्वभिवन्दने कपिपतिर्द्दास्येऽथ सख्येऽर्ज्जुनः,
सर्व्वस्वात्मनिवेदने बलिरभूत् कृष्णाप्तिरेषां परम् ॥५५

टीका--श्रीविष्णोः श्रवणे गुणादि-श्रवणे परीक्षित् नृपतिः कृष्णाप्तिः अभवत् कीर्त्तने तच्चरितादि कीर्त्तने वैयासकिः, स्मरणे प्रह्लादः, तदङ्घ्रिभजने चरणसेवने लक्ष्मीः, पूजने पृथुः वेणनन्दनः, तु अभिवन्दने प्रणमने अक्रूरः, दास्ये कपिपतिः पवननन्दनः, सख्ये अर्ज्जुनः; सर्व्वस्वात्म-निवेदने बलिः अभूत्, अतएव एषां नवविधसाधकानां कृष्णाप्तिः परं अभूत् ॥५५॥

श्रीभगवान् के गुणादि श्रवण में परीक्षित्, चरित्र कीर्त्तन में शुकदेव, प्रह्लाद--स्मरण में चरण सेवन में लक्ष्मी, पूजन में वेणनन्दन पृथु, प्रणमन में अक्रूर, दास्य में कपिपति पवननन्दन, सख्य में अर्जुन आत्मनिवेदन में बलि--निष्ठाशील थे, एवं उक्त निज निज नैष्ठिक साधनों से ही कृष्ण प्राप्ति भी हुई। इन सब के साधन ही परम श्रेष्ठ है ॥५५॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (९।४।१८)—

स वै मनः कृष्णपदारविन्दयो-
र्व्वचांसि वैकुण्ठगुणानुवर्णने ।
करौ हरेर्म्मन्दिरमार्ज्जनादिषु,
श्रुतिञ्चकाराच्युतसत्कथोदये ॥५६॥

टीका—सः अम्बरीषः वै निश्चितं कृष्णपदार-विन्दयोः मनः, वैकुण्ठगुणानुवर्णने वचांसि, हरिमन्दिर-मार्ज्जनादिषु करौ, च, तथा अच्युतसत् कथोदये श्रुति चकार ॥५६॥

श्रीमद् भागवत के ९।४।१८ में उक्त हैं—महाराज अम्बरीष कृष्ण पाद पद्म में मन, वैकुण्ठ गुण कीर्त्तन में वचन, हरिमन्दिर मार्जन में करद्वय एवं अच्युत की सत् कथा श्रवण में कर्णयुगल को नियुक्त किये थे ॥५६॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (९।४।१९)—

मुकुन्दलिङ्गालयदर्शने दृशौ,
तद्भृत्यगात्रस्पर्शेऽङ्गसङ्गमं ।
घ्राणञ्च तत्पादसरोजसौरभे,
श्रीमत्तुलस्या रसनां तदर्पिते ॥५७॥

टीका—मुकुन्दलिङ्गालयदर्शये मुकुन्दप्रतिमा-गृहावलोकने दृशौ नयने, तद्भृत्यगात्रस्पर्शे साधु-जनानामङ्गसंस्पर्शे अङ्गसङ्गमं, श्रीमत्तुलस्याः तत्-पादसरोजसौरभे तच्चरणाब्जसम्पर्कजातसौरभे घ्राणं, तदर्पिते अन्नादौ रसनां चकार ॥५७॥

भा० ९।४।१९ में उक्त हैं---नृपति अम्बरीष मुकुन्द निकेतन दर्शन में नेत्र साधुवृन्द के देह स्पर्श में अङ्ग भगवच्चरण कमल सम्पृक्त तुलसी गन्ध ग्रहण में नासिका एवं भगवन्निवेदित अन्न के आस्वादन ग्रहण में रसना को नियुक्त किये थे ॥५७

तथाहि श्रीमद्भागवते (९।४।१८)--

पादौ हरेः क्षेत्रपदानुसर्पणे,
शिरो हृषीकेशपदाभिवन्दने ।
कामञ्च दास्ये न तु कामकाम्यया,
यथोत्तमा श्लोकजनाश्रया रतिः ॥५८॥

टीका—हरेः क्षेत्रपदानुसर्पणे तीर्थादिस्थल-गतौ पादौ, हृषीकेशपदाभिवन्दने शिरः, दास्ये कामं न तु कामकाम्यया, कथञ्चकार ?--उत्तमा श्लोक-जनाश्रया रतिः यथा स्यात्तथा चकार ॥५८॥

श्रीमद् भागवत के ९।४।१८ में उक्त है--जिस से भक्त जनाश्रित निष्काम प्रीति लाभ हो तज्जन्य

अम्बरीष भगवत्तीर्थ स्थलादि गमन में निज पद द्वयको, श्रीहरि चरणाभिवन्दन में मस्तक की नियुक्त किये थे, नृपति निज भोग वासना को परित्याग करके केवल प्रभु के प्रसाद अङ्गीकार कर दास्य सेवार्थ विषय ग्रहण करते थे ।।५८।।

कामत्यागी कृष्ण भजे शास्त्र आज्ञा मानि ।
देवऋषि पित्रादिकेर कभु नहे ऋणी ।।७७

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।५।४१)—

जनकं प्रति करभाजनवाक्यम्—

देवर्षिभूताप्तनृणां पितृणां,
न किङ्करो नायमृणी च राजन् ।
सर्व्वात्मना यः शरणं शरण्यं,
गतो मुकुन्दं परिहृत्य कर्त्तं ।।५९।।

टीका--हे राजन् ! यः कर्त्तं शास्त्रविहित-कृत्यं परिहृत्य विहाय सर्व्वात्मना शरण्यं मुकुन्दं शरणं गतः, अयं सः देवर्षिभूताप्तनृणां ऋणी न, च पुनः किङ्करो न भवेत् ।।५९।।

श्रीमद् भागवत के ११।५।४१ में कर भाजन जनक को कहे थे--हे राजन् ! जो शास्त्र निर्दिष्ट कृत्यादि वर्जन पूर्वक सर्वदा मुकुन्द देवकी शरणागत हुये हैं, वे देव, मुनि, प्राणी, कुटुम्ब एवं पित्रादि यावतीय ऋण से मुक्त हैं, एवं किसी के भृत्य नहीं है ।।५९।।

विधि धर्म्म छाड़ि भजे कृष्णेर चरण ।
निषिद्ध पापाचारे तार कभु नहे मन ।।७८
अज्ञाने वा हय यदि पाप उपस्थित ।
कृष्ण तारे शुद्ध करे ना कराय प्रायश्चित ।७९

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।५।४२)

स्वपादमूलं भजतः प्रियस्य,
त्यक्तान्यभावस्य हरिः परेशः ।
विकर्म्म यच्चोत्पतितं कथञ्चिद्,
धुनोति सर्व्वं हृदि सन्निविष्टः ।।६०।।

टीका—स्वपादमूलं स्वीयचरणं भजतः आराधयतः प्रियस्य भक्तजनस्य यच्च विकर्म्म पातकं कथञ्चित् भ्रान्त्या उत्पतितं स्यात्, परेशः हरिः हृदि सन्निविष्टः प्रादुर्भूतः सन् तत् सर्व्वं धुनोति दूरीकरोति । प्रियस्य कीदृशस्य ?—त्यक्तान्यभावस्य त्यक्तः अन्यस्मिन् देवतान्तरे देहादौ वा भावो येन सः तस्य ।।६०।।

श्रीमद् भागवत के ११।५।४२ में लिखित है-भगवच्चरणारविन्द का भजन परायण प्रिय भक्त में यदि प्रमाद से कदाच किसी प्रकार पाप उपस्थित होता है तो, भक्तवत्सल परमेश्वर हरि तदीय हृदय में आविर्भूत होकर उस पाप को विनाश करते हैं।६०

ज्ञान वैराग्य भक्तिर कभु नहे अङ्ग ।
अहिंसा नियमादि बुले कृष्ण भक्त सङ्ग ।८०

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२०।३१)--

तस्मान्मद्भक्तियुक्तस्य योगिनो वै मदात्मनः ।
न ज्ञानं न च वैराग्यं प्रायः श्रेयो भवेदिह ।।६१।।

टीका—तस्माद्धेतोः मद्भक्तियुक्तस्य मदात्मनः योगिनः वै निश्चितं ज्ञानं न विना च वैराग्यं न विना इह संसारे प्रायः श्रेयः भवेत् ।।६१।।

श्रीमद् भागवत के ११।२०।३१ में उक्त है—मुझ को अर्पित मना भक्ति निष्ठ योगी का ज्ञान एवं गृह वर्जनादि रूप वैराग्य व्यतीत इस जगत में प्राय ही मङ्गल लाभ होता है ।।६१।।

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे साधनभक्ति-लहर्य्यां द्वयधिकशताङ्कधृतस्कान्दवचनम्—

एते न ह्यद्भुता व्याध तवाहिंसादयो गुणाः ।
हरिभक्तिप्रवृत्ता ये न ते स्युः परतापिनः ।।६२।।

टीका—हे व्याध ! तव एते अहिंसादयो गुणाः न अद्भुताः विस्मयकरा हि यतः ये जना हरिभक्ति-प्रवृत्ताः सन्ति, ते परतापिनः न स्युः ।।६२।।

हे व्याध ! तुम्हारे में अहिंसादि गुण विस्मय जनक नहीं हैं । कारण, जो हरिभक्ति में प्रवृत्त हैं

वे कदाच अन्य को सन्ताप प्रदान नहीं करते हैं ।।६२

विधि भक्ति साधनेर कहिल विवरण ।
रागात्मिका भक्तिर लक्षण शुन सनातन ।८१
रागानुगा भक्ति मुख्या व्रजवासी जने ।
तार अनुगत भक्तिर रागानुगा नामे ।।८२

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे साधनभक्ति-लहर्य्यां चतुरधिकशत-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्-

इष्टे स्वारसिकी रागः परमाविष्टता भवेत् ।
तन्मयी या भवेद्भक्तिः सात्र रागात्मिकोदिता ।६३

टीका—इष्टे वाञ्छित पदार्थे स्वारसिकी स्वाभाविकी परमा मनोरागादिचेष्टा समन्विता या आविष्टता प्रगाढ़पिपासा, सा रागः भवेत् । या भक्तिः तन्मयी भवेत्, अत्र साधनभक्तिलक्षणे सा रागात्मिका उदिता अभिहिता ।।६३।।

वाञ्छित पदार्थ में स्वाभाविकी जो प्रगाढ़ पिपासा है, वही राग है । उस प्रकार रागयुक्त जो भक्ति है, साधन भक्ति लक्षण में वही रागात्मिका भक्ति कही जाती है ।।६३।।

इष्टे गाढ़तृष्णा राग स्वरूपलक्षण ।
इष्टे आविष्टता तटस्थ लक्षण कथन ।।८३
रागमयी भक्तिर हय रागात्मिका नाम ।
ताहा शुनि लुब्ध हय कोन् भाग्यवान् ।।८४
लोभे व्रजवासीर भावे करे अनुगति ।
शास्त्रयुक्ति नाहि माने रागानुगार प्रकृति ।८५

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे साधनभक्ति-लहर्य्यां त्र्यधिकशत-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्-

विराजन्तीमभिव्यक्तं व्रजवासिजनादिषु ।
रागात्मिकामनुसृता या सा रागानुगोच्यते ।।६४।।

टीका—या भक्तिः व्रजवासिजनादिषु अभिव्यक्तं यथा स्यात्तथा विराजन्तीं रागात्मिकां भक्ति अनुसृता स्यात्, सा रागानुगा उच्यते कथ्यते ।।६४।।

व्रज जन में रागात्मिका भक्ति सुस्पष्ट शोभित है । रागात्मिका का अनुसरण करने से ही उस भक्ति को रागानुगा कहते हैं ।।६४।।

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे साधनभक्ति-लहर्य्यां अष्टादशाधिकशत-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्

तत्तद्भावादिमाधुर्य्ये श्रुते धीर्यदपेक्षते ।
नात्र शास्त्रं न युक्तिञ्च तल्लोभोत्पत्तिलक्षणं ।।६५

टीका—तत्तद्भावादिमाधुर्य्ये श्रुते धीः बुद्धिः यत् भावादिमाधुर्य्यं अपेक्षते, अत्र विषये शास्त्रं न युक्तिञ्च न अपेक्षते, तल्लोभोत्पत्तिलक्षणं उच्यते ।६५

व्रजवासी साधु वृन्द के निकट से अथवा शास्त्र से सख्यादि भाव माधुर्य्य सुनकर शास्त्र युक्ति की अपेक्षा न करके तत्तत् भाव माधुर्य्य लाभ हेतु जो वासना होती है, वही लोभोत्पत्ति लक्षण है ।।६५।।

वाह्य अन्तर इहार दुइत साधन ।
वाह्ये साधक-देहे करे श्रवण कीर्त्तन ।।८६
मने निज सिद्ध देह करिया भावन ।
रात्रि दिने करे व्रजे कृष्णेर सेवन ।।८७

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे साधनभक्ति-लहर्य्यां अष्टादशाधिकशत-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्

सेवा साधकरूपेण सिद्धरूपेण चात्र हि ।
तद्भावलिप्सुना कार्य्या व्रजलोकानुसारतः ।।६६।।

टीका—तद्भावलिप्सुना व्रजभावेच्छुना साधकेन व्रजलोकानुसारतः हि निश्चितं अत्र साधन विषये साधकरूपेण सिद्धरूपेण सेवा कार्य्या ।।६६।।

व्रजभावेच्छु साधक साधन विषय में निज आदर्श व्रजवासी व्यक्ति के दृष्टान्तानुसार साधक रूप निज शरीर के द्वारा एवं सिद्धरूप भावनामय मानस शरीर के द्वारा भगवान् की आराधना करें ।६६

निजाभीष्ट कृष्णप्रेष्ठ पाछे त लागिया ।
निरन्तर सबा करे अन्तर्मनाः हैञा ॥८८

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे साधनभक्तिः लहर्य्यां विंशत्यधिकशत-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्

कृष्णं स्मरन् जनञ्चास्य प्रेष्ठं निजसमीहितं ।
तत्तत्कथारतश्चासौ कुर्य्याद्वासं व्रजे सदा ॥६७॥

टीका—असौ साधक कृष्णञ्च अस्य कृष्णस्य प्रेष्ठं जनं भक्तं निजसन्निहितं स्वीयनिकटस्थं स्मरन् तत्तत्कथारतः च सन् सदा सततं व्रजे भगवन्निकेतने वासं कुर्यात् ॥६७॥

साधक भावना के द्वारा कृष्ण का एवं कृष्ण भक्त का निज निकटस्थ रूप में स्मरन् कर भगवल्लीलादि श्रवण कीर्त्तन करके निरन्तर व्रज में अवस्थान करे ॥६७॥

दास सखा पित्रादि प्रेयसीर गण ।
रागमार्गे एइ सब भावेर गणन ॥८९

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२५।३८)—

न कर्हिचिन्मत्पराः शान्तरूपे,
नङ्क्ष्यन्ति नो मेऽनिमिषो लेढ़ि हेतिः ।
येषामहं प्रिय आत्मा सुतश्च,
सखा गुरुः सुहृदो दैवमिष्टं ॥६८॥

टीका—हे शान्तरूपे जननि देवहूते ! मत्पराः मन्निष्ठाः कर्हिचित् कदाचिदपि न नङ्क्ष्यन्ति । मे मम अनिमिषः निमिषरहिता हेतिः कालचक्रं नो लेढ़ि न ग्रसति । तत्र हेतुः—येषां सम्बन्धे अहं प्रियः आत्मा, सुतः, सखा, गुरुः सुहृदः, इष्टं दैवं ॥६८॥

श्रीमद् भागवत के ३।२५।३८ में कपिल देव जननी को कहे थे—
हे शान्तरूपे जननि ! मेरे भक्त गण योग्य विषय लाभ करके कदाच उससे परिभ्रष्ट नहीं होते हैं एवं मदीय अनिमिष कालचक्र भी उन भक्त वृन्द को ग्रास करने में समर्थ नहीं होते हैं। कारण मैं उन सब के पक्ष में आत्मवत्, पुत्रवत् गुरुवत्, सुहृद् एवं इष्ट देववत् हूँ। अर्थात् मैं आत्मवत् प्रिय हूँ, पुत्रतुल्य स्नेह भाजन हूँ, सखा के समान विश्वास पात्र हूँ, गुरु के समान उपदेशक हूँ, पुत्रवत् हितकारी हूँ, एवं इष्ट देववत् पूज्य हूँ ॥६८॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे साधनभक्ति-लहर्य्यां धृतनारायणव्यूहस्तवः—

पतिपुत्रसुहृद्भ्रातृ-पितृवन्मित्रवद्धरिं ।
ये ध्यायन्ति सदोद्युक्तास्तेभ्योऽपीह नमो नमः ॥६९

टीका—ये उद्युक्ताः सेवापरायणाः हरि पतिपुत्र-सुहृद्-भ्रातृपितृवत्, तथा मित्रवत् सदा ध्यायन्ति, तेभ्यः इह अत्र नमो नमः ॥६९॥

जो सब सेवापरायण भक्तवृन्द भगवान् को पति, पुत्र, सुहृद पिता एव बन्धु मानकर निरन्तर उपासना करते हैं, मैं उन सब को नमस्कार करता हूँ ॥६९॥

एइ मत करे येबा रागानुगा भक्ति ।
कृष्णेर चरणे तार उपजाय प्रीति ॥९०
प्रेमाङ्कुरे रति भाव, हय दुइ नाम ।
याहा हैते वश हन श्रीभगवान् ॥९१
याहा हैते पाइ कृष्णेर प्रेमेर साधन ।
एइत कहिल अभिधेय-विवरण ॥९२
अभिधेय भक्ति एवे कहिल विवरण ।
संक्षेपे कहिल विस्तार ना याय वर्णन ॥९३
अभिधेय साधनभक्ति शुने येइ जन ।
अचिराते पाय सेइ कृष्णप्रेमधन ॥९४
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥९५

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे अभिधेयभक्ति तत्त्वविचारोनाम द्वाविंशः परिच्छेदः ॥२२॥



❀ त्रयोविंश परिच्छेद ❀

चिरादवत्तं निजगुप्तवित्तं,
स्वप्रेमनामामृतमत्युदारः ।
आपामरं यो विततार गौरः,
कृष्णो जनेभ्यस्तमहं प्रपद्ये ।।१।।

टीका—यः अत्युदारः वदान्यप्रवरः गौरः कृष्णः कृष्णचैतन्यः चिरात् अदत्तं निजगुप्तवित्तं स्वप्रेमनामामृतं आपामरं जनेभ्यः वितताार, अहं तं प्रपद्ये ।।१।।

जो महावदान्य प्रभु स्वीय प्रेम के सहित भगवन्नाम सुधारूप निजगुप्तधन आपामर समस्त मानव को प्रदान किये हैं, मैं उन श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु का आश्रय ग्रहण करता हूँ ।।१।।

जय जय श्रीकृष्ण-चैतन्य नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ।।१
एबे शुन भक्तिफल प्रेम प्रयोजन ।
याहार श्रवणे हय भक्तिरस ज्ञान ।।२
कृष्णे रति गाढ़ हैले प्रेम अभिधान ।
कृष्णभक्तिरसेर सेइ स्थायी भाव नाम ।।३

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे रतिभक्तिलहर्य्यां प्रथम श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

शुद्धसत्त्वविशेषात्मा प्रेमसूर्य्यांशुसाम्यभाक् ।
रुचिभिश्चित्तमासृण्यकृदसौ भाव उच्यते ।।२।।

टीका—असौ भावः कथ्यते । किम्भूतः?—शुद्धसत्त्वविशेषात्मा विमलसत्त्वगुणेन विशेषीकृतात्मा । पुनः किम्भूतः?—प्रेमसूर्य्यांशुसाम्यभाक् प्रेमरूप-सूर्य्यकिरणस्य समानधर्म्मा । पुनः कीदृशः?—रुचिभिः चित्तमासृण्यकृत् चित्तं साधकस्य मानसं मासृण्यं विमलं करोति यः सः ।।२।।

पवित्र सत्त्व गुण द्वारा आत्मा विशेषीकृत होने से, प्रेम रूप आदित्य किरण का साम्यभाव परिग्रह करने से, एवं रुचि शक्ति के प्रभाव से निर्म्मल होने से उसको भाव कहते हैं ।।२।।

एइ दुइ भावेर स्वरूप-तटस्थ-लक्षण ।
प्रेमेर लक्षण एबे शुन सनातन ।।४

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ प्रेमभक्तिलहर्य्यां प्रथम श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

सम्यङ्मसृणितस्वान्तो ममत्वातिशयाङ्कितः ।
भावः स एव सान्द्रात्मा बुधैः प्रेमा निगद्यते ।।३।।

टीका—सम्यङ्मसृणितान्तः सम्यक् प्रकारेण मसृणितं विमलीकृत स्वस्य अन्तः चित्तं येन सः, ममत्वातिशयाङ्कितः स्नेहातिशयेन समन्वितः, सान्द्रात्मा घनीभूतस्वरूपः एव भावः बुधैः सुधीभिः प्रेमा निगद्यते उच्यते ।।३।।

जिस से मन सम्यक् प्रकार से विशुद्ध होता है, जो स्नेहातिशय युक्त है, एवं जो घनीभूत ममत्व स्वरूप है, पण्डित गण तादृश भावको प्रेम कहते हैं ।३

तथाहि हरिभक्तिविलासस्यैकादशविलासे द्व्यशीत्यधिक-त्रिशताङ्कधृत-नारदपञ्चरात्रम्—

अनन्यममता विष्णौ ममता प्रेमसङ्गता ।
भक्तिरित्युच्यते भीष्मप्रह्लादोद्धवनारदैः ।।४।।

टीका—भीष्म-प्रह्लादोद्धव-नारदैः अनन्य-ममता पुनः विष्णौ प्रेमसङ्गता प्रेमसमन्विता ममता भक्तिः उच्यते कथ्यते ।।४।।

शरीरेन्द्रियादि विषयमें ममता न होकर एक मात्र ईश्वर में ममताधिक्य होने से ही भीष्म, प्रह्लाद, उद्धव, नारद प्रभृति भक्तवृन्द उसको भक्ति कहते हैं।४

कोन भाग्ये कोन जीवेर श्रद्धा यदि हय ।
तवे सेइ जीव साधुसङ्ग करय ।।५
साधुसङ्ग हैते हय श्रवण कीर्त्तन ।
साधनभक्त्येच हय सर्व्वानर्थ-निवर्त्तन ।।६
अनर्थनिवृत्ति हैले भक्ति निष्ठा हय ।
निष्ठा हैते श्रवणाद्ये रुचि उपजय ।।७
रुचिते हय तबे आसक्ति प्रचुर ।
आसक्ति हैते चित्ते जन्मे रतिर अङ्कुर ।।८
सेइ भाव गाढ़ हैले धरे प्रेम नाम ।
सेइ प्रेमा प्रयोजन सर्व्वानन्दधाम ।।९

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे प्रेमभक्ति-लहर्य्यां एकादश-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

आदौ श्रद्धा ततः साधुसङ्गोऽथ भजनक्रिया ।
ततोऽनर्थनिवृत्तिः स्यात् ततो निष्ठा रुचिस्ततः ।।
अथासक्तिस्ततो भावस्तत प्रेमाभ्युदञ्चति ।
साधकानामयं प्रेम्नः प्रादुर्भावे भवेत् क्रमः ।।५।।

टीका—भगवत्प्रेमलाभे आदौ प्रथमतः श्रद्धा, ततः साधुसङ्गः, अथ अनन्तरं भजनक्रिया, ततः अनर्थनिवृत्तिः स्यात्, ततः निष्ठा, ततः रुचिः गुणादि-श्रुतौ प्रवृत्तिः, अथ आसक्तिः गुणादिश्रवणे आग्रहः, ततः भावः स्यात्, ततः भावात् प्रेमा अभ्युदञ्चति सर्व्वथा समुदितः स्यात् । प्रेम्नः प्रादुर्भावे साधकानां अयं क्रमः भवेत् ।।५।।

प्रथम श्रद्धा, पश्चात् साधुसङ्ग अर्थात् सद् गुरु सङ्ग, तदनन्तर साधन प्रवृत्ति, पश्चात् असत्क्रिया कापटचादि निवृत्ति, तदनन्तर निष्ठा, पश्चात् आसक्ति तदनन्तर शुद्ध भाव होता है भावोत्पत्ति होने पर प्रेमोदय होता है। भगवत् प्रेम प्राप्ति हेतु यह सोपान है ।।५।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (३·२५।२२)—

सतां प्रसङ्गान्मम वीर्यसंविदो,
भवन्ति हृत्कर्णरसायनाः कथाः ।
तज्जोषणादाश्वपवर्गवर्त्मनि,
श्रद्धारतिर्भक्तिरनुक्रमिष्यति ।।६।।

श्रीमद् भागवत के ३।२५।२२ में लिखित है: कपिल देवहूति को कहे थे—साधुव्यक्ति के सहित अर्थात् सद्गुरुके समागम होने से मेरी प्रभाव सूचक हृदय प्रीतिकर एवं श्रुति मनोहर कथा आलोचित होती है। उस का श्रवण से आशु मन सम्बन्धीय भक्ति मार्गमें क्रमशः श्रद्धा रति एवंभक्ति ये तीन का सञ्चार होता है ।।६।।

याहार हृदये एइ भावाङ्कुर हय ।
ताहाते एतेक चिह्न शास्त्रे एइ कय ।।१०

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे रतिभक्ति-लहर्य्यां एकादश श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्--

क्षान्तिरव्यर्थकालत्वं विरक्तिर्म्मानशून्यता ।
आशाबन्धः समुत्कण्ठा नाम गाने सदा रुचि ॥
आसक्तिस्तद्गुणाख्याने प्रीतिस्तद्वसतिस्थले ।
इत्यादयोऽनुभावाः स्युर्जातभावाङ्कुरे जने ।।७

टीका—जातभावाङ्कुरे जने इत्यादयः अनुभावाः स्युः । ते किं ?—क्षान्तिः क्षमा, अव्यर्थ-कालत्वं मिथ्यासमयक्षेपणाभावता, विरक्तिः विषयादि-सम्भोगे वासनाराहित्यं, मानशून्यता अभिमानराहित्यं आशाबन्धः भगवतो लाभे दृढ़ाशा, समुत्कण्ठा तत् प्राप्त्यर्थं सम्यक् लोभः, सदा सततं नामगाने रुचिः इच्छा, तद्गुणाख्याने आसक्तिः, तद्वसतिस्थले प्रीतिः स्यात् ।।७।।

जात भावाङ्कुर व्यक्तिमें इस प्रकार अनुभाव होता है। वह क्षमावान् होता है, व्यर्थ समय अतिवाहित नहीं करता है, विषय भोग की स्पृहा उसमें नहीं रहती है, एवं मैं पृथक् भोक्ता हूँ इस प्रकार अभिमान भी नहीं रहता है। भगवत् प्राप्ति हेतु तदीय अन्तर में दृढ़ आशाबद्ध मूल रहती है, एवं सम्यक् उत्कण्ठा उत्पन्न होती है। भगवान् के नाम कीर्त्तन में रुचि, गुण कथन में आसक्ति एवं भगवान् के निवास स्थल में प्रीति होती है ।।७।।

एइ नव प्रीत्यङ्कुर यार चित्ते हय ।
प्राकृतेर क्षोभे तार क्षोभ नाहि हय ॥११

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१९।१५)

तं मोपयातं प्रतियन्तु विप्रा,
गङ्गा च देवी धृतचित्तमीशे ।
द्विजोपसृष्टः कुहकस्तक्षको वा,
दशत्वलं गायत विष्णुगाथाः ॥८॥

टीका—हे विप्राः ! तं मा मां उपयातं आश्रितं प्रतियन्तु जानन्तु । मा किम्भूतं ?—ईश्वर-धृतचित्तं । च पुनः देवी गङ्गा प्रत्येतु प्रीता भवतु । द्विजोपसृष्टः मुनिक्रोधेन सञ्जातः कुहकः माया तक्षको वा मां अलं अत्यन्तं दशतु । यूयं विष्णुगाथाः गायत ।८

श्रीमद् भागवत के १।१९।१५ में परीक्षित महाराज कहे थे—हे द्विजवृन्द ! आप सब एवं गङ्गादेवी मुझको आश्रित रूपसे अङ्गीकार करें । द्विज के रोष से उत्पन्न माया हो, अथवा तक्षक ही हो, मुझको यथेष्ट दंशन करे, उसमें आप सब ध्यान न दें, आप सब विष्णु के चरित्र का गान करें ॥८॥

कृष्णेर सम्बन्ध विना काल नाहि याय ।
भुक्तिसिद्धि इन्द्रियार्थ तारे नाहि भाय ॥१२

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे रतिभक्ति-लहर्य्यां द्वादशाङ्कधृतो हरिभक्तिसुधोदयस्य द्वादशाध्यायीय अष्टत्रिंश-श्लोके—

वाग्भिस्तुवन्तो मनसा स्मरन्त-
स्तन्वा नमन्तोऽप्यनिशं न तृप्ताः ।
भक्ताः स्रवन्नेत्रजलाः समग्र-
मायुर्हरावेव समर्पयन्ति ॥९॥

टीका—भक्ताः वाग्भिः वाक्यैः अनिशं सर्व्वदा स्तुवन्तः, मनसा स्मरन्तः, तन्वा देहेन नमन्तः,अपि तृप्ताः सन्तुष्टाः न भवन्ति । स्रवन्नेत्रजलाः सन्तः समग्रं आयुः हरावेव समर्पयन्ति ॥९॥

भक्त वृन्द अहर्निश वाणी के द्वारा स्तुति करके, मनके द्वारा चिन्तन करके एवं शरीर के द्वारा प्रणति करके तृप्त नहीं होते हैं । वे अश्रुवारि विसर्ज्जन करते करते समस्त परमायु भगवान् के निमित्त अर्पण करते हैं ॥९॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (५।१४।४३)—

यो दुस्त्यजान् दारसुतान् सुहृद्राज्यं हृदिस्पृशः ।
जहौ युवैव मलवदुत्तमश्लोकलालसः ॥१०॥

टीका—यः उत्तमश्लोकलालसः भगवल्लाभकामः सन् युवैव यौवनावस्थोऽपि दुस्त्यजान् हृदिस्पृशः मनोरमान् दारसुतान् कलत्रपुत्रादीन् तथा सुहृद्राज्यं मलवत् पुरीषवत् जहौ तत्याज ॥१०॥

श्रीमद् भागवत के ५।१४।४३ में लिखित हैं,-- भरत नृपति भगवत् प्राप्ति कामना से यौवनावस्था में ही अभिलषित एवं दुष्परिहार्य्य दारा, पुत्र, बन्धु, राज्य प्रभृति समस्त को पुरीषवत् विसर्जन किये थे ॥१०॥

सर्व्वोत्तम आपनाके हीन करि माने ।
कृष्ण कृपा करिबेन दृढ़ करि माने ॥१३

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे रतिभक्ति-लहर्य्यां पञ्चदशाङ्कधृतपद्मपुराणम्—

हरौ रतिं वहन्नेषो नरेन्द्राणां शिखामणिः ।
भिक्षामटन्नरिपुरे श्वपाकमपि वन्दते ॥११॥

टीका—एषः भरतः नरेन्द्राणां शिखामणिः अपि हरौ ईश्वरे रतिं स्पृहां वहन् अरिपुरे शत्रोरागारे भिक्षां अटन् प्रार्थयन् सन् श्वपाकमपि चण्डालमपि वन्दते प्रणमते ॥११॥

हरौ रतिं वहन्नेषो नरेन्द्राणां शिखामणिः ।
भिक्षामटन्नरिपुरे श्वपाकमपिवन्दते ॥

भरत नृपति राजकुल चूड़ामणि होकर भी भगवान् हरि में आसक्त होकर शत्रु के गृह में भिक्षा करने में एवं चण्डाल को प्रणाम करने में अपने को अपमानित बोध नहीं करते ॥११॥

तथाहि श्रीरूपगोस्वामिनोक्तम्—

न प्रेम श्रवणादिभक्तिरपि वा योगोऽथवा वैष्णवो,

ज्ञानं वा शुभकर्म्म वा कियदहो सज्जातिरप्यस्ति वा।
हीनार्थाधिकसाधके त्वयि तथाप्यच्छेद्यमूला सती,
हे गोपीजनवल्लभ व्यथयते हाहा मदाशैव मां ॥१२

टीका—मम प्रेम नास्ति, श्रवणादिभक्तिरपि नास्ति, तथा वा योगः, अथवा वैष्णवः वैष्णवविहित-धर्म्मः नास्ति, ज्ञानं वा कियत् ईषदपि शुभकर्म्म नास्ति, वा सज्जातिरपि नास्ति, अहो विस्मये, हे गोपीजनवल्लभ ! तथापि हीनार्थाधिकसाधके दीन-वल्लभे त्वयि अच्छेद्यमूला सती मदाशा, हा हा खेदे, मां व्यथयते ॥१२॥

न प्रेमा श्रवणादि भक्तिरपि वा योगोऽथवा वैष्णवो
ज्ञानं वा शुभकर्म वा कियदहो सज्जातिरप्यस्ति वा।
हीनार्थाधिकसाधके त्वयि तथाप्यच्छेद्यमूलासती।
हे गोपीजनवल्लभ व्यथयते हा हा मदाशैव माम् ॥

प्रेम, अथवा श्रवणादि नवविधा भक्ति, योग, वैष्णव विहित धर्म, तत्त्वज्ञान, किंवा सत् कर्म्मानुष्ठान, अथवा सज्जाति ये सब मुझ में नहीं है।

तथापि हे गोपीजन वल्लभ ! तुम को प्राप्त करने के निमित्त मदीय चित्त में अच्छेद्य मूला आशा सञ्चारित होकर वेदना प्रदान कर रही है ॥१२॥

समुत्कण्ठा हय सदा लालसा प्रधान।
नामगाने सदा रुचि लये कृष्णनाम ॥१४

तथाहि कृष्णकर्णामृते (३२)—

त्वच्छैशवं त्रिभुवनाद्भुतमित्यवेहि,
मच्चापलञ्च तव वा मम वाधिगम्यं।
तत् किं करोमि विरलं मुरलीविलासि,
मुग्धं मुखाम्बुजमुदीक्षितुमीक्षणाभ्यां ॥१३

हे हरे ! तुम्हारा कैशोर त्रिभुवन में आश्चर्य्य कर है; इस माधुर्य्य को तुम्हीं जानते हो, एवं मेरा चाञ्चल्य भी त्रिलोक में परमाद्भुत है। इन दोनों को तुम और मैं दोनों ही जानते हैं। सुतरां मैं तुम्हारे शुभ दर्शन, मुरली विलासी, वदन कमल को उत्तम रूप से नेत्र गोचर करने के निमित्त मैं किस उपाय को अवलम्बन करूँ ॥१३॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे रतिभक्ति-लहर्य्यां षोड़श श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

रोदनबिन्दुमकरन्दस्यन्दिदृगिन्दीवराद्य गोविन्द।
तव मधुरस्वरकण्ठी गायति नामावलिं बाला ॥१४

टीका—हे गोविन्द ! अद्य मधुरस्वरकण्ठी कलकण्ठी बाला श्रीमती राधा तव नामावलिं गायति। सा किम्भूता ?--रोदनविन्दुमकरन्दस्यन्दिदृगिन्दीवरा रोदनस्य क्रन्दनस्य विन्दवः नेत्रजलानि नान्येव मकरन्दाः कुसुमरसाः तान् स्यन्दति या दृक् नेत्रं सा एव इन्दीवरं नीलोत्पलं यस्याः सा ॥१४॥

हे गोविन्द ! बालिका श्रीमती राधिका के नीलपद्म सदृश नयन युगल से मकरन्द बारि विन्दु विगलित हो रही हैं, एवं वह मधुरस्वर से तुम्हारी नामावली का कोर्त्तन कर रही है ॥१४॥

कृष्णगुणाख्याने करे सर्व्वदा आसक्ति।
कृष्णलीलास्थाने करे सर्व्वदा वसति ॥१५

तथाहि कृष्णकर्णामृत(९२) विल्वमङ्गलवाक्यम्—

मधुरं मधुरं वपुरस्य विभो-
मधुरं मधुरं वदनं मधुरं।
मधुगन्धि मृदुस्मितमेतदहो,
मधुरं मधुरं मधुरं मधुरं ॥१५॥

अहो ! भगवान् कृष्ण के देह अतीव मधुर है, अनन्त कमल अतीव मधुर है, मृदु हास्य भी मनोहर मधु गन्धि है, आश्चर्य्य है,—इनके समस्त ही मधुर मधुर मधुर हैं ॥१५॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे साधनभक्ति-लहर्य्यां पञ्चदश श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

कदाहं यमुनातीरे नमामि तव कीर्त्तयन्।
उद्वाष्पः पुण्डरीकाक्ष रचयिष्यामि ताण्डवं ॥१६॥

टीका—हे पुण्डरीकाक्ष ! यमुनातीरे कालिन्दीकूले कदा कस्मिन् समये अहं तव नामानि कीर्त्तयन् उद्वाष्पः सन् ताण्डवं नृत्यं रचयिष्यामि ॥१६

हे पद्मपलाश लोचन ! कब मैं कालिन्दी कुल

में तुम्हारी नामावली का गान करके आनन्दाश्रु मोचन करते करते नृत्य करूँगा ॥१६॥

कृष्णे रतिर चिह्न एइ कैल विवरण।
कृष्णप्रेमेर चिह्न एवे शुन सनातन ॥१६

तार चित्ते कृष्णप्रेम करये उदय।
तार वाक्य क्रिया मुद्रा विज्ञे ना बुझय ॥१७

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे प्रेमभक्तिलहर्यां द्वादश श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

धन्यस्यायं नवप्रेमा यस्योन्मीलति चेतसि।
अन्तर्व्वाणीभिरप्यस्य मुद्रा सुष्ठु सुदुर्गमा ॥१७॥

टीका—यस्य धन्यस्य कृतार्थस्य कस्यचित् साधकस्य चेतसि हृदये अयं नवप्रेम उन्मीलति, अस्य अन्तर्व्वाणीभिः सह मुद्रा सुष्ठु सुदुर्गमा स्यात् ॥१७॥

जिस साधक के हृदय में नव प्रेम का सञ्चार होकर उसको कृतार्थ किया है। उसका व्यवहार अतीव सुदुर्गम है, अर्थात् चेष्टा सहसा बोधगम्य नहीं होता है ॥१७॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।४०)—

एवं व्रतः स्वप्रियनामकीर्त्त्या,
जातानुरागो द्रुतचित्त उच्चैः।
हसत्यथो रोदिति रौति गाय-
त्युन्मादवन्नृत्यति लोकवाह्यः ॥१८॥

इस प्रकार भक्तजन निज प्रियतम हरि के नाम कीर्त्तन करते करते प्रेमोत्पत्ति हेतु द्रवित हृदय होकर उन्मादवत् कभी उच्चैःस्वर से हास्य, क्रन्दन, आक्रोशन, गान, एवं नृत्य करता रहता है ॥१८॥

प्रेम क्रमे बाड़ि हय स्नेह मान प्रणय।
राग अनुराग भाव महाभाव हय ॥१८
यैछे वीज इक्षुरस गुड़ खण्ड सार।
शर्करा सिता मिछरि शुद्ध मिछरि आर ॥१६
इहा यैछे क्रमे क्रमे निर्म्मल बाड़े स्वाद।
रति प्रेमादि तैछे बाड़ये आस्वाद ॥२०

अधिकारी भेदे रति पञ्च प्रकार।
शान्त दास्य सख्य वात्सल्य मधुर आर ॥२१

एइ पञ्च स्थायी भाव हय पञ्चरस।
ये रसे भक्त सुखी, कृष्ण हय वश ॥२२
प्रेमादिक स्थायी भाव सामग्री मिलने।
कृष्णभक्तिरसरूपे पाय परिणामे ॥२३
विभाव अनुभाव सात्त्विक व्यभिचारी।
स्थायि भाव रस हय एइ चारि मिलि ॥२४
दधि येन खण्ड मरिच कर्पूर मिलने।
रसालाख्य रस हय अपूर्व्वास्वादने ॥२५
द्विविध विभाव आलम्बन उद्दीपन।
वंशीस्वरादि उद्दीपन, कृष्णादि आलम्बन ।२६

अनुभाव स्मित नृत्य गीतादि उद्भास्वर।
स्तम्भादि सात्त्विक अनुभावेर भितर ॥२७
निर्व्वेद हर्षादिते तेत्रिश व्यभिचारी।
सब मिलि रस हय चमत्कारकारी ॥२८
पञ्चविध रस शान्त दास्य सख्य बातसल्य।
मधुर नाम श्रृङ्गार सबाते प्राबल्य ॥२६
शान्तरसे शान्ति रति प्रेम पर्य्यन्त हय।
दास्य रति राग पर्य्यन्त क्रमेते बाड़य ॥३०
सख्य वात्सल्य रति पाय अनुरागसीमा।
सुवलाद्येर भाव पर्य्यन्त प्रेमेर महिमा ॥३१
शान्तादि रसेर योग वियोग दुइ भेद।
सख्य वात्सल्य योगादिर अनेक विभेद ॥३२
रूढ़ अधिरूढ भाव केवल मधुरे।
महिषीगणे रूढ़ अधिरूढ़ गोपिकानिकरे ॥३३
अधिरूढ़ महाभाव दुइत प्रकार।
सम्भोगे मादन, विरहे मोहन नाम तार ।३४

मादने चुम्बनादि हय अनन्त विभेद ।
उद्घूर्णा चित्रजल्प मोहन दुइ भेद ।।३५
चित्रजल्प दश अङ्ग प्रजल्पादि नाम ।
भ्रमरगीता दश श्लोक ताहाते प्रमाण ।।३६
उद्घूर्णाविरह-चेष्टा दिव्योन्माद नाम ।
विरहे कृष्णस्फूर्त्ति आपनाके कृष्णज्ञान ।।३७
सम्भोग विप्रलम्भ द्विविध शृङ्गार ।
सम्भोग अनन्त अङ्ग नाहि अन्त तार ।।३८
विप्रलम्भ चतुर्व्विध पूर्व्वराग मान ।
प्रवासाख्य आर प्रेम-वैचित्र आख्यान ।।३९
राधिकाद्ये पूर्व्वराग प्रसिद्ध प्रवास माने ।
प्रेम-वैचित्त्य श्रीदशमे महिषीगणे ।।४०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।९०।१५)—

कुररि विलपसि त्वं वीतनिद्रा न शेषे,
स्वपिति जगति रात्र्यामीश्वरो गुप्तबोधः ।
वयमिव सखि कच्चिद्गाढ़निर्व्विद्धचेता,
नलिननयनहासोदारलीलेक्षितेन ।।१९

टीका—हे सखि कुररि ! ईश्वरः कृष्णः रात्र्यां निशि गुप्तबोधः सन् स्वपिति शेते । जगति त्वमेव एका वीतनिद्रा जागरिता सती न शेषे, त्वं विलपसि, हे सखि ! त्वं वयमिव नलिननयनहासोदारलीलेक्षितेन नलिननयनस्य कमललोचनस्य हरेः हासेन सहितं उदारं यत् लीलेक्षितं तेन कच्चित् गाढ़-निर्व्विद्धचेता असि ।।१९।।

श्रीकृष्ण महिषी वृन्द कुररी नाम्नी विहङ्गिनी को सम्बोधन कर बोली थीं—हे सखि कुररि ! रात्रि में हमारे ईश्वर कृष्ण गाढ़ निद्रित हैं, किन्तु तुम जागरित होकर उच्चैःस्वर से विलाप कर उनकी निद्राभङ्ग कर रही हो, यह तुम्हारा अनुचित है। किंवा समझ गई हूँ—तुम्हारा दोष नहीं है। श्रीकृष्ण के हास्य पूर्ण कटाक्ष के द्वारा हम सब के

समान तुम्हारा मन भी गाढ़ रूप से बिद्ध हो गया है ।।१९।।

व्रजेन्द्रनन्दन कृष्ण नायक-शिरोमणि ।
नायिकार शिरोमणि राधा ठाकुराणी ।।४१

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे विभाव-लहर्य्यां सप्तम-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

नायकानां शिरोरत्नं कृष्णस्तु भगवान् स्वयं ।
यत्र नित्यतया सर्व्वे विराजन्ते महागुणाः ।।२०

टीका—भगवान् कृष्णस्तु स्वयं नायकानां शिरोरत्नं, यत्र कृष्णे नित्यतया नित्यत्वेन सर्व्वे महागुणाः विराजन्ते ।।२०।।

नायकानां शिरोरत्नं कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् ।
यत्र नित्यतया सर्वे विराजन्ते महागुणाः ।।

भगवान् श्रीकृष्ण,--स्वयं नायक कुल शिरोमणि है, उनमें सर्वविध महागुण सर्वदा विराजित हैं ।।२०

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे विभाव-लहर्य्यां धृत बृहद्गौतमीयतन्त्रम्—

देवी कृष्णमयी प्रोक्ता राधिका सर्व्वथाधिका ।
सर्व्वलक्ष्मीमयी सर्व्वकान्तिः सम्मोहिनी परा ।।२१

देवी कृष्णमयी प्रोक्ता राधिकासर्वथाधिका,
सर्व लक्ष्मीमयी सर्वकान्तिः सम्मोहिनी परा ।।

देवी श्रीमती राधिका-कृष्णमयी परदेवता सर्वलक्ष्मीमयी, सर्वकान्ति,सम्मोहिनी एवं परानामसे अभिहिता है ।।२१।।

अनन्त कृष्णेर गुण चौषट्टि प्रधान ।
एक एक गुण शुनि जुड़ाय भक्त काण ।।४२

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे विभाव-लहर्य्यां एकादशाङ्कधृत-सप्तम श्लोकेषु श्रीरूपगोस्वामि वाक्यम्—

अयं नेता सुरम्याङ्गः सर्व्वसल्लक्षणान्वितः ।
रुचिरस्तेजसा युक्तो बलीयान् वयसान्वितः ।
विविधाद्भुतभाषावित् सत्यवाक्यः प्रियम्वदः ।

वावदूकः सुपाण्डित्यो बुद्धिमान् प्रतिभान्वितः ॥
विदग्धश्चतुरो दक्षः कृतज्ञः सुदृढ़व्रतः ।
देशकालसुपात्रज्ञः शास्त्रचक्षुः शुचिर्व्वशी ।
स्थिरो दान्तः क्षमाशीलो गम्भीरो धृतिमान् समः।
वदान्यो धार्म्मिकः शूरः करुणो मान्यमानकृत् ।
दक्षिणो विनयी ह्रीमान् शरणागतपालकः ।
सुखी भक्तसुहृत् प्रेमवश्यः सर्व्वशुभङ्करः ॥
प्रतापी कीर्त्तिमान् रक्तलोकः साधुसमाश्रयः ।
नारीगणमनोहारी सर्व्वाराध्यः समृद्धिमान् ॥
वरीयान् ईश्वरश्चेति गुणास्तस्यानुकीर्त्तिताः ।
समुद्रा इव पञ्चाशत् दुर्व्विगाहा हरेरमी ॥२२॥

टीका—हरेः कृष्णस्य गुणाः समुद्राः इव दुर्व्विगाहाः इह प्रस्तावे अमी पूर्व्वं कथिताः पञ्चाशद्-गुणाः अनुकीर्त्तिताः कथिताः । ते के ?—अहं हरिः नेता सर्व्वेषामधिनायकः, वयसा अन्वितः कैशोर-वयस्कः, वावदूकः सुवाग्मी, विदग्धः नानाविध-विलासशीलः, वशी विजितेन्द्रियः, दक्षिणः सौशील्य-चरितः, ह्रीमान् लज्जावान्, रक्तलोकः लोकानुरञ्जकः ईश्वरः षड़ैश्वर्य्यवान्, इति ॥२२॥

भगवान् श्रीकृष्ण—सर्वजन नायक है, मनोहराङ्ग, यावतीय सुलक्षण विशिष्ट, रुचिर, तेजस्वी, बलिष्ठ, किशोर वयस्क, नानाविध भाषाविवत्, सत्यभाषी, प्रियवादी, वाग्मी, पण्डित बुद्धिमान् प्रतिभाशाली, सुरसिक, चतुर, दक्ष, कृतज्ञ, दृढ़व्रत, देशकाल पात्रज्ञ, शास्त्र दृष्टि पवित्र, जितेन्द्रिय, स्थिर, दान्त,क्षमावान्,गम्भीर, धृतिशील, साम्य परायण, वदान्य, धर्म्मशील, शूर, दयालु, मानद, सुशील, विनयतान्, लज्जाशील, शरणागत रक्षक, सुखी, भक्त सुहृत् प्रेमवश, सर्व जन मङ्गल कारी, महाप्रतापवान्, कीर्त्तिशाली, लोकानुरञ्जक एवं साधु वृन्द के आश्रय हैं।

श्रीकृष्ण—रमणी मनोरञ्जन, सर्व जनाराध्य, महासमृद्धिमान्, सर्वश्रेष्ठ एवं स्वतन्त्र ईश्वर हैं, भगवान् कृष्ण के गुण समूह अगाध सागरवत् गभीर है, उनमें से ये पञ्चाशत संख्यक मात्र वर्णित हुये हैं ॥२२॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे विभाव-लहर्य्यां द्वादश-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

जीवेष्वेते वसन्तोऽपि बिन्दुबिन्दुतया क्वचित् ।
परिपूर्णतया भान्ति तत्रैव पुरुषोत्तमे ॥२३॥

टीका—एते पञ्चाशद्गुणाः जीवेषु क्वचित् बिन्दुबिन्दुतया वसन्तोऽपि तत्रैव पुरुषोत्तमे परिपूर्णतया भान्ति शोभन्ते ॥२३॥

जीवेष्वेते वसन्तोऽपि बिन्दुबिन्दुतया क्वचित् ।
परिपूर्णतया भान्ति तत्रैव पुरुषात्तमे ॥

पूर्व कथित पञ्चाशत प्रकार गुण किसी किसी मनुष्य में अत्यल्प अंश में विद्यमान होने पर भी पूर्ण रूप में केवलमात्र पुरुषात्तम भगवान् श्रीकृष्ण में ही शोभित है ॥२३॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे विभाव-लहर्य्यां चतुर्द्दशादि-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

अथ पञ्चगुणा ये स्युरंशेन गिरिशादिषु ।
सदा स्वरूपसंप्राप्तः सर्व्वज्ञो नित्यनूतनः ॥
सच्चिदानन्दसान्द्राङ्गश्चिदानन्दघनाकृतिः ।
स्ववशाखिलसिद्धि स्यात् सर्व्वसिद्धिनिषेवितः ॥
अथोच्यन्ते गुणाः पञ्च ये लक्ष्मीशादिवर्त्तिनः ॥
अविचिन्त्यमहाशक्तिः कोटिब्रह्माण्डविग्रहः ।
अवतारावलीबीजं हतारिगतिदायकः ॥
आत्मारामगणाकर्षीत्यमी कृष्णे किलाद्भुताः ।
सर्व्वाद्भुतचमत्कारिलीलाकल्लोलवारिधिः ॥
अतुल्यमधुरप्रेममण्डितप्रियमण्डलः ।
त्रिजगन्मानसाकर्षिमुरलीकलकूजितः ॥
असमानोर्द्ध्वरूप श्रीविस्मापितचराचरः ।
इत्यसाधारणं प्रोक्तं गोविन्दस्य चतुष्टयं ।
एवं गुणाश्चतुर्भेदाश्चतुःषष्टिरुदाहृताः ॥२४॥

टीका—कृष्णस्य ये पञ्चगुणाः गिरिशादिषु हरविरिञ्चीत्यादिषु अंशेन स्युः विद्यन्ते । ते किं ?—सदा स्वरूपसंप्राप्तः, सर्व्वज्ञः, नित्यनूतनः, सच्चिदानन्द-सान्द्राङ्गः, चिदानन्दघनाकृतिः, स्ववशाखिलसिद्धिः,

सर्व्वसिद्धिनिषेवितः स्यात् । अथ ये पञ्चगुणाः लक्ष्मीशादिवर्त्तिनः नारायणादिवर्त्तिनः उच्यन्ते अभिधीयन्ते । ते किं ?--अविचिन्त्यमहाशक्तिः अचिन्तनीयशक्तिमान्, कोटिब्रह्माण्डविग्रहः अनन्तकोटिब्रह्माण्डदेहः । अवतारावलीवीजं अवतारसमूहानां उत्पत्तिस्थानं । हतारिगतिदायकः विनाशित शिशुपालादिशत्रूणां सम्बन्धे सद्गतिप्रदः । आत्मारामगणाकर्षी योगिनामाकर्षकः, इति पञ्चगुणाः कथ्यन्ते । अमी वक्ष्यमाणाः गुणाः कृष्णे हरौ अद्भुताः किल भवन्ति । सर्व्वाद्भुतचमत्कारिलीलाकल्लोलवारिधिः सर्व्वाद्भुतानां चमत्कारिणीयाश्च लीलानां ये कल्लोलाः तरङ्गाः तेषां वारिधिः सागरतुल्यः । अतुल्यमधुरप्रेममण्डितप्रियमण्डलः अतुलनीयमधुरप्रेमभूषितभक्तमण्डलः । त्रिजगन्मानसाकर्षिमुरलीकलकूजितः त्रिजगतां मानसाकर्षिणी चित्ताकर्षिणी या मुरली वंशी तस्याः कलं कूजितं येन सः । असमानोद्र्ध्वरूपश्रीविस्मापितचराचरः नास्ति समानाऊद्र्ध्वा च यस्याः सा असमानोद्र्ध्वा सा च सा रूपश्रीश्चेति तया विस्मापितं चराचरं येनः सः । गोविन्दस्य हरेः इति चतुष्टयं असाधारणं प्रोक्तं कथितं । एवं चतुर्भेदाः चतुरधिका चतुःषष्टिः गुणाः उदाहृताः वर्णिताः ॥२४॥

श्रीगोविन्द के जो पञ्चसंख्यक गुण महेशादि में अति सामान्यांश में प्रकाशित हैं, उसका विवरण इस प्रकार है। निरन्तर मायापराभव कर स्वरूपावस्था में संस्थित, सर्वान्तर्य्यामी, सुतरां सर्ववित्, नित्यनूतन, घनीभूत सच्चिदानन्द मूर्त्ति, एवं अणिमादि यावतीय सिद्धि--उनके अनुगत हैं।

श्रीगोविन्द के जो पञ्चगुण नारायणादि में विद्यमान है, वे ये हैं—अचिन्त्य महाशक्तिमान्, अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड तदीय शरीर में निहित हैं, अखिल अवतार समूह के उत्पत्ति स्थल आप हैं, शिशुपालादि विनष्ट शत्रु समूह के सद् गति दाता, एवं आत्मा राम योगिवृन्द के भी मानसाकर्षक हैं।

वक्ष्यमाण गुण चतुष्टय केवल मात्र श्रीकृष्ण में ही चमत्कार रूप में एवं अलौकिक रूप में विद्यमान हैं, विवरण इस प्रकार है—

श्रीकृष्ण--अद्भुत एवं चमत्कारमय लीलातरङ्ग के महासागर रूप हैं, श्रीकृष्ण निज भक्तवृन्द को अनुपम मधुर प्रेम से भूषित करते हैं, श्रीकृष्ण मनोरम वंशी निनाद से त्रिभुवन के चित्ताकर्षण करते हैं, एवं उनकी रूप च्छटा से विश्व चराचर विमुग्ध होते हैं।

श्रीकृष्ण के ये चतुरधिक चतुःषष्टि संख्यक गुण वर्णित हुये हैं ॥२४॥

अनन्त गुण श्रीराधिकार पँचिश प्रधान।
सेइ गुणे वश हय कृष्ण भगवान् ॥४३

तथाहि उज्ज्वलनीलमणौ श्रीराधिकागुणकथने नवमादि-श्लोकेषु श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

अथ वृन्दावनेश्वर्य्याः कीर्त्त्यन्ते प्रवरा गुणाः।
मधुरेयं नववयाश्चलापाङ्गोज्ज्वलस्मिता॥
चारुसौभाग्यरेखाढ्या गन्धोन्मादितमाधवा।
सङ्गीतप्रवराभिज्ञा रम्यवाङ्नर्म्मपण्डिता॥
विनीता करुणापूर्णा विदग्धपाटवान्विता।
लज्जाशीला सुमर्य्यादा धैर्य्यगाम्भीर्य्यशालिनी॥
सुविलासा महाभावपरमोत्कर्षतर्षिणी।
गोकुलप्रेमवसतिर्ज्जगत्श्रेणीलसद्यशाः॥
गुर्व्वर्पितगुरुस्नेहा सखी प्रणयितावशा।
कृष्णप्रियावलीमुख्या सन्तताश्रवकेशवा ॥२४

टीका—अथ अनन्तरं वृन्दावनेश्वर्य्याः राधिकायाः प्रवराः प्रधानाः गुणाः कीर्त्त्यन्ते कथ्यन्ते। यथा—इयं श्रीपत्नी मधुरा माधुर्य्यान्विता, नववयाः नवयुवती, चलापाङ्गा चञ्चलकटाक्षा, उज्ज्वलस्मिता समुज्जलहास्यमयी, चारुसौभाग्यरेखाढ्या मनोहरकर-पदरेखादिभिः आढ्या समन्विता, गन्धोन्मादितमाधवा स्वदेहसौरभेण उन्मादितः माधवः कृष्णो यया, संगीतप्रवराभिज्ञा संगीतनिपुणा, रम्यवाक् मनोहरवचना, नर्म्मपण्डिता कौतूकादिषु विचक्षणा,

विदग्धा सुरसिका, पाटवान्विता भगवद्विषयकसुरत-कौशलपटीयसी, महाभावपरमोत्कर्ष-तर्षिणी, गोकुलप्रेमवसतिः, जगत्श्रेणी-लसद्यशाः त्रिभुवन-व्यापिनीकीर्त्तिमती, गुर्व्वर्पितगुरुस्नेहा गुरुजनानां स्नेहभागिनी, सखीप्रणयिताविवशा सखीप्रेम्णा वशीभूता, कृष्णप्रियावलीमुख्या कृष्णकान्तासु प्रवरा, सन्तता-श्रवकेशवा सततं अङ्गीकारो केशवे यस्याः सा ॥२५

उसी प्रकार अनन्त गुण सम्पन्ना श्रीराधिका के पञ्चविंशति गुण प्रधान हैं। श्रीराधिका माधुर्य्य मयी, नवयुवती, चपलनयना, एवं समुज्ज्वल हास्य-मयी हैं। तदीय कर चरण मनोहर सौभाग्य रेखा से अङ्कित हैं, तदीय अङ्ग गन्ध से केशव भी मोहित होते हैं। राधा-सुललित सङ्गीत विशारद हैं, मनोहर वचना एवं कौतुक विचक्षणा हैं, विदग्धा, सुरसिका, विनयवती, करुणामयी, रसाभिज्ञा, एवं भगवद् विषयक प्रीति विधान में पटीयसी हैं।

श्रीराधिका लज्जावती, मानदा, धैर्य्यवती एवं गाम्भीर्य्यवती, विलासमयी, एवं महाभावोत्कर्षा भिलाषिणी हैं। गोकुल ही तदीय प्रेमवसतिस्थल है, एवं जगत् में तदीय कीर्त्ति व्याप्त है।

श्रीराधिका गुरु जन की स्नेहपात्री सखी प्रेम वशगा, कृष्ण प्रेयसी वृन्द के मध्य में श्रेष्ठा एवं एक मात्र कृष्ण परायणा है ॥२५॥

नायक नायिका दुइ रसेर आलम्बन।
सेइ दुइ श्रेष्ठ राधा व्रजेन्द्रनन्दन ॥४४
एइ मत दास्ये दास सख्ये सखागण।
वात्सल्ये माता पिता आश्रावलम्बन ॥४५
एइ रस अनुभवे यैछे भक्तगण।
यैछे रस हय शुन ताहार लक्षण ॥४६

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे विभाव-लहर्य्यां चतुर्थादि-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

भक्तिनिर्धूतदोषाणां प्रसन्नोज्ज्वलचेतसां।
श्रीभागवतरक्तानां, रसिकासङ्गरङ्गिणां॥
जीवनीभूतगोविन्दपादभक्तिसुखश्रियां।
प्रेमान्तरङ्गभूतानि कृत्यान्येवानुतिष्ठतां॥
भक्तानां हृदि राजन्ती संस्कारयुगलोज्ज्वला।
रतिरानन्दरूपैव नीयमानानु रस्यतां॥
कृष्णादिभिर्विभावाद्यैर्गतैरनुभवाध्वनि।
प्रौढ़ानन्दचमत्कारकाष्ठामापद्यते परां॥२६॥

टीका—संस्कारयुगलोज्ज्वला रतिः भक्तानां कृष्णभक्तिमतां हृदि राजन्ती विराजन्ती सती अनुरस्यतां नीयमाना तु सती आनन्दरूपा एव भवति भक्तानां किम्भूतानां?—भक्तिनिर्धूतदोषाणां भक्ति-जलेन क्षालितदोषाणां। पुनः प्रसन्नोज्ज्वलचेतसां। पुनः श्रीभागवतरक्तानां गोविन्दकथासु आसक्तानां। पुनः रसिकासङ्गरङ्गिणां रसिकानां आसङ्गे भक्त-समागमे रङ्गो अनुरागो येषां। पुनः जीवनीभूत-गोविन्दपादभक्ति सुखश्रियां जीवनीभूतस्य प्राणैः सह एकीभूतस्य गोविन्दस्य हरेः पादे भक्तिसुखमेव श्रीः कल्याणरूपं येषां। पुनः कीदृशानां?—प्रेमान्तर-भूतानि कृत्यानि एव अनुतिष्ठतां अनुकुर्व्वतां। कृष्णादिभिः विभावाद्यैः करणैः गतैः अनुभवाध्वनि अनुभवमार्गे साधनकाले इत्यर्थः परां प्रवरां प्रौढ़ा-नन्दचमत्कारकाष्ठां आपद्यते लभ्यते ॥२६॥

भक्ति वारि के द्वारा जिनके दोष समूह प्रक्षालित हुये हैं, जिनके हृदय पातक रूप मलमुक्त होकर प्रसन्न एवं समुज्ज्वल हुये हैं, जो भगवत् कथा में अनुरागी एवं भक्त सङ्ग में इच्छुक हैं। जो निज प्राणके सहित भगवान् का एकीभूत करके उनके चरणों में कल्याण कर भक्ति सुख प्रदान करने में सक्षम हुये हैं, एवं जो प्रेम के अङ्ग स्वरूप सेवादि का आचरण करते रहते हैं। उन सब भक्त के हृदय मन्दिर में राधा कृष्ण की युगल भाव संस्कृता रति समुदित होकर उन सब के मन की वशीभूत करके आनन्द से प्रकाशित होती है। साधन काल में कृष्ण वर्णादि विभाव समूह दृष्ट होने पर वे चमत्कारमयी परमानन्द पराकाष्ठा को प्राप्त करते है। २६

एइ रस आस्वाद नाहि अभक्तेर गणे ।
कृष्णभक्तगण करे रस आस्वादने ॥४७

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे रससामान्य निरूपणे स्थायिभावलहर्य्यां एकसप्तति-श्लोके श्रीरूप-गोस्वामिवाक्यम्—

सर्व्वथैव दुरूहोऽयमभक्तं भंगवद्रसः ।
तत्पदाम्बुजसर्व्वस्वैर्भक्तैरेवानुरस्यते ॥२७॥

टीका—अयं भगवद्रसः अभक्तैः सर्व्वथा दुरूहः एव तत्पादाम्बुजसर्व्वस्वैः भक्तैः एव अनुरस्यते ॥२७॥

भगवद् भक्ति रूप रस अभक्त व्यक्ति के पक्ष में सर्वतोभावेन दुर्गम्य होने पर भी भगवत् पाद सर्वस्व भक्तवृन्द अनायास उसका आस्वादन प्राप्त करते रहते हैं ॥२७॥

संक्षेपे कहिल एइ प्रयोजन विवरण ।
पञ्चम पुरुषार्थ एइ कृष्णप्रेम धन ॥४८
पूर्व्वे प्रयागे आमि रसेर विचारे ।
तोमार भाइ रूपे कैल शक्ति सञ्चारे ॥४९
तुमिह करिह भक्तिशास्त्रेर प्रचार ।
मथुरार लुप्त तीर्थेर करिह उद्धार ॥५०
वृन्दावने कृष्णसेवा वैष्णव आचार ।
भक्ति स्मृति शास्त्र करि करिह प्रचार ॥५१
युक्त वैराग्यस्थिति सब शिखाइल ।
शुष्क वैराग्य ज्ञान सब निषेधिल ॥५२

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम्— (१२।१२)—

अर्ज्जुनं प्रति श्रीकृष्णवाक्यानि—

अद्वेष्टा सर्व्वभूतानां मैत्रः करुण एव च ।
निर्म्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी ॥
सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढ़निश्चयः ।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥
यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते तु यः ।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः ॥
अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः ।
सर्व्वारम्भपरित्यागी यो मे भक्त स मे प्रियः ।
यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति ।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान् यः स मे प्रियः ॥
समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः ।
शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्ज्जितः ॥
तुल्यनिन्दास्तुतिर्म्मौनी सन्तुष्टो येन केनचित् ।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान् मे प्रियो नरः ॥
ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्य्युपासते ।
श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः ।२८

टीका—सर्व्वभूतानां अद्वेष्टा, मैत्रः, करुणश्च एव च, निर्म्ममः निरहङ्कारः, समसुखदुःखः, क्षमी क्षमाशीलः, सततं लाभे ऽलाभेपि सन्तुष्टः प्रसन्नचित्तः, योगी अप्रमत्तः, यतात्मा संयतस्वभावः, दृढ़निश्चयः, मयि अर्पितमनोबुद्धिः यः मद्भक्तः, सः मे प्रियः। यस्मात् लोकः न उद्विजते भयशङ्कया क्षोभं न प्राप्नोति, यश्च लोकात् न उद्विजते, यश्च हर्षामर्ष-भयोद्वेगैः हर्षः स्वस्य इष्टलाभे उत्साहः, अमर्षः परस्य लाभे असहनं, भयं त्रासः, उद्वेगः भयादिनिमित्तचित्त-क्षोभः एतैः मुक्तः, सः मे मम प्रियः। अनपेक्षः यदृच्छया उपस्थितेऽपि अर्थे निस्पृहः, शुचिः वाह्याभ्यन्तरशौचसम्पन्नः, दक्षः अनलसः, उदासीनः पक्षपातशून्यः, सर्व्वारम्भपरित्यागी यः मद्भक्तः, सः मे प्रियः। यः प्रियं प्राप्य न हृष्यति, अप्रियं प्राप्य न द्वेष्टि, इष्टनाशे न शोचति, अप्राप्तं न काङ्क्षति, शुभाशुभपरित्यागी पुण्यपापत्यागी, यः भक्तिमान्, स मे प्रियः। शत्रौ मित्रे च तथा मानापमानयो समः एकरूपः, शीतोष्णसुखदुःखेषु समः, सङ्गविवर्ज्जितः क्वचिदपि अनासक्तः, तुल्यनिन्दास्तुतिः, मौनी संयतवाक्, येन केनचित् सन्तुष्टः, अनिकेतः नियत-वासशून्यः, स्थिरमतिः व्यवस्थितचित्तः, भक्तिमान् नरः, स मे प्रियः। ये तु यथोक्तं उक्तप्रकारं इदं धर्म्यामृतं पर्य्युपासते अनुतिष्ठन्ति श्रद्दधानाः श्रद्धां कुर्व्वन्तः, मत्परमाः मत्परायणाः भक्ताः मद्भक्ताः,

ते अतीव मे प्रियाः ॥२८॥

श्रीमद् भगवद् गीता में उक्त है—प्राणी मात्र में जिस की दृष्टि मैत्री भाव एवं करुणा है, एवं जो निर्म्मम एवं निरहङ्कार है, सुख एवं दुःख में अविचलित चित्त है, जो क्षमाशील संयतात्मा, एवं दृढ़ निश्चय है, निज मनोबुद्धि को मुझ हरिको अर्पण किया है, मद् भक्ति परायण ईदृश व्यक्ति ही मेरा प्रिय है।

जिस से कोई व्यक्ति सन्ताप प्राप्त नहीं करता है, एवं जो हर्ष विषाद, भय, एवं उद्वेग को परित्याग किया है, वही मेरा प्रिय है।

जो निरपेक्ष, शुचि, दक्ष, उदासीन, व्यथा वर्जित है, एवं सर्व्वारम्भ परित्यागी अर्थात् निज प्रतिष्ठा हेतु मठ मन्दिरादि का निर्म्माण नहीं करता है, इस प्रकार भक्त ही मेरा प्रिय है। जो हृष्ट नहीं होता, किसी के प्रति द्वेष नहीं करता, शोक नहीं करता, किसी वस्तु की आकाङ्क्षा नहीं करता एवं शुभाशुभ कर्म परित्यागी है, एतादृश भक्तिमान् पुरुष ही मेरा प्रिय है।

शत्रु एवं मित्र में समभाव सम्पन्न अर्थात् ईश्वर सर्वत्र अवस्थित हैं, इस प्रकार बुद्धि सम्पन्न है, मान, अपमान उभय में ही जिस की समान बुद्धि है, शीत उष्ण, सुख दुःख में समबुद्धि अर्थात् अविचलित चित्त है, एवं सङ्ग रहित है, निन्दास्तुति उभय में ही जिस की समान बुद्धि है, जो मौनी है, जो जिस किसी प्रकार अन्न वस्त्र लाभ से सन्तुष्ट है, जो अनिकेत एवं स्थिर मति है, इस प्रकार भक्तिमान् व्यक्ति मेरा प्रिय है।

जो व्यक्ति श्रद्धापूर्वक मत् परायण होकर पूर्वोक्त रूप धर्मामृत का पान करता है, वह भक्तिमान् व्यक्ति मेरा अतीव प्रिय है ॥२८॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।२।५)—

परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्—

चीराणि किं पथि न सन्ति दिशन्ति भिक्षां,
नैवाङ्घ्रिपाः परभृतः सरितोऽप्यशुष्यन्।
रुद्धा गुहाः किमजितोऽवति नोपसन्नान्,
कस्माद्भजन्ति कवयो धनदुर्म्मदान्धान् ॥२९॥

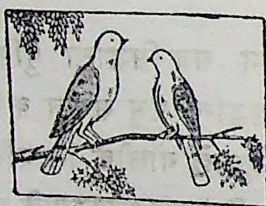
टीका—कवयः साधवः धनदुर्म्मदान्धान् कस्मात् भजन्ति? तद्धेतुमाह,—पथि चीराणि किं न सन्ति? परभृतः अङ्घ्रिपाः वृक्षाः भिक्षां भोजनार्थफलकुसुमादिकं न एव दिशन्ति न ददाति? सरितः नाद्यः अपि किं अशुष्यन् शुष्काः अभवन्? पानार्थसलिलं न दिशति इति तात्पर्य्यम्। गुहाः पर्व्वतकन्दराः किं रुद्धाः सन्ति? अजितः भगवान् उपसन्नान् आश्रितान् किं न अवति रक्षति? ॥२९॥

श्रीमद् भागवत के २।२।५ उक्त है—साधुवृन्द धन मदान्ध व्यक्ति की आराधना क्यों करेंगे। जीर्ण वस्त्रखण्ड क्या पथ में पतित नहीं है? तरुगण क्या फल कुसुमादि के द्वारा अपर का पोषण नहीं करते हैं, उन सब के निकट प्रार्थना करने से क्या फल लाभ नहीं होता है? नदी समूह क्या शुष्क हो गई हैं? पर्वत कन्दरा समूह क्या अवरुद्ध हो गये हैं? भगवान् कृष्ण क्या आश्रित व्यक्तियों की रक्षा नहीं करते हैं? ॥२९॥

तबे सनातन सब सिद्धान्त पुछिला।
भागवत सिद्धान्त प्रभु सकल कहिला ॥५३॥
हरिवंशे कहियाछे गोलोके नित्यस्थिति।
इन्द्र आसि करिल यबे श्रीकृष्णके स्तुति ॥५४॥
मौषललीला आर कृष्ण अन्तर्धान।
केशावतार आर विरुद्ध व्याख्यान ॥५५॥
महिषीहरण आदि सब मायामय।
व्याख्या शिखाइल यैछे सुसिद्धान्त हय ॥५६॥
तबे सनातन प्रभुर चरणे धरिया।
निवेदन करे दन्ते तृणगुच्छ लञा ॥५७॥
नीचजाति नीचसेवी मुञि सुपामर।
सिद्धान्त शिक्षाइले येइ ब्रह्मार अगोचर ॥५८॥

आपने कहिले एइ सिद्धान्तामृतसिन्धु ।
मोर मन छुँइते नारे इहार एक बिन्दु ॥५९
पङ्गु नाचाइते यदि हय तोमार मन ।
बर देह मोर माथे धरिया चरण ॥६०
"मुञि ये शिक्षाइनु ताहा" स्फुरुक सकल ।
एइ तोमार बर हैते हबे मोर बल ॥६१
तबे महाप्रभु ताँर शिरे धरि करे ।
बर दिल एइ सब स्फुरुक तोमारे ॥६२
संक्षेपे कहिल प्रेम-प्रयोजन-संबाद ।
विस्तारि कहने ना याय प्रभुर प्रसाद ॥६३
प्रभुर उपदेशामृत शुने येइ जन ।
अचिराते मिले तारे कृष्णप्रेमधन ॥६४
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥६५

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे प्रेमप्रयोजन-विचारो नाम त्रयोविंशतितमः परिच्छेदः ॥२३॥



चतुर्विंश परिच्छेद ।

आत्मारामेति पद्यार्कस्यार्थांशून् यः प्रकाशयन् ।
जगत्तमो जहाराव्यात् स चैतन्यो दयाचलः ॥१॥

टीका—यः चैतन्यः आत्मारामेति पद्यार्कस्य पद्यरूपसूर्य्यस्य अर्थांशून् व्याख्याकिरणान् प्रकाशयन् जगत्तमः जगतां अज्ञानतमः जहार, सः दयाचलः कृपालुः चैतन्यः अस्मान् अव्यात् अवतु ॥१॥

जिन्होंने आत्मारामादि पद्य व्याख्या रूप सूर्य्य किरण प्रकाश के द्वारा जगत् के अज्ञानान्धकार को विदूरित किया है, वह दयाचल चैतन्य देव हम सब की रक्षा करें ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
तबे सनातन प्रभुर चरणे धरिया ।
पुनरपि कहे किछु विनय करिया ॥२
पूर्व्वे शुनियाछि तुमि सार्व्वभौमस्थाने ।
एइ श्लोकेर आठार अर्थ करियाछ व्याख्याने ॥३

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।७।१०)—
शौनकादीन् प्रति सूतोक्तिः—
आत्मारामाश्च मुनयो निर्ग्रन्था अप्युरुक्रमे ।
कुर्व्वन्त्यहैतुकीं भक्तिमित्थम्भूतगुणो हरिः ॥२॥

श्रीमद् भागवत के १।७।१० में लिखित है—श्रीहरि इस प्रकार गुण सम्पन्न होते हैं कि आत्माराम सनकादि मुनिगण एवं निवृत्त हृदय ग्रन्थि शुक नारदादि मुनि गण भी उनकी अहैतुकी भक्ति करते रहते हैं ॥२॥

आश्चर्य्य शुनिया मोर उत्कण्ठित मन ।
कृपा करि कह यदि जुड़ाय श्रवण ॥४
प्रभु कहे आमि वातुल, आमार वचने ।
सार्व्वभौम वातुलता सत्य करि माने ॥५
किबा प्रलापिलाम तारे नाहि किछु मने ।
तोमार सङ्गबले यदि किछु हय मने ॥६
सहजे आमार किछु अर्थ नाहि भासे ।
तोमा सबा सङ्गबले ये किछु प्रकाशे ॥७
एकादश पद एइ श्लोके सुनिर्म्मल ।
पृथक् नाना अर्थ पदे करे झलमल ॥८
आत्मा शब्दे ब्रह्म देह मन यत्न धृति ।
बुद्धि स्वभाव एइ सात अर्थ प्राप्ति ॥९

तथाहि विश्वप्रकाशे—

आत्मा देहमनोब्रह्मस्वभाव-
धृतिबुद्धिषु प्रयत्ने च ॥३॥

टीका—देहे, मनसि, ब्रह्मणि, स्वभावे, धृतौ धैर्य्ये, बुद्धौ ज्ञाने, प्रयत्ने च आत्मा एतेषु वर्त्तते ॥३

देह, मन, ब्रह्म, स्वभाव, धृति धैर्य्य, बुद्धि एवं ज्ञान, यत्न,—आत्मा के ये सब अर्थ--होते हैं ॥३॥

एइ साते रमे येइ सेइ आत्माराम गण ।
आत्मारामगणेर आचरण करिये गणन ॥१०

मुन्यादि शब्देर अर्थ शुन सनातन ।
पृथक् पृथक् अर्थ करि पाछे करिब मिलन ॥११

मुनि शब्दे मननशील आर कहे मौनी ।
तपस्वी व्रती यति आर ऋषि मुनि ॥१२

'निर्ग्रन्था:' शब्दे कहे अविद्याग्रन्थिहीन ।
विधिनिषेध-वेदशास्त्र-ज्ञानादि-विहीन ॥१३

मूर्ख नीच म्लेच्छ आदि शास्त्ररिक्तगण ।
धनसञ्चयी निर्ग्रन्थ आर ये निर्धन ॥१४

तथाहि विश्वे—

निर्निश्चये निष्क्रमार्थे निर्निर्म्माणनिषेधयो: ।
ग्रन्थो धनेऽथ सन्दर्भे वर्णसंग्रहणेऽपि च ॥४॥

टीका—नि: शब्द निश्चये निश्चयार्थे, तथा नि: क्रमार्थे, तथा नि: निर्म्माणनिषेधयो: वर्त्तते । ग्रन्थः शब्द: धने, सन्दर्भे, वर्णसंग्रहणे च वर्त्तते ॥४॥

नि: शब्द के अर्थ निश्चय, क्रम निर्म्माण एवं निषेध अर्थ होते हैं, एवं ग्रन्थ शब्द के अर्थ धन, सन्दर्भ एवं वर्ण संग्रह होते हैं ॥४॥

उरुक्रम शब्दे कहे बड़ यार क्रम ।
क्रम शब्दे कहे एइ पादविक्षेपण ॥१५

शक्ति-कम्प परिपाटी युक्तिशक्त्ये च आक्रमण ।
चरण चालने काँपाइल त्रिभुवन ॥१६

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।७।४०)—

नारदं प्रति ब्रह्मवाक्यम्—

विष्णोर्नु वीर्य्यगणनां कतमोऽर्हतीह,
य: पार्थिवान्यपि कविर्विममे रजांसि ।
चस्कम्भ य: स्वरहसास्खलता त्रिपृष्ठं,
यस्मात् त्रिसाम्यसदनादुरुकम्पमानं ॥५॥

टीका—पार्थिवानि पृथ्वीसम्बन्धीयानि रजांसि अपि य: कवि: विममे गणितवान्, नु भो: इह संसारे तद्रूप: कतम: जन: विष्णो: वीर्य्यगणनां कर्त्तुं मर्हति ? य: विष्णु: अस्खलता प्रतिघातरहितेन स्वरहसा त्रिपृष्ठं चस्कम्भ धृतवान् । त्रिपृष्ठं किम्भूतं ?— यस्मात् त्रिसाम्यसदनात् उरुकम्पमानं धृतवान् ॥५॥

श्रीमद् भागवत के २।७।४० में उक्त है— धरणी की परमाणु की गणना करने में कोई व्यक्ति सक्षम होने पर भी भगवान् की शक्ति की वर्णना करने में कौन सक्षम होता है ? भगवान् त्रिविक्रम रूप धारण करने पर उनके अस्खलित पदवेगे त्रिगुण मयी प्रकृति का आमूल घन घन कम्पित हुआ था, उससे आप स्वयं ही सत्य लोकादि में व्याप्त होकर चराचर को धारण किये थे ॥५

विभूरूपे व्यापे शक्त्ये च धारण पोषण ।
माधुर्य्य शक्त्ये च गोलोक,ऐश्वर्य्ये परव्योम ॥१७

मायाशक्त्ये च ब्रह्माण्डादि परिपाटी सृजन ।
उरुक्रम शब्देर एइ अर्थ निरूपण ॥१८

तथाहि विश्वे—

क्रम: शक्तौ परिपाट्यां क्रमश्चालनकम्पयो: ॥६॥

टीका—क्रम: शब्द: शक्तौ शक्त्यर्थे वर्त्तते, परिपाट्यां परिपाट्यर्थे च वर्त्तते, तथा क्रम: चालक-कम्पयोश्च भवति ॥६॥

क्रम शब्द से शक्ति, परिपाटी, चालन, एवं कम्प का बोध होता है ॥६॥

कुर्व्वन्ति पद एइ परस्मैपद हय ।
कृष्णसुखनिमित्त-भजने तात्पर्य्य कहय ॥१९

तथाहि पाणिनिः—

स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले ॥७॥

टीका—स्वरितञितः स्वरितः ञितश्च धातोरात्मनेपदं भवति, कर्त्रभिप्राये क्रियाफले ॥७

उभय पदी धातु के स्वर एवं ञ इत् होने से क्रियाफलभागी यदि कर्त्ता होता है, तो वे सब धातु आतमने पदी होते हैं ॥७॥

हेतु शब्दे कहे भुक्ति आदि वाञ्छान्तरे ।
भुक्ति सिद्धि मुक्ति मुख्य ए तिन प्रकारे ॥२०
एक भुक्ति कहे भोग अनन्त प्रकार ।
सिद्धि अष्टादश, मुक्ति पञ्चबिधाकार ॥२१
एइ याँहा नाहि सेइ भक्ति अहैतुकी ।
याहा हैते वश हय श्रीकृष्ण कौतुकी ॥२२
भक्ति शब्देर अर्थ हय दशबिधाकार ।
एक साधन, प्रेमभक्ति नव प्रकार ॥२३
रतिलक्षणा प्रेमलक्षणा इत्यादि प्रचार ।
भावरूपा महाभावलक्षणारूप आर ॥२४
शान्त-भक्तेर रति बाड़े प्रेम पर्य्यन्त ।
दास्य-भक्तेर रति हय राग दशा अन्त ॥२५
सखागणेर रति अनुराग पर्य्यन्त ।
पितृ-मातृ-स्नेह-आदि अनुराग अन्त ॥२६
कान्तागणेर रति पाय महाभावसीमा ।
भक्ति शब्देर कहिल एइ अर्थेर महिमा ॥२७
"इत्थंभूतगुणः" शब्देर शुनह व्याख्यान ।
"इत्थं" शब्देर भिन्न अर्थ "गुणः" शब्देर आन ॥२८
"इत्थं" शब्देर अर्थ हय पूर्णानन्दमय ।
यार आगे ब्रह्मानन्द तृणप्राय हय ॥२९

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे भक्तिसामान्य-लहर्य्यां अष्टाविंशाङ्कधृत हरिभक्तिसुधोदयस्य(१४।२६)-

**त्वत्साक्षात्करणाह्लादविशुद्धाब्धिस्थितस्य मे ।
सुखानि गोष्पदायन्ते ब्राह्माण्यपि जगद्गुरो ।८॥**

टीका—हे भगवन् ! त्वत् साक्षात् करणाह्लादरूपविशुद्धसागरे स्थितस्य मे मम ब्राह्माणि ब्रह्मसम्बन्धीनि सुखानि गोष्पदायन्ते । यथा महासागरे विहरतः जन्तोः गोष्पदजलमकिञ्चित्करं तथा ब्राह्मसुखानि ममेति भावः ॥८॥

हे भगवन् ! जिस प्रकार महासागर में विचरण कारी जीव समूह के पक्ष में गोष्पदजल अकिञ्चित् कर बोध होता है, उस प्रकार आपके दर्शन रूप आनन्द समुद्र में विहरण शील मुझ को ब्रह्म सुख तुच्छ बोध होता है ॥८॥

सर्व्वाकर्षक सर्व्वाह्लादक महारसायन ।
आपनार वेशे करे सर्व्व विस्मारण ॥३०
भुक्ति मुक्ति सिद्धि सुख छाड़ाय यार गन्धे ।
अलौकिकशक्तिगुणे कृष्ण कृपाय बान्धे ॥३१
शास्त्रयुक्ति नाहि इहा सिद्धान्त विचार ।
एइ स्वभाव, गुणे याते माधुर्य्येर सार ॥३२
गुण शब्देर अर्थ कृष्णेर गुण अनन्त ।
सत् चित् रूप गुण सर्व्व पूर्णानन्द ॥३३
ऐश्वर्य्य माधुर्य्य कारुण्य स्वरूपपूर्णता ।
भक्तवातसल्य आत्मापर्य्यन्त वदान्यता ॥३४
अलौकिक रूप रस सौरभादि गुण ।
कारो मन कोन गुणे करे आकर्षण ॥३५
सनकादिर मन हरे सौरभादि गुण ।
शुकदेवेर मन हरे लीला श्रवण ॥३६

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।१५।४३)—

**तस्यारविन्दनयनस्य पदारविन्द-
किञ्जल्कमिश्रतुलसीमकरन्दवायुः ।**

अन्तर्गत: स्वविवरेण चकार तेषां,
संक्षोभमक्षरजुषामपि चित्ततन्वो ॥९॥

श्रीमद्भागवत के ३।१५।४३ में उक्त है—सनकादि मुनिवृन्द ब्रह्मानन्द में निमग्न होने पर भी पद्मपलाश लोचन भगवान् के चरण कमल के केशर मिश्रित तुलसी का मकरन्द वाही अनिल नासिका विवर में प्रविष्ट होने पर उन सब के चित्त में आनन्द सञ्चार हुआ एवं शरीर में पुलकोद्गम हुआ ॥९॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।१।९)—

परिनिष्ठितोऽपि नैर्गुण्ये उत्तम-श्लोकलीलया।
गृहीतचेता राजर्षे आख्यानं यदधीतवान् ॥१०॥

टीका—हे राजर्षे ! नैर्गुण्ये ब्रह्माणि परिनिष्ठितोऽपि संस्थितोऽपि उत्तमश्लोकलीलया गृहीत चेता: आकृष्ट-मना सन् यत् आख्यानं अधीतवान् ।१०

श्रीमद्भागवत के २।१।९ में लिखित है—शुकदेव परीक्षित् को कहे थे—हे राजर्षे ! निर्गुण ब्रह्म में परिनिष्ठित होने पर भी उत्तम श्लोक श्रीहरि के गुण लीलादि श्रवण से आकृष्ट मना होकर तदीय लीलामय ग्रन्थ का अध्ययन मैंने किया ॥१०॥

श्रीअङ्ग रूपे हरे गोपिकार मन।
रूपगुण श्रवणे रुक्मिण्यादि आकर्षण ॥३७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१२।१२।६९)—

स्वसुख-निभृतचेतास्तद्व्युदस्तान्यभावोऽ-
प्यजितरुचिर--लीलाकृष्टसारस्तदीयं।
व्यतनुत कृपया यस्तत्त्वदीपं पुराणं,
तमखिलवृजिनघ्नं व्याससूनुं नतोऽस्मि ॥११॥

टीका—स्वगुरुं शुकं नमस्कुर्व्वन्नेव वक्तृहृदय निष्ठा--पर्य्यालोचनया समस्तग्रन्थ तात्पर्य्यं निर्द्धारयति स्वसुखेति। स्वसुखेनैव निभृत पूर्णं यतो यस्य स.। तेनैव व्युदस्तोऽन्यस्मिन् भावो यस्य तथाभूतोऽपि अजितस्य श्रीकृष्णस्य रुचिराभिर्लीलाभिराकृष्टः सार: स्वसुखधैर्य्यं यस्य स:। एवम्भूतो य: तत्त्वदीपं परमार्थ-प्रकाशं श्रीमद्भागवतं कृपया व्यतनुत। अखिलवृजिनं तादृशभावस्य प्रतिकूल-मुदासीनञ्च सर्व्वं हन्तीति तं व्याससूनुं श्रीशुकदेवं नतोऽस्मि ॥११

श्रीमद् भागवत के १२।१२।६९ में श्रीसूत—निज गुरु श्रीशुकदेव को नमस्कार कर उनके हृदय निष्ठा की पर्य्यालोचना के द्वारा सम्पूर्ण श्रीमद्भागवत का तात्पर्य्य निर्णय करते हुये कहते हैं—जिन का चित्त ब्रह्मानन्द में निमग्न था एवं तज्जन्य द्वैतस्फूर्त्ति विलुप्त हो गई थी. इस प्रकार होने पर भी जिन्होंने श्रीकृष्ण की मनोहर लीला द्वारा ब्रह्मानन्द से आकृष्ट चित्त होकर कृपापूर्वक सर्वतत्त्व प्रकाशक भागवत पुराण का कीर्त्तन किया है, मैं निखिल पापहन्ता व्यासनन्दन शुकदेव को प्रणाम करता हूँ ॥११॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२९।३९)—

श्रीकृष्णं प्रति गोपीवाक्यम्—

वीक्ष्यालकावृतमुखं तव कुण्डलश्रि-
गण्डस्थलाधरसुधं हसितावलोकं।
दत्ताभयञ्च भुजदण्डयुगं विलोक्य,
वक्ष: श्रियैकरमणञ्च भवामो दास्य: ॥१२॥

टीका—तव अलकावृतं मुखं वीक्ष्य अवलोक्य दत्ताभय भुजदण्डयुगञ्च वीक्ष्य, श्रियैकरमणं वक्षश्च विलोक्य तव दास्य: भवाम:। मुखं पुन: किम्भूतं ? कुण्डलश्रीगण्डस्थलाधरसुधं, पुनश्च हसितावलोकं।१२

श्रीमद् भागवत के १०।२९।३९ में गोपिकाओंने श्रीकृष्ण को कही, हे कृष्ण ! तुम्हारे वदन मण्डल अलका विभूषित है, गण्डद्वय में कुण्डल श्री भी विराजित है, अधर पीयूष मण्डित है, नयन कमलों में सस्मित दर्शन है. तुम्हारे बाहु युगल अभय प्रदान कर रहे हैं, वक्ष:स्थल लक्ष्मी के निवास स्थल हैं, इन सब को देखकर हम सब की तुम्हारी दासी बनने की वासना हो रही है ॥१२॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।५२।३७)—

श्रीकृष्णमुद्दिश्य रुक्मिणीवाक्यम्—

श्रुत्वा गुणान् भुवनसुन्दर शृण्वतां ते,
निर्विश्य कर्णविवरैर्हरतोऽङ्गतापं।

रूपं दृशां दृशिमतामखिलार्थलाभं,
त्वय्यच्युताविशति चित्तमपत्रपं मे ॥१३॥

टीका—हे भुवनसुन्दर ! हे अङ्ग ! हे अच्युत ! ते तव गुणान् श्रुत्वा आकर्ण्य मे मम चित्तं अपत्रपं निर्लज्जं सत् त्वयि आविशति आसक्तं भवति। गुणान् किम्भूतान् ?—शृण्वतां कर्णविवरैः निर्व्विश्य तापं हृदयतापं हरतः। रूपं किम्भूतं ?—दृशिमतां चक्षुष्मतां दृशां अखिलार्थलाभ ॥१३॥

श्रीमद् भागवत के १०।५२।३७ में श्रीकृष्णको उद्देश्य कर रुक्मिणी बोली थीं, हे भुवन सुन्दर ! हे प्रिय ! हे अच्युत ! तुम्हारे गुण समूह श्रवण कारी के चित्त में प्रविष्ट हो कर मनस्ताप को विदूरित कर देते हैं, एवं रूप दर्शन से नयन कृतार्थ होते हैं, मदीय चित्त उस प्रकार गुण एवं रूप का श्रवण कर निर्ल्लज्ज होकर तुम्हारे प्रति अनुरक्त हो रहा है ॥१३

वंशीगीते हरे लक्ष्म्यादिकेर मन।
योग्यभावे जगतेर यत युवतीर गण ॥३८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१६।३२)—
श्रीकृष्णं प्रति नागपत्नीवाक्यम्—
कस्यानुभावोऽस्य न देव विद्महे,
तवाङ्घ्रिरेणुस्पर्शाधिकारः।
यद्वाञ्छया श्रीर्ललनाचरत्तपो,
विहाय कामान् सुचिरं धृतव्रता ॥१४॥

श्रीमद् भागवत के १०।१६।३२ हे प्रभो ! आप के पदरेणु स्पर्शाभिलाष से लक्ष्मी ललना होकर भी भोग वर्जन पूर्वक बहुकाल तपश्चरण में रत थीं, यह कालिय नामक भुजङ्ग ने किस पुण्य से उसको प्राप्त किया यह हम सबके बुद्धिका अगोचर है ॥१४॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२९।४०)—
श्रीकृष्णं प्रति गोपीवाक्यम्—
कास्त्र्यङ्ग ते कलपदामृतवेणुगीत-
सम्मोहितार्य्यचरितान्न चलेत्त्रिलोक्याम्।
त्रैलोक्यसौभगमिदञ्च निरीक्ष्य रूपं,
यद्गोद्विजद्रुममृगाः पुलकान्यबिभ्रन् ॥१५॥

टीका—हे अङ्ग ! ते तव कलपदामृतवेणु-गीतसम्मोहिता सती का स्त्री त्रिलोक्यां त्रिभुवने आर्य्यचरितात् स्वकुलधर्म्मात् न चलेत ? त्रैलोक्य-सौभगं त्रिभुवनसुन्दरं इदं तव रूपं निरीक्ष्य यद् यतः गोद्विजद्रुममृगाः पुलकानि अविभ्रन् धृतवन्तः॥१५

श्रीमद् भागवत के १०।२९।४० में उक्त है—हे प्रिय ! तुम्हारे सुधासिक्त मधुर पद समन्वित वंशीनिनाद को सुनकर विमुग्ध त्रिभुवन की कौन नारी निजकुल धर्म से विचलित नहीं होती है ? क्यों कि—तुम्हारे त्रिभुवन मोहन रूप को देखकर धेनु, हरिण, तरुलता, एवं पक्षी प्रभृति भी पुलकायित होते रहते हैं ॥१५॥

गुरुतुल्य स्त्रीगणेर वात्सल्ये आकर्षण।
दास्य सख्यादि भावे पुरुषादिगण ॥३९
पक्षी मृग वृक्ष लता चेतनाचेतन।
प्रेमे मत्त करि आकर्षये कृष्णगुण ॥४०

तथाहि पूर्व्व श्लोकस्य परार्द्धम्—
त्रैलोक्यसौभगमिदञ्च निरीक्ष्य रूपं।
यद्गोद्विजद्रुममृगाः पुलकान्यविभ्रन् ॥१६॥

भा० ३-२-१२ में उक्त हैं—भगवान् श्रीकृष्ण मर्त्यलीला के उपयोगी निज रूप प्रकट किये थे, इस में योगमाया रूप स्वरूप शक्तिकी सामर्थ्य का प्रकटन करना ही उद्देश्य था, उस रूप को देखकर श्रीकृष्ण स्वयं ही विस्मित हुये थे, वह रूप सौभाग्यातिशय की पराकाष्ठारूप है, एवं परम सुन्दर है ॥१६॥

हरि शब्दे नानार्थ दुइ मुख्यतम।
सर्व्व अमङ्गल हरे प्रेम दिया हरे मन ॥४१
यैछे तैछे योहि कोहि करये स्मरण।
चारिविध ताप तार करे संहरण ॥४२

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।१४।१९)—

उद्धवं प्रति श्रीकृष्णवाक्यम्—

यथाग्निः सुसमिद्धार्चिः करोत्येधांसि भस्मसात् ।
तथा मद्विषया भक्तिरुद्धवैनांसि कृत्स्नशः ॥१७॥

टीका—हे उद्धव ! सुसमृद्धार्चिः प्रज्वलित-शिखः अग्निः यथा एधांसि भस्मसात् करोति, तथा मद्विषया भक्तिः एनांसि कृत्स्नशः भस्मसात् करोति ॥१७॥

श्रीमत् भागवत के ११।१४।१९ में श्रीकृष्ण उद्धव को कहे हैं—हे उद्धव ! प्रदीप्तशिख अग्नि जिस प्रकार काष्ठ राशि को भस्मीभूत करता है, उस प्रकार मद् विषयिणी भक्ति अखिल पातक पुञ्जको विनष्ट करती हैं ॥१७॥

तबे करे भक्ति बाधक कर्म्म विद्या नाश ।
श्रवणाद्येर फल प्रेमा करये प्रकाश ॥४३

निज गुणे तबे हरे देहेन्द्रिय मन ।
ऐछे कृपालु कृष्ण ऐछे ताँर गुण ॥४४

चारि पुरुषार्थ छाड़ाय हरे सबार मन ।
हरि शब्देर एइ मुख्य करिल लक्षण ॥४५

अपि च दुइ शब्द अव्यय हय ।
येइ अर्थ लागाइये सेइ अर्थ हय ॥४६

तथापि चकारेर कहे मुख्य अर्थ सात ।
अपि शब्दे मुख्य अर्थ सात विख्यात ॥४७

तथाहि विश्वप्रकाशे—

चान्वाचये समाहारेऽन्योन्यार्थे च समुच्चये ।
यत्नान्तरे तथा पादपूरणे व्यवधारणे ॥१८॥

टीका—च शब्दः अन्वाचये, समाहारे समूहे, अन्योन्यार्थे इतरेतरसंयोगे, समुच्चये, यत्नान्तरे तथा पादपूरणे, व्यवधारणे च वर्त्तते ॥१८॥

च शब्द से अन्वाचय अर्थात् एकतर प्राधान्य, समूह, इतरेतर योग, संयोग, यत्न विशेष, पादपूरण एवं अव धारण का बोध होता है ॥१८॥

तथाहि विश्वप्रकाशे—

अपि सम्भावना-प्रश्न-शङ्का-गर्हा-समुच्चये ।
तथा युक्तपदार्थेषु कामचारक्रियासु च ॥१९॥

टीका—अपि शब्दः सम्भावन-प्रश्नशङ्का-गर्हासमुच्चये, तथा युक्तपदार्थेषु, कामचारक्रियासु च वर्त्तते ॥१९॥

अपि शब्द के द्वारा सम्भावना, प्रश्न, भय, निन्दा, समुच्चय, युक्तार्थ, एवं यथेच्छ क्रिया सम्पादन का बोध होता हैं ॥१९॥

एइ एकादश पदेर अर्थ निर्णय ।
एबे श्लोकार्थ करि यथा ये लागय ॥४८

ब्रह्म शब्देर अर्थ तत्त्व सर्व्व बृहत्तम ।
स्वरूप ऐश्वर्य्य करि नाहि याँर सम ॥४९

तथाहि विष्णुपुराणे प्रथमांशे (१२।३५)—

बृहत्त्वाद्बृंहणत्वाच्च तद्ब्रह्म परमं विदुः ॥२०

टीका—बृहत्त्वात् बृंहणत्वाच्च तत्पदं परमं ब्रह्म विदुः, बुधा इति शेषः ॥२०॥

जो बृहत्तम एवं व्यापक है, उसको विज्ञ व्यक्तिगण परम ब्रह्म कहते हैं ॥२०॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।४४)—

श्रीधरस्वामितन्त्रम्—

आततत्वाच्च मातृत्वादात्मा हि परमो हरिः ।२१

टीका—आततत्वात् मातृत्वाच्च हरिः परमः आत्मा हि उच्यते ॥२१॥

श्रीमद् भागवत के ११।२।४४ की स्वामिकृत टीका में उक्त है—जो विस्तृत एवं माता अर्थात् सब के रक्षक एवं साक्षिस्वरूप है, उन श्रीहरि को परमात्मा कहते हैं ॥२१॥

सेइ ब्रह्म शब्दे कहे स्वयं भगवान् ।
अद्वितीय ज्ञान याहा विना नाइ आन ॥५०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।२।११)—

वदन्ति तत्तत्त्वविदस्तत्त्वं यज्ज्ञानमद्वयम् ।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते ॥२२

श्रीमद् भागवत के १।२।११ में उक्त है-एक अद्वय ज्ञान को ही तत्त्वविद् व्यक्तिगण तत्त्व शब्द से कहते हैं, एवं वही ब्रह्म, परमात्मा, भगवान् शब्द से अभिहित है ॥२२॥

सेइ दुइ तत्त्व कृष्ण स्वयं भगवान् ।
तिनकाले सत्य सेइ शास्त्र प्रमाण ॥५१

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।९।३२)—
ब्रह्माणं प्रति श्रीभगवद्वाक्यम्—

अहमेवासमेवाग्रे नान्यद् यत् सदसत् परं ।
पश्चादहं यदेतच्च योऽवशिष्येत सोऽस्म्यहं ॥२३॥

टीका—एतदेव सम्यगुपदिशन् यावानित्यस्यार्थं स्फुटयति । अहमेवाग्रे स्रष्टेः पूर्वम्--आसम् स्थितः । नान्यत् किञ्चित् यत् सत् स्थूलम्, असत् सूक्ष्मम् परं तयोः कारणं प्रधानम् । तस्याप्यन्तर्भूखतया तदा मय्येव लीनत्वात् । अहश्चतदा आसमेव केवलं न चान्यदकरवम् । पश्चात् सृष्टेरनन्तर मप्यहमेवास्मि यदेतद्विश्वं तदप्यहमेवास्मि । प्रलये योऽवशिष्येत सोऽप्यहमेव, अनेन चानाद्यनन्तत्वात, अद्वितीयत्वाच्च-परिपूर्णोऽहमित्युक्तं भवति ॥२३॥

श्रीमद् भागवत के २।९।३२ में लिखित है, सृष्टि के पूर्व से मैं ही था, स्थूल सूक्ष्म कार्य्य कारणात्मक दृश्यमान वस्तु समूह उस समय नहीं थे। जो कुछ वर्त्तमान हैं, भविषत् में जो कुछ विद्यमान होंगे, एवं प्रलय के पश्चात् जो अवशिष्ट रहेंगे—ये सब ही मैं हूँ ॥

आत्मा शब्दे कहे कृष्ण वृहत्त्व-स्वरूप ।
तर्व्वव्यापक सर्व्वसाक्षी परम स्वरूप ॥५२

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।४४)
श्रीधरस्वामिधृततन्त्रम्—

आततत्त्वाच्च मातृत्वादात्मा हि परमो हरिः ॥२४

व्यापक एवं पालक होने के कारण श्रीहरि को ही परम आत्मा शब्द से अभिहित होते हैं ॥२४

सेइ कृष्णप्राप्ति हेतु त्रिविध साधन ।
ज्ञानयोगे भक्ति तिनेर पृथक् लक्षण ॥५३
तिन साधने भगवान् तिन स्वरूपे भासे ।
ब्रह्म परमात्मा भगवत्त्वे प्रकाशे ॥५४

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।२।११)

वदन्ति तत्तत्त्वविदस्तत्त्वं यज्ज्ञानमद्वयम् ।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते ॥२५॥

श्रीमद् भागवत के १।२।११ में लिखित है-एक अद्वय ज्ञान तत्त्व को ही तत्त्वविद् गण ब्रह्म, परमात्मा एवं भगवान् शब्द को कहते हैं ॥२५॥

ब्रह्म आत्मा शब्दे यदि कृष्णके कहय ।
रूढ़िवृत्त्ये निर्व्विशेष अन्तर्यामी कय ॥५५
ज्ञानमार्गे निर्व्विशेष ब्रह्म प्रकाशे ।
योगमार्गे अन्तर्यामी स्वरूपेते भासे ॥५६
रागभक्ति विधिभक्ति हय दुइ रूप ।
स्वयं भगवत्त्व प्रकाश दुइत स्वरूप ॥५७
रागभक्ते व्रजे स्वयं भगवान् पाय ।
विधिभक्तेच पार्षददेहे वैकुण्ठे याय ॥५८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।९।२१)—

नायं सुखापो भगवान् देहिनां गोपिकासुतः ।
ज्ञानिनाञ्चात्मभूतानां यथा भक्तिमतामिह ॥२६

श्रीमद् भागवत के १०।९।२१ में उक्त है—गोपिकासुत भगवान् श्रीकृष्ण देहाभिमानी, तपस्वी एवं देहाभिमानी शून्य ज्ञानि वृन्द के पक्ष में उस प्रकार सुखलभ्य नहीं हैं: जिस प्रकार भक्तिमान् व्यक्तिगण के पक्ष में हैं ॥२६॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।१५।२५)--

यच्च व्रजन्त्यनिमिषामृषभानुवृत्त्या,
दूरे यमा ह्युपरि नः स्पृहणीयशीलाः ।
भर्त्तुर्मिथः सुयशसः कथनानुराग--
वैक्लव्यवाष्पकलया पुलकीकृताङ्गाः ।।२७।।

टीका— नः अस्माकं उपरि उपरिस्थितं यच्च स्थानं हि निश्चितं व्रजन्ति । ते के ?—अनिमिषां सुराणां ऋषभानुवृत्त्या दूरे यमाः । पुनः स्पृहणीयशीलाः वाञ्छनीयशीलाः, किञ्च, भर्त्तुः गोविन्दस्य सुयशसः मिथः परस्परं कथनानुराग-वैक्लव्यवाष्प--कलयाः पुलकीकृताङ्गाः ।।२७।।

श्रीमद् भागवत के ३।१५।२५ में ब्रह्मा कहे थे—निखिल देवता वृन्द से श्रेष्ठ भगवान् गोविन्द की आराधना करने से जिन के निकट से यम राज दूर में पलायन किये हैं, किंवा जिन्होंने यमनियमों का पृथक् अनुष्ठान वजन किया है । "दूरेयमाः" के स्थान में "दूरेऽहमा" पाठ से जिन्होंने अहङ्कार को परित्याग किया है । जिनके करुणादि स्वभाव सब के स्पृहणीय है, वे एकत्र उपवेशन पूर्वक प्रिय श्रीहरि के सुयशः का वर्णन परस्पर करते करते विवश हो जाते हैं, नेत्र वारि वर्जन करते हैं, एवं रोमाञ्चित होते हैं । हे सुरगण ! श्रवण करें वे सब निरहङ्कार होने के कारण हम सब के उपरितन धाम को जाते हैं,अर्थात् वे सब हम सबसे श्रेष्ठ हैं ।२७

सेइ उपासक हय त्रिविधप्रकार ।
अकाम मोक्षकाम सर्व्वकाम आर ।।५९

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।३।१०)—
परीक्षितं प्रति शुकवाक्यम्—

अकामः सर्व्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः ।
तीव्रेण भक्तियोगेन यजेत पुरुषं परं ।।२८।।

श्रीमद्भागवत के २।३।१० में उक्त है--एकान्त भक्त हो, मोक्ष कामी अथवा निखिल कामना पूर्ण हो पाधिनिरु पूर्ण पुरुष भगवान् श्रीकृष्ण की आराधना तीव्र भक्ति योग के द्वारा करे ।।२८।।

बुद्धिमान् अर्थ यदि विचारज्ञ हय ।
निज काम लागि तबे कृष्णेरे भजय ।।६०
भक्ति विना कोन साधन दिते नारे फल ।
सब फल देय भक्ति स्वतन्त्र प्रबल ।।६१
अजा-गलस्तन न्याय अन्य साधन ।
अतएव हरि भजे बुद्धिमान् जन ।।६२

तथाहि श्रीमद् भगवद्गीतायाम् (७।१६)—

चतुर्व्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्ज्जुन ।
आर्त्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभः ।।२९

टीका—हे भरतर्षभ अर्ज्जुन ! चतुर्व्विधाः सुकृतिनः पुण्यवन्तः मां भजन्ते । ते के ?--आर्त्तः चौरव्याघ्रादिना अभिभूतः, जिज्ञासुः भगवत्तत्त्व-ज्ञानलिप्सुः,अर्थार्थी धर्म्मार्थेच्छुः,ज्ञानी आत्मज्ञश्च ।२९

श्रीमद् भगवद् गीता में श्रीकृष्ण अर्ज्जुन को कहे थे—हे भरतर्षभ अर्जुन ! आर्त्त अर्थात् चौर व्याघ्रादि के द्वारा अभिभूत, जिज्ञासु—तत्त्व ज्ञानाभिलाषी, अर्थेच्छु--अर्थ लिप्सु, एवं आत्मज्ञानी, ये चतुर्विध पुण्य शील व्यक्तिगण मेरा भजन करते रहते हैं ।।२९।।

आर्त्तार्थार्थी दुइ सकाम-भितरे गणि ।
जिज्ञासु ज्ञानी दुइ मोक्षकाम मानि ।।६३
एइ चारि सुकृति हये महा भाग्यवान् ।
तत्तत् कामादि छाड़ि हय शुद्ध भक्तिमान् ।६४
साधुसङ्गकृपा किवा कृष्णेर कृपाय ।
कामादि दुःसङ्ग छाड़ि शुद्धभक्ति पाय ।।६५

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१०।११)

सतसङ्गान्मुक्तदुःसङ्गो हातुं नोत्सहते बुधः ।
कीर्त्यमानं यशो यस्य सकृदाकर्ण्य रोचनं ।।३०।।

टीका—यस्य गोविन्दस्य रोचनं रुचिजनकं तथा कीर्त्यमानं यशः सकृत् आकर्ण्य श्रुत्वा बुधः

पण्डित: सत्सङ्गं हातुं न उत्सहते । बुध: किम्भूत: ? सत्सङ्गात् साधुसङ्गाद्धेतो: मुक्तदु:सङ्ग: ॥३०॥

श्रीमद् भागवत के १।१०।११ में सूत कहे थे-- जो व्यक्ति साधु सङ्ग के द्वारा विषय रूप कुसङ्ग को परित्याग किये हैं, वे साधुमुख से रुचि कर श्रीहरि की कीर्त्ति कथा को एकवार सुनकर ही सत्सङ्ग को परित्याग करने में सक्षम नहीं होते हैं। सुतरां पाण्डव गणों के पक्ष में श्रीहरि के विरह उस प्रकार असहनीय होना विचित्र नहीं है ॥३०॥

दु:सङ्ग कहि कैतव आत्मवञ्चना ।
कृष्ण, कृष्णे भक्ति विना अन्य कामना ॥६६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।२)—

धर्म्मः प्रोज्झितकैतवोऽत्र परमो निर्म्मत्सराणां सतां,
वेद्यं वास्तवमत्र वस्तु शिवदं तापत्रयोन्मूलनं ।
श्रीमद्भागवते महामुनि-कृते किंवा परैरीश्वर:,
सद्यो हृद्यवरुध्यतेऽत्र कृतिभि: शुश्रूषुभिस्तत्क्षणात् ३१

श्रीमद् भागवत के १।२ में उक्त है—महामुनि श्रीनारायण के द्वारा रचित प्रथमत: संक्षेप से रचित मनोहर श्रीमद् भागवत शास्त्र में हिंसा मत्सरतादि रहित साधु व्यक्ति गण के द्वारा परिपालनीय मोक्षाभि सन्धि रूप कपटता वर्जित परम धर्म वर्णित हुआ है। आध्यात्मिकादि त्रिताप नाशक कल्याण प्रद वास्तव वस्तु का परिज्ञान भी इस से होता है।

शास्त्र श्रवणेच्छु पुण्यात्मा व्यक्तिगण के हृदय में श्रीमद् भागवत श्रवण समकाल में ही श्रीहरि अवरुद्ध होते हैं। किन्तु अन्यान्य शास्त्र में अर्थात् उस में लिखित साधन समूह के द्वारा क्या भगवान् श्रवणकारी के हृदय में अवरुद्ध होते हैं? कभी भी नहीं ॥३१॥

प्र शब्दे मोक्षवाञ्छा कैतव प्रधान ।
एक श्लोके श्रीधरस्वामी करियाछे व्याख्यान ६७
सकामभक्त अज्ञ जानि दयालु भगवान् ।
स्वचरण दिया करे इच्छाय पिधान ॥६८

तथाहि श्रीमद्भागवते (५।१९।२६) -

श्रीकृष्णमुद्दिश्य देवस्तुति:—

सत्यं दिशत्यर्थितमर्थितोनृणां,
नैवार्थदो यत् पुनरर्थिता यत:।
स्वयं विधत्ते भजतामनिच्छता-
मिच्छापिधानं निजपादपल्लवं ॥३२॥

श्रीमद् भागवत के ५।१९।२६ में देवतागण कहे थे—ईश्वर के निकट प्रार्थना करने से ईश्वर प्रार्थी की प्रार्थना पूर्ण करते हैं, यह सत्य है, किन्तु परमार्थ प्रदान नहीं करते हैं, इस हेतु पुनर्वार उसको प्रार्थी होना पड़ता है। किन्तु कामना रहित भक्तगण प्रार्थना न करने पर भी ईश्वर स्वयं ही उन सब को सर्वकाम प्रद चरण पल्लव के द्वारा उनके कामना विवर को आच्छादित करते हैं ॥३२॥

साधुसङ्ग कृष्णसेवा भक्तिर स्वभाव ।
ए तिने सब छाड़ाय करे कृष्णे भाव ॥६९
आगे यत यत अर्थ व्याख्यान करिब ।
कृष्णगुणास्वादेर एइ हेतु जानिब ॥७०
श्लोक व्याख्या लागि एइ करिल आभाष ।
एवे करि श्लोकेर मूलार्थ प्रकाश ॥७१
ज्ञानमार्गे उपासक दुइ त प्रकार ।
केबल ब्रह्मोपासक मोक्षाकाङ्क्षा आर ॥७२
केवल ब्रह्मोपासक तिन भेद हय ।
साधक ब्रह्ममय प्राप्तब्रह्मलय ॥७२
भक्ति विना केबल ज्ञाने मुक्ति नाहि हय ।
भक्ति साधन करे एइ प्राप्तब्रह्मलय ॥७३
भक्तिर स्वभाव ब्रह्म करे आकर्षण ।
दिव्य देह दिया कराय कृष्णेर भजन ॥७४
भक्तदेह पाइले हय गुणेर स्मरण ।
गुणाकृष्ट हैया करे निर्म्मल भजन ॥७५

तथाहि भगवत्सन्दर्भे श्रीविष्णुपादाविर्भाव-
व्याख्यायाः धृतिश्रुतिः--

मुक्ता अपि लीलया विग्रहं,
कृत्वा भगवन्तं भजन्तीत्यादि । ३३॥

टीका — मुक्ताः ऋषय अपि लीलया सह विग्रहं कृत्वा भगवन्तं भजन्ति इत्यादि ॥३३॥

निर्विशेष ब्रह्म भावप्राप्त मुक्तमुनिगण भी लीला के सहित सच्चिदानन्द मूर्त्ति भावना करके गोविन्द की उपासना करते हैं ॥३३॥

जन्म हैते शुक सनकादि ब्रह्ममय ।
कृष्णगुणाकृष्ट हैया कृष्णेरे भजय ॥७६
सनकाद्येर कृष्ण कृपा-सौरभे हरे मन ।
गुणाकृष्ट हैञा करे निर्म्मल भजन ॥७७

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।१५।३४)—

तस्यारविन्दनयनस्य पदारविन्द-
किञ्जल्कमिश्रतुलसीमकरन्दवायुः ।
अन्तर्गतः स्वविवरेण चकार तेषां,
संक्षोभमक्षरजुषामपि चित्ततन्वोः ॥३४॥

श्रीमद् भागवत के ३।१५।४२ में उक्त है— सनकादि मुनिवृन्द ब्रह्मानन्द में निमग्न होने पर भी पद्म पलाश लोचन भगवान के चरण कमल के केशर मिश्रित तुलसीमकरन्द वाही अनिल नासिका छिद्र में प्रविष्ट होने पर उन सब के हृदय में आनन्द सञ्चार हुआ एवं शरीर में पुलकोद्गम हुआ था ॥३४

व्यासकृपाय शुकदेवेर लीलादि स्मरण ।
कृष्णगुणाकृष्ट हञा करेन भजन ॥७८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।७।११)—

सौनकादीन् प्रति सूतवाक्यम्—

हरेर्गुणाक्षिप्तमतिर्भगवान् बादरायणिः ।
अध्यगान्महदाख्यानं नित्यं विष्णुजनप्रियः ॥३५

टीका—भगवान् बादरायणिः शुकदेवः हरेः गोविन्दस्य गुणाक्षिप्तमतिः सन् पश्चात् महदाख्यानं अध्यगात् । सः किम्भूतः ?—विष्णुजनप्रियः भक्त-जनप्रियः ॥३५॥

श्रीमद् भागवत के १।७।११ में सूत-- शौनक प्रभृति को कहे थे—वैष्णव प्रिय भगवान् शुकदेव हरि के गुणों से आकृष्ट मना होकर ही श्रीमद्भागवत भागवत रूप हरिलीला पूर्ण विस्तृत आख्यान का अध्ययन किये थे ॥३५॥

नव योगेश्वर जन्म हैते साधक ज्ञानी ।
बिधि शिव नारद मुखे कृष्णगुण शुनि ॥७९
गुणाकृष्ट हैञा करे कृष्णेर भजन ।
एकादशस्कन्धे तार भक्तिविवरण ॥८०

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पश्चिमविभागे शान्त-भक्तिलहर्य्यां सप्तम श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्--

अक्लेशां कमलभुवः प्रविश्य गोष्ठीं,
कुर्व्वन्तः श्रुतिशिरसां श्रुतिं श्रुतिज्ञाः ।
उत्तुङ्गं यदुपुरसङ्गमाय रङ्गं,
योगेन्द्राः पुलकभृतो नवाप्यवापुः ॥३६॥

टीका—श्रुतिज्ञाः वेददर्शिनः नव योगेन्द्राः ऋषभतनयाः कमलभुवः ब्रह्मणः गोष्ठीं प्रविश्य श्रुति-शिरसां कुर्व्वन्तः सन्तः अपि यदुपुरसङ्गमाय पुलक-भृतः सन्तश्च उत्तुङ्गं रङ्गं प्रेमानन्दं अवापुः ॥३६॥

वेदज्ञ नव योगेन्द्र ब्राह्मण गोष्ठी में प्रविष्ट होकर एवं वेद के शिरोभाग स्वरूप उपनिषत् को सुनकर भी श्रीहरि के सङ्गलाभार्थ पुलकाङ्ग होकर अतीव आनन्दानुभव किये थे ॥३६॥

मोक्षाकाङ्क्षी ज्ञानी हय तिन प्रकार ।
मुमुक्षु जीवन्मुक्त प्राप्तस्वरूप आर ॥८१
मुमुक्षु जगते अनेक संसारी जन ।
मुक्ति लागि भक्त्ये करे कृष्णेर भजन ॥८२

तथाहि श्रीमद् भागवते (१।२।२६)—

मुमुक्षवो घोररूपान् हित्वा भूतपतीनथ ।
नारायणकलाः शान्ता भजन्ति ह्यनसूयवः ॥३७

टीका—मुमुक्षवः मोक्षमिच्छवः चोररूपान् तमोगुणयुक्तान् भूतपतीन् हित्वा अथ अनसूयवः देवतान्तरापवादकाः सन्तः शान्ताः शान्तिगुण-विशिष्टाः नारायणकलाः भवन्ति ॥३७॥

श्रीमद् भागवत के १।२।२६ में उक्त है मुमुक्षु व्यक्ति गण भीषणाकार पितृप्रजेशादि को वर्जन पूर्वक अथ च अन्य देवता की अवज्ञा न करके प्रशान्त मूर्त्ति नारायण के अवतार की आराधना करते हैं ॥३७॥

सेइ सबेर साधुसङ्गे गुण स्फुराय।
कृष्णभजन कराय मुमुक्षा छाड़ाय ॥८३

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पश्चिमविभागे प्रीति-भक्तिलहर्य्यां षष्ठाङ्कधृतो हरिभक्तिसुधोदयस्य (१।५०)

अहो महात्मन् बहुदोषदुष्टोऽ-
प्येकेन भात्येष भवो गुणेन।
सत्सङ्गमाख्येन सुखावहेन,
कृताद्य नो येन कृशा मुमुक्षा ॥३८॥

टीका—हे महात्मन् ! एषः भवः रुद्रः बहुदोष-दुष्टोऽपि एकेन गुणेन भाति शोभते, येन सुखावहेन सत्सङ्गमाख्येन गुणेन अद्य नः अस्माकं मुमुक्षा कृशा भवति, अहो विचित्रं ॥३८॥

हे महात्मन् ! रुद्र देव में अनेक दोष लक्षित होने पर भी एक गुण विद्यमान है। आश्चर्य्य यह है कि—आनन्दावह साधु सङ्गाख्य गुण से आज हमारी मुक्ति लघु ही रही है ॥३८॥

नारदेर सङ्गे सौनकादि मुनिगण।
मुमुक्षा छाड़िया कैल कृष्णेर भजन ॥८४

कृष्णेर दर्शने कारो कृष्णेर कृपाय।
मुमुक्षा छाड़िया गुणे भजे ताँहार पाय ॥८५

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ शान्तभक्तिलहर्य्यां त्रयोदश श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

अस्मिन् सुखघनमूर्त्तौ परमात्मनि वृष्णिपत्तने स्फुरति आत्मारामतया मे वृथा गतो बत चिरं कालः ॥३९

टीका—अस्मिन् सुखघनमूर्त्तौ घनीभूतानन्द-विग्रहे परमात्मनि ईश्वरे वृष्णिपत्तने आत्मारामतया स्फुरति सति खेदे मे मम चिरं कालः वृथा गतः ॥३९

हाय ! प्रभु के इस प्रकार सुखघन ऐश्वर्य्य विग्रह द्वारका में आत्मारामाकार में प्रकाशित होते हुये भी मेरा समय व्यर्थ नष्ट हुआ ॥३९॥

जीवन्मुक्त अनेक सेओ दुइ भेद जानि।
भक्ते च जीवन्मुक्त ज्ञाने जीवन्मुक्त मानि ॥८६

भक्तेय जीवन्मुक्त सेइ गुणे कृष्ण भजे।
शुष्क ज्ञाने जीवन्मुक्त अपराधे मजे ॥८७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२।३२)—

येऽन्येरविन्दाक्ष विमुक्तमानिन-
स्त्वय्यस्तभावादविशुद्धबुद्धयः।
आरुह्य कृच्छ्रेण परं पदं ततः,
पतन्त्यधोनादृतयुष्मदङ्घ्रयः ॥४०॥

श्रीमद् भागवत के १०।२।३२ में उक्त है—हे कमल लोचन ! यदि आपके प्रति भक्ति न हो, तो बुद्धि शुद्धि नहीं होती है. इस प्रकार अशुद्धमना व्यक्ति गण अपने को मुक्त अभिमान करते हैं, वे अनेक श्रमसे मोक्ष के समीप वर्त्ती होने पर भी आप के चरण कमल की अवज्ञा करने के कारण अधोगामी होते हैं ॥४०॥

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम्— (१८।५४)—

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति।
समः सर्व्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते परां ॥४१॥

श्रीमद् भगवद् गीता के अष्टादशाध्याय में उक्त है---ब्रह्म में स्थित अर्थात स्वरूपानुभूत में स्थित, प्रसन्न चित्त, शोक से अनुद्विग्न, अनाकाङ्क्षी, प्राणी में समदर्शी व्यक्ति ही मेरी पराभक्ति लाभ करने का अधिकारी है ॥४१॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पश्चिमविभागे शान्त-भक्तिलहर्य्यां (२१)--

अद्वैतवीथीपथिकैरुपास्याः,
स्वानन्दसिंहासनलब्धदीक्षाः ।
शठेन केनापि वयं हठेन
दासीकृता गोपबधूविटेन ॥४२॥

हम सब ब्रह्मानन्द विषयक उपदेश प्राप्तकर अद्वैत पथ के पथिक गण के सहित उपासना में रत थे, हठात् किसी स्थान से आकर एक शठ लम्पट गोपवधूविटनन्दनन्दन ने हम सब को वश कर लिया, अर्थात् बल पूर्वक दासी बना लिया ॥४२

भक्ति बले प्राप्त स्वरूपदेह पाय ।
कृष्णगुणाकृष्ट हैञा भजे कृष्ण पाय ॥८८

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।१०।६)---

निरोधोऽस्यानुशयनमात्मनः सह शक्तिभिः ।
मुक्तिर्हित्वान्यथा रूपं स्वरूपेण व्यवस्थितिः ॥४३

टीका—अस्य आत्मनः अनु पश्चात् शक्तिभिः सह शयनं लयः निरोधः कथ्यते । अन्यथारूपं हित्वा परिहारस्वरूपेण व्यवस्थितिः मुक्तिः उच्यते ॥४३॥

श्रीमद् भागवत के २।१०।६ में उक्त है--- महाप्रलय समय में जब भगवान् योग निद्रा को अवलम्बन करते हैं, तब आत्मोपाधि के सहित जीव का जो लय है, उसको निरोध कहते हैं, और अविद्या आरोपित अहङ्कार प्रभृति को छोड़कर विशुद्ध जीवरूप में जो स्थिति है, उसको मुक्ति कहते हैं ॥४३

कृष्ण-वहिर्मुख-दोषे माया हैते भय ।
कृष्णोन्मुख-भक्ति हैते मायामुक्त हय ॥८६

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।३७)--

भयं द्वितीयाभिनिवेशतः स्या-
दीशादपेतस्य विपर्य्ययोऽस्मृतिः ।
तन्माययातो बुध आभजेत्तं,
भक्त्यैकयेशं गुरुदेवतात्मा ॥४४॥

श्रीमद् भागवत के ११।२।३७ में उक्त है-- ऐशी माया निबन्धन भगवद् वहिर्मुख व्यक्ति में स्व स्वरूप का अस्मरण एवं शरीर में आत्मबुद्धि उत्पन्न होती है, अतः 'मैं ईश्वर से भिन्न हूँ, स्वतन्त्र हूँ" इस प्रकार ज्ञान होने के कारण जन्म मरण रूप भय उपस्थित होता हैं। सुतरां धीमान् व्यक्ति गुरु रूप देवता में आत्म समर्पण कर एकान्त भक्तियोग से ईश्वर की उपासना करे ॥४४॥

तथाहि ब्रह्मसंहितायाम् (७।१४)

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥४५॥

मदीया माया अत्यद्भुता, गुणमयी एवं सुरत्यया है, जो व्यक्ति शुद्ध भक्ति योग के द्वारा मेरी उपासना करते हैं, वे मदीया माया से उत्तीर्ण हो जाते हैं ॥४५॥

भक्ति विना मुक्ति नाहि भक्त्येच मुक्ति हय ।
भक्त्येय मुक्ति पाइले अवश्य कृष्ण भजय ।६०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१४।४)---

श्रेयः सृतिं भक्तिमुदस्य ते विभो,
क्लिश्यन्ति ये केवलबोधलब्धये ।
तेषामसौ क्लेशल एव शिष्यते,
नान्यद्यथा स्थूलतुषावघातिनां ॥४६॥

श्रीमद् भागवत के १०।१४।४ में ब्रह्मा कहे थे- हे विभो ! तुम्हारी भक्ति निखिल जीव जगत् में ममत्व बोध कराती, जो व्यक्ति निखिल कल्याण कारिणी भक्ति को परित्याग पूर्वक केवल स्वरूपानु सन्धानात्मक ज्ञानाभ्यास हेतु क्लेश करते है, उससे क्लेश लाभ मात्र ही होता है. जिस प्रकार तण्डुल लाभ हेतु तुष अवहनन कारी व्यक्ति को केवल क्लेश लाभ ही होता है, उस प्रकार निखिल कल्याण दायिनी भक्ति को परित्याग पूर्वक केवल स्वरूप बोधात्मक ज्ञान लाभ हेतु साधन करने से ज्ञान लाभ तो होता ही नहीं, अपरन्तु क्लेश लाभ ही होता है।४६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२।३२)---

येऽन्येऽरविन्दाक्ष विमुक्तमानिन-
स्त्वय्यस्तभावादविशुद्धबुद्धयः ।
आरुह्य कृच्छ्रेण परं पदं ततः,
पतन्त्यधोऽनादृतयुष्मदंघ्रयः ॥४७॥

श्रीमद् भागवत के १०।२।३२ में उक्त है--हे कमल नयन ! तुम्हारी भक्ति का आचरण जो लोक नहीं करते हैं, उन सब के मन शुद्ध नहीं होते हैं, अर्थात् उन सबके मनमें कृष्ण एवं कृष्ण भक्ति भिन्न अन्य वासना रह जाती है, जिसको आत्मवञ्चनारूप कपट कहते हैं, वे सब अपने को मुक्त मानते हैं, किन्तु यह बुद्धि का विलास अहङ्कार मात्र है, वे सब अनेक साधन परिश्रम के द्वारा उत्तम पद को प्राप्त करने पर भी संसार में निपतित होते हैं, कारण, तुम्हारे चरणारविन्द का अनादर करने का फल ही यह है ॥४७॥

तथाहि श्रीमद् भागवते (११।५।२)---

मुखबाहूरुपादेभ्यः पुरुषस्याश्रमैः सह ।
चत्वारो जज्ञिरे वर्णा गुणैर्विप्रादयः पृथक् ॥४८॥

श्रीमद् भागवत के ११।५।२ में उक्त है---परम पुरुष ईश्वर के मुख, बाहु, ऊरु, एवं चरण से विप्र क्षत्रिय वेश्य एवं शूद्र--ब्रह्मचर्य्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं सन्न्यास आश्रम का यथा क्रम से उद्भव हुआ है, गुणों की विभिन्नता हेतु कर्म की विभिन्नता होती है, उससे ही उक्त वर्णाश्रम में विभिन्नता हुई है ॥४८

तथाहि भगवत्सन्दर्भे श्रीविष्णुपादाविर्भाव--
व्याख्यायाम् धृतश्रुतिः---

मुक्ता अपि लीलया विग्रहं
कृत्वा भगवन्तं भजन्ते ॥४६॥

मुक्त पुरुष वृन्द भी स्वेच्छा पूर्वक विग्रह धारण कर श्रीभगवान् का भजन करते हैं ॥४६॥

एइ छय आत्माराम कृष्णेरे भजय ।
पृथक् पृथक् चकार इहार अपिर अर्थ हय ॥६१

आत्मारामाश्च अपि करे कृष्णे अहैतुकी ।
मुनयः सन्त इति कृष्ण मनने आसक्ति ॥६२
निर्ग्रन्था अविद्याहीन, केहो बिधिहीन ।
याहा सेइ युक्त सेइ अर्थेर अधीन ॥६३
च शब्दे करि यदि इतरेर अर्थ ।
आर एक अर्थ कहे परम समर्थ ॥६४
आत्मारामाश्च आत्मारामाश्च करि बार छय ।
पञ्च आत्माराम छय चकारे लुप्त हय ॥६५
एक आत्माराम शब्द अवशेषे रहे ।
एक आत्माराम शब्दे छय जने कहे ॥६६

तथाहि विश्वप्रकाशे--

सरूपाणामेकशेष एक-विभक्तौ उक्तार्थानामप्रयोगः।
रामश्च रामश्च रामश्च रामा इतिवत् ॥५०॥

टीका—एकविभक्तौ सरूपाणां एकशेषः एव शिष्यते । उक्तार्थानां अप्रयोगः भवति ॥५०॥

एक विभक्ति युक्त एक ही शब्द अनेक वार प्रयुक्त होने से समास में एकही शब्द रह जाता है, अन्य शब्दों का प्रयोग नहीं होता है । जिस प्रकार अरामान्त राम शब्द का प्रयोग रामश्च रामश्च रामश्च होता है, यहाँ समान रूप होने के कारण समास में एक राम शब्द रह जाता है, एवं अन्यान्य राम शब्द का अप्रयोग होता है, एवं "रामाः" पद होता है ॥५०॥

तबे ये चकार से समुच्चय कय ।
आत्मारामाश्च मुनयश्च कृष्णके भजय ॥६७
निर्ग्रन्था अपि एइ अपि सम्भावने ।
एइ सात अर्थ प्रथम करिला व्याख्याने ॥६८
अन्तर्यामी उपासक आत्माराम कय ।
सेइ आत्माराम योगी दुइ भेद हय ॥६९

सगर्भ निगर्भ एइ हय दुइ भेद ।
एक एक तिन भेदे छय छय भेद ॥१००

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।२।८)--

केचित् स्वदेहान्तर्हृदयावकाशे,
प्रादेशमात्रं पुरुषं वसन्तं ।
चतुर्भुजं कञ्जरथाङ्गशङ्ख-
गदाधरं धारणया स्मरन्ति ॥५१॥

टीका—केचित् जनाः स्वदेहान्तर्हृदयावकाशे स्वशरीरस्य अन्तर्मध्ये यत् हृदय तत्र यः अवकाशः तस्मिन् वसन्तं प्रादेशमात्रं पुरुषं धारणया स्मरन्ति । पुरुषं किम्भूतं ?—कञ्जरथाङ्गशङ्खगदाधरं ॥५१॥

श्रीमद् भागवत के २।२।८ में उक्त है—कतिपय व्यक्ति निज शरीर के मध्य गत हृदय आकाशस्थित प्रादेश परिमित पुरुष को चतुर्भुज एवं शङ्ख चक्र गदापद्म धारी रूपमें भावना करते हैं ।५१

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२८।३४)--

एवं हरौ भगवति प्रतिलब्धभावो,
भक्त्या द्रवद्धृदय उत्पुलकः प्रमोदात् ।
औत्कण्ठ्यवाष्पकलया मुहुरर्द्यमान-
स्तच्चापि चित्तवड़िशं शनकैर्वियुङ्क्ते ॥५२

टीका—एवं भगवति हरौ प्रतिलब्धभावः भक्त्या करणया द्रवद्धृदयः, प्रमोदात् उत्पुलकः रोमाञ्चितः, औत्कण्ठ्यवाष्पकलया मुहुरर्द्यमानः सन् अपि तत्चित्तवड़िशं शनकैः वियुङ्क्ते ॥५२॥

श्रीमद् भागवत के ३।२८।३४ में लिखित है--इस प्रकार ध्यानमार्ग में निरत योगी का भगवान् में प्रेम सञ्चार होता है । भक्ति होने पर हृदय द्रवित होता है, एवं आनन्द हेतु शरीर रोमाञ्चित होता है। उस समय योगी उत्कण्ठा हेतु अश्रुकला के द्वारा सुख सागर में मग्न होता है । उस समय मत्स्य भेदक वड़शी जिस प्रकार मत्स्य विद्धकर उस से वियुक्त होता है, उस प्रकार दुर्विगाह भगवान् के रूप गुण ग्रहण में असमर्थ होकर योगी का चित्त शनैः शनैः भगवत् चिन्तन से विरत होता है ।।५२।।

योगारुरुक्षु योगारूढ़ प्राप्तसिद्ध आर ।
दुँहे तिन भेद हय छयप्रकार ॥१०१

तथाहि श्रीमद् भगवद्गीतायाम् (६।३)--

आरुरुक्षोर्म्मुनेर्योगं कर्म्मकारणमुच्यते ।
योगारूढ़स्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते ।।५३।।

टीका—योगं ज्ञानयोगं आरुरुक्षोः आरोढ़ु प्राप्तुमिच्छोः मुनेः कर्म्मकारणं उच्यते चित्तशुद्धिकरत्वात्, योगारूढ़स्य तस्यैव ज्ञाननिष्ठस्य शमः समाधिः कारणमुच्यते ।।५३।।

श्रीमद् भगवद् गीता षष्ठ अध्याय में लिखित है—जो मुनि योगारूढ़ होना चाहते हैं; उनके पक्षमें कर्म ही कारण है, एवं योगारूढ़ योगी के पक्ष में कर्म्म सन्न्यास ही परमसाधन है ।।५३।।

तथाच श्रीमद् भगवतगीतायाम् (४।६)--

यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्म्मस्वनुषज्जते ।
सर्व्वसङ्कल्पसन्नयासी योगारूढ़स्तदोच्यते ।।५४।।

टीका—यदा हि इन्द्रियार्थेषु इन्द्रियभोग्येषु कर्म्मसु न अनुषज्जते आसक्ति न करोति, तदा सर्व्वसंकल्पसन्नयासी आसक्तिमूलभूतान् सर्व्वान् भोगविषयान् सङ्कल्पान् सन्नयसितुं शीलं यस्य सः योगारूढ़ उच्यते ।।५४।।

श्रीभगवद् गीता में लिखित है—
जिस समय साधक इन्द्रिय भोग्यविषय में अनासक्त' कर्म्मानुष्ठान में सम्पूर्ण विरत, एवं समस्त प्रकार सङ्कल्प वर्जित होता है, उस समय उसको योगारूढ़ कहा जाता है ।।५४।।

एइ छय योगी साधुसङ्गादि हेतु पाजा ।
कृष्ण भजे कृष्णगुणे आकृष्ट हइजा ॥१०२

च शब्दे अपिर अर्थ इहाओ करय ।
मुनि निर्ग्रन्थ शब्देर पूर्व्ववत अर्थ हय ॥१०३

उरुक्रमे अहैतुकी काँहा कोन अर्थ ।
एइ तेर अर्थ कहिल परम समर्थ ॥१०४
एइ सब शान्त यबे भजे भगवान् ।
शान्तभक्त करि तबे कहि तार नाम ॥१०५
आत्मा शब्दे मन कहे, मने येइ रमे ।
साधुसङ्गे सेह भजे श्रीकृष्णचरणे ॥१०६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८७।१८)—

उदरमुपासते ऋषिवर्त्मसु कूर्पदृशः,
परिसरपद्धतिं हृदयमारुणयो दहरं ।
तत उदगादनन्त तव धाम शिरः परमं,
पुनरिह यत् समेत्य न पतन्ति कृतान्तमुखे ॥५५

टीका—ऋषिवर्त्मसु ये कूर्पदृशः, ते उदरं मणिपुराधिष्ठितं ब्रह्म उपासते भजन्ते । आरुणयस्तु हृदयं हृद्यधिष्ठितं दहरं सूक्ष्ममेव उपासते । हृदयं किम्भूतं ?---परिसरपद्धतिं परितः सर्वतः सरन्ति परिसराः नाड़ीसमूहाः तासां पद्धतिं । ततः भो अनन्त ! तव धाम शिरः मूर्द्धानं उदगात् । धाम किम्भूतं ?—यत् समेत्य लब्ध्वा पुनः इह कृतान्तमुखे संसारे न पतन्ति ॥५५॥

श्रीमद् भागवत के १०।८७।१८ में उक्त है—तापसगण के मध्य में स्थूल दर्शी ऋषिगण जठर के मध्य में मणिपूरस्थित ब्रह्म की चिन्ता करते रहते हैं। आरुणिगण--हृत् प्रदेशस्थित नाड़ीपथ में सूक्ष्म ब्रह्म की आराधना करते हैं। हे अनन्त ! तत् पश्चात् के त्वदीय उपलब्धि स्थल शिरः प्रदेश में उपनीत होते हैं, वहाँ जाने से पुनर्वार जन्म मरण प्रवाह में निपतित नहीं होना पड़ता है ॥५५॥

एइ कृष्णगुणाकृष्ट महामुनि हैञा ।
अहैतुकी भक्ति करे निर्ग्रन्थ हैञा ॥१०७
आत्मा शब्दे यत्न कहे यत्न करिञा ।
मुनयोऽपि भजे कृष्ण निर्ग्रन्थ हैञा ॥१०८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।५।१८)--

तस्यैव हेतोः प्रयतेत कोविदो;
न लभ्यते यद्भ्रमतामुपर्य्यधः ।
तल्लभ्यते दुःखवदन्यतः सुखं,
कालेन सर्व्वत्र गभीररंहसा ॥५६॥

टीका—कोविदः पण्डितः तस्यैव हेतोः प्रयतेत यत्नवान् भवेत्, यत् यस्तु उपर्य्यधः भ्रमतां विचरतां जीवानां न लभ्यते न प्राप्यते । गभीररंहसा महा-वेगवता कालेन तत् विषयसुखं अन्यतः एव सर्व्वत्र दुःखवत् लभ्यते ॥५६॥

श्रीमद् भागवत के १।५।१८ में उक्त है--ऊर्द्ध्व लोक पर्य्यन्त विचरण करके भी जिस को प्राप्त नहीं किया जाता उस को प्राप्त करने के निमित्त विज्ञ व्यक्ति चेष्टा करें, जिस प्रकार चेष्टा न करने पर भी दुःख लाभ होता है, उस प्रकार काल चक्रगति परिवर्त्तन के सहित पूर्व कर्म्म फलसे विषय सुखलाभ होता है ॥५६॥

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे साधनभक्ति लहर्य्यां धृतनारदीयम्—

सद्धर्म्मस्यावबोधाय येषां निर्बन्धिनी मतिः :
अचिरादेव सर्व्वार्थः सिध्यत्येषामभीप्सितः ॥५७॥

जिन सब साधु की मति भगवदाराधनारूप सद्धर्म्म को जानने के निमित्त होती है, उन सब के अभिलषितार्थ आशु सिद्ध होता है ॥५७॥

च शब्द अपि अर्थे, अपि अवधारणे ।
यत्नाग्रह विना भक्ति ना जन्माय प्रेमे ॥१०९

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे सामान्यभक्ति-निरूपणेत्रयोविंशति-श्लोके श्रीरूपगोस्वामि वाक्यम्—

साधनौघैरनासङ्गैरलभ्या सुचिरादपि ।
हरिणा चाश्वदेयेति द्विधा सा स्यात् सुदुर्ल्लभा ॥५८

टीका—इति एवम्प्रकारेण सा भक्तिः द्विधा सुदुर्ल्लभा दुष्प्राप्या स्यात् । आदौ अनासङ्गैः आसक्तिविहीनैः साधनौघैः सुचिरात् बहुदिनं व्याप्य

अलभ्या, ततः हरिणा च आशु त्वरितं अदेया ॥५८॥

अनेक दिन आसक्ति रहित होकर साधन करने पर भी भक्ति नहीं मिलती है, विशेषतः श्रीहरि भी भक्ति प्रदान सहसा नहीं करते हैं. इस हेतु श्रीहरिभक्ति उभय प्रकार से ही सुदुर्ल्लभा है ॥५८॥

तथाहि श्रीमद् भगवद्गीतायाम् (१०।१०)—

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्व्वकं ।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते ॥५६॥

श्रीमद् भगवद् गीता में उक्त है—सततयुक्त एवं प्रीति पूर्वक भजन कारी व्यक्ति को में उस प्रकार बुद्धि योग प्रदान करता हूँ, जिस से वे सब मुझ को प्राप्त कर सकते हैं ॥५६॥

आत्मा शब्दे धृति कहे धैर्य्ये येइ रमे ।
धैर्य्यवन्त सबे हञा करये भजने ॥११०
मुनि शब्दे पक्षी भृङ्ग निर्ग्रन्थ मूर्ख जन ।
कृष्णकृपाय साधुकृपाय दुहाँर भजन ॥१११

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२१।१४)—

वेणुगीतं श्रुत्वा गोपीवाक्यं—
प्रायो बताम्ब मुनयो विहगा वनेऽस्मिन्,
कृष्णेक्षितं तदुदितं कलवेणुगीतं ।
आरुह्य ये द्रुमभुजान्रुचिरप्रवालान्,
शृण्वन्ति मीलितदृशो विगतान्यवाचः ॥६०॥

टीका—भो अम्ब ! हे जननि ! अस्मिन् वने ये विहगाः सन्ति, ते प्रायः मुनयः भवितुमर्हन्ति । बत विस्मये । कुतः ?—कृष्णेक्षितं यथा स्यात्तथा रुचिरप्रवालान् मनोहरनवपल्लवान् द्रुमभुजान् तरुशाखाः आरुह्य तदुदितं हरिणा प्रकटितं कलवेणुगीतं मोहन-वंशीगीतं केनापि आनन्देन मीलितदृशः तथा विगतान्यवाचः सन्तः शृण्वन्ति ॥६०॥

श्रीमद्भागवत के १०।२१।१४ में वेणुगीत को सुनकर गोपी बोली थी—हे जननि ! कैसा आश्चर्य्य है—जो सब पक्षी इस कानन में अवस्थित हैं, वे प्रतीत होते हैं—ये सब मुनि होने के योग्य हैं, कारण, वे सुन्दर नव पल्लवावृत वृक्ष शाखा में आरूढ़ होकर हरिदर्शन करते करते मानों आनन्द में निमग्न होकर मुदित नेत्र से एवं नीरव से मोहन वंशीगीत श्रवण करते रहते हैं ॥६०॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१५।६)—

एतेऽलिनस्तव यशोऽखिललोकतीर्थं,
गायन्त आदिपुरुषानुपथं भजन्ते ।
प्रायो अमी मुनिगणा भवदीयमुख्या,
गूढं वनेऽपि न जहत्यनघात्मदैवम् ॥६१॥

टीका—हे आदिपुरुष ! हे अनघ ! एते अलिनः भृङ्गाः तव अखिललोकतीर्थं समस्तलोकानां पावनं यशः गायन्ते, तव अनुपथं भजन्ते, प्रायः अमी भवदीयमुख्याः मुनिगणाः वने गूढमपि आत्मदैवं स्वीयाभीष्टं त्वां न जहति ॥६१॥

श्रीमद् भागवत के १०।१५।६ में श्रीकृष्ण बलदेव को कहे थे—हे आदि पुरुष ! हे अनघ ! ये सब भ्रमर गण तुम्हारे निखिल लोक पावन यशोगान करके तुम्हारे अनुसरण कर रहे हैं, प्रतीत होता है, ये सब तुम्हारे आराधक श्रेष्ठ ऋषि हैं, तुम इन के अभीष्ट देव हो, इस हेतु तुम नरवेश में गोपन में वन में आये हो, यह देखकर वे भी तुम को छोड़ नहीं सकते हैं ॥६१॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३५।११)—

सरसि सारसहंसविहङ्गा-
श्चारुगीतहृतचेतस एत्य ।
हरिमुपासत ते यतचित्ता,
हन्त मीलितदृशो धृतमौनाः ॥६२॥

टीका—सरसि सारसहंसविहङ्गाः चारुगीत-हृतचेतसः मनोहरसंगीतेन आकृष्टमानसाः सन्तः एत्य हन्त खेदे यतचित्ताः तथा मीलितदृशः, तथा तु धृतमौनाश्च सन्तः हरिं उपासत ॥६२॥

श्रीमद् भागवत के १०।३५।११ में उक्त है—उस समय सरोवर में सारस हंस प्रभृति पक्षीगण मनोहर सङ्गीत से आकृष्ट होकर एकाग्र मन

से निमीलित नयनों में एवं नीरव में कृष्ण के निकट उपविष्ट होते थे ॥६२॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।४।१८)—

किरातहूनान्ध्रपुलिन्दपुक्कशा,
आभीरशुह्मा यवनाः खसादयः ।
येऽन्ये च पापा यदपाश्रयाश्रयाः,
शुध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः ॥६३

टीका—किरातहूनान्ध्रपुलिन्दपुक्कशाः आभीर-शुह्माः यवनाः खसादयः अन्ये च ये पापाः यदपाश्रया-श्रयाः शुध्यन्ति, तस्मै प्रभविष्णवे भगवते नमः ॥६३

श्रीमद् भागवत के २।४।१८ में लिखित है-- किरात, हून, अन्ध्र, पुलिन्द, पुक्कश, आभीर, शुम्ह, यवन, खस प्रभृति जाति एवं जो लोक कर्म्म दोष से दुष्ट हुये हैं, वे भी प्रभु की शरण ग्रहण करने से पवित्र होते हैं, उन प्रभाववान् भगवान् को प्रणाम करता हूँ ॥६३॥

किंवा धृति शब्दे निज पूर्णादि ज्ञान कय ।
दुःखाभावे उत्तम प्राप्ते महापूर्ण हय ॥११२

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे व्यभिचारि लहर्य्यां षष्टितम-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

धृतिः स्यात् पूर्णताज्ञानं दुःखाभावोत्तमाप्तिभिः ।
अप्राप्तातीतनष्टार्था-नभिसंशोचनादिकृत् ॥६४॥

टीका—दुःखाभावोत्तमाप्तिभिः करणैः यत् पूर्णताज्ञानं, तत् धृतिः स्यात् । सा तु अप्राप्तातीत-नष्टार्थानभिसंशोचनादिकृत् ॥६४॥

समस्त प्रकार दुःख का अभाव होकर भगवत् प्रेम प्राप्ति होने से जो पूर्णता ज्ञान होता है, उसको धृति कहते हैं । धृति प्राप्त होने पर अभिलषितार्थ, अतीत एवं अपहृत विषय के अप्राप्ति हेतु शोकादि नहीं होते हैं ॥६४॥

कृष्णभक्त दुःखहीन वाञ्छान्तरहीन ।
कृष्णप्रेम सेवा पूर्णानन्द प्रवीण ॥११३

तथाहि श्रीमद्भागवते (९।४।६७)—

मत्सेवया प्रतीतं ते सालोक्यादि चतुष्टयं ।
नेच्छन्ति सेवया पूर्णाः कुतोऽन्यत् कालविप्लुतं ॥६५

श्रीमद् भागवत के ९।४।६७ में उक्त है—भक्त वृन्द मेरी सेवासे उपस्थित सालोक्य सार्ष्टि सारूप्य सामीप्य को नहीं चाहते हैं, कारण, वे सेवा से ही पूर्ण हैं, अतएव काल कवलित होने के योग्य स्वर्गादि भोग सामग्री को वे नहीं चाहते हैं ॥६५॥

तथाहि गोस्वामिपादोक्त-श्लोकः—

हृषीकेशे हृषीकाणि यस्य स्थैर्य्यगतानि हि ।
स एव धैर्य्यमाप्नोति संसारे जीवचञ्चले ॥६६॥

टीका—हि निश्चितं हृषीकेशे गोविन्दे यस्य हृषीकाणि इन्द्रियाणि स्थैर्य्यगतानि सन्ति, स एव जनः जीवचञ्चले क्षणस्थायिनि संसारे धैर्यं आप्नोति लभते ॥६६॥

जिस व्यक्ति के इन्द्रिय समूह भगवान् में स्थिरता को प्राप्त किये हैं, इस अनित्य संसार में वे ही धैर्य्यलाभ करते हैं ॥६६॥

च अवधारणे इहा अपि समुच्चये ।
धृतिमन्त हैञा भजे पक्षी मूर्खचये ॥११४

आत्मा शब्दे बुद्धि कहे बुद्धि विशेष ।
सामान्यबुद्धियुक्त यत जीव अशेष ॥११५

बुद्ध्ये रमे आत्माराम दुइत प्रकार ।
पण्डित मुनिगण निर्ग्रन्थ मुर्ख आर ॥११६

कृष्णकृपाय साधुसङ्गे रति बुद्धि पाय ।
सब छाड़ि कृष्णभक्ति करे कृष्ण-पाय ॥११७

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (१०।८)—

अहं सर्व्वस्य प्रभवो मत्तः सर्व्वं प्रवर्त्तते ।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः ॥६७

टीका—अहं सर्वस्य प्रभवः उत्पत्तिस्थानं, मत्तः सर्व्वं प्रवर्त्तते, इति मत्वा बुधाः पण्डिताः भाव-

मदन्विताः प्रीतियुक्ताः सन्तः मां भजन्ते ॥६७॥

श्रीमद् भगवद् गीता में लिखित है---श्रीकृष्ण कहे हैं---विज्ञ व्यक्ति गण मुझ को जगत् कारण एवं बुद्धि प्रवर्त्तक जानकर प्रीति पूर्वक मेरा भजन करते हैं ॥६७॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।७।४६)—

ते वै विदन्त्यतितरन्ति च देवमायां,
स्त्रीशूद्रहूनशवरा अपि पापजीवाः ।
यद्यद्भुतक्रमपरायणशीलशिक्षा-
स्तिर्य्यग्जना अपि किमु श्रुतधारणा ये ॥६८

टीका—यदि अद्भुतक्रमपरायणशीलशिक्षाः भवन्ति, तदा ते स्त्रीशूद्रहूनशवराः पापजीवाः अपि तथा तिर्य्यग्जनाः गजशारिकाहंसादयः अपि वै देवमायां विदन्ति अतितरन्ति च । ये श्रुतधारणाः, ते किमु वक्तव्यं ॥६८॥

श्रीमद् भागवत के २।७।४६ में उक्त है—भगवद् भक्त जन के चरित्र अनुशीलन करने से जब स्त्री, शूद्र, हून, शवर प्रभृति एवं गज शारिकादि तिर्य्यग् जाति भी जब देवमाया को जानकर उस से परित्राण लाभ करते हैं, तब जो लोक शास्त्राध्ययन के द्वारा भगवान् के रूपादि को धारणा करने में सक्षम हैं, वे माया को जानकर उस से परित्राण प्राप्त करेंगे--इस में आश्चर्य्य क्या है ? ॥६८॥

विचार करिया यबे भजे कृष्ण-पाय ।
सेइ बुद्धि देन तारे याते कृष्ण पाय ॥११८

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (१०।१०)—

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्व्वकं ।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते ॥६९॥

श्रीमद् भगवद् गीता में भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन को कहे थे,—हे अर्जुन ! जो सब भक्त मुझ में तन्मय चित्त होकर प्रीति पूर्वक मेरा उपासना करते हैं, मैं उन सब को उस प्रकार बुद्धि योग प्रदान करता हूँ, जिससे वे मुझको प्राप्त कर सकते हैं ॥६९

सत्सङ्ग कृष्णसेवा भागवत नाम ।
व्रजे वास एइ पञ्च साधन प्रधान ॥११९
एइ पञ्चमध्ये एक स्वल्प यदि हय ।
सुबुद्धि जनेर हय कृष्ण-प्रेमोदय ॥१२०

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे साधनभक्ति-लहर्य्यां सप्ताशीति-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

दुरूहाद्भुतवीर्य्येऽस्मिन् श्रद्धा दूरेऽस्तु पञ्चके ।
यत्र स्वल्पोऽपि सम्बन्धः सद्धियां भावजन्मने ॥७०

सत्सङ्ग, कृष्णसेवा, भागवत, नाम, व्रजवास रूप पञ्च विषय अतिदुरूह एवं विस्मापक प्रभाव-विशिष्ट हैं । किञ्चिन्मात्रा सम्बन्ध होने से ही सुबुद्धि व्यक्ति के हृदय में कृष्ण प्रीति उत्पन्न होती है ॥७०

उदार महती यार सर्व्वोत्तमा बुद्धि ।
नाना कामे भजे तबु पाय भक्तिसिद्धि ॥१२१

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।३।१०)—

अकामः सर्व्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः ।
तीव्रेण भक्तियोगेन यजेत पुरुषं परम् ॥७१॥

श्रीमद्भागवत के २।३।१० में उक्त है—जो व्यक्ति--उदार बुद्धि एकान्त भक्त, सर्व काम वा मोक्ष काम सम्पन्न हों, वह ऐकान्तिक भक्ति योग के द्वारा परम पुरुष भगवान् श्रीकृष्ण का भजन करे ॥७१॥

भक्तिप्रभाव सेइ काम छाड़ाइया ।
कृष्णपदे भक्ति कराय गुणे आकर्षिया ॥१२२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।७।१०)—

आत्मारामश्च मुनयो निर्ग्रन्था अप्युरुक्रमे ।
कुर्व्वन्त्यहैतुकीं भक्तिमित्थम्भूतगुणो हरिः ॥७२॥

श्रीमद्भागवत के १।७।१० में उक्त है—आत्माराम श्रीसनकादि मुनिगण एवं निवृत्त अहङ्कार श्रीनारदादि मुनिगण भी उरुक्रम श्रीकृष्ण के प्रति अहैतुकी भक्ति करते हैं । इस प्रकार गुण सम्पन्न श्रीहरि हैं ॥७२॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (५।१९।२६)—

सत्यं दिशत्यर्थितमर्थितो नृणां,
नैवार्थदो यत् पुनरर्थिता यतः।
स्वयं विधत्ते भजतामनिच्छता-
मिच्छापिधानं निजपादपल्लवं ॥७३॥

श्रीमद् भागवत के ५।१९।२६ में उक्त है— श्रीभगवान् के निकट मनुष्य प्रार्थना करने से प्रार्थित वस्तु श्रीभगवान् देते हैं, यह सत्य हैं, तथापि स्वचरण रूप परमार्थ प्रदान नहीं करते हैं, अतः मनुष्य पुनर्वार प्रार्थी होता है। कारण--कामी व्यक्ति की कामना का अन्त नहीं है।

कामना विहीन भक्त वृन्द भगवान् का भजन करते हैं, भगवान् भी समस्त कामना का आच्छादन स्वरूप निज पाद पल्लव भक्त वृन्द को प्रदान करते हैं। सुतरां निखिल कामना उक्त श्रीचरण पल्लव स्पर्श से सुरभित होकर निकलती रहती हैं ॥७३॥

आत्मा शब्दे स्वभाव कहे, ताते येइ रमे।
आत्माराम जीव यत स्थावर जङ्गमे ॥१२३
जीवेर स्वभाव कृष्णे दास अभिमान।
देहे आत्मा ज्ञाने आच्छादित सेइ ज्ञान ॥१२४
च शब्दे एव अर्थ अपि शब्द समुच्चये।
आत्माराम एव हैञा श्रीकृष्ण भजये ॥१२५
एइ जीव सनकादि सब मुनिजन।
निर्ग्रन्थ मूर्ख नीच स्थावर पशुगण ॥१२६
व्यास शुक सनकाद्येर प्रसिद्ध भजन।
निर्ग्रन्थ स्थावराद्येर शुन विवरण ॥१२७
कृष्णकृपादि हेतु हैते स्वभाव उदय।
कृष्णगुणाकृष्ट हैञा ताहारे भजय ॥१२८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१५।८)—

धन्येयमद्य धरणी तृणवीरुधस्त्वत्-
पादस्पृशो द्रुमलताः करजाभिमृष्टाः।
नद्योऽद्रयः खगमृगाः सदयावलोकै-
र्गोप्योऽन्तरेण भुजयोरपि यत्स्पृहा श्रीः ॥७४

टीका — अद्य इयं धरणी वृन्दावनस्थली धन्या सार्थकजन्मा स्यात्, तृणवीरुधः त्वत्पादस्पृशः तथा द्रुमलताः करजाभिमृष्टाः नखस्पृष्टाः सत्यः धन्याः सन्ति, नद्यः सरितः,अद्रयः पर्व्वताः, खगमृगाः पक्षिणः पशवश्च, सदयावलोकैः त्वदीयसदयदर्शनैः धन्याः सन्ति। श्रीः लक्ष्मीरपि यत्स्पृहा, तेन तव भुजयोः अन्तरेण वक्षसा गोप्यः धन्याः भवन्ति ॥७४॥

श्रीमद् भागवत के १०।१५।८ में उक्त है, अद्य यह वृन्दावन स्थली धन्य हुई है, एवं अत्रस्थ तृण गुल्म भी धन्य हैं। ये सब तुम्हारे चरण स्पर्शलाभ किये हैं, यहाँ के वृक्ष लता समूह भी धन्य हैं, कारण ये सब तुम्हार चरण नखस्पर्श लाभ किये हैं। अत्रत्य नदी समूह, गिरिसमूह एवं मृगपक्षी गण भी धन्य है, कारण, इन्होंने तुम्हारे दर्शन लाभ किया है। यहाँ के गोपिका गण भी धन्य है, कारण, इन्होंने लक्ष्मी वाञ्छित तुम्हारे वक्षःस्थल की अनायास प्राप्त किया है ॥७४॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२१।१९)—

गा गोपकैरनुवनं नयतोरुदार-
वेणुस्वनैः कलपदैस्तनुभृत्सु सख्यः।
अस्पन्दनं गतिमतां पुलकस्तरूणां,
निर्योगपाशकृतलक्षणयोर्विचित्रम् ॥७५॥

टीका—हे सख्यः। विचित्रं आश्चर्य्यं ! गोपकैः गोपशिशुभिः सह अनुवनं वने वने गाः नयतोः चारयतोः रामकृष्णयोः कलपदैः उदारवेणुस्वनैः महावंशीरवैः तनुभृत्सु देहिषु गतिमतां अस्पन्दनं स्यात, तथा तरूणा वृक्षाणां पुलकः स्यात्। तयोः किम्भूतयोः ?—निर्योगपाशकृतलक्षणयोः निर्योगाः गोचरणबन्धनरज्जवः पाशाश्च तैः कृतं लक्षणं चिह्नं ययोः ॥७५॥

श्रीमद् भागवत के १०।२१।१९ में लिखित है हे सखीगण ! कैसा आश्चर्य है ? राम कृष्ण--निज

मस्तक में गोपाद बन्धन रज्जु (लोमना) वेष्टन कर एवं स्कन्ध में पाश अर्थात् दुर्दान्त पशु बन्धन हेतु रज्जु स्थापन कर मधुर वंशी ध्वनि करके गोपशिशु वृन्द के सहित वन वन में गोचारण करते रहते हैं, एवं उनकी वेणुध्वनि को सुनकर गतिशील जीवगण का अस्पन्दन होता है, एव वृक्ष समूह का पुलक भी हो रहा है ॥७५॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३५।९)

वनलतास्तरव आत्मनि विष्णुं,
व्यञ्जयन्त इव पुष्पफलाढ्याः।
प्रणतभारविटपा मधुधाराः,
प्रेमहृष्टतनवो ववृषुः स्म ॥७६॥

श्रीमद् भागवत के १०।३५।९ में उक्त है— श्रीकृष्ण के वन गमन समय में फल कुसुम भर से अवनत तरु लतागण अपने के मध्य में मानों प्रकाश मान परमेश्वर को प्राप्त कर प्रेम हृष्ट कलेवर से मधु धारा वर्षण करने लगे थे ॥७६॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।४।१८)—

किरातहूनान्ध्रपुलिन्दपुक्कशा,
आभीरशुह्मा यवनाः खसादयः।
येऽन्ये च पापा यदपाश्रयाश्रयाः,
शुध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः ॥७७॥

श्रीमत् भागवत के २।४।१८ में उक्त है— किरात, हून, अन्ध्र, पुलिन्द, पुक्कश, आभीर, शुम्ह, यवन, खस प्रभृति जाति एवं कर्म दोष दुष्ट व्यक्ति गण भी जिन प्रभु की शरण ग्रहण करने से पवित्र होते हैं, मैं उन प्रभाववान् भगवान् को प्रणाम करता हूँ ॥७७॥

आगे तेर अर्थ करिल आर छय एइ।
ऊनविंशति अर्थ हइल मिलि एइ दुइ ॥१२९

एइ ऊनिश अर्थ करिल आगे शुन आर।
आत्मा शब्दे देह करे चारि अर्थ तार ॥१३०

देहाराम देह भजे देहोपाधि ब्रह्म।
सनसङ्ग सेह करे कृष्णेर भजन ॥१३१

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८७।१४)

उदरमुपासते य ऋषिवर्त्मसु कूर्पदृशः
परिसरपद्धतिं हृदयमारुणयो दहरं।
तत उदगादनन्त तव धाम शिरः परमं
पुनरिह यत् समेत्य न पतन्ति कृतान्तमुखे ॥७८

श्रीमद् भागवत के १०।८७।१४ में उक्त है— तापस गण के मध्य में स्थूल दर्शी ऋषिगण जठर के मध्य में मणिपुरस्थित ब्रह्म की चिन्ता करते हैं, आरुणि वृन्द हृत् प्रदेशस्थ नाड़ीपथ में सूक्ष्म ब्रह्मकी आराधना करते हैं। हे अनन्त! तत पश्चात् त्वदीय उपलब्धिस्थल शिरःप्रदेश में उपनीत होते हैं; वहाँ गमन करने से पुनर्वार भव बन्धन से बद्ध नहीं होना पड़ता है ॥७८॥

देहारामी कर्म्मनिष्ठ याज्ञिकादि जन।
सनसङ्गे कर्म्म त्यजि करये भजन ॥१३२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१८।१२)—

कर्म्मण्यस्मिन्ननाश्वासे धूमधूम्रात्मनां भवान्।
आपाययति च गोविन्दपादपद्मासवं मधु ॥७९

टीका—अस्मिन् कर्म्मणि यज्ञे अनाश्वासे अविश्वसनीये धूमधूम्रात्मनां यज्ञीयधूमेन विवर्णदेहानां भवान् तत् गोविन्दपादपद्मासवं गोविन्दचरणकमलस्य यशोरूपमकरन्दं आपाययति पानं कारयति। किम्भूतं मधु मधुरं ॥७९॥

श्रीमद् भागवत के १।१८।१२ में उक्त है— शौनकादि मुनि गण सूतको कहे थे—हे सूत! हम सब यज्ञानुष्ठान किया है, किन्तु वह सफल होगा अथवा नहीं, स्थिरता नहीं है, यज्ञीय धूम से हम सब के शरीर धूम्र अर्थात विवर्ण हो गये हैं, सम्प्रति आप हम सब को गोविन्द पाद पद्म के मधुर यशोमधु पान करा रहे हैं ॥७९॥

तपस्वी प्रभृति यत देहारामी हय ।
साधु सङ्गे तप छाड़ि श्रीकृष्ण भजय ॥१३३

तथाहि श्रीमद्भागवते (४।२१।३१)—

यत्पादसेवाभिरुचिस्तपस्विना-
मशेषजन्मोपचितं मलं धियः ।
सद्यः क्षिणोत्यन्वहमेधती सती,
यथा पदाङ्गुष्ठविनिःसृता सरित् ॥८०॥

टीका—यत्पादसेवाभिरुचिः यस्य भगवतः पादयोः सेवायां अभिरुचिः अभिलाषः तपस्विनां भवतापसन्तप्तानां अशेष-जन्मोपचितं बहुजन्मसञ्चितं धियः बुद्धेः मलं मालिन्यं सद्यः आशु क्षिणोति दूरीकरोति, तमेव भजत । अभिरुचिः कीदृशी ?-अन्वहं प्रत्यहं एधता बुद्धिप्राप्ता सती । तत्र दृष्टान्तमाह यथा,—तस्य पदाङ्गुष्ठविनिःसृता सरित् जाह्नवी-पातकानि दूरीकरोति तद्वत् ॥८०॥

श्रीमद् भागवत के ४।२१।३१ में सभ्य वृन्दको पृथु महाराज कहे थे—हे सभ्य वृन्द ! जिन के चरणार विन्द की आराधना करने की इच्छामात्र से भवताप तापित जीव वृन्द के अशेष जन्मोपार्जित बुद्धि मालिन्य विदूरित होता है । एवं उनके पदाङ्गुष्ठ विगलिता सुरनदी जाह्नवी के समान सेवाभिरुचि अनुदिन वर्द्धित होती रहती है । आप सब उनकी ही आराधना करें ॥८०॥

देहारामी सर्व्व काम सब आत्माराम ।
कृष्णकृपाय कृष्ण भजे छाड़ि सब काम ॥१३४

तथाहि हरिभक्तिसुधोदये (७।२८)—

स्थानाभिलाषी तपसि स्थितोऽहं,
त्वां प्राप्तवान् देव मुनीन्द्रगुह्यं ।
काचं विचिन्वन्निव दिव्यरत्नं
स्वामिन् कृतार्थोऽस्मि वरं न याचे ॥८१॥

श्रीहरिभक्ति सुधोदय ग्रन्थ के ७।२८ में ध्रुव प्रिय श्रीकृष्ण को कहे थे—हे प्रभो ! मनुष्य काँच अनुसन्धान करते रहते जिन प्रकार दिव्य रत्न को प्राप्त करता है, उस प्रकार मैं भी राज सिंहासन लाभार्थ तपस्या करके मुनीन्द्र दुर्लभ धन आप को पाया । हे भगवान् ! मैं उस से ही कृतार्थ हूँ अन्य वर नहीं माँगता हूँ ॥८१॥

एइ चारि अर्थ सह हैल तेइश अर्थ ।
आर तिन अर्थ शुन परम समर्थ ॥१३५
च शब्दे समुच्चये आर अर्थ कय ।
आत्मारामाश्च मुनयश्च कृष्णेरे भजय ॥१३६
निर्ग्रन्थ हइया इहा अपि निर्द्धारणे ।
रामाश्च कृष्णाश्च विहरये वने ॥१३७
च शब्दे अन्वाचये अर्थ कहे आर ।
"बटो भिक्षामट गाश्चानय" यैछे प्रकार ॥१३८
कृष्णमनन मुनि कृष्णे सर्व्वदा भजय ।
आत्माराम अपि भजे गौण अर्थ कय ॥१३९
च एवार्थे "मुनय एव" कृष्ण भजन ।
आत्मारामा अपि "अपि गर्हा अर्थ" कय ॥१४०

निर्ग्रन्थ हैञा एइ दुँहार विशेषण ।
आर अर्थ शुन तैछे साधुसङ्गम ॥१४१
निर्ग्रन्थ शब्दे कहे तबे व्याध निर्धन ।
साधुसङ्गे सेओ करे श्रीकृष्ण भजन ॥१४२
कृष्णरामाश्च एव कृष्ण-मनन ।
व्याध हैञा हय पूज्य भागवतोत्तम ॥१४३
एक भक्त व्याधेर कथा शुन सावधाने ।
याहा हैते हय सत्सङ्ग महिमार ज्ञाने ॥१४४
एक दिन श्रीनारद देखि नारायण ।
त्रिवेणी स्नाने प्रयाग करिला गमन ॥१४५
वनपथे देखे मृग आछे भूमे पड़ि ।
वाणविद्ध भग्नपाद करे धड़फड़ि ॥१४६

आर कत दूरे एक देखेन शूकर ।
तैछे विद्ध भग्नपाद करे धड़फड़ ॥१४७
ऐछे एक शशक देखे आर कत दूरे ।
जीवेर दुःख देखि नारद व्याकुल अन्तरे ॥१४८
कत दूरे देखे व्याध वृक्ष ओत हैञा ।
मृग मारिबारे आछे वाण युड़िया ॥१४९
श्यामवर्ण रक्तनेत्र महाभयङ्कर ।
धनुर्व्वाण हस्ते येन यम दण्डधर ॥१५०
पथ छाड़ि नारद तार निकटे चलिला ।
नारद देखि मृग सब पलाइया गेला ॥१५१
क्रुद्ध हैञा व्याध तारे गालि दिते चाय ।
नारद प्रभाव मुखे गालि नाहि आय ॥१५२
गोसाञि. प्रमाण पथ छाड़ि केने आइला ।
तोमा देखि मोर लक्ष्य मृग पलाइला ॥१५३
नारद कहे, पथ भुलि आइलाम पुछिते ।
मने एक संशय ताहा खण्डाइते ॥१५४
पथे ये शूकर मृग जानि तोमार हय ।
व्याध कहे, येइ कह सेइत निश्चय ॥१५५
नारद कहे, यदि जीवे मार तुमि वाण ।
अर्द्धमारा कर केन ना लञा पराण ॥१५६
व्याध कहे, शुन गोसाञि मृगारि मोर नाम ।
पितार शिक्षाते आमि करि ऐछे काम ॥१५७
अर्द्धमारा जीव यदि धड़फड़ करे ।
तबे त आनन्द मोर बाढ़ये अन्तरे ॥१५८
नारद कहे, एक वस्तु मागि तोमा स्थाने ।
व्याध कहे, मृगादि लञा येइ तोमार मने १५९
मृगछाल चाह यदि आइस मोर घर ।
ये चाह ताहा दिव मृग-व्याघ्राम्बर ॥१६०
नारद कहे, इहा आमि किछु नाहि चाइ ।
आर एक वस्तु आमि मागि तोमार ठाञि ६६१
कालि हैते तुमि येइ मृगादि मारिबे ।
प्रथमे मारिबे अर्द्धमारा ना करिबे ॥१६२
व्याध कहे, किवा दान मागिले आमारे ।
अर्द्ध मारिले किवा हय ताहा कह मोरे ॥१६३
नारद कहे, अर्द्ध मारिले जीव पाय व्यथा ।
जीवे दुःख दिछ तोमार हइबे अवस्था ॥१६४
व्याध तुमि जीव मार अपराध तोमार ।
कदर्थ ना दिया मार ए पाप अपार ॥१६५
कदर्थिया तुमि यत मारिले जोवेरे ।
तारा तैछे तोमा मारिबे जन्मजन्मान्तरे ।१६६
नारदेर सङ्गे व्याधेर मनः प्रसन्न हइल ।
ताँर वाक्य शुनि मने भय उपजिल ॥१६७
व्याध कहे, बाल्य हैते एइ आमार कर्म्म ।
केमने तरिब आमि परम अधम ॥१६८
एइ पाप याय मोर केमन उपाय ।
निस्तार करह मोरे पड़ि तोमार पाय ॥१६९
नारद कहे, यदि धर आमार वचन ।
तबे ये करिते पारि तोमार मोचन ॥१७०
व्याध कहे, येइ कह सेइ त करिब ।
नारद कहे, धनुक भाङ्ग तबे से कहिब ॥१७१
व्याध कहे, धनुक भाङ्गिले वाँचिव केमने ।
नारद कहे, आमि अन्न दिव प्रति दिने ॥१७२
धनुक भाङ्गि व्याध तबे ताँर चरण पड़िल ।
तारे उठाइया नारद उपदेश कैल ॥१७३
घरे गिया ब्राह्मणे देञा यत आछे धन ।
एक एक वस्त्र परि बाहिर हञा दुइ जन ।१७४

नदीतरे एकखानि कुँड़िया करिया ।
तार आगे एक पिण्ड तुलसी रोपिया ॥१७५
तुलसी परिक्रमा कर तुलसी सेवन ।
निरन्तर कृष्णनाम करह कीर्त्तन ॥१७६
आमि तोमार बहु अन्न पाठाइब प्रति दिने ।
सेइ अन्न लये यत खाओ दुइजने ॥१७७

तबे सेइ मृगादि तिने नारद सुस्थ कैल ।
सुस्थ हआ मृगादि तिन धाञि पलाइल ॥१७८
देखिया व्याधेर मने हैल चमत्कार ।
घरे गेला व्याध गुरुके कैल नमस्कार ॥१७९
यथास्थाने नारद गेला व्याध आइला घर ।
नारदेर उपदेश करिल सकल ॥१८०
ग्रामे ध्वनि हैल व्याध वैष्णव हइल ।
ग्रामेर लोक सब सन्न आनि दिते लागिल १८१
एकदिन अन्न आने दश विश जने ।
दिन तत लय यत खाय दुइजने ॥१८२
एक दिन नारद कहे, शुनहे पर्व्वते ।
आमार एक शिष्य आछे चलह देखिते ॥१८३
तबे दुइ ऋषि आइला सेइ व्याधस्थाने ।
दूरे हैते व्याध पाइल गुरुर दर्शने ॥१८४

अस्ते व्यस्ते धाञा आइसे पथ नाहि पाय ।
पथेर पिपीलिका सब इति उति धाय ॥१८५
दण्डवत स्थाने पिपीलिकारे देखिया ।
वस्त्रे स्थान झाड़ि पड़े दण्डवत हञा ॥१८६
नारद कहे, व्याध एइ ना हय आश्चर्य्य ।
हरिभक्तेच हिंसाशून्य हय साधुवर्य्य ॥१८७

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे साधनभक्ति-लहर्य्यां द्व्यधिकशताङ्कधृतस्कन्दपुराणे व्याधं प्रति नारदवाक्यम्—

एते न ह्यद्भुता व्याध तवाहिंसादयो गुणाः ।
हरिभक्तौ प्रवृत्ता ये न ते स्युः परतापिनः ॥८२

हे व्याध ! तुम्हारे में ये जो अहिंसादि गुण दृष्ट होते हैं, यह आश्चर्य्य नहीं हैं, कारण श्रीहरिभक्ति में जो प्रवृत्त होते हैं, वे पर तापी नहीं होते हैं ॥८२

तबे सेइ व्याध दुँहा अङ्गने आनिल ।
कुशासन आनि दुँहा भक्तेच वसाइल ॥१८८
जल आनि भक्तेच दुँहार पाद प्रक्षालिल ।
सेइ जल स्त्री पुरुषे पिया शिरे लइल ॥१८९
कम्प पुलकाश्रु हय कृष्णनाम गाञा ।
ऊर्द्ध्वबाहु नृत्य करे वस्त्र उड़ाइञा ॥१९०
देखिया व्याधेर प्रेम पर्व्वत महामुनि ।
नारदेरे कहे तुमि हओ स्पर्शमणि ॥१९१

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्वविभागे दशाङ्कधृत-स्कन्दपुराणे नारदं प्रति पर्व्वतवाक्यम्—

अहो धन्योऽसि देवर्षे कृपया यस्य तत्क्षणात् ।
नीचोऽप्युत्पुलको लेभे लुब्धको रतिमच्युते ॥८३॥

टीका—हे देवर्षे ! त्वं धन्योऽसि यस्य तव कृपया नीचः लुब्धकः व्याधः अपि उत्पुलकः रोमाञ्चिततनुः सन् तत्क्षणात् रतिं लेभे । अहो विचित्रं ॥८२॥

हे नारद ! तुम धन्य हो, तुम्हारी कृपा से नीच व्याध भी पुलकित तनु होकर आशु हरिभक्ति को प्राप्त कर लिया । यही आश्चर्य्य है ॥८३॥

नारद कहे, वैष्णव तोमार अन्न किछु आय ।
व्याध कहे, यारे पाठाओ सेइ दिया याय ॥१९२
एत अन्न ना पाठाओ किछु कार्य्य नाञि ।
सबे दुइ जनार योग्य मात्रभक्ष्य चाइ ॥१९३

नारद कहे, ऐछे रह तुमि भाग्यवान् ।
एत बलि दुइ जन कैला अन्तर्धान ।।१९४
एइत कहिल तोमाय व्याधेर आख्यान ।
या शुनिले हय साधुसङ्ग प्रभावज्ञान ।।१९५
एइ आर तिन अर्थ गणनाते पाइल ।
एइ दुइ अर्थ मिलि छाव्विश अर्थ हैल ।।१९६
आर अर्थ शुन याहा अर्थेर भाण्डार ।
स्थूले दुइ अर्थ सूक्ष्मे बत्रिश प्रकार ।।१९७
आत्मा शब्दे कहे सर्व्वविध भगवान् ।
एक स्वयं भगवान् आर भगवानाख्यान ।१९८
ताते रमे येइ सेइ आत्माराम ।
विधिभक्त रागभक्त दुइबिध नाम ।।१९९
दुइविध भक्त हय चारि चारि प्रकार ।
पारिषद, साधनसिद्ध, साधकगण आर ।।२००
जाताजात रतिभेदे साधक दुइ भेद ।
विधि रागमार्गे चारि चारि अष्ट भेद ।।२०१
विधि भक्तेच नित्यसिद्ध पारिषद दास ।
सखा,गुरु,कान्तागण चारि विध प्रकाश २०२
साधनसिद्ध दास सखा गुरु कान्तागण ।
उत्पन्नरति साधक भक्त चारिविध जन ।२०३
अजातरति साधक भक्त ए चारि प्रकार ।
विधिमार्गे भक्त षोड़श प्रकार ।।२०४
रागमार्गे ऐछे भक्त षोड़श विभेद ।
दुइ मार्गे आत्माराम बत्रिश विभेद ।।२०५
मुनि निर्ग्रन्थ च अपि चारि शब्देर अर्थ ।
याहा येइ लागे ताहा करिये समर्थ ।।२०६
बत्रिश छाव्विश मिलि अष्ट पञ्चाश ।
आर दुइ भेद शुन अर्थेर प्रकाश ।।२०७
इतरेतर च दिया समास करिये ।
आटान्नबार आत्माराम नाम लइये ।।२०८
आत्मारामाश्च आत्मारामाश्च आटान्नबार ।
शेषे सब लोप करि राखि एकबार ।।२०९

तथाहि पाणिनिः—

सरूपाणामेकशेष एक विभक्तौ उक्तार्थानाम प्रयोग इति ।।*

आटान्नबारे आत्माराम सब लोप हय ।
एक आत्माराम शब्दे आटान्न अर्थ कय ।।२१०

तथाहि—

अश्वत्थवृक्षाश्च वटवृक्षाश्च कपित्थवृक्ष श्च आम्र वृक्षाश्च वृक्षाः ।।

टीका—एक विभक्तौ सस्वरूपाणामेक शेषएव शिष्यते, उक्तार्थानामप्रयोगोभवति ।।

पुनः पुनः एक विभक्ति युक्त एक शब्द का प्रयोग होने पर समास में, एक शब्द ही उक्त समुदय शब्द के अर्थ प्रकाशक रूप में रहता है, इस के द्वारा उक्त शब्द समूह का अर्थ प्रकाश होने से उक्त शब्द समूह का प्रयोग नहीं होता है। जिस प्रकार-राम, राम, राम प्रयोग स्थल में-एक राम शब्द प्रयोग होता है।

अश्वत्थ वृक्ष, वट वृक्ष, कपित्थ वृक्ष एवं आम्र वृक्ष—इतरेतर समास करने पर "वृक्षाः" शब्द अवशिष्ट रहता है।

अस्मिन् वने वृक्षा फलन्ति यैछे हय ।
तैछे सब आत्माराम कृष्णभक्ति करय ।।२११
आत्मारामाश्च समुच्चये कहिये चकार ।
मुनयश्च भक्ति करे एइ अर्थ तार ।।२१२
निर्ग्रन्था एव हैञा अपि निर्द्धारणे ।
एइ ऊनषष्टिप्रकार अर्थ करिल व्याख्याने ।२१३

सर्व्व समुच्चये एक आर अर्थ हय ।
आत्मारामाश्च मुनयश्च निर्ग्रन्थाश्च भजय २१४

यथा—

उरुक्रम एव, भक्तिमेव, अहैतुकीमेव, कुर्व्वन्त्येव ।

अपि शब्द अवधारणे शेष चारि बार ।
चारि शब्द सङ्गे एवे करिवे उच्चार ॥२१५
एइत करिल श्लोकेर षष्टिसंख्य अर्थ ।
एक अर्थ शुन आर प्रमाण समर्थ ॥२१६

तथाहि भगवत्सन्दर्भे सत्त्व रजस्तम इत्यस्य व्याख्यायाम् धृतो विष्णुपुराणीय-षष्ठांशस्य सप्तम्-अध्यायीयषष्टितम-श्लोकः—

विष्णुशक्तिः परा प्रोक्ता क्षेत्रज्ञा च तथापरा ।
अविद्या कर्म्मसंज्ञान्या तृतीया शक्तिरिष्यते ॥८४

तथाच अमरः—

क्षेत्रज्ञ आत्मा पुरुषः प्रधानं प्रकृतिः स्त्रियां ।

विष्णु की शक्ति सच्चिदानन्द रूपापरा, क्षेत्रज्ञाख्या अपरा जीवभूता शक्ति, एवं तृतीया अविद्या कर्म्म संज्ञा शक्ति है। इसके अपर नाम-अन्तरङ्गा चिच्छक्ति, वहिरङ्गा मायाशक्ति, एवं तटस्था जीव शक्ति है ॥८४॥

आत्मा शब्दे कहे क्षेत्रज्ञ जीव लक्षण ।
ब्रह्मादि कीट पर्य्यन्त तार शक्तिते गणन ।२१७
भ्रमिते भ्रमिते यदि साधुसङ्ग पाय ।
तबे सब त्यजि सेइ कृष्णेरे भजय ॥२१८
षाटि अर्थ करिलू सब कृष्णेर भजन ।
सेइ अर्थ हय सब इहार उदाहरण॥२१९
एकषष्टि अर्थ एबे स्फुरिल तोमा सङ्गे ।
तोमार भक्तिवशे उठे अर्थेर तरङ्गे ॥२२०
अर्थ शुनि सनातन विस्मित हैया ।
स्तुति करे महाप्रभुर चरणे धरिया ॥२२१
साक्षात ईश्वर तुमि व्रजेन्द्रनन्दन ।
तोमार निश्वासे सब वेद प्रवर्त्तन ॥२२२
तुमि वक्ता भागवते तुमि जान अर्थ ।
तोमा विना अन्य जानिते नाहिक समर्थ ।२२३
प्रभु कहे केन कर आमार स्तवन ।
भागवतेर स्वरूप केन ना कर विचारण ।२२४
कृष्णतुल्य भागवत विभु सर्व्वाश्रय ।
प्रति श्लोके प्रति अक्षरे नाना अर्थ कय ।२२५
प्रश्नोत्तरे भागवते करियाछे निर्द्धार ।
याहार श्रवणे लोके लागे चमत्कार ॥२२६

तथाहि प्राचीनकृतश्लोकः—

अहं वेत्ति शुको वेत्ति व्यासो वेत्ति न वेत्ति वा ।
भक्त्या भागवतं ग्राह्यं न बुद्धया न च टीकया ॥८५

टीका—अहं नारायणः भागवतं वेत्ति वेद्मि इति आर्षः। शुकः वेत्ति, व्यासः वेत्ति न वेत्ति वा, भक्त्या भागवतं ग्राह्यं, बुद्धया न टीकया न च

टीका—भक्त्या भागवतं भागवतार्थं ग्राह्यं ग्रहीतुं शक्यम्। न च बुद्धया विचारेण टीकया वा ग्राह्यमिति ॥८५॥

क्षेत्रज्ञ शब्द का अर्थ—आत्मा, पुरुष है, अर्थात् एकार्थक है, एवं ब्रह्म लिङ्ग प्रधान शब्द है, प्रकृति शब्द--लक्ष्मी लिङ्ग है, एवं एकार्थक है।

मैं नारायण श्रीमद् भागवत का अर्थ जानता हूँ, व्यास तनय शुकदेव भी जानते हैं, व्यासदेव किञ्चित् जान सकते हैं, न भी जान सकते हैं, भक्ति के द्वारा ही भागवत का मर्म्मार्थ हृदय में प्रकाशित होता है, किन्तु बुद्धि अथवा टीका के द्वारा श्रीमद् भागवत के मर्माथ बोध नहीं होता है ॥८५॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१।२३)--

ब्रूहि योगेश्वरे कृष्णे ब्रह्मण्ये धर्म्मवर्म्मणि ।
स्वां काष्ठामधुनोपेते धर्म्मः कं शरणं गतः ॥८६॥

टीका—धर्म्मवर्म्मणि योगेश्वरे ब्रह्मण्ये कृष्णे अधुना स्वां काष्ठां मर्य्यादां उपेते सति धर्म्मः कं जनं शरणं गतः तत् ब्रूहि वद ॥८६॥

श्रीमद् भागवत के १।१।२३ में उक्त है—ऋषिगण जिज्ञासा किये थे, हे सूत ! धर्म रक्षक योगेश्वर कृष्ण धर्मज्ञान प्रभृति को लेकर अधुना स्वधाम गमन करते पर धर्म किस को अवलम्बन कर है ? कहो।८६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।३।४३)

कृष्णे स्वधामोपगते धर्म्मज्ञानादिभिः सह ।
कलौ नष्टदृशामेषः पुराणार्कोऽधुनोदितः ॥८७॥

टीका—धर्म्मज्ञानादिभिः सह कृष्णे स्वधाम उपगते सति कलौ नष्टदृशां नयनरहितानां ज्ञानान्धानामित्यर्थः जनानां सम्बन्धे एषः पुराणार्कः प्राचीनभास्करः भागवतं अधुना उदितः ॥८७॥

श्रीमद् भागवत के १।३।४५ में कथित है-भगवान् श्रीकृष्ण, धर्म ज्ञान प्रभृति के सहित स्वधाम प्रस्थान करने पर कलियुग के प्रभाव से मानव के ज्ञान नेत्र अज्ञानान्धकार से आच्छन्न होने पर नष्ट दृष्टि विवेक शून्य जीव के पक्ष में अधुना पुराण भास्कर रूप श्रीमद् भागवत उदित है ॥८७॥

एइत करिल एक श्लोकेर व्याख्यान ।
वातुलेर प्रलाप करि के करे प्रमाण ॥२२७
आमा हेन येवा केह तो वातुल हय ।
एइ दृष्टे भागवतेर अर्थ जानय ॥२२८
पुनः सनातन कहे युड़ि दुइ करे ।
प्रभु आज्ञा दिला वैष्णव स्मृति करिबारे ।२२९
मुञि नीच जाति किछु ना जानि विचार ।
मो हैते कैछे हय स्मृति परचार ॥२३०
सूत्र करि दिशा यदि कर उपदेश ।
आपने करह यदि हृदये प्रवेश ॥२३१
तबे तार दिशा स्फुरे मो नीचेर हृदय ।
ईश्वर तुमि ये कहाओ सेइ सिद्ध हय ॥२३२

प्रभु कहे ये करिते करिबे तुमि मन ।
कृष्ण सेइ सेइ तोमा कराबे स्फुरण ॥२३३
तथापि सूत्ररूप शुन दिग्‌दरशन ।
सर्व्वावरण लिखि आदौ गुरु आश्रयण ॥२३४
गुरुलक्षण शिष्यलक्षण दुँहार परीक्षण ।
सेव्य भगवान् सब मन्त्र विचारण ॥२३५
मन्त्र-अधिकारी मन्त्रशुद्ध्यादि शोधन ।
दीक्षा प्रातः स्मृति कृत्य शौच आचमन ॥२३६
दन्तधावन स्नान सन्ध्यादि वन्दन ।
गुरुसेवा ऊर्द्ध्वपुण्ड्र-चक्रादि-धारण ॥२३७
गोपीचन्दन मालाधृति तुलसी आहरण ।
वस्त्र पीठ गृहसंस्कार कृष्णप्रबोधन ॥२३८
पञ्च षोड़श पञ्चाशत् उपचारे अर्च्चन ।
पञ्चकाल पूजारति कृष्णेर भोजन शयन २३९
श्रीमूर्त्तिलक्षण आर शालग्रामलक्षण ।
कृष्णक्षेत्रयात्रा कृष्णमूर्त्तिदरशन ॥२४०
नाममहिमा नामापराध दूरे वर्ज्जन ।
वैष्णवलक्षण सेवा अपराधखण्डन ॥२४१
शङ्खजल गन्धपुष्प धूपादि लक्षण ।
जप स्तुति परिक्रमा दण्डवत् वन्दन ॥२४२
पुरश्चरणविधि कृष्णप्रसाद-भोजन ।
अनिवेदित-त्याग वैष्णवनिन्दादि-वर्ज्जन ।२४३
साधुलक्षण साधुसङ्ग साधुर सेवन ।
असतसङ्गत्याग श्रीभागवतश्रवण ॥२४४
दिनकृत्य पक्षकृत्य एकादश्यादि विवरण ।
मासकृत्य जन्माष्टम्यादि विधि विचारण ।२४५
एकादशी जन्माष्टमी वामनद्वादशी ।
श्रीरामनवमी आर नृसिंहचतुर्द्दशी ॥२४६

एइ सवेर विद्धात्याग अविद्धा-करण ।
अकरणे दोष कैले भक्तिलम्भन ॥२४७
सर्व्वत्र प्रमाण दिबे पुराणवचन ।
श्रीमूर्त्ति विष्णुमन्दिर चरणलक्षण ॥२४८
सामान्य सदाचार आर वैष्णव आचार ।
कर्त्तव्याकर्त्तव्य स्मार्त्त व्यवहार ॥२४९
एइ संक्षेपे करिल दिग्दरशन ।
यबे तुमि लिखिबे कृष्ण कराबे स्फुरण ॥२५०
एइत करिल प्रभुर सनातनेर प्रसाद ।
याहार श्रवणे भक्तेर खण्डे अवसाद ॥२५१
निजग्रन्थे कर्णपूर विस्तार करिया ।
सनातने प्रभुर प्रसाद राखियाछे लिखिया २५२

तथाहि श्रीचैतन्यचन्द्रोदयनाटके नवमाङ्के शत-श्लोके प्रतापरुद्रं प्रति वार्त्ताहारिवाक्यम्—

गौड़ेन्द्रस्य सभाविभूषणमणिस्त्यक्त्वा य ऋद्धां श्रियं,
रूपस्याग्रज एष धव तरुणीं वैराग्यलक्ष्मीं दधे ।
अन्तर्भक्तिरसेन पूर्णरसो वाह्येऽवधूताकृतिः,
शैवालैः पिहितमहासर इव प्रीतिप्रदस्तद्विदां ॥८८

टीका—यः एषः गौड़ेन्द्रस्य वङ्गाधिपतेः सभाविभूषणमणिः रूपस्य अग्रजः श्रीसनातनः ऋद्धां समृद्धिशालिनीं श्रियं त्यक्त्वा विहाय तरुणीं वैराग्य-लक्ष्मीं दधे । सः किम्भूतः ?—अन्त स्वान्ते भक्ति-रसेन पूर्णरसः, वाह्ये अवधूताकृतिः, शैवालैः पिहितं आवृतं महासर इव, तद्विदां भगवत्तत्त्वज्ञानां प्रीतिप्रदः प्रेमजनकः ॥८८॥

श्रीरूप के अग्रज यह सनातन वङ्गाधिपति की सभा के भूषण मणि स्वरूप थे। इन्होंने महा समृद्ध सम्पत्ति को परित्याग करके भवार्णव तरुणी रूपिणी वैराग्य लक्ष्मी को आश्रय किया था, किंवा प्रौढ़ा को परित्याग कर जिस प्रकार नवीना को ग्रहण किया जाता है, उस प्रकार अति समृद्ध सम्पद को त्याग कर नवीन वैराग्य लक्ष्मी को ग्रहण किया था, शैवाल से समावृत सरोवर के समान सनातन के हृदय भक्ति रससे परिपूर्ण था, किन्तु बाहर अवधूत वेश कठोर सन्न्यासी वेश उनका था, यह सनातन भागवत तत्त्वज्ञ व्यक्ति वृन्द को आनन्द दायक थे ।८८

तथाहि श्रीचैतन्यचन्द्रोदयनाटके एकादश-श्लोके प्रतापरुद्रं प्रति वार्त्ताहारिवाक्यम्—

तत् सनातनमुपागतमक्ष्णो-
र्दृष्टिमात्रमतिमात्रदयार्द्रः :
आलिलिङ्ग परिघायतदोर्भ्यां,
सानुकम्पमथ चम्पकगौरः ॥८९॥

टीका—अथ चम्पकगौरः उपागतं तं सनातनं अक्ष्णोः चक्षुषोः दृष्टिमात्रं अतिमात्र दयार्द्रः सन् परिघायतदोर्भ्यां सानुकम्पं यथा स्यात्तथा आलिलिङ्ग ॥८९॥

चम्पक कुसुमवत् गौराङ्ग देव सनातन को उपस्थित देखकर अतीव दयालु हुये, एव विशाल बाहु युगल के द्वारा प्रीति पूर्वक आलिङ्गन किये थे ।८९

तथाहि श्रीचैतन्यचन्द्रोदयनाटके चतुरधिक शतश्लोके प्रतापरुद्रं प्रति वार्त्ताहारिवाक्यम्—

कालेन वृन्दावनकेलिवार्त्ता,
लुप्तेति तां ख्यापयितुं विशिष्य ।
कृपामृतेनाभिषिषेच देव-
स्तत्रैव रूपञ्च सनातनञ्च ॥९०॥

काल के प्रभाव से श्रीराधाकृष्ण की वृन्दावन लीला वार्त्ता विलुप्त हो गई थी उस के प्रचारार्थ श्रीचैतन्यदेव श्रीरूप एवं सनातन गोस्वामी को प्रयाग एवं काशी में उक्त विषय से अभिषिक्त किये थे ।।९०

एइ कहिल सनातने प्रभुर प्रसाद ।
यार श्रवणे भक्तेर खण्डे अवसाद ॥२५३
कृष्णेर स्वरूपगणेर सकल हय ज्ञान ।
विधि राग मार्गे साधन विधान बिधान ।२५४

कृष्णप्रेम भक्तिरस भक्तिर सिद्धान्त ।
इहार श्रवणे भक्त जानेन सब अन्त ॥२५५
श्रीचैतन्य-नित्यानन्द-अद्वैत-चरण ।
यार प्राणधन सेइ प्राय सेइ धन ॥२५६
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२५७

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे आत्मारामाश्चेति श्लोक व्याख्यायां सनातनानुग्रहो नाम चतुर्व्विंशतिः परिच्छेदः ॥२४॥





पञ्चविंश परिच्छेद ।

वैष्णवीकृत्य सन्न्यासिमुखान् काशीनिवासिनः ।
सनातनं सुसंस्कृत्य प्रभुर्नीलाद्रिमागतः ।१॥

टीका—प्रभुः श्रीचैतन्यः काशीनिवासिनः सन्न्यासिमुखान् वैष्णवीकृत्य सनातनं सुसंस्कृत्य नीलाद्रिमाजगाम ॥१॥

श्रीचैतन्य देव काशी निवासी सन्न्यासी वृन्द को वैष्णव धर्म ग्रहण कराकर एवं सनातन को दीक्षित कर नीलाचल में उपस्थित हुये थे ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
एइमत महाप्रभु दुइ मास पर्य्यन्त ।
शिक्षाइला ताँरे भक्तिसिद्धान्तेर अन्त ॥२
परमानन्द कीर्त्तनीया शेखरेर सङ्गी ।
प्रभुके कीर्त्तन शुनाय अति बड़ रङ्गी ॥३
सन्न्यासीर गण प्रभु यदि उपेक्षिल ।
भक्तदुःख खण्डाइते तारे कृपा कैल ॥४
सन्न्यासीरे कृपा पूर्व्वे लिखियाछि विस्तारिया ।
उद्देशे कहिये इहा संक्षेप करिया ॥५
याँहा ताँहा प्रभुनिन्दा करे सन्न्यासीर गण ।
शुनि दुःखे महाराष्ट्री करये चिन्तन ॥६
प्रभुर स्वभावे येवा देखे सन्निधाने ।
स्वरूप अनुभवि ताँरे ईश्वर करि माने ॥७
कोन प्रकारे पार यदि एकत्र करिते ।
इहा देखि सन्न्यासिगण हबे इहाँर भक्ते ॥८
वाराणसीवास आमार हय सर्व्वकाले ।
सर्व्व काल दुःख पाव इहा ना करिले ॥९
एत चिन्ति निमन्त्रिल सन्न्यासीर गणे ।
तबे सेइ विप्र आइल महाप्रभुर स्थाने ॥१०
हेनकाले निन्दा शुनि शेखर तपन ।
दुःख पाञा प्रभुपदे कैल निवेदन ॥११
भक्तदुःख देखि प्रभु मनेते चिन्तिल ।
सन्न्यासीर मन फिराइते मन हैल ॥१२
हेनकाले विप्र आसि करिल निमन्त्रण ।
अनेक दैन्यादि करि धरिया चरण ॥१३
तबे महाप्रभु ताँर निमन्त्रण मानिला ।
आर दिन मध्याह्न करि ताँर घरे गेला ॥१४
ताँहा यैछे कैल प्रभु सन्न्यासी निस्तार ।
पञ्च तत्त्वाख्याने ताहा कहियाछि विस्तार ।१५
ग्रन्थ बाढे पुनरुक्ति हयेत कथन ।
ताँहा ये ना लिखिल ताहा करिये लिखन ।१६
ये दिवसे प्रभु सन्न्यासीरे कृपा कैल ।
से दिवस हैते ग्रामे कोलाहल हैल ॥१७
लोकेर संघट्ट आइसे प्रभुरे देखिते ।
नाना शास्त्रे पण्डित आइसे शास्त्र विचारिते १८

सर्व्व शास्त्र खण्डि प्रभु भक्ति करे सार।
सयुक्तिक वाक्ये मन फिराय सवार ॥१९
उपदेश लञा करे कृष्णसंकीर्त्तन।
सर्व्व लोक हासे गाय करये नर्त्तन ॥२०
प्रभुरे प्रणत हैल सन्न्यासीर गण।
आतममध्ये गोष्ठी करे अति मनोरम ॥२१
प्रकाशानन्देर शिष्य एक ताँहार समान।
सभामध्ये कहे प्रभुर करिया सम्मान ॥२२
श्रीकृष्णचैतन्य हय साक्षात् नारायण।
व्याससूत्रेर अर्थ करे अति मनोरम ॥२३
उपनिषदेर करे मुख्यार्थ छाड़िया।
आचार्य्य कल्पना करे आग्रह करिया ॥२४
आचार्य्य कल्पित अर्थ पण्डित ये शुने।
मुखे हय हय करे हृदये ना माने ॥२५
श्रीकृष्णचैतन्य–वाक्य दृढ़ सत्य मानि।
कलिकाले सन्न्यासे संसार नाहि जिनि ॥२६
"हरेर्नाम" श्लोकेर येइ करिल व्याख्यान।
सेइ सत्य सुखदार्थ परम प्रमाण ॥२७
भक्ति विना मुक्तिहीन भागवते कय।
कलिकाले नामाभाषे सुखे मुक्ति हय ॥२८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।१४।४)---

श्रेयः सृतिं भक्तिमुदस्य ते विभो,
क्लिश्यन्ति ये केवलबोधलब्धये।
तेषामसौ क्लेशल एव शिष्यते,
नान्यद्यथा स्थूलतुषावघातिनां ॥२॥

श्रीमद् भागवत के १०।१४।४ में उक्त है, हे विभो! जो सब साधक गण सर्व प्रकार कल्याण प्रद भक्ति को छोड़कर केवल मात्र शुष्क ज्ञान लाभ हेतु संयम रूप क्लेश करते हैं, तुषावघाती व्यक्ति के समान वे भी फल लाभ करने में असमर्थ होते हैं; फलतः केवल मात्र परिश्रम ही सार होता है।२॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२।३२)--

येऽन्येरविन्दाक्ष विमुक्तमानिन-
स्त्वय्यस्तभावादविशुद्धबुद्धयः।
आरुह्य कृच्छ्रेण परं पदं ततः,
पतन्त्यधोऽनादृतयुष्मदङ्घ्रयः ॥३॥

श्रीमद् भागवत के १०।१।३२ में श्रीकृष्ण को लक्ष्यकर देवगण कहे थे—हे कमल लोचन! यदि आपके प्रति भक्ति नहीं होती है तो, बुद्धि शुद्धि नहीं होती है, इस प्रकार अशुद्ध मना व्यक्ति गण अपने को मुक्त मानते हैं, किन्तु वे सब बहु श्रम से मोक्ष के सन्निधान में उपस्थित होकर भी आपके चरण कमल की अवज्ञा करने के कारण अधोगामी होते हैं, अर्थात् संसार में निपतित होते हैं ॥३॥

ब्रह्म शब्दे कहे षड़ैश्वर्य्यपूर्ण भगवान्।
ताँरे निर्व्विशेष स्थापि पूर्णता हय हान ॥२९
श्रुति पुराण कहे कृष्णेर चिच्छक्ति विलास।
ताहा नाहि माने पण्डित करे उपहास ॥३०
चिदानन्द कृष्णविग्रह मायिक करि मानि।
एइ बड़ पाप सत्य चैतन्येर वाणी ॥३१

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।९।३)---

नातः परं परम यद्भवतः स्वरूप-
मानन्दमात्रमविकल्पमविद्धवर्च्चः।
पश्यामि विश्वसृजमेकमविश्वमात्मन्,
भूतेन्द्रियात्मकमदस्त उपाश्रितोऽस्मि ॥४॥

टीका—हे परम! हे प्रवर! अविद्धवर्च्चः अनाच्छादिततेजः अविकल्पं सुतरां आनन्दमात्रं भवतः यत् स्वरूप अस्ति, तत् अतः परं न पश्यामि। हे आत्मन्! ते तव अदः इदं रूपं अहं उपाश्रितोऽस्मि। तत् किम्भूतं?—एकं उपास्येषु मुख्य, यतः विश्वसृजं, किन्तु अविश्वं पुनश्च भूतेन्द्रियात्मकं ॥४॥

श्रीमद् भागवत के ३।९।३ में लिखित है—

श्रीमद् भागवत के ३।९।३ में लिखित है—श्रीमद् भागवत ध्यान योग से हृदय पटल में भगवान् की चिन्मय मूर्त्ति को अवलोकन कर विधाता स्तव कर कहते हैं-हे श्रेष्ठ ! तुम्हारे अनावृत तेजः स्वरूप निर्विशेष आनन्द मूर्त्ति से मैंने अधुना जिस स्वरूप का अनुभव किया है, उसको छोड़कर अपर कुछ भी देखने में नहीं आता है, वरं देख रहा है, यही वह है।

हे आत्मन् ! मैं उस रूप की शरण ग्रहण किया। यह मूर्त्ति विश्व से पृथक् है, अथच इस से विश्व की सृष्टि हो रही है, यह मूर्त्ति उपास्य स्वरूप के मध्य में प्रधान है, एवं भूतेन्द्रियादि समूह के उत्पत्ति हेतु है ।।४।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।९।४)—

तद्वा इद भुवनमङ्गलमङ्गलाय,
ध्याने स्म नो दर्शितं तत् उपासकानां ।
तस्मै नमो भगवतेऽनुविधेम तुभ्यं,
यो नादृतो नरकभाग्भिरसत्प्रसङ्गैः ।।५।।

टीका—हे भुवनमङ्गल ! हे त्रिभुवनानां कल्याणकर ! स्म विस्मये, नः अस्माकं मङ्गलाय कल्याणार्थं त्वया इदं तद्वा ध्याने दर्शितं। तस्मै भगवते तुभ्यं नमः अनुविधेम परिचर्य्यया करवाम। यः त्वं नरकभाग्भि. असत्प्रसङ्गैः न आदृतः स्यात् ।५

श्रीमद् भागवत के ३।९।४ में उक्त हैं—हे भुवन मङ्गलमय ! आपने क्या हम सब के कल्याणार्थ उपासना हेतु ध्यान में इस रूप को दर्शाया है ? हे भगवन् ! परिचर्य्या के द्वारा आप को नमस्कार करते हैं असत् प्रसङ्ग अर्थात् निरीश्वर वादी कुतर्क परायण व्यक्ति गण ही आपको अनादर करते हैं ।।५

तथाहि श्रीमद् भगवद्गीतायाम् (९।११)—

अवजानन्ति मां मूढ़ा मानुषीं तनुमाश्रितं ।
परं भावमजानन्तो सर्व्वभूतमहेश्वरं ।।६।।

टीका—सर्व्वभूतमहेश्वरं परं भावं अजानन्तः मूढ़ाः अज्ञाः मानुषीं मानवीं तनुं आश्रितं मां अवजानन्ति अवमन्यन्ते ।।६।।

श्रीमद् भगवद् गीता में उक्त है—मैं सर्वभूत महेश्वर हूँ, मानवी तनु परिग्रह किया हूँ, किन्तु अज्ञ व्यक्ति गण परमतत्त्व को न जानकर मुझ को अवहेलन करते हैं ।।६।।

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम्— (१६।१९)—

तानहं द्विषतः क्रूरान् संसारेषु नराधमान् ।
क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु ।।७।।

टीका—तान् द्विषतः क्रूरान् अशुभान् नराधमान् संसारेषु जन्ममरणवर्त्मसु आसुरीषु योनिषु अहं अजस्रं निरन्तरं क्षिपामि । ७।।

श्रीमद् भगवद् गीता में उक्त है—मैं उन सब साधु द्रोही, क्रूर, अमङ्गलकारी नराधम वृन्द को संसारस्थ आसुरी योनि में अजस्रनिक्षेप करता रहता हूँ ।।७।।

सूत्रे परिणामवाद ताहा ना मानिया ।
विवर्त्तवाद स्थापे व्यास भ्रान्त वलिया ।।३२

एइत कल्पित अर्थ, मने नाहि ताय ।
शास्त्र छाड़ि कुकल्पना पाषण्ड बुझाय ।।३३

परमार्थ विचार गेल करिमात्र वाद ।
काँहा मुजि पाव काँहा कृष्णेर प्रसाद ।।३४

व्याससूत्रेर अर्थ आचार्य्य करि आच्छादन ।
एइ सत्य हय श्रीकृष्णचैतन्य-वचन ।।३५

चैतन्य गोसाञि येइ कहे सेइ मत सार ।
आर यत मत सेइ सब छार खार ।।३६

एत कहि सेइ करे कृष्णसंकीर्त्तन ।
शुनि प्रकाशानन्द किछु कहेन वचन ।।३७

आचार्य्येर आग्रह अद्वैत वाद स्थापिते ।
ताते सूत्रेर व्याख्या करे अन्य रीते ।।३८

भगवत्ता मानिले अद्वैत ना याय स्थापन ।
अतएव सब शास्त्र करये खण्डन ।।३९

येइ ग्रन्थकर्त्ता चाहे स्वमत स्थापिते ।
शास्त्रेर सहज अर्थ नहे ताँहा हैते ॥४०
मीमांसक कहे ईश्वर कर्म्मेर अङ्ग हन ।
साङ्ख्य कहे जगतेर प्रकृति कारण ॥४१
न्याय कहे परमाणु हैते बिश्व हय ।
मायावादी निर्व्विशेषे ब्रह्म हेतु कय ॥४२
पातञ्जल कहे कृष्ण स्वरूप आख्यान ।
अतएव वेदमते कहे स्वयं भगवान् ॥४३
छयेर छय मत व्यास कैल आवर्त्तन ।
सेइ सब सूत्र लञा बेदान्त वर्णन ॥४४
वेदान्तमते ब्रह्म साकार निरूपण ।
निर्गुण व्यतिरेके तेँह हय त सगुण ॥४५
परम कारण ईश्वर केह नाहि माने ।
स्व स्व मत स्थापे परमतेर खण्डने ॥४६
ताते छय दर्शन हैते तत्त्व नाहि जानि ।
महाजन येइ कहे सेइ सत्य मानि ॥४७

तथाहि एकादशीतत्त्वे दशमीविद्धैकादशीविचारेधृत-
हिमाद्रिनिर्वन्धीयव्यासवचनं—

तर्कोऽप्रतिष्ठः श्रुतयो विभिन्नाः,
नासावृषिर्यस्य मतं न भिन्नं ।
धर्म्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां,
महाजनो येन गतः स पन्थाः ।८॥

मानवीय बुद्धि प्रसूत तर्क युक्ति के द्वारा कर्त्तव्याकर्त्तव्य का निरूपण नहीं होता है, वेद समूह भी भिन्न भिन्न आदर्श युक्त हैं, इस प्रकार ऋषि विरल हैं, जिनके साथ मतभेद अपर ऋषि का नहीं है, धर्म का वास्तविक रूप कन्दरा में विहित है, सुतरां साधु व्यक्ति गण जिस प्रकार आचरण करते है, उस पथ को अवलम्बन करना ही श्रेयस्कर है ॥८

श्रीकृष्णचैतन्य-वाणी अमृतेर धार ।
तिँह ये कहये वस्तु सेइ तत्त्व सार ॥४८

एसब वृत्तान्त शुनि महाराष्ट्री ब्राह्मण ।
प्रभुके कहिते सुखे करिला गमन ॥४९
हेनकाले प्रभु पञ्चनदे स्नान करि ।
देखिते चलियाछेन बिन्दुमाधव हरि ॥५०
पथे सेइ विप्र सब वृत्तान्त कहिल ।
शुनि महाप्रभु सुखे ईषत् हासिल ॥५१
माधव सौन्दर्य्य देखि आविष्ट हइला ।
अङ्गनेते आसि प्रेमे नाचिते लागिला ॥५२
शेखर, परमानन्द, सपन, सनातन ।
चारिजन मिलि करे नामसंकीर्त्तन ॥५३

तथा एकादशीतत्त्वे दशमीविद्धैकादशीविचारे
धृतहिमाद्रिनिवन्धीयव्यासवचनम्—

हरि हरये नमः कृष्ण यादवाय नमः ।
गोपाल गोविन्द राम श्रीमधुसूदन ॥९॥

हरि हरये नमः, कृष्ण यादवाय नमः ।
गोपाल, गोविन्द राम श्रीमधुसूदन ॥९॥

चौदिकेते लोक लक्ष बोले हरि हरि ।
उठिल मङ्गल ध्वनि स्वर्ग मर्त्य भरि ॥५४
निकटेते ध्वनि शुनि सेइ प्रकाशानन्द ।
देखिते कौतुके आइल लञा शिष्यवृन्द ॥५५
देखिया प्रभुर नृत्य देहेर माधुरी ।
शिष्यगण सङ्गे सेइ बोले हरि हरि ॥५६
कम्प स्वरभङ्ग स्वेद वैवर्ण्य स्तम्भ ।
अश्रुधाराय भिजे लोक, पुलक कदम्ब ॥५७
हर्ष दैन्य चापल्यादि सञ्चारी विकार ।
देखि काशीवासी लोकेर हैल चमत्कार ॥५८
लोकसंघट्ट देखि प्रभुर वाह्य हैल ।
सन्नचासीर गण देखि नृत्य सम्वरिल ॥५९

प्रकाशानन्देर प्रभु वन्दिला चरण ।
प्रकाशानन्द आसि ताँर धरिलाचरण ॥६०
प्रभु कहे तुमि जगद्गुरु पूज्यतम ।
आमि तोमार ना हइ शिष्येर शिष्य सम ।६१
श्रेष्ठ हैञा केन कर हीनेर वन्दन ।
आमार सर्व्वनाश हय तुमि ब्रह्मसम ॥६२
यद्यपि तोमारे सब ब्रह्मसम भाषे ।
लोक शिक्षा लागि एमत करिते ना आइसे ।६३
तिँह कहे तोमार निन्दा पूर्व्वे ये करिल ।
तोमार चरणस्पर्शे सब क्षय गेल ॥६४

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।५) नैष्कर्म्मचमित्यस्य श्रीविश्वनाथचक्रवर्त्ति-कृतव्याख्यायां धृतं वासनाभाष्य-धृतपरिशिष्टवचनम्—

जीवन्मुक्ता अपि पुनर्बन्धनं यान्ति कर्म्मभिः ।
यद्यचिन्त्यमहाशक्तौ भगवत्यपराधिनः ॥१०॥

टीका—यदि जीवन्मुक्ता अपि अचिन्त्य-महाशक्तौ भगवति अपराधिनः, तदा पुनः कर्म्मभिः तदपराधविशिष्टकर्म्मभिः बन्धनं यान्ति प्राप्नुवन्ति ।१०

अचिन्त्य शक्तिमान् भगवान् के निकट अपराधी होने पर जीवन्मुक्त व्यक्ति को भी अपराध हेतु पुनर्वार संसार बन्धन को ग्रहण करना पड़ता है ॥१०॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३४।८६)—

स वै भगवतः श्रीमत्पादस्पर्शहताशुभः ।
भेजे सर्पवपुर्हित्वा रूपं विद्याधरार्च्चितं ॥११॥

टीका - भगवतः श्रीमत्पादस्पर्शहताशुभः श्रीमतः ऐश्वर्य्यवतः पादस्य चरणस्य स्पर्शेन हतानि अशुभानि अमङ्गलानि यस्य सः वै निश्चितं सर्पवपुः भुजगदेहं हित्वा परित्यज्य विद्याधरार्च्चितं रूपं भेजे ॥११॥

श्रीमद् भागवत के १०।३४।८६ में उक्त है—श्रीभगवान् के श्रीचरण स्पर्श मात्र से ही उसका अमङ्गल विनष्ट हुआ, उस समय वह भुजग देह को त्याग कर विद्याधर के अर्च्चित शरीर धारण किया ॥११॥

प्रभु कहे विष्णु विष्णु आमि जीव हीन ।
जीवे विष्णु मानि एइ अपराध-चिन ॥६५
जीवे विष्णु बुद्धि करे येइ ब्रह्मसम ।
नारायणे माने तारे पाषण्डे गणन ॥६६

तथाहि पाद्मोत्तरखण्डे (२३।१२) तथा हरिभक्ति-विलासस्य (१।७३) वैष्णवतन्त्रमिति कृत्वा धृतश्च--

यस्तु नारायणं देवं ब्रह्मरुद्रादिदैवतैः ।
समत्वेनैव मन्येत स पाषण्डी भवेद्ध्रुवं ॥१२॥

देवादि देव श्रीनारायण को जो व्यक्ति ब्रह्मा, रुद्र प्रभृति देवता के तमान मानते हैं, वे निश्चित रूपसे पाषण्डी वनेंगे ॥१२॥

प्रकाशानन्द कहे तुमि साक्षात् भगवान् ।
तबु यदि कर तार दास अभिमान ॥६७
तबु पूज्य हओ तुमि आमा सबा हैते ।
सर्व्वनाश हय एइ तोमार निन्दाते ॥६८

तथाहि श्रीमद्भागवते (६।१४।५)--

मुक्तानामपि सिद्धानां नारायणपरायणः ।
सुदुर्ल्लभः प्रशान्तात्मा कोटिष्वपि महामुने ॥१३॥

श्रीमद् भागवत के ६।१४।५ में उक्त है—हे महामुने! सिद्धि प्राप्त मुक्त कोटि कोटि व्यक्ति वृन्द के मध्य में श्रीहरिभक्ति परायण प्रशान्त चेता मनुष्य अतीव दुर्ल्लभ है ॥१३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।४।३०)—

आयुः श्रियं यशो धर्म्मं लोकानाशिष एव च ।
हन्ति श्रेयांसि सर्व्वाणि पुंसो महदतिक्रमः ॥१४

महत् व्यक्ति की अवज्ञा करने से मानव के आयु, धन सम्पति, यशः, धर्म इह लोक परलोक, एवं अभीष्ट प्राप्ति का सुयोग प्रभृति समस्त मङ्गल विनष्ट होते हैं ॥१४॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (७।५।३२)—

नैषां मतिस्तावदुरुक्रमाङ्घ्रिं,
स्पृशत्यनर्थापगमो यदर्थः।
महीयसां पादरजोऽभिषेकं,
निष्किञ्चनानां न वृणीत यावत् ॥१५॥

श्रीमद् भागवत के ७।५।३२ में प्रह्लाद कहे थे—जब तक विषयाभिमान रहित साधु वृन्द की चरण धूलि से अभिषिक्त मानव नहीं हाता है, तब तक श्रीभगवान् के चरण कमलों में निश्चयात्मिका बुद्धि नहीं होती है। उस प्रकार मति होने से अनर्थ अर्थात् संसार बन्धन विनष्ट हाता है ॥१५॥

एबे तोमार पादाब्जे उपजिबे भक्ति।
तथि लागि करि तोमार चरणे प्रणति ॥६९
एत बलि प्रभु लञा तथाइ वसिला।
प्रभुके प्रकाशानन्द पुछिते लागिला ॥७०
मायावादे करिले यत दोषेर आख्यान।
सबे जानि आचार्य्येर कल्पित व्याख्यान ।७१
सूत्रेर करिले तुमि मुख्यार्थ विवरण।
ताहा शुनि सबार हैल चमत्कार मन ॥७२
तुमित ईश्वर तोमार आछे सर्व्वशक्ति।
संक्षेपरूपे कह तुमि शुनिते हय मति ॥७३
प्रभु कहे आमि जीव अति तुच्छ ज्ञान।
व्याससूत्रेर गम्भीरार्थ व्यास भगवान् ॥७४
ताँर सूत्रेर अर्थ कोन जीव नाहि जाने।
अतएव आपने सूत्रार्थ करियाछे व्याख्याने ।७५
येइ सूत्रकर्त्ता से यदि करये व्याख्यान।
तबे सूत्रेर मूल अर्थ लोकेर हय ज्ञान ॥७६
प्रणवेर येइ अर्थ गायत्रीते सेइ हय।
सेइ अर्थ चतु-श्लोकीते विवरिया कय ॥७७
ब्रह्माके ईश्वर चतुःश्लोकी ये कहिल।
ब्रह्म नारदे सेइ उपदेश कैल ॥७८

नारद सेइ अर्थ व्यासेरे कहिल।
शुनि वेदव्यास मने विचार करिल ॥७९
एइ अर्थ आमार सूत्रेर व्याख्या रूप।
श्रीभागवत करिब सूत्रेर भाष्यस्वरूप ॥८०
चारिवेद उपनिषद यत किछु हय।
तार अर्थ लञा व्यास करिल सञ्चय ॥८१
येइ सूत्रे येइ ऋक् विषय वचन।
भागवते सेइ ऋक् श्लोकनिबन्धन ॥८२
अतएव सूत्रेर भाष्य श्रीभागवत।
भागवत-श्लोक उपनिषद कहे एक मत ॥८३

तथाहि श्रीमद् भागवते (८।१।१०)---

आत्मावास्यमिदं विश्वं यत् किञ्चिज्जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मागृधः कस्यचिद्धनं ॥१६॥

टीका—जगत्यां त्रिलोक्यां यत्किञ्चित् स्थानमस्ति, तत् इदं विश्वं आत्मावास्यं, अतः तेन ईश्वरेण भुञ्जीथाः। कस्यचित् कस्यचिदपि धनं मागृधः माकाङ्क्षीः ॥१६॥

श्रीमद् भागवत के ८।१।१० में उक्त है—त्रिभुवन में जो भी पदार्थ दृष्ट होते हैं, वे सब ही पदार्थ ईश्वर की सत्त्वा एव चैतन्य द्वारा परिव्याप्त हैं। अतः ईश्वर स्वोपार्जित कर्म्मानुरूप जो कुछ पदार्थ प्रदान किये हैं, उसी का उपभोग करो, स्वार्थ परायण होकर अपर की धनाकाङ्क्षा न करो ॥१६॥

भागवते सम्बन्ध अभिधेय प्रयोजन।
चतुःश्लोकीते प्रकट तार करियाछे लक्षण ॥८४
आमि सम्बन्ध तत्त्व, आमार ज्ञान विज्ञान।
आमा पाइते साधन भक्ति अभिधेय नाम ॥८५
साधनेर फल प्रेम मूल प्रयोजन।
सेइ प्रेमे पाय जीव आमार सेवन ॥८६

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।६।३०)---

ज्ञानं परमगुह्यं मे यद्विज्ञानसमन्वितं।
सरहस्यं तदङ्गञ्च गृहाण गदितं मया ॥१७॥

श्रीमद् भागवत के २।६।३० में भगवान् ब्रह्मा को कहे थे—हे ब्रह्मन्! विज्ञान समन्वित मत् सम्बन्धीय जो परम गुह्य ज्ञान है, रहस्य के सहित उसका वर्णन मैं करता हूँ, तुम उसका एवं उसके सम्बन्धीय अङ्ग समूह का अवधारण करो ॥१७॥

एइ तिन अर्थ आमि कहिनु तोमारे।
जीव तुमि एइ तिन नारिबे जानिबारे ॥८७

यैछे आमार स्वरूप यैछे आमार स्थिति।
यैछे आमार कर्म्म षड़ैश्वर्य्य-शक्ति ॥८८

आमार कृपाय ए सब स्फुरुक तोमारे।
एत बलि तिन तत्त्व कहिला ताँहारे ॥८९

तथाहि श्रीमद् भागवते (२।६।३१)—

यावानहं यथा भावो यद्रूपगुणकर्म्मकः।
तथैव तत्त्वविज्ञानमस्तु ते मदनुग्रहात् ॥१८॥

भा० २।६।३१ में भगवान् कहे है—मेरा परिमाण, भाव, रूप, गुण, एवं कर्म जिस प्रकार है, मेरा अनुग्रह से तुम को उस विषय का ज्ञान हो ॥१८

सृष्टिर पूर्व्वे षड़ैश्वर्य्यपूर्ण आमि हइये।
प्रपञ्च प्रकृति पुरुष आमातेइ लये ॥९०

सृष्टि करि तार मध्ये आमित वसिये।
प्रपञ्च ये देखे सब सेओ आमि हइये ॥९१

प्रलये अवशिष्ट आमि पूर्ण हइये।
प्राकृत प्रपञ्च पाय आमातेइ लये ॥९२

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।९।३२)—

अहमेवासमेवाग्रे नान्यद्यत् सदसत्परं।
पश्चादहं यदेतच्च योऽवशिष्येत सोऽस्म्यहं ॥१९॥

भा० २।९।३२ में भगवान् ब्रह्मा को कहे थे—सृष्टि के पूर्व में मैं ही था, स्थूल सूक्ष्म कार्य्य कारणात्मक दृश्यमान् पदार्थ, उस समय कुछ भी नहीं थे। जो कुछ वर्त्तमान में हैं, भविष्यत् में जो कुछ होंगे, एवं प्रलय के शेष में जो अवशिष्ट रहेगा, वह वे सब मैं ही हूँ ॥१९॥

अहमेव अहमेव श्लोके तिनबार।
पूर्णैश्वर्य्य विग्रहेर स्थितिर निर्द्धार ॥९३

येइ जन एइ विग्रह ना माने।
तारे तिरस्करिबारे करिल निर्द्धारणे ॥९४

एइ शब्दे हय ज्ञान विज्ञान विवेक।
माया कार्य्य हैते आमि व्यतिरेक ॥९५

यैछे सूर्य्येर स्थाने भासये आभास।
सूर्य्य विना स्वतः तार ना हय प्रकाश ॥९६

मायातीत हैते हय आमार अनुभव।
एइ सम्बन्ध तत्त्व कहिल शुन आर सब ॥९७

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।९।३३)—

ऋतेऽर्थं यत् प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्मनि।
तद्विद्यादात्मनो मायां यथा भासो यथा तमः ॥२०॥

श्रीमद् भागवत के २।९।३३ में उक्त है—परमार्थ स्वरूप मुझ को छोड़कर जिसकी प्रतीति होती है, अथच स्वरूप विषय में जिस की किसी प्रकार उपलब्धि नहीं होती है, उस को ही मेरी माया जाननी होगी। इसका दृष्टान्त—जिस प्रकार-आभास आतप आलोकादि--एवं तमः अन्धकारादि छाया प्रभृति ॥२०॥

अभिधेय साधन भक्तिर शुनह विचार।
सर्व्वजन देश काल दशाते व्याप्ति यार ॥९८

धर्म्मादि विषय यैछे ए चारि विचार।
साधन-भक्ति एइ चारि विचारेर पार ॥९९

सर्व्वदेशे काल दशाय जनेर कर्त्तव्य।
गुरु-पाशे सेइ भक्ति प्रष्टव्य श्रोतव्य ॥१००

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।६।३५)—

एतावदेव जिज्ञास्यं तत्त्वजिज्ञासुनात्मनः ।
अन्वयव्यतिरेकाभ्यां यत् स्यात् सर्व्वत्र सर्व्वदा ।।२१

श्रीमद् भागवत के २।६।३५ में लिखित है— जो पदार्थ अन्वय व्यतिरेक उपाय के द्वारा सर्वत्र सर्वदा सर्वस्थान में एवं सर्व समय में वर्त्तमान है, तत्त्व जिज्ञासु व्यक्ति सद् गुरु के निकट उसकी ही जिज्ञासा करे ।।२१।।

आमाते ये प्रीति सेइ प्रेम प्रयोजन ।
कार्य्य-द्वारे कहि तार स्वरूप लक्षण ।।१०१

पञ्च भूत यैछे भूतेर भितरे बाहिरे ।
भक्तगणे स्फुरि आमि बाहिरे अन्तरे ।।१०२

तथाहि श्रीमद्भागवते (२।६।३४)—

यथा महान्ति भूतानि भूतेषूच्चावचेष्वनु ।
प्रविष्टान्यप्रविष्टानि तथा तेषु न तेष्वहं ।।२२।।

श्रीमद् भागवत के २।६।३४ में कथित है— जिस प्रकार क्षिति अप् तेजः मरुद् व्योम रूप महाभूत समूह--बृहत् एवं क्षुद्र पदार्थ समूह के मध्य में प्रविष्ट होकर अप्रविष्ट भाव से वर्त्तमान है, मैं भी उस प्रकार समस्त भूतोंमें परमात्म रूपमें प्रविष्ट होकर भी अप्रविष्ट हूँ, अर्थात् स्वतन्त्र भगवद् रूप में मैं नित्यविराजित हूँ ।।२२।।

भक्त आमा बान्धियाछे हृदयकमले ।
याँहा नेत्र पड़े ताँहा देखिये आमारे ।।१०३

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।५५)—

विसृजति हृदयं न यस्य साक्षात्,
धरिरवशाभिहितोऽप्यघौघनाशः ।
प्रणयरसनया धृताङ्घ्रिपद्मः,
स भवति भागवतप्रधान उक्तः ।।२३।।

टीका – हरिः साक्षात् यस्य हृदयं न विसृजति न मुञ्चति, स जनः भागवत प्रधानः उक्तः कथितः । हरिः कीदृशः ?—अवशाभिहितोऽपि अघौघनाशः पापहारकः । कथं न विसृजति ?—प्रणयरसनया प्रेम-

रज्जुना धृताङ्घ्रि-पद्मः सन् ।।२३।।

श्रीमद् भागवत के ११।२।५५ में उक्त है-- अवश भाव से भी जिनका नाम उच्चारण करने से निखिल पातक विनष्ट होते हैं, इस प्रकार भगवान् जिस के हृदय को परित्याग न करके प्रणय रज्जु से बद्ध चरण होकर रहते हैं, वही भागवतोत्तम शब्द से कथित है ।।२३।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।४५)—

सर्व्वभूतेषु यः पश्येद्भगवद्भावमात्मनः ।
भूतानि भगवत्यात्मन्येष भागवतोत्तमः ।।२४।।

श्रीमद् भागवत के ११।२।४५ में उक्त है--जो व्यक्ति समस्त भूतों में निज भगवद् भाव को देखता हैं, एवं भगवान् एवं आत्मा में समस्त भूतों को देखता है--वह व्यक्ति भागवतोत्तम कहलाता है ।।२४।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३०।४)—

गायन्त्य उच्चैरमुमेव संहताः
विचिक्युरुन्मत्तकवद्वनाद्वनं ।
पप्रच्छुराकाशवदन्तरं वहि-
र्भूतेषु सन्तं पुरुषं वनस्पतीन् ।।२५।।

टीका - गोप्यः संहिताः अन्योन्यं मिलिताः सत्य अमुमेव हरिमेव उच्चैः गायन्त्यः उन्मत्तवत् वनात् वनं विचिक्युः । आकाशवत् भूतेषु अन्तरं मध्ये वहिश्च व्याप्य सन्तं पुरुषं वनस्पतीन् पप्रच्छुः ।२५

श्रीमद् भागवत के १०।३०।४ में लिखित है-- गोपीगण समवेत होकर उच्चैःस्वर से हरिगुण गान करते करते उन्मत्तवत् वन वनमें हरि का अनुसन्धान करने लगीं, एवं आकाशवत् जो समस्त भूतो के अन्तर बाहर में अवस्थित होते हैं, उन पुरुषोत्तम की जिज्ञासा वनस्पति के निकट करने लगीं ।।२५।।

अतएव भागवते एइ नित्य कय ।
सम्बन्ध अभिधेय प्रयोजनमय ।।१०४

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।२।११)—

वदन्ति तत्तत्त्वविदस्तत्त्वं यज्ज्ञानमद्वयं ।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते ।।२६।।

श्रीमद् भागवत के १।२।११ में उक्त है--तत्त्वज्ञ व्यक्ति गण अद्वय ज्ञान को ही तत्त्व वस्तु कहते हैं, एवं वही ब्रह्म, परमात्मा एवं भगवान् शब्द से अभिहित है ।२६॥

एइ तिन सम्बन्ध शुन अभिधेय भक्ति ।
भागवते प्रति श्लोके व्यापे यार स्थिति ॥१०५

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।५।२३)—

भगवानेक आसेदमग्र आत्मात्मनां विभुः ।
आत्मेच्छानुगतावात्मा नानामत्युपलक्षणः ॥२७

टीका -अथैनत्प्रार्थितलीलाकथां कथयन्नेव श्रीभगवदादिष्ट-चतुःश्लोकी-ज्ञानं विवृत्याह भगवान्-इत्यादि । अशेषसंक्लेशशमं विधत्त इत्याद्यन्तेन ग्रन्थेन । अथ कथाक्रमानुरोधेन चतुर्णामर्था विपर्य्ययेण वक्तव्याः । तत्राहमेवासमेवाग्रे नान्यद्यत् सदसत्परमित्यस्यार्द्धस्यार्थं सृष्टिलीलोपक्रमेण दर्शयति भगवानिति द्वाभ्यां । इदं विश्वं पुरुषादिपार्थिवपर्य्यन्तं तदानीमेकाकिना स्थितेन भगवता सहैकीभूयासी-दित्यर्थः । आत्मानां शुद्धजीवानामपि रश्मिस्थानीया-नामात्मा मण्डलस्थानीयं परमस्वरूपं नच तस्याप्य-न्यत्तदस्ति यत आत्मा स्वयं सिद्धस्वरूप इत्यर्थः । इति तत्र स्वांशानामप्यंशित्व दर्शितं ब्रह्माभिन्नत्वञ्च । कदा आत्मेच्छासृष्ट्यादीच्छा तस्या अनुगतौ लीनतायां सत्यामित्यर्थः । ननु, वैकुण्ठादिबहुवैभवेऽपि सति कथमेक एवासीत्तत्राह । वैकुण्ठादि नानामत्यपि स एवैक उपलक्षित इति । सेनासमेतत्वेऽपि राजाऽसौ प्रजातीतिवत् ॥२७॥

श्रीमद् भागवत के २।५।२३ में उक्त है--विश्व सृष्टि के पूर्व में यह विश्व भगवान् के सहित एकीभूत था, कारण, भगवान् आत्मा का आत्मा हैं, अर्थात् शुद्ध जीव के भी पर स्वरूप हैं, उस समय सृष्ट्यादि की इच्छा उनमें लीन थी एवं वैकुण्ठादि विभिन्न वैभव के द्वारा भगवान् ही उपलक्षित है ॥२७॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।१४।२१)—

भक्त्याहमेकया ग्राह्यः श्रद्धयात्मा प्रियः सतां ।
भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकानपि सम्भवात् ॥२८

श्रीमद् भागवत के ११।१४।२१ में कथित है-मैं शक्तिमान् साधु व्यक्तियों का प्रिय हूँ, एवं आत्मवत् हूँ । श्रद्धायुक्त एकाग्र भक्तिसे ही मैं गृहीत होता हूँ। यह मन्निष्ठा भक्ति जाति दोष दुष्ट व्यक्ति को भी पवित्र करती है ॥२८॥

एबे शुन प्रेम येइ मूल प्रयोजन ।
पुलकाश्रु नृत्य गीत याहार लक्षण ॥१०६

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।३।२८)—

एतेचांशकला पुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयं ।
इन्द्रारिव्य कुलं लोकं मृड़यन्ति युगे युगे ॥२९॥

श्रीमद् भागवत के १।३।२८ में उक्त है—पूर्वोक्त अवतार समूह कारणार्णव शायी पुरुष के अंश एवं कलास्वरूप है, किन्तु कृष्ण स्वयं भगवान् हैं, असुर वृन्द के द्वारा विश्व उत्पीड़ित होने पर समय समय पर विश्व में अवतीर्ण होकर लोक पालन करते रहते हैं ॥२९॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।१४।२०)—

न साधयति मां योगो न सांख्यं धर्म्म उद्धव !
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता ।३०

श्रीमद् भागवत के ११।१४।२० में उद्धव को श्रीकृष्ण कहे हैं—हे उद्धव ! योग, सांख्य, जलार्पणादि धर्म वेदाध्ययन, तप, एवं त्याग, मुझ को उस प्रकार प्राप्त कराने समर्थ नहीं होते हैं, जिस प्रकार उर्जिता भक्ति मुझ को प्राप्त कराती है ॥३०॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।३७)—

भयं द्वितीयाभिनिवेशतः स्या-
दीशादपेतस्य विपर्य्ययोऽस्मृतिः ।
तन्माययातो बुध आभजेत्तं
भक्त्यैकयेशं गुरुदेवतात्मा ॥३१॥

श्रीमद् भागवत के ११।२।३७ में उक्त है--शरीर में अभिनिवेश होने के कारण पुनः पुनः जन्म मरण रूप भय होता है,एवं ईश्वर विमुखता भी होती

है, आत्मस्मृति भी विपर्य्यस्त हो जाती है, नश्वर शरीर में ही आत्मा ज्ञान होने लगता है। ये सब कार्य्य ईश्वर की माया नाम्नी शक्ति से होते हैं, अतः विवेकी जन अनन्य भक्ति के द्वारा गुरुदेवतात्मा होकर भगवान् का भजन करे ॥३१॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।३।३१)—

स्मरन्तः स्मारयन्तश्च मिथोऽघौघहरं हरिं।
भक्त्या संजातया भक्त्या बिभ्रत्युत्पुलकां तनुं ॥३२

टीका—मिथः परस्परं अघौघहरं पातकनाशनं हरिं स्मरन्तः स्मारयन्तश्च साधकः भक्त्या सञ्जातया प्रेमलक्षणया भक्त्या उत्पुलकां तनुं बिभ्रति ॥३२॥

श्रीमद्भागवत के ११।३।३१ में उक्त है-साधक परस्पर निखिल पाप हारी हरि का स्मरण कर एवं अपर को स्मरण करवाकर साधन भक्ति से समुत्पन्न प्रेम भक्ति के द्वारा पुलकायित तनु होता है ॥३२॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।४०)—

एवं व्रतः स्वप्रियनामकीर्त्या,
जातानुरागो द्रुतचित्त उच्चैः।
हसत्यथो रोदिति रौति गाय-
त्युन्मादवन्नृत्यति लोकबाह्यः ॥३३॥

श्रीमद् भागवत के ११।२।४० में साधक प्रिय श्रीहरि के नाम कीर्त्तन करते करते अनुरागाक्रान्त हृदय होता है, द्रवित चित्त होता है, अर्थात् श्रीहरि के प्रति ममत्वाक्रान्त हृदय होता है, अतएव कदाचित् भक्त के द्वारा भगवान् पराजित होते हैं, जानकर हँसता रहता है, अभीतक में वञ्चित हूँ, यह मानकर रोदन करता है, अति उत्सुकता हेतु कहता है--हरि मुझे अनुग्रह करो, अति आनन्द से गान करने लगता, जितं जितं कह कर नृत्य करने लगता। दाम्भिक लोक जिस प्रकार दूसरेको अभिभूत करने के निमित्त प्रेम चेष्टानुकरण करता है, भक्त साधक उस प्रकार नहीं करता है, किन्तु उन्मादवत् करता है, अर्थात् लोकापेक्षा रहित होकर ही करता है ॥३३॥

अतएव भागवत सूत्रेर अर्थ रूप।
निज कृत सूत्रेर निज भाष्यरूप ॥१०७

तथाहि हरिभक्तिविलासस्य दशमविलासे द्व्याशीत्यधिक-द्विशताङ्कधृत-गरुड़पुराणम्—

अर्थोऽयं ब्रह्मसूत्राणां भारतार्थविनिर्णयः।
गायत्रीभाष्यरूपोऽसौ वेदार्थपरिबृंहितः ॥३४॥

टीका—अयं भागवतार्थः ब्रह्मसूत्राणां अर्थः, भारतार्थविनिर्णयः, असौ गायत्रीभाष्यरूपः वेदार्थ परिबृंहितः स्यात् ॥३४॥

गरुड़ पुराण में वेदान्त सूत्रकर्त्ता श्रीव्यास देवने लिखा है—यह श्रीमद् भागवत ब्रह्म सूत्रों के भाष्य स्वरूप है, भारतार्थ का विनिर्णय भी इस में हुआ है, एवं श्रीमद् भागवत गायत्री मन्त्र का भाष्य रूप है, इसमें वेदार्थ का वर्णन विस्तृत रूपसे हुआ है।३४

तथाहि प्रथमस्कन्धस्य प्रथम-श्लोकव्याख्यायां श्रीधर-स्वामिकृत गरुड़पुराणीय-श्लोक द्वयम्—

ग्रन्थोऽष्टादशसाहस्रः श्रीमद्भागवताभिधः।
सर्व्ववेदेतिहासानां सारं सारं समुद्धृतं॥
सर्व्ववेदान्तसारं हि श्रीमद्भागवतमिष्यते।
तद्रसामृततृप्तस्य नान्यत्र स्याद्रतिः क्वचित् ॥३५

टीका—अयं श्रीमद्भागवताभिधः ग्रन्थः अष्टादशसाहस्रः अष्टादशसहस्रसंख्यैः श्लोकैः समन्वितः। अत्र ग्रन्थे सर्व्ववेदेतिहासानां सारं सारं समुद्धृतं। हि निश्चितं सर्व्ववेदान्तसारं श्रीभागवतं इष्यते। सामृततृप्तस्य अन्यत्र क्वचित् रतिः स्यात् ॥३५॥

श्रीमद् भागवत नामक ग्रन्थ अष्टादश सहस्र संख्यक श्लोकों से परिपूर्ण हैं,यावतीय वेदेति हास का सारांश इस में सन्निविष्ट हुआ है, निखिल वेदान्त का सारांश ही श्रीमद् भागवत नाम से अभिहित है। श्रीमद् भागवत रसामृत से तृप्त व्यक्ति की कदाच अन्य पुस्तक में रुचि नहीं होती है ॥३५॥

गायत्रीर अर्थे एइ ग्रन्थ आरम्भण।
सत्यं परं सम्बन्ध धीमहि साधने प्रयोजन।१०८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१।१)—

जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्,
तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत् सूरयः।

तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गोऽमृषा,
धाम्ना येन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि ।३६

सृष्ट वस्तु समूह में भगवान् सम्बन्धान्वित होने के कारण सृष्ट वस्तु समूह की प्रतीति होती है मिथ्या वस्तु में आपकी अविद्यमानता हेतु-उसकी प्रतीति नहीं होती है, जिस प्रकार आकाश कुसुम की प्रतीति नहीं होती है। दृश्यमान जगत के सृष्टि स्थिति प्रलय के कारण वह ईश्वर हैं। ईश्वर सर्वज्ञ एवं स्वतन्त्र हैं, आपने अन्तर्य्यामी रूपमें ब्रह्मा के हृदय में वेद को प्रकाश किया है, वेद का विषय विचार कर ज्ञानी व्यक्तिगण मुग्ध होते हैं।

मरुभूमि में दूरस्थ बालुका जल रूपमें प्रतिभात होती है, अनेक समय काँच भी जल रूप में प्रतिभात होता है। मृत्तिका एवं जल जिस प्रकार एक वस्तु अपर वस्तु रूप में प्रतिभात होती है, ठीक उसी प्रकार त्रिविध सृष्टि हैं, चित् (१) जीव सृष्टि, अर्थात् चैतन्य का प्रकाश, (२) जीव सृष्टि (३) एवं मायिक ब्रह्म की सृष्टि। उनकी यह सृष्टि सत्य है: अथच आप निज प्रभाव के द्वारा माया को विदूरित करके मायातीत सत्य स्वरूप में विद्यमान हैं,हम सब उनका ध्यान करते हैं ॥३६॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१।२)—

धर्म्मः प्रोज्झितकैतवोऽत्र परमो निर्म्मत्सराणां सतां,
वेद्यं वास्तवमत्र वस्तु शिवदं तापत्रयोन्मूलनम् ।
श्रीमद्भागवते महामुनिकृते किंवा परैरीश्वरः,
सद्यो हृद्यवरुध्यतेऽत्रकृतिभिः शुश्रूषुभिस्तत्क्षणात् ।३७

श्रीमद् भागवत के १।१।२ में उक्त है -महामुनि श्रीव्यासदेव कृत श्रीमद् भागवत में ईश्वर आराधना रूप परमधर्म निरूपित है, प्राणी मात्रके परम कल्याण कारी, आसक्ति विद्वेष शून्य साधु व्यक्ति वृन्दने इस धर्म को ग्रहण किया है, कारण, जो धर्म फललाभ की आशा से आचरित होता है, अथवा मुक्ति हेतु गृहीत होता है, वह धर्म छल मात्र है, धर्म नहीं है, त्रिताप नाशक यह धर्म शुभद एवं परमार्थ भूत वस्तु है। अन्य किसी धर्माचरण के द्वारा क्या तत् क्षणात् ईश्वर लाभ होता है ? किन्तु श्रीमद् भागवत में वर्णित परम धर्म को सुनने के निमित्त उत्सुक होने से तत् क्षणात् हृदय में ईश्वर की प्राप्ति होती है। अर्थात् ईश्वर तत् क्षणात् उसके हृदय में अवरुद्ध होते हैं।३७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१।३)—

निगमकल्पतरोर्गलितं फलं शुकमुखादमृतद्रवसंयुतं ।
पिबत भागवतं रसमालयं, मुहुरहो रसिका भुवि-
भावुकाः ॥३८॥

टीक—हे रसिकाः! हे भावुकाः ! अहो विचित्रं ! इदं भागवतं फलं मुहुः पुनः पुनः पिबत। ननु त्वगादिकं परित्यज्य रस एव पीयते, कथं फलं पातव्यं ? तत्राह - रसं रसरूपं फलं पिबत। न च भागवतसुधापानं मोक्षेऽपि परित्याज्यमित्याह-आलयं लयो मोक्ष लयं अभिव्याप्य न हि इद सर्गादिसुख-वन्मुक्तै रुपेक्ष्यते किन्तु सेव्यत एव। फलं किम्भूतं ? निगमकल्पतरोः फलं, पुनश्च शुकमुखात् भुवि गलितं। पुनः अमृतद्रवसंयुतं ॥३८॥

श्रीमद् भागवत के १।१।३ में उक्त है—श्रीमद् भागवत वेदरूप कल्पतरु के फल है, एवं शुक देव के वदन कमल से निसृत होकर धरातल में अखण्ड रूप में निपतित है, अतएव हे रसिक भावुक वृन्द ! परमानन्द रस समन्वित रस पूरित इस फल को तुम सब मोक्ष में भी पुनः पुनः पान करो ॥३८॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१।१९)—

वयन्तु न वितृप्याम उत्तम श्लोक-विक्रमे ।
यच्छृण्वतां रसज्ञानां स्वादु स्वादु पदे पदे ।।३९

टीका - उत्तमः-श्लोकविक्रमे वयन्तु न वितृप्यामः तत्र हेतुः।—यच्छृण्वतां रसज्ञानां सम्बन्धे पदे पदे स्वादु स्वादु भवति ॥३९॥

श्रीमद् भागवत के ११।१९ में उक्त है—शौनकादि ऋषिगण सूत को कहे थे—सूत ! उत्तम श्लोक हरि के चरित को सुनकर हम सब तृप्त नहीं होते हैं। कारण, कृष्ण कथा श्रवण को रसिक गण स्वादु से भी स्वादुतर बोध करते हैं ॥३९॥

अतएव भागवत करह विचार ।
इहा हैते पाबे सूत्र स्मृतिर अर्थ सार ॥१०६
निरन्तर कर कृष्णनाम सङ्कीर्त्तन ।
हेलाय मुक्ति हबे पाबे प्रेमधन ॥११०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१८।५४)—

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति ।
समः सर्व्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥४०॥

श्रीमद् भगवद् गीता के १८ ५४ में उक्त है-- स्वरूपानुभव में स्थित, प्रसन्नचित्त, शोक में अनुद्विग्न, अनाकाङ्क्षी, सर्वभूत में समदर्शी व्यक्ति ही मुझ में पराभक्ति लाभ कर स . ता है ॥४०॥

तथाहि भगवत्सन्दर्भे श्रीविष्णुपादाविर्भावव्याख्यायां धृतिश्रुतिः—

मुक्ता अपि लीलया विग्रहं
कृत्वा भगवन्तं भजन्ते ॥४१॥

मुक्तगण भी लीलावशतः शरीर धारण कर भगवान् का भजन करते हैं ॥४१॥

तथाहि श्रीमद्भाग-ते (२।१।६)—

परिनिष्ठितोऽपि नैर्गुण्ये उत्तम-श्लोकलीलया ।
गृहीतचेता राजर्षे आख्यानं यदधीतवान् ॥४२॥

श्रीमद् भागवत के २।१।६ में श्रीशुक कहे थे— हे नरपते ! निर्गुण ब्रह्म में परिनिष्ठित होकर उत्तम श्लोक भगवान् की लीला को सुनकर आकृष्ट चित्त होकर श्रीभगवान् के लीला परिवेषक ग्रन्थ श्रीमद् भागवत का अध्ययन किया ॥४२॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।१५।४३)—

तस्यारविन्दनयनस्य पदारविन्द-
किञ्जल्कमिश्रतुलसीमकरन्दवायुः ।
अन्तर्गतः स्वविवरेण चकार तेषां
संक्षोभमक्षरजुषामपि चित्ततन्वोः ॥४३॥

सनकादि मुनिगण ब्रह्मानन्द में निमग्न होने पर भी कमल नयन के पाद पद्म केशर मिश्रित तुलसी के मकरन्द वाही अनिल उनके नासाविवर में प्रविष्ट होने पर उन सब के चित्त में आनन्द सञ्चार हुआ एवं शरीर में पुलक हुआ ॥४३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।७।१०)—

आत्मारामाश्च मुनयो निर्ग्रन्था अप्युरुक्रमे ।
कुर्व्वन्त्यहैतुकीं भक्तिमित्थम्भूतगुणो हरिः ॥४४

श्रीमद् भागवत के १.७।१० में शौनकादि के प्रति श्रीसूत कहे थे श्रीहरि इस प्रकार गुण सम्पन्न हैं कि—आत्माराम निवृत्त अहङ्कार मुनिगण भी उरुक्रम श्रीहरि के प्रति भक्ति करते हैं ॥४४॥

हेन काले सेइ महाराष्ट्रीय ब्राह्मण ।
सभाते कहिल एइ श्लोकविवरण ॥१११
एइ श्लोकेर अर्थ प्रभु एकषष्टि प्रकार ।
करियाछेन याहा शुनि लोके चमत्कार ॥११२
तबे सब लोक शुनि आग्रह करिल ।
एकषष्टि अर्थ प्रभु विवरि कहिल ॥११३
शुनिया लोकेर बड़ चमतकार हैल ।
चैतन्य गोसाञि श्रीकृष्ण निर्द्धारिल ॥११४
एत कहि उठिया चलिला गौरहरि ।
नमस्कार करे लोक हरिध्वनि करि ॥११५
सब काशीवासी करे नाम संकीर्त्तन ।
प्रेमे हासे कान्दे गाय करये नर्त्तन ॥११६
सन्न्यासी पण्डित करे भागवत विचार ।
वाराणसी पुरी प्रभु करिल निस्तार ॥११७
निजगण लञा प्रभु आइला वासाघर ।
वाराणसी हैला द्वितीय नदीया नगर ॥११८
निजगण लञा प्रभु कहे हास्य करि ।
काशीते वेचिते आमि आइलु भावकाली ।११९
काशीते ग्राहक नाहि वस्तु ना विकाय ।
पुनरपि वहिया देशे लञोया नाहि याय ।१२०

आमि बोझा वहिनु तोमा सबार दुःख हैल ।
तोमा सवार इच्छाय विना मूल्ये विलाइल १२१
सबे कहे लोक तारिते तोमार अवतार ।
पूर्व्व दक्षिण पश्चिम करिले निस्तार ॥१२२
एक वाराणसी छिल तोमाते विमुख ।
ताहा निस्तारिया कैले आमा सवार सुख १२३
वाराणसी ग्रामे यदि कोलाहल हैल ।
शुनि ग्रामी देशी लोक आसिते लागिल ॥१२४
लक्षकोटि लोक आइसे नाहिक गणन ।
सङ्कीर्त्तनस्थाने प्रभुर ना पाय दर्शन ॥१२५
प्रभु यबे स्नाने यान विश्वेश्वर दर्शने ।
दुइ दिके लोक करे प्रभुविलोकने ॥१२६
बाहु तुलि प्रभु कहे, बोल कृष्ण हरि ।
दण्डवत् करे लोक हरिध्वनि करि ॥१२७
एइमत दिन पञ्च लोक निस्तारिया ।
आर दिन चलिला प्रभु उद्विग्न हइया ॥१२८
रात्रे उठि प्रभु यदि करिल गमन ।
पाछे लोक लइल तबे भक्त पञ्चजन ॥१२९
तपनमिश्र, रघुनाथ, महाराष्ट्रीय ब्राह्मण ।
चन्द्रशेखर, कीर्त्तनीया परमानन्द जन ॥१३०
सबे चाहे प्रभुसङ्गे नीलाचल याइते ।
सबारे विदाय दिल प्रभु यत्न सहिते ॥१३१
यार इच्छा पाछे आइस आमारे देखिते ।
एबे आमि एका याव झारिखण्ड पथे ॥१३२
सनातने कहिल तुमि याओ वृन्दावन ।
तोमार दुइ भाइ तथा करियाछे गमन ॥१३३
काँथा करङ्गिया मोर काङ्गाल भक्तगण ।
वृन्दावने आइसे यदि करिह पालन ॥१३४
एत बलि चलिला प्रभु सबा आलिङ्गिया ।
सबेइ पड़िला तथा मूर्च्छित हइया ॥१३५
कतक्षण उठि सबे दुःखे घर आइला ।
सनातन गोसाञि वृन्दावनेते चलिला ॥१३६
एथा रूप गोसाञि हबे मथुरा आइला ।
ध्रुवघाटे ताँरे सुबुद्धि राय मिलिला ॥१३७
पूर्व्वे यबे सुबुद्धि राय छिला गौड़ अधिकारी ।
सैयद हुसेनखाँ करे ताहार चाकरि ॥१३८
दीघी खोदाइते तारे मन्सब कैल ।
छिद्र पाञा राय तारे चावुक मारिल ॥१३९
पाछे यबे हुसेनखाँ गौड़े राजा हैल ।
सुबुद्धिरायेरे तिँह बहु बाड़ाइल ॥१४०
ताँर स्त्री ताँर अङ्गे देखे मारणेर चिह्न ।
सुबुद्धि रायके मारिते कहे राजा स्थाने ।१४१
राजा कहे, आमार पोष्टा राय हय पिता ।
ताहारे मारिव आमि भाल नहे कथा ॥१४२
स्त्री कहे जाति लह यदि प्राणे ना मारिबे ।
राजा कहे जाति निले इँहो नाहि जीवे ॥१४३
स्त्री मारिते चाहे राजा सङ्कटे पड़िला ।
करोयार पाणि तार मुखे देयाइला ॥१४४
तबे सुबुद्धि राय सेइ छद्म पाञा ।
वाराणसी आइला सब विषय छाड़िया ॥१४५
प्रायश्चित्त पुछिल तिँह पण्डितेर स्थाने ।
तारा कहे तप्तघृत खाञा छाड़ प्राणे ॥१४६
केह कहे एत नहे अल्प दोष हय ।
शुनिया रहिला राय करिया संशय ॥१४७
तबे यदि महाप्रभु वाराणसी आइला ।
ताँरे मिलि राय आपनि वृत्तान्त कहिला ।१४८

प्रभु कहे, इँहा हैते याह वृन्दावन ।
निरन्तर कर कृष्णनाम सङ्कीर्त्तन ॥१४९
एक नामाभासे तोमार पाप दोष याबे ।
आर नाम लइते कृष्णचरण पाइबे ॥१५०
राय आज्ञा पाइया वृन्दावनेते चलिला ।
प्रयाग अयोध्या दिया नैमिषारण्ये आइला ।१५१
कतक दिवस तिँह नैमिषारण्ये रहिला ।
प्रभु वृन्दावन हैते प्रयाग आइला ॥१५२
मथुरा आसिया राय प्रभु-वार्त्ता पाइल ।
प्रभुर लागि ना पाइया बड़ मने दुःख हैल ।१५३
राय शुष्क काष्ठ आनि वेचे मथुराते ।
पाँच छय पयसा हय एकेक बोझाते ॥१५४
आपने रहे पयसार चावाना खाइया ।
चार पयसा वाणिया स्थाने राखेन धरिया १५५
दुःखी वैष्णव देखि तारे करान भोजन ।
गौड़िया आइले दधिभात तैल मर्द्दन ॥१५६
रूप गोसाञि आइल ताँरे बहु प्रीति कैल ।
आपन सङ्गे लये द्वादश वन देखाइल ॥१५७
मास मात्र रूप गोसाञि रहिला वृन्दावने ।
शीघ्र चलि आइल सनातनानुसन्धाने ॥१५८
गङ्गातीर-पथे प्रभु प्रयागेते आइला ।
इहा शुनि दुइ भाइ से पथे चलिला ॥१५९
एथा सनातन गोसाञि प्रयागे आसिया ।
मथुरा आइला राजसरान पथ दिया ॥१६०
मथुराते सुबुद्धि राय ताँहारे मिलिला ।
रूप-अनुपम-कथा सकलि कहिला ॥१६१
गङ्गापथे दुइ भाइ राजपथे सनातन ।
अतएव ताँहा सने ना हैल मिलन ॥१६२

सुबुद्धि राय बहु स्नेह करे सनातने ।
व्यवहार स्नेह सनातन नाहि माने ॥१६३
महा विरक्त सनातन भ्रमे वने वने ।
प्रति वृक्षे प्रति कुञ्जे रहे रात्रि दिने ॥१६४
मथुरामाहात्म्यशास्त्र संग्रह करिया ।
लुप्त तीर्थ प्रकट कैल वनेते भ्रमिया ॥१६५
एइमत सनातन वृन्दावनेते रहिला ।
रूपगोसाञि दुइ भाइ काशीतेआइला ॥१६६
महाराष्ट्रीय द्विज, शेखर, मिश्र तपन ।
तिन जन सह रूप करिल मिलन ॥१६७
शेखरेर घरे वासा मिश्रघरे भिक्षा ।
मिश्रमुखे शुने सनातने प्रभुर शिक्षा ॥१६८
काशीते प्रभुर चरित्र शुनि तिनेर मुखे ।
सन्न्यासीरे कृपा शुनि पाइल बड़ सुखे ॥१६९
महाप्रभुर उपर लोकेर प्रणति देखिया ।
सुखी हैला लोकमुखे कीर्त्तन शुनिया ॥१७०
दिन दश रहि रूप गौड़े यात्रा कैल ।
सनातन रूपेर एइ चरित्र कहिल ॥१७१
एथा महाप्रभु यदि नीलाद्रि चलिला ।
निर्ज्जन वनपथे महासुख पाइला ॥१७२
सुखे चलि आइसे प्रभु बलभद्र सङ्गे ।
पूर्व्ववत् मृगादि सङ्गे कैल नाना रङ्गे ।१७३
आठारनालाते आसि भट्टाचार्य्य ब्राह्मणे ।
पाठाइया बोलाइल निज भक्तगणे ॥१७४
शुनीया भक्तेर गण पुनरपि जीला ।
देहे प्राण आइल येन इन्द्रिय उठिला ॥१७५
आनन्दे विह्वल भक्त धाइया आइला ।
नरेन्द्रे आसिया सबे प्रभुरे मिलिला ॥१७६

पुरी भारतीर प्रभु वन्दिल चरण ।
दुँहे महाप्रभुरे कैल प्रेम आलिङ्गन ॥१७७
दामोदर, स्वरूप, पण्डित गदाधर ।
जगदानन्द, काशीश्वर, गोविन्द, वक्रेश्वर १७८
काशीमिश्र, प्रद्युम्न मिश्र, पण्डित दामोदर ।
हरिदास ठाकुर, आर पण्डित शङ्कर ॥१७९
आर सब भक्त प्रभुर चरणे पड़िला ।
सबा आलिङ्गिया प्रभु प्रेमाविष्ट हैला ॥१८०
आनन्दसमुद्रे भासे सब भक्तगण ।
सबा लञा चले प्रभु जगन्नाथदर्शने ॥१८१
जगन्नाथ देखि प्रभु प्रेमाविष्ट हैला ।
भक्त सङ्गे बहुक्षण नृत्य गीत कैला ॥१८२
जगन्नाथ-सेवक आनि माला प्रसाद दिला ।
तुलसी पड़िछा आनि चरण वन्दिला ॥१८३
महाप्रभु आइल ग्रामे कोलाहल हैल ।
सार्व्वभौम, रामानन्द, वाणीनाथ मिलिल १८४
सबा सङ्गे लञा प्रभु मिश्र-वासा आइला ।
सार्व्वभौम पण्डित गोसाञि निमन्त्रण कैला १८५
प्रभु कहे महाप्रसाद आन एइ स्थाने ।
सबा सङ्गे इहा आजि करिब भोजने ॥१८६
तबे दुँहे जगन्नाथ प्रसाद आनिल ।
सबा सङ्गे महाप्रभु भोजन करिल ॥१८७
एइत कहिल प्रभु देखि वृन्दावन ।
पुनः करिलेन यैछे नीलाद्रि गमन ॥१८८
इहा येइ श्रद्धा करि करये श्रवण ।
अचिराते पाय सेइ चैतन्यचरण ॥१८९
मध्यलीलार करिल एइ दिग् दरशन ।
छय वत्सर करिल यैछे गमनागमन ॥१९०

शेष अष्टादश वत्सर नीलाचले वास ।
भक्तगण सङ्गे करे कीर्त्तनविलास ॥१९१
मध्यलीलार क्रम एबे करि अनुवाद ।
अनुवाद कैले हय कथार आस्वाद ॥१९२
प्रथम परिच्छेदे शेष लीलार सूत्रगण ।
ताँहि मध्ये कोन भागेर विस्तार वर्णन ॥१९३
द्वितीय परिच्छेदे प्रभुर प्रलाप वर्णन ।
ताँहि मध्ये नाना भावेर दिग् दरशन ॥१९४
तृतीय परिच्छेदे प्रभुर करिल सन्नयास ।
आचार्य्येर घरे यैछे करिल विलास ॥१९५
चतुर्थे माधवपुरीर चरित्र आस्वादन ।
गोपालस्थापन क्षीर चुरीर वर्णन ॥१९६
पञ्चमे साक्षीगोपाल चरित्र वर्णन ।
नित्यानन्द कहे, प्रभु करे आस्वादन ॥१९७
षष्ठे सार्व्वभौमेर करिल उद्धार ।
सप्तमे तीर्थयात्रा वासुदेव-निस्तार ॥१९८
अष्टमे रामानन्द-संवाद-विस्तार ।
आपने शुनिल सब सिद्धान्तेर सार ॥१९९
नवमे करिल दक्षिण तीर्थ भ्रमण ।
दशमे करिल सब वैष्णव मिलन ॥२००
एकादशे श्रीमन्दिरे बेड़ा सङ्कीर्त्तन ।
द्वादशे गुण्डिचामन्दिर मार्ज्जन क्षालन ॥२०१
त्रयोदशे रथ आगे प्रभुर नर्त्तन ।
चतुर्द्दशे हेरापञ्चमीयात्रा दरशन ॥२०२
तार मध्ये व्रजदेवीर भावेर श्रवण ।
स्वरूप कहिल प्रभु कैल आस्वादन ॥२०३
पञ्चदशे भक्तेर गुण श्रीमुखे कहिल ।
सार्व्वभौम घरे भिक्षा अमोघे तारिल ॥२०४

षोड़शे वृन्दावनयात्रा गौड़देशपथे ।
पुनः नीलाचले आइला नाटशाला हैते ॥२०५
सप्तदशे वनपथे मथुरा गमन ।
अष्टादशे वृन्दावन विहार वर्णन ॥२०६
ऊनविंशे मथुरा हैते प्रयागे गमन ।
तार मध्ये श्रीरूपेर शक्ति सञ्चारण ।२०७
विंशति परिच्छेदे सनातनेर मिलन ।
तार मध्ये भगवानेर स्वरूप वर्णन ॥२०८
एकविंशे कृष्णैश्वर्य्य माधुर्य्य वर्णन ।
द्वाविंशे विविध साधन—भक्ति-विवरण ॥२०९
त्रयोविंशे प्रेमभक्ति रसेर कथन ।
चतुर्व्विंशे आत्माराम श्लोकार्थ वर्णन ॥२१०
पञ्चविंशे काशीवासी वैष्णवकरण ।
काशी हैते पुनः नीलाचले आगमन ॥२११
पञ्चविंशति परिच्छेदे एइ कैल अनुवाद ।
याहार श्रवणे हय ग्रन्थार्थ आस्वाद ॥२१२
संक्षेपे कहिल एइ मध्यलीलासार ।
कोटि ग्रन्थे वर्णन ना याय इहार विस्तार ।२१३
जीव निस्तारिते प्रभु भ्रमिला देशे देशे ।
आपनि आस्वादि भक्ति करिल प्रकाशे ॥२१४
कृष्णतत्त्व भक्तितत्त्व प्रेमतत्त्व आर ।
भागवततत्त्व रस-लीला-तत्त्वसार ॥२१५
श्रीभागवत-तत्त्व-रस करिल प्रचार ।
कृष्णतुल्य भागवत जानाइल संसार ॥२१६
भक्ति लागि निस्तारिल आपने वदने ।
काँहो भक्तमुखे काँहो शुनिला आपने ॥२१७
श्रीचैतन्य सम आर कृपालु वदान्य ।
भक्तवत्सल ना देखि त्रिजगते अन्य ॥२१८
श्रद्धा करि एइ लीला शुन भक्तगण ।
इहार श्रवणे पाबे चैतन्यचरण ॥२१९
इहार प्रसादे पाबे कृष्ण-तत्त्वसार ।
सर्व्वशास्त्रसिद्धान्तेर इहा पाइबे पार ॥२२०

यथा रागः ।

कृष्णलीलामृत सार, तार शत शत धार,
दश दिके हबे याहा हैते ।
से चैतन्यलीला हय, सरोवर अक्षय,
मन-हंस चराओ ताहाते ॥२२१
भक्तगण शुन मोर दैन्य वचन ।
तोमा सबार पदधूलि, अङ्गे विभूषण करि,
किछु मुञि करि निवेदन ॥२२२
कृष्णभक्ति-सिद्धान्तगण, याते प्रफुल्ल पद्मवन,
तार मधु कर आस्वादन ।
प्रेमरस-कुमुद-वने, प्रफुल्लित रात्रि दिने,
ताते चराओ मन-भृङ्गगण ॥२२३
नाना भावे भक्तजन, हंस चक्रवाकगण,
याते सबे करेन विहार ।
कृष्णकेलि मृणाल, याहा पाइ सर्व्वकाल,
भक्त-हंस करये आहार ॥२२४
सेइ सरोवरे गिया, हंस चक्रवाक् हञा,
सदा ताहा करह विलास ।
खण्डिबे सकल दुःख, पाइबे परम सुख,
अनायासे हबे प्रेमोल्लास ॥२२५
एइ अमृत अनुक्षण, साधु महान्त मेघगण,
विश्वोद्याने करे वरिषण ।
ताते फल अमृत फल, भक्त खाय निरन्तर,
तार प्रेमे जीये जगज्जन ॥२२६

चैतन्यलीलामृत पूर, कृष्णलीला सुकर्पूर,
दुँहे मिलि हय सुमाधुर्य्य ।
साधु-गुरुप्रसादे, ताहा येइ आस्वादे,
सेइ जाने माधुर्य्य प्राचुर्य्य ॥२२७

से लीला अमृत विने, खाय यदि अन्न पाने,
तबु भक्तेर दुर्व्वल जीवन ।
यार एक बिन्दु पाने, उत्फुल्लित तनु मने,
हासे गाय करये नर्त्तन ॥२२८

ए अमृत कर पान, याहा सम नाहि आन,
चित्ते करि सुदृढ़ विश्वास ।
ना पड़ कुतर्क-गर्त्ते, अमेध्य कर्कशावर्त्ते,
याते पड़िले हय सर्व्वनाश ॥२२९

श्रीचैतन्य नित्यानन्द, श्रीअद्वैत भक्तवृन्द,
आर यत श्रोता भक्तगण ।
तोमा सबार श्रीचरण, करि शिरे भूषण,
याहा हैते अभीष्ट पूरण ॥२३०

श्रीरूप सनातन, रघुनाथ जीव चरण,
शिरे धरि यार करि आश ।
कृष्णलीलामृतान्वित, चैतन्यचरितामृत,
कहे किछु दीन कृष्णदास ॥२३१

श्रीमन्मदनगोपाल-गोविन्द-देव-तुष्टये ।
चैतन्यार्पितमस्त्वेतच्चैतन्यचरितामृतम् ॥४५॥

टीका—श्रीमन्मदनगोपाल—गोविन्ददेवतुष्टये एतत् चैतन्यचरितामृतं चैतन्यार्पितं अस्तु ॥४५॥

श्रीमन् मदन गोपाल गोविन्द देव के सन्तोष हेतु प्रस्तुत चैतन्य चरितामृत ग्रन्थ श्रीचैतन्य देवको अर्पण किया ॥४५॥

तदिदमतिरहस्यं गौरलीलामृतं यत्,
खलसमुदयलोकैर्नादृतं तैरलभ्यं ।
क्षितिरियमिह कामे स्वादितं यत् समन्तात्,
सहृदयसुमनोभिर्म्मोदमेषां तनोति ॥४६॥

टीका—खलसमुदयलोकैः यत् अति रहस्यं अतिगुह्यं गौरलीलामृतं न आदृतं, तच्च तैः अलभ्यं, यत् सहृदयसुमनोभिः सज्जनैः समन्तात् सम्यक् स्वादितं, इह अस्मिन् कामे कामनायां इयं क्षितिः धरणी एषां सज्जनानां मोदं आनन्दं तनोति विस्तारयति ॥४६॥

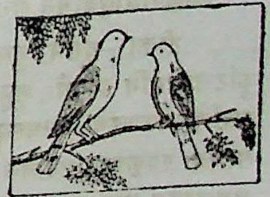
अति मनोरम इस गौर लीलामृत का समादर खल व्यक्ति गण नहीं करेंगे, कारण, उन सब के पक्ष में यह दुर्बोध्य है, इससे कुछ भी क्षति मेरी नहीं है, कारण, सहृदय व्यक्ति वृन्द का यह आनन्द वर्द्धक है।४६

इति श्रीचैतन्यचरितामृते मध्यखण्डे काशीवासिवैष्णव-करणं पुनर्नीलाचलगमनम् नाम पञ्चविंशतितमः परिच्छेदः ॥२५॥

मध्यलीला सम्पूर्ण ।







श्रीचैतन्यचरितामृत

अन्त्यलीला ।

प्रथमपरिच्छेद

श्रीश्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः ।

अथ ग्रन्थकारस्य श्लोकपञ्चकम्—

पङ्गुं लङ्घयते शैलं मूकमावर्त्तयेत् श्रुतिं ।
यत्कृपा तमहं वन्दे कृष्णचैतन्यमीश्वरं ॥१॥

टीका—यत्कृपा यस्य कृपा पङ्गुं पदशून्यं जनं शैलं गिरिं लङ्घयते उत्तीर्णं कारयति, मूकं वाक्शक्तिविहीनं जनं श्रुतिं वेदादिकं आवर्त्तयेत्, अहं तं श्रीकृष्णचैतन्यं वन्दे नमामि ॥१॥

जिन की कृपासे पङ्गु व्यक्ति भी गिरिलङ्घन में समर्थ होता है, एवं वाक् शक्ति हीन व्यक्ति में भी वेदादि अध्ययन करने में सामर्थ्य आती है, मैं उन ईश्वर श्रीकृष्णचैतन्य देवको वन्दना करता हूँ ॥१॥

दुर्गमे पथि मेऽन्धस्य स्खलत्पादगतेर्मुहुः ।
स्वकृपायष्टिदानेन सन्तः सन्त्ववलम्बनं ॥२॥

टीका—दुर्गमे दुस्तरे पथि मार्गे संसाररूप-कुटिलवर्त्मनि इत्यर्थः, मुहुः पुनः पुनः स्खलत्पादगतेः स्खलितचरणस्य अन्धस्य मे मम सम्बन्धे सन्तः साधवः स्वकृपायष्टिदानेन स्वकरुणारूप यष्टिप्रदानेन अवलम्बनं सन्तु भवन्तु ॥२॥

मैं दुर्गम संसार रूप कुटिल मार्ग में निपतित होकर पुनः पुनः स्खलित हो रहा हूँ, मैं अन्ध, अर्थात् अज्ञानान्धकार से समाच्छन्न हूँ । साधुगण, निज करुणारूप यष्टि प्रदान कर मेरा अवलम्बन हों ॥२॥

श्रीरूप सनातन भट्ट रघुनाथ ।
श्रीजीव, गोपाल भट्ट, दास रघुनाथ ॥१
एइ छय गुरुर करि चरण वन्दन ।
याँहा हैते विघ्ननाश अभीष्टपूरण ॥२

जयतां सुरतौ पङ्गोर्मम मन्दमतेर्गती ।
मत्सर्व्वस्वपदाम्भोजौ राधा-मदनमोहनौ ॥३॥

जो विकलाङ्ग एवं मूढ़मति मेरी एकमात्र गति हैं, जिनके पाद पद्म मेरा सर्वस्व है, मैं उन परम दयालु राधामदनमोहन की जय घोषणा करता हूँ ॥३॥

दीव्यद्वृन्दारण्यकल्पद्रुमाधः
श्रीमद्रत्नागारसिंहासनस्थौ ।
श्रीमद्राधाश्रीलगोविन्ददेवौ
प्रेष्ठालीभिः सेव्यमानौ स्मरामि ॥४॥

दिव्य शोभामय वृन्दावन के कल्पवृक्ष के तल स्थित रत्नमन्दिर के रत्न सिंहासन में समासीन एवं प्रियसखी गण के द्वारा सेवित श्रीमती राधिका एवं

श्रीमान् गोविन्द देवका मैं स्मरण करता हूँ ॥४॥

श्रीमन्रासरसारम्भी वंशीवटतटस्थितः ।
कर्षन् वेणुस्वनैर्गोपीर्गोपीनाथः श्रियेऽस्तु नः ॥५॥

श्रीमान् अर्थात् सर्वार्थ परिपूर्ण, रासलीला प्रवृत्त, गोपीनाथ वंशीवट मूल में स्थित होकर मुरलीरव से गोपाङ्गनागण को आकर्षण कर अर्थात् रासविहारी मूर्त्तिसे हम सबको कल्याण प्रदान करें।५

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥३
मध्यलीला संक्षेपेते करिल वर्णन ।
अन्त्यलीला वर्णन किछु शुन भक्तगण ॥४
मध्यलीला-मध्ये अन्त्य-लीला-सूत्रगण ।
पूर्व्व ग्रन्थे संक्षेपेते करियाछि वर्णन ॥५
आमि जराग्रस्त निकट जानिया मरण ।
अन्त्य कोनो लीला आगे करियाछि वर्णन ॥६
पूर्व्वलिखित ग्रन्थसूत्र अनुसारे ।
येइ नाहि लिखि ताहा लिखिये विस्तारे ॥७
वृन्दावन हैते प्रभु नीलाचल आइला ।
स्वरूप गोसाञि गौड़े वार्त्ता पाठाइला ॥८
शुनि शची आनन्दिता, सब भक्तगण ।
सबे मिलि नीलाचले करिला गमन ॥६
कुलीनग्रामी भक्त आर यत खण्डवासी ।
आचार्य्य शिवानन्द सने मिलिला सभे आसि ।१०
शिवानन्द करे सब घाटि समाधान ।
सबाके पालन करे देय वासा स्थान ॥११
एक कुक्कुर चले शिवानन्द सने ।
भक्ष्य दिया लञा चले करिया पालने ॥१२
एक दिन एक स्थाने नदी पार हैते ।
उड़िया नाविक कुक्कुर ना चड़ाय नौकाते ।१३
कुक्कुर रहिला शिवानन्द दुःखी हैला ।
दशपरा करि दिया कुक्कुर पार कैला ॥१४
एक दिन शिवानन्द घाटिते रहिला ।
कुक्कुरके भात दिते सेवक पासरिला ॥१५
रात्रे आसि शिवानन्द भोजनेर काले ।
कुक्कुर पाञाछे भात सेवके पुछिले ॥१६
कुक्कुर नाहि पाय भात शुनि दुःखी हैला ।
कुक्कुर चाहिते दश मनुष्य पाठाइला ॥१७
चाहिया ना पाइल कुक्कुर लोक सब आइल ।
दुःखी हञा शिवानन्द उपवास कैल ॥१८
प्रभाते कुक्कुर चाहि कोथाय ना पाइल ।
सकल वैष्णव मने चमत्कार हैल ॥१६
उत्कण्ठाय चलि सबे आइला नीलाचले ।
पूर्व्ववत महाप्रभु मिलिला सकले ॥२०
सबा लञा कैल जगन्नाथ दरशन ।
सबा लञा महाप्रभु करेन भोजन ॥२१
पूर्व्ववत् सबारे पाठाइला वासस्थाने ।
प्रभु-स्थाने आर दिन सबार गमने ॥२२
आसिया देखिल सबे सेइत कुक्कुरे ।
प्रभु-काछे वसि आछे किछु अल्पदूरे ॥२३
प्रसाद नारिकेलशस्य देन फेलाइया ।
"कृष्ण राम हरि" कह बलेन हासिया ॥२४
शस्य खाय कुक्कुर, कृष्ण कहे बारबार ।
देखिया लोकेर मने हैल चमत्कार ॥२५
शिवानन्द कुक्कुर देखि दण्डवत कैला ।
दैन्य करि निज अपराध क्षमाइला ॥२६
आर दिन केह तार देखा ना पाइला ।
सिद्ध देह पाञा कुक्कुर वैकुण्ठके गेला ॥२७

ऐछे दिव्य लीला करे शचीर नन्दन ।
कुक्कुर के कृष्ण कहाइ करिल मोचन ॥२८
एथा प्रभु-आज्ञाय रूप आइला वृन्दावन ।
कृष्णलीला नाटक करिते हैल मन ॥२६
वृन्दावने नाटकेर आरम्भ करिल ।
मङ्गलाचरण नान्दी-श्लोक तथाइ लिखिल ।३०
पथे चलि आइसे नाटकेर घटन भाविते ।
कड़चा करिया किछु लागिला लिखिते ॥३१
एइमते दुइ भाइ गौड़देशे आइला ।
गौड़े आसि अनुपमेर गङ्गाप्राप्ति हैला ॥३२
रूप गोसाञि प्रभु पाश करिला गमन ।
प्रभुके देखिते ताँर उतकण्ठित मन ॥३३
अनुपमेर लागि ताँर विलम्ब हइल ।
भक्तगण-पाश आइल, लागि ना पाइल ॥३४
उड़ियादेशे सत्यभामापुर नामे ग्राम ।
एक रात्रि सेइ ग्रामे करिल विश्राम ॥३५
रात्रे स्वप्ने देखे एक दिव्यरूपा नारी ।
सम्मुखे आसिया आज्ञा दिल कृपा करि ॥३६
"आमार नाटक पृथक् करह रचन ।
आमार कृपाते नाटक हबे विलक्षण ॥"३७
स्वप्न देखि रूप गोसाञि करिल विचार ।
"सत्यभामार आज्ञा पृथक् नाटक करिबार ३८
व्रजपुरलीला एकत्र करियाछि घटना ।
दुइ भाग करि एवे करिब रचना ॥३६
भाविते भाविते शीघ्र आइला नीलाचले ।
आसि उत्तरिला हरिदासेर वासास्थले ॥४०
हरिदास ठाकुर तारे बहु कृपा कैला ।
"तुमि आसिबे मोरे प्रभु ये कहिला ॥"४१
उपलभोग देखि हरिदासेरे देखिते :
प्रतिदिन आइसेन प्रभु, आइला आचम्बिते ।४२
"रूप दण्डवत् करे" हरिदास कहिला ।
हरिदासे मिलि प्रभु रूपे आलिङ्गिला ॥४३
हरिदास रूप लञा प्रभु बसिला एक स्थाने ।
कुशल प्रश्न इष्टगोठी कैल कतक्षणे ॥४४
सनातनेर वार्त्ता यबे गोसाञि पुछिल ।
रूप कहे "ताँर सङ्गे देखा ना हइल ॥४५
आमि गङ्गापथे आइलाम तिँहो राजपथे ।
अतएव आमार देखा ना हैल ताँर साथे ॥४६
प्रयागे शुनिल तेँहो गेला वृन्दावन ।"
अनुपमेर गङ्गाप्राप्ति कैल निवेदन ॥४७
रूपे ताँहा वासा दिया गोसाञि चलिला ।
गोसाञिर सङ्गी भक्त रूपेरे मिलिला ॥४८
आर दिन महाप्रभु सब भक्त लञा ।
रूपे मिलाइला सबाय कृपा त करिया ॥४६
सबार चरण रूप करिल वन्दन ।
कृपा करि रूपे सबे कैल आलिङ्गन ॥५०
अद्वैत, नित्यानन्द प्रभु दुइ जने ।
प्रभु कहे "रूपे कृपा कर कायमने ॥५१
तोमा दुँहार कृपाते इहार हउक शक्ति ।
याते विरचिते पारेन कृष्णरसभक्ति ॥"५२
गौड़िया उड़िया यत प्रभुर भक्तगण ।
सबार हइल रूप स्नेहेर भाजन ॥५३
प्रतिदिन आसि रूप करेन मिलने ।
मन्दिरे ये प्रसाद पान देन दुइ जने ॥५४
इष्टगोष्ठी दुइ जने करि कतोक्षण ।
मध्याह्न करिते प्रभु करिला गमन ॥५५

एइमत प्रतिदिने प्रभुर व्यवहार।
प्रभुकृपा पाञा रूपेर आनन्द अपार ॥५६
भक्तगण लञा कैल गुण्डिचा मार्ज्जन।
आइटोटा आसि कैल वन्य भोजन ॥५७
प्रसाद खाय हरि बले सब भक्तगण।
देखि हरिदास रूपेर हरषित मन ॥५८
गोविन्द द्वारा प्रभुर शेष प्रसाद पाइला।
प्रेमे मत्त दुइ जन नाचिते लागिला ॥५९
आर दिन प्रभु रूपे मिलिञा वसिला।
सर्व्वज्ञशिरोमणि प्रभु कहिते लागिला ॥६०
"कृष्णके बाहिर नाहि करिह व्रज हैते।
व्रज छाड़ि कृष्ण कभु ना यान काँहाते" ॥६१

तथाहि लघुभागवतामृते पूर्वखण्डे श्रीकृष्णप्रकट-
लीलायां द्वात्रिंशाङ्कधृतयामलवचनं—

कृष्णोऽन्यो यदुसम्भूतो यस्तु गोपेन्द्रनन्दनः।
वृन्दावनं परित्यज्य स क्वचिन्नैव गच्छति ॥६

टीका—यदुसम्भूतः यदुकुलजातः कृष्णः एकः स्यात्, गोपेन्द्रनन्दनः नन्दसुतः कृष्णः अन्यः स्यात। यस्तु गोपेन्द्रनन्दनः कृष्णः, सः वृन्दावनं परित्यज्य विहाय क्वचित् कुत्रापि नैव गच्छति। परन्तु यदुवंशोद्भवः कृष्णः वृन्दावनं विहाय मथुरायां गच्छति ॥६॥

यदुकुलोद्भव कृष्ण एक व्यक्ति, एवं नन्दनन्दन कृष्ण आर व्यक्ति। नन्दनन्दन कृष्ण कभी भी वृन्दावन का परित्याग कर कहीं पर नहीं जाते हैं। किन्तु जो कृष्ण यदुकुलोद्भव, वही वृन्दावन का परित्याग कर मथुरा गमन करते हैं ॥६॥

एत कहि महाप्रभु मध्याह्ने चलिला।
रूप गोसाञि मने किछु विस्मय हइला ॥६२
"पृथक् नाटक करिते सत्यभामा आज्ञा दिल।
जानि पृथक् नाटक करिते प्रभु-आज्ञा हैल।६३
पूर्व्वे दुइ नाटक छिल एकत्र रचना।
दुइ भाग करि एबे करिव घटना ॥६४
दुइ नान्दी प्रस्तावना दुइ संघटना।
पृथक् करिया लिखि करिया भावना ॥"६५
रथयात्राय जगन्नाथ दर्शन करिल।
रथ-अग्रे प्रभुर नृत्य कीर्त्तन देखिल ॥६६
प्रभुर नृत्य-श्लोक शुनि श्रीरूप गोसाञि।
सेइ श्लोकेर अर्थे श्लोक करिल तथाइ ॥६७
पूर्व्वे सेइ सब कथा करियाछि वर्णन।
तथापि कहिये किछु संक्षेप कथन ॥६८
सामान्य एक श्लोक प्रभु पड़ेन कीर्त्तने।
केन श्लोक पड़ेन इहा केह नाहि जाने ॥६९
सबे एका स्वरूप गोसाइ श्लोकेर अर्थ जाने।
श्लोकानुरूप पद करान आस्वादने ॥७०
रूप गोसाञि प्रभुर जानि अभिप्राय।
सेइ अर्थे श्लोक कैल प्रभुरे ये भाय ॥७१

तथाहि काव्यप्रकाशे प्रथमोल्लासे चतुर्थाङ्कधृतं तथा
पद्यावल्यां अशीत्यधिकशततमाङ्कधृतं
कस्याश्चिन्नायिकाया वचनम्—

यः कौमारहरः स एव हि वरस्ता एव चैत्रक्षपा,
स्तेचोन्मीलितमालतीसुरभयः प्रौढ़ाः कदम्बानिलाः।
सा चैवास्मि तथापि तत्र सुरतव्यापारलीलाविधौ,
रेवारोधसि वेतसीतरुतले चेतः समुत्कण्ठयते ॥७

हे सखि! जिसने मेरा यौवन राज्य हरण किया है, अधुना वही मेरा वर है, वही चैत्रमासीया यामिनी है, वही प्रस्फुटित मालती सौरभ है, वही विकसित कदम्ब कानन सम्बन्धीय समीर है एवं वही मैं हूँ, तथापि रेवानदी तीरस्थ अशोकतरु मूल में जो विहार हुआ था, तन्निमित्त मदीय मन समुत् कण्ठित है ॥७॥

तथाहि श्रीरूपगोस्वामिकृत-श्लोक:—

प्रिय: सोऽयं कृष्ण: सहचरि कुरुक्षेत्रमिलित
स्तथाहं सा राधा तदिदमुभयो: सङ्गमसुखम् ।
तथाप्यन्त:खेलन्मधुरमुरलीपञ्चमजुषे
मनो मे कालिन्दीपुलिनविपिनाय स्पृहयति ॥८॥

हे सहचरि ! हे सखि ! कुरुक्षेत्र में वही श्रीहरि उपस्थित हैं, मैं भी वही राधा हूँ, उभय का सङ्गम सुख भी वही है, तथापि काननाभ्यन्तर में खेलित मुरली का पञ्चम अर्थात् कोकिल कूजितवत् स्वर विशिष्ट कालिन्दी सैकत कानन के प्रति मेरा चित्त स्पृहाशील है ॥८॥

ताल पत्रे श्लोक लिखि चालेते राखिला ।
समुद्र-स्नान करिबारे रूप गोसाञि गेला ॥७२
हेनकाले प्रभु आइला ताहारे मिलिते ।
चाले श्लोक पाञा प्रभु लागिला पड़िते ॥७३
श्लोक पड़ि प्रभु सुखे प्रेमाविष्ट हैला ।
हेनकाले रूप गोसाञि स्नान करि आइला ।७४
प्रभु देखि दण्डवत् प्राङ्गणे पड़िला ।
प्रभु तारे चापड़ मारि कहिते लागिला ॥७५
"गूढ़ मोर हृदय तुमि जानिले केमने ।"
एत कहि रूपे कैल दृढ़ आलिङ्गने ॥७६
से श्लोक लइया प्रभु स्वरूपे देखाइल ।
रूपेर परीक्षा लागि ताहारे पुछिल ॥७७
"मोर अन्तर-वार्त्ता रूप जानिल केमने ।"
स्वरूप कहे "जानि कृपा करियाछ आपने ॥७८
अन्यथा ए अर्थ कारओ नाहि हय ज्ञान ।
तुमि पूर्व्वे कृपा कैले करि अनुमान ॥"७९
प्रभु कहे "एहों आम य प्रयागे मिलिला ।
योग्यपात्र जानि एहाँय मोर कृपा हैला ॥८०
तबे शक्ति सञ्चारि आमि कैल उपदेश ।
तुमिओ कहिओ इँहाय रसेर विशेष ॥८१
स्वरूप कहे "याते एइ श्लोक देखिल ।
तुमि करियाछ कृपा तबहिँ जानिल ॥८२

तथाहि न्याय—

फलेन फलकारणमनुमीयते ।
कार्य्यं निदानाद्धि गुणानधीते ॥९॥

टीका—फलेन हेतुना फलकारणं अनुमीयते। हि यस्मात् कार्य्यं निदानात् गुणान् अधीते लभते ।९

फल को देखकर ही फल का कारण अनुमित होता है । कारण, कार्य्य--कारण के अनुरूप गुणलाभ करता है । ९॥

तथाहि नैषधीये पञ्चचत्वारिंश श्लोके दमयन्तीं प्रति हंसवाक्यम्—

स्वर्गापगा-हेममृणालिनीनां
नालामृणालाग्रभुजो भजाम: ।
अन्नानुरूपां तनुरूपऋद्धिं
कार्य्यं निदानाद्धि गुणानधीते ॥१०॥

टीका—हे दमयन्ति ! वयं अन्नानुरूपां रूपऋद्धिं कारण सदृशीं तन्वा: रूपस्य ऋद्धिं भजाम: प्राप्नुम: । वयं किम्भूता: ?—स्वर्गापगा-हेममृणालिनीनां नालामृणालाग्रभुज:, स्वर्गापगाया: देवनद्या मन्दाकिन्या: हेममृणालिनीनां स्वर्णमृणालिनीनां नालानां मृणालाग्रं अतिशयकोमलांशं भुञ्जते ये ते । हि यत. कार्य्यं निदानात् कारणानुरूपात् गुणान् अधीते लभते ॥१०॥

हंस ने दमयन्ती को कहा—हम सबने मन्दाकिनी की स्वणमय मृणालिनी के कोमलाग्र सेवन कर उसके अनुरूप कोमल मनोहर शरीर को प्राप्त किया है, कारण--कार्य्य– कारण के अनुरूप गुण को प्राप्त करता है ॥१०॥

चातुर्म्मास्य रहि गौड़े वैष्णव चलिला ।
रूप गोसाञि महाप्रभुर चरणे रहिला ॥८३

एक दिन रूप करेन नाटक लिखन ।
आचम्बिते महाप्रभुर हैल आगमन ॥८४
सम्भ्रमे दुँहे उठि दण्डवत् हैला ।
दुँहे आलिङ्गिया प्रभु आसने वसिला ॥८५
"काँहा पुँथि लिख" बलि एक पत्र निल ।
अक्षर देखिया प्रभु मने सुखी हैल ॥८६
श्रीरूपेर अक्षर येन मुकुतार पाँति ।
प्रीत हञा करे प्रभु अक्षरेर स्तुति ॥८७
सेइ पत्रे प्रभु एक श्लोक देखिला ।
पड़ितेइ श्लोक प्रेमे आविष्ट हइला ॥८८

तथाहि विदग्धमाधवे (१।१२)—

तुण्डे ताण्डविनी रतिं वितनुते तुण्डावलिलब्धये,
कर्णक्रोड़कड़म्बिनी घटयते कर्णार्व्वुदेभ्यः स्पृहां ।
चेतःप्राङ्गणसङ्गिनी विजयते सर्व्वेन्द्रियाणां कृतिं,
नो जाने जनिता कियद्भिरमृतैः कृष्णेति वर्णद्वयी ।११

टीका—हे वत्से ! नो जाने न अवैमि, यत् कृष्ण इति वर्णद्वयी कियद्भिः कीदृशैरमृतैः पीयूषैर्जनिता रचिता । वर्णद्वयी कीदृशी ?—तुण्डे रसनायां ताण्डविनी नर्त्तनवती सती तुण्डावलिलब्धये जिह्वापंक्तिप्राप्त्यर्थं रतिं वाञ्छां वितनुते विस्तारयति । बहुतुण्ड-चेत्तदा प्रमोदेन श्रीकृष्णगुणादिकीर्त्तनं क्रियते इति तात्पर्य्यार्थः । पुनः कीदृशी ?—कर्णक्रोड़कड़म्बिनी श्रवण-विवरे अङ्कुरवती सती कर्णार्व्वुदेभ्य अर्व्वुदसंख्यककर्णप्राप्तये स्पृहां वासनां घटयते । पुनः कीदृशी ?—चेतःप्राङ्गणसङ्गिनी चेतोरूप प्राङ्गणस्य सङ्गिनी सती सर्व्वेन्द्रियाणां इन्द्रियग्रामाणां कृतिं व्यापारं विजयते ॥११॥

कृष्ण यह अमृत मय शब्द जिह्वा स्पर्श होने से रसना श्रेणी लाभ करने की स्पृहा होती है, श्रवण विवर में अङ्कुरित होने से अर्बुद संख्यक कर्णलाभ की इच्छा होती है, एवं चित्त रूप प्राङ्गण में प्रविष्ट यावतीय इन्द्रियों का प्रयत्न सम्पादित होगा है, मैं नहीं जानती हूँ—यह कृष्ण शब्द कितने अमृत के द्वारा गठित हुआ है ॥११॥

श्लोक शुनि हरिदास हइल उल्लासी ।
नाचिते लागिला श्लोकेर अर्थ प्रशंसि ॥८९
"कृष्ण नामेर महिमा शास्त्र-साधुमुखे जानि ।
नामेर महिमा ऐछे काँहा नाहि शुनि" ॥९०
तबे महाप्रभु दुँहे करि आलिङ्गन ।
मध्याह्न करिते समुद्रे करिला गमन ॥९१
आर दिन महाप्रभु देखि जगन्नाथ ।
सार्व्वभौम रामानन्द स्वरूपादि साथ ॥९२
सबा मिलि चलि आइल श्रीरूपे मिलिते ।
पथे ताँर गुण सबारे लागिला कहिते ॥९३
दुइ श्लोक कहि प्रभुर हैल महासुख ।
निज भक्तेर गुण कहे हञा पञ्चमुख ॥९४
सार्व्वभौम रामानन्दे परीक्षा करिते ।
श्रीरूपेर गुण दुँहारे लागिला कहिते ॥९५
ईश्वरस्वभाव भक्तेर ना लय अपराध ।
अल्प सेवा बहुमाने आत्म पर्य्यन्त प्रसाद ।९६

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे विभावलहर्य्यां सप्ततिश्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

भृत्यस्य पश्यति गुरूनपि नापराधान्,
सेवां कृतामपि मनागबहुधाभ्युपैति ।
आविष्करोति पिशुनेष्वपि नाभ्यसूयां
शीलेन निर्म्मलमतिः पुरुषोत्तमोऽयं ॥१२॥

टीका—शीलेन चरित्रेण सह निर्म्मलमतिः अयं पुरुषोत्तमः पुरुषप्रवरः भृत्यस्य सेवकस्य अपराधान् गुरूनपि न पश्यति, अल्पामपि कृतां सेवां बहुधा अभ्युपैति, पिशुनेषु आत्मविद्वेषिषु अभ्यसूयां न आविष्करोति ॥१२॥

विमल स्वभाव यह पुरुषोत्तम भगवान् निज सेवक के गुरुतर अपराध भी ग्रहण नहीं करते हैं, अल्प परिमाण में कृत सेवा को अनेक मानते हैं, एवं आत्म

विद्वेषी व्यक्ति के प्रति भी दोषारोप नहीं करते हैं।१२

भक्त सङ्गे प्रभु आइला देखि दुइ जन।
दण्डवत् हञा कैल चरण वन्दन ॥९७
भक्त सङ्गे कैल प्रभु दुँहाके मिलन।
पिण्डार उपरे वसिला लञा भक्तगण ॥९८
रूप हरिदास दुँहे वसिला पिण्डातले।
सबार अग्रे ना उठिला पिँड़ार उपरे ॥९९
"पूर्व्व श्लोक पड़ रूप" प्रभु आज्ञा कैल।
लज्जाते ना पड़े रूप मौन धरिल ॥१००
स्वरूप गोसाञि तबे से श्लोक पड़िल।
शुनि सबाकार चित्ते चमत्कार हैल ॥१०१

तथाहि श्रीरूपगोस्वामि-कृत-श्लोकः—

प्रियः सोऽयं कृष्णः सहचरि कुरुक्षेत्रमिलित
स्तथाहं सा राधा तदिदमुभयोः सङ्गमसुखम्।
तथाप्यन्तःखेलन्मधुरमुरलीपञ्चमसुषे
मनो मे कालिन्दीपुलिनविपिनाय स्पृहयति ॥१३॥

श्रीराधिका बोली,—हे सखि! कुरुक्षेत्र में जिसका साक्षात् कार हुआ, वह तो दयित कृष्ण है, मैं भी वही राधा हूँ, हम दोनों का मिलन सुख भी वही है, तथापि यमुना पुलिण वन में जो मुरली के पञ्चमस्वर की मधुर लहरी प्रसारित होती उसी के निमित्त मेरा मन व्याकुल है ॥१३॥

राय भट्टाचार्य्य बले "तोमार प्रसाद बिने।
तोमार हृदय एइ जानिल केमने ॥१०२
आमाते सञ्चारि पूर्व्वे कहिल सिद्धान्त।
ये सब सिद्धान्ते ब्रह्मा नाहि पाय अन्त ॥१०३
ताते जानि पूर्व्वे तोमार पाइयाछे प्रसाद।
ताहा विना नहे तोमार हृदयानुवाद ॥"१०४
प्रभु कहे "कह रूप नाटकेर श्लोक।
ये श्लोक शुनिले लोकेर याय दुःख शोक"१०५
बार बार प्रभु तारे आज्ञा यदि दिल।
तबे से श्लोक रूप कहिते लागिल ॥१०६

तथाहि विदग्धमाधवे (१।१२)—

तुण्डे ताण्डविनी रतिं वितनुते तुण्डावलिलब्धये,
कर्णक्रोड़कड़म्बिनी घटयते कर्णार्व्बुदेभ्यः स्पृहां।
चेतःप्राङ्गणसङ्गिनी विजयते सर्व्वेन्द्रियाणां कृतिं,
नो जाने जनिता कियद्भिरमृतैः कृष्णेतिवर्णद्वयी ॥१४

श्रीकृष्ण शब्द—जिह्वा में संलग्न होने से अनेक जिह्वायुक्त मुख लाभ करने की लालसा होती है, कर्ण कुहर में प्रविष्ट होने से अर्वुद कर्ण प्राप्त करने की स्पृहा होती है, चित्त प्राङ्गण में संलग्न होने से समस्त इन्द्रियों का प्रयत्न सफल होता है, मैं नहीं जानती हूँ—किस प्रकार अमृत के द्वारा कृष्ण वर्णद्वय निर्मित हुए हैं? ॥१४॥

यत भक्तवृन्द आर रामानन्द राय।
श्लोक शुनि सबार हइल आनन्द विस्मय १०७
सबे बले "नाम-महिमा शुनियाछि अपार।
एमन माधुर्य्य केह वर्णे नाहि आर ॥"१०८
राय कहे "कोन ग्रन्थ कर हेन जानि।
याहार भितरे एइ सिद्धान्तेर खनि ॥१०९
स्वरूप कहे "कृष्णलीलार नाटक करिते।
व्रजलीला पुरलीला एकत्र वर्णिते ॥११०
आरम्भियाछिला एबे प्रभु-आज्ञा पाञा।
दुइ नाटक करितेछेन विभाग करिया ॥१११
विदग्धमाधव आर ललितमाधव।
दुइ नाटके प्रेमरस अद्भुत सव ॥"११२
राय कहे "नान्दी श्लोक पड़ देखि शुनि।"
श्रीरूप श्लोक पड़े प्रभु-आज्ञा मानि ॥११३

तथाहि विदग्धमाधवे—(१।१)—

सुधानां चान्द्रीणामपि मधुरिमोन्माददमनी
दधाना राधादिप्रणयघनसारैः सुरभितां।

समन्तात् सन्तापोद्गमविषमसंसारसरणी-
प्रणीतां ते तृष्णां हरतु हरिलीलाशिखरिणी ॥१५

टीका—हरिलीलाविषयिणी हरिलीलारूप-रसालपानीयविशेषः ते तव तृष्णां पिपासां हरतु दूरीकरोतु। तृष्णां कीदृशीं?—समन्तात् सर्व्वतः सन्तापोद्गमविषमसंसारसरणी प्रणीतां, सन्तापानां आध्यात्मिकादि-तापानां उद्गमो यस्यां सा, एवम्-प्रकारा या विषमा दुर्गमा संसाररूपा सरणी पन्थाः, तया प्रणीतां पर्य्यटनोत्पन्नां। हरिलीलाशिखरिणी किम्भूता?—चान्द्रीणामपि सुधानां मधुरिमोन्माद-दमनी, मधुरिम्ना हेतुना उन्मादः अहमेव सर्व्वथा माधुर्य्यमयी इति योऽहङ्कारस्तं दमयितुं शीलं यस्याः सा। पुनः किम्भूता?—राधादिप्रणयघनसारैः सुरभितां राधादीनां प्रणय एव घनसाराः कर्पूरास्तैः करणैः सुरभितां सौगन्ध्यं दधाना ॥१५॥

चन्द्र की सुधा की मधुरिमा के गर्व को खर्व करती है-कृष्ण लीला की मधुरिमा। मधुर शिखरिणी जिस प्रकार कर्पूर संयोग से सुरभित होती है, मधुर कृष्ण लीला भी उसी प्रकार राधा एवं व्रज सीमन्तिनी के प्रेम से उपादेय हुई है। पथिक के पथश्रम जनित तृष्णा को जिस प्रकार शिखरिणी अपनोदन करती है, उस प्रकार कृष्ण लीला विषम संसार ताप तापित दुःख को हरण करे ॥१५॥

राय कहे "कह इष्टदेवेर वर्णन।"
प्रभुर सङ्कोचे रूप ना करे पठन ॥११४
प्रभु कहे "कह केन कि सङ्कोच लाजे।
ग्रन्थेर फल शुनाइबे वैष्णव समाजे ॥११५
तबे रूप गोसाञि यदि श्लोक पड़िल।
शुनि प्रभु कहे "एइ अति स्तुति हैल॥" ११६

तथाहि विदग्धमाधवे (१।२)—

अनर्पितचरीं चिरात् करुणयावतीर्णः कलौ,
समर्पयितुमुन्नतोज्ज्वलरसां स्वभक्तिश्रियं।
हरिः पुरटसुन्दरद्युतिकदम्ब-सन्दीपितः
सदा हृदयकन्दरे स्फुरतु वः शचीनन्दनः ॥१६

कभी भी जिस उन्नत उज्ज्वल रस का वितरण नहीं किया गया है, उस मधुर रस से रसाल निज प्रेम सम्पद् को वितरण करने के निमित्त करुणा वशतः जो कलियुग में अवतीर्ण हुये हैं, स्वर्ण पुञ्जवत् उज्ज्वल देह कान्ति युक्त शचीनन्दन हरि तुम सबके हृदय कन्दर में प्रकाशित हों ॥१६॥

सब भक्तगण कहे श्लोक शुनिया।
"कृतार्थ करिला सबाय श्लोक शुनाइया ॥११७
राय कहे "कोन् मुखे पात्रसन्निधान।"
रूप कहे "कालसाम्ये प्रवर्त्तक नाम ॥११८

तथाहि नाटकचन्द्रिकायाम् (१।२)—

आक्षिप्तः कालसाम्येन प्रवेशः स्यात् प्रवर्त्तकः ॥१७

टीका—कालसाम्येन आक्षिप्तः प्रेषितः सन् यः प्रवेशः, स एव प्रवर्त्तकः स्यात् ॥१७॥

समयानुरूप पात्र सन्निवेश को प्रवर्त्तक कहते हैं ॥१७॥

तथाहि विदग्धमाधवे (१।१०)—

सोऽयं वसन्तसमयः समियाय यस्मिन्
पूर्णं तमीश्वरमुपोढ़नवानुरागं।
गूढ़ग्रहा रुचिरया सह राधयासौ
रङ्गाय सङ्गमयिता निशि पौर्णमासी ॥१८॥

टीका—अयं सः दृश्यमानः वसन्तसमयः समियाय समुपागतः स्यात्। यस्मिन् समये असौ पौर्णमासी तिथिः तन्-संज्ञका भगवती च रुचिरया राधया सह विशाखानक्षत्रेण पक्षान्तरे वृषभानु-नन्दिन्या सह निशि रङ्गाय कौतुकाय, पक्षान्तरे कौतुकरहस्यं प्रकाशयितुं, पूर्णं षोड़शकलं, पक्षान्तरे परिपूर्णतमं तं ईश्वरं शशाङ्कं पक्षान्तरे श्रीकृष्णं सङ्गं अयिता। पौर्णमासी किम्भूता?—गूढ़ग्रहा गूढ़ा नवग्रहा यस्याः सा, पक्षान्तरे गूढ़ो ग्रह आग्रहो यस्याः सा। ईश्वरं किम्भूतं?—उपोढ़नवानुरागं उपोढ़ः लब्धः नवः अनुरागो रक्तिमा येन तं, श्रीकृष्ण-पक्षे स्पष्टम् ॥१८॥

वसन्त समय समागत है,इस समय पौर्णमासी तिथि विशाखा नक्षत्र के सहित ग्रह समूह के द्वारा परिवेष्टित होकर नव राग रञ्जित पूर्णशशधर के सहित समवेत होकर शोभाविस्तार कर रहा है।

पक्षान्तर में – वसन्त कालीय यामिनी में दैवी पौर्णमासी अतीव आग्रह के सहित नवीनानुराग से अनुरागी परिपूर्णतम श्रीहरि के कौतुक वर्द्धनार्थ सुरुचिरा राधा को ले आकर मिलिता हुई ॥१८॥

राय कहे "प्ररोचनादि कह देखि शुनि ।
रूप कहे "महाप्रभुर श्रवणेच्छा जानि।" ११९

तथाहि विदग्धमाधवे (८।८)—

भक्तानामुदगादनर्गलधियां वर्गो निसर्गोज्ज्वलः,
शीलैः पल्लवितः स वल्लववधूबन्धोः प्रबन्धोऽप्यसौ ।
लेभे चत्वरताञ्च ताण्डवविधेर्वृन्दाटवीगर्भभू-
र्मन्ये मद्विधपुण्यमण्डलपरिपाकोऽयमुन्मीलति ।१९

टीका—अयं मद्विधपुण्यमण्डलपरिपाकः मद्विधपुण्यसमूहानां परिणतिः उन्मीलति, इति अहं मन्ये । कथं ?—अनर्गलधियां निर्म्मलबुद्धीनां भक्तानां निसर्गोज्ज्वलः वर्गः समूहः उदगात् उदयं प्राप्तवान् । असौ प्रबन्धः विदग्धमाधवनाटकः अपि वल्लववधूबन्धोः कृष्णस्य शीलैः चरित्रैः पल्लवितः सुशोभितः । वृन्दाटवीगर्भभूः वृन्दावनस्थरासमण्डल ताण्डवविधेः चत्वरतां लेभे प्राप्तवती ॥१९॥

देखो, इस सभा में स्वभाव निर्म्मल मति भक्त वृन्द समुपस्थित हैं, प्रस्तुत विदग्ध नामक गोपी प्रिय श्रीकृष्ण के चरित्र से शोभित है। विशेषतः श्रीकृष्ण के लीला स्थान यह वृन्दावन हमारे अभिनय की रङ्ग भूमि है, प्रतीत होता है, अद्य हम सब के पुण्य परिणाम विकशित हुआ ॥१९॥

तथाहि विदग्धमाधवे (१।६)—

अभिव्यक्ता मत्तः प्रकृतिलघुरूपादपि बुधा।
विधात्री सिद्धार्थान् हरिगुणमयी वः कृतिरियं ।

पुलिन्देनाप्यग्निः किमु समिधमुन्मथ्य जनितो
हिरण्यश्रेणीनामपहरति नान्तःकलुषतां ॥२०॥

टीका—हे बुधाः विचक्षणाः ! प्रकृतिलघुरूपां मत्तः सकाशात् अभिव्यक्ता प्रकाशिता अपि इयं कृतिः कविता वः युष्माकं सिद्धार्थान् अभिलषितान् विधात्री विधानं कुर्य्यादिति भाव । कीदृशी कृतिः ? हरिगुणमयी कृष्णलीलात्मिका । तत्र दृष्टान्तमाह । –पुलिन्देन शवरेण समिधं काष्ठं उन्मथ्य घृष्ट्वा उत्पादितः अग्निरपि हिरण्यश्रेणीनां काञ्चनसमूहानां अन्तःकलुषतां अन्तर्म्मालिन्यं न अपहरति किमु ? तथा मम कृतिः सज्जनानां दुर्व्वासनारूपमालिन्यं अपहरति इति सूचितं ॥२०॥

हे बुधगण ! मैं अति लघु स्वभाव के हूँ, तथापि मद् विरचिता कृष्ण गुणात्मिका यह कविता आप सब की अभिलषित पूर्त्ति करेगी, कारण, घृणित व्यक्ति के द्वारा काष्ठ घर्षण से उत्पन्न अनल क्या सुवर्ण का अन्तर्मालिन्य को विनष्ट नहीं करता है।२०

राय कहे "कह देखि प्रेमोत्पत्ति कारण ।
पूर्व्वानुराग, विकार-चेष्टा कामलिखन ॥" १२०
क्रमे श्रीरूप गोसाञि सकलि कहिल ।
शुनि प्रभुर भक्तगणे चमत्कार हैल ॥१२१

तथाहि विदग्धमाधवे (२।८)—

एकस्य श्रुतमेव लुम्पति मतिं कृष्णेति नामाक्षरं
सान्द्रोन्मादपरम्परामुपनयत्यन्यस्य वंशीकलः ।
एष स्निग्धघनद्युतिर्म्मनसि मे लग्नः पटे वीक्षणात्
कष्टं धिक् पुरुषत्रये रतिरभूत मन्ये मृतिः श्रेयसी ।२१

टीका— हे सखि ! एकस्य पुरुषोत्तमस्य कृष्ण इति नामाक्षरं श्रुतमेव मतिं लुम्पति विलुप्तां करोति। अन्यस्य वंशीकलः वंशीध्वनिः श्रुतिमात्रेणैव सान्द्रोन्मादपरस्परां निविड़मत्तताश्रेणीं घनीभूतमत्ततामित्यर्थः उपनयति प्रापयति । एषः स स्निग्धघनद्युतिः कृष्णमेघवर्ण्यद्युतिः य पुरः वीक्षणाद्धेतोः मनसि पटे चित्तक्षेत्रे लग्नः स्यात्, धिक् कष्टं ! भोः ! पुरुषत्रये मम रतिः अभूत्, अतएव मृतिः श्रेयसी

कल्याणकरी इति मन्ये ।।२१।।

हे सखि ! "कृष्ण" यह नाम श्रवण मात्र से मति विलुप्त हो गई, और, वंशी ध्वनि श्रवण मात्र से घनीभूत मत्तता उपस्थित हुइ, अन्य स्निग्ध नवनीरद द्युतिको देखने से ही चित्तक्षेत्र में लग्न होकर रह गई, हा धिक् ! मुझको एकत्र तीन पुरुषों की रति वहन करनी पड़ी, इससे मरण ही मङ्गलकर है ।२१

तथाहि विदग्धमाधवे (२।६)—

इयं सखि सुदुःसाध्या राधाहृदयवेदना ।
कृता यत्र चिकित्सापि कुत्सायां पर्य्यवस्यति ।२२

टीका—हे सखि ! इयं राधा--हृदयवेदना सुदःसाध्या । यत्र चिकित्सापि कृता कुत्सायां निन्दायां पर्य्यवस्यति ।।२२।।

हे सखि ! राधिका की यह मनोवेदना सुदुसाध्य है इसकी चिकित्सानिन्दा में परिणत होगी, कारण, इस रोगोपशम की सम्भावना नहीं है ।२२

तथाहि विदग्धमाधवे (२।३३)—

धरिअ पड़िच्छन्दगुणं सुन्दर
मह मन्दिरे तुम वससि ।
तह तह रुन्धसि बलिअ
जह जह च इदा पलाएगि ।।२३।।

टीका—हे सुन्दर ! प्रतिच्छन्दगुणं धृत्वा त्वं मम मन्दिरे हृत्पटे वससि तिष्ठसि । यथा यथा चकिता सती पलाये, तथा तथा वलितं यथा स्यात्तथा बलेन मां रुणत्सि ।।२३।।

प्राकृत भाषा निबद्ध श्लोक का संस्कृतानुवाद यह है—

धृत्वा प्रतिच्छन्दगुणं सुन्दरममममन्दिरे त्वं वससि ।
तथा तथा रुणत्सि बलितं यथा यथा चकिता पलाये ।

हे सुन्दर ! तुम मदीय हृदय मन्दिर में सर्वदा विराजित हो, मैं भीता होकर जिस दिक् के और जाती हूँ, तुम वहीं मुझ को रोकते रहते हो ।२३

तथाहि विदग्धमाधवे (२।१४)—

अग्रे वीक्ष्य शिखण्डखण्डमचिराद्युत्कम्पमालम्बते,
गुञ्जानाञ्च विलोकनान्मुहुरसौ साश्रु परिक्रोशति ।
नो जाने जनयन्नपूर्व्वनटनक्रीड़ाचमत्कारितां
बालायाः किल चित्तभूमिमविशत् कोऽयं नवीनग्रहः
।।२४।।

टीका हे पौर्णमासि ! कः अयं नवीनग्रहः नवयुवा बालायाः राधायाः चित्तभूमिं चित्तक्षेत्र अविशत्, तत् अहं नो जाने किल । किं कुर्व्वन् ?— अपूर्व्वनटनक्रीड़ाचमत्कारितां जनयन् । सा किं आचेष्टते ?—असौ अग्रे शिखण्डखण्डं वीक्ष्य अवलोक्य अचिरात् आशु उत्कम्प आलम्बते भूमौ संलुण्ठनि इति भावः । च पुनः गुञ्जानां विलोकनात् साश्रु अश्रुयुक्तं यथा स्यात्तथा मुहुः पुनः पुनः परिक्रोशति ।।२४।।

हे पौर्णमासि ! यह बाला पुरीवर्त्ती मयूर पुच्छ को देखकर ही अकस्मात् कम्पित होकर भूतल में लोट पोट करने लगी, एवं गुञ्जा दर्शन मात्र से ही साश्रु नयनों से पुनः पुनः प्रलाप कर रही है, मैं नहीं जानती हूँ,- कौन नव युवा इस के हृदय क्षेत्र में प्रवेश कर ये सब अद्भुत नट रङ्ग उत्पन्न कर रहा है ।।२४।

तथाहि विदग्धमाधवे (२।३६)—

अकारुण्यः कृष्णो यदि मयि तवागः कथमिदं
मुधा मा रोदीर्म्मे कुरु परमिमामुत्तरकृतिं ।
तमालस्य स्कन्धे सखि ललितदोर्व्वल्लरिरियं
यथा वृन्दारण्ये चिरमविचला तिष्ठति तनुः ।।२५।।

टीका—हे सखि ! यदि कृष्णः मयि अकारुण्यः निष्ठुर अभूत्, तदा तव इदं आगः अपराधः कथं भवेत् ? मुधा मा रोदीः । परं मम मरणावसाने इमां उत्तरकृतिं और्द्ध्वदैहिकीं क्रियां कुरु । तद्विधिमाह तमालस्य स्कन्धे कलितदोर्व्वल्लरिः इयं तनुः यथा वृन्दारण्ये चिर बहुदिनं वाप्य अविचला सती तिष्ठति ।।२५।।

हे सखि ! यदि मेरे प्रति श्रीहरि निष्ठुर हो गये, तो तुम्हारे क्या अपराध है ? तुम वृथा रोदन न करो । मेरी मृत्यु के पश्चात् तमाल तरुकी मूल

शाखा में मेरी बाहु लतिका को इस प्रकार वेष्टन कर रखना, जिस से शरीर चिरदिन वृन्दारण्य में अटल भाव से अधिष्ठित रहे, इसी प्रकार मेरी औद्‌र्ध्वदैहिकी क्रिया का सम्पादन करना ॥२५॥

राय कहे "कह देखि भावेर स्वभाव।"
रूप कहे "ऐछे हय कृष्णविषय भाव॥" १२२

तथाहि विदग्धमाधवे (२।१८)—

पीड़ाभिर्नवकालकूटकटुतागर्व्वस्य निर्व्वासनो,
निःस्यन्देन मुदा सुधामधुरिमाहङ्कारसङ्कोचनः।
प्रेमा सुन्दरि नन्दनन्दनपरो जागर्त्ति यस्यान्तरे,
ज्ञायन्ते स्फुटमस्य वक्रमधुरास्तेनैव विक्रान्तयः ॥२६

नान्दी मुखी के प्रति पौर्णमासी बोली थीं गाढ़ अनुराग का विकार दुर्बोध्य है, अतएव सुनो, हे सुन्दरि ! नन्दनन्दन श्रीकृष्ण विषयक प्रेमकी कैसी विचित्र शक्ति है, जिस व्यक्ति के अन्तर में यह प्रेम जागरुक है, इसकी कुटिलता एवं माधुर्य्य रूप पराक्रम उसका ही बोधगम्य होता है। श्रीकृष्ण के अदर्शन हेतु पीड़ा द्वारा अभिनव कालकूट की तीव्रता के गर्व विनष्ट होता है, और श्रीकृष्ण के दर्शन से जो हर्ष क्षरित होता है, उस से अमृत मधुरिमा का गर्व आहत हो जाता है। सुतरां विषामृत मिलित कृष्ण प्रेम के माहात्म्य को और कैसे कहूँ ? ॥२६॥

राय कहे "सहज कह प्रेमेर लक्षण।"
रूप गोसाञि कहे "साहजिक प्रेम धर्म्म।" १२३

तथाहि विदग्धमाधवे (४.५)—

स्तोत्रं यत्र तटस्थतां प्रकटयच्चित्तस्य धत्ते व्यथां,
निन्दापि प्रमदं प्रयच्छति परिहासश्रियं बिभ्रती।
दोषेण क्षयितां गुणेन गुरुतां केनाप्यनातन्वती
प्रेम्नः स्वारसिकस्य कस्यचिदियं विक्रीड़ति प्रक्रिया
॥२७॥

टीका—कस्यचित् स्वारसिकस्य सरलप्रेमिवर्य्य पुरुषस्य प्रेम्नः इयं प्रक्रिया विक्रीड़ति तस्य हृन्मन्दिरे विलसति। किं करोति ?—यत्र स्तोत्रं प्रशंसावचनं तटस्थतां औदासीन्यं प्रकटयत् सत् चित्तस्य व्यथां धत्ते। निन्दापि परिहासश्रियं बिभ्रती सती प्रमदं विपुलहर्षं प्रयच्छति। किं कुर्व्वती सती ?—केनापि दोषेण क्षयितां गुणेन गुरुतां न आतन्वती न विस्तारयती सती ॥२७॥

प्रशंसा उदासीन भावसे भी प्रकाश होने से चित्त में व्यथा होती है, एवं जन निन्दा जिसके समीप में परिहास रूप धारण कर विपुल आनन्द प्रदान करती है, और प्रेमाधार का दोष को सुनकर जिस का प्रेम ह्रास नहीं होता है, गुण श्रवण से भी प्रेम की बुद्धि नहीं होती है, उसका प्रेम ही सहज प्रेम कथित होता है ॥२७॥

तथाहि विदग्धमाधवे (२।२४)—

श्रुत्वा निष्ठुरतां ममेन्दुवदना प्रेमाङ्कुरं भिन्दती,
स्वान्ते शान्तिधुरां विधाय विधुरे प्रायः पराञ्चिष्यति।
किंवा पामरकामकार्म्मुकपरित्रस्ता विमोक्ष्यत्यसून्
हा मौग्ध्यात् फलिनी मनोरथलता मृद्वी मयोन्मूलिता
॥२८॥

टीका—इन्दुवदना चन्द्रानना राधिका मम निष्ठुरतां श्रुत्वा, प्रेमाङ्कुरं भिन्दती सती विधुरे वेदनायुक्ते स्वान्ते स्वहृदये शान्तिधुरां धैर्य्यं विधाय प्रायः पराञ्चिष्यति वहिर्व्वेदना भविष्यति। किंवा सन्देहे, पामरकामकार्म्मुकपरित्रस्ता दुरन्तमदनशरासनात् भीता सती असून् प्राणान् विमोक्ष्यति। हा विलापे, मया मौग्ध्यात् मृद्वीकोमला फलिनी फलोन्मुखा मनोरथलता उन्मूलिता ॥२८॥

सखी गण के मुख से मेरा निष्ठुर आचरण की कथा को सुनकर चन्द्रानना राधिका प्रेमाङ्कुर को छिन्न कर धैर्य्य के साथ चित्त में कितना क्लेश भोगेगी, किंवा दुरन्त मदन वाण से चकिता होकर प्राणत्याग करेगी। हाय ! मूर्खता निबन्धन मैंने फलोन्मुखी कोमला मनोरथ लतिका को मूलतः उन्मूलित किया ॥२८॥

तथाहि विदग्धमाधवे (२।३२)—

यस्योत्सङ्गसुखाशया शिथिलिता गुर्व्वी गुरुभ्यस्त्रपा

प्राणेभ्योऽपि सुहृत्तमाः सखि तथा यूयं परिक्लेशिताः ।
धर्म्मः सोऽपि महान्मया न गणितः साध्वीभिरध्यासितो
धिक् धैर्य्यं तदुपेक्षितापि यदहं जीवामि पापीयसी ।२९

टीका—हे सखि ! यस्य श्रीहरेः उत्सङ्ग-सुखाशया आश्लेषसुखवासनया करणया गुरुभ्यः गुर्व्वी गुरुतरा लज्जा शिथिलिता, तथा प्राणेभ्योऽपि सुहृत्तमाः यूयं परिक्लेशिताः, साध्वीभिः अध्यासितः सेवितः स महान् धर्म्मोऽपि मया न गणितः, तं उपेक्षितापि यत् अहं पापीयसी जीवामि, तत् मम धैर्य्यं धिक् ! ॥२९॥

हे सखि ! श्रीहरि के उत्सङ्ग सुख लाभ की वासना से मैंने गुरुजन वर्ग की लज्जा को शिथिलित किया है, प्राणाधिक सुहृत्तम स्वरूप तुम सब को भी क्लेश दिया है, और सतीकुल सेवित महान् धर्म को भी गण्य नहीं किया है, अधुना श्रीकृष्ण ने जब मुझ को उपक्षा की है, तब यह पाप प्राण धारण के मेरा धैर्य्य को धिक्कार है ॥२९॥

तथाहि विदग्धमाधवे (२।३४)—

गृहान्तः खेलन्त्यो निजसहजबाल्यस्य वलना,
दभद्रंभद्रम्वा किमपि न हि जानीमहि मनाक् ।
वयं नेतुं युक्ताः कथमशरणां कामपि दशां,
कथं वा न्याय्या ते प्रथयितुमुदासीनपदवीम् ।३०॥

टीका—निजसहजबाल्यस्य वलनात् गृहान्तः खेलन्त्यः विहरन्त्यः सत्यः वयं किमपि अभद्रं दुःखं भद्रं वा सुखं वा मनाक ईषदपि न जानीमहि। अशरणां आश्रयविहीनां कामपि दशां नेतुं वयं कथं युक्ताः भवामः। पुनश्च उदासीनपदवीं प्रथयितुं ते वयं कथं वा न्याय्याः ? ३०॥

हे कृष्ण ! निज निज बाल्यभाव निबन्धन गृहाभ्यन्तर में हम सब सुख पूर्वक रह रहै हैं, सुख, दुःख, भला बुरा का ज्ञान हम सब को नहीं था, ऐसी स्थिति में हमारे पक्ष में निराश्रय जैसी दशा कर देना क्या तुम्हारे पक्ष में उचित है ? यद्यपि तुमने वैसा किया ही हो तो, उदासीन हो जाना क्या तुम्हारी विवेचना में युक्ति युक्त है ? ॥३०॥

तथाहि विदग्धमाधवे (२।२९)—
अन्तःक्लेशकलङ्किताः किल वयं यामोऽद्य याम्यां पुरीं
नायं वञ्चनसञ्चयप्रणयिनं हासं तथाप्युज्झति ।
अस्मिन् सम्पुटिते गभीरकपटैराभीरपल्लीविटे,
हा मेधाविनि राधिके तव कथं प्रेमा गरीयानभूत् ।३१

टीका—वयं अद्य अन्तःक्लेशकलङ्किताः अन्तः यन्त्रणया चिह्निताः सत्यः याम्यां पुरीं यमक्षयं यामः किल निश्चितं गच्छामः। तथापि अयं श्रीकृष्णः वञ्चन सञ्चयप्रणयिनं कपट-प्रेमगर्भं हास्यं न उज्झति न परिहरति । हा मेधाविनि राधिके ! अस्मिन्-आभीरपल्लीविटे गोपसुतकामुके तव गरीयान् प्रेमा कथं अभूत् ? आभीरपल्लीविटे किम्भूते ?—गभीर-कपटैः सम्पुटिते आवृतचरिते ॥३१॥

हम सब अन्तर्यातनासे व्याकुल होकर यमपुरी को जाने के निमित्त प्रस्तुत हैं, तथापि यह कृष्ण कपट पूर्ण हास्य को परित्याग नहीं किया। हा मेधाविनि राधिके ! गभीर कपट चरित्र गोपेन्द्र नन्दन में तुम्हारा महाप्रेम का उदय कैसे हुआ ? ।३१

तथाहि विदग्धमाधवे (२।७)—
हित्वा दूरे पथि धवतरोरन्तिकं धर्म्मसेतो-
र्भङ्गोदग्रा गुरुशिखरिणं रंहसा लङ्घयन्ति ।
लेभे कृष्णार्णवनवरसा राधिकावाहिनी त्वां,
वाग्वीचिभिः किमिव विमुखीभावमस्याः करोषि ।३२

टीका—हे कृष्णार्णव ! कृष्णसागर ! नवघन-रसा स्निग्धनवरससमन्विता राधिकावाहिनी राधा नाम तरङ्गिणी त्वां लेभे। किं कृत्वा ?—धवतरोः पतिरूपपादपस्य अन्तिकं समीपं दूरे हित्वा परित्यज्य पथि मार्गे धर्म्मसेतोः कुलधर्म्मरूपसेतोः भङ्गोदग्रा, पुनः गुरुशिखरिणं गुरुजनरूपाचलं रंहसा वेगेन लङ्घयन्ती सती। त्वञ्च वाग्वीचिभिः वाक्यतरङ्गैः किमिव अस्याः विमुखीभावं करोषि ॥३२॥

प्रबल जलके वेग से पर्वत लङ्घन कर सेतु तोड़कर पथ के तरु को उत्पाटित कर वर्षा की नदी जिस प्रकार सागर में आकर मिलती है, राधिका भी उस प्रकार नवीन प्रेम के आकुल आवेग से गुरु

जन को लङ्घन कर, धर्म को तोड़कर स्वामी को विदूरित कर हे कृष्ण ! तुम्हारे साथ मिली है। समुद्र की तरङ्ग जिस प्रकार नदी स्रोत को लौटादेती उसी प्रकार तुम भी क्यों वाग्भङ्गी के द्वारा उस के प्रति विमुखता को प्रकट करते हो ! ।।३२।।

राय कहे "वृन्दावने मुरली निःस्वन ।
कृष्ण राधिकार यैछे करियाछ वर्णन ।।१२४
कह तोमार कवित्व, शुनि हय चमत्कार ।"
क्रमे रूप गोसाञि कहे करि नमस्कार ।।१२५

तथाहि विदग्धमाधवे (१।१५)—

सुगन्धौ माकन्दप्रकरमकरन्दस्य मधुरे,
विनिस्यन्दे वन्दीकृतमधुपवृन्दं मुहुरिदं ।
कृतान्दोलं मन्दोन्नतिभिरनिलैश्चन्दनगिरे-
र्ममानन्दं वृन्दाविपिनमतुलं तुन्दिलयति ।।३३

टीका – इदं दृश्यमानं वृन्दाविपिनं वृन्दारण्यं मम आनन्दं हर्षं तुन्दिलयति वर्द्धयति । किम्भूतं तत् ?–माकन्दप्रकरमकरन्दस्य आम्रसमूहमकरन्दस्य मधुरे सुन्दरे सुगन्धौ विनिस्यन्दे क्षरति सति मुहुः प्रतिदिनं वन्दीकृतमधुपवृन्दं । पुनः किम्भूतम् ?— चन्दनगिरेः मलयाचलस्य अनिलैः मन्दोन्नतिभिः कृतान्दोलं ।।३३।।

जहाँ आम्र मुकुल के मधुर सौरभ से मधुपकुल वन्दीभूत हुये हैं, जहाँ निरन्तर मलयसमीर प्रवाहित होकर आन्दोलित हो रहा है, हे सखे ! वह यह वृन्दावन मुझ को अतुल आनन्दित कर रहा है ।।३३।।

तथाहि विदग्धमाधवे (१।१६)—

वृन्दावनं दिव्यलतापरीतं,
लताश्च पुष्पस्फुरिताग्रभाजः ।
पुष्पाणि च स्फीतमधुव्रतानि
मधुव्रताश्च श्रुतिहारिगीताः ।।३४।।

टीका – वृन्दावनं किम्भूतं ?--दिव्यलतापरीतं दिव्यलतिकाभिः परिवेष्टितं । च पुनः लताः

किम्भुताः ?---पुष्पस्फुरिताग्रभाजः पुष्पैः कुसुमैः स्फुरिताग्रं शोभिताग्रं भजन्ति यास्ताः । अपि पुनः अस्याः पुष्पाणि किम्भूतानि ?---स्फीताः मत्ताः मधुव्रताः येषु तानि । मधुव्रताः किम्भूता ?--श्रुतिहारिगीताः श्रुतिमधुरं गीतं येषां ते ।।३४।।

यह वृन्दावन दिव्य लतिका से परिवेष्टित है, लतिकावली के अग्रदेश में विविध कुसुम प्रस्फुटित है, प्रति कुसुम में मधुप गण विराजित है, मधुव्रत वृन्द भी श्रुति मधुर संगीत निरत हैं ।।३४।।

तथाहि विदग्धमाधवे (१।२९)--

क्वचिद्भृङ्गीगीतं क्वचिदनिलभङ्गीशिशिरता,
क्वचिद्वल्लीलास्यं क्वचिदमलमल्लीपरिमलः ।
क्वचिद्धाराशाली करकफलपालीरसभरो,
हृषीकाणां वृन्दं प्रमोदयति वृन्दावनमिदं ।।३५।।

टीका— इदं वृन्दारण्यं हृषीकाणां इन्द्रियाणां वृन्दं प्रमोदयति आनन्दयति । किम्भूतं ?—क्वचित् भृङ्गीगीतं, क्वचित् अनिलभङ्गीशिशिरता, क्वचित् वल्लीलास्यं, क्वचित् अमलमल्लीपरिमलः मल्लिकापुष्पाणां सौगन्धः, क्वचित् धाराशाली करकफलपालीरसभरः ।।३५।।

कहीं भ्रमरी का गुञ्जन, कहीं पवन की शीतलता, कहीं लता का नृत्य, कहीं मल्लिका का सौरभ, कहीं विदीर्ण पक्व अनार से रसधारा विगलित हो रही है, हे सखे ! देखो, यह वृन्दावन मेरी इन्द्रियों को सुखी कर रहा है ।।९५।।

तथाहि विदग्धमाधवे (२।१)—

परामृष्टाङ्गुष्ठत्रयमसितरत्नैरुभयतो
वहन्ती सङ्कीर्णौ मणिभिररुणैस्तत्परिसरौ ।
तयोर्मध्ये हीरोज्ज्वलविमलजाम्बूनदमयी,
करे कल्याणीयं विहरति हरेः केलिमुरली ।।३६

टीका—हरेः श्रीकृष्णस्य करे इयं कल्याणी मङ्गलमयी केलिमुरली विहरति । उभयतः मस्तके पुच्छे च अङ्गुष्ठत्रयं अङ्गुष्ठत्रयप्रमाणं व्याप्य असितरत्नैः परामृष्टा । तत्परिसरौ अरुणैः सङ्कीर्णौ सन्तौ

वहन्ती तयोर्म्मध्ये हीरोज्ज्वलविमलजाम्बुनदमयी।३६

श्रीकृष्ण के हस्त में यह मङ्गलमयी केलि मुरली विराजित है, इसके मुख एवं पुच्छ में अङ्गुलित्रय परिमित स्थान इन्द्र नीलमणि के द्वारा खचित है, उसके उभय पार्श्वमें उक्त परिमित स्थान अरुण वर्ण मणिके द्वारा परिव्याप्त है, एवं उभय के मध्य भाग हीरक एवं निर्म्मल काञ्चनसे गठित है ३६

तथाहि विदग्धमाधवे (५।१५)—

सद्वंशतस्तव जनिः पुरुषोत्तमस्य,
पाणौ स्थितिर्मुरलिके सरलासि जात्या।
कस्मात्त्वया बत गुरोर्व्विषमा गृहीता,
गोपाङ्गनागणविमोहनमन्त्रदीक्षा ॥३७॥

टीका—हे मुरलिके ! सद्वंशतः तव जनिः आसीत् अभूत्। पुरुषोत्तमस्य कृष्णस्य पाणौ करे तव स्थितिः, जात्या करणया त्वं सरला असि, बत आश्चर्य्ये कस्मात् गुरोः समीपात् त्वया विषमा गोपाङ्गनागणविमोहनमन्त्रदीक्षा गृहीता ॥३७॥

हे मुरलीके ! सद्वंश में तुम्हारा जन्म हुआ है, पुरुषोत्तम हरिके हस्त में तुम्हारी स्थिति है, जाति में तुम सरलता हो, तब क्यों तुमने गोपी विमोहन कारी मन्त्र दीक्षा ली है ? ॥३७॥

तथाहि विदग्धमाधवे (४।८)—

सखि मुरलि विशालछिद्रजालेन पूर्णा,
लघुरतिकठिना त्वं नीरसा ग्रन्थिलासि।
तदपि भजसि शश्वच्चुम्बनानन्दसान्द्रं,
हरिकरपरिरम्भं केन पुण्योदयेन ॥३८॥

टीका—हे सखि मुरलि ! त्वं विशालछिद्रजालेन पूर्णा असि, लघुः, अतिकठिना, नीरसा, ग्रन्थिला च असि, तदपि तथापि केन पुण्योदयेन हरिकरपरिरम्भं तथा चुम्बनानन्दसान्द्रं शश्वत् सर्वदा भजसि ॥३८॥

सखि मुरलि ! तुम तो छिद्र समूह से परिपूर्ण हो, लघु, अत्यन्त कठिन, रसहीन एवं ग्रन्थियुक्त हो, तब किस पुण्य के प्रभाव से तुम को सर्वदा हरि के हस्त का आलिङ्गन, एवं तदीय मुख चुम्बन मिला।३८

तथाहि विदग्धमाधवे (१।२३)—

रुन्धन्नम्बुभृतश्चमत्कृतिपदं कुर्व्वन्मुहुस्तम्बुरं,
ध्यानादन्तरयन् सनन्दनमुखान् विस्मारयन् वेधसम्।
औत्सुक्यावलिभिर्व्वलिं चटुलयन् भोगीन्द्रमाघूर्णयन्
भिन्दन्नण्डकटाहभित्तिमभितो बभ्राम वंशीध्वनिः।३९

टीका—अयं वंशीध्वनिः अण्डकटाहभित्ति ब्रह्माण्डकटाहमूलदेशं अभितः भिन्दन् सन्, बभ्राम, पुनः किं कुर्व्वन् ?—अम्बुभृतः जलदान् रुन्धन्, तम्बुरं गन्धर्व्वं मुहुः पुनः पुनः चमत्कृतिपरं विस्मयान्वितं कुर्व्वन्, पुनश्च सनन्दनमुखान् विधेर्म्मानससुतान् ध्यानात् ब्रह्मचिन्तनात् अन्तरयन्, पुनश्च वेधसं स्रष्टारं विस्मारयन्, पुनः औत्सुक्यावलिभिः हर्षसमूहैः वलिं बलिनामानं राजानं चटुलयन् चञ्चलयन् भोगीन्द्रं भुजगपतिं अनन्तं आघूर्णयन् सन् ॥३९॥

श्रीकृष्ण की वंशीध्वनि--जलद पटली को स्तम्भित कर, पुनः पुनः गन्धर्व वृन्दको विस्मित कर, सनन्दनादि तापसकुल को ध्यानच्युत कर, प्रजापति को विस्मित कर पातालस्थ बलिराज को आनन्दित कर, भुजगाधिप अनन्त के मस्तक को आघूर्णित कर, एवं जगत् ब्रह्माण्ड कटाहके मूलको भेद कर विस्तारित है ॥३९॥

तथाहि विदग्धमाधवे (१।१४)—

अयं नयनदण्डितप्रवरपुण्डरीकप्रभः,
प्रभाति नवजागुड़द्युतिविड़म्बि-पीताम्बरः।
अरण्यजपरिष्क्रियादमितदिव्यवेशादरो,
हरिन्मणिमनोहरद्युतिभिरुज्ज्वलाङ्गो हरिः।४०

टीका—अयं हरिः हरिन्मणिमनोहरद्युतिभिः इन्द्रनीलमणिभ्यः दिव्यप्रभाभिः उज्ज्वलाङ्गः प्रदीप्ताङ्गः सन् प्रभाति विराजते। किम्भूतः ?—नयनदण्डितप्रवरपुण्डरीकप्रभः। पुनः किम्भूतः ?--नवजागुड़द्युतिविड़म्बिपीताम्बरं यस्य सः। पुनः कीदृशः ?—अरण्यजपरिष्क्रियादमितदिव्यवेशादरः काननजाताभिः परिष्क्रियाभिः पत्रकुसुमादिरचित-

वेशालङ्करणादिभिः दमितः विड़म्बितः दिव्यवेशादरो येन सः ॥४०॥

श्रीकृष्ण, मनोहर शोभा सम्पन्न हैं, इनके शरीर नीलमणि से भी समुज्ज्वल है, नेत्र शोभा से विकसित कमल भी कान्ति हीन हो गया है, इनके पीत वसन--नवीन कुसुम की कान्ति को भी लज्जित कर रहा है, एवं कानन जात पत्र पुष्पादि विरचित वेशभूषा दिव्य वेश की शोभा को भी विड़म्बित कर रही है ॥४०॥

तथाहि विदग्धमाधवे (४।२५)—

जङ्घाधस्तटसङ्गिदक्षिणपदं किञ्चिद्विभुग्नत्रिकं,
साचिस्तम्भितकन्धरं सखि तिरःसञ्चारि-नेत्राञ्चलं।
वंशीं कुट्मलिते दधानमधरे लोलाङ्गुलीसङ्गतां,
विभ्रद्भ्रू भ्रमरं वराङ्गि परमानन्दं वपुः स्वीकुरु ।४१

टीका—हे सखि वराङ्गि ! पुनः समीपे परमानन्दं स्वीकुरु अङ्गीकुरु । परमानन्दं किम्भूतं ?- जङ्घाधस्तटसङ्गिदक्षिणपदं वामजङ्घाधस्तटे लग्नं दक्षिणचरणं यस्य तं, पुनः कीदृशं ?-- किञ्चिद्विभुग्न-त्रिकं ईषत्कुटिल-ग्रीव-कटि-चरणं, पुनः कीदृश ?- साचिस्तम्भितकन्धरं वक्रस्तम्भितस्कन्धं । पुनः कीदृशं ?—तिरःसञ्चारिनेत्राञ्चलं । पुनः किम्भूतं ?- कुट्मलिते अधरे लोलाङ्गुलीसङ्गतां वंशीं दधानं, पुनश्च विभ्रद्भ्रू भ्रमरं ॥४१॥

ललितमाधव नाटक के ४।१५ में ललिता श्रीराधा को बोली थी, हे सुतनु ! सम्मुख में परमानन्द विद्यमान हैं, इनको वरण करो, इनके वाम जङ्घा के निम्न भाग में दक्षिण पद के अग्रभाग स्पर्श किया है । त्रिभङ्ग मूर्त्ति इनकी है, ग्रीवा ईषत् वक्र एवं स्थिर है, अपाङ्ग पूर्ण दृष्टि भङ्गी भी है, कुञ्चित अधर में वंशी विन्यस्त है, उस वंशी में चञ्चल अङ्गुली समूह विन्यस्त है,एवं भ्रमर के तुल्य भ्रू चञ्चल है ॥४१॥

तथाहि ललितमाधवे (१।४४)—

कुलवरतनुधर्म्मग्रावबृन्दानि भिन्दन्,
सुमुखि निशितदीर्घापाङ्गटङ्कच्छटाभिः ।
युगपदयमपूर्व्वः कः पुरो विश्वकर्म्मा,
मरकतमणिलक्षैर्गोष्ठकक्षां चिनोति ॥४२॥

टीका—हे सुमुखि सुवदने ! निशितदीर्घापाङ्गटङ्कच्छटाभिः दीर्घापाङ्गमेव खनित्रं तस्य दीप्तिभिः कुलवरतनुधर्म्मग्रावबृन्दानि वरनारीणां एव पाषाणसमूहान् भिन्दन्, पुरः समीपे अयं अपूर्व्वः कः विश्वकर्म्मा युगपत् मरकतमणिलक्षैः निजरूपैः गोष्ठकक्षां चिनोति रचयति ॥४२॥

ललित माधव नाटक के प्रथमाङ्क में श्रीराधा ललिता को बोली थी, हे सुन्दरी ! यह कौन अपूर्व विश्वकर्म्मा दीर्घ तीव्र कटाक्ष शर के द्वारा कुलनारी वृन्द के धर्म को ध्वंस करके उसके साथ लक्षलक्ष मरकत मणि के द्वारा गोष्ठ कक्षा का निर्म्माण कर रहे हैं ? ॥४२॥

तथाहि ललितमाधवे (१।४२)—

नवाम्बुधरमण्डलीमदविड़म्बिदेहद्युति-
र्व्रजेन्द्रकुलचन्द्रमाः स्फुरति कोऽपि नव्यो युवा
सखि स्थिरकुलाङ्गनानिकरनीविबन्धार्गल-
च्छिदाकरणकौतुकी जयति यस्य वंशीध्वनिः ॥४३॥

टीका—हे सखि ! व्रजेन्द्रकुलचन्द्रमाः कोऽपि नव्यः युवा स्फुरति शोभते । सः किम्भूतः ?— नवाम्बुधरमण्डलीमदविड़म्बिदेहद्युतिः नवजलदपटलानां गर्व्वस्य विड़म्बनशीला देहकान्तिर्यस्य सः । यस्य वंशीध्वनिः वंशीरवः जयति । ध्वनि किम्भूतः? स्थिरकुलाङ्गनानिकरनीविबन्धार्गलच्छिदाकरण— कौतुकी, नारीणां नीविबन्धः एव बन्धन तस्य छिन्नकरणे कौतुकं अस्यास्तीति तात्पर्य्यं ॥४३॥

हे सखि ! व्रजेन्द्रकुल चन्द्रमा एक अपूर्व नव युवक शोभित है, इनकी देह कान्ति नवनीरद मण्डली के गर्व को परास्त कर रही है, एवं इनकी वंशी ध्वनि जैसे कौतुक के सहित कुलललना वृन्दके नीवि बन्धन को छेदन कर जय युक्त हो रही है ।४३

तथाहि विदग्धमाधवे (१।२६)--

बलादक्ष्णोर्लक्ष्मीः कवलयति नव्यं कुवलयं
मुखोल्लासः फुल्लं कमलवनमुल्लङ्घयति च ।

दशां कष्टामष्टापदमपि नयत्याङ्गिकरुचि-
र्विचित्रं राधायाः किमपि किल रूपं विलसति ।४४

टीका – अस्याः अक्ष्णोः चक्षुषोः लक्ष्मीः श्रीः बलात् नव्यं नवविकसितं कुवलयं पद्मं कवलयति ग्रसति । अस्या मुखोल्लासः वदनशोभा फुल्लं प्रस्फुठितं कमलवन पद्मकाननं उल्लङ्घयति दूरी-करोति । च पुनः अस्या आङ्गिकरुचिः देहकान्तिः अष्टापदमपि काञ्चनमपि कष्टां क्लेशसमन्वितां दशां नयति, अतएव राधायाः रूपं किल किमपि विचित्र विलसति ।।४४।।

विदग्ध माधव के प्रथमाङ्क में उक्त हैं—श्रीराधिका का रूप किस प्रकार मनोहर रूपसे शोभित है, इनकी नेत्र शोभा नव विकसित पद्म शोभा को ग्रास कर रही है, इनकी उल्लासमयी वदन शोभा कमल कानन की शोभाको भी विड़म्बित कर रही है, एवं इनकी देहकान्ति काञ्चन कान्ति को हीन कर रही है ।।४४।।

तथाहि विदग्धमाधवे (५।१९)—

विधुरेति दिवा विरूपतां शतपत्रं बत शर्व्वरीमुखे ।
इति केन सदा श्रियोज्ज्वलं तुलनामर्हति मत्
प्रियाननं ।।४५।।

टीका - बिधुः शशाङ्कः दिवा विरूपतां शोभा हीनतां एति लभते तथा शतपत्रं शर्व्वरीमुखे निशागमे विरूपतां एति । वत आश्चर्य्ये, इति हेतोः सदा श्रिया उज्ज्वलं मत्प्रियाननं राधिकावदन केन सह तुलनां अर्हति ? ।।४५।।

विदग्ध माधव नाटक के पञ्चमाङ्क में उक्त है दिवस में चन्द्रमा की शोभा नहीं रहती है, शर्वरी के समागम में कमल भी निष्प्रभ होता है हाय ! तब निरन्तर शोभामय मेरी प्रिया का वदन की तुलना किसके साथ दी जा सकती है ? ।। ४५।।

तथाहि विदग्धमाधवे (२।४७)—

प्रमदरसतरङ्गस्मेरगण्डस्थलायाः,
स्मरधनुरनुबन्धिभ्रूलतालास्यभाजः ।
मदकलचलभृङ्गीभ्रान्तिभङ्गीं दधानो,
हृदयमिदमदाङ्क्षीत् पक्ष्मलाक्ष्याः कटाक्षः ।।४६

टीका—पक्ष्मलाक्ष्याः राधायाः कटाक्षः इदं मम हृदयं अदाङ्क्षीत् ददंश । किं कुर्व्वन् ?—मदकलचलभृङ्गीभ्रान्तिभङ्गीं मत्तताहेतुना कलरव-पूरिता चपला च या भृङ्गी तस्या भ्रान्त्या भ्रमस्य भङ्गीं दधानः । राधायाः किम्भूतायाः ?—प्रमदरस-तरङ्गस्मेरगण्डस्थलायाः हर्षरसप्रवाहेण मृदुहास्ययुक्त गण्डस्थलं यस्यास्तस्याः । पुनश्च स्मरधनुरनुबन्धि-भ्रूलतालास्यभाजः स्मरशरासनस्य सम्बन्धीया या भ्रूलता तस्याः नर्त्तनं भजतीति ।।४६।।

जिनके गण्डयुगल हर्षरस तरङ्ग से ईषत् विकसित हैं, कामधनु के सदृश भ्रूलता नृत्य कर रही है, उस प्रकार पक्ष्मयुक्त नेत्र विशिष्टा श्रीमती राधिका कटाक्ष मदोन्मत्ता, मधुर राधा, चपला भ्रमरी के भ्रम उत्पन्न कराकर मदीय हृदयको दंशन किया ।।४६।।

राय कहे "तोमार कवित्व अमृतेर धार ।
द्वितीय नाटकेर कह नान्दी व्यवहार ।।"१२६
रूप कहे "काँहा तुमि सूर्य्योपम भास ।
मुञि कोन् क्षुद्र येन खद्योतप्रकाश ।।१२७
तोमार आगे धार्ष्ट्य एइ मुखव्यादान ।"
एत बलि नान्दीश्लोक करिला व्याख्यान ।१२८

तथाहि ललितमाधवे (१।१)—

सुररिपुसुदृशामुरोजकोका-
न्मुखकमलानि च खेदयन्नखण्डः ।
चिरमखिलसुहृच्चकोरनन्दी,
दिशतु मुकुन्दयशः शशी मुदं वः ।।४७

टीका—मुकुन्दयशः शशी कृष्णयशोरूपचन्द्रमा वः युष्मभ्यं मुदं हर्षं दिशतु । शशी किम्भूतः ?—अखण्डः पूर्णः । किं कुर्व्वन् ?—सुररिपुसुदृशां असुराङ्गनानां उरोजकोकान् स्तनरूपचक्रवाकान् च मुखकमलानि खेदयन् सन् । यशःशशी पुनः किम्भूतः ?-

चिरं व्याप्य अखिलसुहृच्चकोरनन्दी अखिलसुहृत रूप चकोरान् नन्दितुं शीलं यस्य सः ।।४७।।

ललितमाधव नाटक में लिखित है—श्रीहरि के जो यशः शशी असुराङ्गना वृन्द के कुचचक्र वाक एवं वदन कमल का खेद वर्द्धन करता है, एवं भक्त वृन्द रूप चकोर समूह का आनन्द उत्पन्न करता है, वह तुम सब को आनन्द प्रदान करे ।।४७।।

"द्वितीय नान्दी कह देखि" राय पुछिला ।
सङ्कोच पाइया रूप कहिते लागिला ।।१२६

तथाहि ललितमाधवे (१।२)—

निज प्रणयितासुधामुदयमाप्नुवन् यः क्षितौ,
किरत्यलमुरीकृतद्विजकुलाधिराजस्थितिः ।
स लुञ्चिततमस्ततिर्मम शचीसुताख्यः शशी,
वशीकृतजगन्मनाः किमपि शर्म्म विन्यस्यतु । ४८

टीका—यः क्षितौ धरायां उदयं आप्नुवन् सन् निज प्रणयितासुधां निजप्रेमरसपीयूषं अलं निरतिशयं किरति विस्तारयति, यः उरीकृतद्विजकुलाधिराज-स्थितिः अङ्गीकृता द्विजकुलेषु अधिराजः इति पदवी येन सः, पुनः लुञ्चिततमस्ततिः लुञ्चिता ज्ञानकैतव-प्रभृतीनां समूहो येन सः । सः शचीसुताख्यः शशी चन्द्रः मम किमपि अद्भुतं शर्म्म आनन्दं विन्यस्यतु । सः किम्भूतः ?—वशीकृतजगन्मनाः ।४८।

ललित माधव नाटक के १।२ में उक्त है–जो धरातल में उदित होकर भूरि परिमाण में निज प्रेम-सुधा विस्तार किए हैं, जो "द्विजकुलाधिराज" आख्याप्राप्त किये हैं, जो अज्ञान रूप अन्धकार का विनाशक हैं, एवं जगज्जनों का मनोहरण करते हैं: वह शचीसुत नामक शशी मुझ को आनन्द प्रदान करे ।।४८।।

शुनिया प्रभुर यदि अन्तरे उल्लास ।
बाहिरे कहेन किछु करि रोषाभास ।।१३०
"काँहा तोमार कृष्णरस काव्यसुधासिन्धु ।
तार मध्ये मिथ्या केने स्तुति क्षारबिन्दु ।'१३१

राय कहे "रूपेर वाक्य अमृतेर पूर ।
तार मध्ये एक बिन्दु दियाछे कर्पूर ।।"१३२
प्रभु कहे "राय तोमार इहाते ओ उल्लास ।
शुनितेइ लज्जा लोके करे उपहास ।।"१३३
राय कहे "लोकेर सुख इहार श्रवणे ।
अभीष्ट देवेर स्मृति मङ्गलाचरणे ।।"१३४
राय कहे "कोन अङ्गे पात्रेर प्रवेश ।"
तबे रूपगोसाजि कहे ताहार विशेष ।।१३५

तथाहि ललितमाधवे (१।११ —

नटता किरातराजं निहत्य रङ्गस्थले कलानिधिना ।
समये तेन विधेयं गुणवतीताराकरग्रहणं ।।४६।।

टीका—नटता तेन कलानिधिना रङ्गस्थले किरातराजं कंसं निहत्य समये उपयुक्तकाले गुणवतीं-तारकाग्रहणं विधेयम् ।।४६।।

ललितमाधव नाटक के १।११ में लिखित है-कलानिधि कृष्ण नृत्य करते करते किरात राज कंस को बध करके यथा समय में गुणवतीताराका पाणि ग्रहण करेंगे ।।४६।।

उद्घात्यक नाम एइ मुख-बिधि-अङ्ग ।
तोमार आगे इहा कहि धार्ष्टेचर तरङ्ग ।१३६

तथाहि साहित्यदर्पणे दृश्यश्रव्यनिरूपणे (६।३२)—

पदानि त्वगतार्थानि तदर्थगतये नराः ।
योजयन्ति पदैरन्यैः स उद्घात्यक उच्यते ।।५०।।

टीका—तु नराः अगतार्थानि पदानि अन्यैः पदैरर्थैः योजयन्ति कथं ? तदर्थगतये सः व्यापारः उद्घात्यक उच्यते कथ्यते ।।५०।।

साहित्यदर्पण के दृश्य श्रव्य काव्य निरूपण प्रसङ्ग में लिखित है. किसी पदके अर्थ बोध हेतु अपरार्थ के सहित उस अबोधित पद का संयोग होने से उसको विज्ञ व्यक्ति गण उद्घात्यक कहते हैं ।।५०

राय कहे "कह आगे अङ्ग र विशेष ।"

श्रीरूप कहेन किछु संक्षेप उद्देश ॥१३७

तथाहि ललितमाधवे (१।१८)—

ह्रियमवगृह्य गृहेभ्यः कर्षति
राधां वनाय या निपुणा ।
सा जयति निसृष्टार्था
वरवंशजकाकलीदूती ॥५१॥

टीका—या निपुणा स्वकार्य्यपटीयसी वरवंशजकाकली प्रणानवशीध्वनिरिव दूती ह्रियं त्रपां अवगृह्य गृहेभ्यः वनाय वनगमनार्थं राधां कर्षति, सा ध्वनिः जयति सर्व्वोत्कर्षेण वर्त्तते । सा किम्भूता ? निसृष्टार्था संयोजनकारी ॥५१॥

ललित माधव नाटक के (१।१८) में उक्त है—जो स्वकार्य्य निपुणा मुरली काकली दूतीरूपिणी होकर लोकलज्जा हरण पूर्वक राधिका को गृह से कानन में आकर्षण कर लेती है, वह संयोजन करी वंशीध्वनि जय युक्त हो रही है ॥५१॥

तथाहि ललितमाधवे (१।१७)—

हरिमुद्दिशते रजोभरः पुरतः सङ्गमयत्यमुं तमः ।
व्रजवामदृशां न प्रकटा पद्धतिः सर्व्वदृशः श्रुतेरपि ॥५२

टीका—रजोभरः हरिं उद्दिशते कृष्णानुगमनं सूचयति । तमः पुरतः अग्रे अमुं कृष्णं सङ्गमयति । अतएव व्रजवामदृशां व्रजवधूनां पद्धतिः सर्व्वदृशः श्रुतेर्व्वेदादेरपि प्रकटा न स्यात् ॥२५॥

ललित माधव नाटक के १।१७ में गार्गी के प्रति पौर्णमासी का कथन इस प्रकार है—

गोक्षुरोत्थित धूली श्रीकृष्ण के आगमन की सूचना करती है, एवं पुरोवर्त्ती अन्धकार तदीय सङ्गम का संघटन कर रहा है। अतएव गोपाङ्गना वृन्द के हरि दर्शन की पद्धति श्रुति को भी अगम्य है॥५२॥

तथाहि ललितमाधवे (२।११)—

सहचरि निरातङ्कः कोऽयं युवा मुदिरद्युति-
र्व्रजभुवि कुतः प्राप्तो माद्यन्मतङ्गजविभ्रमः ।
अहह चटुलैरुत्सर्पद्भिर्दृगञ्चलतस्करै-
र्म्मम धृतिधनं चेतःकोषात् विलुण्ठयतीह यः ॥५३॥

टीका—हे सहचरि ! यः युवा इह वृन्दारण्ये चटुलैः उत्सर्पद्भिः समन्तात् भ्रमद्भिः दृगञ्चलतस्करैः नेत्रकटाक्षरूपतस्करैः मम चेतः कोषात् धृतिधनं अहह खेदे विलुण्ठयति, अयं युवा कः ? सः किम्भूतः ?—निरातङ्कः, पुनः मुदिरद्युतिः नवीनजलदकान्तिः । व्रजभुवि कुतः प्राप्तः आगतः ? पुनश्च माद्यन्मतङ्गजविभ्रमः ॥५३॥

ललितमाधव नाटक के द्वितीयाङ्क के नवम श्लोक में श्रीकृष्णको देखकर सखीके प्रति श्रीराधिका का कथन इस प्रकार लिखित है—

हे सहचरि ! मदोन्मत्त हस्तिवत विलासशाली निरातङ्क नवीन नीरद कान्ति यह नवीन युवक कौन है ? कहाँ से वृन्दावन में आगमन इस का हुआ है ? हाय ! यह चपल नयनाञ्चल रूप तस्कर के द्वारा मदीय हृदय भाण्डार से धैर्यरूप धन का हरण कर रहा है ॥५३॥

तथाहि ललितमाधवे (२।८)—

विहारसुरदीर्घिका मम मनः करीन्द्रस्य या,
विलोचनचकोरयोः शरदमन्दचन्द्रप्रभा ।
उरोऽम्बरतटस्य चाभरणचारुतारावली,
मयोन्नतमनोरथैरियमलम्भि सा राधिका ॥५४

टीका—या राधिका मम मनःकरीन्द्रस्य मनोरूपहस्तिनः विहारसुरदीर्घिका स्यात्, या विलोकनचकोरयोः शरदमन्दचन्द्रप्रभा स्यात्, या उरोऽम्बरतटस्य आभरणचारुतारावली स्यात्, उन्नत मनोरथैः करणैः मया इदानीं इयं सा राधिका अलम्भि प्राप्तवती ॥५४॥

ललित माधव नाटक के २।८ में राधिका को देखकर श्रीकृष्ण का कथन इस प्रकार है—

जो मदीय चित्तरूप मातङ्ग के विहारार्थ सुरतरङ्गिणी रूपिणी है, जो मदीय नयनचकोर के पक्ष में शारदीय पूर्ण शशि प्रभाके तुल्य है, एवं जो मदीय वक्षोरूप गगन तट का अलङ्करण हेतु चारु-

तारावली सदृशी है, अधुना मैं चिरवाञ्छित एवं अभिलषित सिद्धि के सहित उस राधिका को प्राप्त किया ।।५४।।

एत शुनि राय कहे प्रभुर चरणे ।
"रूपेर कवित्व प्रशंसि सहस्र वदने ।।१३८
कवित्व ना हय एइ अमृतेर धार ।
नाटकलक्षण सब सिद्धान्तेर सार ।।१३९
प्रेमपरिपाटी एइ अद्भुत वर्णन ।
शुनि चित्त कर्णेर हय आनन्दघूर्णन ।।१४०

तथाहि प्राचीनकृत--श्लोक:—

किं काव्येन कवेस्तस्य किं काण्डेन धनुष्मत: ।
परस्य हृदये लग्नं न घूर्णयति यच्छिर: ।।५५।।

टीका – तस्य कवे: काव्येन करणेन किं प्रयोजनं ? धनुष्मत: काण्डेन अस्त्रक्षेपेण किं प्रयोजनं ? यत् काव्यं काण्डञ्च परस्य हृदये लग्नं सत् तस्य शिर: न घूर्णयति ।।५५।।

प्राचीन कृत श्लोक यह है—
यदि अपर के हृदय में विद्ध होकर उसके मस्तक को घूर्णित नहीं करता है तो, कविका काव्य रचन एवं धनुधारी का शर निक्षेप से प्रयोजन ही क्या है ? ।।५५

"तोमा शक्ति विना जीवे नहे एइ वाणी ।
तुमि शक्ति दिया कहाओ हेन अनुमानि ।'१४१
प्रभु कहे "आमा सने इहार मिलन ।
इहार गुणे इहाय आमार तुष्ट हैल मन ।१४२
मधुर प्रसङ्ग इहार काव्य सालङ्कार ।
ऐछे कवित्व विना नहे रसेर प्रचार ।।१४३
सबे कृपा करि इहारे देह एइ बर ।
व्रजलीला प्रेमरस वर्णे निरन्तर ।।१४४
इहार ये ज्येष्ठ भ्रातार नाम सनातन ।
पृथिवीते विज्ञवर नाहि तार सम ।।१४५

तोमार यैछे विषयत्याग तैछे तार रीति ।
दैन्य वैराग्य पाण्डित्य ताहातेइ स्थिति ।।१४६
एइ दुइ भाइ आमि पाठाइल वृन्दावने ।
शक्ति दिया भक्तिशास्त्र करिते प्रवर्त्तने ।'१४७
राय कहे "ईश्वर तुमि ये चाह करिते ।
काष्ठेर पुतली तुमि पार नाचाइते ।।१४८
मोर मुखे ये सब रस करिले प्रचारण ।
सेइ रस देखि एइ इहार लिखने ।।१४९
भक्त कृपाय प्रकाशिते चाह व्रजरस ।
यारे कराओ से करिबे जगत् तोमार वश १५०
तबे महाप्रभु कैल रूपे आलिङ्गन ।
ताँहारे कराइल सबार चरण वन्दन ।।१५१
अद्वैत नित्यानन्दादि सब भक्तगण ।
कृपा करि रूपे सबे कैल आलिङ्गन ।।१५२
प्रभुकृपा रूपे तार रूपेर सद्गुण ।
देखि चमत्कार हैल सबाकार मन ।।१५३
तबे महाप्रभु सब भक्त लञा गेला ।
हरिदास ठाकुर रूपे आलिङ्गन कैला ।।१५४
हरिदास कहे "तोमार भाग्येर नाहि सीमा ।
ये सब वर्णिले इहार के जाने महिमा ।।१५५
श्रीरूप कहेन "आमि किछुइ ना जानि ।
येइ महाप्रभु कहान सेइ कहि वाणी ।।"१५६

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे सामान्य-भक्तिलहर्य्यां द्वितीयश्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्-

हृदि यस्य प्रेरणया प्रवर्त्तितोऽहं वराकरूपोऽपि ।
तस्य हरे: पदकमलं वन्दे चैतन्यदेवस्य ।।५६।।

भक्तिरसामृत सिन्धु के पूर्व विभाग की सामान्य लहरी के द्वितीय श्लोक में उक्त है—मैं क्षुद्र काय होने पर भी अन्त:करण में जिनकी प्रेरणा से

भक्ति रस वर्णन में प्रवृत्त हूँ मैं उन श्रीचैतन्य देवका वन्दन करता हूँ ।।५६।।

एइमत दुइ जन कृष्णकथा रङ्गे ।
सुखे काल गोङाय रूप हरिदास सङ्गे ।।१५७
चारि मास रहि सब प्रभुर भक्तगण ।
गोसाञि विदाय दिल गौड़े करिल गमन ।।१५८
श्रीरूप प्रभुपदे नीलाद्रि रहिला ।
दोलयात्रा प्रभु सङ्गे आनन्दे देखिला ।।१५९
दोलयात्रा शेषे प्रभु रूपे आज्ञा दिल ।
अनेक प्रसाद करि शक्ति सञ्चारिल ।।१६०
'वृन्दावने याह तुमि रहिओ वृन्दावने ।
एकबार इँहा पाठाइह सनातने ।।१६१
व्रजे याइ रसशास्त्र कर निरूपण ।
लुप्त सब तीर्थ तार करिह प्रचारण ।।१६२
कृष्ण सेवा रस भक्ति करिओ प्रचार ।
आमिह देखिते ताँहा याव एकबार ।।"१६३
एत बलि प्रभु ताँरे कैल आलिङ्गन ।
रूप गोसाञि शिरे धरे प्रभुर चरण ।।१६४
प्रभुर भक्तगण-पाशे विदाय लइला ।
पुनरपि गौड़पथे वृन्दावन आइला ।।१६५
एइत कहिल पुनः रूपेर मिलन ।
इहा येइ शुने पाय चैतन्य चरण ।।१६६
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ।।१६७

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे श्रीरूपसङ्गोत्सवो नाम प्रथमः परिच्छेदः ।।१।।





❀ द्वितीय परिच्छेद । ❀

तथाहि ग्रन्थकारस्य—

वन्देऽहं श्रीगुरोः श्रीयुतपदकमलं श्रीगुरून् वैष्णवांश्च श्रीरूपं साग्रजातं सहगणरघुनाथान्वितं त सजीवं । साद्वैतं सावधूतं परिजनसहितं श्रीकृष्णचैतन्यदेवं, श्रीराधाकृष्णपादान् सहगणललिताः श्रीविशाखान्वितांश्च ।।१।।

टीका—अहं श्रीगुरोः श्रीयुतपदकमलं श्रीयुत-चरणपद्मम्, श्रीगुरून् श्रीगुरुपरमगुरु-परापरगुर्व्वादीन्, च पुनः वैष्णवान् वन्दे प्रणमामि । साग्रजातं अग्रजेन सनातनेन सह विद्यमानं, सहगणरघुनाथान्वितं स्वीय-भक्तैः सह रघुनाथेन च सह समन्वित, सजीवं जीव-गोस्वामिना सह मिलितं तं रूपं रूपगोस्वामिनं वन्दे । साद्वैतं सावधूतं परिजनसहितं श्रीकृष्णचैतन्यदेवं वन्दे सहगणललिताः च पुनः श्रीविशाखान्वितान् श्रीराधा-कृष्णपादान् वन्दे ।।१।।

मैं श्रीगुरुदेव के पादपद्म एवं परमगुरु परात्परगुरु प्रभृति वैष्णव वृन्दका वन्दन करता हूँ, अग्रज सनातन, श्रीजीव गोस्वामी एवं रघुनाथ के सहित श्रीरूप गोस्वामी का वन्दन करता हूँ, नित्यानन्द अद्वैत एवं परिजनके सहित श्रीचैतन्य देव को प्रणाम करता हूँ, एवं ललिता विशाखादि के सहित श्रीराधा कृष्ण के चरण कमल का वन्दन करता हूँ ।।१।।

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ।।१
सर्व्वलोक उद्धारिते गौर अवतार ।
निस्तारेर हेतु ताँर त्रिविध प्रकार ।।२
साक्षाद्दर्शन आर योग्य भक्त जीवे ।
आवेश करेन काँहो हय आविर्भावे ।।३

साक्षाद्दर्शने प्राय सब निस्तारिला।
नकुल ब्रह्मचारी देहे आविर्भाव हैला ॥४
प्रद्युम्न नृसिंहानन्द कैल आविर्भाव।
लोक निस्तारिल एइ ईश्वर स्वभाव ॥५
साक्षाद्दर्शने सब जगत् तारिल।
एकबार ये देखिल से कृतार्थ हैल ॥६
गौड़देशेर भक्तगण प्रत्यब्द आसिया।
पुनः गौड़देशे याय प्रभुके मिलिया ॥७
आर नाना देशेर लोक देखि जगन्नाथ।
चैतन्य चरण देखि हइल कृतार्थ ॥८
सप्तद्वीपेर लोक आर नवखण्डवासी।
देव गन्धर्व्व किन्नर मनुष्यवेशे आसि ॥९
प्रभुके देखिया याय वैष्णव हइया।
कृष्ण बलि नाचे सब प्रेमाविष्ट हञा ॥१०
एइमत दर्शने त्रिजगत् निस्तारि।
ये केह आसिते नारे अनेक संसारी ॥११
ता सबा तारिते प्रभु सेइ सब देशे।
योग्य भक्त जीवदेहे करेन आवेशे ॥१२
सेइ जीवे निज शक्ति करेन प्रकाशे।
ताहार दर्शने वैष्णव हय सर्व्व देशे ॥१३
एइमत आवेशे तारिल त्रिभुवन।
गौड़े यैछे आवेशेर दिग् दरशन ॥१४
अम्बुया मुलुके हय नकुल ब्रह्मचारी।
परम वैष्णव तिँह बड़ अधिकारी ॥१५
गौड़देशे लोक निस्तारिते मन हैल।
नकुल हृदये प्रभु आवेश करिल ॥१६
ग्रहग्रस्तप्राय नकुल प्रेमाविष्ट हञा।
हासे कान्दे नाचे गाय उन्मत्त हइया ॥१७
अश्रु कम्प स्तम्भ स्वेद सात्त्विक विकार।
निरन्तर प्रेमे नृत्य सघन हुङ्कार ॥१८
तैछे गौरकान्ति, तैछे सदा प्रेमावेश।
ताँहाके देखिते आइसे सर्व्व गौड़देश ॥१९
यारे देखे तारे कहे कह कृष्णनाम।
ताँहार दर्शने लोक हय प्रेमोद्दाम ॥२०
चैतन्य आवेश हय नकुलेर देहे।
शुनि शिवानन्द आइला करिया सन्देहे ॥२१
परीक्षा करिते ताँर यबे इच्छा हैल।
बाहिरे रहिया तबे विचार करिल ॥२२
"आपने बोलान मोरे इच्छा आमि जानि।
आमार इष्टमन्त्र जानि कहेन आपनि ॥२३
तबे जानि इहाते हय चैतन्यावेशे।"
एत चिन्ति शिवानन्द रहिला दूर देशे ॥२४
असंख्य लोकेर घटा केह आइसे याय।
लोकेर संघट्टे केह दर्शन ना पाय ॥२५
ब्रह्मचारी कहे शिवानन्द आछे दूरे।
जन दुइ चारि याह बोलाह ताँहारे ॥२६
चारिदिके याय लोक शिवानन्द बलि।
"शिवानन्द कोन् ताँये बोलाय ब्रह्मचारी।२७
शुनि शिवानन्द सेन शीघ्र आइला।
नमस्कार करि तार निकटे वसिला ॥२८
ब्रह्मचारी बोले "तुमि ये कैले संशय।
एकमन हञा तार शुनह निश्चय ॥२९
गौर-गोपाल मन्त्र तोमार चारि अक्षर।
अविश्वास छाड़ येइ करेछ अन्तर॥"३०
तबे शिवानन्द मने प्रतीत हइल।
अनेक सम्मान करि बहु भक्ति कैल ॥३१

एइमत महाप्रभुर अचिन्त्य प्रभाव ।
एबे शुन प्रभुर यैछे हय आविर्भाव ॥३२
शचीर मन्दिरे आर नित्यानन्दनर्त्तने ।
श्रीवासकीर्त्तने आर राघवभवने ॥३३
एइ चारि ठाञि प्रभुर सदा आविर्भाव ।
प्रेमाकृष्ट हय प्रभुर सहज स्वभाव ॥३४
नृसिंहानन्देर आगे आविर्भूत हञा ।
भोजन करिल ताँहा शुन मन दिया ॥३५
शिवानन्देर भागिनी श्रीकान्त सेन नाम ।
प्रभुर कृपाते तिँह बड़ भाग्यवान् ॥३६
एक वत्सर तिँह प्रथम एकेश्वर ।
प्रभु देखिबारे आइला उत्कण्ठा-अन्तर ॥३७
महाप्रभु देखि तारे बड़ कृपा कैला ।
मास दुइ महाप्रभुर निकटे रहिला ॥३८
तबे प्रभु तारे आज्ञा कैला गौड़ याइते ।
भक्तगणे निषेधिल इहाके आसिते ॥३९
"एवत्सर ताँहा आमि याइव आपने ।
ताहाइ मिलिब सब अद्वैतादि सने ॥४०
शिवानन्दे कहिओ आमि एइ पौषमासे ।
आचम्बिते अवश्य याइव तार पाशे ॥४१
जगदानन्द हय ताँहा तिँह भिक्षा दिबे ।
सबाके कहिओ एवत्सर केह ना आसिबे ।४२
श्रीकान्त आसिया गौड़े सन्देह करिल ।
शुनि भक्तगणमने आनन्द हइल ॥४३
चलितेछिला आचार्य्य रहिला स्थिर हञा ।
शिवानन्द जगदानन्द रहे प्रत्याशा करिया ।४४
पौषमास आइल दुँहे सामग्री करिया ।
सन्ध्या पर्य्यन्त रहे अपेक्षा करिया ॥४५

एइमत मास गेल गोसाञि ना आइला ।
जगदानन्द शिवानन्द दुःखित हइला ॥४६
आचम्बिते नृसिंहानन्द ताँहाइ आइल ।
दुँहे तारे मिलि तबे स्थाने वसाइला ॥४७
दोँहार देखि दुःख कहे नृसिंहानन्द ।
"तोमा दुँहाकारे केन देखि निरानन्द ।'४८
तबे शिवानन्द तारे सकल कहिला ।
'आसिते आज्ञा दिया प्रभु केने ना आइला ।४९
शुनि ब्रह्मचारी कहे "करह सन्तोषे ।
आमि त आनिब ताँरे तृतीय दिवसे ॥"५०
ताँहार प्रभाव प्रेम जाने दुइ जने ।
"आनिबे प्रभुरे" एइ निश्चय कैल मने ॥५१
प्रद्युम्न ब्रह्मचारी ताँर निज नाम ।
नृसिंहानन्द नाम तार कैल गौरधाम ॥५२
दुइ दिन ध्यान करि शिवानन्देरे कहिल ।
"पाणिहाटि ग्रामे आमि प्रभुरे आनिल ॥५३
कालि मध्याह्ने तिँहो आसिबेन तोमार घरे।
पाकसामग्री आन आमि भिक्षा दिब ताँरे ५४
तबे तारे एथा आमि आनिव सत्वर ।
निश्चय कहिल किछु सन्देह ना कर ॥५५
ये चाहिये ताहा कर हइया तत्पर ।
अति त्वराय करिब पाक शुन अतःपर ॥५६
पाकसामग्री आन आमि येइ चाइ ।"
ये मागिल शिवानन्द आनि दिल ताइ ॥५७
प्रातःकाल हैते पाक करिल अपार ।
नाना सूप व्यञ्जन पिठा क्षीर उपहार ॥५८
जगन्नाथेर भिन्न भोग कथक बाड़िल ।
चैतन्य प्रभुर लागि आर भोग कैल ॥५९

इष्टदेव नृसिंह लागि पृथक् बाड़िल ।
तिन जने समर्पिये बाहिरे ध्यान कैल ॥६०
देखि शीघ्र आसि बसिला चैतन्य गोसाञि ।
तिन भोग खाइल किछु अवशिष्ट नाञि ॥६१
आनन्दे विह्वल प्रद्युम्न पड़े अश्रुधार ।
"हाहा किबा कर बलि करये फुत्कार ॥६२
जगन्नाथे तोमाय ऐक्य, खाओ ताँर भोग ।
नृसिंहेर भोग केने कर उपभोग ॥६३
नृसिंहेर जानि हैल आजि उपवास ।
ठाकुर उपवासी रहे जीये कैछे दास ॥"६४
भोजन देखिया तार हृदये उल्लास ।
नृसिंहे लक्ष्य करि करे बाहिरे दुःखाभाष ।६५
स्वयं भगवान् कृष्ण चैतन्य गोसाञि ।
जगन्नाथ नृसिंह सह किछु भेद नाइ ॥६६
इहा जानिबारे प्रद्युम्नेर गूढ़ हैल मन ।
ताहा देखाइल प्रभु करिया भोजन ॥६७
भोजन करिया प्रभु गेला पाणिहाटि ।
सन्तोष पाइल देखि व्यञ्जन परिपाटी ॥६८
शिवानन्द कहे "केने करह फुत्कार ।"
ब्रह्मचारि कहे "तोमार प्रभुर व्यवहार ॥६९
तिन जनार भोग तिँहो एकला खाइल ।
जगन्नाथ नृसिंहेर उपवास हैल ॥"७०
शुनि शिवानन्दचित्ते हइल संशय ।
"किबा प्रेमावेशे कहे, किबा सत्य हय ।"७१
तबे शिवानन्दे किछु कहे ब्रह्मचारि ।
"सामग्री आन नृसिंहेर पुनः पाक करि ।७२
तबे शिवानन्द भोगसामग्री आनिल ।
पाक करि नृसिंहेर भोग लागाइल ॥७३
वर्षान्तरे शिवानन्द लञा भक्तगण ।
नीलाचले देखे याञा प्रभुर चरण ॥७४
एक दिन सभाते प्रभु बात चालाइला ।
नृसिंहानन्देर गुण कहिते लागिला ॥७५
"गत वर्षे पौषे मोरे कराइल भोजन ।
कभु नाहि खाइ ऐछे मिष्टान्न व्यञ्जन ।"७६
शुनि भक्तगण मने आश्चर्य्य मानिल ।
शिवानन्देर मने तबे प्रत्यय जन्मिल ॥७७
एइमत शचीगृहे सतत भोजन ।
श्रीवासेर गृहे करेन कीर्त्तन दर्शन ॥७८
नित्यानन्देर नृत्य देखे आसि बारे बारे ।
निरन्तर आविर्भाव राघवेर घरे ॥७९
प्रेमवश गौर प्रभु याँहा प्रेमोत्तम ।
प्रेमवश हइ ताँहा देन दरशन ॥८०
शिवानन्देर प्रेमसीमा के कहिते पारे ।
यार प्रेमे वश प्रभु आइसे बारे बारे ॥८१
एइत कहिल गौरेर त्रिविध आविर्भाव ।
इहा येइ शुने जाने चैतन्यप्रभाव ॥८२
पुरुषोत्तमे प्रभुपाशे भगवान् आचार्य्य ।
परम वैष्णव तिँह सुपण्डित आर्य्य ॥८३
सख्यभावाक्रान्त चित्त गोप अवतार ।
स्वरूप गोसाञि सह सख्य व्यवहार ॥८४
एकान्तभावे आश्रियाछे चैतन्य-चरण ।
मध्ये मध्ये प्रभुर तिँह करे निमन्त्रण ॥८५
घरे भात करि करे विविध व्यञ्जन ।
एकले प्रभुके लञा करान भोजन ॥८६
तार पिता विषयी बड़ शतानन्द खान ।
विषयविमुख आचार्य्य वैराग्य प्रधान ॥८७

गोपाल भट्टाचार्य्य नाम ताँर छोट भाइ ।
काशीते वेदान्त पड़ि गेल ताँर ठाञि ॥८८
आचार्य्य ताहारे प्रभु-पदे मिलाइला ।
अन्तर्यामी प्रभु चित्ते सुख ना पाइला ॥८९
आचार्य्यसम्बन्धे वाह्ये करे प्रीतिभाष ।
कृष्णभक्ति विना प्रभुर ना हय उल्लास ॥९०
स्वरूपेरे आचार्य्य कहे आर दिने ।
"वेदान्त पड़ि गोपाल आसियाछे एखाने ।९१
सबे मिलि आइस शुनि भाष्य इहार स्थाने ।"
प्रेम क्रोध करि स्वरूप बोलये वचने ॥९२
"वुद्धिभ्रष्ट हैल तोमार गोपालेर सङ्गे ।
मायावाद शुनिबारे उपजिल रङ्गे ॥९३
वैष्णव हइया येवा शारीरिक भाष्य शुने ।
सेव्य सेवक छाड़ि आपनाके ईश्वर माने ॥९४
महाभागवत कृष्ण प्राणधन यार ।
मायावाद श्रवणे चित्त अवश्य फिरे तार ।'९५
आचार्य्य कहे "आमा सबार कृष्णनिष्ठ चित्ते ।
आमा सबार मन भाष्य नारे फिराइते ॥'९६
स्वरूप कहे "तथापि मायावाद श्रवणे ।
चिद्ब्रह्म माया मिथ्या एइ मात्र शुने ॥९७
जीव ज्ञान कल्पित ईश्वरे सकल अज्ञान ।
याहार श्रवणे भक्तेर फाटे मन प्राण ॥"९८
लज्जा भय पाञा आचार्य्य मौन हैला ।
आर दिन गोपालेरे देशे पाठाइला ॥९९
एक दिन आचार्य्य प्रभुके कैल निमन्त्रण ।
घरे भात करि करे विविध व्यञ्जन ॥१००
छोट हरिदास नाम प्रभुर कीर्त्तनीया ।
ताहारे कहेन डाकि आपने आनिया ।१०१
"मोर नामे शिखिमाहितीर भगिनीस्थाने गिया
उत्तम चालु एक मान आनह मागिया ।१०२
माहितिर भगिनीर नाम माधवी देवी ।
वृद्धा तपस्विनी आर परम वैष्णवी ॥१०३
प्रभु लेखा करे यारे राधिकार गण ।
जगतेर मध्ये पात्र साड़े तिन जन ॥१०४
स्वरूप गोसाञि आर राय रामानन्द ।
शिखिमाहिति सिन तार भगिनी अर्द्धजन १०५
तार ठाञि तण्डुल मागि आनिल हरिदास ।
तण्डुल देखि आचार्य्येर अधिक उल्लास ।१०६
स्नेहे रान्धिल प्रभुर प्रिय ये व्यञ्जन ।
देउल प्रसाद आदा चाकि लेबु सलवण ।१०७
मध्याह्ने आसिया प्रभु भोजने बसिला ।
शाल्यन्न देखि प्रभु आचार्य्ये पुछिला ॥१०८
'उत्तम अन्न एत तण्डुल काँहाते पाइला ।'
आचार्य्य कहे 'माधवीपाश मागिया आनिला ॥१०९
प्रभु कहे 'कोन् याइ मागिया आनिल ।'
छोट हरिदासेर नाम आचार्य्य कहिल ॥११०
अन्न प्रशंसिया प्रभु भोजने वसिला ।
निज गृहे आसि गोविन्देरे आज्ञा दिला ।१११
"आजि हैते एइ मोर आज्ञा पालिबा ।
छोट हरिदासे इह आसिते ना दिबा ।'११२
द्वार माना हरिदास दुःखी हैला मने ।
कि लागिया द्वार माना केह नाहि जाने ११३
तिन दिन हरिदास करे उपवास ।
स्वरूपादि सबे पुछिल प्रभुर पाश ॥११४
"कोन् अपराध प्रभु कैल हरिदास ।
कि लागिया द्वार माना करे उपवास ॥११५

प्रभु कहे "वैरागी करे प्रकृति सम्भाषण ।'
देखिते ना पारि आमि ताहार वदन ॥११६
दुर्व्वार इन्द्रिय करे विषय ग्रहण ।
दारुप्रकृति हरे मुनिजनेर मन ॥"११७

तथाहि श्रीमद्भागवते (९।१९।१७)—

मात्रा स्वस्रा दुहित्रा वा नाविविक्तासनो भवेत् ।
बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वांसमपि कर्षति ॥२॥

टीका—मात्रा, स्वस्रा, दुहित्रा सुतया वा सह अविविक्तासनः अपृथग्भूतासनः न भवेत् । यतः इन्द्रियग्रामः बलवान् सन् विद्वांसमपि कर्षति ॥२॥

श्रीमद् भागवत के ९।१९।१७ में उक्त है—जननी, भगिनी अथवा कन्या के सहित एकान्त में अवस्थान न करे, कारण बलवान् इन्द्रिय समूह विद्वान् व्यक्ति को आकर्षण करते हैं ॥२॥

"क्षुद्र जीव सब मर्कट-वैराग्य करिया ।
इन्द्रिय चराञा बुले प्रकृति सम्भाषिया ॥'११८
एत बलि महाप्रभु अभ्यन्तरे गेला ।
गोसाञि आवेश देखि सबे मौन हैला ॥११९
आर दिने सबे मिलि प्रभुर चरणे ।
हरिदास लागि किछु कैल निबेदन ॥१२०
"अल्प अपराध प्रभु करह प्रसाद ।
एबे शिक्षा हइल, ना करिब अपराध ॥'१२१
प्रभु कहे "कभु नहे वश मोर मन ।
प्रकृति सम्भाषी वैरागी ना करे दर्शन ॥१२२
निज कार्य्ये याह सबे छाड़ वृथा कथा ।
कह यदि पुनः आमा ना देखिबे हेथा ॥१२३
एत शुनि सबे निज कर्णे हस्त दिया ।
निज निज कार्य्ये सबे गेला त उठिया ॥१२४
महाप्रभु मध्याह्न करिते चलि गेला ।
बुझन ना याय एइ महाप्रभुर लीला ॥१२५

आर दिन सबे परमानन्दपुरीस्थाने ।
"प्रभुके प्रसन्न कर" कैल निवेदने ॥१२६
तबे पुरी एका प्रभुस्थाने आसिला ।
नमस्करि प्रभु तारे सम्भ्रमे वसाइला ॥१२७
पुछिल "कि आज्ञा, केने हैल आगमन ।"
हरिदासे प्रसाद लागि कैल निवेदन ॥१२८
शुनिया कहेन प्रभु "शुनह गोसाञि ।
सब वैष्णव लञा तुमि रह एइ ठाञि ॥१२९
मोरे आज्ञा देओ मुञि याओ आलालनाथ ।
एकले रहिब ताँहा गोविन्द मात्र साथ ॥'१३०
एत बलि प्रभु यदि गोविन्दे बोलाइला ।
पुरीके नमस्कार करि उठिया चलिला ॥१३१
आस्तेव्यस्ते पुरी तबे प्रभुस्थाने गेला ।
अनुनय करि प्रभुरे घरे फिराइला ॥१३२
"तोमार ये इच्छा कर स्वतन्त्र ईश्वर ।
केवा कि बलिते पारे तोमार उपर ॥१३३
लोकहित लागि तोमार सब व्यवहार ।
आमि सब ना जानि गम्भीर हृदय तोमार १३४
एत बलि पुरी गोसाञि गेला निजस्थाने ।
हरिदास स्थाने गेला सब भक्तगणे ॥१३५
स्वरूप गोसाञि कहे "शुन हरिदास ।
सबे तोमार हित वाञ्छि करह विश्वास ।१३६
प्रभु हठ पड़ियाछे स्वतन्त्र ईश्वर ।
कभु कृपा करिवेन दयालु अन्तर ॥१३७
तुमि हठ कैले आर हठ से बाड़िबे ।
स्नान भोजन कैले आपने क्रोध याबे ॥१३८
एत बलि तारे स्नान भोजन कराइया ।
आपन भवने आइला तारे आश्वासिया ।१३९

प्रभु यदि यान जगन्नाथ दरशने ।
दूरे रहि हरिदास करेन दर्शने ॥१४०
महाप्रभु कृपासिन्धु के पारे बुझिते ।
निज भक्ते दण्ड करे धर्म्म बुझाइते ॥१४१
देखि त्रास उपजिल सब भक्तगणे ।
स्वप्नेओ छाड़िल सबे स्त्री सम्भाषणे ॥१४२
एइमते हरिदासेर एक वत्सर गेल ।
तबु महाप्रभु मने प्रसाद नहिल ॥१४३
रात्रिशेषे प्रभुरे दण्डवत् हञा ।
प्रयागेरे गेल कारे किछु ना बलिया ॥१४४
प्रभुपादप्राप्ति लागि सङ्कल्प करिल ।
त्रिवेणी प्रवेश करि प्राण छाड़िल ॥१४५
सेइक्षणे प्रभुस्थाने दिव्य देहे आइला ।
प्रभुकृपा पाञा अन्तर्धाने रहिला ॥१४६
गन्धर्व्वदेहे गान करेन अन्तर्धाने ।
रात्रे प्रभुरे शुनाय अन्य नाहि जाने ॥१४७
एक दिन महाप्रभु पुछिला भक्तगणे ।
"हरिदास काँहा तारे आनह एखाने ॥"१४८
सबे कहे "हरिदास वर्षपूर्ण दिने ।
रात्रे उठि काँहा गेला केह नाहि जाने ।"१४९
शुनि महाप्रभु ईषत् हासिया रहिला ।
सब भक्तगणे मने विस्मय जन्मिला ॥१५०
एक दिन जगदानन्द स्वरूप गोविन्द ।
काशीश्वर शङ्कर दामोदर मुकुन्द ॥१५१
समुद्र स्नाने गेला सबे शुने कत दूरे ।
हरिदास गायेन येन तार कण्ठस्वरे ॥१५२
मनुष्य ना देखे मधुर गीतमात्र शुने ।
गोविन्दादि सबे मिलि कैल अनुमाने ॥१५३
"विषादि खाइया हरिदास आत्मघात कैल ।
सेइ पापे जानि ब्रह्मराक्षस हइल ॥१५४
आकार ना देखि मात्र शुनि तार गान ।'
स्वरूप कहेन 'एइ मिथ्या अनुमान ॥१५५
आजन्म कृष्णकीर्त्तन प्रभुर सेवन ।
प्रभुर कृपापात्र आर क्षेत्रेर मरण ॥१५६
दुर्गति ना हय तार सद्गति ये हय ।
प्रभुर भङ्गी एइ पाछे जानिव निश्चय ।"१५७
प्रयाग हैते एक वैष्णव नवद्वीप आइला ।
हरिदासेर वार्त्ता तिँहो सबारे कहिला ।१५८
यैछे संकल्प यैछे त्रिवेणी प्रवेशिला ।
शुनि श्रीवासादि मने विस्मय हइला ॥१५९
वर्षान्तिरे शिवानन्द सब भक्त लञा ।
प्रभुरे मिलिला आसि आनन्दित हञा ॥१६०
"हरिदास काँहा" यदि श्रीवास पुछिल ।
'स्वकर्म्मफलभाक् पुमान्' प्रभु उत्तर दिल ।१६१
तबे श्रीवास तार वृत्तान्त कहिल ।
यैछे संकल्प यैछे त्रिवेणी प्रवेशिल ॥१६२
शुनि प्रभु हासि कहे सुप्रसन्नचित्त ।
"प्रकृति दर्शन कैले एइ प्रायश्चित्त ॥"१६३
स्वरूप दि मिलि तबे विचार करिला ।
त्रिवेणीप्रभावे हरि प्रभुपाशे आइला ॥१६४
एइमत लीला करे शचीर नन्दन ।
याहा शुनि भक्तगणेर जुड़ाय कर्ण मन ॥१६५
आपन कारुण्ये लोकेर वैराग्य शिक्षण ।
भक्तेर गाढ़ अनुराग प्रकटीकरण ॥१६६
तीर्थेर महिमा निज भक्ते आत्मसात ।
एक लीलाय करे प्रभु कार्य्य पाँच सात ।१६७

मधुर चैतन्यलीला समुद्र गम्भीर ।
लोके नाहि बुझे, बुझे येइ भक्त धीर ॥१६८
विश्वास करिया शुन चैतन्यचरित ।
तर्क ना करिह, तर्के हबे विपरीत ॥१६९
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१७०

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे श्रीहरिदास शिक्षा नाम द्वितीयः परिच्छेदः ॥२ ।



तृतीय परिच्छेद ।

तथाहि ग्रन्थकारस्य—

वन्देऽहं श्रीगुरोः श्रीयुतपदकमलं श्रीगुरून् वैष्णवांश्च, श्रीरूपं साग्रजातं सहगणरघुनाथान्वितं तं सजीवं । साद्वैतं सावधूतं परिजनसहितं श्रीकृष्णचैतन्यदेवं, श्रीराधाकृष्णपादान् सहगणललिता-श्रीविशाखा-न्वितांश्च ॥१॥

मैं श्रीगुरुदेव के श्रीमण्डित चरण कमल की वन्दना करता हूँ । श्रीमान् गुरुवृन्द के, अग्रजके सहित श्रीरूप के, रघुनाथ एवं श्रीजीव के सहित उनके अनुचर वृन्द के अवधूत 'नित्यानन्द' के सहित अद्वैत के परिजन के सहित श्रीकृष्णचैतन्य देव के एवं ललिता, विशाखा एवं परिजन के राधा एवं कृष्ण के पद वन्दन करता हूँ ॥१॥

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
पुरुषोत्तमे एक उड़िया ब्राह्मणकुमार ।
पितृशून्य महासुन्दर मृदु व्यवहार ॥२
प्रभु-स्थाने नित्य आइसे करे नमस्कार ।
प्रभु सने वात कहे प्रभु प्राण तार ॥३
प्रभुते ताहार प्रीति प्रभु दया करे ।
दामोदर तार प्रीति सहिते ना पारे ॥४
बार बार निषेध करे ब्राह्मणकुमारे ।
प्रभु ना देखिले सेइ रहिते ना पारे ॥५
नित्य आइसे प्रभु तारे करे महाप्रीति ।
याँहा प्रीति ताँहा आइसे बालकेर रीति ॥६
ताहा देखि दामोदर दुःख पाय मने ।
बलिते ना पारे बालक निषेध ना माने ॥७
आर दिन से बालक प्रभुस्थाने आइला ।
गोसाञि तारे प्रीति करि वार्त्ता पुछिला ॥८
कतक्षणे से बालक उठि यबे गेला ।
सहिते ना पारे दामोदर कहिते लागिला ॥९
"अन्योपदेशे पण्डित काँहा गोसाञिर ठाञि ।
गोसाञि गोसाञि एबे जानिब गोसाञि ॥१०
एबे गोसाञिर गुण सब लोके गाइबे ।
गोसाञिर प्रतिष्ठा सब पुरुषोत्तमे हैबे ॥११
शुनि प्रभु कहे "काँहा कह दामोदर ।"
दामोदर कहे "तुमि स्वतन्त्र ईश्वर ॥१२
स्वच्छन्दे आचार कर के पारे बलिते ।
मुखर जगतेर मुख पार आच्छादिते ॥१३
पण्डित हइया मने केन विचार ना कर ।
राण्डी ब्राह्मणीर बालके प्रीति केने कर ॥१४
यद्यपि ब्राह्मणी सेइ तपस्विनी सती ।
तथापि ताहार दोष सुन्दरी युवती ॥१५
तुमिह परम युवा परम सुन्दर ।
लोकेर काणाकाणि बाते देह अवसर ॥१६

एत बलि दामोदर मौन हइला ।
अन्तरे सन्तोष प्रभु हासि विचारिला ॥१७
"इहाके कहिये शुद्ध प्रेमेर तरङ्ग ।
दामोदर सम मोर नाहि अन्तरङ्ग ॥"१८
एतेक विचारि प्रभु मध्याह्ने चलिला ।
आर दिने दामोदरे निभृते बोलाइया ॥१९
प्रभु कहे "दामोदर चलह नदीया ।
मातार समीपे तुमि रह ताहा याञा ॥२०
तोमा बिना ताहार रक्षक नाहि आन ।
आमाकेहो याते तुमि कैले सावधान ॥२१
तोमा सम निरपेक्ष नाहि मोर गणे ।
निरपेक्ष ना हैले धर्म्म ना याय रक्षणे ॥२२
आमा हैते ये ना हय से तोमा हैते हय ।
आमाके करिले दण्ड आन केवा हय ॥२३
मातार गृहे रह याह मातार चरणे ।
तब आगे नाहि कार स्वच्छन्दाचरणे ॥२४
मध्ये मध्ये कभु आसिओ आमार दर्शने ।
शीघ्र करि पुन ताहा करिओ गमने ॥२५
माताके कहिओ मोर कोटि नमस्कार ।
मोर सुख कथा कहि सुख दिह तारे ॥२६
"निरन्तर निज कथा तोमारे शुनाइते ।
एइ लागि प्रभु मोरे पाठाल इँहाते ॥"२७
एत कहि मातार मने सन्तोष जन्माइओ ।
आर गुह्य कथा ताँर स्मरण कराइओ ॥२८
"बार बार आसि आमि तोमार भवने ।
मिष्टान्न व्यञ्जन सब करिये भोजने ॥२९
भोजन करिये आमि तुमि ताहा जान ।
वाह्य विरहे ताहा स्फूर्त्ति करि मान ॥३०
एइ माघ संक्रान्तिये तुमि बन्धन करिला ।
नाना व्यञ्जन क्षीर पिठा पायस रान्धिला ।३१
कृष्णे भोग लागाइया यबे कैले ध्यान ।
आमा स्फूर्त्ति हैल अश्रु भरिल नयान ॥३२
आस्ते व्यस्ते आमि गिया सकल खाइल ।
आमि खाइ देखि तोमार सुख उपजिल ॥३३
क्षणेके अश्रु मुछिया शून्य देख पात ।
स्वप्न देखिले येन निमाइ खाइल भात ॥३४
वाह्य विरह दशाय पुनः भ्रान्ति हैल ।
भोग ना लागाइल एइ सब ज्ञान हैल ॥३५
पाकपात्र देखेन सब अन्न आछे भरि ।
पुनः भोग लागाइल स्थान संस्कार करि ॥३६
एइमत बार बार करिये भोजन ।
तब शुद्ध प्रेमे मोर करे आकर्षण ॥३७
तोमार आज्ञाते आमि आछि नीलाचले ।
निकटे लयाय आमा तोमार प्रेमे बले ॥३८
एइ मत बार बार कराइह स्मरण ।
एतेक नाम लञा ताँर वन्दिह चरण ॥"३९
एतेक कहि जगन्नाथेर प्रसाद आनाइला ।
माताके वैष्णवे दिते पृथक् करिदिला ॥४०
तबे दामोदर चलि नदीया आइला ।
मातारे मिलिया ताँर चरणे रहिला ॥४१
आचार्य्यादि वैष्णवेरे महाप्रसाद दिला ।
प्रभु यैछे आज्ञाकैला ताहा आचरिला ॥४२
दामोदर आगे स्वातन्त्र्य ना हय काहार ।
तार भये सबे करे सङ्कोच व्यवहार ॥४३
प्रभुगणे यार देखे अल्प मर्य्यादा लङ्घन ।
वाक्यदण्ड करि करे मर्य्यादा स्थापन ॥४४

एइ ये कहिल दामोदरेर वाक्यदण्ड ।
याहार श्रवणे भागे अज्ञान पाषण्ड ॥४५
चैतन्येर लीला गम्भीर कोटि समुद्र हैते ।
कि लागि करे केह ना पारे बुझिते ॥४६
अतएव गूढ़ अर्थ किछुइ ना जानि ।
वाह्य अर्थ करिबारे करि टानाटानि ॥४७
एक दिन प्रभु हरिदासेरे मिलिला ।
ताहा लञा गोष्ठी करि ताँहारे पुछिला ॥४८
"हरिदास कलिकाले यवन अपार ।
गो ब्राह्मण हिंसा करे महादुराचार ॥४९
इहा सबार कोन मते इहबे निस्तार ।
ताहार हेतु ना देखिये ए दुःख अपार ॥" ५०
हरिदास कहे "प्रभु, चिन्ता ना करिओ ।
यवनेर संसार देखि दुःख ना भाविओ ॥५१
यवन सकलेर मुक्ति हबे अनायासे ।
रा राम हा राम बलि कहे नामाभासे ॥५२
महाप्रेमे भक्त कहे हा राम हा राम ।
यवनेर भाग्य देख लय सेइ नाम ॥५३
यद्यपि सङ्केते तार हय नामाभास ।
तथापि नामेर तेज ना हय विनाश ॥" ५४

तथाहि नृसिंहपुराणम्—

दंष्ट्रिदंष्ट्राहतो म्लेच्छो हा रामेति पुनः पुनः ।
उक्त्वापि मुक्तिमाप्नोति किं पुनः श्रद्धया गृणन् ।२

टीका – दंष्ट्रिदंष्ट्राहतः वराहदशनाहतः म्लेच्छः पुनः पुनः मुहुर्म्मुहुः रा राम इति उक्तापि मुक्तिं आप्नोति लभते । श्रद्धया नाम गृणन् जनः मोक्षं लभते, तत्र किं वक्तव्यम् ॥२॥

पुनः पुनः "हा राम" यह वाक्य उच्चारण पूर्वक वराह दशनाहत म्लेच्छ भी जब मोक्ष लाभ करता है, तब श्रद्धा के सहित राम नाम ग्रहण करने जो मोक्ष लाभ होगा, इसमें अधिक कहना क्या है ? ।२

"अजामिल पुत्र बोलाय बलि नारायण ।
विष्णुदूत आसि छाड़ाय ताहार बन्धन ॥५५
'राम' दुइ अक्षर इहा नहे व्यवहित ।
प्रेमवाची 'हा' शब्द ताहाते भूषित ॥५६
नामेर अक्षर सबेर एइ त स्वभाव ।
व्यवहित हैले ना छाड़े आपन प्रभाव ॥" ५७

तथाहि हरिभक्तिविलासस्यैकादशविलासे उननवताधिक-द्विशताङ्कधृतपद्मपुराणीयनामापराध-निरसनस्तोत्रम्—

नामैकं यस्य वाचि स्मरणपथगतं श्रोत्रमूलं गतं वा,
शुद्धं वा शुद्धवर्णं व्यवहितरहितं तारयत्येव सत्यं ।
तच्चेद्देहद्रविणजनतालोभपाषण्डमध्ये,
निक्षिप्तं स्यान्न फलजनकं शीघ्रमेवात्र विप्र ॥३॥

टीका—एकं नाम यस्य वाचि प्रवर्त्तते, स्मरण पथगतं वा किंवा श्रोत्रमूलं गतं, शुद्धं वा किंवा अशुद्ध-वर्णं स्यात्, व्यवहितरहितं वा भवेत्, तन्नाम सत्यं लोकान् तारयत्येव । हे विप्र ! तत् नाम चेत यदि देहद्रविणजनतालोभपाषण्डमध्ये निक्षिप्तं स्यात, तदा अत्र शीघ्रं फलजनकृत् न एव ॥३॥

प्रभु के एक ही नाम यदि वाक्य से उच्चारित होता है, अथवा स्मृति पटल में समुदित होता है, किंवा श्रुति विवर में प्रविष्ट होता है, अथवा वह शुद्ध, अशुद्ध वा अन्य सङ्केत विशिष्ट होता है, तो निःसन्देह वह परित्राण करता है । किन्तु हे द्विज ! वह नाम यदि धन, जन, देह, पुत्र, कलत्र, पाषण्ड प्रभृति में लुब्ध व्यक्ति के हृदय में निक्षिप्त होता है, तो कदाच आशु फल दायक नहीं होता है ।।३।।

"नामाभास हैते हय सर्व्वपापक्षय ।
नामाभास हैते हय संसारेर क्षय ॥" ५८

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ दक्षिणविभागे विभाव-लहर्य्यां द्विपञ्चाशत्-श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

तं निर्व्व्याजं भज गुणनिधे पावनं पावनानां,
श्रद्धारज्यन्मतिरतितरामुत्तमश्लोकमौलिं ।
प्रोद्यन्नन्तःकरणकुहरे हन्त यन्नामभानो-
राभासोऽपि क्षपयति महापातकध्वान्तराशिं ॥४॥

टीका – हे गुणनिधे ! देवर्षे ! श्रद्धारज्यन्मतिः सन् तं ईश्वरं निर्व्याजं निष्कपटं यथा स्यात्तथा भज। तं ईश्वरं किम्भूतं ?— पावनानां पवित्राणामपि पावनं पवित्रं। पुनः किम्भूतं ?— उत्तमश्लोकमौलिं उत्तम श्लोकानां अमरादीनां शिरोभूषण । हन्त विस्मये, यन्नामभानोः यस्य नामभास्करस्य आभासोऽपि अन्तःकरणकुहरे हृद्विवरे प्रोद्यन् सन् महापातक-ध्वान्तराशिं पातकान्धकारपुञ्जं अतितरां आशु क्षपयति ॥४॥

हे गुणनिधे ! देवर्षे ! जिनके नाम रूप सूर्य्य का आभास मात्र भी प्रकाशित होने पर आशु पुञ्जीकृत महापातकान्धकर विदूरित होता है, तुम निष्कपट श्रद्धा से पवित्र का भी पवित्र कारक अमर वृन्द के शिरोरत्न रूप भगवान् का भजन करो ॥४॥

तथाहि श्रीमद् भागवते (६।२।४९)---
म्रियमाणो हरेर्नाम गृणन् पुत्रोपचारितं ।
अजामिलोऽगाद्धाम किमुत श्रद्धया गृणन् ॥५॥

टीका—अजामिलः म्रियमाणोऽपि पुत्रोपचारितं हरेर्नाम गृणन् सन् धाम वैकुण्ठपदं अगात्। उत भोः श्रद्धया गृणन् सन् किं वक्तव्यं ? ॥५॥

श्रीमद् भागवत के ६।२।४९ में उक्त है—अजामिल नामक व्यक्ति पुत्रके नामोच्चारण से ईश्वर का नाम उच्चारण कर वैकुण्ठ गमन किया, सुतरां श्रद्धा के सहित नामोच्चारण करने से जो वैकुण्ठ लाभ होगा इस में आश्चर्य्य क्या है ? ॥५॥

नामाभासे मुक्ति हय सर्व्व शास्त्रे देखि ।
श्रीभागवते ताँहा अजामिल साक्षी ॥''५९
शुनिया प्रभुर सुख बाड़ये अन्तरे ।
पुनरपि भङ्गि करि पुछये ताहारे ॥६०
"पृथिवीते बहु जीव स्थावर जङ्गम ।"
इहा सबार कि प्रकारे हइबे मोचन ॥६१
हरिदास कहे "प्रभु से कृपा तोमार ।
स्थावर जङ्गम आगे करियाछ निस्तार ॥६२
तुमि ये करियाछ उच्चैःस्वरे संकीर्त्तन ।
स्थावर जङ्गमेर सेइ हय त श्रवण ॥६३
शुनिया जङ्गमेर हय संस्कारक्षय ।
स्थावरेर शब्द लागि प्रतिध्वनि हय ॥६४
प्रतिध्वनि नहे सेइ करये कीर्त्तन ।
तोमार कृपाय एइ अकथ्य कथन ॥६५
सकल जगते हय उच्च संकीर्त्तन ।
शुनिया प्रेमावेशे नाचे स्थावर जङ्गम ॥६६
यैछे कैले झारिखण्डे वृन्दावन याइते ।
बलभद्र भट्टाचार्य्य कहियाछेन आमाते ॥६७
वासुदेव जीव लागि कैल निवेदन ।
तबे अङ्गीकार कैल जीवेर मोचन ॥६८
जगत् निस्तारिते एइ तोमार अवतार ।
भक्तगण आगे ताते कैले अङ्गीकार ॥६९
उच्च संकीर्त्तन ताते करिया प्रचार ।
स्थिरचर जीवेर खण्डाइले संसार ॥७०
प्रभु कहे सब जीव मुक्ति यबे पाबे ।
एइ त ब्रह्माण्ड तबे सब शून्य हबे ॥७१
हरिदास बले "तोमार यावत् मर्त्त्ये स्थिति ।
तावत् स्थावर जङ्गम सर्व्व जीवजाति ॥७२
सब मुक्त करि तुमि वैकुण्ठ पाठाइबे ।
सूक्ष्म जीवे पुनः कर्म्मे उद्‌बुद्ध करिबे ॥७३
सेइ जीव हबे इँहा स्थावर जङ्गम ।
ताहाते भरिबे ब्रह्माण्ड येन पूर्व्वसम ॥७४

रघुनाथ येन सब अयोध्या लइया ।
वैकुण्ठ गेला अन्य जीव अयोध्या भरिया ॥७५

अवतरि तुमि ऐछे पातियाछ हाट ।
केह ना बुझिते पारे तोमार गूढ़ नाट ॥७६

पूर्व्वे येन व्रजे कृष्ण करि अवतार ।
सकल ब्रह्माण्डजीवेर खण्डाइल संसार ॥७७

तथाहि श्रीमद्भगावते (१०।२९।१६)—

न चैवं विस्मयः कार्य्यो भवता भगवत्यजे ।
योगेश्वरेश्वरे कृष्णे यत एतद्विमुच्यते ॥६॥

टीका—योगेश्वरेश्वरे भगवति अजे जन्मशून्ये कृष्णे भवता एवं विस्मयः न कार्य्यः, यतः कृष्णात् एतत् चराचरं विमुच्यते ॥६॥

श्रीमद् भागवत के १०।२९।१६ में शुकदेव महाराज परीक्षित् को सम्बोधन कर कहे थे—राजन् ! योगेश्वरेश्वर जन्मरहित भगवान् श्रीकृष्ण के विषय में विस्मय प्रकाश न करो, उनसे जब स्थावरादि भी मुक्त होते हैं, तब कामभाव से भजन कर गोपिका की मुक्ति होगी, इस में सन्देह क्या है ?।६

तथाहि विष्णुपुराणे (४।१५।१०—)

भगवानिह कीर्त्तितः संस्मृतश्च द्वेषानुबन्धे-नाप्यखिलसुरासुरादिदुर्ल्लभ फलं प्रयच्छति, किमुत सम्यगभक्तिमताम् ॥७॥

टीका—इह जगति भगवान् द्वेषानुबन्धेन कीर्त्तितः संस्मृतश्च अखिलसुरासुरादिदुर्ल्लभं फलं प्रयच्छति, उत भोः सम्यगभक्तिमतां सम्बन्धे किं कर्त्तव्यम् ॥७॥

विष्णु पुराण के ४.१५।१० में उक्त है, शत्रु भाव से भी ध्यान कीर्त्तन करने पर जब भगवान् सुरासुरादि दुर्लभ फल प्रदान करते हैं, तब भक्तिमान् जन गण जो उक्त फललाभ करेंगे, इस में आश्चर्य क्या है ? ॥७॥

"तैछे तुमि नवद्वीपे करि अवतार ।
सकल ब्रह्माण्डे जीवेर करिले निस्तार ॥७८
ये कहे चैतन्य महिमा मोर गोचर हय ।
से जानुक मोर पुनः एइत निश्चय ॥७९
तोमार ये लीला महा अमृतेर सिन्धु ।
मोर मनोगोचर नहे तार एक बिन्दु ॥"८०
एत शुनि प्रभुमने चमत्कार हैल ।
"मोर गूढ़ लीला हरिदास केमने जानिल ।"८१
मनेर सन्तोषे तारे कैल आलिङ्गन ।
वाह्य प्रकाशिते ताहा करिल वर्ज्जन ॥८२
ईश्वरस्वभाव ऐश्वर्य्य चाहे आच्छादिते ।
भक्तठाञि लुकाइते नारे हये त विदिते ॥८३

तथाहि आलमन्दारसंज्ञे श्रीसम्प्रदायकृत्-यामुनाचार्य्यस्तोत्रे (१८)—

उल्लंघितत्रिविधसीमसमातिशायि-
संभावनं तव परिव्रढ़िमस्वभावं ।
मायाबलेन भवतापि निगुह्यमानं,
पश्यन्ति केचिदनिशं त्वदनन्यभावाः ॥८॥

तुम्हारा स्वरूप असीम है, अर्थात देशकाल पात्रातीत है, तुम्हारे समान कोई नहीं है, एवं तुमसे श्रेष्ठ भी नहीं है, तुम आपन स्वरूप माया के द्वारा गोपन करते हो; किन्तु भक्तगण अविरत ध्यान प्रभाव से तुम्हारे इस स्वरूप को सर्वदा जानते हैं, अर्थात् अनुभव करते हैं ॥८॥

तबे महाप्रभु निज भक्तपाशे याञा ।
हरिदासेर गुण कहे शतमुख हञा ॥८४
भक्तेर गुण कहिते प्रभुर बाड़ये उल्लास ।
भक्तगण-श्रेष्ठ ताते श्रीहरिदास ॥८५
हरिदासेर गुणगान असंख्य अपार ।
केह कोन अंशे वर्णे नाहि पाय पार ॥८६

चैतन्यमङ्गले श्रीवृन्दावन दास ।
हरिदासेर गुण किछु करियाछे प्रकाश ॥८७
सब कहा ना याय हरिदासेर अनन्त चरित्र ।
केह किछु कहे करिते आपन पवित्र ॥८८
वृन्दावन दास याहा ना कैल वर्णन ।
हरिदासेर गुण किछु शुन भक्तगण ॥८९
हरिदास यबे निज गृह त्याग कैला ।
बेणापोलेर वनमध्ये कत दिन रहिला ॥९०
निर्ज्जन वने कुटीर करि तुलसी सेवन ।
रात्रि दिने तिन लक्ष नामसंकीर्त्तन ॥९१
ब्राह्मणेर घरे करे भिक्षा निर्व्वाहण ।
प्रभावे सकल लोक करये पूजन ॥९२
सेइ देशाध्यक्ष नाम रामचन्द्र खान ।
वैष्णव-द्वेषी सेइ पाषण्डप्रधान ॥९३
हरिदासे लोके पूजे सहिते ना पारे ।
तार अपमान करिते नाना उपाय करे ॥९४
कोन प्रकारे हरिदासेर छिद्र ना पाय ।
वेश्यागणे आनि करे छिद्रेर उपाय ॥९५
वेश्यागणे कहे "एइ वैरागी हरिदास ।
तुमि सब कर इहार वैराग्यधर्म्मनाश ॥"९६
वेश्यागणमध्ये एक सुन्दरी युवती ।
से कहे "तिन दिने हरिब तार मति ॥९७
खान कहे 'मोर पाइक याउक तोमार सने ।
तोमार सहित एकत्र तारे धरि येन आने ।'९८
वेश्या कहे "मोर सङ्ग हउक एकबार ।
द्वितीयबारे पाइक लइब तोमार ॥"९९
रात्रिकाले सेइ वेश्या सुवेश धरिया ।
हरिदासेर वासा गेल उल्लसित हैया ॥१००
तुलसी नमस्करि हरिदासेर द्वारे याञा ।
गोसाञिरे नमस्करि रहिला दाण्डाइया ॥१०१
अङ्ग उघाड़िया देखाय वसिया दुयारे ।
कहिते लागिला किछु सुमधुर स्वरे ॥१०२
"ठाकुर तुमि परम सुन्दर प्रथम यौवन ।
तोमा देखि कोन नारी धरिते नारे मन ॥१०३
तोमार सङ्गम लागि लुब्ध मोर मन ।
तोमा ना पाइले प्राण ना याय धारण ।'१०४
हरिदास कहे "तोमाय करिब अङ्गीकार ।
संख्यानामसंकीर्त्तन यावत समाप्त आमार ।१०५
तावत तुमि वसि शुन मम संकीर्त्तन ।
नाम समाप्त हैले करिब ये तोमार मन ॥१०६
एत शुनि सेइ वेश्या वसिया रहिला ।
कीर्त्तन करे हरिदास प्रातःकाल हैला ॥१०७
प्रातःकाल देखि वेश्या उठिया चलिला ।
समाचार रामचन्द्र खानेरे कहिला ॥१०८
"आजि आमार सङ्ग करिबे कहिला वचने ।
अवश्य ताहार सङ्गे हइबे सङ्गमे ॥"१०९
आर दिन रात्रि हैल वेश्या आइल ।
हरिदास बहु तारे आश्वास करिल ॥११०
"कालि दुःख पाइले अपराध ना लइबे आमार
अवश्य करिब आमि तोमार अङ्गीकार ॥१११
तावत इहा बलि शुन नामसङ्कीर्त्तन ।
नाम पूर्ण हैले पूर्ण हबे तोमार मन ॥"११२
तुलसीके तबे वेश्या नमस्कार करि ।
द्वारे वसि नाम शुने बले हरि हरि ॥११३
रात्रि शेष हैल वेश्या उषिपिषि करे ।
तार रीति देखि हरिदास कहेन ताहारे ॥११४

"कोटि नाम ग्रहण यज्ञ करि एक मासे ।
एइ दीक्षा करियाछि हैल आसि शेषे ॥११५
आजि समाप्त हबे हेन ज्ञान छिल ।
समस्त रात्रि निल नाम समाप्त ना हैल ।११६
कालि समाप्त हबे तबे हबे व्रतभङ्ग ।
स्वच्छन्दे तोमार सङ्गे हइबेक सङ्ग ॥११७
वेश्या गिया समाचार खानेरे कहिला ।
आर दिन सन्ध्याकाले ठाकुरठाजि आइला ।११८
तुलसीके ठाकुरके नमस्कार करि ।
द्वारे बसि नाम शुने बले हरि हरि ॥११९
"नाम पूर्ण हबे आजि बले हरिदास ।
तबे पूर्ण करिब तोमार अभिलाष ॥"१२०
कीर्त्तन करिते ऐछे रात्रि शेष हैल ।
ठाकुरेर सने वेश्यार मन फिरि गेल ॥१२१
दण्डवत् हञा पड़े ठाकुर-चरणे ।
रामचन्द्र खानेर कथा कैल निवेदने ॥१२२
वेश्या हञा मुञि पाप करिछों अपार ।
कृपा करि मो अधमेरे करह निस्तार ॥"१२३
ठाकुर कहे 'खानेर कथा सब आमि जानि ।
अज्ञ मूर्ख सेइ तारे दुःख नाहि मानि ॥१२४
सेइ दिन याइताम ए स्थान छाड़िया ।
तिन दिन रहिलाम तोमार लागिया ॥"१२५
वेश्या कहे "कृपा करि कर उपदेश ।
कि मोर कर्त्तव्य याते याय भवक्लेश ॥"१२६
ठाकुर कहे "घरेर द्रव्य ब्राह्मणे कर दान ।
एइ घरे आसि तुमि करह विश्राम ॥१२७
निरन्तर नाम कर तुलसी सेवन ।
अचिराते पाबे तबे कृष्णेर चरण ॥"१२८
एत बलि तारे नाम उपदेश करि ।
उठिया चलिल ठाकुर बलि हरि हरि ॥१२९
तबे सेइ वेश्या गुरुर आज्ञा लइल ।
गृहवृत्ति येबा छिल ब्राह्मणेरे दिल ॥१३०
माथा मुड़ि एक वस्त्रे रहिला सेइ घरे ।
रात्रि दिने तिन लक्ष नाम ग्रहण करे ॥१३१
तुलसी सेवन करे चर्व्वण उपवास ।
इन्द्रियदमन हैल प्रेमेर प्रकाश ॥१३२
प्रसिद्ध वैष्णवी हैल परम महान्ती ।
बड़ बड़ वैष्णव तार दर्शनेते यान्ति ॥१३३
वेश्यार चरित्र देखि लोके चमत्कार ।
हरिदासेर महिमा कहे करि नमस्कार ।१३४
रामचन्द्र खान अपराध वीज रुइल ।
सेइ वीज वृक्ष हञा आगेते फलिल ॥१३५
महदपराधेर हैल फल अद्भुत कथन ।
प्रस्ताव पाइया कहि शुन भक्तगण ॥१३६
सहजेइ अवैष्णव रामचन्द्र खान ।
हरिदासेर अपराधे हैल असुरसमान ॥१३७
वैष्णवधर्म्म निन्दा करे वैष्णव-अपमान ।
बहु दिनेर अपराधे पाइल परिणाम ॥१३८
नित्यानन्द गोसाञि गौड़े यबे आइला ।
प्रेम प्रचारिते तबे भ्रमिते लागिला ॥१३९
प्रेम प्रचारण आर पाषण्डदलन ।
दुइ कार्य्ये अवधूत करेन भ्रमण ॥१४०
सर्व्वज्ञ नित्यानन्द आइला तार घरे ।
आसिया वसिला दुर्गामण्डपभितरे ॥१४१
अनेक लोक जन सङ्गे अङ्गन भरिल ।
भितर हैते रामचन्द्र सेवक पाठाइल ॥१४२

सेवक बले "गोसाञि मोरे पाठाइला खान।
गृहस्थेर घरे तोमाय दिव वासस्थान ॥१४३
गोयालार गोशाला हय अत्यन्त विस्तार।
इहा सङ्कीर्ण स्थल, तोमार मनुष्य अपार।'१४४
भितरे आछिला क्रोधे शुनि बाहिर हैला।
अट्ट अट्ट हासि गोसाञि कहिते लागिला।१४५
"सत्य कहे एइ घर मोर योग्य नय।
म्लेच्छ गोबध करे तार योग्य हय॥"१४६
एत बलि क्रोधे गोसाञि उठिया चलिला।
तारे दण्ड दिते से ग्रामे ना रहिला॥१४७
इँहा रामचन्द्र खान सेवके आज्ञा दिला।
गोसाञि याँहा वसिला तार माटि खोदाइला
॥१४८
गोमयजले लेपिया घर मन्दिर प्राङ्गण।
तबु रामचन्द्रेर मन ना हैल प्रसन्न॥१४९
दस्युवृत्ति रामचन्द्र राजाय ना देय कर।
क्रुद्ध हञा म्लेच्छ उजीर आइल तार घर १५०
आसि सेइ दुर्गामण्डपे वासा कैल।
अवध्य बध करि घरे मांस रान्धाइल॥१५१
स्त्री पुत्र सहित रामचन्द्रेरे बान्धिया।
तार घर ग्राम लुटे तिन दिन रहिया॥१५२
सेइ घरे तिन दिन अबध्य रन्धन।
आर दिन सबा लञा करिल गमन॥१५३
जाति धन जन खानेर सकल लइल।
बहु दिन पर्य्यन्त ग्राम उजाड़ रहिल॥१५४
महान्तेर अपमान ये देश ग्रामे हय।
एक जनार दोषे सब देश उजाड़य॥१५५

हरिदास ठाकुर चलि आइला चान्दपुरे।
आसिया रहिला बलराम आचार्य्येर घरे॥१५६
हिरण्य गोवर्द्धन मुलुकेर मजुमदार।
ताँर पुरोहित बलराम नाम तार॥१५७
हरिदासेर कृपापात्र ताते भक्ति माने।
यत्न करि ठाकुरेरे राखिल सेइ ग्रामे॥१५८
निर्ज्जन पर्णशालाय करेन कीर्त्तन।
बलराम आचार्य्य गृहे भिक्षा निर्व्वाहण॥१५९
रघुनाथ दास बालक करे अध्ययन।
हरिदास ठाकुरे याइ करेन दर्शन॥१६०
हरिदास कृपा करे ताहार उपरे।
सेइ कृपा कारण हैल चैतन्य पाइबारे॥१६१
ताहा यैछे हैल हरिदासेर कथन।
व्याख्यान अद्भुत कथा शुन भक्त गण।१६२
एक दिन बलराम बिनति करिया।
मजुमदारेर सभाय आइला ठाकुर लइया १६३
ठाकुर देखि दुइ भाइ कैल अभ्युत्थान।
पाय पड़ि आसन दिल करिया सम्मान।१६४
अनेक पण्डित सभाय ब्राह्मण सज्जन।
दुइ भाइ महापण्डित हिरण्य गोवर्द्धन॥१६५
हरिदासेर गुण सबे कहे पञ्चमुखे।
शुनियात दुइ भाइ पाइल बड़ सुखे॥१६६
तिन लक्ष नाम ठाकुर करेन कीर्त्तन।
नामेर महिमा उठाइल पण्डितगण॥१६७
केह बले "नाम हैते हय पापक्षय।"
केह बले "नाम हैते जीवेर मोक्ष हय॥"१६८
हरिदास कहे "नामेर ए दुइ फल नय।
नामेर फले कृष्णपदे प्रेम उपजय॥१६९

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२।४०)—

एवं व्रतः स्वप्रियनामकीर्त्या,
जातानुरागो द्रुतचित्त उच्चैः।
हसत्यथो रोदिति रौति गाय-
त्युन्मादवन्नृत्यति लोकबाह्यः।।९।।

भा० ११।२।४० में उक्त है—भक्त निजप्रियतम श्रीहरि का नाम कीर्त्तन करते करते प्रेमोत्पत्ति हेतु द्रवित हृदय होकर उन्मादवत् कभी उच्चैःस्वर से हास्य, रोदन, आक्रोशन, गान, एवं करते रहते हैं। इस में लोकों के द्वारा समर्थन प्राप्त करने की भावना नहीं रहती है ।।९।।

आनुषङ्गिक फल नामेर मुक्ति पापनाश।
ताहार दृष्टान्त यैछे सूर्य्येर प्रकाश ।।१७०

तथाहि पद्यावल्यां पञ्चदशाङ्कधृत-श्रीरूप-गोस्वामिकृत श्लोकः--

अंहः संहरदखिलं सकृदुदयादेव सकललोकस्य।
तरणिरिव तिमिरजलधेर्जयति जगन्मङ्गलं हरेर्नाम ।।१०।।

टीका – तिमिरजलधेः पातकरूपाज्ञान-समुद्रस्य तरणिरिव जगन्मङ्गलहरेः नाम जयति। किं कुर्व्वत्? – सकृत् उदयादेव सकललोकस्य अखिलं समस्तं अंहः पातकं संहरत् ।।१०।।

पद्यावली में लिखित है– अज्ञान रूप अन्धकार समुद्र की तरणि के समान एकवार मात्र प्रकाशित होने से एक लोको के समस्त पाप विनष्ट होते हैं, इस प्रकार जगन्मङ्गल श्रीहरिनाम जययुक्त हो ।।१०।।

"एइ श्लोकेर अर्थ कर पण्डितेर गण।"
सबे कहे "तुमि कह अर्थविवरण ।।"१७१
हरिदास कहे "यैछे सूर्य्येर उदय।
उदय ना हैते आरम्भे तमेर हय क्षय ।।१७२
चौर प्रेत राक्षसादिर हय भयनाश।
उदय हैले धर्म्म कर्म्म आदि परकाश ।।१७३
ऐछे नामोदयारम्भे पाप आदि क्षय।
उदय कैले कृष्णपदे हय प्रेमोदय ।।१७४
मुक्ति तुच्छ फल हय नामाभास हैते।
येइ मुक्ति ना लय से कृष्ण चाहे दिते ।।"१७५

तथाहि श्रीमद्भागवते (६।२।४९)—

म्रियमाणो हरेर्नाम गृणन् पुत्रोपचारितं।
अजामिलोऽप्यगाद्धाम किमुत श्रद्धया गृणन् ।।११।।

श्रीमद् भागवत के ६।२।४९ में लिखित है– पुत्रके नामोच्चारण से भगवन्नाम ग्रहण होने पर मरणापन्न अजामिल को भगवद्धाम लाभ हुआ था। यदि श्रद्धा पूर्वक कोई भगवन्नाम साक्षात् रूप से ग्रहण करता है, तो उस को भगवद्धाम लाभ होगा, इस में सन्देह क्या है? ।।११।।

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।२९।१३)—

सालोक्यसार्ष्टि सामीप्यसारूप्यैकत्वमप्युत।
दीयमानं न गृह्णन्ति विना मत्सेवनं जनाः ।।१२।।

श्रीमद् भागवत के ३।२९।१३ में उक्त है, मेरी परिचर्य्या को छोड़कर भक्तगण सालोक्य, समान ऐश्वर्य्य, समान रूप, सामीप्य एवं एकत्व प्रदान करने पर भी ग्रहण नहीं करते हैं ।।१२।।

गोपाल चक्रवर्त्ती नाम एक जन।
मजुमदारेर घरे सेइ आरिन्दा ब्राह्मण ।।१७६
गौड़े रहे पातसाहा आगे आरिन्दागिरि करे।
बार लक्ष मुद्रा सेइ पातसाहारे भरे ।।१७७
परम सुन्दर पण्डित नूतन यौवन।
नामाभासे मुक्ति शुनि ना हैल सहन ।।१७८
क्रुद्ध हञा बले सेइ सरोष वचन।
"भाबुकेर सिद्धान्त शुन पण्डितेर गण ।।१७९
कोटि जन्मे ब्रह्म ज्ञाने सेइ मुक्ति नय।
एइ कहे नामाभासे सेइ मुक्ति हय ।।"१८०

हरिदास कहे "काहे करह संशय ।
शास्त्रे कहे नामाभासमात्रे मुक्ति हय ॥१८१
भक्तिसुख आगे मुक्ति अति तुच्छ हय ।
अतएव भक्तगण मुक्ति नाहि लय ॥१८२

तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे सामान्यभक्ति लहर्य्यां अष्टात्रिंशाङ्कधृतो हरिभक्तिसुधोदयस्य चतुर्द्दशाध्यायीय षट्त्रिंश-श्लोकः—

त्वत्साक्षात्करणाह्लादविशुद्धाब्धिस्थितस्य मे ।
सुखानि गोष्पदायन्ते ब्राह्मण्यपि जगद्गुरो ॥१३॥

प्रह्लाद नृसिंह देव को कहे थे—हे जगद्गुरो मैं भवदीय साक्षात कार रूप विशुद्ध आनन्द सागर में मग्न हूँ, मेरे पक्ष में अन्य सुख की कथा तो दूर है, ब्रह्मानन्द भी गोष्पदवत् अनुमित होता रहता है।१३।

विप्र कहे "नामाभासे यदि मुक्ति हय ।
तबे तोमार नाक काटि करह निश्चय ॥"१८३
हरिदास कहे "यदि नामाभासे नय ।
तबे आमार नाम काटि एइ सुनिश्चय ॥१८४
शुनि सभासद उठे कहि हाहाकार ।
मजुमदार सेइ विप्रे करिल धिक्कार ॥१८५
बलाइ पुरोहित तारे करिल भर्त्सन ।
घटपटिया मूर्ख तुमि भक्ति काँहा जान ।१८६
हरिदास ठाकुरे तुजि कैलि अपमान ।
सर्व्वनाश हबे तोर ना हबे कल्याण ॥१८७
शुनि हरिदास तबे उठिया चलिला ।
मजुमदार सेइ विप्रे त्याग करिला ॥१८८
सभा सहित हरिदासेर पड़िला चरणे ।
हरिदास हासि कहे मधुर वचने ॥१८९
तोमा सबार दोष नाहि एइ अज्ञ ब्राह्मण ।
तार दोष नाहि तार तर्कनिष्ठ मन ॥१९०
तर्केर गोचर नहे नामेर महत्त्व ।
कोथा हैते जानिबे सेइ एइ सब तत्त्व ॥१९१
याह घर कृष्ण करुन् कुशल सबार ।
आमार सम्बन्धे दुःख ना हउक कार ॥१९२
तबे से हिरण्य दास घर आइल ।
सेइ ब्राह्मणे निज द्वार माना कैल ॥१९३
तिन दिन रहि सेइ विप्रेर कुष्ठ हैल ।
अति उच्च नासा तार गलिया पड़िल ॥१९४
चम्पककलिसम हस्तपदाङ्गुली ।
कोँकड़ हइल कुष्ठे सब गेल गलि ॥१९५
देखिया सकल लोक हैल चमत्कार ।
हरिदासे प्रशंसि सबे करे नमस्कार ॥१९६
यद्यपि हरिदास विप्रेर दोष ना लइल ।
तथापि ईश्वर तारे फल भुञ्जाइल ॥१९७
भक्तेर स्वभाव अज्ञदोष क्षमा करे ।
कृष्णस्वभाव भक्तनिन्दा सहिते ना पारे ॥१९८
विप्रदुःख शुनि हरिदास मने दुःखी हैला ।
बलाइ पुरोहिते कहि शान्तिपुर आइला ।१९९
आचार्य्य मिलिया कैल दण्डवत प्रणाम ।
अद्वैत आलिङ्गन करि करिल सम्मान ॥२००
गङ्गातीरे गोफा करि निर्ज्जने तारे दिल ।
भागवत गीतार भक्ति अर्थ शुनाइल ॥२०१
आचार्य्येर घरे नित्य भिक्षा निर्व्वाहण ।
दुइ जना मिलि कृष्णकथा आस्वादन ॥२०२
हरिदास कहे "गोसाञि करि निवेदन ।
मोरे प्रत्यह अन्न देह कोन् प्रयोजन ॥२०३
महा महा विप्र हेथा कुलीन समाज ।
आमार आदर कर ना वासह लाज ॥२०४

अलौकिक आचार तोमार कहिते पाइ भय।
सेइ कृपा करिबे याते तोमार रक्षा हय ।२०५
आचार्य्य कहेन "तुमि ना करिह भय।
सेइ आचरिव येइ शास्त्रमत हय ॥२०६
तुमि खाइले हय कोटि ब्राह्मण-भोजन।"
एत बलि श्राद्धपात्र कराइल भोजन ॥२०७
जगत-निस्तार लागि करेन चिन्तन।
अवैष्णव जगत् केमने हइबे मोचन ॥२०८
कृष्ण अवतारिते अद्वैत प्रतिज्ञा करिल।
जल तुलसी दिया पूजा करिते लागिल ॥२०९
हरिदास करे गोफाय नाम संकीर्त्तन।
कृष्ण अवतीर्ण हइबेन एइ ताँर मन ॥२१०
दुइ जनेर भक्त्ये चैतन्य कैल अवतार।
नाम प्रेम प्रचारि कैल जगत उद्धार ॥२११
आर एक अलौकिक चरित्र ताँहार।
याहार श्रवणे लोके हय चमत्कार ॥२१२
तर्क ना करिओ, तर्क-अगोचर ताँर रीति।
विश्वास करिया शुन करिया प्रतीति ॥२१३
एक दिन हरिदास गोफाते वसिया।
नाम संकीर्त्तन करे उच्च करिया ॥२१४
ज्योत्स्नावती रात्रि दश दिशा सुनिर्म्मल।
गङ्गार लहरी ज्योत्स्नाय करे झलमल ॥२२५
द्वारेते तुलसी सेवा पिण्डिर उपर।
गोफार शोभा देखि लोकेर जुड़ाय अन्तर ।२१६
हेनकाले एक नारी अङ्गने आइला।
तार अङ्गकान्त्ये स्थान पीतवर्ण हैला ॥२१७
ताँर अङ्गगन्धे दशदिक आमोदित।
भूषण ध्वनिते कर्ण हय चमकित ॥२१८
आसिया तुलसीके सेइ कैल नमस्कार।
तुलसी परिक्रमा करि गेला गोफाद्वार ॥२१९
योड़हाते हरिदासेर वन्दिल चरण।
द्वारे वसि कहे किछु मधुर वचन ॥२२०
"जगतेर वन्द्य तुमि रूपगुणवान्।
तव सङ्ग लागि मोर एथाके प्रयाण ॥२२१
मोर अङ्गीकार कर हइया सदय।
दीने दया करे एइ साधुस्वभाव हय॥"२२२
एत बलि नाना भाव करये प्रकाश।
याहार दर्शने मुनिर हय धैर्य्यनाश ॥२२३
निर्व्विकार हरिदास गम्भीर-आशय।
बलिते लागिला तारे हइया सदय ॥२२४
"संख्यानामसंकीर्त्तन एइ महायज्ञ मने।
ताहाते दीक्षित आमि हइ प्रतिदिने ॥२२५
यावत् कीर्त्तन समाप्त नहे ना करि अन्य काम।
कीर्त्तन समाप्त हैले हय दीक्षार विश्राम॥२२६
द्वारे वसि शुन तुमि नाम संकीर्त्तन।
नाम समाप्त हैले करिब तोमार प्रीति आचरण ॥२२७
एत बलि करेन तिँह नाम संकीर्त्तन।
सेइ नारी वसि नाम करिल श्रवण ॥२२८
कीर्त्तन करिते आसि प्रातःकाल हैल।
प्रातःकाल देखि नारी उठिया चलिल ॥२२९
एइमत तिन दिन करे आगमन।
नाना भाव देखाय याते ब्रह्मार हरे मन ॥२३०
कृष्णनामाविष्ट मन सदा हरिदास।
अरण्ये रोदन हैल स्त्रीभाव प्रकाश ॥२३१

तृतीय दिवसेर रात्रि शेष यबे हैल ।
ठाकुरेर स्थाने नारी कहिते लागिल ॥२३२
"तिन दिन वञ्चिला आमा करि आश्वासन ।
रात्रिदिने नहे तोमार नाम समापन ॥"२३३
हरिदास ठाकुर कहे 'आमि कि करिब ।
नियम करियाछि ताहा केमने छाड़िब ॥२३४
तबे नारी कहे ताँरे करि नमस्कारे ।
"आमि आसिलाम परीक्षा करिते तोमारे ॥२३५
ब्रह्मादि जीवेरे आमि सबारे मोहिल ।
एकला तोमारे आमि मोहिते नारिल ॥२३६
महाभागवत तुमि तोमार दर्शने ।
तोमार कीर्त्तने कृष्णनामश्रवणे ॥२३७
चित्त शुद्ध हैल चाहे कृष्ण नाम लैते ।
कृष्ण उपदेशि कृपा करह आमाते ॥२३८
चैतन्यावतारे वहे प्रेमामृत-वन्या ।
सब जीव प्रेमे भासे पृथिवी हैल धन्या ॥२३९
ए वन्याय ये ना भासे सेइ जीव छार ।
कोटि कल्पे तबे तार नाहिक निस्तार ।२४०
पूर्व्वे आमि नाम पाञाछि शिव हैते ।
तोमासङ्गे लोभ हैला कृष्णनाम हैते ॥२४१
मुक्ति हेतु तारकब्रह्म हय राम नाम ।
कृष्णनाम पावक करे प्रेम दान ॥२४२
कृष्णनाम देह तुमि मोरे कर धन्या ।
आमाके भासाओ यैछे एइ प्रेमवन्या ॥"२४३
एत बलि वन्दिल हरिदासेर चरण ।
हरिदास कहे "कर कृष्णनाम संकीर्त्तन ॥२४४
उपदेश पाञा माया चलिला हञा प्रीत ।
ए सब कथाते यदि ना जन्मे प्रतीत ॥२४५
प्रत्यय करिते कहि कारण इहार ।
याहार श्रवणे हय विश्वास सबार ॥२४६
चैतन्यावतारे कृष्ण प्रेमलुब्ध हञा ।
ब्रह्मा शिव सनकादि पृथिवीते जन्मिया ।२४७
कृष्णनाम लञा नाचे प्रेमवन्या भासे ।
नारद प्रह्लाद आसि मनुष्य प्रकाशे ॥२४८
लक्ष्मी आदि करि कृष्णप्रेमलुब्ध हञा ।
नाम-प्रेम आस्वादिल मनुष्ये जन्मिया ॥२४९
अन्येर का कथा आपने व्रजेन्द्रनन्दन ।
अवतरि करे नाम प्रेम आस्वादन ॥२५०
माया दासी प्रेम मागे इहाते कि विस्मय ।
साधुकृपा ना करिले प्रेम ना जन्माय ॥२५१
चैतन्य गोसाञिर लीलार एइत स्वभाव ।
त्रिभुवन नाचे गाय पाञा प्रेमभाव ॥२५२
कृष्ण आदि आर यत स्थावर जङ्गम ।
कृष्णप्रेमे मत्त करे कृष्ण संकीर्त्तन ॥२५३
स्वरूप गोसाञि कड़चाय ये लिखिल ।
रघुनाथदासमुखे ये सब शुनिल ॥२५४
सेइ सब लीला कहि संक्षेप करिया ।
चैतन्यकृपाते लिखि क्षुद्र जीव हञा ॥२५५
हरिदास ठाकुरेर कहिल महिमार कण ।
याहार श्रवणे भक्तेर जुड़ाय श्रवण ॥२५६
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१५७

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे हरिदासमहिमाकथनं नाम तृतीयपरिच्छेदः ॥३॥



❀ चतुर्थ परिच्छेद । ❀

तथाहि ग्रन्थकारस्य—

वृन्दावनात् पुनः प्राप्तं श्रीगौरः श्रीसनातनं ।
देहपातादवन् स्नेहात् शुद्धं चक्रे परीक्षया ॥१॥

टीका—श्रीगौरः वृन्दावनात् पुनः प्राप्तं श्रीसनातनं देहपातात् स्नेहात् अवन् रक्षन् सन् परीक्षया शुद्धं चक्रे ॥१॥

श्रीसनातन निश्चय किये थे कि—झारि खण्ड पथसे नीलाद्रि में उपस्थित होकर श्रीजगन्नाथ के रथ के अग्रभाग में देह पात करेंगे, किन्तु श्रीगौरचन्द्र स्नेह निबन्धन उनकी रक्षाकर परीक्षा ग्रहण के पश्चात् उनको शुद्ध किये थे ॥१॥

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
नीलाचल हैते रूप गौड़े यबे गेला ।
मथुरा हैते सनातन नीलाचले आइला ॥२
झारिखण्डपथे आइला एकला चलिया ।
कभु उपवास कभु चर्व्वण करिया ॥३
झारिखण्डेर जलेर दोष उपवास हैते ।
गात्रकण्डु हैला रसा पड़े खाजुया हैते ॥४
निर्व्वेद हइल पथे करेन विचार ।
"नीच जाति, देह मोर अत्यन्त असार ॥५
जगन्नाथे गेले ताँर दर्शन ना पाइब ।
प्रभुर दर्शन सदा करिते नारिब ॥६
मन्दिरनिकटे शुनि ताँर वासा स्थिति ।
मन्दिरनिकटे याइते मोर नाहि शक्ति ॥७
जगन्नाथेर सेवक फेरे कार्य्य अनुरोधे ।
तार स्पर्श हैले मोर हइबे अपराधे ॥८
ताते यदि एइ देह भाल स्थाने दिये ।
दुःखशान्ति हय आर सद्गति पाइये ॥९
जगन्नाथ रथयात्राय हइबेन बाहिर ।
ताँर रथचाकाय एइ छाड़िब शरीर ॥१०
महाप्रभु आगे आर देखि जगन्नाथ ।
रथे देह छाड़िब एइ परम पुरुषार्थ ॥"११
एइ त निश्चय करि नीलाचले आइला ।
लोके पुछि हरिदासस्थाने उत्तरिला ॥१२
हरिदासेर कैल तिँह चरण वन्दन ।
हरिदास जानि तारे कैल आलिङ्गन ॥१३
महाप्रभु देखिते तार उत्कण्ठित मन ।
हरिदास कहे "प्रभु आसिबे एखन ॥"१४
हेनकाले प्रभु उपलभोग देखिया ।
हरिदासे मिलिते आइला भक्तगण लञा ॥१५
प्रभु देखि दुँहे पड़े दण्डवत् हञा ।
प्रभु आलिङ्गिल हरिदासेरे उठाइया ॥१६
हरिदास कहे "सनातन करे नमस्कार ।"
सनातन देखि, प्रभु हैल चमत्कार ॥१७
सनातने आलिङ्गिते प्रभु आगे हैला ।
पाछे भागे सनातन कहिते लागिला ॥१८
"मोरे ना छुँइह प्रभु, पड़ि तोमार पाय ।
एके नीच जाति अधम आर कण्डुसर्व गाय ।'१९

बलात्कारे प्रभु तारे आलिङ्गन कैल ।
कण्डु क्लेद महाप्रभुर श्रीअङ्गे लागिल ॥२०
सब भक्तगणे प्रभु मिलाइल सनातने ।
सनातन कैल सबार चरणवन्दने ॥२१
भक्तगण लञा प्रभु वसिल पिण्डार उपरे ।
हरिदास सनातन वसिला पिण्डार तले ॥२२
कुशलवार्त्ता महाप्रभु पुछेन सनातने ।
तिँह कहेन "परम मङ्गल देखिनु चरणे ॥"२३
मथुरार वैष्णव सबेर कुशल पुछिल ।
सबार कुशल सनातन जानाइल ॥२४
प्रभु कहे "इँहा रूप छिल दशमास ।
इँहा हैते गौड़े गेला हैल दिन दश ॥२५
तोमार भाइ अनुपमेर हैला गङ्गाप्राप्ति ।
भाल छिल रघुनाथे दृढ़ तार भक्ति ॥"२६
सनातन कहे "नीच वंशे मोर जन्म ।
अधर्म्म अन्याय यत आमार कुलधर्म्म ॥२७
हेन वंशे घृणा छाड़ि कैले अङ्गीकार ।
तोमार कृपाते वंशे मंगल आमार ॥२८
सेइ अनुपम भाइ शिशुकाल हैते ।
रघुनाथ उपासना करे दृढ़चित्ते ॥२९
रात्रि दिने रघुनाथेर नाम आर ध्यान ।
रामायण निरबधि शुने करे गान ॥३०
आमि आर रूप ताँर ज्येष्ठ सहोदर ।
आमा दुँहा सङ्गे तिँह रहे निरन्तर ॥३१
आमा सबा सङ्गे कृष्णकथा भागवत शुने ।
ताँहार परीक्षा आमि कैल दुइ जने ॥३२
शुनह वल्लभ कृष्ण परम मधुर ।
सौन्दर्य्य माधुर्य्य प्रेम विलास प्रचुर ॥३३
कृष्ण भजन कर तुमि आमा दुँहार सङ्गे ।
तिन भाइ एकत्र कहि कृष्णकथा रङ्गे ॥३४
एइमत बार बार कहि दुइ जन ।
आमा दुँहार गौरवे किछु फिरि गेल मन ।३५
तोमा दुँहार आज्ञा आमि केमने लङ्घिव ।
दीक्षामन्त्र देह, कृष्ण भजन करिब ॥"३६
एत कहि रात्रिकाले करये चिन्तन ।
"केमने छाड़िव रघुनाथेर चरण ॥"३७
सब रात्रि क्रन्दन करि, करि जागरण ।
प्रातःकाले आमा दुँहाय कैल निबेदन ॥३८
"रघुनाथेर पादपद्मे वेचियाछि माथा ।
काड़िते ना पारि माथा पाइ बड़ व्यथा ॥३९
कृपा करि मोरे आज्ञा देह दुइ जन ।
जन्मे जन्मे सेवि रघुनाथेर चरण ॥४०
रघुनाथेर पादपद्म छाड़न ना याय ।
छाड़िबार मन हैले प्राण फाटि याय ॥"४१
तबे आमि दुँहे तारे आलिङ्गन कैल ।
"साधु दृढ़ भक्ति तोमार" कहि प्रशंसिल ॥४२
ये वंशेर उपरे तोमार हय कृपालेश ।
सकल मङ्गल ताहे, खण्डे सब क्लेश ॥"४३
गोसाञि कहेन "एइमत मुरारि गुप्त ।
पूर्व्वे आमि परीक्षिल तार एइ रीत ॥४४
सेइ भक्त धन्य, ये ना छाड़े प्रभुर चरण ।
सेइ प्रभु धन्य, ये ना छाड़े निज जन ॥४५
दुर्द्दैवे सेवक यदि याय अन्य स्थाने ।
सेइ ठाकुर धन्य तारे चुले धरि आने ॥४६
भाल हैल तोमार इँहा हैल आगमने ।
एइ घरे रह तुमि हरिदास सने ॥४७

कृष्णभक्तिरसे दोहेँ परम प्रधान ।
कृष्णनाम आस्वादन कर, लओ कृष्णनाम ।४८
एत बलि महाप्रभु उठिया चलिला ।
गोविन्द द्वाराय दुँहे प्रसाद पाठाइला ॥४९
एइमत सनातन रहे प्रभुस्थाने ।
जगन्नाथेर चक्र देखि करेन प्रणामे ॥५०
कभु आसि प्रतिदिन मिले दुइ जने ।
इष्ट गोष्ठी कृष्णकथा कहे कतक्षणे ॥५१
दिव्य प्रसाद पाइया नित्य जगन्नाथ-मन्दिरे ।
ताहा आनि नित्य अवश्य देन दुँहाकारे ॥५२
एक दिन आसि प्रभु दुँहारे मिलिला ।
सनातने आचम्बिते कहिते लागिला ॥५३
"सनातन देहत्यागे कृष्ण ना पाइये ।
कोटि देह क्षणेके तबे छाड़िते पारिये ॥५४
देहत्यागे कृष्ण ना पाइ पाइये भजने ।
कृष्णप्राप्तिर उपाय कोन नाहि भक्ति विने ॥५५
देहत्यागादिक एइ तामसेरधर्म्म ।
तमो-रजो-धर्म्मे कृष्णेर ना पाइये मर्म्म ।५६
भक्ति विना कृष्णे कभु नहे प्रेमोदय ।
प्रेम विना कृष्णप्राप्ति अन्य हैते नय ॥"५७

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।१४।२०)—

न साधयति मां योगो न सांख्यं धर्म्म उद्धव ।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्म्ममोर्ज्जिता ।२

श्रीमद् भागवत के ११-१४-२० में उद्धव को श्रीकृष्ण कहे थे—हे उद्धव ! जिस प्रकार बलवती मद् विषयिणी भक्ति मुझ को वशीभूत करती है, उस प्रकार वशीभूत करने में समर्थ साङ्ख्य, धर्म तपस्या दान प्रभृति नहीं हैं, अर्थात दृढ़ भक्ति के द्वारा जिस प्रकार मैं सुखलभ्य हूँ, उस प्रकार सुखलभ्य साङ्ख्य, धर्म, तपस्या, दान प्रभृति से नहीं हूँ ॥२॥

"देहत्यागादि तमोधर्म्म पातककारण ।
साधक ना पाय ताते कृष्णेर चरण ॥५८
प्रेमी भक्त वियोगे चाहे देह छाड़िते ।
प्रेमे कृष्ण मिले सेह ना पाय मरिते ॥५९
गाढ़ानुरागे वियोग ना याय सहन ।
ताते अनुरागी वाञ्छे आपन मरण ॥"६०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।५२।४३)—

यस्याङ्घ्रि-पङ्कजरजःस्नपनं महान्तो,
वाञ्छन्त्युमापतिरिवात्मतमोऽपहत्यै ।
यर्ह्यम्बुजाक्ष न लभेय भवत्प्रसादं,
जह्यामसून् व्रतकृशान् शतजन्मभिः स्यात् ॥३

टीका— हे अम्बुजाक्ष । यस्य भवतः अङ्घ्रि-पङ्कजरजःस्नपनं चरणकमलस्य रजोभिः स्नानं आत्मतमोऽपहत्यै आत्मनः पातकध्वंसनाय उमापतिरिव महान्तः सन्तः वाञ्छन्ति, यदि तस्य भवतः प्रसादं अहं न लभेय, तर्हि व्रतकृशान् असून् प्राणान् त्यजेयम्। अतः आह, शतजन्मभिः अपि तव प्रसादः स्यात ॥३

श्रीमद् भागवत के १०।५२।४३ में उक्त है-हे कमल नयन ! उमापति सदृश महात्मा वृन्द आत्मा के तमोनाशार्थ आपके जिस पादपद्म रज से स्नान करने के अभिलाषी होते हैं, तुम्हारे उस प्रसाद को यदि प्राप्त न कर सकूँ, तब अनशनादि के द्वारा इस जीवन को विसर्जन करूँगी, इस प्रकार करने से शत जन्म में भी तुम्हारी प्रसन्नता को प्राप्त कर सकूँगी ॥३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२९।३५)—

सिञ्चाङ्ग नस्त्वदधरामृतपूरकेण,
हासावलोककलगीतजहृच्छयाग्निं ।
नोचेद्वयं विरहजाग्न्युपयुक्तदेहाः,
ध्यानेन याम पदयोः पदवीं सखे ते ॥४॥

टीका—हे अङ्ग ! त्वदधरामृतपूरकेण तव अधरसुधाप्रदानेन नः अस्माकं हासावलोककलगीत-

जहृच्छयाग्निं हाससमन्वितेन अवलोकनेन कलगीतेन च सञ्जातः यः कामाग्निः तं सिञ्च, नोचेत् हे सखे ! वयं विरहजाग्न्युपयुक्त-देहाः तव विरहजातेन अग्निना दग्धदेहाः योगिन इव ते पदयोः पदवीं समीपं ध्यानेन याम ॥४॥

श्रीमद् भागवत के १०।२६।३५ में उक्त है—हे प्रिय ! तुम्हारे सहास्य दर्शन एवं मधुर सङ्गीत से हम सबमें जो कामाग्नि का सञ्चार हुआ है, अधर सुधादान कर उसको प्रशमित करो, नचेत् तुम्हारे विच्छेद अनल से दग्ध होकर योगिवत् हमसब ध्यान के द्वारा तुम्हारे पाद पद्मान्तिक को प्राप्त करेंगे ॥४॥

"कुबुद्धि छाड़िया कर श्रवण कीर्त्तन ।
अचिराते पाबे तबे कृष्ण-प्रेमधन ॥६१
नीच जाति नहे भजने अयोग्य ।
सत्कुल विप्र नहे भजनेर योग्य ॥६२
येइ भजे सेइ बड़, अभक्त हीन छार ।
कृष्णभजने नाहि जातिकुलादि विचार ॥६३
दीनेरे अधिक दया करे भगवान् ।
कुलीन पण्डित धनीर बड़ अभिमान ॥"६४

तथाहि श्रीमद्भागवते (७।६।१०)—
विप्राद्‌द्विषड्‌गुणयुतादरविन्दनाभ-
पदारविन्दविमुखात् श्वपचं वरिष्ठं ।
मन्ये तदर्पितमनोवचनेहितार्थ-
प्राणं पुनाति स कुलं न तु भूरिमानः ॥५॥

श्रीमद् भागवत के ७।६।१० में उक्त है—केवल भक्ति के द्वारा ही हरि को सन्तोष होता है, भक्ति व्यतीत अपर किसी के द्वारा हरि सन्तोष नहीं होता है। धर्म, सत्य, दम, तप, मात्सर्य्य, लज्जा तितिक्षा असूयाराहित्य, यज्ञ, दान, धृति अध्ययन, व्रत अथवा शम, दम, तप, शौच क्षान्ति, सरलता विरलता, मौन विज्ञान सन्तोष सत्य आस्तिक्य-द्वादश गुण ब्राह्मण के हैं, इस प्रकार गुण सम्पन्न ब्राह्मण भी यदि अरविन्दनाभ के पदारविन्द विमुख होता है, तो उससे श्रीकृष्ण चरणारविन्द में अर्पित मना चाण्डाल श्रेष्ठ है, कारण, आत्मार्पित श्वपच निजकुल के सहित अपने को पवित्र करता है, किन्तु भगवद्विमुख ब्राह्मण निखिल गुण सम्पन्न होने पर भी अपने को पवित्र करने में सक्षम नहीं होता है, कारण, उसके गुणादि गर्व के निमित्त ही होते हैं, इस से आत्म शुद्धि होती ही नहीं। अतः वह श्वपच से हीन है ॥५॥

"भजनेर मध्ये श्रेष्ठ नवविध भक्ति ।
कृष्णप्रेम कृष्ण दिते धरे महाशक्ति ॥६५
तार मध्ये सर्व्वश्रेष्ठ नामसंकीर्त्तन ।
निरपराधे नाम लैले पाय प्रेमधन ॥"६६
एत शुनि सनातनेर हैल चमतकार ।
"प्रभुरे माताय मोर मरणविचार ॥६७
सर्व्वज्ञ महाप्रभु निषेधिल मोरे ।'
प्रभुर चरण धरि कहेन ताहारे ॥६८
"सर्व्वज्ञ कृपालु तुमि ईश्वर स्वतन्त्र ।
यैछे नाचाओ तैछे नाचि येन काष्ठयन्त्र ।६६
नीच पामर मुञि पामरस्वभाव ।
मोरे जीयाइले तोमार किवा हैबे लाभ ॥७०
प्रभु कहे "तोमार देह मोर निज धन ।
तुमि मोरे करियाछ आत्मसमर्पण ।७१
परेर द्रव्य तुमि केन चाह विनाशिते ।
धर्म्माधर्म्म विचार किवा ना पार करिते ।७२
तोमार शरीरे मोर प्रधान साधन ।
ए शरीरे साधिब आमि बहु प्रयोजन ॥७३
भक्तभक्ति कृष्णप्रेम तत्त्वेर निर्द्धार ।
वैष्णवेर कृत्य आर वैष्णव आचार ॥७४

कृष्णभक्ति कृष्णप्रेम सेवा प्रवर्त्तन।
लुप्त तीर्थ उद्धार आर वैराग्य शिक्षण ।७५
निज प्रिय स्थान मोर मथुरा वृन्दावन।
ताँहा एत कर्म्म चाहि करिते प्रचारण ॥७६
मातार आज्ञाय आमि वसि नीलाचले।
ताँहा धर्म्म शिक्षाइते नाहि निज बले ॥७७
एत सब कर्म्म आमि ये देहे करिब।
ताहा छाड़िते चाह तुमि, केमते सहिब ॥"७८
तबे सनातन कहे "तोमाके नमस्कारे।
तोमार गम्भीर हृदय के बुझिते पारे ॥७९
काष्ठेर पुतली येन कुहके नाचाय।
आपने ना जाने पुतली किवा नाचे गाय ॥८०
यैछे यारे नाचाइतेछ से करे नर्त्तने।
कैछे नाचे केवा नाचाय केह नाहि जाने ॥"८१
हरिदासे कहे प्रभु "शुन हरिदास।
परेर द्रव्य इह करिते चाहेन विनाश ॥८२
परेर स्थाप्य द्रव्य केह ना खाय विलाय।
निषेधिओ इँहारे येन ना करे अन्याय ॥८३
हरिदास कहे "मिथ्या अभिमान करि।
तोमार गम्भीर हृदय बुझिते ना पारि ॥८४
कोन् कोन् कार्य्य तुमि कर कोन् द्वारे।
तुमि ना जानाइले केह ना जानिते पारे।८५
एतादृश तुमि इँहारे करियाछ अङ्गीकार।
ए सौभाग्य इँहा ना हय काहार ॥८६
तबे महाप्रभु करि दुँहारे आलिङ्गन।
मध्याह्न करिते उठि करिला गमन ॥८७
सनातने कहे हरिदास करि आलिङ्गन।
"तोमार भाग्येर सीमा ना याय कथन ॥८८
तोमार देह, कहे प्रभु, मोर निज जन।
तोमा सम भाग्यवान् नाहि कोन जन ॥८९
निज देहे ये कार्य्य ना पारेन करिते।
से कार्य्य कराइवेन तोमा सेइ मथुराते ॥९०
ये कराइते चाहे ईश्वर सेइ सिद्ध हय।
तोमार सौभाग्य एइ कहिल निश्चय ॥९१
भक्तिसिद्धान्त शास्त्र-आचार निर्णय।
तोमा द्वारे कराइवेन बुझिल आशय ॥९२
आमार एइ देह प्रभुर कार्य्ये ना लागिल।
भारतभूमेते जन्मि एइ देह व्यर्थ हैल ॥"९३
सनातन कहे "तोमा सम केवा आछे आन।
महाप्रभुर गणे तुमि महा भाग्यवान् ॥९४
अवतार कार्य्य प्रभुर नामप्रचारे।
से निज कार्य्य प्रभु करेन तोमा द्वारे ॥९५
प्रत्यह कर तिन लक्ष नामसंकीर्त्तन।
सबार आगे कह नामेर महिमाकथन ॥९६
आपने आचरे केह, ना करे प्रचार।
प्रचार करेन केह, ना करेन आचार ॥९७
आचार प्रचार नामेर करह दुइ कार्य्य।
तुमि सर्व्वगुरु तुमि जगतेर आर्य्य ॥"९८
एइमत दुइ जने नाना कथारङ्गे।
कृष्णकथा आस्वादये रहि एकसङ्गे ॥९९
यात्राकाले आइला सब गौड़भक्तगण।
पूर्व्ववत् कैल सब रथयात्रा दरशन ॥१००
रथ अग्रे प्रभु तैछे करिल नर्त्तन।
देखि चमत्कार हैल सनातनेर मन ॥१०१
चारि मास रहिल सब निज भक्तगण।
सबा सङ्गे प्रभु मिलाइल सनातन ॥१०२

अद्वैत नित्यानन्द श्रीवास वक्रेश्वरे ।
वासुदेव मुरारि राघव दामोदर ॥१०३
पुरी भारती स्वरूप पण्डित गदाधर ।
सार्व्वभौम रामानन्द जगदानन्द शङ्कर ॥१०४
काशीश्वर गोविन्दादि यत भक्तगण ।
सबा सने सनातनेर कराइल मिलन ॥१०५
यथायोग्य सबार कैल चरणवन्दन ।
तारे कराइल सबार कृपार भाजन ॥१०६
सद्गुणे पाण्डित्ये सबार प्रिय सनातन ।
यथायोग्य कृपा मैत्री गौरबभाजन ॥१०७
सकल वैष्णव तबे गौड़देश गेला ।
सनातन महाप्रभुर चरणे वन्दिला ॥१०८
दोलयात्रा-आदि प्रभुर सङ्गे ते देखिल ।
दिने दिने प्रभुसङ्गे आनन्द बाड़िल ॥१०९
पूर्व्व वैशाखमासे सनातन यबे आइला ।
ज्यैष्ठमासे प्रभु ताँरे परीक्षा करिला ॥११०
ज्यैष्ठमासे प्रभु यमेश्वर टोटा आइला ।
भक्त अनुरोधे ताँहा भिक्षा ये करिला ॥१११
मध्याह्ने भिक्षाकाले सनातने बोलाइला ।
प्रभु बोलाइला तार आनन्द बाढ़िला ॥११२
मध्याह्ने समुद्रे बालु हञाछे अग्निसम ।
सेइ पथे सनातन करिला गमन ॥११३
प्रभु बोलाञाछे एइ आनन्दित मने ।
तप्त बालुकाते पोड़े पा,ताहा नाहि जाने ।११४
दुइ पाये फोस्का हैल गेला प्रभु-स्थाने ।
भिक्षा करि महाप्रभु करियाछे विश्रामे ।११५
भिक्षा अवशेषे पात्र गोविन्द तारे दिल ।
प्रसाद पाञा सनातन प्रभु-पाशे आइल ॥११६
प्रभु कहे "कोन् पथे आइले सनातन ।
तिँह कहे, समुद्रपथे करिला गमन ॥"११७
प्रभु कहे, "तप्तबालुकाते केमने आइला ।
सिंहद्वारेर पथ शीतल केन ना आइला ॥११८
तप्त बालुकाय तोमार पाय हैल व्रण ।
चलिते ना पार केमने हइल सहन ॥"११९
सनातन कहे "दुःख बहु ना पाइल ।
पाय व्रण हञाछे ताहा ना जानिल ॥१२०
सिंहद्वारे याइते मोर नाहि अधिकार ।
विशेष ठाकुरेर ताँहा सेवकप्रचार ॥१२१
सेवक गतागति करे नाहि अवसर ।
कारो स्पर्श हैले सर्व्वनाश हइबे मोर ॥१२२
शुनि महाप्रभु मने सन्तोष पाइल ।
तुष्ट हञा तारे किछु कहिते लागिला ॥१२३
"यद्यपि तुमि हओ जगत-पावन ।
तोमा स्पर्शे पवित्र हय देव मुनिगण ॥१२४
तथापि भक्तस्वभाव मर्य्यादार रक्षण ।
मर्य्यादापालन हय साधुर भूषण ॥१२५
मर्य्यादालङ्घने लोके करे उपहास ।
इहलोक परलोक दुइ हय नाश ॥१२६
मर्य्यादा राखिले तुष्ट हय मोर मन ।
तुमि ना ऐछे करिले करे कोन जन ॥"१२७
एत बलि प्रभु तारे आलिङ्गन कैल ।
तार कण्डुरसा प्रभुर श्रीअङ्गे लागिल ।१२८
बार बार निषेधे तबु करे आलिङ्गन ।
अङ्गे रसा लागे दुःख पाय सनातन ॥१२९
एइमते सेवक प्रभु दोँहे घर गेला ।
आर दिन जगदानन्द सनातनेरे मिलिला ॥१३०

दुइ जन वसि कृष्णकथा गोष्ठी कैल ।
पण्डितेरे सनातन दुःख निवेदिल ॥१३१
"इँहा आइलाम प्रभु देखि दुःख खण्डाइते ।
येवा मने वाञ्छा प्रभु ना दिल करिते ॥१३२
निषेधिले प्रभु आलिङ्गन करे मोरे ।
मोर कण्डुरसा लागे प्रभुर शरीरे ॥१३३
अपराध हय मोर नाहिक निस्तार ।
जगन्नाथ ना देखिये ए दुःख अपार ॥१३४
हित निमित्त आइलाम आमि हैल विपरीते ।
कि करिले हित हय नारि निर्द्धारिते ॥"१३५
पण्डित कहे "तोमार वासयोग्य वृन्दावन ।
रथयात्रा देखि ताँहा करह गमन ॥१३६
प्रभु-आज्ञा हइयाछे तोमार दुइ भाइये ।
वृन्दावने वैस ताँहा सर्व्व सुख पाइये ॥१३७
ये कार्य्ये आइला, प्रभुर देखिले चरण ।
रथे जगन्नाथ देखि करह गमन ॥१३८
सनातन कहे "भाल कैले उपदेश" ।
ताँहा याव सेइ मम प्रभुदत्त देश ॥"१३९
एत बलि दुँहे निज कार्य्ये उठि गेला ।
आर दिन महाप्रभु मिलिबारे आइला ॥१४०
हरिदास कैल प्रभुर चरणवन्दन ।
हरिदासे कैल प्रभु प्रेम-आलिङ्गन ॥१४१
दूर हैते परणाम करे सनातन ।
प्रभु बोलाय बार बार करिते आलिङ्गन ।१४२
अपराधभये तिँह मिलिते ना आइला ।
महाप्रभु मिलिबारे सेइ ठाञि आइला ।१४३
सनातन भाजे पाछे करेन गमन ।
बलात्कारे धरि प्रभु कैल आलिङ्गन ।१४४

दुइ जन लञा प्रभु वसिला पिण्डाते ।
निर्व्विण्ण सनातन लागिला कहिते ॥१४५
"हित लागि आइनु मुञि हैल विपरीत ।
येवा योग्य नहे अपराध करो निति निति ।१४६
सहजे नीच जाति मुञि दुष्ट पापाशय ।
मोरे तुमि छुँइले मोर अपराध हय ॥१४७
ताहाते आमार अङ्गे रक्त रस चले ।
तोमार अङ्गे लागे तबु स्पर्श तुमि बले ॥१४८
बीभत्स स्पर्शिते ना कर घृणालेश ।
एइ अपराधे मोर हबे सर्व्वनाश ॥१४९
ताते इँहा रहिले मोर ना हय कल्याण ।
आज्ञा देह रथ देखि याइ वृन्दावन ॥१५०
जगदानन्द पण्डिते आमि युक्ति पुछिल ।
वृन्दावन याइते तिँह उपदेश दिल ॥१५१
एत शुनि महाप्रभु सरोष अन्तरे ।
जगदानन्दे क्रुद्ध हैञा करे तिरस्कारे ॥१५२
"कालिकार वड़ुया जगा ऐछे गर्व्वी हैल ।
तोमा सबाकारे उपदेश करिते लागिल ॥१५३
व्यवहारे परमार्थे तुमि तार गुरुतुल्य ।
तोमारे उपदेश करे, ना जाने आपन मूल्य १५४
आमार उपदेष्टा तुमि प्रामाणिक आर्य्य ।
तोमारे उपदेशे, बालक करे ऐछे कार्य्य ।१५५
शुनि सनातन पाये धरि प्रभुके कहिल ।
"जगदानन्देर सौभाग्य आजि से जानिल १५६
आपनार सौभाग्य आजि हैल ज्ञान ।
जगते नाहि जगदानन्दसम भाग्यवान् ॥१५७
जगदानन्दे पियाओ आत्मता सुधारस ।
मोरे पियाओ गौरवस्तुति निम्बनिसिन्दारस १५८

आजिओ नहिल मोरे आत्मीयताज्ञान ।
मोर अभाग्य, तुमि स्वतन्त्र भगवान् ॥"१५९
शुनि महाप्रभुर किछु लज्जित हैल मन ।
तारे सन्तोषिते किछु बलेन वचन ॥१६०
"जगदानन्द प्रिय आमार नहे तोमा हैते ।
मर्य्यादालङ्घन आमि ना पारि सहिते ॥१६१
काँहा तुमि प्रामाणिक शास्त्रे प्रवीण ।
काँहा जगा कालिकार बटुक नवीन ॥१६२
आमाकेओ बुझाइते तुमि धर शक्ति ।
कत ठाञि बुझाञाछ व्यवहार भक्ति ॥१६३
तोमारे उपदेश करे ना याय सहन ।
अतएव तारे आमि करिये भर्त्सन ॥१६४
वहिरङ्ग ज्ञाने तोमारे ना करि स्तवन ।
तोमार गुणे स्तुति कराय ऐछे तोमार गुण १६५
यद्यपि कार ममता बहु जने हय ।
प्रीतिस्वभावे कराय कोन भावोदय ॥१६६
तोमार देह तुमि कर बीभत्सता ज्ञान ।
तोमार देह आमाके लागे अमृतसमान ॥१६७
अप्राकृत देह तोमार प्राकृत कभु नय ।
तथापि तोमार ताते प्राकृत बुद्धि हय ॥१६८
प्राकृत हइले तोमार वपु नाहि उपेक्षिते ।
भद्राभद्र वस्तुज्ञान नाहिक अप्राकृते ॥"१६९

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२८।४)—

किं भद्रं किमभद्रं वा द्वैतस्यावस्तुनः कियत् ।
वाचोदितं तदनृतं मनसा ध्यातमेव च ॥६॥

ठीका—अवस्तुनः द्वैतस्य कियत किं भद्रं ? किं वा अभद्रं ? अवस्तुमेव कथयति,—वाचोदितं वाक्येनोक्तं नेत्रादिभिः यत् दृश्यं, मनसा च ध्यातमेव, तत् अनृतम् ॥६॥

श्रीमद् भागवत के ११।२८।४ में उक्त है—द्वैत पदार्थ मात्र ही अवस्तु है, अतएव उसके विषय में अच्छा बुरा शोचना अनुचित है, जो वाक्योक्त एवं चक्षु प्रभृति का विषय है, अथवा मनके द्वारा ध्यान योग्य है, यही अवस्तु है ॥६॥

"द्वैते भद्राभद्र ज्ञान सब मनोधर्म्म ।
एइ भाल, एइ मन्द एइ सब भ्रम ॥"१७०

तथाहि श्रीमद् भगवद्गीतायां (५।१८)—

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः ॥७॥

टीका—पण्डिताः विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि, शुनि, श्वपाके च समदर्शिनो भवन्ति ॥७

श्रीभगवद् गीता के पञ्चमाध्याय के १८ श्लोक में उक्त है—ज्ञानि व्यक्ति गण समदृष्टि सम्पन्न होते हैं, अर्थात सर्वत्र ईश्वर अवस्थित हैं, इस प्रकार मानते हैं, अतः विद्याविनय सम्पन्न ब्राह्मण, गो, हस्ती, कुकुर, एवं चण्डाल को एक दृष्टि से देखते हैं, विभेद दर्शन नहीं करते हैं ॥७॥

तथाहि श्रीमद् भगवद्गीता (६।८)—

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः ।
युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्ट्राश्मकाञ्चनः ॥८

टीका—ज्ञान विज्ञान तृप्तात्मा कूटस्थः निर्व्विकारः विजितेन्द्रियः समलोष्ट्राश्मकाञ्चनः योगी युक्तः इति उच्यते ॥८॥

श्रीमद् भगवद् गीताके ६।८ में उक्त है—जिसका चित्त ज्ञान विज्ञान से परितृप्त है-जो निर्विकार एवं जितेन्द्रिय है, ढेल, पाषाण, सुवर्ण प्रभृति वस्तु में समज्ञान सम्पन्न है उस योगी को योगारूढ़ कहते हैं ॥८॥

"आमितो सन्न्यासी आमार समदृष्टि धर्म्म ।
चन्दन पङ्कजे आमार ज्ञान हय सम ॥१७१
एइ लागि तोमा त्याग करिते ना जुयाय ।
घृणाबुद्धि करि यदि निज धर्म्म याय ॥१७२

हरिदास कहे "प्रभु, ये कहिले तुमि ।
एइ वाह्य प्रतारणा नाहि मानि आमि ॥१७३
आमा सम अधमे ये करियाछ अङ्गीकार ।
दीनदयाल गुण तोमार ताहाते प्रचार ।'१७४
प्रभु हासि कहे "शुन हरिदास, सनातन ।
तत्त्व कहि तोमा विषय आमार यैछे मन ।१७५
तोमाके लाल्ये, आपनाके लालक अभिमान ।
लालकेर लाल्य नहे दोष परिज्ञान ॥१७६
आपनाके हय मोर अमान्यसमान ।
तोमा सबाके करोँ मुञि बालक-अभिमान १७७
माताऱ यैछे बालकेर अमेध्य लागे गाय ।
घृणा नाहि जन्मे ताय, महा सुख पाय ।१७८
लाल्यामेध्य लालकेर चन्दनसम भाय ।
सनातनेर क्लेदे आमार घृणा नाहि हय ।१७९
हरिदास कहे "तुमि ईश्वर दयामय ।
तोमार गम्भीर हृदय बुझन ना हय ॥१८०
वासुदेव गलत्कुष्ठी ताते कीड़ामय ।
ताँरे आलिङ्गन कैले हइया सदय ॥१८१
आलिङ्गिया कैले तार कन्दर्पसम अङ्ग ।
बुझिते ना पारि तोमार कृपार तरङ्ग ।'१८२
प्रभु कहे "वैष्णव-देह प्राकृत कभु नय ।
अप्राकृत देह भक्तेर चिदानन्दमय ॥१८३
दीक्षाकाले भक्त करे आत्मसमर्पण ।
सेइकाले कृष्ण ताँरे करे आत्मसम ॥१८४
सेइ देह करेन ताँर चिदानन्दमय ।
अप्राकृत देहे ताँर चरण भजय ॥"१८५

तथाहि श्रीमद् भागवते (११।२९।३४)—

मर्त्यो यदा त्यक्तसमस्तकर्म्मा,
निवेदितात्मा विचिकीर्षितो मे ।
तदामृतत्वं प्रतिपद्यमानो,
मयात्मभूयाय च कल्पते वै ॥९॥

श्रीमद् भागवत के ११।२९।३४ में उक्त है—जब मानव समस्त काम्य कर्म परित्याग कर मेरी आराधना करने के इच्छुक होता है, आत्म समर्पण करता है, उस समय वह अमृतत्वलाभ करता है, अर्थात् संसार में अवस्थित होने पर भी वह मेरे समान ऐश्वर्य्य भोग के अधिकारी होता है ॥९॥

"सनातनेर देहे कृष्ण कण्डु उपजाञा ।
आमा परीक्षिते इँहा दिल पाठाइञा ॥१८६
घृणा करि आलिङ्गन ना करिताम यबे ।
कृष्ण ठाञि अपराधी हइताम तबे ॥१८७
पारिषददेह एँह ना हय दुर्गन्ध ।
प्रथम दिवसे पाइल चतुःसमगन्ध ॥"१८८
वस्तुतः प्रभु यबे कैल आलिङ्गन ।
ताँर स्पर्शे गन्ध हइल चन्दनेर सम ॥१८९
प्रभु कहे सनातन ना भाविह दुःख ।
तोमा आलिङ्गने आमि पाइ बड़ सुख ॥१९०
ए वत्सर तुमि इँहा रह आमा सने ।
वत्सर वहि तोमाके आमि पाठाव वृन्दावने
१९१॥"
एत बलि पुनः तारे कैल आलिङ्गन ।
कण्डु गेल अङ्ग हैल सुवर्णेर सम ॥१९२
देखि हरिदास मने हैल चमत्कार ।
प्रभुके कहेन "एइ भङ्गी ये तोमार ॥१९३
सेइ झारिखण्डेर पानी तुमि खाओयाइला ।
सेइ पानी लक्ष्ये इहार कण्डु उपजिला ॥१९४
कण्डु करि परीक्षा करिले सनातने ।
एइ लीलाभङ्गी तोमार केह नाहि जाने ।१९५

दुँहा आलिङ्गिया प्रभु गेल निजालय ।
प्रभुर गुण कहे दुँहे हञा प्रेममय ॥१९६
एइमत सनातन रहे प्रभुस्थाने ।
कृष्णचैतन्यगुणकथा हरिदास सने ॥१९७
दोलयात्रा देखि प्रभु ताँरे विदाय दिला ।
वृन्दावने ये करिबेन सब शिक्षाइला ॥१९८
ये काले विदाय हैल प्रभुर चरणे ।
दुइ जनार विच्छेददशा ना याय वर्णने ॥१९९
येइ वनपथे प्रभु गेला वृन्दावन ।
सेइ पथे याइते मन कैल सनातन ॥२००
ये पथे ये ग्राम नदी शैल, याँहा येइ लीला ।
बलभद्र भट्टस्थाने सब लिखि निला ॥२०१
महाप्रभुर भक्तगण सबारे मिलिया ।
सेइपथे चलि याय से स्थाने देखिया ॥२०२
ये ये लीला प्रभु पथे कैल ये ये स्थाने ।
ताहा देखि प्रेमावेश हय सनातने ॥२०३
एइमते सनातन वृन्दावने आइला ।
पाछे आसि रूप गोसाञि ताहारे मिलिला ।२०४
एक वत्सर रूप गोसाञिर गौड़े विलम्ब हैल ।
कुटुम्बेर स्थिति अर्थ विभाग करि दिल ॥२०५
गौड़े ये अर्थ छिल ताहा आनाइल ।
कुटुम्ब ब्राह्मण देवालये बाँटि दिल ।२०६
सब मनःकथा गोसाञि करि निर्व्वाहण ।
निश्चिन्त हइया शीघ्र आइला वृन्दावन ।२०७
दुइ भाइ मिलि वृन्दावने बास कैल ।
प्रभुर ये आज्ञा दुँहे सब निर्व्वाहिल ॥२०८
नाना शास्त्र आनि लुप्त तीर्थ उद्धारिला ।
वृन्दावने कृष्ण-सेवा प्रकाश करिला ॥२०९
सनातन ग्रन्थ कैल भागवतामृते ।
भक्तभक्ति कृष्णतत्त्व जानि याहा हैते ॥२१०
सिद्धान्तसार ग्रन्थ कैल दशमटिप्पनी ।
कृष्णलीला प्रेमरस याहा हैते जानि ॥२११
हरिभक्तिविलास ग्रन्थ कैल वैष्णव-आचार ।
वैष्णवेर कर्त्तव्य याँहा पाइये पार ॥२१२
आर यत ग्रन्थ कैल ताहा के करे गणन ।
मदनगोपाल गोविन्देर कैल सेवा प्रकाशन २१३
रूप गोसाञि कैल रसामृतसिन्धुसार ।
कृष्णभक्तिरसेर याँहा पाइये विस्तार ॥२१४
उज्ज्वलनीलमणि नाम ग्रन्थ कैल आर ।
कृष्ण–राधा-लीलारसेर याँहा पाइये पार ।२१५
विदग्धललितमाधव—नाटकयुगल ।
कृष्णलीलारस ताँहा पाइये सकल ॥२१६
दानकेलिकौमुदी-आदि लक्ष ग्रन्थ कैल ।
येइ सब ग्रन्थे व्रजेर रस प्रचारिल ॥२१७
तार लघुभ्राता श्रीवल्लभ अनुपम ।
ताँर पुत्र महापण्डित श्रीजीव नाम ॥२१८
सर्व्व त्यागि तिँह पाछे आइला वृन्दावन ।
तिँह भक्तिशास्त्र बहु कैल प्रचारण ॥२१९
भागवतसन्दर्भ नाम कैल ग्रन्थसार ।
भगवत्सिद्धान्तेर याँहा पाइये पार ॥२२०
गोपालचम्पु नाम आर ग्रन्थ कैल ।
व्रजप्रेम लीला रस सब देखाइल ॥२२१
षट् सन्दर्भे कृष्णप्रेमतत्त्व प्रकाशिल ।
चारि लक्ष ग्रन्थ दोँहे विस्तार करिल ॥२२२
जीवगोसाञि गौड़े हइते मथुरा चलिला ।
नित्यानन्द प्रभुठाञि आज्ञा मागिला ॥२२३

प्रभु प्रीते तार माथे धरिल चरण ।
रूप सनातन सम्बन्धे कैल आलिङ्गन ॥२२४
आज्ञा दिला "शीघ्र तुमि याह वृन्दावने ।
तोमार वंशे प्रभु दियाछेन सेइ स्थाने ॥२२५
ताँर आज्ञा लञा आइल, आज्ञाफल पाइल।
शास्त्र करि बहु काल भक्ति प्रचारिल ।२२६
एइ तिनगुरुआर रघुनाथ दास ।
इहाँ सबार चरण वन्द याँर मुञि दास ।२२७
एइ त कहिल पुनः सनातनसङ्गमे ।
प्रभुर आश्रय जानि याहार श्रवणे ॥२२८
चैतन्य चरित्र एइ इक्षुदण्डसम ।
चर्व्वण करिते हय रस आस्वादन ॥२२६
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥२३०

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे पुनः सनातनसङ्गोत्सवो नाम चतुर्थः परिच्छेदः ॥४॥



❀ पञ्चम परिच्छेद। ❀

तथाहि ग्रन्थकारस्य—

वैगुण्यकीटकलिनः पैशुन्यव्रणपीड़ितः ।
दैन्यार्णवे निमग्नोऽहं चैतन्यवैद्यमाश्रये ॥१॥

टीका-अहम् वैगुण्यकीटकलिनोः जीवापकार रूपकीटेन दंशितः पैशुन्यव्रणपीड़ितः, दैन्यार्णवे निमग्नः सन् चैतन्यवैद्यं श्रीचैतन्यं आश्रये ॥१॥

मैं जीवापकार रूप कीट के द्वारा दष्ट, पैशून्य व्रण पीड़ित, दैन्यरूप सागर में निमग्न होकर सुवैद्य श्रीचैतन्य देवकी शरण ग्रहण किया ॥१॥

जय जय शचीसुत श्रीकृष्णचैतन्य ।
जय जय कृपामय प्रभु नित्यानन्द ॥१
जयाद्वैत कृपासिन्धु, जय भक्तगण ।
जय स्वरूप गदाधर रूप सनातन ॥२
एकदिन प्रद्युम्नमिश्र प्रभुर चरणे ।
दण्डवत् करि किछु करे निवेदने ॥३
'शुन प्रभु मुञि दीन गृहस्थ अधम ।
कोन भाग्ये पाञाछो तोमार दुर्ल्लभचरण ।४
कृष्णकथा शुनिवारे मोर इच्छा हय ।
कृष्णकथा कह मोरे हइया सदय ॥"
प्रभु कहे "कृष्णकथा आमि नाहि जानि ।
सबे रामानन्द जाने तार मुखे शुनि ॥६
भाग्य तोमार कृष्णकथा शुनिते हय मन ।
रामानन्द-पाश याइ करह श्रवण ॥७
कृष्णकथा रुचि तोमार, बड़ भाग्यवान् ।
यार कृष्णकथाय रुचि, सेइ भाग्यवान् ॥"८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।२।८)—

धर्म्मः स्वनुष्ठितः पुंसां विष्वक्सेनकथासु यः ।
नोत्पादयेद्यदि रतिं श्रम एव हि केवलं ॥२॥

टीका- पुंसां यः धर्म्मः अनुष्ठितः, यदि विष्वक्सेनकथासु रतिं न उत्पादयेत् तदा स धर्म्मः केवलं श्रम एव ॥२॥

श्रीमद् भागवत के १।२।८ श्लोक में कथित है- उत्तम रूप से धर्म्मानुष्ठान करने पर भी यदि श्रीकृष्ण कथा में आसक्ति नहीं होती है, तो उस धर्माचरण का फल केवल श्रम ही है ।।२।।

तबे प्रद्युम्नमिश्र गेला रामानन्देर स्थाने ।
रायेर सेवक तारे वसाइल आसने ॥६
रायेर दर्शन ना पाञा सेवके पुछिल ।
रायेर वृत्तान्त सेवक कहिते लागिल ॥१०

"দুই দেবকন্যা হয় পরমা সুন্দরী।
নৃত্য গীতে নিপুণা বয়সে কিশোরী ॥১১
তাঁহা দুঁহা লঞা রায় নিভৃতে উদ্যানে।
নিজ নাটক গীতের গান শিক্ষায় নর্ত্তনে ॥১২
তুমি ইহা বসি রহ ক্ষণেকে আসিবেন।
তাঁরে যেই আজ্ঞা দেহ সেই করিবেন ॥১৩
তবে প্রদ্যুম্নমিশ্র তাঁহা রহিলা বসিয়া।
রামানন্দ রায় সেই দুই জন লঞা ॥১৪
স্বহস্তে করেন তার অভ্যঙ্গ মর্দ্দন।
স্বহস্তে করান স্নান গাত্রসংমার্জ্জন ॥১৫
স্বহস্তে পরান বস্ত্র সর্ব্বাঙ্গমণ্ডন।
তবু নির্ব্বিকার রায় রামানন্দের মন ॥১৬
কাষ্ঠ পাষাণ স্পর্শে হয় যৈছে ভাব।
তরুণীস্পর্শে রামানন্দের তৈছে স্বভাব ॥১৭
সেব্য বুদ্ধি আরোপিয়া করেন সেবন।
স্বাভাবিক দাসীভাব করে আরোপণ ॥১৮
মহাপ্রভুর ভক্তগণের দুর্গম মহিমা।
তাহে রামানন্দের ভাব-ভক্তি-প্রেম-সীমা ॥১৯
তবে সেই দুই জনে নৃত্য শিক্ষাইল।
গীতের গূঢ় অর্থ অভিনয় করাইল ॥২০
সঞ্চারী সাত্ত্বিক স্থায়ী ভাবের লক্ষণ।
মুখে নেত্রে অভিনয় করে প্রকটন ॥২১
ভাব প্রকটি বার লাস্য রায় যে শিক্ষায়।
জগন্নাথের আগে দুঁহে প্রকট দেখায় ॥২২
তবে সেই দুই জনারে প্রসাদ খাওয়াইল।
নিভৃতে দুঁহারে নিজ ঘর পাঠাইল ॥২৩
প্রতিদিন রায় ঐছে করায় সাধন।
কোন্ জানে ক্ষুদ্র জীব কাহাঁ তাঁর মন ॥২৪
মিশ্রের আগমন রায়ে সেবক কহিলা।
শীঘ্র রামানন্দ তবে সভাতে আইলা ॥২৫
মিশ্রকে নমস্কার করে সম্মান করিয়া।
নিবেদন করে কিছু বিনীত হইয়া ॥২৬
"বহুক্ষণ আইলা, মোরে কেহ না কহিল।
তোমার চরণে মোর অপরাধ হৈল ॥২৭
তোমার আগমনে মোর পবিত্র হৈল ঘর।
আজ্ঞা কর কাহা করোঁ তোমার কিঙ্কর ॥"২৮
মিশ্র কহে "দেখিতে হৈল আগমনে।
আপনা পবিত্র কৈল তোমা দর্শনে ॥"২৯
অতিকাল দেখি মিশ্র কিছু না কহিলা।
বিদায় করিলা মিশ্র নিজ ঘর গেলা ॥৩০
আর দিন মিশ্র আইলা প্রভু বিদ্যমানে।
প্রভু কহে "কৃষ্ণকথা শুনিলে রায়স্থানে ॥"৩১
তবে মিশ্র রামানন্দের বৃত্তান্ত কহিলা।
শুনি মহাপ্রভু তবে কহিতে লাগিলা ॥৩২
"আমি ত সন্ন্যাসী আপনা বিরক্ত করি মানি
দর্শন দূরে প্রকৃতির নাম যদি শুনি ॥৩৩
তবহিঁ বিকার পায় মোর তনু মন।
প্রকৃতি দর্শনে স্থির হয় কোন্ জন ॥৩৪
রামানন্দ রায়ের কথা শুন সর্ব্বজন।
কহিবার কথা নহে, আশ্চর্য্য কথন ॥৩৫
একে দেবদাসী আর সুন্দরী তরুণী।
তার সব অঙ্গসেবা করেন আপনি ॥৩৬
স্নানাদি করায় পরায় বাস বিভূষণ।
গুহ্য অঙ্গের হয় তার দর্শন স্পর্শন ॥৩৭
তবু নির্ব্বিকার রায় রামানন্দসম।
নানা ভাবোদ্গম তার করায় শিক্ষণ ॥৩৮

निर्व्विकार देह मन काष्ठपाषाणसम।
आश्चर्य्य तरुणीस्पर्शे निर्व्विकार मन ॥३९

एक रामानन्देर हय एइ अधिकार।
ताते जानि अप्राकृत देह ताँहार ॥४०

ताँहार मनेर भाव तिँह जाने मात्र।
ताहा जानिबारे द्वितीय नाहि पात्र ॥४१

किन्तु शास्त्र दृष्टे कहि एक अनुमान।
श्रीभागवत शास्त्र ताहाते प्रमाण ॥४२

व्रजबधू सङ्गे कृष्णेर रासादि विलास।
येइ जने कहे शुने करिया विश्वास ॥४३

हृद्रोग काम तार ततकाल हय क्षय।
तिन गुण क्षोभ नहे महा धीर हय ॥४४

उज्ज्वल मधुर रस प्रेम भक्ति पाय।
आनन्दे कृष्णमाधुर्य्ये विहरे सदाय ॥४५

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३३।३९)—

विक्रीड़ितं व्रजबधूभिरिदञ्च विष्णोः,
श्रद्धान्वितोऽनुशृणुयादथ वर्णयेद् यः।
भक्तिं परां भगवति प्रतिलभ्य कामं,
हृद्रोगमाश्वपहिनोत्यचिरेण धीरः ॥३॥

टीका— यः श्रद्धान्वितः सन् व्रजवधूभिः सह विष्णोः इदञ्च विक्रीड़ितं अनुशृणुयात्, अथ वर्णयेत्, सः भगवति परां भक्तिं प्रतिलभ्य अचिरेण धीरः सन् हृद्रोगं कामं आशु अपहिनोति ॥३॥

श्रीमद् भागवत के १०।३३।२९ में उक्त है— गोपाङ्गना गण के सहित कृष्ण के लीलाविलास की इस कथा का श्रवण जो लोक करता है, अथवा कहता है, वह भक्ति लाभ करता है, उसका मन शान्त होता है, उसका हृद्रोग भी विदूरित होता है, अथवा उसका हृदय सत्वर काम वासना से मुक्त हो जाता है ॥३॥

"ये शुने ये पड़े तार फल एतादृशी।
सेइ भावाविष्ट येइ सेबे अहर्निशि ॥४६

तार फल कि कहिव कहने ना याय।
नित्य सिद्ध सेइ प्राय सिद्ध तार काय ॥४७

रागानुगा मार्गे जानि रायेर भजन।
सिद्ध देह तुल्य ताते प्राकृत नहे मन ॥४८

आमिह रायेर स्थाने शुनि कृष्णकथा।
शुनिते इच्छा हय यदि पुनः याह तथा ॥४९

मोर नाम लइह तिँह पाठाइल मोरे।
तोमा स्थाने कृष्णकथा शुनिबार तरे ॥५०

शीघ्र याह याह तिँह आछेन सभाते।
एत शुनि प्रद्युम्नमिश्र चलिल त्वरिते ॥५१

राय-पाश गेला राय प्रणति करिला।
आज्ञा कर ये लागिया आगमन हैला ॥५२

मिश्र कहे "महाप्रभु पाठाइल मोरे।
तोमार स्थाने कृष्णकथा शुनिबार तरे॥" ५३

शुनि रामानन्द मने हइला सन्तोषे।
कहिते लागिला किछु मनेर हरिषे ॥५४

"प्रभु-आज्ञाय कृष्णकथा शुनिते आइला एथा।
इहा वइ महाभाग्य आमि पाव कोथा॥" ५५

एत कहि तारे लञा निभृते वसिला।
"कि कथा शुनिते चाह" मिश्रेरे पुछिला ॥५६

तिँह कहे "ये कहिला विद्यानगरे।
सेइ कथा तुमि कहिबे आमारे" ॥५७

आनेर कि कथा, तुमि प्रभु उपदेष्टा।
आमि भिक्षुक विप्र, तुमि मोर पोष्टा ॥५८

भाल मन्द किछु आमि पुछिते ना जानि।
दीन देखि कृपा करि कहिबे आपुनि ॥५९

तबे रामानन्द क्रमे कहिते लागिला ।
कृष्णकथारसामृत-सिन्धु उथलिला ॥६०
आपने प्रश्न करि पाछे करेन सिद्धान्त ।
तृतीय प्रहर हैल नहे कथा-अन्त ॥६१
वक्ता श्रोता शुनि दुँहे प्रेमावेशे ।
आत्मस्मृति नाहि जाने दिनशेषे ॥६२
सेवक कहिल "दिन हैल अवसान ।"
तबे राय कृष्णकथा करिल विश्राम ॥६३
बहु सम्मान करि मिश्रे विदाय दिल ।
"कृतार्थ हइलाम" बलि चलिते लागिल ॥६४
घरे गिया मिश्र करिल स्नान भोजन ।
सन्ध्याकाले देखिते आइल प्रभुर चरण ॥६५
प्रभुर चरण वन्दे उल्लासितमन ।
प्रभु कहे "कृष्णकथा हइल श्रवण ॥"६६
मिश्र कहे "प्रभु मोरे कृतार्थ करिला ।
कृष्णकथामृतार्णवे मोरे डुबाइला ॥६७
रामानन्दराय-कथा कहने ना याय ।
मनुष्य नहे राय कृष्णभक्ति रसमय ॥६८
आर एक कथा राय कहिल आमारे ।
कृष्णकथा-वक्ता करि ना जानिह मोरे ॥६९
मोर मुखे कथा कहे आपने गौड़चन्द्र ।
यैछे कहाय तैछे कहि येन वीणायन्त्र ॥७०
मोर मुखे कथा इँहा करे परचार ।
पृथिवीते के जानिबे ए लीला ताहार ॥७१
ये सब शुनिनु कृष्णरसेर सागर ।
ब्रह्मादि देवेर ए सब ना हय गोचर ॥७२
हेन रस पान मोरे कराइले तुमि ।
जन्मे जन्मे तोमार पाय विकाइलाम आमि ।७३
प्रभु कहे "रामानन्द विनयेर खनि ।
आपनार कथा परमुण्डे देन आनि ॥७४
महानुभवेर एइमत स्वभाव हय ।
आपनार गुण नाहि आपने कहय ॥"७५
रामानन्द रायेर एइ कहिल गुणलेश ।
प्रद्युम्नमिश्रेर यैछे कैल उपदेश ॥७६
गृहस्थ हञा नहे षड्‌वर्गेर वशे ।
विषयी हइया सन्न्यासीरे उपदेशे ॥७७
एइ सब गुण ताँर प्रकाश करिते ।
मिश्रेरे पाठाइल ताँहा श्रवण करिते ॥७८
भक्तगुण प्रकाशिते प्रभु भाल जाने ।
नाना भङ्गीते प्रकाशि निज लाभ माने ॥७९
आर एक स्वभाव गौरेर शुन भक्तगण ।
ऐश्वर्य्य स्वभाव गूढ़ करे प्रकटन ॥८०
सन्न्यासी पण्डितगणेर करिते गर्व्वनाश ।
नीच शूद्रद्वारा करे धर्म्मेर प्रकाश ॥८१
भक्तितत्त्व प्रेम कहे राये करि वक्ता ।
आपनि प्रद्युम्नमिश्र सह हय श्रोता ॥८२
हरिदास द्वारा नाममाहात्म्यप्रकाश ।
सनातन द्वारा भक्ति सिद्धान्त विलास ॥८३
श्रीरूप द्वारा व्रजेर रसप्रेमलीला ।
के कहिते पारे गम्भीर चैतन्येर खेला ॥८४
श्रीचैतन्यलीला एइ अमृतेर सिन्धु ।
जगत साभाइते पारे यार एक बिन्दु ॥८५
चैतन्यचरितामृत नित्य कर पान ।
याहा हैते प्रेमानन्द भक्तितत्त्व ज्ञान ॥८६
एइमत महाप्रभु भक्तगण लञा ।
नीलाचले विहारये भक्ति प्रचारिया ॥८७

वङ्गदेशी एक विप्र प्रभुर चरिते ।
नाटक करि लञा आइल शुनाइते ॥८८
भगवान् आचार्य्य सने ताँर परिचय ।
ताँरे मिलि ताँर घरे करिल आलय ॥८९
प्रथमे नाटक तिँह ताँरे शुनाइल ।
ताँर सङ्गे अनेक बैष्णव नाटक शुनिल ॥९०
सबेइ प्रशंसे नाटक परम उत्तम ।
महाप्रभुके शुनाइते सबार हैल मन ॥९१
गीत श्लोक ग्रन्थ कवित्व येइ करि आने ।
प्रथमे शुनाय सेइ स्वरूपेर स्थाने ॥९२
स्वरूप-ठाञि उतरे यदि लय तार मन ।
तबे महाप्रभु-ठाञि कराय श्रवण ॥९३
रसाभास हय यदि सिद्धान्त-बिरोध ।
सहिते ना पारे प्रभु मने हय क्रोध ॥९४
अतएव प्रभु किछु आगे नाहि शुने ।
एइ मर्य्यादा प्रभु करियाछे स्थापने ॥९५
स्वरूपेर ठाञि आचार्य्य कैल निबेदन ।
"एक कवि प्रभुर नाटक करियाछे उत्तम ।९६
आदौ तुमि शुन यदि तोमार मने माने ।
पाछे महाप्रभुके तबे कराब श्रवणे ॥"९७
स्वरूप कहे "तुमि गोप परम उदार ।
ये से शास्त्र शुनिते इच्छा उपजे तोमार ॥९८
यद्वा तद्वा करिब वाक्ये हय रसाभास ।
सिद्धान्तविरुद्ध शुनिते ना हय उल्लास ॥९९
रस रसाभास यार नाहि ए विचार ।
भक्तिसिद्धान्त-सिन्धु नाहि पाय पार ॥१००
व्याकरण नाहि जाने, ना जाने अलङ्कार ।
नाटकालङ्कारज्ञान नाहिक याहार ॥१०१
कृष्णलीला वर्णिते ना जाने सेइ छार ।
बिशेषे दुर्गम एइ चैतन्यविहार ॥१०२
कृष्णलीला गौरलीला से करे वर्णन ।
गौरपादपद्म यार हय प्राणधन ॥१०३
ग्राम्य कविर कवित्व शुनिते हय दुःख ।
विदग्ध आत्मीयवाक्य शुनिते हय सुख ।१०४
रूप यैछे दुइ नाटक करियाछे आरम्भ ।
शुनिते आनन्द बाड़े यार मुखबन्ध ॥"१०५
भगवान् आचार्य्य कहे "शुन एकवार ।
तुमि शुनिले भाल मन्द जानिबे विचार ।१०६
दुइ तिन दिन आचार्य्य आग्रह करिला ।
तार आग्रहे स्वरूपेर शुनिते इच्छा हैला ।१०७
सबा लञा स्वरूप गोसाञि शुनिते बसिला ।
तबे सेइ कवि नान्दी श्लोक पड़िला ॥१०८

तथाहि वङ्गदेशीयविप्रस्य—

विकचकमलनेत्रे श्रीजगन्नाथसंज्ञे,
कनकरुचिरिहात्मन्यात्मतां यः प्रपन्नः ।
प्रकृतिजड़मशेषं चेतयन्नाविरासीत,
स दिशतु तव भव्यं कृष्णचैतन्यदेवः ॥४॥

टीका—यः कनकरुचिः गौरहरिः इह विकच-कमलनेत्रे श्रीजगन्नाथसंज्ञे आत्मनि आत्मतां प्रपन्नः सन् अशेषं प्रकृतिजड़ं चेतयन् आविरासीत, सः कृष्णचैतन्यदेवः तव भव्यं दिशतु ॥४॥

जिन्होंने स्वर्ण वर्ण धारण पूर्वक इस नीलाद्रि में पद्मपलाशलोचन जगन्नाथ देव के सहित अभेदात्मा होकर असंख्य जड़ प्रकृति के लोकों को चेतना प्रदान किया है उन कृष्ण चैतन्य देव तुम को कल्याण प्रदान करें ॥४॥

श्लोक शुनि सर्व्वलोक ताहारे वाखाने ।
स्वरूप कहे "एइ श्लोक करह व्याखाने ।१०९

कवि कहे "जगन्नाथ सुन्दरशरीर ।
चैतन्य गोसाञि ताहे शरीरी महाधीर ॥११०
सहज जड़ जगतेर चेतन कराइते ।
नीलाचले महाप्रभु हैला आविर्भूते ॥"१११
शुनिया सबार हैल आनन्दित मन ।
दुःख पाञा स्वरूप कहे सक्रोध वचन ॥११२
"आरे मूर्ख आपनार कैलि सर्व्वनाश ।
दुइ त ईश्वरे तोर नाहिक विश्वास ॥११३
पूर्णानन्द चितस्वरूप जगन्नाथ राय ।
ताँरे कैलि जड़ नश्वर प्राकृतकाय ॥११४
पूर्ण षड़ैश्वर्य्य चैतन्य स्वयं भगवान् ।
ताँरे कैलि क्षुद्रजीव स्फुलिङ्गसमान ॥११५
दुइ ठाञि अपराधे पाइबि दुर्गति ।
अतत्त्वज्ञ तत्त्ववर्णे तार एइ रीति ॥११६
आर एक करियाछ परम प्रमाद ।
देह-देहि-भेद ईश्वरे कैले अपराध ॥११७
ईश्वरेर नाहि कभु देह-देहि-भेद ।
स्वरूप-देह चिदानन्द नाहिक विभेद ॥"११८

तथाहि लघुभागवतामृते पूर्व्वखण्डे लोकपालागमनोत्तरे नवमाङ्कधृतकौर्म्मे—

देहदेहिविभागोऽयं नेश्वरे विद्यते क्वचित् ॥५॥

टीका—ईश्वरे अयं देहदेहिविभागः क्वचित न विद्यते ॥५॥

ईश्वर में कभी भी देह देही विभाग नहीं है ।५

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।९।३)—

नातः परं परम यद्भवतः स्वरूप-
मानन्दमात्रमविकल्पमविद्धवर्चः ।
पश्यामि विश्वसृजमेकमविश्वमात्मन्,
भूतेन्द्रियात्मकमदस्त उपाश्रितोऽस्मि ॥६॥

श्रीमद् भागवत के ३।९।३ में उक्त है—हे परमेश्वर ! आनन्दमय, चिन्मय, एवं अद्वितीय आप के स्वरूप से और श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है । हे परमात्मन् ! विश्वसृष्टि आपसे हुई है तथापि आप विश्व से भिन्न हैं, आप अद्वितीय हैं, एवं प्राणी जगत आप में ही अवस्थित है, मैं इस रूप का आश्रय ग्रहण करता हूँ ॥६॥

तथाहि तत्रैव (३।९।४)—

तद्वा इदं भुवनमङ्गलमङ्गलाय,
ध्याने स्म नो दर्शितं तत उपासकानां ।
तस्मै नमो भगवतेऽनुविधेम तुभ्यं,
यो नादृतो नरकभाग्भिरसत्प्रसङ्गैः ॥७

श्रीमद् भागवत के ३।९।४में उक्त है—हे भुवन मङ्गल ! आप क्या हम सब के कल्याणार्थ उपास्य रूप को ध्यान में प्रकट किये हैं ? हे भगवन् ! परिचर्या के द्वारा आपको नमस्कार करता हूँ ॥७॥

"काँहा पूर्णानन्दैश्वर्य्य कृष्ण-मायेश्वर ।
काँहा क्षुद्र जीव दुःखी मायार किङ्कर ।"११९

तथाहि श्रीभगवतसन्दर्भे धृतसर्व्वज्ञसूत्रम्—

ह्लादिन्या सम्बिदाश्लिष्टः सच्चिदानन्द ईश्वरः ।
स्वाविद्या-संवृतो जीवः संक्लेश निकराकरः ॥८॥

ह्लादिनी अर्थात आनन्द शक्ति एवं सम्बित अर्थात् ज्ञान शक्ति के द्वारा युक्त होने के कारण अखण्ड सच्चिदानन्द ईश्वर हैं किन्तु जीव ईश्वरीय माया शक्ति से आवृत होकर विविध क्लेश के आकर स्वरूप हुआ है ॥८॥

शुनि सभासदेर चित्ते हैल चमत्कार ।
सत्य कहे गोसाञि करेछेन तिरस्कार ॥१२०
शुनिया कविर हैल लज्जा भय विस्मय ।
हंसमध्ये वक येन किछु नाहि कय ॥१२१
तार दुःख देखि स्वरूप परम सदय ।
उपदेश कैल तारे यैछे हित हय ॥१२२

"याहा, भागवत पड़ वैष्णवेर स्थाने ।
एकान्त आश्रय कर चैतन्य चरणे ॥१२३
चैतन्येर भक्तगणेर नित्य कर सङ्ग ।
तबे जानिबे सिद्धान्तसमुद्रतरङ्ग ॥१२४
तबे त पाण्डित्य तोमार हइबे सफल ।
कृष्णेर स्वरूप लीला वर्णिबे निर्म्मल ॥१२५
एइ श्लोक करियाछ पाइया सन्तोष ।
तोमार हृदयेर अर्थे दुँहार लागे दोष ॥१२६
तुमि यैछे तैछे कह ना जानिया रीति ।
सरस्वती सेइ शब्दे करियाछे स्तुति ॥१२७
यैछे दैत्यारि करे कृष्णेर भर्त्सन ।
सेइ शब्दे सरस्वती करेन स्तवन ॥"१२८

तथाहि श्रीमद् भागवते (१०।२५।५)--

वाचालं बालिशं स्तब्धमज्ञं पण्डितमानिनं ।
कृष्णं मर्त्यमुपाश्रित्य गोपा मे चक्रुरप्रियं ॥६

टीका – गोपाः नन्दप्रभृतयः मर्त्यं कृष्णं उपाश्रित्य मे मम अप्रियं चक्रुः कृतवन्तः । कृष्णं किम्भूतं ?—वाचालं बहुवक्तारं, बालिशं शिशुं, पण्डितमानिनं, अज्ञं मूढ़ं, इति निन्दायां योजितापि इन्द्रस्य भारती स्तौति । तथा हि, वाचालं बालिश बालकवत् निरभिमानं, शुद्धं अपर--वन्द्यस्य अभावात् अनम्रं, अज्ञं सर्व्वज्ञं, पण्डितमानिनं ब्रह्मविदां पूजनीयं, कृष्णं सच्चिदानन्दरूपं परं ब्रह्म, मर्त्यं तथापि भक्तवत्सलतया मानवतया प्रतीयमानं ॥६॥

श्रीमद् भागवत के १०।२५।५ में उक्त है—इन्द्र कृष्ण को लक्ष्य करके कहे थे—कृष्ण वाचाल बालक, अविनीत, अज्ञ, पण्डिताभिमानी मनुष्य है, गोपकुल उसको आश्रय कर मेरा अप्रियाचरण किये हैं ।

देवराज के इस प्रकार निन्दा वचन से स्तुति का प्रकाश हुआ है । वाचाल शब्द से शास्त्र वक्ता का बोध होता है, जो शास्त्र योनि शब्द से प्रसिद्ध है । ऐसा होने पर भी बालकवत् निरभिमानी है; स्तब्ध अर्थात् अपर कोई वन्दनीय न होने के कारण-अनम्र है, अज्ञ, अर्थात् उनको छोड़कर अपर कोई ज्ञानी नहीं हैं। पण्डिताभिमानी अर्थात ब्रह्मज्ञ व्यक्ति वृन्द के वन्दनीय हैं, कृष्ण अर्थात सच्चिदानन्दमय पर ब्रह्म होकर भी भक्तवत्सलता निबन्धन मानववत् प्रतीयमान हैं ॥६॥

"ऐश्वर्य्यमदे मत्त इन्द्र येन मातोयाल ।
बुद्धिनाश हैल केवल नाहिक सम्भाल ॥१२९
इन्द्र बले 'मुञि कृष्णेर करियाछि निन्दन ।'
तारि मुखे सरस्वती करेन स्तवन ॥१३०
'वाचाल' कहिये वेद प्रवर्त्तक धन्य ।
'बालिश' तथापि शिशुप्राय गर्व्वशून्य ॥१३१
वन्द्याभावे अनम्र 'स्तब्ध' शब्द कय ।
याहा हैते अन्य विज्ञ नाहि, से 'अज्ञ' हय ॥१३२
पण्डितेर मान्यपात्र हय 'पण्डितमानी' ।
तथापि भक्तवात्सल्ये मनुष्य अभिमानी ॥१३३
जरासन्ध कहे "कृष्ण पुरुष अधम ।
तोमार सङ्गे ना युझिमु याह बन्धु हन ।'१३४
याँहा हैते अन्य पुरुष सकल अधम ।
सेइ हय पुरुषोत्तम सरस्वतीर मन ॥१३५
बान्धे सबारे ताते अविद्याबन्धु हय ।
अविद्या नाशक 'बन्धु हन' शब्दे कय ॥१३६
एइमत शिशुपाल करिल निन्दन ।
सेइ वाक्ये सरस्वती करेन स्तवन ॥१३७
तैछे एइ श्लोके तोमार अर्थे निन्दा आइसे ।
सरस्वतीर अर्थ शुन याते स्तुति भाषे ॥१३८
जगन्नाथ हय कृष्णेर आत्मस्वरूप ।
किन्तु इहो दारुब्रह्म स्थावरस्वरूप ॥१३९

ताँहा सह आत्मता एकरूप हैञा ।
कृष्ण एक तत्त्वरूप दुइ रूप हैञा ॥१४०
संसारतारण हेतु येइ इच्छाशक्ति ।
ताहार मिलन कहि एकताप्राप्ति ॥१४१
सकल संसारी लोकेर करिते उद्धार ।
गौर जङ्गमरूपे कैल अवतार ॥१४२
जगन्नाथेर दर्शने खण्डाये संसार ।
सब देशेर सब लोक नारे आसिबार ॥१४३
श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु देशे देशे याञा ।
सब लोक निस्तारिल जङ्गम ब्रह्म हञा ॥१४४
सरस्वतीर अर्थ एइ कहिल विवरण ।
एहो भाग्य तोमार यैछे करिले वर्णन ॥१४५
कृष्णे गालि दिते करे नाम उच्चारण ।
सेइ नाम हय तार मुक्तिर कारण ॥"१४६
तबे सेइ कवि सबार चरणे पड़िञा ।
सबार शरण लैल दन्ते तृण लञा ॥१४७
तबे सब भक्त ताँरे अङ्गीकार कैल ।
ताँर गुण कहि महाप्रभुरे मिलाइल ॥१४८
सेइ कवि सर्व्वत्यागी रहिला नीलाचले ।
गौरभक्तगणकृपा के कहिते पारे ? ॥१४९
एइ त कहिल प्रद्युम्नमिश्र-बिवरण ।
प्रभु-आज्ञाय कैल कृष्णकथार श्रवण ॥१५०
तार मध्ये कहिल रामानन्देर महिमा ।
आपने श्रीमुखे प्रभु वर्णे याँर सीमा ॥१५१
प्रस्तावे कहिल कविर नाटकविवरण ।
अज्ञ हञा श्रद्धाय पाइल प्रभुर चरण ॥१५२
श्रीकृष्णचैतन्यलीला अमृतेर सार ।
एक लीलाप्रवाहे वहे शत शत धार ॥१५३
श्रद्धा करि एइ लीला येइ पड़े शुने ।
गौरलीला भक्ति भक्तरसतत्त्व जाने ॥१५४
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१५५

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे प्रद्युम्नमिश्रोपाख्यानं नाम पञ्चमः परिच्छेदः ॥५॥

षष्ठ परिच्छेद ।

कृपागुणैर्यः कुगृहान्धकूपा
दुद्धृत्य भङ्ग्या रघुनाथदासं ।
न्यस्य स्वरूपे विदधेऽन्तरङ्गं
श्रीकृष्णचैतन्यममुं प्रपद्ये ॥१॥

टीका—यः गौरः कृपागुणैः कुगृहान्धकूपात् रघुनाथदासं भङ्ग्या उद्धृत्य स्वरूपे न्यस्य अन्तरङ्गं विदधे, अहं अमुं कृष्णचैतन्यं प्रपद्ये ॥१॥

जिन्होंने करुणाकरके रघुनाथ दासको संसार रूप कुगृहान्धकूप से भङ्गी पूर्वक परित्राण पूर्वक ले आकर स्वरूप दामोदर को समर्पण कर अन्तरङ्गो पासना का अवसर प्रदान किये हैं, मैं उन श्रीचैतन्य देवका आश्रय ग्रहण करता हूँ ॥१॥

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र, जय गौरभक्तवृन्द ॥१
एइमत गौरचन्द्र भक्तगण सङ्गे ।
नीलाचले नाना लीला करे नाना रङ्गे ॥२
यद्यपि अन्तरे कृष्णवियोग बाड़ाय ।
बाहिरे ना प्रकाशये भक्तदुःख भय ॥३
उत्कट विरहदुःख यबे बाहिराय ।
तबे ये वैकल्य प्रभुर, वर्णन ना याय ॥४

रामानन्देर कृष्णकथा, स्वरूपेर गान ।
विरह-वेदनाय प्रभुर राखये पराण ॥५
दिने प्रभु नाना सङ्गे हय अन्यमना ।
रात्रिकाले बाड़े प्रभुर विरह-वेदना ॥६
ताँर सुख हेतु सङ्गे रहे दुइजना ।
कृष्णरस श्लोक गीते करेन सान्त्वना ॥७
सुवल यैछे पूर्व्वे कृष्णसुखेर सहाय ।
गौरसुखदान हेतु तैछे राम राय ॥८
पूर्व्वे यैछे राधार सहाय ललिता प्रधान ।
तैछे स्वरूप गोसाञि राखे महाप्रभुर प्राण ।९
एइ दुइ जनार सौभाग्य कहने ना याय ।
प्रभुर अन्तरङ्ग बलि याँरे लोके गाय ॥१०
एइमत विहरे गौर लञा भक्तगण ।
एवे शुन यैछे रघुनाथेर मिलन ॥११
पूर्व्वे शान्तिपुरे रघुनाथ यबे आइला ।
महाप्रभु कृपा करि तारे शिक्षाइला ॥१२
प्रभुर शिक्षाते तिँह निज घरे याय ।
मर्कट-वैराग्य छाड़ि हैला विषयीर प्राय ॥१३
भितरे वैराग्य, बाहिरे करे सर्व्व कर्म्म ।
देखिया त माता पितार आनन्दित मन ॥१४
मथुरा हैते प्रभु आइला वार्त्ता यबे पाइला ।
प्रभु-पाश चलिबारे उद्योग करिला ॥१५
हेनकाले मुलुकेर एक म्लेच्छ अधिकारी ।
सप्तग्राम मुलुकेर से हय चौधुरी ॥१६
हिरण्यदास मुलुक निल मोकरा करिया ।
तार अधिकार गेल, मरे से देखिया ॥१७
बार लक्ष देय राजाय, साधे विश लक्ष ।
से तुड़ुक किछु ना पाञा हैल प्रतिपक्ष ॥१८
राजघरे केफियत दिया उजीर आनिल ।
हिरण्यदास पलाइल रघुनाथेरे बान्धिल ॥१९
प्रतिदिन रघुनाथे करये भर्त्सना ।
"बाप ज्येठा आनह, नहे पाइबे यातना ॥"२०
मारिते आनये यदि, देखि रघुनाथे ।
मन फिरि याय तबे ना पारे मारिते ॥२१
विशेष कायस्थबुद्धेच अन्तरे करे डर ।
मुखे तर्ज्जे गर्ज्जे मारिते सभय अन्तर ॥२२
तबे रघुनाथ किछु चिन्तिल उपाय ।
मिनति करिया बले सेइ म्लेच्छ पाय ॥२३
"आमार पिता ज्येठा हय तोमार दुइ भाइ ।
भाइ भाइ तोमरा कलह कर सर्व्वदाइ ॥२४
कभु कलह कभु प्रीति इहार निश्चय नाञि ।
कालि पुनः तिन भाइ हबे एक ठाञि ॥२५
आमि यैछे पितार, तैछे तोमार बालक ।
आमि तोमार लाल्य, तुमि आमार पालक ॥२६
पालक हैञा पाल्येरे ताड़िते ना जुयाय ।
तुमि सर्व्व शास्त्र जान जिन्दापीर प्राय ॥"२७
एत शुनि म्लेच्छेर मन आर्द्र हैल ।
दाड़ि वाहि अश्रु पड़े कान्दिते लागिल ॥२८
म्लेच्छ बले "आजि हैते तुमि मोर पुत्र ।
आजि तोमा छाड़ाइमु करि एक सूत्र ॥"२९
उजिरे कहिया रघुनाथे छाड़ाइल ।
प्रीत करि रघुनाथे कहिते लागिल ॥३०॥
"तोमार ज्येठा निर्वुद्धि अष्ट लक्ष खाय ।
आमिह भागी, आमारे किछु दिवारे जुयाय ३१
याह तुमि, तोमार ज्येठा मिलाह आमारे ।
ये भाल हय करुन् भार दिल ताँरे ॥"३२

रघुनाथ आसि तबे ज्येठा मिलाइल ।
म्लेच्छ सहित वश कैल सब शान्त हैल ॥३३
एइमत रघुनाथेर वत्सरेक गेल ।
द्वितीय वतसरे पलाइते मन कैल ॥३४॥
रात्रे उठि एकला चलिल पलाइया ।
दूर हैते पिता तारे आनिल धरिया ॥३५॥
एइमत बारे बारे पलाय, धरि आने ।
तबे तार माता कहे तार पिता सने ॥३६॥
"पुत्र बातुल हैल राखह बान्धिया ।"
तार पिता कहे तारे निर्व्विण्ण हइया ॥३७
"इन्द्रसम ऐश्वर्य्य, स्त्री अप्सरासम ।
ए सब बान्धिते नारिलेक यार मन ॥३८॥
दड़िर बन्धने तारे राखिबे केमते ?
जन्मदाता पिता नारे प्रारब्ध खण्डाते ॥३९
चैतन्यचन्द्रेर कृपा हइयाछे इहारे ।
चैतन्य प्रभुर बातुल के राखिते पारे ॥४०॥"
तबे रघुनाथ किछु विचारिल मने ।
नित्यानन्द गोसाञिर पाश चलिला आरदिने ॥४१॥
पानिहाटि ग्रामे पाइल प्रभुर दर्शन ।
कीर्त्तनीया सेवक सङ्गे आर बहुजन ॥४२॥
गङ्गातीरे बृक्षमूले पिण्डार उपरे ।
वसियाछेन प्रभु येन सूर्य्योदय करे ॥४३॥
तले उपरे बहुभक्त हञाछे वेष्टित ।
देखि प्रभुर प्रभाव रघुनाथ विस्मित ॥४४॥
दण्डवत हञा पड़िल कतदूरे ।
सेवक कहे "रघुनाथ दण्डवत करे ॥४५॥"
शुनि प्रभु कहे "चोरा दिलि दरशन ।
आय आय आजि तोर करिब दण्डन ॥४६।"
प्रभु बोलाय, तिँह निकट ना करे गमन ।
आकर्षिया प्रभु तार माथे धरिल चरण ॥४७
कौतुकी नित्यानन्द सहजे दयामय ।
रघुनाथे कहे किछु हइया सदय ॥४८॥
"निकट ना आइस चोरा, भाग दूरे दूरे ।
आजि लागि पाइयाछि दण्डिव तोमारे ॥४९
दधिचिँड़ा भक्षण कराह मोर गणे ॥"
शुनिया आनन्द हैल रघुनाथ-मने ॥५०॥
सेइक्षणे निजलोक पाठाइल ग्रामे ।
भक्ष्य द्रव्य लोक सब ग्राम हैते आने ॥५१॥
चिँड़ा दधि दुग्ध सन्देश आर चिनि कला ।
सब द्रव्य आनाइया चौदिके धरिला ॥५२॥
महोतसब नाम शुनि ब्राह्मण-सज्जन ।
आसिते लागिल लोक असंख्यगणन ॥५३॥
आर ग्रामान्तर हैते सामग्री मागाइल ।
शत दुइ चारि होलना ताँहा आनाइल ॥५४
बड़ बड़ मृतकुण्डिका आनाइल पाँच साते ।
एक विप्र प्रभु लागि चिँड़ा भिजाय ताते ॥५५
एक ठाञि तप्तदुग्धे चिँड़ा भिजाइया ।
अर्द्धेक छानिल दधि चिनि कला दिया ॥५६
अर्द्धेक घनावृत दुग्धेते छानिल ।
चाँपाकला चिनि घृत कर्पूर ताते दिल ॥५७।
धुति परि प्रभु यदि पिण्डाते वसिला ।
सात कुण्डि विप्र ताँर आगेते धरिला ॥५८॥
चवुतरा उपर यत प्रभुर निजगण ।
वड़ वड़ लोक बसिला, मण्डलरचन ॥५९॥
रामदास, सुन्दरानन्द, दास गदाधर ।
मुरारी, कमलाकर, सदाशिव, पुरन्दर ॥६०

धनञ्जय, जगदीश, परमेश्वर दास ।
महेश, गौरीदास, आर होड़ कृष्णदास ॥६१
उद्धारणदत्त आदि यत आर निज जन ।
उपरे बसिला सब, के करे गणन ॥६२॥
शुनि पण्डित भट्टाचार्य्य यत विप्र आइला ।
मान्य करि प्रभु सबारे उपरे वसाइला ॥६३
दुइ दुइ मृत-कुण्डिका सबार आगे दिल ।
एके दुग्ध-चिँड़ा, आर दधि-चिँड़ा कैल ॥६४
आर यत लोक सब चौतरा-तलाने ।
मण्डलीबन्धने वैसे, नाहिक गणने ॥६५॥
एकेक जनेरे दुइ दुइ होलना दिल ।
दधि-चिँड़ा दुग्ध-चिँड़ा दुइते भिजाइल ॥६६
कोन कोन विप्र उपरे स्थान ना पाइया ।
दुइ होलनाय चिँड़ा भिजाय गङ्गातीरे गिया ।६७
तीरे स्थान ना पाइया आर यत जन ।
जले नामि दधि चिँड़ा करये भक्षण ॥६८॥
केह उपरे, केह तले, केह गङ्गातीरे ।
विश जन तिन ठाँइ परिवेशन करे ॥६९॥
हेनकाले आइल तथा राघव पण्डित ।
हासिते लागिला देखि हइया बिस्मित ॥७०॥
निसक्ड़ि नानामत प्रसाद आनिल ।
प्रभुर आगे दिया भक्तगणे वाँटि दिल ॥७१॥
प्रभुरे कहे 'तोमा लागि भोग लागाइल ।
इँहा उत्सब कर, घरे प्रसाद रहिल ॥७२॥
प्रभु कहे, ए द्रव्य दिने करिये भोजन ।
रात्रे तोमार घरे प्रसाद करिव भक्षण ॥७३॥
गोपजाति आमि, वहु गोपगण सङ्गे ।
आमि सुख पाइ एइ पुलिन-भोजनरङ्गे ॥"७४

राघवे वसाञा दुइ कुण्डी देयाइल ।
राघव द्विविध चिँड़ा ताहाते भिजाइल ॥७५
सकल लोकेर चिँड़ा पूर्ण यबे हैल ।
ध्याने तवे प्रभु महाप्रभुरे आनिल ॥७६॥
महाप्रभु आइला देखि निताइ उठिला ।
ताँरे लञा सबार चिँड़ा देखिते लागिला ॥७७
सकल कुण्डी होलनार चिँड़ा एकेक ग्रास ।
महाप्रभुर मुखे देन करि परिहास ॥७८॥
हासि महाप्रभु आर एक ग्रास लञा ।
ताँर मुखे दिया खओयाय हासिया हासिया ॥७९
एइमत निताइ वेड़ाय सकल मण्डले ।
दाड़ाइया रङ्ग देखे वैष्णव सकले ॥८०॥
कि करिया वेड़ाय इहा केह नाहि जाने ।
महाप्रभुर दर्शन पाय कोन् भाग्यवाने ॥८१॥
तवे हासि नित्यानन्द वसिला आसने ।
चारि कुण्डी आरोया चिँड़ा राखिला डाहिने ८२
आसन दिया महाप्रभुरे ताँहा वसाइला ।
दुइ भाइ तवे चिँड़ा खाइते लागिला ॥८३॥
देखि नित्यानन्द प्रभु आनन्दित हैला ।
कत कत भावावेश प्रकाश करिला ॥८४॥
आज्ञा दिल, हरि वलि करह भोजन ।
हरि हरि ध्वनि उठि भरिल भुवन ॥८५॥
हरि हरि वलि वैष्णव करये भोजन ।
पुलिन-भोजन सबार हइल स्मरण ॥८६॥
नित्यानन्द महाप्रभु कृपालु उदार ।
रघुनाथेर भाग्ये एत कैल अङ्गीकार ॥८७॥
नित्यानन्द-प्रभुर-कृपा जानिवे कोन् जन ।
महाप्रभु आनि कराय पुलिन-भोजन ॥८८॥

श्रीरामदासादि गोप प्रेमाविष्ट हैला ।
गङ्गातीरे यमुना-पुलिन ज्ञान कैला ॥८६
महोत्सव शुनि पसारि नाना ग्राम हैते ।
चिँड़ा दधि सन्देश कला आनिल वेचिते ।९०
यत द्रव्य मूल्य लञा आइसे, सब मूल्ये लय ।
तारि द्रव्य मूल्य दिया ताहारे खाओयाय ।९१
कौतुक देखिते आइसे यत यत जन ।
सेइ चिँड़ा दधि कला करिल भक्षण ॥९२
भोजन करि नित्यानन्द आचमन कैल ।
चारि कुण्डीर अवशेष रघुनाथे दिल ॥९३
आर तिन कुण्डी येइ अवशेष छिल ।
ग्रास ग्रास करि विप्र सब भक्ते दिल ॥९४
पुष्पमाला विप्र आनि प्रभु-आगे दिल ।
श्रीहस्ते ताहा सबा कारे बाँटि दिल ॥९५
आनन्दित रघुनाथ प्रभुर शेष पाञा ।
आपनार गण सहित खाइल बाँटिया ॥९६
एइत कहिल नित्यानन्देर विहार ।
चिँड़ा-दधि-महोत्सव ख्यात नाम यार ॥९७
प्रभु विश्राम कैला, दिन शेष हैल ।
राघवमन्दिरे तबे कीर्तन आरम्भिल ॥९८
भक्तगण सब नाचाइया नित्यानन्द राय ।
शेषे नृत्य करेन प्रेमे जगत भासाय ॥९९
महाप्रभु तार नृत्य करेन दर्शन ।
सबे नित्यानन्द देखे,ना देखे अन्य जन ।१००
नित्यानन्देर नृत्य येन ताहारि नर्त्तन ।
उपमा दिवार नाहि ए तिन भुवन ॥१०१
नृत्येर माधुरी केवा पारे वर्णिवारे ।
महाप्रभु आइसे याँर नृत्य देखिवारे ॥१०२
नृत्य करि प्रभु यबे विश्राम करिला ।
भोजनेर लागि पण्डित निवेदन कैला ॥१०३
भोजने वसिला प्रभु निजगण लञा ।
महाप्रभुर आसन डाहिने पातिञा ॥१०४
महाप्रभु आसि सेइ आसने वसिला ।
देखि राघवेर मने आनन्द बाड़िला ॥१०५
दुइभाइ-आगे प्रसाद आनिया धरिला ।
सकल वैष्णव शेष परिवेशन कैला ॥१०६
नानाप्रकार पायस पिठा दिव्य शाल्य अन्न ।
अमृत निन्दये यैछे विविध व्यञ्जन ॥१०७
राघवेर ठाकुरेर प्रसाद अमृतेर सार ।
महाप्रभु याहा खाइते आइसे बार बार ।१०८
पाक करि राघव यबे भोग लागाय ।
महाप्रभु लागि भोग पृथक बाड़ाय ॥१०९
प्रतिदिन महाप्रभु करेन भोजन ।
मध्ये मध्ये प्रभु तारे देन दरशन ॥११०
दुइ भाइके आनिया राघव परिवेशे ।
यत्न करि खाओयाय,ना रहे अवशेषे ॥१११
कत उपहार आने, हेन नाहि जानि ।
राघवगृहे पाक करे राधा ठाकुराणी ॥११२
दुर्वासार ठाञि तिँह पाइयाछेन बरे ।
अमृत हैते ताँर पाक अधिक मधुरे ॥११३
सुगन्धि सुन्दर प्रसाद माधुर्य्येर सार ।
दुइ भाइ ताहा खाञा सन्तोष अपार ॥११४
भोजने वसिते रघुनाथे कहे सर्व्वजन ।
पण्डित कहे 'इहो' पाछे करिवे भोजन ॥'११५
भक्तगण आकण्ठ भरिया करिल भोजन ।
हरिध्वनि करि उठि कैल आचमन ॥११६

भोजन करि दुइ भाइ कैल आचमन ।
राघव आनि पराइल माल्यचन्दन ॥११७

बिड़ा खाओयाइया कैल चरण वन्दन ।
भक्तगणे दिल बिड़ा माल्यचन्दन ॥११८
राधवेर कृपा रघुनाथेर उपरे ।
दुइ भायेर अवशिष्ट पात्र दिल तारे ॥११९
कहिल "चैतन्य प्रभु करियाछेन भोजन ।
ताँर अवशेष पाइले तोमार खण्डिल बन्धन ॥"
१२०॥

भक्तचित्ते भक्तगृहे सदा अवस्थान ।
कभु गुप्त, कभु व्यक्त, स्वतन्त्र भगवान् ॥१२१
सर्व्व व्यापक प्रभु, सदा सर्व्वत्रवास ।
इहाते संशय यार सेइ याय नाश ॥१२२
प्राते नित्य नन्द गङ्गास्नान करिया ।
सेइ वृक्षमूले वसिला निजगण लञा ॥१२३
रघुनाथ आसि कैला चरणवन्दन ।
राघवपण्डित द्वारा कैल निवेदन ॥१२४
"अधम पामर मुञि हीन जीवाधम ।
मोर इच्छा हय पाङ चैतन्यचरण ॥१२५
वामन हइया चन्द्र धरिवारे चाय ।
अनेक यत्न कैनु याइते कभु सिद्ध नय ॥१२६
यतबार पलाङ मुञि गृहादि छाड़िया ।
पिता माता दुइ मोरे राखये बान्धिया ॥१२७
तोमार कृपा विने केह चैतन्य ना पाय ।
तुमि कृपा कैले तारे अधमेहो पाय ॥१२८
अयोग्य मुञि, निवेदन करिते करोँ भय ।
मोरे चैतन्य देह गोसाञि हइया सदय ॥१२९

मोर माथे पद धरि करह प्रसाद ।
निर्व्विघ्ने चैतन्य पाङ कर आशीर्व्वाद ॥' १३०
शुनि हासि कहे प्रभु सब भक्तगणे ।
"इहार विषयसुख इन्द्रसुखसमे ॥१३१
चैतन्यकृपाते सेहो नाहि भाय मने ।
सवे आशीर्व्वाद कर पाय चैतन्यचरणे ॥
१३२॥

कृष्णपादपद्मगन्ध येइ जन पाय ।
ब्रह्मलोक-आदिसुख तारे नाहि भाय ॥१३३

तथाहि श्रीमद्‌भागवते (५।१४।४३)—

यो दुस्त्यजान दारसुतान् सुहृद्राज्यं हृदि स्पृशः ।
जहौ युवैव मलवदुत्तमश्लोकलालसः ॥२॥

श्रीमद्‌ भागवत के ५।१४।४३ में उक्त है—
भरत नृपति भगवत् प्राप्ति हेतु यौवनावस्था में अभिलषित एवं दुष्परिहार्य पत्नी पुत्र, बन्धु, राज्य प्रभृति को मलवत् विसर्ज्जन किये थे ॥२॥

तवे रघुनाथ प्रभु निकट बोलाइला ।
तार माथे पद धरि कहिते लागिला ॥१३४
"तुमि कराइले एइ पुलिन भोजन ।
तोमाय कृपा करि चैतन्य कैला आगमन ॥
१३५॥

कृपा करि कैला दुग्ध-चिपीट भक्षण ।
नृत्य देखि रात्रे कैला प्रसाद भोजन ॥१३६
तोमा उद्धारिते गौर आइला आपने ।
छुटिल तोमार यत विघ्नादि बन्धने ॥१३७
स्वरूपेर स्थाने तोमा करिबे समर्पणे ।
अन्तरङ्ग भृत्य करि राखिवेन चरणे ॥१३८
सब भक्तगणे तारे आशीर्व्वाद कराइला ।
ताँ सबार चरण रघुनाथ वन्दिला ॥१३९

प्रभु-आज्ञा लञा वैष्णवेर आज्ञा लैल ।
राघवसहिते निभृते युक्ति करिल ॥१४०
युक्ति करि शत मुद्रा सोणा तोला साते ।
निभृते दिल प्रभुर भाण्डारीर हाते ॥१४१
तारे निषेधिल "प्रभुके एबे ना कहिबा ।
निज घरे याबे यबे तबे निवेदिबा ॥१४२
तबे राघवपण्डित तारे घरे लञा गेला ।
ठाकुरदर्शन कराइया माला-चन्दन दिला ॥
१४३॥

अनेक प्रसाद दिल पथे खाइबारे ।
तबे पुनः रघुनाथ कहे पण्डितेरे ॥१४४
"प्रभुर सङ्गे प्रभुर भृत्याश्रित जन ।
पूजिते चाहिये आमि सबार चरण ॥१४५
बिश पञ्चाश दश बार पञ्चदश छय ।
मुद्रा देह विचारिया यार योग्य यत हय ॥"
१४६॥

सब लेखा करिया राघव-पाश दिला ।
यार नामे यत, राघव चिठी लेखाइला ।१४७
एकशत मुद्रा आर सोना तोलाद्वय ।
पण्डितेर आगे दिल करिया विनय ॥१४८
ताँर पदधूलि लञा स्वगृहे आइला ।
नित्यानन्दकृपा पाञा कृतार्थ मानिला ॥१४८
सेइ हैते अभ्यन्तरे ना करे गमन ।
बाहिरे दुर्गामण्डपे करेन शयन ॥१४६
ताँहा जागि रहे सब रक्षकगण ।
पलाइते करे नाना उपाय चिन्तन ॥१५०
हेनकाले गौड़देशेर सब भक्तगण ।
प्रभुरे देखिते नीलाचले करिला गमन ॥१५१

ताँ सबार सङ्गे रघु याइते ना पारे ।
प्रसिद्ध प्रकट सङ्ग तबहि धरा पड़े ॥१५२
एइमत चिन्तिते दैवे एकदिने ।
बाहिरे देवीमण्डपे करियाछे शयने ॥१५३
दण्ड चारि रात्रि यबे आछे अवशेष ।
यदुनन्दन आचार्य्य तबे करिल प्रवेश ॥१५४
वासुदेवदत्तेर तिँहो हय अनुगृहीत ।
रघुनाथेर गुरु तिँहो हय पुरोहित ॥१५५
अद्वैत आचार्य्येर तिँहो शिष्य अन्तरङ्ग ।
आचार्य्य-आज्ञाते माने चैतन्य प्राणधन ॥१५६
अङ्गने आसिया तिँह यबे दाण्डाइला ।
रघुनाथ आसि तबे दण्डवत कैला ॥१५७
ताँर एक शिष्य ताँर ठाकुरेर सेवा करे ।
सेवा छाड़ियाछे, तारे साधिबार तरे ॥१५८
रघुनाथ कहे "ताँरे करह साधन ।
सेवा येन करे, आर नाहिक ब्राह्मण ॥" १५६
एत कहि रघुनाथे लइया चलिला ।
रक्षक सब शेष रात्रे निद्राय पड़िला ॥१६०
आचार्य्येर घर इहार पूर्व्व दिशाते ।
कहिते शुनिते दुँहे चले सेइ पथे ॥१६१
अर्द्ध पथे रघुनाथ कहे गुरुर चरणे ।
"आमि सेइ विप्र साधि पाठाव तब स्थाने ॥
१६२॥

तुमि घर याह सुखे, मोरे आज्ञा हय ।"
एइ छले आज्ञा मागि करिल निश्चय ॥१६३
"सेवक रक्षक आर केह नाहि सङ्गे ।
पलाइते आमार भाल एइ त प्रसङ्गे ॥" १६४

एत चिन्ति पुर्व्वमुखे करिला गमन ।
उलटिया चाहे पाछे, नाहि कोन जन ॥१६५
श्रीचैतन्य-नित्यानन्द-चरण चिन्तिया ।
पथ छाड़ि उपपथे यायेन धाइया ॥१६६
पञ्चदशक्रोश चलि गेलेन एक दिने ।
सन्ध्याकाले रहिल एक गोपेर बाथाने ॥१६७
उपवासी देखि गोप दुग्ध आनि दिला ।
सेइ दुग्ध पान करि पड़िया रहिला ॥१६८
हेथा ताँर सेवक रक्षक ताँरे ना देखिया ।
ताँर गुरु पाशे वार्त्ता पुछिलेन गिया ॥१६९
तिँहो कहे "आज्ञा मागि गेला निज घर ।'
पलाइल रघुनाथ उठिल कोलाहल ॥१७०
ताँर पिता कहे "गौड़ेर सब भक्तगण ।
प्रभुस्थाने नीलाचले करिला गमन ॥१७१
सेइ सङ्गे रघुनाथ गेला पलाइया ।
दश जन याह तारे आनह धरिया ॥''१७२
शिवानन्दे पत्री दिल विनय करिया ।
"आमार पुत्रेरे तुमि दिबे बाहुड़िया ॥''१७३
झाँकरा पर्य्यन्त गेल सेइ दश जन ।
झाँकराते पाइल गिया वैष्णवेर गण ॥१७४
पत्री दिया शिवानन्दे वार्त्ता पुछिल ।
शिवानन्द कहे "तिँहो एथा ना आइल ॥''
१७५॥
बाहुड़िया दश सेइ जन आइल घर ।
ताँर माता पिता हैल चिन्तित-अन्तर ॥१७६
एथा रघुनाथ दास प्रभाते उठिया ।
पूर्व्वमुख छाड़ि चले दक्षिणमुख हञा ॥१७७

छत्रभोग पार हञा छाड़िया सरान ।
कुग्राम दिया दिया करिल प्रयाण ॥१७८
भक्षणापेक्षा नाहि, समस्त दिवस गमन ।
क्षुधा नाहि बाधे, चैतन्यचरण प्राप्त्ये मन ॥
१७९॥
कभु चर्व्वन, कभु रन्धन, कभु दुग्धपान ।
यबे येइ मिले, ताते राखे निज प्राण ॥१८०
बारो दिने चलि गेला श्रीपुरुषोत्तम ।
पथे तिन दिन मात्र करिल भोजन ॥१८१
स्वरूपादि सह गोसाञि आछेन वसिया ।
हेनकाले रघुनाथ मिलिला आसिया ॥१८२
अङ्गनेते दूरे रहि करेन प्रणिपात ।
मुकुन्ददत्त कहे "एइ आइला रघुनाथ ॥''
१८३॥
प्रभु कहे आइस,''तिँहो धरिल चरण ।
उठि प्रभु कृपाय तारे करिल आलिङ्गन ।१८४
स्वरूपादि सब भक्तेर चरण वन्दिल ।
प्रभु कृपा देखि सबे आलिङ्गन कैल ॥१८५
प्रभु कहे "कृष्णकृपा वलिष्ठ सबा हैते ।
तोमाके काड़िल विषय-विष्ठा-गर्त्त हैते ॥''
१८६॥
रघुनाथ कहे "आमि कृष्ण नाहि जानि ।
तब कृपा काड़िल आमा एइ आमि मानि ॥''
१८७॥
प्रभु कहेन "तोमार पिता ज्येठा दुइजने ।
चक्रवर्त्तिसम्बन्धे आमि आजा करि माने ॥१८८
चक्रवर्त्तीर दूँहे हय भ्रातृरूप दास ।
अतएव ताँरे आमि करि परिहास ॥१८९

इहार बाप ज्येठा विषय-विष्ठा-गर्त्तेर कीड़ा ।
सुख करि माने विषय-विषेर महापीड़ा ॥१९०
यद्यपि ब्रह्मण्य, करे ब्राह्मणेर सहाय ।
शुद्ध वैष्णव नहे वैष्णवेर प्राय ॥१९१
तथापि विषयस्वभाव, करे महा अन्ध ।
सेइ कर्म्म कराय, याते हय भवबन्ध ॥१९२
हेन विषय हैते कृष्ण उद्धारिलेन तोमा ।
कहने ना याय कृष्णकृपार महिमा ॥"१९३
रघुनाथेर क्षीणता मालिन्य देखिञा ।
स्वरूपेरे कहे कृपा-आर्द्रचित्त हञा ॥१९४
"एइ रघुनाथ आमि सँपिनु तोमारे ।
पुत्रभृत्यरूपे तुमि कर अङ्गीकारे ॥१९५
तिन रघुनाथ नाम हय मोर स्थाने ।
स्वरूपेर रघु आजि हैते इहार नामे ॥"१९६
एत कहि रघुनाथेर हस्त धरिल ।
स्वरूपेर हस्ते तारे समर्पण कैल ॥१९७
स्वरूप बले "महाप्रभुर ये आज्ञा हइल ।"
एत कहि रघुनाथे पुनः आलिङ्गिल ॥१९८
चैतन्येर भक्तवात्सल्य कहिते ना पारि ।
गोविन्देरे कहे रघुनाथे दया करि ॥१९९
"पथे इहो करियाछे बहुत लङ्घन ।
कत दिन कर इँहार भाल सन्तर्पण ॥"२००
रघुनाथे कहे "याञा कर सिन्धुस्नान ।
जगन्नाथ देखि आसि करिह भोजन ॥"२०१
एत बलि प्रभु मध्याह्न करिते उठिला ।
रघुनाथदास सब भक्तेरे मिलिला ॥२०२
रघुनाथे प्रभुर कृपा देखि भक्तगण ।
विस्मित हैया करे तार भाग्य प्रशंसन ॥२०३

रघुनाथ समुद्रे याञा स्नान करिला ।
जगन्नाथ देखि पुनः गोविन्दपाश आइला ॥
२०४॥
प्रभुर अवशिष्ट पात्र गोविन्द तारे दिल ।
आनन्दित हञा रघु महाप्रसाद पाइल ॥२०५
एइमत रहे तिहो स्वरूपचरणे ।
गोविन्द प्रसाद तारे देन पञ्च दिने ॥२०६
आर दिन हैते पुष्प-अञ्जलि देखिया ।
सिंहद्वारे खाड़ा रहे भिक्षार लागिया ॥२०७
जगन्नाथेर लेवक यत विषयीर गण ।
सेवा सारि रात्रे करे गृहेते गमन ॥२०८
सिंहद्वारे अन्नार्थी वैष्णव देखिया ।
पसारिर ठाञि अन्न देयान कृपा त करिया ॥
२०९॥
एइमत सर्व्वकाल आछे व्यवहारे ।
निष्किञ्चन भक्त खाड़ा हय सिंहद्वारे ॥२१०
सर्व्व दिन करे वैष्णव नामसङ्कीर्त्तन ।
स्वच्छन्दे करेन जगन्नाथ दरशन ॥२११
केह छत्रे याञा खाय येवा किछु पाय ।
केह रात्रे भिक्षा लागि सिंहद्वारे रय ॥२१२
महाप्रभुर भक्त गणेर वैराग्य प्रधान ।
याहा देखि प्रीत हय गौर भगवान ॥२१३
प्रभुके गोविन्द कहे "रघु प्रसाद ना लय ।
रात्रे सिंहद्वारे खाड़ा हञा मागि खाय ॥"
२१४॥
शुनि तुष्ट हञा प्रभु कहिते लागिला ।
"भाल कैल वैरागीर धर्म्म आचरिला ॥२१५

वैरागी करिबे सदा नामसङ्कीर्त्तन ।
मागिया खाइया करे जीवनरक्षण ॥२१६
वैरागी हइया येवा करे परापेक्षा ।
कार्य्यसिद्धि नहे, कृष्ण करेन उपेक्षा ॥२१७
वैरागी हइया करे जिह्वार लालस ।
परमार्थ याय तार, हय रसेर वश ॥२१८
वैरागीर कृत्य सदा नामसङ्कीर्त्तन ।
शाक-अन्न-फल-मूले उदर भरण ॥२१९
जिह्वार लालसे येइ इति उति धाय ।
शिश्नोदरपरायण कृष्ण नाहि पाय ॥२२०
आर दिन रघुनाथ स्वरूपचरणे ।
आपनार कृत्य लागि कैल निवेदने ॥२२१
"कि लागि छाड़ाइले घर, ना जानि उद्देश ।
"कि मोर कर्त्तव्य प्रभु कर उपदेश ॥२२२
प्रभुआगे कथामात्र ना कहे रघुनाथ ।
स्वरूप-गोविन्द द्वारा कहे निज बात ॥२२३
प्रभु-आगे स्वरूप निवेदिल आर दिने ।
"रघुनाथ निवेदये प्रभुर चरणे ॥२२४
"कि मोर कर्त्तव्य मुञि ना जानि उद्देश ।
आपनि श्रीमुखे मोरे करुन उपदेश ॥"२२५
हासि महाप्रभु रघुनाथेरे कहिल ।
'तोमार उपदेष्टा करि स्वरूपेरे दिल ॥२२६
साध्यसाधनतत्त्व शिख इँहार स्थाने ।
आमि यत ना जानि इँहो तत जाने ॥२२७
तथापि आमार आज्ञाय श्रद्धा यदि हय ।
आमार एइ वाक्य तबे करिह निश्चय ॥२२८
ग्राम्यकथा ना कहिबे, ग्राम्यवार्त्ता ना शुनिबे ।
भाल ना खाइबे, आर भाल ना परिबे ॥२२९
अमानी मानद कृष्णनाम सदा लबे ।
व्रजे राधाकृष्ण-सेवा मानसे करिबे ॥२३०
एइ त संक्षेपे आमि कैल उपदेश ।
स्वरूपेर ठाञि इहार पाबे सविशेष ॥"२३१

तथाहि पद्यावल्यां श्रीमुखशिक्षाश्लोकः—

तृणादपि सुनीचेन तरोरिव सहिष्णुना ।
अमानिना मानदेन कीर्त्तनीयः सदा हरिः ॥३॥

तृण की अपेक्षा नीच अर्थात् सर्वथा नम्र, वृक्षवत् सहिष्णु एवं परोपकारी, एवं स्वयं सर्व सद् गुणालङ्कृत हेतु सम्मानी होकर भी अपर को सम्मान प्रदान कारी होकर ही हरिनाम कीर्त्तन सर्वदा करे।

ऊर्द्ध्व बाहु करि कहि शुन सर्व लोक ।
नाम सूत्रे गाँथि पर कण्ठे एइ श्लोक ॥
प्रभुर आज्ञाय कर एइ श्लोक आचरण ।
अवश्य पाइबे तबे श्रीकृष्ण चरण ॥३॥

एत शुनि रघुनाथ वन्दिल चरण ।
महाप्रभु कैल ताँरे कृपा आलिङ्गन ॥२३२॥
पुनः समर्पिल ताँरे स्वरूपेर स्थाने ।
अन्तरङ्ग सेवा करे स्वरूपेर सने ॥२३३
हेन काले आइल गौड़ेर भक्तगण ।
पूर्व्ववद् प्रभु सबाय करिल मिलन ॥२३४
सबा लञा कैल प्रभु गुण्डिचामार्ज्जन ।
सब लञा कैल प्रभु वन्य-भोजन ॥२३५
रथयात्राय सबा लञा करिल नर्त्तन ।
देखि रघुनाथेर चमत्कार हैल मन ॥२३६
रघुनाथदास यबे सबारे मिलिला ।
अद्वैत आचार्य्य ताँरे बहु कृपा कैला ॥२३७

शिवानन्दसेन ताँरे कहे विवरण ।
"तोमा लइते तोमार पिता पाठाइल दशजन ॥ २३८॥
तोमारे पाठाते पत्री पाठाइला आमारे ।
झाँकरा हैते तोमा ना पाइया गेल घरे ॥" २३९॥
चारिमास रहि भक्तगण गौड़े गेला ।
शुनि रघुनाथेर पिता मनुष्य पाठाइला ॥ २४०॥
से मनुष्य शिवानन्दसेनेरे पुछिला ।
"महाप्रभु स्थाने एक वैष्णव देखिला ? ॥ २४१॥
गोवर्द्धनेर पुत्र तिँहो नाम रघुनाथ ।
नीलाचले परिचय आछे तोमार साथ ?" ॥ २४२॥
शिवानन्द कहे "तिँहो हय प्रभुर स्थाने ।
परम विख्यात तिँहो केवा नाहि जाने ॥२४३
स्वरूपेर स्थाने ताँरे करियाछेन समर्पण ।
प्रभुर भक्तगणेर तिँह हय प्राणसम ॥२४४
रात्रिदिन करे तिँह नामसङ्कीर्त्तन ।
क्षणमात्र नाहि छाड़े प्रभुर चरण ॥२४५
परम वैराग्य,—नाहि भक्ष्य परिधान ।
यैछे तैछे आहार करि राखये पराण ॥२४६
दशदण्ड रात्रि गेले पुष्पाञ्जलि देखिया ।
सिंहद्वारे खाड़ा हय आहार लागिया ॥२४७
केह यदि देय तबे करये भक्षण ।
कभु उपवास, कभु करेन चर्व्वन ॥"२४८

एत शुनि सेइ मनुष्य गोवर्द्धनस्थाने ।
कहिल गिया सब रघुनाथविवरणे ॥२४९
शुनि ताँर माता पिता दुःखित हइला ।
पुत्रठाञि द्रव्य मनुष्य पाठाइते मन कैला ।२५०
चारि शत मुद्रा, दुइ भृत्य, एक ब्राह्मण ।
शिवानन्देर ठाञि पाठाइल ततक्षण ॥२५१
शिवानन्द कहे "तुमि सब याइते नारिबा ।
आमि याइ यबे, आमार सङ्गे याइबा ॥२५२
एबे घर याह यबे आमि सब चलिब ।
तबे तोमा साबाकारे सङ्गे लञा याब ॥"२५३
एइ त प्रस्तावे श्रीकवि कर्णपूर ।
रघुनाथमहिमा ग्रन्थे लिखिला प्रचुर ॥२५४

तथाहि चैतन्यचन्द्रोदयनाटक (१०।३)—

**आचार्य्यो यदुनन्दनः सुमधुरः श्रीवासुदेवप्रिय
स्तच्छिष्यो रघुनाथ इत्यधिगुणः प्राणाधिको
मादृशाम् ।
श्रीचैतन्यकृपातिरेकः सततस्निग्धः स्वरूपप्रियो
वैराग्यैकनिधिर्न कस्य विदितो नीलाचले तिष्ठतां ।४**

टीका—श्रीवासुदेवप्रियः सुमधुरः यदुनन्दनः आचार्य्यः आसीत्, तच्छिष्यः रघुनाथदास इति । सः किम्भूत ?—अधिगुणः, मादृशां प्राणाधिकः, श्रीचैतन्य कृपातिरेकः, सततस्निग्धः, स्वरूपप्रियः, वैराग्यैक-निधिः । नीलाचले तिष्ठतां मध्ये कस्य न विदितः ? ४

मधुर चरित्र श्रीवासुदेव प्रिय श्रीयदुनन्दन आचार्य्य थे. उनके शिष्य सर्वगुण सम्पन्न, श्रीचैतन्य कृपापात्र, श्रीस्वरूप गोस्वामी के प्रिय, सतत स्निग्ध चरित, वैराग्य निधि, नीलाचल निवासी रघुनाथ दासको कौन नहीं जानता ? ।।४।।

तथाहि श्रीचैतन्यचन्द्रोदयनाटके (१०।४)—

**यः सर्व्वलोकैकमनोभिरुच्या,
सौभाग्यभूः काचिदकृष्टपच्या ।**

यस्यां समारोपणतुल्यकालं,
तत्-प्रेमसौख्यं फलमुज्जिजृम्भे ॥५॥

टीका—सर्व्वलोकैकमनोभिरुच्या यः काचित अकृष्टपच्या सौभाग्यभूः स्यात, यस्यां समारोपणतुल्य कालं तत्-प्रेमसौख्यं फलं उज्जिजृम्भे ॥५॥

समस्त लोक श्रीरघुनाथ दास को प्रीति करने के कारण रघुनाथ दास अकृष्ट पच्यभूमि के तुल्य सौभाग्य पात्र हुये थे, जिनके प्रति एकबार मात्र अभिरुचि बीज वपन करने से वह फलवान् होकर प्रेम सुख रूप फलोत्पादन करने में सक्षम होता है ।५

शिवानन्द यैछे सेइ मनुष्य कहिल ।
कर्णपूर सेइरूपे श्लोक वर्णिल ॥२५५
वर्षान्तिरे शिवानन्द चले नीलाचले ।
रघुनाथेर सेवक विप्र ताँर सङ्गे चले ॥२५६
सेइ विप्र भृत्य चारिशत मुद्रा लञा ।
नीलाचले रघुनाथे मिलिला आसिया ॥२५७
रघुनाथदास अङ्गीकार ना करिल ।
द्रव्य लञा दुइजन ताहाञि रहिल ॥२५८
तबे रघुनाथे करि अनेक यतन ।
मासे दुइदिन कैल प्रभुर निमन्त्रण ॥२५९
दुइ निमन्त्रणे लागे कौड़ि अष्टपन ।
ब्राह्मण-भृत्य-ठाञि करे एतेक ग्रहण ॥२६०
एइमत निमन्त्रण वर्ष दुइ कैल ।
पाछे रघुनाथ निमन्त्रण छाड़ि दिल ॥२६१
मास दुइ रघुनाथ ना करे निमन्त्रण ।
स्वरूपे पुछिल तबे शचीर नन्दन ॥२६२
"रघु केन आमार निमन्त्रण छाड़ि दिल ।"
स्वरूप कहे "मने किछु विचार करिल ॥
२६३॥
विषयीर द्रव्य लञा करि निमन्त्रण ।
प्रसन्न ना हय इहाय जानि प्रभुर मन ॥२६४
मोर चित्त द्रव्य लैते ना हय निर्म्मल ।
एइ निमन्त्रण देखि प्रतिष्ठामात्र फल ॥२६५
उपरोधे प्रभु मोर माने निमन्त्रण ।
ना मानिले दुःखी हैबे एइ मूढ़जन ॥२६६
एत विचारिया निमन्त्रण छाड़ि दिल ।"
शुनि महाप्रभु हासि बलिते लागिल ॥२६७
"विषयीर अन्न खाइले मलिन हय मन ।
मलिन मन हैले नहे कृष्णेर स्मरण ॥२६८
विषयीर अन्न हय राजस निमन्त्रण ।
दाता भोक्ता दोँहार मलिन हय मन ॥२६९
इहार सङ्कोचे आमि एत दिन निल ।
भाल हैल, जानिया वे आपनि छाड़िल ॥"२७०
कथो दिने रघुनाथ सिंहद्वार छाड़िल ।
छत्रे याइ मागि खाइते आरम्भ करिल ॥२७१
गोविन्द-पाश शुनि प्रभु पुछे स्वरूपेरे ।
"रघु भिक्षा लागि ठाड़ा ना हय सिंहद्वारे ?
२७२॥"
स्वरूप कहे "सिंहद्वारे दुःख अनुभाञा ।
छत्रे मागि खाय मध्याह्नक ले गिञा ॥"२७३
प्रभु कहे "भाल कैल, छाड़िल सिंहद्वार ।
सिंहद्वारे भिक्षावृत्ति वेश्यार आचार ॥"२७४

तथाहि श्रीकृष्णचैतन्यदेवस्य वाक्यम्—

अयमागच्छति अयं दास्यति,
अनेन दत्तं अयमपरः ।
समेत्ययं दास्यति अनेनापि
न दत्तमन्यः समेष्यति स दास्यति ॥६॥

टीका—अयमागच्छति, अनेन दत्तम, अयं दास्यति, अयं अपरः न दास्यति। अयं समेति, सः दास्यति, अनेनापि न दत्तं। अन्यः समेष्यति, सः दास्यति ॥६॥

यह आ रहा है, यह दान करेगा, इसने गत काल अन्न मुझ को दिया था, आज भी देगा। यह अन्य व्यक्ति है, यह नहीं देगा, अपर कोई आयेगा, वह देगा, भिक्षा स्थान में भिक्षु के इस प्रकार संकल्प विकल्प होते रहते हैं ॥६॥

"छत्रे याइ यथालाभ उदरभरण।
मनःकथा नाहि, सुखे कृष्णसङ्कीर्त्तन ॥२७५
एत बलि पुनः ताँरे प्रसाद करिल।
गोवर्द्धनेर शिला गुञ्जामाला तारे दिल ॥२७६
शङ्करानन्द सरस्वती वृन्दावन हैते आइला।
तिँहो सेइ शिला गुञ्जामाला लञा गेला ॥
२७७॥
पार्श्वे गाँथा गुञ्जामाला गोवर्द्धनेर शिला।
दुइ वस्तु महाप्रभुर आगे आनि दिला ॥२७८
दुइ अपूर्व्व वस्तु पाञा प्रभु तुष्ट हैला।
स्मरणेर काले गले धरे गुञ्जामाला ॥२७९
गोवर्द्धनेर शिला प्रभु हृदय नेत्रे धरे।
कभु नासाय घ्राण लय कभु लय शिरे ॥२८०
नेत्रजले सेइ शिला भिजे निरन्तर।
शिलाके कहेन प्रभु 'कृष्ण-कलेवर' ॥२८१
एइमत तिन वत्सर शिला माला धरिल।
तुष्ट हञा शिला माला रघुनाथे दिल ॥२८२
प्रभु कहे "एइ शिला कृष्णेर विग्रह।
इहार सेवा कर तुमि करिया आग्रह ॥२८३
एइ शिलार कर तुमि सात्त्विक पूजन।
अचिराते पावे तुमि कृष्ण-प्रेमधन ॥२८४
एक कुँजा जल आर तुलसीमञ्जरी।
सात्त्विक सेवा एइ शुद्ध भावे करि ॥२८५
दुइ दिके दुइ पत्र, मध्ये कोमल मञ्जरी।
एइमते अष्ट मञ्जरी दिबे श्रद्धा करि ॥"२८६
श्रीहस्ते शिला दिया एइ आज्ञा दिला।
आनन्दे रघुनाथ सेवा करिते लागिला ॥२८७
एकवितस्ति दुइ वस्त्र, पिड़ा एकखानी।
स्वरूप दिलेन कुँजा आनिबारे पानी ॥२८८
एइमत रघुनाथ करेन पूजन।
पूजाकाले देखे शिलाय व्रजेन्द्रनन्दन ॥२८९
प्रभुर स्वहस्तदत्त गोवर्द्धन शिला।
एइ चिन्ति रघुनाथ प्रेमे भासि गेला ॥२९०
जल-तुलसीर सेवाय यत सुखोदय।
षोड़शोपचार-पूजाय तत सुख नय ॥२९१
एइमत कतदिन करेन पुजन।
तबे स्वरूप गोसाञि तारे कहिल वचन ॥२९२
"अष्ट कौड़िर खाजा सन्देश कर समर्पण।
श्रद्धा करि दिल सेइ अमृतरेर सम ॥२९३
तबे अष्ट कौड़िर खाजा करे समर्पण।
स्वरूप-आज्ञाय गोविन्द करे समाधान ॥२९४
रघुनाथ सेइ शिला माला यबे पाइल।
गोसाञि-अभिप्राय एइ भावना करिल ॥२९५
शिला दिया गोसाञि समर्पिल गोवर्द्धने।
गुञ्जामाला दिया दिल राधिकाचरणे ॥"
२९६॥

आनन्दे रघुनाथेर वाह्यविस्मरण ।
कायमने सेविलेन गौराङ्गचरण ॥२९७
अनन्त गुण रघुनाथेर के करिबे लेखा ।
रघुनाथेर नियम येन पाषाणेर रेखा ॥२९८
साड़े सात प्रहर याय याँहार स्मरणे ।
आहारनिद्रा चारिदण्ड सेहो नहे कोनदिन ॥
२९९॥
वैराग्येर कथा ताँर अद्भुत कथन ।
आजन्म ना दिल जिह्वाय रसेर स्पर्शन ॥
३००॥
छिण्डा कानि काँथा बिनु ना परे वसन ।
सावधाने प्रभुर कैल आज्ञार पालन ॥३०१
प्राणरक्षा लागि येवा करेन भक्षण ।
ताहा खाजा आपनाके कहे निर्व्वेदवचन ॥३०१

तथाहि श्रीमद्‌भागवते (७।१५।४०)—

आत्मानं चेद्विजानीयात् परं ज्ञानधुताशयः ।
किमिच्छन् कस्य वा हेतोर्देहं पुष्णाति लम्पटः ॥७

टीका —चेत् यदि ज्ञानधुताशयः सन परमात्मानं विजानीयात्, तदा किं इच्छन् कस्य वा हेतोः लम्पटः सन् देहं पुष्णाति ? ॥७॥

श्रीमद् भागवत के ७।१५।४० में उक्त है—जिन्होंने स्वरूपाववोध के द्वारा परमात्मा को जान लिया है, एवं स्वरूप ज्ञान के द्वारा आशय को विशुद्ध किया है, उनके पक्ष में किसके लोभ से देह धारण करना समीचीन होगा ? ॥७॥

प्रसादान्न पसारीर यत ना बिकाय ।
दुइ तिन दिन हैले भात सड़ि याय ॥३०२
सिंहद्वारे गाबी-आगे सेइ भात डारे ।
सड़ागन्धे तैलङ्गा गाइ खाइते ना पारे ॥३०३
सेइ भात रघुनाथ रात्रे घरे आनि ।
भात पाखालिया पेले दिया बहु पानी ॥३०४
भितरेर दढ़ भात माजि येइ पाय ।
नुन दिया रघुनाथ सेइ अन्न खाय ॥३०५
एक दिन स्वरूप ताँहा करिते देखिल ।
हासिया ताहार किछु मागिया खाइल ॥३०६
स्वरूप कहे "ऐछे अमृत खाओ नित नित ।
आमा सवाय नाहि देओ कि तोमार प्रकृति ॥
३०७॥
गोविन्देर मुखे प्रभु से वार्त्ता शुनिला ।
आर दिन आसि प्रभु कहिते लागिला ॥३०८
"काहा वस्तु खाओ सबे आमाय ना देओ केने।'
एत बलि एक ग्रास करिला भक्षणे ॥३०९
आर ग्रास लैते स्वरूप हातेते धरिला ।
"तब योग्य नहे" बलि बले काड़ि निला ॥
३१०॥
प्रभु बले "निति निति नाना प्रसाद खाइ ।
ऐछे स्वादु आर कोन प्रसाद ना पाइ ॥"३११
एइमत महाप्रभु नाना लीला करे ।
रघुनाथेर वैराग्य देखि सन्तोष अन्तरे ॥३१२
आपन उद्धार एइ रघुनाथदास ।
चैतन्यस्तवकल्पवृक्षे करियाछेन प्रकाश ॥३१३

तथाहि स्तवमालायां (१।१)—

महासम्पद्दारादपि पतितमुद्धृत्य कृपया,
स्वरूपे यः स्वीये कुजनमपि मां न्यस्य मुदितः ।
उरोगुञ्जाहारं प्रियमपि च गोवर्द्धनशिलां,
ददौ मे गौराङ्गो हृदयउदयन्मां मदयति ॥८॥

टीका—यः महासम्पद्द्वारात् पतितं कृपया उद्धृत्य कुजनमपि मां स्वीये स्वरूपे न्यस्य मुदितः सन् प्रियमपि उरोगुञ्जाहारं गोवर्द्धनशिलाञ्च ददौ, सः गौराङ्गः मम हृदये उदयन् सन् मदयति ॥८॥

मैं मन्दानन्द होने पर भी जिन्होंने करुणापर वश होकर रमणी काञ्चन से मुझको परित्राण करके आत्मीय स्वरूप दामोदर को अर्पण किये, एवं निज हृदयस्थ गुञ्जा माला एवं गोवर्द्धन शिला अर्पण किये। वह गौराङ्ग मदीय मानस पटल में अधुना उदित होकर मुझको पुलकित कर रहे हैं ॥८॥

एइ त कहिल रघुनाथेर मिलन।
ये इहा शुने पाय चैतन्यचरण ॥३१४

श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥३१५

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे श्रीरघुनाथदास मिलनं नाम षष्ठः परिच्छेदः ॥६॥



सप्तम परिच्छेद।

चैतन्यचरणाम्भोजमकरन्दलिहो भजे।
येषां प्रसादमात्रेण पामरोऽप्यमरो भवेत् ॥१॥

टीका—अहं चैतन्यचरणाम्भोजमकरन्दलिहः सतः भजे। येषां प्रसादेन पामरोऽपि अमरो भवेत् ॥१

जिनके अनुग्रह से अधम व्यक्ति भी देव तुल्य होता है, मैं उन श्रीचैतन्य देव के पाद पद्म के रसास्वादी साधु वृन्द की वन्दना करता हूँ ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य, जय नित्यानन्द।
जयाद्वैतचन्द्र, जय गौरभक्तवृन्द ॥१

वर्षान्तरे यत गौरेर भक्तगण आइला।
पूर्व्ववत् महाप्रभु सबारे मिलिला ॥२

एइमत विलास प्रभुर भक्तगण लञा।
हेनकाले वल्लभभट्ट मिलिला आसिया ॥३

आसिया वन्दिल भट्ट प्रभुर चरण।
प्रभु भागवतबुद्ध्ये कैला आलिङ्गन ॥४

मान्य करि प्रभु ताँरे निकटे बसाइला।
विनय करिया भट्ट कहिते लागिला ॥५

"बहु दिन मनोरथ तोमा देखिबारे।
"जगन्नाथ पूर्ण कैल देखिनु तोमारे ॥६

तोमाके देखिये येन साक्षात भगवान्।
व्रजेन्द्र-नन्दन तुमि, इथे नाहि आन ॥७

ये तोमा स्मरण करे, से हय पवित्र।
दर्शने पवित्र हय, इथे कि विचित्र ॥"८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१।१९।३३)—

येषां संस्मरणात् पुंसां सद्यः शुध्यन्ति वै गृहाः।
किं पुनर्द्दर्शनस्पर्शपादशौचासनादिभिः ॥२॥

टीका—येषां संस्मरणात पुंसां गृहाः वै सद्यः शुध्यन्ति, तेषां दर्शनस्पर्शपादशौचासनादिभिः किं पुनः वक्तव्यं ॥२॥

श्रीमद् भागवत के १।१९।३३ में उक्त है, जिनके संस्मरण के मानव के गृह सद्य शुद्ध होवा है, उनके दर्शन, स्पर्श, पाद प्रक्षालन एवं उपवेशन प्रभृति के द्वारा जो पवित्र होगा इस में आश्चर्य क्या है? ॥२॥

"कलिकाले धर्म्म कृष्णनाम-सङ्कीर्त्तन।
कृष्णशक्ति बिना नहे तार प्रवर्त्तन ॥९

ताहा प्रवर्त्ताइले तुमि एइत प्रमाण।
कृष्णशक्ति धर तुमि इथे नाहि आन ॥१०

जगते करिले तुमि कृष्णनाम प्रकाशे।
येइ तोमा देखे सेइ कृष्णप्रेमे भासे ॥११

कृष्ण एक प्रेमदाता शास्त्रेर प्रमाणे ।
सेइ प्रेमदाता तुमि लय मोर मने ॥१२

तथाहि लघुभागवतामृते ६३—

सन्त्ववतारा बहवः पङ्कजनाभस्य सर्व्वतोभद्राः ।
कृष्णादन्यः को वा लतास्वपि प्रेमदो भवति ॥३॥

लघ भागवतामृत के उक्त है—पद्मनाभ श्रीकृष्ण के सर्व मङ्गल स्वरूप विविध अवतार विद्यमान् श्रीकृष्ण व्यतीत अपर कौन है, जो लता को भी प्रेम प्रदान करने में सक्षम हैं ॥३॥

महाप्रभु कहे "भट्ट महामति ।
मायावादी सन्नयासी आमि, ना जानि कृष्ण-भक्ति ॥१३
अद्वैत आचार्य्य-गोसाञि साक्षान ईश्वर ।
ताँर सङ्गे आमार मन हइल निर्म्मल ॥१४
सर्व्व शास्त्रे कृष्णभक्तेय् नाहि याँर सम ।
अतएव अद्वैत आचार्य्य ताँर नाम ॥१५
याँहार कृपाते म्लेच्छेर हय कृष्णभक्ति ।
के कहिते पारे ताँर वैष्णवताशक्ति ॥१६
नित्यानन्द अवधूत साक्षात् ईश्वर ।
भावोन्मादे मत्त कृष्ण-प्रेमेर सागर ॥१७
षड् दर्शनवेत्ता भट्टाचार्य सार्व्वभौम ।
षड् दर्शन जगद्गुरु भागवतोत्तम ॥१८
तिँहो देखाइल मोरे भक्तियोग-पार ।
ताँर प्रसादे जानिल कृष्णभक्तिमात्र सार ॥१९
रामानन्द राय कृष्णरसेर निधान ।
तिँह जानाइल कृष्ण स्वयं भगवान् ॥२०
ताते प्रेमभक्ति पुरुषार्थशिरोमणि ।
रागमार्ग कृष्णभक्ति सर्व्वाधिक जानि ॥२१
दास्य सख्य वात्सल्य आर ये शृङ्गार ।
दास यथा गुरु कान्ता आश्रय याहार ॥२२
ऐश्वर्य्यज्ञानयुक्त केवलाभाव आर ।
ऐश्वर्य्यज्ञाने ना पाइए व्रजेन्द्रकुमार ॥२३

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।९।२१)—

नायं सुखापो भगवान् देहिनां गोपिकासुतः ।
ज्ञानिनाञ्चात्मभूतानां यथा भक्तिमतामिह ॥४॥

श्रीमद् भागवत के १०।९।२१ में उक्त है—यशोदानन्दन भगवान् भक्तिनिष्ठ व्यक्ति वृन्द के पक्ष में जिस प्रकार सुख लभ्य है, उस प्रकार सुखलभ्य देहाभिमानी, तापस एवं ज्ञानी व्यक्ति गण के पक्ष में नहीं है ॥४॥

आत्मभूत शब्दे कहे पारिषदगण ।
ऐश्वर्य्यज्ञाने लक्ष्मी ना पाइल व्रजेन्द्रनन्दन ॥२४

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।४७।६०)—

नायं श्रियोऽङ्ग उ नितान्तरतेः प्रसादः
स्वर्योषितां नलिनगन्धरुचां कुतोऽन्याः ।
रासोत्सवेऽस्य भुजदण्डगृहीतकण्ठ-
लब्धाशिषां य उदगाद्व्रजसुन्दरीणां ॥५॥

श्रीमद् भागवत के १०।४७।६० में उक्त है—भगवान् श्रीकृष्ण रासोत्सव में प्रवृत्त होकर निज बाहु युगल के द्वारा व्रजरमणी वृन्दके कण्ठ आलिङ्गन पूर्वक उन सबके प्रति जिस प्रकार प्रसाद प्रदर्शन किये हैं, उस प्रकार प्रसाद लाभ करने में लक्ष्मी तदीय वक्षःस्थल वासिनी होकर भी एवं सुरबाला गण कमल गन्ध एवं कमल कान्ति धारण करके भी सक्षम नहीं हुये है, अन्य रमणी वृन्द का प्रसङ्ग उठ ही नहीं सकता है ॥५॥

शुद्धभावे सखा करे स्कन्धे आरोहन ।
शुद्धभावे व्रजेश्वरी करेन बन्धन ॥२५

मोर सखा मोर पुत्र एइ शुद्ध मन ।
अतएव शुक व्यास करेन प्रशंसन ॥२६

तथाहि श्रीमद् भागवते (१०।८।४६) —

नन्दः किमकरोद्‌ब्रह्मन् श्रेय एवं महोदयं ।
यशोदा वा महाभागा पपौ यस्याः स्तनं हरिः ॥६

श्रीमद् भागवत के १०।८।४६ में लिखित है- परीक्षित महाराज शुकदेव को सम्बोधन कर कहे थे- हे ब्रह्मन् ! नन्द महाराज किस प्रकार महाश्रेयस्कर कार्य्यानुष्ठान किये थे, महाभाग्यशालिनी यशोदा ने कैसा पुण्य कर्म्म का आचरण किया था, जिस से हरि उनका स्तन पान किये ॥६॥

ऐश्वर्य्य देखिले ऐश्वर्य्य ना हय ज्ञान ।
ऐश्वर्य्य हइते केवलभाव प्रधान ॥२७

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।८।४५)—

त्रय्या चोपनिषद्भिश्च सांख्ययोगैश्च सात्वतैः ।
उपगीयमानमाहात्म्यं हरिं सामन्यतात्मजं ॥७॥

श्रीमद् भागवत के १०।८।४५ में उक्त है—वेद जिनका कीर्त्तन इन्द्रादि नाम से करते हैं उपनिषद् में जो ब्रह्मनाम से प्रसिद्ध हैं, साङ्ख्ययोग शास्त्र जिनको पुरुष नाम से कहते हैं भक्ति शास्त्र भगवान नाम से जिनका वर्णन करते हैं, इस प्रकार हरि को यशोदा ने निज आत्मज ही माना है ॥७॥

ए सब शिक्षाइल मोरे राय रामानन्द ।
याँहार प्रसादे जानि व्रजेर शुद्धभाव-अन्त ॥२८
दामोदर स्वरूप प्रेमरस मूर्त्तिमान् ।
याँर सङ्गे हैल व्रजेर मधुररसज्ञान ॥२९
शुद्धप्रेम व्रजदेवीर कामगन्धहीन ।
कृष्णसुख तात्पर्य्य एइ तार चिह्न ॥३०

गोपीगणेर शुद्धप्रेम ऐश्वर्य्यज्ञानहीन ।
प्रेमेते भर्त्सना करे एइ तार चिह्न ॥३१

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३१।१६)—

पतिसुतान्वयभ्रातृबान्धवा
नति विलङ्घ्य तेऽन्त्यच्युतागताः ।
गतिविदस्तवोद्‌गीतमोहिताः,
कितव योषितः कस्त्यजेन्निशि ॥८

श्रीमद् भागवत के १०।३१।१६ में गोपी वाक्य इस प्रकार है- हे अच्युत ! हम सब पति, पुत्र भाई बन्धु को छोड़कर तुम्हारे निकट उपस्थित हैं, आगमन वृत्तान्त को तो तुम जानते ही हो, तुम्हारे उच्च-सङ्गीत से हम सब मुग्ध हैं । हे शठ ! जो सब नारी निशीथ में स्वयं उपस्थित होती हैं, उन सब को परित्याग करने में कौन सक्षम है ॥८॥

सर्व्वोत्तम भजन इहार सर्व्वशक्ति जिनि ।
अतएव कृष्ण कहे, आमि तार ऋणी ॥३२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३२।२२)—

न पारयेऽहं निरवद्यसंयुजां
स्वसाधुकृत्यं विबुधायुषापि वः ।
या मा भजन् दुर्ज्जरगेहशृङ्खलाः,
संवृश्च्य तद्वः प्रतियातु साधुना ॥९॥

श्रीमद् भावत के १०।३२।२२ में श्रीकृष्ण गोपाङ्गनागण को कहे थे—तुम सब के निरवद्य संयोग का प्रतिदान करने में मैं सर्वथा असमर्थ हूँ, तुम सबने दुश्छेद्य गृह शृङ्खल को छेदन कर मेरी उपासना की है, किन्तु मेरा चित्त अनेक व्यक्ति में आबद्ध है, सुतरां तुम सब के समान एकनिष्ठ होना असम्भव है, सुतरां तुम सब के सौशील्य के निकट मैं ऋणी रहा, प्रत्युपकार करने में अक्षम हूँ ॥९॥

ऐश्वर्य्यज्ञाने केवल परमप्रधान ।
पृथिवीते भक्त नाहि उद्धवसमान ॥३३

तिँहो यार पदधूलि करेन प्रार्थन ।
स्वरूपेर सङ्गे पाइल ए सब शिक्षण ॥३४
हरिदास ठाकुर महाभागवतप्रधान ।
दिन प्रति लय तिँहो तिन लक्ष नाम ॥३५
नामेर महिमा आमि ताँर ठाञि शिखिल ।
ताँर प्रसादे नामेर महिमा जानिल ॥३६
आचार्य्यरत्न आचार्य्यनिधि पण्डित गदाधर ।
जगदानन्द दामोदर शङ्कर वक्रेश्वर ॥३७
काशीश्वर मुकुन्द वासुदेव मुरारि ।
आर यत भक्तगण गौड़े अवतरि ॥३८
कृष्णनाम प्रेम कैल जगते प्रचार ।
इँहा सबार सङ्गे कृष्णभक्ति आमार ॥"३९
भट्टेर हृदय दृढ़ अभिमान जानि ।
भङ्गि करि महाप्रभु कहे एत वाणी ॥४०
"आमि से वैष्णवसिद्धान्त सब जानि ।
आमि से भागवत-अर्थ उत्तम वाखानि ॥"४१
भट्टेर मनेते एइ छिल दीर्घ गर्व्व ।
प्रभुर वचन शुनि से हइल खर्व्व ॥४२
प्रभुर मुखे वैष्णवता शुनिया सबार ।
भट्टेर इच्छा हैल सबारे देखिबारे ॥४३
भट्ट कहे "ए सब वैष्णव रहे कोन् स्थाने ?
कोन् प्रकारे पाइब इहा सबार दर्शने ॥"४४
प्रभु कहे "केहो इहो केहो देशान्तरे ।
सब आसियाछे रथयात्रा देखिवारे ॥४५
इँहाञि रहेन सबे, वासा नाना स्थाने ।
इँहाञि पाइबे तुमि सबार दर्शने ॥"४६
तबे भट्ट कहे बहु विनयवचन ।
बहु यत्न करि प्रभुके कैल निमन्त्रण ॥४७
आर दिन सब वैष्णव प्रभुस्थाने आइला ।
सबा सने महाप्रभु भट्टे मिलाइला ॥४८
वैष्णवेर तेज देखि भट्टेर चमत्कार ।
ताँ सबार आगे भट्ट खद्योत-आकार ॥४९
तबे भट्ट बहु महाप्रसाद आनाइला ।
गण सह महाप्रभुके भोजन कराइला ॥५०
परमानन्दपुरीसङ्गे सन्न्यासीर गण ।
एकदिके बैसे सब करिते भोजन ॥५१
अद्वैत नित्यानन्दराय पार्श्वे दुइ जन ।
मध्ये महाप्रभु बसिला आगे पाछे भक्तगण ॥५२॥
गौड़ेर भक्त यत कहिते ना पारि ।
अङ्गने बसिला सब हञा सारि सारि ॥५३
प्रभुर भक्तगण देखि भट्टेर चमतकार ।
प्रत्येके सबार पदे कैल नमस्कार ॥५४
स्वरूप जगदानन्द काशीश्वर शङ्कर ।
परिबेशन करे आर राघव दामोदर ॥५५
महाप्रसाद वल्लभभट्ट बहु आनाइला ।
प्रभु सह सन्न्यासीगण भोजने बसिला ॥५६
प्रसाद पाय वैष्णवगण, बले हरि हरि ।
हरिध्वनि उठिल सब ब्रह्माण्ड भरि ॥५७
माला चन्दन गुवाक पान अनेक आनिल ।
सबा पूजा करि भट्ट आनन्दित हैल ॥५८
रथयात्रादिने प्रभु कीर्त्तन आरम्भिल ।
पूर्व्ववत् सात सम्प्रदाय पृथक करिल ॥५९
अद्वैत नित्यानन्द हरिदास वक्रेश्वर ।
श्रीवास राघव पण्डितगदाधर ॥६०

सात जन सात ठाञि करेन कीर्त्तन ।
हरिबोल बलि प्रभु करेन भ्रमण ॥६१
चौद्द मादल बाजे, उच्च सङ्कीर्त्तन ।
एकेक नर्त्तकेर प्रेमे भासिल भुवन ॥६२
देखि वल्लभभट्टेर हैल चमत्कार ।
आनन्दे विह्वल, नाहि आपन सम्भाल ॥६३
तबे महाप्रभु सबार नृत्य राखिल ।
पूर्व्ववत् आपने नृत्य करिते लागिल ॥६४
प्रभुर सौन्दर्य्य देखि आर प्रेमोदय ।
'एइ त साक्षात् कृष्ण' भट्टेर हैल निश्चय ॥६५॥

एइमत रथयात्रा सकल देखिल ।
प्रभुर चरित्रे भट्टेर चमत्कार हैल ॥६६
यात्रान्तरे भट्ट याय महाप्रभु स्थाने ।
प्रभुर चरणे किछु कैल निवेदने ॥६७
"भागवतेर टीका किछु करियाछि लिखन ।
आपने महाप्रभु यदि करेन श्रवण ॥"६८
प्रभु कहे "भागवतार्थ बुझिते ना पारि ।
भागवत-अर्थ शुनिते नहि अधिकारी ॥६९
कृष्णनाम बसि मात्र करिये ग्रहणे ।
संख्यानाम पूर्ण मोर नहे रात्रे दिने ॥"७०
भट्ट कहे "कृष्णनामेर अर्थ-व्याख्याने ।
विस्तार करियाछि ताहा करह श्रवणे ॥"७१
प्रभु कहे "कृष्णनामेर बहु अर्थ ना मानि ।
श्यामसुन्दर यशोदानन्दन एइमात्र जानि ॥"७२॥

तथाहि श्रीकृष्णसन्दर्भे अनर्थोपशम इत्यस्य व्याख्यायां धृतोनामकौमुद्यां श्लोक:—

तमालश्यामलत्विषि श्रीयशोदास्तनन्धये ।
कृष्णनाम्नो रूढ़िरिति सर्व्वशास्त्रविनिर्णयः ॥१०

टीका—तमालश्यामलत्विषि श्रीयशोदास्तनन्धये कृष्णनाम्नः रूढ़िः इति सर्व्वशास्त्रविनिर्णयः स्यात् ॥१०॥

तमाल श्यामल कान्तियुक्त श्रीयशोदास्तन्यपायी में कृष्ण नाम की रूढ़ि वृत्ति है, अर्थात् मुख्यावृत्ति है, यही समस्त शास्त्रों का निर्णय है ॥१०॥

"एइ अर्थमात्र आमि जानिये निर्द्धार ।
आर सब अर्थे मोर नाहि अधिकार ॥"७३
फल्गुर बल्गलप्राय भट्टेर सब व्याख्या ।
सर्व्वज्ञ प्रभु जानि करेन उपेक्षा ॥७४
बिमना हइया भट्ट गेला निज घर ।
प्रभुविषय भक्ति किछु हइल अन्तर ॥७५
तबे भट्ट गेला पण्डितगोसाञिर ठाञि ।
नानामत प्रीति करे ताँर ठाँइ याइ ॥७६
प्रभुर उपेक्षाय सब नीलाचलेर जन ।
भट्टेर व्याख्यान किछु ना करे श्रवण ॥७७
लज्जित हइल भट्ट, हैल अपमाने ।
दुःखित हइया गेल पण्डितेर स्थाने ॥७८
दैन्य करि कहे "निल तोमार शरण ।
तुमि कृपा करि राख आमार जीवन ॥७९
कृष्णनामव्याख्या यदि करह श्रवण ।
तबे मोर लज्जापङ्क हय प्रक्षालन ॥"८०
सङ्कटे पड़िल पण्डित, करये संशय ।
"कि करिव इहा करिते ना पारे निश्चय ॥"८१॥

यद्यपि पण्डित ना कैल अङ्गीकार ।
भट्ट याइ तबु पड़े करि बलातकार ॥८२
आभिजात्ये पण्डित करिते नारे निषेधन ।
"ए सङ्कटे राख कृष्ण लइलाम शरण ॥८३
अन्तर्यामी प्रभु जानिबेन मोर मन ।
ताँरे भय नाहि किछु, विषम ताँर गण ॥"८४
यद्यपि विचारे पण्डितेर नाहि दोष ।
तथापि प्रभुर गण करे प्रणय-रोष ॥८५
प्रत्यह वल्लभभट्ट आइसे प्रभुस्थाने ।
उदग्राहादि प्राय करे आचार्य्यादि सने ॥८६
येइ किछु करे भट्ट सिद्धान्तस्थापन ।
शुनितेइ आचार्य्य ताहा करेन खण्डन ॥८७
आचार्य्यादि-आगे भट्ट यबे यबे याय ।
राजहंसमध्ये येन रहे वकप्राय ॥८८
एक दिन भट्ट पुछिल आचार्य्येरे ।
"जीवप्रकृति पति करि मानये कृष्णेरे ॥८९
पतिव्रता हञा पतिर नाम नाहि लय ।
तोमरा कृष्णनाम लओ, कोन धर्म हय ?"९०
आचार्य्य कहे 'आगे तोमार धर्म्म मूर्त्तिमान ।
इँहारे पुछह, इँहो करिबे प्रमाण ॥"९१
प्रभु कहे "तुमि ना जान धर्म्माधर्म्म ।
स्वामि-आज्ञा पाले एइ पतिव्रताधर्म्म ॥९२
पतिर आज्ञा निरन्तर ताँर नाम लैते ।
पति-आज्ञा पतिव्रता ना पारे लङ्घिते ॥९३
अतएव नाम लय, नामेर फल पाय ।
नामेर फले कृष्णपदे प्रेम उपजय ॥"९४
शुनिया वल्लभभट्ट हैल निर्व्वचन ।
घरे याइ दुःखमने करेन चिन्तन ॥९५

"नित्य आमार एइ सभाय हय कक्षापात ।
एकदिन उपरे यदि पड़े मोड़ बात ॥९६
तबे सुख हय, आर सब लज्जा याय ।
स्ववचन स्थापिते आमि कि करि उपाय ॥"
९७॥
आर दिन वसिला आसि प्रभु नमस्करि ।
सभाते कहेन किछु मने गर्व्व करि ॥९८
"भागवते स्वामीर व्याख्या करियाछि खण्डन ।
लइते ना पारि ताँर व्याख्यान वचन ॥९९
सेइ व्याख्या करे, याहाँ येइ पड़े आनि ।
एकवाक्यता नाहि ताते, स्वामी नाहि मानि ॥"
१००॥
प्रभु हासि कहे "स्वामी ना माने येइ जन ।
वेश्यार भितरे तारे करिये गणन ॥"१०१
एत कहि महाप्रभु मौन करिला ।
शुनिया सबार मने सन्तोष हइला ॥१०२
जगतेर हित लागि गौर अवतार ।
अन्तरेर अभिमान जानेन ताँहार ॥१०३
नाना अपमाने भट्ट शोधे भगवान ।
कृष्ण यैछे खण्डिलेन इन्द्रेर अभिमान ॥१०४
अज्ञ जीव निज हिते अहित करि माने ।
गर्व्व चूर्ण हैल, पाछे उघाड़े नयने ॥१०५
घरे आसि रात्रे भट्ट चिन्तिते लागिला ।
"पूर्व्वे प्रयागे मोरे महाकृपा कैला ॥१०६
स्वगणसहिते मोर मानिल निमन्त्रण ।
एबे केने प्रभुर मोते फिरि गेल मन ॥१०७
आमि जिति ए गर्व्वशून्य उहार चित्त ।
ईश्वरस्वभाव, करे सवाकार हित ॥१०८

आपना जानाइते आमि करि अभिमान ।
गर्व्व खण्डाइते करे आमार अपमान ॥१०९
आमार हित करेन इँहो आमि मानि दुःख ।
कृष्णेर उपरे कैल येन इन्द्र मूर्ख ॥"११०
एत चिन्ति प्राते आसि प्रभुर चरणे ।
दैन्य करि स्तुति करे सरस वचने ॥१११
"आमि अज्ञ जीव, अज्ञोचित कर्म्म कैल ।
तोमार आगे मूर्ख पाण्डित्य प्रकाशिल ॥११२
तुमि ईश्वर, निजोचित कृपा ये कैला ।
अपमान करि सर्व्व गर्व्व खण्डाइला ॥११३
आमि अज्ञ, हितस्थाने मानि अपमान ।
इन्द्र हेन कृष्णेर निन्दा करिल अज्ञान ॥११४
तोमार कृपा-अञ्जने एबे गर्व्व-अन्ध गेल ।
तुमि एत कृपा कैले, एबे ज्ञान हैल ॥११५
अपराध कैनु, क्षम, लइनु शरण ।
कृपा करि मोर माथे धरह चरण ॥"११६
प्रभु कहे "तुमि पण्डित महाभागवत ।
दुइ गुण याँहा, ताँहा नाहि गर्व्वपर्व्वत ॥११७
श्रीधरस्वामी निन्दि निज टीका कर ।
श्रीधरस्वामी नाहि मान एत गर्व्व धर ॥११८
श्रीधरस्वामिप्रसादेते भागवत जानि ।
जगद्गुरुश्रीधरस्वामी, गुरु करि मानि ॥११९
श्रीधर उपरे गर्व्व ये किछु करिबे ।
अस्तव्यस्त लिखन सेइ, लोके ना मानिबे ॥
१२०॥
श्रीधरेर अनुगत से करे लिखन ।
सब लोक मान्य करि करये ग्रहण ॥१२१
श्रीधरानुगत कर भागवत व्याख्यान ।
अभिमान छाड़ि भज कृष्ण भगवान् ॥१२२
अपराध छाड़ि कर कृष्णसङ्कीर्त्तन ।
अचिराते पाबे तबे कृष्णेर चरण ॥"१२३
भट्ट कहे "यदि मोरे हइला प्रसन्न ।
एक दिन पुनः मोर मान निमन्त्रण ॥"१२४
प्रभु अवतीर्ण हैला जगत तारिते ।
मानिलेन निमन्त्रण ताँरे सुख दिते ॥१२५
जगतेर हित हउक एइ प्रभुर मत ।
दण्ड करि करे ताँर हृदय शोधन ॥१२६
स्वगणसहित प्रभुर निमन्त्रण कैल ।
महाप्रभु ताँरे तबे प्रसन्न हइल ॥१२७
जगदानन्द पण्डितेर शुद्ध गाढ़भाव ।
सत्यभामाप्राय प्रेमेर वाम्यस्वभाव ॥१२८
बार बार प्रणयकलह करे प्रभुसने ।
अन्योन्ये खटमटि चले दुइ जने ॥१२९
गदाधरपण्डितेर शुद्ध गाढ़भाव ।
रुक्मिणी देवी यैछे दक्षिणास्वभाव ॥१३०
ताँर प्रणयरोष देखिते प्रभुर इच्छा हय ।
ऐश्वर्य्यज्ञाने ताँर रोष ना उपजय ॥१३१
एइ लक्ष्य पाञा प्रभु कैला रोषाभास ।
शुनि पण्डितेर चित्ते उपजिल त्रास ॥१३२
पूर्व्वे येन कृष्ण यदि परिहास कैल ।
शुनि रुक्मिणीर मने त्रास उपजिल ॥१३३
वल्लभभट्टेर हय वात्सल्य-उपासन ।
बालगोपालमन्त्रे तिँहो करेन सेवन ॥१३४
पण्डितेर सने ताँर मन फिरि गेल ।
किशोरगोपाल-उपासनाय मन हैल ॥१३५

पण्डितेर ठाञि चाहे मन्त्रादि शिखिते ।
पण्डित कहे "एइ कर्म्म नहे आमा हैते ॥१३६
आमि परतन्त्र, आमार प्रभु गौरचन्द्र ।
ताँर आज्ञा बिना आमि ना हइ स्वतन्त्र ॥१३७
तुमि ये आमार ठाञि कर आगमन ।
ताहातेइ प्रभु मोरे देन ओलाहन ॥"१३८
एइमत भट्टेर कतक दिन गेल ।
शेषे यदि प्रभु ताँरे सुप्रसन्न हइल ॥१३९
निमन्त्रणेर दिने पण्डित बोलाइला ।
स्वरूप जगदानन्द गोविन्द पाठाइला ॥१४०
पथे पण्डितेरे स्वरूप कहेन वचन ।
"परीक्षिते प्रभु तोमाके कैल उपेक्षण ॥१४१
तुमि केन आसि ताँरे ना दिल ओलाहन ।
भीतप्राय हञा केने करिले सहन ॥"१४२
पण्डित कहेन "प्रभु सर्व्वज्ञशिरोमणि ।
ताँर सने हठ करिब, भाल नाहि मानि ॥१४३
येइ कहेन सेइ सहि निज शिरे धरि ।
आपने करिबे कृपा, गुण दोष विचारि ॥"
१४४॥
एत बलि पण्डित प्रभुर द्वारे आइला ।
रोदन करिया प्रभुर चरणे पडिला ॥१४५
ईषत हासिया प्रभु कैल आलिङ्गन ।
सबा शुनाइया कहे मधुर वचन ॥१४६
"आमि चालाइल तोमा तुमि ना चलिला ।
क्रोधे किछु ना कहिला सकलि सहिला ॥१४७
आमार भङ्गिते तोमार मन ना चलिला ।
सुदृढ़ सरलभावे आमारे किनिला ॥"१४८
पण्डितेर भावमुद्रा कहने ना याय ।
गदाधरप्राणनाथ नाम हैल याय ॥१४९
पण्डिते प्रभुर प्रसाद कहेन ना याय ।
गदाधर गौराङ्ग बलि लोके यारे गाय ॥१५०
चैतन्यप्रभुर लीला के बुझिते पारे ।
एक लीलाय बहे गङ्गार शत शत धारे ॥
१५१॥
पण्डितेर सौजन्य आर ब्रह्मण्यता गुण ।
दृढ़प्रेममुद्रा लोके करिल ख्यापन ॥१५२
अभिमान-पङ्क धुञा भट्टेरे शोधिल ।
सेइ द्वाराय आर सब लोके शिखाइल ॥१५३
अन्तरे अनुग्रह, वाह्ये उपेक्षार प्राय ।
वाह्यार्थ येइ लय सेइ नाश याय ॥१५४
निगूढ़ चैतन्यलीला बुझिते कार शक्ति ।
सेइ बुझे गौरचन्द्रे दृढ़ यार भक्ति ॥१५५
दिनान्तरे पण्डित कैल प्रभुर निमन्त्रण ।
प्रभु ताँहा भिक्षा कैल लैञा भक्तगण ॥१५६
ताँहाइ वल्लभभट्ट प्रभुर आज्ञा लैला ।
पण्डित ठाञि पूर्व्वसब प्रार्थित सिद्ध कैला ॥
१५७॥
एइ त कहिल वल्लभभट्टेर मिलन ।
याहार श्रवणे पाय गौर-प्रेमधन ॥१५८
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१५९

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे वल्लभभट्ट मिलनं नाम सप्तम परिच्छेदः ॥७॥



अष्टम परिच्छेद ।



तं वन्दे कृष्णचैतन्यं रामचन्द्रपुरीभयात् ।
लौकिकाहारत: स्वयं यो भिक्षान्नं समकोचयत् ॥१

टीका—य: रामचन्द्रपुरीभयात् लौकिकाहारत: स्वं निजं भिक्षान्नं समकोचयत्, अहं तं कृष्णचैतन्यं वन्दे ॥१

जिन्होंने रामचन्द्रपुरी के भय से निज भक्ष्यान्न का सङ्कोच किया था, मैं उन श्रीकृष्ण चैतन्य देव को प्रणाम करता हूँ ॥१

जय जय श्रीचैतन्य करुणासिन्धु अवतार ।
ब्रह्मा शिवादिक भजे चरण याँहार ॥१
जय जय अवधूत प्रभु नित्यानन्द ।
जगत बान्धिल यिँह दिया प्रेमफान्द ॥२

जय जय अद्वैत ईश्वर-अवतार ।
कृष्ण अवतारि कैल जगत निस्तार ॥३
जय जय श्रीवासादि यत भक्तगण ।
श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु याँर प्राणधन ॥४
एइमत गौरचन्द्र निज भक्त सङ्गे ।
नीलाचले क्रीडा करे कृष्ण-प्रेम-रङ्गे ॥५
हेनकाले रामचन्द्रपुरी गोसाञि आइला ।
परमानन्दपुरी आर प्रभुरे मिलिला ॥६
परमानन्दपुरी कैल चरणवन्दन ।
पुरी गोसाञि कैल ताँरे दृढ़ आलिङ्गन ॥७
महाप्रभु कैल तारे दण्डवत नति ।
आलिङ्गन करि तिँह कैल कृष्णस्मृति ॥८
तिन जनें इष्टगोष्ठी कैल ततक्षण ।
जगदानन्दपण्डित ताँरे कैल निमन्त्रण ॥९
जगन्नाथेर प्रसाद आनिल भिक्षार लागिया ।
यथेष्ट भिक्षा करिल तिँह निन्दार लागिया ॥१०
भिक्षा करि कहे पुरी "जगदानन्द शुन ।
अवशेष प्रसाद तुमि करह भक्षण ॥"११
आग्रह करिया ताँरे बसि खाओइला ।
आपने आग्रह करि परिवेशन कैला ॥१२
आग्रह करिया पुन: पुन: खाओयाइला ।
आचमन करि निन्दा करिते लागिला ॥१३
"शुनि चैतन्यगण करेबहुत भक्षण ।
सत्य सेइ वाक्य, साक्षात् देखिल एखन ॥१४
सन्न्यासीके एत खाओइया करे धर्म्मनाश ।
वैरागी हैया एत खाओ, वैराग्ये नाहि भास ॥"
१५॥

एइ त स्वभाव ताँर,—आग्रह करिया ।
पिछे निन्दा करे आगे बहुत खाओयाइया ॥
१६॥

पूर्व्वे यबे माधवेन्द्रपुरी करे अन्तर्द्धान ।
रामचन्द्रपुरी तबे आइला ताँर स्थ न ॥१७
पुरीगोस्वामी करे कृष्णनाम सङ्कीर्त्तन ।
"मथुरा ना पाइनु" बले करेन क्रन्दन ॥१८
रामचन्द्रपुरी तबे उपदेशे ताँरे ।
शिष्य हञा गुरुके कहे, भय नाहि करे ॥१९
"तुमि पूर्ण ब्रह्मानन्द करह स्मरण ।
ब्रह्मवित हञा केन करह रोदन ॥"२०

शुनि माधवेन्द्र-मने क्रोध उपजिल ।
"दूर दूर पापी बलि भर्त्सना करिल ॥२१
"कृष्णकृपा ना पाइनु, ना पाइनु मथुरा ।
आपन दुःखे मरों, एइ दिते आइल ज्वाला ॥
२२॥
मोरे मुख ना देखाबि तुइ याओ यथि तथि ।
तोरे देखि मैले मोर हबे असद्गति ॥२३
कृष्ण ना पाइनु मरों आपनार दुःखे ।
मोरे ब्रह्म उपदेशे एइ छार मूर्खे ॥"२४
एइँ ये श्रीमाधवेन्द्र उपेक्षा करिल ।
सेइ अपराधे इहार वासना जन्मिल ॥२५
शुष्क ब्रह्मज्ञाने नाहि कृष्णोर सम्बन्ध ।
सर्व्वलोके निन्दा करे, निन्दाते निर्बन्ध ॥
२६॥
ईश्वरपुरी करेन श्रीपाद-सेवन ।
स्वहस्ते करेन मलमूत्रादिमार्ज्जन ॥२७
निरन्तर कृष्णनाम कराये स्मरण ।
कृष्ण-नाम-लीला शुनान अनुक्षण ॥२८
तुष्ट हञा पुरी ताँरे कैल आलिङ्गन ।
वर दिल "कृष्णे तोमार हउक प्रेमधन ॥"२९
सेइ हैते ईश्वरपुरी प्रेमेर सागर ।
रामचन्द्रपुरी हैल सर्व्वनिन्दाकर ॥३०
महदनुग्रह-निग्रहेर साक्षी दुइ जन ।
एइ दुइ द्वारे शिक्षाइल जगजन ॥३१
जगद्गुरु माधवेन्द्र करि प्रेमदान ।
एइ श्लोक पड़ि तिँह करिल अन्तर्धान ॥३२

तथाहि पद्यावल्यां (३४।३०)

अयि दीनदयार्द्र नाथ हे मथुरानाथ कदावलोक्यसे ।
हृदयं त्वदलोककातरं दयित भ्राम्यति किं करोम्यहं ॥२

हे दीन दयार्द्र ! हे नाथ ! हे मथुरापते !
कब दर्शन करूँगा ? हे दयित !
तुम्हें न देखकर मेरा यह कातर हृदय
अस्थिर हो उठा है, मैं क्या करूँ ॥२॥

एइ श्लोके कृष्णप्रेम कैला उपदेश ।
कृष्णोर विरह भक्तेर भावविशेष ॥३३
पृथिवीते रोपण करि गेला प्रेमाकुंर ।
सेइ प्रेमाकुंरेर वृक्ष चैतन्यठाकुर ॥३४
प्रस्तावे कहिल परीगोसाञिर निर्यान ।
येइ इहा शुने, सेइ बड़ भाग्यवान् ॥३५
रामचन्द्रपुरी ऐछे रहिला नीलाचले ।
विरक्तस्वभाव, कभु रहे कोन स्थले ॥३६
अनिमन्त्रण भिक्षा करे, नाहिक निर्णय ।
अन्येर भिक्षार स्थिति लयेन निश्चय ॥३७
प्रभुर निमन्त्रणे लागे कौडि चारिपण ।
प्रभु काशीश्वर गोविन्दखाय तिन जन ॥३८
प्रत्यह प्रभुर भिक्षा इति उति हय ।
केह यदि मूल्य आने चारिपण निर्णय ॥३९
प्रभुर स्थिति रीति भिक्षा शयन प्रयाण ।
रामचन्द्रपुरी करे छिद्रानुसन्धान ॥४०
प्रभुर यतेक गुण स्पर्शिते नारिल ।
छिद्र चाहि बुले, काँहो छिद्र ना पाइल ॥४१
"सन्नचासी हइया करे मिष्टान्नभक्षण ।
एइ भोगे कैछे हय इन्द्रियबारण ॥"४२

एइ निन्दा करि कहे सर्व्वलोकस्थाने ।
प्रभुके देखिते अवश्य आइसे प्रतिदिने ॥४३
प्रभु गुरुबुद्ध्ये करे सम्भ्रम सम्मान ।
तिँहो छिद्र चाहे बुले, एइ ताँर काम ॥४४
यत निन्दा करे, ताहा प्रभु सब जाने ।
तथापि आदर करे बड़इ सम्भ्रमे ॥४५
एक दिन प्रातःकाले आइला प्रभुर घर ।
पिपीलिका देखि किछु कहेन उत्तर ॥४६

तथाहि रामचन्द्रपुरी वाक्यं—

रात्रावत्र ऐक्षवमासीत् तेन हेतुना
पिपीलिकाः सञ्चरन्ति ।
अहो विरक्तानां सन्न्यासिनामिन्द्रियलालसेति
ब्रुवन्नुत्थाय गतः ॥३

टीका—अत्र रात्रौ ऐक्षवं मिष्टान्नं आसीत्, तेन हेतुना पिपीलिकाः सञ्चरन्ति । अहो ! विरक्तानां सन्नायासिनां इयं इन्द्रियलालसा ! इति ब्रुवन् सन् सः उत्थाय गतः ॥३

रामचन्द्रपुरी का कथन है—

गत रात्रि में यहाँ मिष्ठान्न था अतः पिपीलिका का सञ्चरण हो रहा है, अहो विरक्त सन्यासी गण की इन्द्रिय लालसा इस प्रकार है ? इस प्रकार कहकर रामचन्द्रपुरी वहाँ से चले गये ॥३

प्रभु पूर्व्व पुर्व्व निन्दा करियाछेन श्रवण ।
एवे साक्षात् शुनिलेन कल्पित निन्दन ॥४७
सहजेइ पिपीलिका सर्व्वत्र बेड़ाय ।
ताहाते तर्क उठाइया दोष लागाय ॥४८
शुनितेइ प्रभुर सङ्कोच हय मन ।
गोविन्दे बोलाजा किछु कहेन बचन ॥४९

"आजि हइते भिक्षा मोर एइ त नियम ।
पिण्डाभोगेर एक चौठी, पाँच गण्डार व्यञ्जन ५०॥
इहा बइ अधिक आर किछु ना आनिबा ।
अधिक आनिले आमा एथा ना देखिबा ॥५१
सकल वैष्णवे गोविन्द कहे एइ बात ।
शुनि सबार माथे यैछे हैल वज्रपात ॥५२
रामचन्द्रपुरीके सबाइ देय तिरष्कार ।
"एइ पापिष्ठ आसि प्राण लइल सबार ॥"५३
सेइ दिने एक विप्र कैल निमन्त्रण ॥
एक चौठी भात, पाँच गण्डार व्यञ्जन ॥५४
एइमात्र गोविन्द कैल अङ्गीकार ।
माथाय घात मारे विप्र करे हाहाकार ॥५५
सेइ भात व्यञ्जन प्रभु अर्द्धेक खाइल ।
ये किछु रहिल ताहा गोविन्द पाइल ॥५५
अर्द्धाशन करे प्रभु, गोविन्द अर्द्धाशन ।
सब भक्तगण तबे छाड़िल भोजन ॥५६
गोविन्द काशीश्वरे प्रभु कैल आज्ञापन ।
"दुँहे अन्यत्र मागि कर उदरभरण ॥५७
एइरूप महादुःखे दिन कत गेल ।
शुनि रामचन्द्रपुरी प्रभुपाश आइल ॥५८
प्रणाम करि कैल प्रभुर चरणवन्दन ।
प्रभुके कहये किछु हासिया वचन ॥५९
"सन्नयासीर धर्म नहे इन्द्रियतर्पण ।
यैछे तैछे करे मात्र उदरभरण ॥६०
तोमाके क्षीण देखि, शुनि, कर अर्द्धाशन ।
एइ शुष्क वैराग्य, नहे सन्नयासीर धर्म्म ॥६१

यथा योग्य उदर भरे, ना करे विषयभोग ।
सन्न्यासीर तबे सिद्धि हय ज्ञानयोग ॥"६२

तथाहि श्रीमद्भगवद्गीतायाम् (६।१६)—

नात्यश्नतोऽपि योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः ।
न चातिस्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्ज्जुन ॥४

टीका—हे अर्ज्जुन ! अत्यश्नतः योगः न भवति; एकान्तं अनश्नतः अपि न, अतिस्वप्नशीलस्य न, जाग्रतश्च न ।।४

श्रीमद् भगवद् गीता में भगवान् कहे हैं—हे अर्जुन ! अति भोजन परायण एकान्त अनाहारी, अति निद्रातुर एवं अधिक जागरण शील का योग साधन नहीं होता है ।।४

तथाहि श्रीमद् भगवद् गीतायाम् (६।१७)—

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्म्मसु ।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ।।५

टीका—युक्ताहारविहारस्य कर्म्मसु युक्तचेष्टस्य, युक्तस्वप्नावबोधस्य दुःखहा योगो भवति ।५

श्रीमद् भागवद् गीता में उक्त है—आहार, विहार, कर्म चेष्टा, निद्रा एवं जागरण, नियमित होने से ही उनका साधन दुःख नाशन होता है ।।५

प्रभु कहे "अज्ञ बालक मुञि शिष्य तोमार ।
मोरे शिक्षा देओ, एइ भाग्य आमार ॥"६३
एत शुनि रामचन्द्रपुरी उठि गेला ।
भक्तगण अर्द्धाशन करे, गोसाञि शुनिला ॥६४
आर दिन भक्तगण सह परमानन्दपुरी ।
प्रभुपाशे निवेदिल दैन्यविनय करि ॥६५

"रामचन्द्रपुरी हय निन्दुक स्वभाव ।
तार बोले अन्न छाड़ि किबा हबे लाभ ॥६६
पुरीर स्वभाव, यथेष्ट आहार करिया ।
ये खाय, ताहारे खाओयाय यतन करिया ॥६७॥
खाओयाइया पुन तारे करेन निन्दन ।
"एत अन्न खाओ, तोमार कत आछे धन ॥६८॥
सन्न्यासीके एत खाओयाओ, कर धर्म्मनाश ।
अतएव जानिनु, तोमार किछु नाहि भास ॥६९
के कैछे व्यवहारे, केवा कैछे खाय ।
एइ अनुसन्धान तिँहो करेन सदाय ॥७०
शास्त्रे येइ दुइ कर्म्म करियाछेन वर्जन ।
सेइ दुइ कर्म्म निरन्तर इँहार करण ॥७१

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।२८।१)—

परस्वभावकर्म्माणि न प्रशंसेन्न गर्हयेत् ।
विश्वमेकात्मकं पश्यन् प्रकृत्या पुरुषेण च ॥६

टीका—परस्वभावकर्म्माणि न प्रशंसेत्, न गर्हयेद्, प्रकृत्या पुरुषेण च विश्वं पश्यन् सन् तिष्ठेत ।।६

श्रीमद् भागवत के ११।२८।१ में उक्त है—अपर के स्वभाव एवं कर्म्म की प्रशंसा एवं निन्दा न करे, विश्व को प्रकृति पुरुष के एकात्मत्व देखना विज्ञ व्यक्ति का कर्त्तव्य है ।।६

तार मध्ये पूर्व्व विधि प्रशंसा छाड़िया ।
परविधि निन्दा करे बलिष्ठ जानिया ॥७२

तथाहि पाणिनिसूत्रं—

पूर्व्वपरयोर्मध्ये परविधिर्बलवान् ॥७

पूर्व विधि एवं पर विधि के मध्य में पर विधि ही बलवान है ॥७

"यार गुण शत आछे, ना करे ग्रहण ।
गुणमध्ये छले करे दोष आरोपण ॥७३
इँहार स्वभाव इहा कहिते ना जुयाय ।
तथापि कहिये किछु मर्म्मदुःख पाय ॥७४
इँहार वचने केन अन्न त्याग कर ।
पूर्व्ववत् निमन्त्रण मान, सबार बोल धर ॥"७५
प्रभु कहेन "सबे केन पुरीके कर रोष ।
सहज धर्म्म कहे तिँहो, ताँर किबा दोष ॥७६
यति हञा जिह्वालम्पट अत्यन्त अन्याय ।
यतिधर्म्म प्राण राखिते आहारमात्र खाय ॥"
७७॥

तबे सबे मिलि प्रभुरे बहु यत्न कैल ।
सबार आग्रहे प्रभु अर्द्धेक राखिल ॥७८
दुइ पण कौड़ि लागे प्रभुर निमन्त्रणे ।
कभु दुइ जन भोक्ता कभु तिन जने ॥८९
अभोज्यान्न विप्र यदि करे निमन्त्रण ।
प्रसादमूल्ये लइते लागे कौड़ि दुइ पण ॥८०
भोज्यान्न विप्र यदि निमन्त्रण करे ।
किछु प्रसाद आने, किछु पाक करे घरे ॥८१
पण्डितगोसाञि भगवानाचार्य्य सार्व्वभौम ।
निमन्त्रणेर दिने यदि करे निमन्त्रण ॥८२
ताँ सबार इच्छाय प्रभु करेन भोजन ।
ताँहा प्रभुर स्वातन्त्र्य नाइ, यैछे तार मन ॥८३
भक्तगणे सुख दिते प्रभुर अवतार ।
याँहा यैछे योग्य ताहा करेन व्यवहार ॥८४
कभु त लौकिक रीति येन इतर जन ।
कभु स्वतन्त्र करेन ऐश्वर्य्यप्रकटन ॥८५
कभु रामचन्द्रपुरीर हन भृत्यप्राय ।
कभु ताँरे नाहि माने, देखे तृणप्राय ॥८६
ईश्वरचरित्र प्रभुर बुद्धि-अगोचर ।
यबे प्रभु येइ करेन, सेइ मनोहर ॥८७
एइमत रामचन्द्रपुरी नीलाचले ।
दिन कत रहि गेला तीर्थ करिबारे ॥८८
तिँहो गेले प्रभुर गण हैल हरषित ।
शिरेर पाथर येन पड़िल आचम्बित ॥८९
स्वच्छन्दे निमन्त्रण प्रभुर कीर्त्तन नर्त्तन ।
स्वच्छन्दे करेन तबे प्रसाद भोजन ॥९०
गुरु उपेक्षा कैले ऐछे फल हय ।
क्रमे ईश्वर पर्य्यन्त अपराधे ठेकय ॥९१
यद्यपि गुरुबुद्धेय प्रभु ताँर दोष ना लइल ।
ताँर फल द्वारे लोके शिक्षा कराइल ॥९२
श्रीचैतन्यचरित्र येन अमृतेर पूर ।
शुनिते श्रवणे लागये मधुर ॥९३
चैतन्यचरित्र लिखि शुन एकमने ।
अनायासे पाइबे प्रेम श्रीकृष्णचरणे ॥९४
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥९५

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे भिक्षासङ्कोचनं नाम अष्टमः परिच्छेदः ॥८॥

नवम परिच्छेद ।



अगण्यधन्यचैतन्यगणानां प्रेमवन्यया ।
निन्येऽधन्यजनस्वान्त:मरु: शश्वदनुपतां ॥१

टीका—अगण्यधन्यचैतन्यगणनां असंख्यपरम-भागवतानां चैतन्यानुचरानां प्रेमवन्यया अधन्यजन-स्वान्त:मरु: शश्वत सर्व्वदा अनुपतां निन्ये ॥१

श्रीचैतन्य महाप्रभु के असंख्य महाभागवत अनुचर वृन्द की प्रेम वन्या में मूढ़ व्यक्ति वृन्द की चित्तरूप मरुभूमि सर्वदा आप्लावित हुई ॥१

जय जय श्रीकृष्णचैतन्य दयामय ।
जय जय नित्यानन्द करुणा हृदय ॥१
जयाद्वैताचार्य्य जय जय दयामय ।
जय गौर-भक्तगण सर्व्वरसमय ॥२
एइमत महाप्रभु भक्तगण सङ्गे ।
नीलाचले बास करे कृष्ण-प्रेमरङ्गे ॥३
अन्तरे बाहिरे कृष्णविरह-तरङ्ग ।
नानाभावे व्याकुल मन आर अङ्ग ॥४
दिने नृत्य कीर्त्तन जगन्नादरशन ।
रात्रे राय-स्वरूप सने रस-आस्वादन ॥५
त्रिजगतेर लोक आसि करये दर्शन ।
येइ देखे, सेइ पाय कृष्ण-प्रेमधन ॥६
मनुष्येर वेशे देव-गन्धर्व्व-किन्नर ।
सप्त पातालेर यत दैत्य-विषधर ॥७
सप्तद्वीपे नवखण्डे बैसे यत जन ।
नानावेशे आसि करे प्रभुर दर्शन ॥८
प्रह्लाद-बलि-व्यास-शुक-आदि मुनिगण ।
प्रभु आसि देखे, प्रेमे हय अचेतन ॥९
बाहिरे फुकारे लोक दर्शन ना पाञा ।
"कृष्ण कह" बले प्रभु बाहिरे आसिञा ॥१०
प्रभुर दर्शने सब लोक प्रेमे भासे ।
एइमत याय प्रभुर रात्रि दिवसे ॥११
एक दिन लोक आसि प्रभुरे निवेदिल ।
"गोपीनाथके बड़जाना चाङ्गे चड़ाइल ॥१२
तबे खड़्ग पाति तार उपरे डारि दिये ।
प्रभु रक्षा करेन यबे, तबे निस्तारिवे ॥१३
सवंशे तोमार सेवक भवानन्दराय ।
तार पुत्र तोमार सेवक, राखिते जुयाय ॥१४
प्रभु कहे "राजा केन करये ताड़न ।
तबे सेइ लोक कहे सब विवरण ॥१५
"गोपीनाथपट्टनायक रामरायेर भाइ ।
सर्व्वकाल हय सेइ राजविषयी ताइ ॥१६
मालजाठया दण्डपाटे ताँर अधिकार ।
साधि पाड़ि आनि द्रव्य दिल राजद्वारे ॥१७
दुइ लक्ष काहन ताँर ठाँइ बाकी हैल ।
दुइ लक्ष काहन कौड़ि राजा तो मागिल ॥१८
तेँह कहे "स्थूल द्रव्य नाहि ये गणिया दिव ।
क्रमे क्रमे बेचि किनि द्रव्य भरिब ॥१९
घोड़ा दश बारो हय लह मूल्य करि ।"
एत बलि घोड़ा आनि राजद्वारे धरि ॥२०

एक राजपुत घोड़ार मूल्य भाल जाने ।
ताँरे पाठाइल राजा पात्रमित्र सने ॥२१
सेइ राजपुत मूल्य करे घटाइया ।
गोपीनाथेर क्रोध हैल मूल्य शुनिया ॥२२
सेइ राजपुतेर स्वभाव ग्रीवा फिराय ।
ऊर्द्धमुखे बार बार इति उति चाय ॥२३
तारे निन्दा करि कहे सगर्व्ववचने ।
"राजा कृपा करे तारे भय नाहि माने ॥२४
आमार घोड़ार ग्रीवा उच्च, ऊर्द्ध नाहि चाय ।
ताते घोड़ार घाटि मूल्य करिते ना जुयाय ॥"
२५॥
शुनि राजपुतेरमने क्रोध उपजिल ।
राजार ठाञि याइ बहु लागानि करिल ॥२६
"कौड़ि नाहि दिबे एइ बेड़ाय छद्म करि ।
आज्ञा कर, चाङ्गे चड़ाइया लइ कौड़ि ॥"२७
राजा बले "येइ भाल कर सेइ याय ।
ये उपाये कौड़ि पाइ कर से उपाय ॥२८
राजपुत्र आसि तबे चाङ्गे चड़ाइल ।
खड़ग उपरे फेलाइते खड़ग पातिल ॥"२९
शुनि प्रभु कहे किछु प्रणय रोष ।
राजकौड़ि दिबार नहे, राजार किबा दोष ॥
बिलात साधिया खाय, नाहि राजभय ।
दाँरी नाटुयाके दिया करे नाना व्यय ॥३१
येइ चतुर सेइ करुक राज विषय ।
राजद्रव्य शोधि पाय, तारा करे व्यय ॥३२
हेनकाले आर लोक आइला धाइया ।
वाणीनाथादि सवंशे लैया गेल बान्धिया ॥
३३॥
प्रभु कहे "राजा आपन लेखार द्रव्य लैब ।
आमि विरक्त सन्न्यासी ताँहे कि करिब ॥३४
तबे स्वरूपादि गोसाञि यत भक्तगण ।
प्रभुर चरणे सबे कैल निवेदन ॥३५
"रामानन्दरायेर गोष्ठी सब तोमार दास ।
तोमार उचित नहे करिते उदास ॥"३६
शुनि महाप्रभु कहे सक्रोधवचने ।
"मोरे आज्ञा देह सबे, जाइ राजस्थाने ॥३७
तोमा सबार एइ मत, राज-ठाञि याञा ।
कौड़ि मागि लइ आँचल पातिया ॥३८
पाँचगण्डार पात्र हय सन्न्यासी ब्राह्मण ।
मागिले वा केने दिबे दुइ लक्ष काहन ॥"३९
हेनकाले आर लोक आइल धाइया ।
"खड़गेर उपरे गोपीनाथे दितेछे डारिया ॥"
४०॥
शुनि प्रभुरगण करे प्रभुके अनुनय ।
प्रभु कहे "आमि भिक्षुक, आमा हैते नय
४१॥
तारे रक्षा करिते यदि हय सबार मने ।
सबे मिलि याह जगन्नाथेर चरणे ॥४२
ईश्वर जगन्नाथ, ताँर हाते सर्व्व अर्थ ।
कर्त्तुमकर्त्तुमन्यथा करिते समर्थ ॥"४३
इँहा यदि महाप्रभु एतेक कहिला ।
हरिचन्दन पात्र याइ राजारे कहिला ॥४४
"गोपीनाथपट्टनायक सेवक तोमार ।
सेवकेरे प्राणदण्ड नहे व्यवहार ॥४५

विशेष ताहार ठाञि कौड़ि बाकी हय ।
प्राण निले किबा लाभ, निज धन क्षय ॥४६
यथार्थ मूल्ये घोड़ा लह, येबा बाकी हय ।
क्रमे क्रमे दिबे, व्यर्थ प्राण केने लय ॥''४७
राजा कहे "एइ बात आमि नाहि जानि ।
प्राण केन लब तार, द्रव्य चाहि आमि ॥४८
तुमि याइ कराह सकलसमाधान ।
द्रव्य यैछे आइसे, आर रहे तार प्राण ॥४६
तबे हरिचन्दन आसि जानारे कहिल ।
चाङ्गे हैते गोपीनाथे शीघ्र नामाइल ॥५०
"द्रव्य देह राजा मागे", उपाय पुछिल ।
"यथार्थ मूल्ये घोड़ा लह" तिहों त कहिल ॥
५१॥
"क्रमे क्रमे दिब आर यत किछु पारि ।
अविचारे प्राण लह कि बलिते पारि ॥''५२
यथार्थ मूल्य करि तबे सब घोड़ा लइल ।
आर द्रव्येर मुद्दति करि घरे पाठाइल ॥५३
एथा प्रभु सेइ मनुष्येरे प्रश्न कैल ।
"वाणीनाथ कि करे, यबे बान्धिया आनिल ॥''
५४॥
"वाणीनाथ निर्भयेते लय कृष्णनाम ।
हरेकृष्ण हरेकृष्ण कहे अविश्राम ॥५५
संख्या लागि दुइ हाते अङ्गुलीते लेखा ।
सहस्रादि पूर्ण हैल अङ्गे काटे रेखा ॥''५६
शुनि महाप्रभु हैल परम आनन्द ।
के बुझिते पारे गौरेर कृपाछन्दबन्ध ॥५७

हेनकाले काशीमिश्र आइला प्रभु-स्थाने ।
प्रभु तारे कहे किछु सोद्वेग वचने ॥५८
"इँहा रहिते नारि, याब आलालनाथ ।
नाना उपद्रव इँहा ना पाइ सोयाथ ॥५६
भवानन्दरायेर गोष्ठी करे राज विषय ।
नानाप्रकारे करे तारा राजद्रव्य व्यय ॥६०
राजार कि दोष, राजा निज द्रव्य चाय ।
दिते नारे द्रव्य तारा, आमारे जानाय ॥६१
राजा गोपीनाथे यदि चाङ्गे चड़ाइल ।
चारिबार लोक आसि मोरे जानाइल ॥६२
भिक्षुक सन्नयासी आमि निर्ज्जनबासी ।
आमाय दुःख देन निज दुःख कहि आसि ॥६३
आजि ताँरे जगन्नाथ करिल रक्षण ।
कालि के राखिबे, यदि ना दिबे राजधन ॥
६४॥
विषयीर वार्त्ता शुनि क्षुब्ध हय मन ।
ताते इँहा रहि मोर नाहि प्रयोजन ॥६५
काशीमिश्र कहे प्रभुर धरिया चरणे
"तुमि केन एइ बाते क्षोभ कर मने ॥६६
सन्नयासी विरक्त तोमार कार सने सम्बन्ध ।
व्यवहार लागि तोमा भजे, से ज्ञान-अन्ध ॥
६७॥
तोमार भजनफल तोमाते प्रेमधन ।
विषय लागि, तोमा भजे सेइ मूर्ख जन ॥६८
तोमा लागि रामानन्द राज्य त्याग कैल ।
तोमा लागि सनातन विषय छाड़िल ॥६६

तोमा लागि रघुनाथ सकल छाड़ि आइल ।
हेथाय ताहार पिता विषय पाठाइल ॥७०
तोमार चरण-कृपा हञाछे ताहारे ।
छत्रे मागि खाय, विषय स्पर्श नाही करे ॥७१
रामानन्देर भाइ गोपीनाथ महाशय ।
तोमा हैते विषयवाञ्छा तार इच्छा नय ॥७२
तार दुःख देखि तार सेवकादिगण ।
तोमाके जानाइल, याते अनन्यशरण ॥७३
सेइ शुद्ध भक्त, तोमा भजे तोमा लागि ।
आपनार सुख-दुःख हय भोगभागी ॥७४
तोमार अनुकम्पा चाहे, भजे अनुक्षण ।
अचिराते मिले तारे तोमार चरण ॥७५

तथाहि श्रीमद् भागवते (१०।१४।८)—

तत्तेऽनुकम्पां सुसमीक्ष्यमाणो
भुञ्जान एवात्मकृतं विपाकं ।
हृद्वाग्वपुर्भिर्विदधन्नमस्ते,
जीवेत यो मुक्तिपदे स दायभाक् ॥२

श्रीमद् भागवत के १०।१४।८ में ब्रह्मा भगवान् कृष्ण को कहे थे—हे "कृष्ण ! कब आपकी करुणा होगी" इस प्रकार आशा पथ को निरीक्षण कर अनासक्त रूप से निज कर्मफल भोग करते करते काय वाक्य मन से जो व्यक्ति आपको नमस्कार कर जीवित रहता वही व्यक्ति उत्तराधिकारीवत् मुक्ति विषय का अधिकारी होता है ॥२

"तुमि बसि रह केने याबे आलालनाथ ।
केह तोमा ना सुनाबे विषयीर बात ॥७६
यदि वा तोमार राखिते हय मन ।
आजि ये राखिल, सेइ करिबे रक्षण ॥७७

एत बलि काशी मिश्र गेल स्वमन्दिरे ।
मध्याह्ने प्रतापरुद्र आइल तार घरे ॥७८
प्रतापरुद्रेर एक आछये नियमे ।
यतदिन रहे तिँह श्रीपुरुषोत्तमे ॥७९
नित्य आसि करे मिश्रेर पादसम्वाहन ।
जगन्नाथ-सेवार करे भियान श्रवण ॥८०
राजा मिश्रेर चरण यबे चापिते लागिला ।
तबे मिश्र तारे किछु इङ्गिते कहिला ॥८१
"देव ! शुन आर एक अपरूप बात ।
महाप्रभु क्षेत्र छाड़ि यान आलालनाथ ॥"८२
शुनि राजा दुःखी हैल पुछिलेन कारण ।
तबे मिश्र कहे तारे सब विवरण ॥८३
"गोपीनाथपट्टनायकके यबे चाङ्गे चड़ाइला ।
ताँर सेवक सब आसि प्रभुके कहिला ॥८४
शुनिया क्षोभित हैल महाप्रभु मन ।
क्रोधे गोपीनाथे कैल बहुत भर्त्सन ॥८५
अजितेन्द्रिय हञा करे राजविषय ।
नाना असत्पथे करे राजद्रव्य व्यय ॥८६
ब्रह्मस्व-अधिक एइ हय राजधन ।
ताहा हरि भोग करे महापापी जन ॥८७
राजार वर्त्तन खाय आर चुरि करे ।
राजदण्ड्य हय सेइ शास्त्रेर विचारे ॥८८
निज कौड़ि मागे राजा, नाहि करे दण्ड ।
राजा महाधार्मिक, एइ पापी भण्ड ॥८९
राजकड़ि ना देइ आमाके फुकारे ।
एइ महादुःख, इहा के सहित पारे ॥९०
आलालनाथ याइ ताँहा निश्चिन्ते रहिब ।
विषयीर भालमन्दवार्त्ता ना शुनिब ॥९१

एत शुनि कहे राजा पाजा मने व्यथा ।
"सब द्रव्य छाड़ि, यदि प्रभु रहे एथा ॥९२
एक क्षण प्रभुर यदि पाइये दर्शन ।
कोटिचिन्तामणि लाभ नहे तार सम ॥९३
कोन् छार पदार्थ एइ दुइ लक्ष काहन ।
प्राण राज्य करों प्रभुपदे निर्म्मञ्छन ॥"९४
मिश्र कहे "कौड़ि छाड़िबे नहे प्रभुर मन ।
तारा दुःख पाय, एइ ना याय सहन ॥"९५
राजा कहे "तारे आमि दुःख नाहि दिये ।
चाङ्गे चड़ा खड़गे डारा आमि ना जानिये ॥ ९६॥
पुरुषोत्तमजानारे तिँह कैल परिहास ।
सेइ जाना ताहारे देखाइल मिथ्या त्रास ॥९७
तुमि याओ प्रभुरे राखह यत्न करि ।
एइ मुञि ताँहारे छाड़िनु सब कौड़ि ॥९८
मिश्र कहे "कौड़ि छाड़िबे नहे प्रभुर मने ।
कौड़ि छाड़िले प्रभु कदाचित् सुख माने ॥"९९
राजा कहे "कौड़ि छाड़ि इहा ना कहिबा ।
सहजे मोर प्रिय तारा, इहा जानाइबा ॥१००
भवानन्दराय आमार पूज्य गर्व्वित ।
ताँर पुत्रगणे आमार सहजेइ प्रीत ॥"१०१
एत बलि मिश्रे नमस्करि घरे गेला ।
गोपीनाथ-बड़जानारे डाकिया आनिला ॥१०२
राजा कहे "सब कौड़ि तोमारे छाड़िल ।
से मालजाठ्या पाट पुनः तोमाय दिल ॥१०३
आर बार ऐछे ना खाइह राजधन ।
आजि हैते दिल तोमाय द्विगुण वर्त्तन ॥१०४
एत बलि नेत धटी ताँरे पराइल ।
"प्रभु-आज्ञा लञा याह विदाय तोमा दिल ॥ १०५॥
परमार्थ प्रभुर कृपा, सेह रहु दूरे ।
अनन्त ताहार फल, के बलिते पारे ॥१०६
राज्यविषय फल एइ, कृपार आभासे ।
ताहार गणना कारो मने राहि आइसे ॥१०७
काँहा चाङ्गे चड़ाइया लय धन प्राण ।
काँहा सब छाड़ि सेइ राज्य दिल दान ॥१०८
काँहा सर्व्वस्व बेचि लय, देया ना याय कौड़ि ।
काँहा द्विगुण वर्त्तन, पराय नेतधटि ॥१०९
प्रभुर इच्छा, नाहि ताँरे कौड़ि छाड़ाइब ।
द्विगुण वर्त्तन करि पुनः तारे दिब ॥११०
तथापि ताँर सेवक आसि कैल निवेदन ।
ताते क्षुब्ध हैल महाप्रभुर मन ॥१११
विषयसुख दिते प्रभुर नाहि मनोबल ।
निवेदन प्रभावे तबु एत फल ॥११२
के कहिते पारे गौरेर आश्चर्य्य स्वभाव ।
ब्रह्मा-शिव-आदि याँर ना पाय अर्न्तभाव ।११३
एथा काशीमिश्र आसि प्रभुर चरणे ।
राजार चरित्र सब कैल निवेदने ॥११४
प्रभु कहे "काशीमिश्र कि तुमि करिला ।
राजप्रतिग्रह तुमि आमा कराइला ॥"११५
मिश्र कहे "शुन प्रभु राजार वचने ।
अकपटे राजा एइ कैल निवेदने ॥११६
"प्रभु येन नाहि जाने आमार लागिया ।
दुइ लक्ष काहन कौड़ि दिलेक छाड़िया ॥ ११७॥

भवानन्देर पुत्र सब मोर प्रियतम ।
इँहा सबाकारे आमि देखों आत्मसम ॥११८
अतएव याहा ताहा देङ अधिकार ।
खाय पिये लुटे विलाय, ना करों विचार ।११९
राजमहीन्द्रार राजा कैनु रामराय ।
ये खाइल, येबा दिल, नाहि लेखादाय ॥१२०
गोपीनाथ एइमत विषय करिञा ।
दुइ चारि लक्ष काहन रहेत खाइञा ॥१२१
किछु देय, किछु ना देय, ना करे विचार ।
जाना सहित अप्रीते दुःख पाइल एइ बार ।१२२
जाना एत कैल, इहा मुञि नाहि जानो ।
भवानन्देर पुत्रसब आत्मा करि मानो ॥१२३
ताँर लागि द्रव्य छाड़ि इहा मतिमाने ।
सहजेइ मोर प्रीति हय ताँहा सने ॥"१२४
शुनिया राजार विनय प्रभुर आनन्द ।
हेनकाले आइल तथा राय भवानन्द ॥१२५
पञ्च पुत्र सह आसि पड़िला चरणे ।
उठाइया प्रभु ताँरे कैल आलिङ्गने ॥१२६
रामानन्दराय-आदि सबाइ मिलिला ।
भवानन्दराय तबे बलिते लागिला ॥१२७
"तोमार किङ्कर एइ सब मोर कुल ।
ए बिपदे राखि प्रभु पुनः निले मूल्य ॥१२८
भकतवात्सल्य एबे प्रकट करिले ।
पूर्व्वे येन पञ्च पाण्डवे विपदे तारिले ॥"१२९
नैतधटी माथे गोपीनाथ चरणे पड़िला ।
राजार वृत्तान्त कृपा सकलि कहिला ॥१३०
"बाकी कौड़ी बाद द्विगुण वर्त्तन करिल ।
पुनः विषय दिया नेतधटी पराइल ॥१३१
काँहा चाङ्गेर उपरे सेइ मरणप्रमाद ।
काँहा नेतधटी पुनः ए सब प्रसाद ॥१३२
चाङ्गेर उपरे तोमार चरण ध्यान कैल ।
चरणस्मरणप्रभावे एइ फल पाइल ॥१३३
लोके चमत्कार मोर ए सब देखिया ।
प्रशंसे तोमार कृपा-महिमा गाइया ॥१३४
किन्तु तोमा स्मरणेर नहे एइ मुख्य फल ।
फलाभास एइ, याते विषय चञ्चल ॥१३५
रामराय वाणीनाथे कैले निर्व्विषय ।
से कृपा आमाते नाहि याते ऐछे हय ॥१३६
शुद्ध कृपा कर गोसाञि घुचाह विषय ।
निर्व्विन्न हइलुँ मोते विषय ना रय ॥"१३७
प्रभु कहे, सन्न्यासी यबे हबे पञ्चजन ।
कुटुम्बबाहुल्य तोमार के करे भरण ॥१३८
महा विषय कर, किबा विरक्त उदास ।
जन्मे जन्मे तुमि पञ्च मोर निज दास ॥१३९
किन्तु मोर करिह एक आज्ञार पालन ।
व्यय ना करिह किछु राजार मूलधन ॥१४०
राजार मूलधन दिया ये किछु लभ्य हय ।
सेइ धन करिह नाना धर्म्म-कर्म्मे व्यय ॥१४१
असद्व्यय ना करिह याते दुइ लोक याय ।
एत बलि सबाकारे दिलेन विदाय ॥१४२
रायेर घरे प्रभुर कृपाविवर्त्त कहिल ।
भक्त-वात्सल्य गुण याते व्यक्त हैल ॥१४३
सबाय आलिङ्गिया विदाय यबे दिला ।
हरिध्वनि करि सब भक्त उठि गेला ॥१४४
प्रभुर कृपा देखि सबार हैल चमत्कार ।
ताहारा बुझिते नारे प्रभुर व्यवहार ॥१४५

तारा सबे यदि कृपा करिते साधिल ।
"आमा हैते किछु नहे" प्रभु तबे कैल ॥१४६
गोपीनाथेर निन्दा आर आपन निर्व्वेद ।
एइ मात्र कहि इहार ना बुझिबे भेद ॥१४७
काशीमिश्रे ना साधि राजारे ना साधिल ।
उद्योग बिना एतदूर फल फलिल ॥१४८
चैतन्यचरित्र एइ परम गम्भीर ।
सेइ बुझे, ताँर पदे यार मन स्थिर ॥१४९
येइ इहा शुने प्रभुर वात्सल्यप्रकाश ।
प्रेमभक्ति पाय, तार विपद हय नाश १५०
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१५१

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे गोपीनाथपट्टनायकोद्धारो नाम नवमः परिच्छेदः ॥९॥

दशम परिच्छेद ।

वन्दे श्रीकृष्णचैतन्यं भक्तानुग्रहकारकं ।
येन केनापिसन्तुष्टं भक्तदत्तेन श्रद्धया ॥१

टीका—अहं श्रीकृष्णचैतन्यं वन्दे । श्रीकृष्ण चैतन्यं किम्भूतं ?—भक्तानुग्रहकारकं । पुनः किम्भूतं—श्रद्धया भक्तदत्तेन येन केनापि सन्तुष्टं ॥१

जो भक्त वृन्द के प्रति अनुग्रहवान् हैं, श्रद्धा प्रदत्त यत किञ्चित् द्रव्य से भी जिनको सन्तोष होता है, मैं उन श्रीकृष्णचैतन्य देव की वन्दना करता हूं ॥१

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
वर्षान्तरे सब भक्त प्रभुरे देखिते ।
परम आनन्द सबे नीलाचले याइते ॥२
अद्वैत-आचार्य्यगोसाञि सर्व्व-अग्रगण्य ।
आचार्य्यरत्न-आचार्य्यनिधि-श्रीवास-आदि धन्य ॥३॥
यद्यपि प्रभुर आज्ञा गौड़े रहिते ।
तथापि नित्यानन्द प्रेमे चलिला देखिते ॥४
अनुरागेर लक्षण एइ विधि नाहि माने ।
ताँर आज्ञा भाङ्गे ताँर सङ्गेर कारणे ॥५
रासे यैछे घर याइते गोपीरे आज्ञा दिला ।
ताँर आज्ञा भाङ्गि ताँर सङ्गे से रहिला ॥६
आज्ञार पालने कृष्णेर यैछे परितोष ।
प्रेमे आज्ञा भाङ्गिले हय कोटि सुखपोष ॥७
वासुदेवदत्त मुरारिगुप्त गङ्गादास ।
श्रीमान्सेन श्रीमान्पण्डित अकिञ्चन कृष्णदास ॥८॥
मुरारिपण्डित गरुड़पण्डित बुद्धिमन्तखान ।
सञ्जय पुरुषोत्तम पण्डित-भगवान् ॥९
शुक्लाम्बर नृसिंहानन्द आर यत जन ।
सबाइ चलिला, नाम ना याय लिखन ॥१०
कुलीनग्रामी खण्डवासी मिलिला आसिया ।
शिवानन्दसेन आइला सबारे लइया ॥११
राघवपण्डित चले झालि साजाइया ।
दयमन्ती यत द्रव्य दियाछे करिया ॥१२
नाना अपूर्व्व भक्ष्यद्रव्य प्रभुयोग्य भोग ।
वत्सरेक प्रभु याहा करिबेन उपयोग ॥१३
आम्र काशुन्दि आदाकाशुन्दि झालकाशुन्दि नाम।
नेम्बु आदा आम्र-कलि विविध सन्धान ॥१४

आमसी आम्रखण्ड तैलाम्र आमाता ।
यत्न करि गुण्डि करि पुराणसुकुता ॥१५
भावग्राही महाप्रभु स्नेहमात्र लय ।
सुक्तापाता काशुन्दिते महासुख हय ॥१६
मनुष्यबुद्धि दमयन्ती करे प्रभुर पाय ।
गुरु भोजने उदरे प्रभुर आम हञा याय ॥१७
सुक्ता खाइले सेइ आम हइबेक नाश ।
सेइ स्नेह मने भावि प्रभुर उल्लास ॥१८

तथाहि भारवौ अष्टमसर्गे विंशतिश्लोकः—

प्रियेण संग्रथ्य विपक्षसन्निधा-
वुपाहितांवक्षसि पीवरस्तनी ।
स्रजं न काचिद्विजहौ जलाविलां
वसन्ति हि प्रेम्णि गुणा न वस्तुनि ॥२

टीका—काचित पीवरस्तनी प्रियेण वल्लभेन जलाविलां समन्तात संजड़ितां स्रजं संग्रथ्य विपक्षसन्निधौ वक्षसि उपाहितां स्रजं न विजहौ स त्यक्तवती ; हि यस्मात् गुणाः प्रेम्णि वसन्ति, न वस्तुनि ।

विपक्ष के समीप में वल्लभ के द्वारा नायिका के वक्षोपरि माला अर्पित होने से नायिका ने उसको परित्याग नहीं किया, कारण, प्रेम में ही गुण विद्यमान होता है, वस्तु में नहीं ।२

धनिया मौरी तण्डुल गुण्डि करिया ।
नाड़ु बान्धियाछे चिनि पाक करिया ॥१९
शुण्ठीखण्डनाड़ु आर आमपित्तहर ।
पृथक् पृथक् बान्धि वस्त्रे कोथलीभितर ॥२०
कोलिशुण्ठी कोलिचूर्ण कोलिखण्ड आर ।
कत नाम लब, यतप्रकार आचार ॥२१

नारिकेल खण्ड नाड़ु आर नाड़ु गङ्गाजल ।
चिरस्थायी खण्डविकार करिल सकल ॥२२
चिरस्थायी क्षीरसार मण्डादिविकार ।
अमृतकर्पूर-आदि अनेकप्रकार ॥२३
शालिकाँचुटि धान्येर आतपचिँड़ा करि ।
नूतन वस्त्रेर बड़ कोथली सब भरि ॥२४
कथोक चिँड़ा हुड़ुम करि घृतेते भाजिया ।
चिनि-पाके नाड़ु कैल कर्पूरादि दिया ॥२५
शालितण्डुलभाजा चूर्ण करिया ।
घृतसिक्त चूर्ण कैल चिनि-पाक दिया ॥२६
कर्पूर मरिच लवङ्ग एलाचि रसबास ।
चूर्ण दिया नाड़ु कैल परमसुबास ॥२७
शालिधान्येर खै घृतेते भाजिया ।
चिनि-पाके नाड़ु कैल कर्पूरादि दिया ॥२८
फुटकलाइ चुर्ण करि घृते भाजाइल ।
चिनि-पाके कर्पूरादि दिया नाड़ु कैल ॥२९
कहिते ना जानि नाम ए जन्मे याहार ।
ऐछे नाना भक्ष्यद्रव्य सहस्रप्रकार ॥३०
राघवेर आज्ञा, आर करे दमयन्ती ।
दुँहार प्रभुते स्नेह परमशकति ॥३१
गङ्गामृत्तिका आनि वस्त्रेते छाँकिया ।
पाँपड़ि करिया लैल गन्धद्रव्य दिया ॥३२
पातल-मृतपात्रे सन्दानादि भरि ।
आर सब वस्तु भरे वस्त्रेर कोथली ॥३३
सामान्य झालि हैते द्विगुण झालि कैल ।
परिपाटी करि सब झालि भराइल ॥३४
झालि बान्धि मोहर दिल आग्रह करिया ।
तिन बोझारि झालि बहे क्रमश करिया ॥३५

संक्षेपे कहिल एइ झालिर विचार ।
राघवेर झालि बलि ख्याति याहार ॥३६
झालिर उपरे मुनसिब मकरध्वजकर ।
प्राणरूपे झालि राखे हइया तत्पर ॥३७
एइमते वैष्णव सब नीलाचले आइला ।
दैवे जगन्नाथेर से दिन जललीला ॥३८
नरेन्द्रेर जले गोविन्द नौकाते चड़िया ।
जलक्रीड़ा करे सब भक्तगण लञा ॥३९
सेइ काले आइल गौड़ेर भक्तगण ।
नरेन्द्रेते प्रभुसङ्गे हइल मिलन ॥४०
भक्तगण पड़े आसि प्रभुर चरणे ।
उठाइया प्रभु सबारे कैला आलिङ्गन ॥४१
गौड़ियासम्प्रदाय सब करये कीर्त्तन ।
प्रभुर मिलने उठे प्रेमेर क्रन्दन ॥४२
जलक्रीड़ा, वाद्य-गीत नर्त्तन-कीर्त्तन ।
महाकोलाहल तीरे, सलिले खेलन ॥४३
गौड़ियासङ्कीर्त्तन आर रोदन मिलिया ।
महाकोलाहल हैल ब्रह्माण्ड भरिया ॥४४
सब भक्त लञा प्रभु नामिलेन जले ।
सबा लये जलक्रीड़ा करेन कुतुहले ॥४५
प्रभुर एइ जलक्रीड़ा दास वृन्दावन ।
चैतन्यमङ्गले विस्तारि करियाछेन वर्णन ॥४६
पुनः इँहा वर्णिले पुनरुक्ति हय ।
व्यर्थ लिखन हय, आर ग्रन्थ बाड़ाय ॥४७
जललीला करि गोविन्द चलिला आलय ।
निजगण लञा प्रभु गेला देवालय ॥४८
जगन्नाथ देखि पुनः निज घरे आइला ।
प्रसाद आनाइला भक्तगणे खाओयाइला ॥४९
इष्टगोष्ठी सब लञा कतक्षण कैल ।
निज निज पूर्व्वबासाय सबाय पाठाइला ॥५०
गोविन्देर ठाञि राघव झालि समर्पिला ।
भोजनगृहेर कोने झालि गोविन्द राखिला ॥५१
पूर्व्व वत्सरेर झालि आजाड़ करिया ।
द्रव्य भरिबारे राखे अन्य गृहे लञा ॥५२
आर दिन महाप्रभु निजगण लञा ।
जगन्नाथ देखिलेन शय्योत्थाने याञा ॥५३
बेड़ाकीर्त्तनेर ताँहा आरम्भ करिल ।
सात सम्प्रदाय तबे गाइते लागिल ॥५४
सात सम्प्रदाये नृत्य करे सात जन ।
अद्वैत-आचार्य्य आर प्रभु नित्यानन्द ॥५५
वक्रेश्वर-अच्युतानन्द, पण्डित श्रीनिवास ।
सत्यराजखान, आर नरहरि दास ॥५६
सात सम्प्रदाये प्रभु करेन भ्रमण ।
"मोर सम्प्रदाये प्रभु" ऐछे सबार मन ॥५७
सङ्कीर्त्तन-कोलाहले आकाश भेदिल ।
सब जगन्नाथबासी देखिते आइल ॥५८
राजा आसि दूरे देखे निजगण लञा ।
राजपत्नीसब देखे अट्टाली चड़िया ॥५९
कीर्त्तन-आवेशे पृथिवी करे टलमल ।
हरिध्वनि करे लोक, हैल कोलाहल ॥६०
एइमत कतक्षण कराइल कीर्त्तन ।
आपने नाचिते तबे प्रभुर हैल मन ॥६१
सातदिके सम्प्रदाय गाय बाजाय ।
मध्ये महा प्रेमावेशे नाचे गौरराय ॥६२
उड़ियापद महाप्रभुर मने हैल ।
स्वरूपे सेइ पद गाइते आज्ञा दिल ॥६३

तथाहि धुयापदं ।—

जगमोहन परिमुण्डा याङ ॥३

एइ पदे नृत्य करे परम आवेशे ।
सब लोक चौदिके प्रभुप्रेमे भासे ॥६४

'बोल बोल' बलेन प्रभु बाहु तुलिया ।
हरिध्वनि करे लोक आनन्दे भासिया ॥६५

प्रभु पड़ि मूर्च्छा याय, श्वास नाहि आर ।
आचम्बिते उठे प्रभु करिया हुङ्कार ॥६६

सघने पुलक येन शिमुलेर तरु ।
कभु प्रफुल्लित अङ्ग, कभु हय सरु ॥६७

प्रतिरोम कूपे हय प्रस्वेद रक्तोद्गम ।
'जज गग परि परि' गदगद वचन ॥६८

एक एक दन्त पृथक् पृथक् नड़े ।
ऐछे नड़े दन्त, येन भूमे खसि पड़े ॥६९

क्षणे क्षणे बाड़े प्रभुर आनन्द-आवेश ।
तृतीय प्रहर हैल, नृत्य नहे शेष ॥७०

सब लोकेर उथलिल आनन्दसागर ।
सब लोक पासरिल देह-आतमघर ॥७१

तबे नित्यानन्द प्रभु सृजिल उपाय ।
क्रमे क्रमे कीर्त्तनीया राखिल बसाय ॥७२

प्रधान प्रधान येबा हय सम्प्रदाय ।
स्वरूपेर सङ्गे सेह मन्दस्वरे गाय ॥७३

कोलाहल नाहि, प्रभुर किछु वाह्य हैल ।
तबे नित्यानन्द सबार श्रम जानाइल ॥७४

भक्तश्रम जानि कैल कीर्त्तनसमापन ।
सबा लञा प्रभु कैल समुद्रे स्नपन ॥७५

सबा लञा प्रभु कैल प्रसाद भोजन ।
सबारे विदाय दिल करिते शयन ॥७६

गम्भीरार द्वारे करे आपने शयन ।
गोविन्द आसिञा करे पादसम्वाहन ॥७७

सर्व्वकाल आछे एइ सुदृढ़ नियम ।
प्रभु यदि प्रसाद पाञा करेन शयन ॥७८

गोविन्द आसिया करे पादसम्वाहन ।
तबे याइ प्रभुर शेष करेन भोजन ॥७९

सब द्वार युड़ि प्रभु करियाछेन शयन ।
भितरे याइते नारे गोविन्द करे निवेदन ॥८०

"एक पाश हओ, मोरे देह भितर याइते ।"
प्रभु कहे "शक्ति नाहि अङ्ग चालाइते ॥"८१

गोविन्द कहे "करिते चाहि पादसम्वाहन ।"
प्रभु कहे "कर वा ना कर येइ तोमार मन ॥"
८२॥

तबे गोविन्द वहिर्वास ताँर उपरे दिया ।
भितरघर गेला गोविन्द प्रभुके लङ्घिया ॥८३

पादसम्वाहन कैल, कटि पृष्ठ चापिल ।
मधुर मर्द्दने प्रभुर परिश्रम गेल ॥८४

सुखे निद्रा हैला प्रभुर, गोविन्द चापे अङ्ग ।
दण्ड दुइ बहि प्रभुर निद्रा हैला भङ्ग ॥८५

गोविन्द देखिया प्रभु बले क्रुद्ध हैञा ।
"केन आजि एतक्षण आछिस बसिया ॥८६

निद्रा हैले केने ना गेले प्रसाद खाइते ।"
गोविन्द कहे "द्वारे शुइला, याइते नाहि पथे ॥"
८७॥

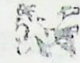
प्रभु कहे, भितरे तबे आइले केमने ।
तैछे केन प्रसाद लइते ना कैले गमने ॥"८८

गोविन्द कहे मने"आमार सेवाते नियम ।
अपराध हउक, किबा नरके गमन ॥८६
सेवा लागि कोटि अपराध नाहि गणि ।
स्वनिमित्त अपराधे आभासे भय मानि ॥"९०
एत सब मने करि गोविन्द रहिला ।
प्रभु ये पुछिला, तार उत्तर ना दिला ॥९१
प्रत्यह प्रभु निद्रा गेले याय प्रसाद लइते ।
से दिवसेर श्रम देखि लागिल चापिते ॥९२
याइतेहो पथ नाहि, याइबे केमने ।
महा अपराध हय प्रभुर लङ्घने ॥९३
एइ सब हय भक्ति-शास्त्र-सूक्ष्म-धर्म्म ।
चैतन्येर कृपाय जाने सेइ धर्म्म-मर्म्म ॥९४
भक्तगण प्रकाशिते प्रभु बड़ रङ्गी ।
एइ सब प्रकाशिते कैल एत भङ्गी ॥९५
संक्षेपे कहिल एइ परिमुण्डा नृत्य ।
अद्यापिह गाय याहा चैतन्येर भृत्य ॥९६
एइमत महाप्रभु लञा निजगण ।
गुण्डिचागृहेर कैल क्षालन मार्ज्जन ॥९७
पूर्व्ववत् कैल प्रभु कीर्त्तन-नर्त्तन ।
पूर्व्ववत् टोटाते कैल वन्यभोजन ॥९८
पूर्व्ववत रथ-आगे करिल नर्त्तन ।
हेरापञ्चमी-यात्रा कैल दरशन ॥९९
चारिमास वर्षा रहिला सब भक्तगण ।
जन्माष्टमी-आदि यात्रा कैला दरशन ॥१००
पूर्व्वे यदि गौड़ हैते भक्तगण आइला ।
प्रभुरे किछु खाओयाइते सबार इच्छा हैला ॥ १०१॥
केह कोन प्रसाद आनि दिल गोविन्दठाञि ।
"इहा येन अवश्य भक्षण करेन गोसाञि ॥"१०२
केह पेड़ा, केह लाड़ु, केह पिठा पाना ।
बहुमूल्य उत्तम प्रसाद, प्रकार यार नाना ॥१०३
"अमुक एइ दियाछेन" गोविन्द करे निवेदन ।
"धरि राख" बलि प्रभु ना करे भक्षण ॥१०४
धरिते धरिते घरेर भरिल एक कोण ।
शत जनेर भक्ष्य यत हैल सञ्चयन ॥१०५
गोविन्देरे सबे पुछे करिया यतन ।
"आमा दत्त प्रसाद प्रभुके कराले भक्षण ।"१०६
काहोके किछु कहि गोविन्द करेन वञ्चन ।
आर दिन प्रभुके कहे निर्व्वेद वचन ॥१०७
"आचार्य्यादि महाशय करिया यतने ।
तोमाके खाओइते वस्तु देन मोर स्थाने ॥१०८
तुमि से ना खाओ, तारा पुछे बार बार ।
कत वञ्चना करिब, केमने आमार निस्तार ॥" १०९॥
प्रभु कहे "आदिवश्या दुःख काहे माने ।
केबा कि दियाछे, ताहा आनह एखाने ॥"११०
एत बलि महाप्रभु बसिला भोजने ।
नाम धरि धरि गोविन्द करे निवेदने ॥१११
"आचार्य्येर एइ पेड़ा पाना रसपुपी ।
एइ अमृतगुटिकामण्डा, एइ कर्पूरकूपी ॥११२
श्रीवासपण्डितेर एइ अनेकप्रकार ।
पिठा पाना अमृतमण्डा पद्मचिनि आर ॥११३
आचार्य्यरत्नेर एइ सब उपहार ।
आचार्य्यनिधिर एइ अनेकप्रकार ॥११४

वासुदेवदत्तेर, मुरारिगुप्तेर आर।
बुद्धिमन्तखानेर एइ विविधप्रकार ॥११५
श्रीमान्‌सेन, श्रीमान् पण्डित, आचार्य्यनन्दन।
ताँहा सबार दत्त एइ करह भोजन ॥११६
कुलीनग्रामीर एइ, आगे देख यत।
खण्डवासी लोकेर एइ देख तत ॥"११७
ऐछे सबार नाम लञा प्रभुर आगे धरे।
सन्तुष्ट हइया प्रभु सब भोजन करे ॥११८
यद्यपि मासेकेर वासि मुकुरा नारिकेल।
अमृतगुटिकादि पानादि सकल ॥११९
तथापि नूतनप्राय सब द्रव्येर स्वाद।
वासि विस्वाद नहे, सेइ प्रभुर प्रसाद ॥१२०
शत जनेर भक्ष्य प्रभु दण्डेक खाइल।
"आर किछु आछे" बलि गोविन्दे पुछिल ॥
१२१॥
गोविन्द बले "राघवेर झालिमात्र आछे।"
प्रभु कहे "आजि रहु, ताहा देखिब पाछे ॥१२२
आर दिन प्रभु यदि निभृते भोजन कैल।
राघवेर झालि खुलि सकल देखिल ॥१२३
सब द्रव्येर किछु किछु उपयोग कैल।
स्वादु सुगन्धि देखि बहु प्रशंसिल ॥१२४
वत्सरेर तरे आर राखिल धरिया।
भोजनकाले स्वरूप परिवेशे खसाइया ॥१२५
कभु रात्रिकाले किछु कराय उपयोग।
भक्तेर श्रद्धार द्रव्य अवश्य करे उपभोग ॥
१२६॥
एइमत महाप्रभु भक्तगणसङ्गे।
चातुर्मास्य गोँयाइल कृष्णकथारङ्गे ॥१२७
मध्ये मध्ये आचार्य्यादि करे निमन्त्रण।
घरे भात रान्धे आर विविध व्यञ्जन ॥१२८
मरिचेर झाल मधुराम्ल आर।
आदा लवण लेम्बु दुग्ध दधि खण्डसार ॥१२९
शाक दुइ चारि आर सुकतार झोल।
निम्बवार्त्ताकी आर भृष्ट पटोल ॥१३०
भृष्ट फूलबड़ी आर मुदगादिर सूप।
विविध व्यञ्जन रान्धे प्रभुर रुचि-अनुरूप ॥१३१
जगन्नाथेर प्रसाद आँने करिते मिश्रित।
काँहा एका याय काँहा गणेर सहित ॥१३२
आचार्य्यरत्न आचार्य्यनिधि नन्दन राघव।
श्रीवास-आदि यत भक्त विप्र सब ॥१३३
एइमत निमन्त्रण करे यत्न करि।
वासुदेव, गदाधर, गुप्त मुरारि ॥१३४
कुलीनग्रामी, खण्डवासी आर यत जन।
जगन्नाथ प्रसाद आनि करे निमन्त्रण ॥१३५
शिवानन्दसेनेर शुन निमन्त्रणाख्यान।
शिवानन्देर बड़ पुत्रेर, चैतन्यदास नाम ॥१३६
प्रभु के मिलाइते तारे सङ्गे इ आनिल।
मिलाइले प्रभु तारे नाम पुछिल ॥१३७
चैतन्यदास नाम शुनि कहे गौरराय।
"किवा नाम धरियाछ, बुझन ना याय ॥"१३८
सेन कहे "ये जानिल सेइ नाम धरिल।"
एत बलि महाप्रभुके निमन्त्रण कैल ॥१३९
जगन्नाथेर प्रसाद बहुमूल्य आनाइला।
भक्तगणे लञा प्रभु भोजने बसिला ॥१४०
शिवानन्देर गौरवे प्रभु करिल भोजन।
अति गुरु भोजने प्रसन्न नहे मन ॥१४१

आर दिन चैतन्यदास कैल निमन्त्रण ।
प्रभुर अभीष्ट बुझि आनिल व्यञ्जन ॥१४२
दधि लेम्बु आदा आर फुलबड़ी लवण ।
सामग्री देखि प्रभुर प्रसन्न हैल मन ॥१४३
प्रभु कहे "ए बालक आमार मन जाने ।
सन्तुष्ट हइलाम आमि इहार निमन्त्रणे ॥१४४
एत बलि दधिभात करिल भोजन ।
चैतन्यदासेरे दिल उच्छिष्टभाजन ॥१४५
चारि मास एइमत निमन्त्रणे याय ।
कोन कोन वैष्णव दिवस नाहि पाय ॥१४६
गदाधरपण्डित भट्टाचार्य्य सार्व्वभौम ।
इँहा सबार आछे भिक्षारदिवस नियम ॥१४७
गोपीनाथाचार्य्य जगदानन्द काशीश्वर ।
भगवान् रामभद्राचार्य्य शङ्कर वक्रेश्वर ॥१४८
मध्ये मध्ये घर-भाते कैल निमन्त्रण ।
अन्येर प्रसाद-निमन्त्रणे कौडि दुइ पण ॥१४९
प्रथमे आछिल निर्व्वन्ध कौड़ी चारि पण ।
रामचन्द्रपुरीभये घाटाइल निमन्त्रण ॥१५०
चारि मास रहि गौड़ेर भक्त विदाय दिला ।
नीलाचलेर सङ्गी भक्त सङ्गेइ रहिला ॥१५१
एइ त कहिल प्रभुर भिक्षानिमन्त्रण ।
भक्तदत्त वस्तु यैछे कैल आस्वादन ॥१५२
तार मध्ये राघवेर झालि विवरण ।
तार मध्ये परिमुण्डानृत्य-कथन ॥१५३
श्रद्धा करि शुनै सेइ चैतन्येर कथा ।
चैतन्यचरणे प्रेम पाइबे सर्व्वदा ॥१५४
शुनिते अमृतसम, जुड़ाय कर्णमन ।
सेइ भाग्यवान्, येइ करे आस्वादन ॥१५५
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१५६

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे भक्तदत्तास्वादनं नाम दशमः परिच्छेदः ॥१०॥



एकादश परिच्छेद ।

नमामि हरिदासं तं चैतन्यं तञ्च तत्-प्रभुं ।
संस्थितामपि यन्मूर्त्तिं स्वाङ्के कृत्वा ननर्त्त यः ॥१

टीका—तं हरिदासं नमामि । तत्—प्रभुं तं चैतन्यञ्च नमामि । यश्चैतन्यः यन्मूर्त्तिं संस्थितामपि स्वाङ्के कृत्वा ननर्त्त ॥१

मैं हरिदास को एवं श्रीचैतन्यदेव को प्रणाम करता हूं, हरिदास के प्राणहीन शरीर भूपतित होने पर जिन्होंने मृत शरीर को अङ्क में धारण कर नृत्य किया ॥१

जय जय श्रीचैतन्य जय दयामय ।
जयाद्वैतप्रिय नित्यानन्दप्रिय जय ॥१
जय श्रीनिवासेश्वर हरिदासनाथ ।
जय गदाधरप्रिय स्वरूपप्राणनाथ ॥२
जय काशीश्वर-जगदानन्द-प्राणेश्वर ।
जय रूपसनातन-रघुनाथेश्वर ॥३
जय गौरदेह कृष्ण स्वयं भगवान् ।
कृपा करि देह प्रभु निज पददान ॥४
जय जयाद्वैतचन्द्र चैतन्येर आर्य्य ।
स्वचरणे भक्ति देह जयाद्वैताचार्य्य ॥५
नित्यानन्दचन्द्र जय चैतन्येर प्राण ।
तोमार पदारबिन्दे भक्ति देह दान ॥६

जय गौरभक्तगण गौर यार प्राण ।
सब भक्त मिलि मोरे भक्ति देह दान ॥७
जय रूप, सनातन, जीव, रघुनाथ ।
रघुनाथ, गोपाल—छय मोर प्राणनाथ ॥८
ए-सब-प्रसाद लिखि चैतन्यलीलागुण ।
यैछे तैछे लिखि करि आपन पावन ॥९
एइमत महाप्रभुर नीलाचले वास ।
सङ्गे भक्तगण लञा कीर्त्तन विलास ॥१०
दिने नृत्य कीर्त्तन ईश्वरदरशन ।
रात्रे राय-स्वरूप सने रस-आस्वादन ॥११
एइमत महाप्रभुर सुखे काल याय ।
कृष्णेर विरहविकार अङ्गे नाना हय ॥१२
दिने दिने बाड़े विकार रात्रे अतिशय ।
चिन्ता उद्वेग प्रलापादि यत शास्त्रे हय ॥१३
स्वरूपगोसाञि आर रामानन्दराय ।
रात्रिदिन करे दोँहे प्रभुर सहाय ॥१४
एक दिन गोविन्द महाप्रसाद लइया ।
हरिदासे दिते गेला आनन्दित हञा ॥१५
देखे हरिदास ठाकुर करियाछे शयन ।
मन्द मन्द करितेछेन संख्यासङ्कीर्त्तन ॥१६
गोविन्द कहे "उठ आसि करह भोजन ।"
हरिदास कहे "आजि करिब लङ्घन ॥१७
संख्याकीर्त्तन नाहि पूरे केमते खाइब ।
महाप्रसाद आनियाछ, केमने उपेक्षिब ॥१८
एत बलि महाप्रसाद करिल वन्दन ।
एक रञ्च लञा तार करिल भक्षण ॥१९
आर दिन महाप्रभु ताँर ठाँइ आइला ।
"सुस्थ हओ हरिदास"? ताँहारे पुछिला ॥२०

नमस्कार करि तिँहो कैल निवेदन ।
"शरीर सुस्थ हय मोर, असुस्थ बुद्धि मन ॥"
२१॥
प्रभु कहे "कोन व्याधि कह त निर्णय ।"
तिँहो कहे संख्याकीर्त्तन ना पूरय ॥"२२
प्रभु कहे "वृद्ध हैला, संख्या अल्प कर ।
सिद्धदेह तुमि, साधने आग्रह केने धर ॥२३
लोक निस्तारिते एइ तोमार अवतार ।
नामेर महिमा लोके करिला प्रचार ॥२४
एबे अल्प संख्या करि कर सङ्कीर्त्तन ।"
हरिदास कहे "शुन मोर निवेदन ॥२५
हीनजाति जन्म मोर, निन्द्य कलेवर ।
हीन कर्म्मे रत मुञि अधम पामर ॥२६
अदृश्य अस्पृश्य मोरे अङ्गीकार कैले ।
रौरब हइते मोरे वैकुण्ठे चड़ाइले ॥२७
स्वतन्त्र ईश्वर तुमि हओ इच्छामय ।
जगत नाचाओ, यारे यैछे इच्छा हय ॥२८
अनेक नाचाइले मोरे प्रसाद करिया ।
विप्रेर श्राद्धपात्र खाइनु म्लेच्छ हइया ॥२९
एक वाञ्छा हय मोर बहु दिन हैते ।
लीला सम्वरिबे तुमि लय मोर चिते ॥३०
सेइ लीला प्रभु मोरे कभु ना देखाइबा ।
आपनार आगे मोर शरीर पाड़िबा ॥३१
हृदये धरिब तोमार कमलचरण ।
नयने देखिब तोमार चाँदवदन ॥३२
जिह्वाय उच्चारिब तोमार कृष्णचैतन्य नाम ।
एइमत मोर इच्छा छाड़िब पराण ॥३३

मोर इच्छा एइ यदि तोमार प्रसाद हय ।
एइ निवेदन मोर कर दयामय ॥३४
एइ नीच देह मोर पड़े तब आगे ।
एइ वाञ्छासिद्धि मोर तोमातेइ लागे ॥"३५
प्रभु कहे "हरिदास ये तुमि मागिबे ।
कृष्ण कृपामय ताहा अवश्य करिबे ॥३६
किन्तु आमार ये किछु सुख सब तोमा लञा ।
तोमार योग्य नहे याबे आमारे छाड़िया ॥"३७
चरणे धरि कहे हरिदास "ना करिह माया ।
अवश्य मो अधमे प्रभु कर एइ दया ॥३८
मोर शिरमणि कत कत महाशय ।
तोमार लीलार सहाय कोटि भक्त हय ॥३९
आमा हेन एक कीट यदि मरि गेल ।
एक पिपीलिका मैले पृथिवीर काँहा हानि हैल ॥४०॥
भक्तवत्सल प्रभु तुमि, मुञि भक्ताभास ।
अवश्य पूरिबे प्रभु मोर एइ आश ॥४१
मध्याह्न करिते प्रभु चलिला आपने ।
ईश्वर देखिया कालि दिबे दरशन ॥"४२
तबे महाप्रभु तारे करि आलिङ्गन ।
मध्याह्न करिते समुद्रे करिला गमन ॥४३
प्रातःकाले ईश्वर देखि सब भक्त लञा ।
हरिदास देखिते आइला शीघ्र करिञा ॥४४
हरिदासेर आगे आसि दिल दरशन ।
हरिदास वन्दिल प्रभुर आर वैष्णव चरण ।४५
प्रभु कहे "हरिदास, कह समाचार ।"
हरिदास कहे "प्रभु ये आज्ञा तोमार ॥"४६

अङ्गने आरम्भिल प्रभु महासङ्कीर्त्तन ।
वक्रेश्वर पण्डित ताँहा करेन नर्त्तन ॥४७
स्वरूपगोसाञि-आदि यत प्रभुर गण ।
हरिदास बेड़ि करे नामसङ्कीर्त्तन ॥४८
रामानन्द सार्व्वभौम सबार अग्रेते ।
हरिदासेर गुण प्रभु लागिला कहिते ॥४९
हरिदासेर गुण कहिते हैल पञ्चमुख ।
कहिते कहिते प्रभुर बाड़े महासुख ॥५०
हरिदासेर गुणे सबार विस्मित हय मन ।
सर्व्व भक्त वन्दे हरिदासेर चरण ॥५१
हरिदास निजाग्रेते प्रभुरे बसाइल ।
निज नेत्र दुइ भृङ्ग मुखपद्मे दिल ॥५२
स्वहृदये आनि धरिल प्रभुर चरण ।
सर्व्वभक्त-पदरेणु मस्तके भूषण ॥५३
श्रीकृष्णचैतन्य शब्द बले बारबार ।
प्रभु मुखमाधुरी पिये, नेत्रे जलधार ॥५४
श्रीकृष्णचैतन्य शब्द करिते उच्चारण ।
नामेर सहिते प्राण करिल उत्क्रामण ॥५५
महायोगेश्वरप्राय देखि स्वच्छन्दे मरण ।
भीष्मेर निर्याण सबार हइल स्मरण ॥५६
हरि कृष्ण शब्दे सबे करे कोलाहल ।
प्रेमानन्दे महाप्रभु हइला विह्वल ॥५७
हरिदासेर तनु प्रभु कोले उठाइया ।
अङ्गने नाचेन प्रभु प्रेमाविष्ट हञा ॥५८
प्रभुर आवेशे अवश सर्व्वभक्तगण ।
प्रेमावेशे सबे नाचे करेन कीर्त्तन ॥५९
एइमत नृत्य प्रभु कैल कतक्षण ।
स्वरूपगोसाञि प्रभुके कैल निवेदन ॥६०

हरिदास ठाकुरे तबे विमाने चड़ाइया ।
समुद्रे लइया गेल कीर्त्तन करिया ॥६१
आगे महाप्रभु चले नृत्य करिते करिते ।
पाछे नृत्य करे वक्रेश्वर भक्तगण साथे ॥६२
हरिदासे समुद्र जले स्नान कराइला ।
प्रभु कहे "समुद्र एइ महातीर्थ हैला ॥६३
हरिदासेर पादोदक पिये भक्तगण ।
हरिदासेर अङ्गे दिल प्रसादचन्दन ॥६४
डोरकडार प्रसाद वस्त्र अङ्गे दिल ।
बालुकार गर्त्त करि ताहे शोयाइल ॥६५
चारिदिके भक्तगण करेन कीर्त्तन ।
वक्रेश्वर पण्डित करेन आनन्दे नर्त्तन ॥६६
हरिबोल हरिबोल बले गौरराय ।
आपन श्रीहस्ते बालु दिल तार गाय ॥६७
ताँरे बालु दिया उपरे पिण्डा बान्धाइल ।
चौदिके पिण्डार महा आवरण कैल ॥६८
ताँरे बेड़ि-प्रभु कैल कीर्त्तन नर्त्तन ।
हरिध्वनि कोलाहले भरिल भुवन ॥६९
तबे महाप्रभु सब भक्तगण सङ्गे ।
समुद्रे करिला स्नान जलकेलि रङ्गे ॥७०
हरिदासे प्रदक्षिण करि आइल सिंहद्वारे ।
हरि कीर्त्तन-कोलाहल सकल नगरे ॥७१
सिंहद्वारे आसि प्रभु पसारिर ठाञि ।
आँचल पातिया प्रसाद मागिल तथाइ ॥७२
"हरिदास ठाकुरेर महोत्सवेर तरे ।
प्रसाद मागिये, भिक्षा देहत आमारे ॥"७३
शुनिया पसारि सब चाङ्गड़ा उठाइया ।
प्रसाद दिते आने तारा आनन्दित हइया ॥७४
स्वरूपगोसाञि पसारिरे निषेधिल ।
चाङ्गड़ा लइया पसारि पसारे बसिला ॥७५
स्वरूपगोसाञि प्रभुके घरे पाठाइल ।
चारि वैष्णव चारि पिछोड़ा सङ्गे राखिल ।७६
स्वरूपगोसाञि कहिलेन् सब पसारिरे ।
"एकेक द्रव्येर एकेक पुञ्जा देह मोरे ॥७७
एइमते नाना प्रसाद बोझा बान्धाइया ।
लइया आइला चारिजनेर मस्तके चड़ाइया ।७८
काशीनाथपट्टनायक प्रसाद आनिला ।
काशीमिश्र अनेक प्रसाद पाठाइला ॥७९
सब वैष्णवे प्रभु बसाइला सारि सारि ।
आपने परिवेशे प्रभु लञा जना चारि ॥८०
महाप्रभुर श्रीहस्ते अल्प ना आइसे ।
एकेक पाते पञ्चजनार भक्ष्य परिवेशे ॥८१
स्वरूप कहे "प्रभु ! बसि करह दर्शन ।
आमि इँहा सबा लञा करि परिवेशन ॥"८२
स्वरूप जगदानन्द काशीश्वर शङ्कर ।
चारि जन परिवेशन करे निरन्तर ॥८३
प्रभु ना खाइले केह ना करे भोजन ।
प्रभुके से दिने काशीमिश्रेर निमन्त्रण ॥८४
आपने काशीमिश्र आइला प्रसाद लइया ।
प्रभुके भिक्षा कराइल आग्रह करिया ॥८५
पुरीभारतीर सङ्गे प्रभु भिक्षा कैल ।
सकल वैष्णव तबे भोजन करिल ॥८६
आकण्ठ पुरिया सबाके कराइल भोजन ।
"देह देह" बलि प्रभु बलेन वचन ॥८७
भोजन करिया सबे कैल आचमन ।
सबारे पराइल प्रभु माल्य-चन्दन ॥८८

प्रेमाविष्ट हञा प्रभु करे वर दान ।
शुनि भक्तगणेर जुड़ाय मन कान ॥८९
"हरिदासेर विजयोत्सव ये कैल दर्शन ।
ये ताँहा नृत्य कैल, ये कैल कीर्त्तन ॥९०
ये ताँरे बालुका दिते करिल गमन ।
ताँर महोतसवे येइ करिल भोजन ॥९१
अचिरे ता सबाकार हइबे कृष्णप्राप्ति ।
हरिदास दरशने ऐछे हये शक्ति ॥९२
कृपा करि कृष्ण मोरे दियाछिल सङ्ग ।
स्वतन्त्र कृष्णेर इच्छा, कैल सङ्गभङ्ग ॥९३
हरिदासेर इच्छा यबे हइल चलिते ।
आमार शकति तारे नारिल राखिते ॥९४
इच्छा मात्रे निज प्राण कैल निष्क्रामण ।
पूर्व्वे येन शुनियाछि भीष्मेर मरण ॥९५
हरिदास आछिल पृथिवीर शिरोमणि ।
ताहा बिना रत्नशून्य हइल मेदिनी ॥९६
जय जय हरिदास बलि कर हरिध्वनि ।"
एत बलि महाप्रभु नाचेन आपनि ॥९७
सबे गाय जय जय जय हरिदास ।
नामेर महिमा येइ करिल प्रकाश ॥९८
तबे महाप्रभु सब भक्ते विदाय दिल ।
हर्ष-विषादे प्रभु विश्राम करिल ॥९९
एइ त कहिल हरिदासेर विजय ।
याहार श्रवणे कृष्णे दृढ़ भक्ति हय ॥१००
चैतन्येर भक्तवात्सल्य इहातेइ जानि ।
भक्तवाञ्छा पूर्ण कैल न्यासि-शिरोमणि ॥१०१
शेषकाले दिले ताँरे दर्शन स्पर्शन ।
तारे कोले करि कैल आपने नर्त्तन ॥१०२
आपने श्रीहस्ते कृपाय ताँरे बालु दिल ।
आपने प्रसाद मागि महोत्सव कैल ॥१०३
महाभागवत हरिदास परम विद्वान् ।
ए सौभाग्य लागि आगे करिल प्रयाण ॥१०४
चैतन्यचरित्र एइ अमृतेर सिन्धु ।
कर्ण मन तृप्त करे यार एक विन्दु ॥१०५
भवसिन्धु तरिबारे आछे यार चित्त ।
श्रद्धा करि शुन तबे चैतन्यचरित ॥१०६
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१०७

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे श्रीहरिदासनिर्याणवर्णनं नाम एकादशः परिच्छेदः ॥११॥



द्वादश परिच्छेद ।

श्रूयतां श्रूयतां नित्यं गीयतां गीयतां मुदा ।
चिन्त्यतां चिन्त्यतां भक्ताश्चैतन्यचरितामृतं ॥१

टीका—हे भक्ता ! चैतन्यचरितामृतं मुदा आनन्देन नित्यं श्रूयतां श्रूयतां गीयतां गीयतां; चिन्त्यतां चिन्त्यतां ॥१

हे भक्तवृन्द ! आप सब आनन्द से चैतन्य चरितामृत का श्रवण पुनः पुनः करें एवं चिन्तन कीर्त्तन भी पुनः पुनः करें ॥१

जय जय श्रीचैतन्य जय दयामय ।
जय जय नित्यानन्द कृपासिन्धु जय ॥१
जयाद्वैतचन्द्र जय करुणा-सागर ।
जय गौरभक्तगण कृपापूर्णान्तर ॥२

अत:पर महाप्रभु विषण्ण अन्तर ।
कृष्णेर वियोगदशा स्फुरे निरन्तर ॥३
"हा हा कृष्ण प्राणनाथ व्रजेन्द्रनन्दन ।
काँहा याङ काँहा पाङ मुरलीवदन ॥"४
रात्रि दिन एइ दशा, स्वास्थ्य नाहि माने ।
कष्टे रात्रि गोङाय स्वरूप-रामानन्द सने ॥५
एथा गोड़देशे प्रभुर यत भक्तगण ।
प्रभुरे देखिबारे सबे करिला गमन ॥६
शिवानन्दसेन आर आचार्य्यगोसाञि ।
नवद्वीपे सब भक्त हैला एक ठाँइ ॥७
कुलीनग्रामवासी आर यत खण्डवासी ।
एकत्र मिलिला सब नवद्वीपे आसि ॥८
नित्यानन्द प्रभुरे यद्यपि आज्ञा नाइ ।
तथापि देखिते चले चैतन्यगोसाञि ॥९
श्रीनिवास चारि भाइ सङ्गे मालिनी ।
आचार्य्य-रत्नेर सङ्गे ताँहार गृहिणी ॥१०
शिवानन्दपत्नी चले तीन पुत्र लञा ।
राघवपण्डित चले झालि साजाइञा ॥११
दत्त, गुप्त, विद्यानिधि, आर यत जन ॥
दुइ तिन शत भक्त करिल गमन ॥१२
शची माता देखि सबे ताँर लञा ।
आनन्दे चलिल कृष्णकीर्त्तन करिञा ॥१३
शिवानन्दसेन करे घाटिसमाधान ।
सबाके पालन करि सुखे लञा यान ॥१४
सबार सब कार्य्य करेन, देन वासस्थान ।
शिवानन्द जाने उड़ियापथेर सन्धान ॥१५
एकदिन सब लोक घाटिते राखिला ।
सब छाड़ाइया शिवानन्द एकला रहिला ॥१६
सबे गिया रहिला ग्रामभितर वृक्षतले ।
शिवानन्द बिना वासास्थान नाहि मिले ॥१७
नित्यानन्दप्रभु भोखे व्याकुल हइया ।
शिवानन्दे गालि पाड़े वासा ना पाइया ॥१८
"तिन पुत्र मरुक शिवार, एखन ना आइल ।
भोखे मरि गेनु, मोरे वासा ना देआइल ॥"१९
शुनि शिवानन्देर पत्नी कान्दिते लागिला ।
हेनकाले शिवानन्द घाटि हइते आइल ॥२०
शिवानन्देर पत्नी ताँरे कहेन कान्दिया ।
पुत्रे शाप दिछे गोसाञि वासा ना पाइया ॥२१
तिँह कहे "वाउलि केन मरिस कान्दिया ।
मरुक आमार तिन पुत्र ताँर वालाइ लइया ।२२
एत बलि प्रभु पाश गेला शिबानन्द ।
उठि ताँरे लाथि माइल प्रभु नित्यानन्द ॥२३
आनन्दित हइल शिवाइ पादप्रहार पाञा ।
शीघ्र वासाघर कैल गौड़घरे गिया ॥२४
चरणे धरिया प्रभुके वासाय लञा गेला ।
वासा दिया हृष्ट हञा कहिते लागिला ॥२५
"आजि मोरे भृत्य करि अङ्गीकार कैला ।
येमन अपराध भृत्येर, योग्य फल दिला ॥२६
शास्ति-छले कृपा कर, ए तोमार करुणा ।
त्रिजगते तोमार चरित्र बुझे कोन् जना ॥२७
ब्रह्मार दुर्ल्लभ तोमार श्रीचरणरेणु ।
हेन चरण स्पर्श पाइल मोर अधम तनु ॥२८
आजि मोर सफल हैल जन्म कुल कर्म्म ।
आजि पाइनु कृष्णभक्ति अर्थ काम धर्म्म ॥२९
शुनि नित्यानन्द प्रभुर आनन्दित मन ।
उठि शिवानन्दे कैल प्रेम-आलिङ्गन ॥३०

आनन्दित शिवानन्द करे समाधान ।
आचार्य्यादि वैष्णवेर दिल वासस्थान ॥३१
नित्यानन्द प्रभुर चरित्र सब विपरीत ।
क्रुद्ध हैञा लाथि मारि करे तार हित ॥३२
शिवानन्देर भागिना, श्रीकान्तसेन नाम ।
मामार अगोचरे कहे करि अभिमान ॥३३
"चैतन्येर पारिषद मोर मातुलेर ख्याति ।
ठाकुराली करेन गोसाञि, तारे मारे लाथि ॥३४
एत बलि श्रीकान्त बालक आगे चलि यान ।
सङ्ग छाड़ि आगे गेला महाप्रभु स्थान ॥३५
पेटाङ्गि गाय करे दण्डवत नमस्कार ।
गोविन्द कहे "श्रीकान्त ! आगे पेटाङ्गि उतार"
॥३६॥
प्रभु कहे "श्रीकान्त आसियाछे पाञा मनोदुःख ।
किछु ना बलिह, करुक याते उहार सुख ॥"३७
वैष्णवेर समाचार गोसाञि पुछिल ।
एके एके सबार नाम श्रीकान्त जानाइल ॥३८
दुःख पाञा आसियाछे एइ प्रभुर वाक्य शुनि ।
जानिल सर्व्वज्ञ प्रभु एत अनुमानि ॥३९
शिवानन्दे लाथि मारिल इहा ना कहिला ।
एथा सब वैष्णवगण आसिया मिलिला ॥४०
पूर्व्ववत प्रभु कैल सबार मिलन ।
स्त्रीसब दूर हैते कैल प्रभुर दर्शन ॥४१
वासाघर पूर्व्ववत सबारे देयाइल ।
महाप्रसाद भोजने सबारे बोलाइल ॥४२
शिवानन्द तिन पुत्र गोसाञिके मिलाइल ।
शिवानन्दसम्बन्धे सबार बहु कृपा कैल ॥४३
छोट पुत्र देखिप्रभु नाम पुछिल ।
परमानन्द दास नाम सेन जानाइल ॥४४
पूर्व्वे यबे शिवानन्द प्रभुस्थाने आइला ।
तबे महाप्रभु ताँरे कहिते लागिला ॥४५
"एबार तोमार येइ हइबे कुमार ।
पुरीदास बलि नाम धरिह ताहार ॥"४६
तबे मायेर गर्भे हय सेइ त कुमार ।
शिवानन्द घरे गेले जन्म हैल तार ॥४७
प्रभु-आज्ञाय धरिल नाम परमानन्ददास ।
पुरीदास करि प्रभु करे उपहास ॥४८
शिवानन्द यबे सेइ बालक मिलाइला ।
महाप्रभु पदाङ्गुष्ठ तार मुखे दिला ॥४९
शिवानन्देर भाग्यसिन्धु के पाइबे पार ।
यार सब गोष्ठीके प्रभु कहे आपनार ॥५०
तबे सब भक्त लञा करिल भोजन ।
गोविन्देरे आज्ञा दिला करि आचमन ॥५१
"शिवानन्देर पत्नीपुत्र यावत एथाय ।
आमार अवशेषपात्र तारा येन पाय ॥५२
नदीयावासी मोदक, तार नाम परमेश्वर ।
मोदक बेचे, प्रभुर बाटीर निकट तार घर ॥५३
बालककाले प्रभु तार धरे बार बार यान ।
दुग्धखण्डमोदक देय, प्रभु ताहा खान ॥५४
प्रभुविषय स्नेह तार बालककाल हैते ।
से वतसर सेह आइल प्रभुके देखिते ॥५५
'परमेश्वर मुञि' बलि दण्डवत कैल ।
तारे देखि प्रभु किछु ताहारे पुछिल ॥५६
"परमेश्वर ! कुशले हओ ? भाल हैल आइला ।"
"मुकुन्दार माता आसियाछे" प्रभुके कहिला
॥५७॥

मुकुन्दार मातार नाम शुनि प्रभु सङ्कोच हैला ।
तथापि ताहार प्रीते किछु ना बलिला ॥५८
प्रश्रयपागल शुद्धवैदग्धी ना जाने ।
अन्तरे सुखी हैल प्रभु तार सेइ गुणे ॥५९
पूर्व्ववत सबा लञा गुण्डिचामार्ज्जन ।
रथ-आगे पूर्व्ववत करिला नर्त्तन ॥६०
चातुर्म्मास्या सब यात्रा कैल दरशन ।
मालिनी प्रभृति प्रभुके कैल निमन्त्रण ॥६१
प्रभुप्रिय नाना द्रव्य आनिवाछे देश हैते ।
सेइ व्यञ्जन करि भिक्षा देन घरभाते ॥६२
दिने नाना क्रीड़ा करे लञा भक्तगण ।
रात्रे कृष्णविच्छेदे प्रभु करेन रोदन ॥६३
एइमत नानालीलाय चातुर्म्मास्य गेला ।
गौड़देश याइते तबे भक्ते आज्ञा दिला ॥६४
सब भक्त करेन प्रभुर निमन्त्रण ।
सर्व्व भक्ते कहे प्रभु मधुर वचन ॥६५
"प्रतिवर्ष आइस सबे आमारे देखिते ।
आसिते याइते दुःख पाओ बहुमते ॥६६
तोमा सबार दुःख जानि, नारि निषेधिते ।
तोमा सबार सङ्ग-सुख-लोभ बाड़े चित्ते ॥६७
नित्यानन्दे आज्ञा दिला गोड़ेते रहिते ।
आज्ञा लङ्घि आइसेन कि पारि बलिते ॥६८
आइसेन आचार्य्यगोसाञि मोरे कृपा करि ।
प्रेम-ऋणे बद्ध आमि शोधिते ना पारि ॥६९
मोर लागि स्त्री-पुत्र-गृहादि छाड़िया ।
नाना दुर्गम पथ लङ्घि आइसेन धाइया ॥७०
आमि एइ नीलाचले रहिये बसिया ।
परिश्रम नाहि मोर तोमा सबार लागिया ॥७१
सन्न्यासिमानुष मोर नाहि कोन धन ।
कि दिञा तोमार ऋणेर करिब शोधन ॥७२
देहमात्र धन आमार कैल समर्पण ।
ताँहा बिकाइ याँहा बेचिते तोमार मन ॥७३
प्रभुर वचने सबार प्रीत हैल मन ।
अझोर-नयने सबे करेन क्रन्दन ॥७४
प्रभु सबार गला धरि करेन रोदन ।
काँदिते काँदिते कैल सबाय आलिङ्गन ॥७५
सबाइ रहिल, केह चलिते नारिल ।
आर दिन पाँच सात एइमते गेल ॥७६
अद्वैत अवधूत किछु कहे प्रभुपाय ।
"सहजे तोमार गुणे जगत बिकाय ॥७७
आर ताते बान्ध ऐछे कृपा-वाक्य-डोरे ।
तोमा छाड़ि केबा कोथा याइबारे पारे ॥"७८
तबे प्रभु सबाकारे प्रबोध करिया ।
सबाय विदाय दिल सुस्थिर हइया ॥७९
नित्यानन्दे कहिल "तुमि ना आइस बारबार ।
तथाइ आमार सङ्ग हइबे तोमार ॥"८०
चले सब भक्तगण रोदन करिया ।
महाप्रभु रहिला घरे विषण्ण हइया ॥८१
निज कृपागुणे प्रभु बान्धिल सबारे ।
महाप्रभुर कृपा-ऋण के शोधिते पारे ॥८२
यारे यैछे नाचाय प्रभु स्वतन्त्र ईश्वर ।
ताते ताँहा छाड़ि लोक याय देशान्तर ॥८३
काष्ठेर पुतली येन कुहके नाचाय ।
ईश्वर-चरित्र किछु बुझन ना याय ॥८४
पूर्व्व वर्षे जगदानन्द आइ देखिबारे ।
प्रभु-आज्ञा लये आइल नदीया नगरे ॥८५

आइर चरण याइ करिल वन्दन ।
जगन्नाथेर वस्त्रप्रसाद कैल निवेदन ॥८६

प्रभुर नाम करि माताके दण्डवत कैला ।
प्रभुर मिनति स्तुति माताके कहिला ॥८७

जगदानन्दे पाइया माता आनन्दित मने ।
तिँहो प्रभुर कथा कहे, शुने रात्रि दिने ॥८८

जगदानन्द कहे "माता ! कोन कोन दिने ।
तोमार एथा आसि प्रभु करेन भोजने ॥८९

भोजन करिया कहे आनन्दित हञा ।
माता आजि खाओयाइल आकण्ठ पूरिया ॥९०

आमि याइ भोजन करि, माता नाहि जाने ।
साक्षाते खाइ आमि, तिँहो स्वप्न हेन माने ॥"९१

माता कहे "कभु रान्धि उत्तम व्यञ्जन ।
निमाञि इहा खाय इच्छा हय मोर मन ॥९२

पाछे ज्ञान हय, मुञि देखिनु स्वपन ।
पुन ना देखिये मोर भुरये नयन ॥९३

एइमत जगदानन्द शचीमाता सने ।
चैतन्येर सुखकथा कहे रात्रिदिने ॥९४

नदीयार भक्तगण सबारे मिलिला ।
जगदानन्द पाञा सबे आनन्दित हैला ॥९५

आचार्य्य मिलिते तबे गेला जगदानन्द ।
जगदानन्द पाञा हैल आचार्य्य-आनन्द ॥९६

वासुदेव मुरारिगुप्त जगदानन्द पाञा ।
आनन्दे राखिल घरे, ना देन छाड़िया ॥९७

चैतन्येर मर्म्मकथा शुने ताँर मुखे ।
आपना पासरे सबे चैतन्यकथासुखे ॥९८

जगदानन्द मिलिते याय सेइ भक्तघरे ।
सेइ सेइ भक्त सुखे आपना पासरे ॥९९

चैतन्येर प्रेमपात्र जगदानन्द धन्य ।
यारे मिले, सेइ माने पाइल चैतन्य ॥१००

शिवानन्दसेन-गृहे याइञा रहिल ।
चन्दनादि-तैल ताँहा एकमात्रा कैल ॥१०१

सुगन्धि करिया तैल गागरी भरिया ।
नीलाचले लञा आइल यतन करिया ॥१०२

गोविन्देर ठाञि तैल धरिया राखिल ।
"प्रभु-अङ्गे दिओ तैल" गोविन्दे कहिल ॥१०३

तबे प्रभु-ठाञि गोविन्द कैल निवेदन ।
"जगदानन्द चन्दनादि-तैल आनियाछेन ॥१०४

ताँर इच्छा, प्रभु अल्प मस्तके लागाय ।
पित्त-वायुप्रकोप शान्त हञा याय ॥१०५

एक कलश सुगन्धि तैल गौड़े करिया ।
इँहा आनियाछेर बहु यतन करिया ॥"१०६

प्रभु कहे "सन्न्यासीर नाहि तैले अधिकार ।'
ताहाते सुगन्धि तैल परमधिक्कार ॥१०७

जगन्नाथे देह तैल, दीपे येन ज्वले ।
ताँर परिश्रम हबे परम सफले ॥"१०८

एइ कथा गोविन्द जगदानन्देरे कहिल ।
मौन करि रहिल पण्डित, किछु ना कहिल ॥१०९

दिन दश गेले गोविन्द जानाइल आरबार ।
"पण्डितेर इच्छा, तैल करेन अङ्गीकार ॥"११०

शुनि प्रभु कहे किछु सक्रोधवचन ।
"मर्द्दनिया एक राख करिते मर्द्दन ॥१११

एइ सुख लागि आमि करिल सन्न्यास ।
आमार सर्व्वनाशे तोमा सबार परिहास ॥११२

पथे याइते तैलगन्ध मोर येइ पाइबे ।
'दारी सन्न्यासी' करि आमारे कहिबे ॥११३

शुनि प्रभुर वाक्य गोविन्द मौन करिला ।
प्रातःकाले जगदानन्द प्रभुस्थाने आइला ॥११४
प्रभु कहे "पण्डित ! तैल आनिला गौड़ हैते ।
आमि सन्न्यासी, तैल ना पारि लइते ॥११५
जगन्नाथे देह लञा, दीपे येन ज्वले ।
तोमार सकल श्रम हइवे सफले ॥"११६
पण्डित कहे "के तोमाके कहे मिथ्या वाणी ।
आमि गौड़ हैते तैल कभु नाहि आनि ॥११७
एत बलि घर हैते तैलकलस आनिया ।
प्रभु-आगे आङ्गिनाते फेलिल भाङ्गिया ॥११८
तैल भाङ्गि सेइ पथे निज घर गिया ।
शुइया रहिल घरे कपाट मारिया ॥११९
तृतीय दिवसे प्रभु ताँर द्वारे याञा ।
"उठह पण्डित" करि कहेन डाकिया ॥१२०
"आजि भिक्षा दिबे आमाय करिया रन्धन ।
मध्याह्ने आसिब एबे याइ दरशने ॥१२१
एत बलि प्रभु गेला, पण्डित उठिला ।
स्नान कदि नाना व्यञ्जन रन्धन करिला ॥१२२
मध्याह्न करिया प्रभु आइला भोजने ।
पाद प्रक्षालन करि बसिला आसने ॥१२३
सघृत शाल्यन्न कलापाते स्तूप कैल ।
कलार डोङ्गा भरि व्यञ्जन चौदिके धरिल ।१२३
अन्न-व्यञ्जनोपरि तुलसीमञ्जरी ।
जगन्नाथेर पिठापाना आनि आगे धरि ॥१२४
प्रभु कहे "द्वितीय पाते बाड़ अन्नव्यञ्जन ।
तोमाय आमाय आजि एकत्र करिव भोजन ॥"
१२५॥

हस्त तुलि रहे प्रभु ना करे भोजन ।
तबे पण्डित कहे किछु सप्रेम वचन ॥१२६
"आपने प्रसाद लयेन, पाछे मुञि लइब ।
तोमार आग्रह आमि केमने खण्डिब ॥"१२७
तबे महाप्रभु सुखे भोजने बसिला ।
व्यञ्जन स्वाद पाञा कहिते लागिला ॥१२८
"क्रोधावेशेर पाके हय ऐछे स्वाद ?
एइ त जानिये तोमाय कृष्णेर प्रसाद ॥१२९
आपने खाइबेन कृष्ण, ताहार लागिया ।
तोमार हस्ते पाक करान उत्तम करिया ॥
१३०॥
ऐछे अमृत अन्न कृष्णे कर समर्पण ।
तोमार भाग्येर सीमा के करु वर्णन ॥"१३१
पण्डित कहे "ये खाइबे सेइ पाककर्त्ता ।
आमि सब केवलमात्र सामग्री आहर्त्ता ॥"१३२
पुनः पुनः पण्डित नाना व्यञ्जन परिवेशे ।
भये किछु ना बलेन प्रभु, खायेन हरिषे ॥१३३
आग्रह करिया पण्डित कराइल भोजन ।
आर दिन हैते भोजन हइल दशगुण ॥१३४
बारबार प्रभु उठिते करेन मन ।
सेइ काले पण्डित परिवेशे व्यञ्जन ॥१३५
किछु बलिते नारेन प्रभु, खायेन तरासे ।
ना खाइले जगदानन्द करिबे उपवासे ॥१३६
तबे प्रभु कहे करि विनय सम्मान ।
"दशगुण खाओइले, एबे कर समाधान ॥"
१३७॥
तबे महाप्रभु उठि कैल आचमन ।
पण्डित आनिल मुखवास माल्य चन्दन ॥१३८

चन्दनादि लञा प्रभु वसिला सेइ स्थाने ।
"आमार आगे आजि तुमि करह भोजने ॥ १३९॥
पण्डित कहे "प्रभु ! करेन विश्राम ।
मुञि एबे प्रसाद लइब करि समाधान ॥१४०
रसुइर कार्य्य करियाछे रामाइ-रघुनाथ ।
इहा सबाय दिते चाहि किछु व्यञ्जनभात ॥" १४१॥
प्रभु कहे "गोविन्द ! तुमि इँहाइ रहिते ।
पण्डित भोजने कैले आमारे कहिबे ॥"१४२
एत कहि महाप्रभु करिला गमन ।
गोविन्देरे पण्डित किछु कहेन वचन ॥१४३
"तुमि शीघ्र याह करिते पादसम्वाहने ।
कहिओ पण्डित एबे बसिल भोजने ॥१४४
तोमारे प्रभुर सेष राखिब धरिया ।
प्रभु निद्रा गेले तुमि खाइओ आसिया ॥१४५
रामाइ नन्दाइ आर गोविन्द रघुनाथ ।"
सबारे बाँटिया दिल प्रभुर व्यञ्जनभात ॥१४६
आपने प्रभुर शेष करिल भोजन ।
तबे गोविन्देरे प्रभु पाठाइल पुनः ॥१४७
"देख जगदानन्द प्रसाद पाय कि ना पाय ।
शीघ्र समाचार तुमि कहिबे आमाय ॥"१४८
गोविन्द आसि देखि कहिल पण्डितेर भोजन ।
तबे महाप्रभु कैल स्वच्छन्दे शयन ॥१४९
जगदानन्दे प्रभुर प्रेमा चले एइमते ।
सत्यभामा कृष्णेर येन शुनि भागवते ॥१५०
जगदानन्देर सौभाग्येर के करिबे सीमा ।
जगदानन्देर सौभाग्येर तिँहइ उपमा ॥१५१
जगदानन्देर प्रेमविवर्त्त शुने येइ जन ।
प्रेमेर स्वरूप जाने, पाय प्रेमधन ॥१५२
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१५३

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे जगदानन्दतैलभञ्जनं नाम द्वादशः परिच्छेदः ॥१२॥



त्रयोदश परिच्छेद ।

कृष्णविच्छेदजातार्त्या क्षीणे चापि मनस्तनू ।
दधाते फुल्लतां भावैर्यस्य तं गौरमाश्रये ॥१

टीका—यस्य मनस्तनू कृष्णविच्छेदजातार्त्या क्षीणे भवतौ अपि च भावैः फुल्लतां दधाते, तं गौर आश्रये ॥१

जिनके मन एवं देह कृष्ण विच्छेद हेतु पीड़ा से क्षीण होकर भी भाव समूह नित्य प्रफुल्ल रहते हैं, मैं उन गौरचन्द्र का आश्रय ग्रहण करता हूं ॥१

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
हेनमते महाप्रभु जगदानन्द सङ्गे ।
नानामते आस्वादये प्रेमेर तरङ्गे ॥२
कृष्णविच्छेदे दुःख, क्षीण मन काय ।
भावावेशे प्रभु कभु प्रफुल्लित हय ॥३
कलार शरलाते शयन, क्षीण अति काय ।
शरलाते हाड़ लागे व्यथा लागे गाय ॥४
देखि सब भक्तगणेर महादुःख हइल ।
सहिते नारे जगदानन्द उपाय सृजिल ॥५

सूक्ष्म वस्त्र आनि गिरि दिया रङ्गाइल ।
शिमूलेर तूला दिया ताहा भराइल ॥६
एइ तुली बालिश गोविन्देर हाते दिल ।
"प्रभुके शोयाइह इहाय" ताहारे कहिल ॥७
स्वरूपगोसाञिके कहे जगदानन्द ।
"आजि आपने याञा प्रभुके कराइह शयन ॥८
शयनेर काले स्वरूप ताँहाइ रहिला ।
तुली-बालिश देखि प्रभु क्रोधाविष्ट हैला ॥९
गोविन्देरे पुछे "इहा कराइल कोन् जन ?"
जगदानन्द नाम शुनि सङ्कोच कैल मन ॥१०
गोविन्देरे कहि सेइ तुली दूर कैल ।
कलार शरला-उपर शयन करिल ॥११
स्वरूप कहे "तोमार इच्छा कि कहिते पारि ।
शय्या उपेक्षिले, पण्डित दुःख पाबे भारि ॥"१२
प्रभु कहेन "खाट एक आनह पाड़िते ।
जगदानन्द चाहे आमाय विषय भुञ्जाइते ॥१३
सन्न्यासी मानुष आमार भूमिते शयन ।
आमार खाट तुलीबालिश मस्तकमुण्डन ॥"१४
स्वरूप गोसाञि आसि पण्डिते कहिल ।
शुनि जगदानन्द महादुःख पाइल ॥१५
स्वरूप गोसाञि तबे सृजिल प्रकार ।
कदलीर शुष्कपत्र आनिल अपार ॥१६
नखे चिरि चिरि ताहा सूक्ष्मर कैल ।
प्रभुर वहिर्वासेते से सब भरिल ॥१७
एइ मत दुइ कैल ओड़न पाड़ने ।
अङ्गीकार कैल प्रभु अनेक यतने ॥१८
ताते शयन करे प्रभु देखि सब सुखी ।
जगदानन्द भितर बाहिरे महादुःखी ॥१९
पूर्व्वे जगदानन्देर इच्छा वृन्दावन याइते ।
प्रभु आज्ञा ना देन तारे, ना पारे चलिते ॥२०
भितरे दुःख, वाह्य प्रकाश ना कैल ।
मथुरा याइते प्रभु स्थाने आज्ञा मागिल ॥२१
प्रभु कहे "मथुरा याइबे आमाय क्रोध करि ।
आमा दोष लागाइया हइबे भिखारी ॥"२२
जगदानन्द कहे प्रभुर धरिया चरण ।
"पूर्व्वे हैते इच्छा मोर याइते वृन्दावन ॥२३
प्रभु आज्ञा नाहि ताते, ना पारि याइते ।
एबे आज्ञा देह, अवश्य याइब निश्चिते ॥"२४
प्रभु प्रीते ताँर गमन ना करे अङ्गीकार ।
तिँहो प्रभुर ठाञि आज्ञा मागे बार बार ॥२५
स्वरूपगोसाञिके पण्डित कैल निवेदन ।
पूर्व्वे हइते वृन्दावन याइते मोर मन ॥२६
प्रभु-आज्ञा बिना ताहा याइते ना पारि ।
एबे आज्ञा ना देन मोरे 'क्रोधे याह' बलि ॥२७
सहजेइ मोर ताँहा याइते मन हय ।
प्रभु-आज्ञा लञा देह करिया विनय ॥२८
तबे स्वरूपगोसाञि कहे प्रभुर चरणे ।
"जगदानन्देर इच्छा बड़ याइते वृन्दावने ॥२९
तोमार ठाञि आज्ञा तिँहो मागे बारबार ।
आज्ञा देह मथुरा देखि आइसेन एकबार ॥३०
आइरे देखिते यैछे गौड़देशे याय ।
तैछे एकबार वृन्दावन देखि आय ॥"३१
स्वरूपगोसाञिर बोले तबे आज्ञा दिल ।
जगदानन्दे बोलाइया तारे शिखाइल ॥३२
"वाराणसी पर्य्यन्त स्वच्छन्दे याबे पथे ।
आगे सावधाने या' क्षत्रियादि साथे ॥३३

केवल गौड़िया पाइले बाटपाड़ करि बान्धे ।
सब लुटि बान्धि, राखे, याइते विरोधे ॥३४
मथुरा गेले सनातन सङ्गे रहिबा ।
मथुरार स्वामी सबेर चरण वन्दिबा ॥३५
दूर रहि भक्ति करिह, सङ्गे ना रहिबा ।
ताँ सबार आचार चेष्टा लैते ना पारिबा ॥३६
सनातनसङ्गे करिह वन दरशन ।
सनातनेर सङ्ग ना छाड़िबे एकक्षण ॥३७
शीघ्र आसिह, ताहा ना रहिओ चिरकाल ।
गोवर्द्धने ना चड़िह देखिते गोपाल ॥३८
आमिओ आसितेछि कहिओ सनातने ।
आमार तरे एक स्थान करे वृन्दावने ॥"३९
एत बलि जगदानन्दे कैल आलिङ्गन ।
जगदानन्द चलिल प्रभुर वन्दिल चरण ॥४०
सब भक्तगण-ठाञि आज्ञा मागिला ।
वनपथे चलि चलि वाराणसी आइला ॥४१
तपनमिश्र चन्द्रशेखर दुँहारे मिलिला ।
ताँर ठाञि प्रभुर कथा सकलि शुनिला ॥४२
मथुराय आसि मिलिला सनातने ।
दुइ जनेर सङ्गे दुँहे आनन्दित मने ॥४३
सनातन कराइल तारे द्वादशादि वन ।
गोकुले रहिला दुँहे देखि महावन ॥४४
सनातनेर गोफाते दुँहे रहेन एक ठाञि ।
पण्डित पाक करेन देवालये याञि ॥४५
सनातन भिक्षा करे याइ महावने ।
कभु देवालये, कभु ब्राह्मण सदने ॥४६
सनातन पण्डितेर करेन समाधान ।
महावने देन आनि मागि अन्न-पान ॥४७
एकदिन सनातने पण्डित निमन्त्रिल ।
नित्यकृत्य करि तिँहो पाक चड़ाइल ॥४८
मुकुन्दसरस्वती नाम सन्न्यासी महाजने ।
एक वहिर्वास तिँह दिला सनातने ॥४९
सनातन सेइ वस्त्र मस्तके बान्धिया ।
जगदानन्देर वासद्वारे बसिला आसिया ॥५०
रातुल वस्त्र देखि पण्डित प्रेमाविष्ट हैला ।
महाप्रभुर प्रसाद जानि ताँहारे पुछिला ॥५१
"काँहा पाइले एइ रातुल वसन ?"
"मुकुन्दसरस्वती दिल" कहे सनातन ॥५२
शुनि पण्डितेर मने क्रोध उपजिला ।
भातेर हाण्डि हाते लञा मारिते आइला ॥५३
सनातन ताँरे जानि लज्जित हइला ।
बलिते लागिला हाण्डि चुलाते धरिया ॥
५४॥
"तुमि महाप्रभुर हओ पार्षदप्रधान ।
तोमा सम महाप्रभुर प्रिय नाहि आन ॥५५
अन्य सन्न्यासीर वस्त्र तुमि धर शिरे ।
कोन् ऐछे हय इहा पारे सहिबारे ॥"५६
सनातन कहे "साधु पण्डित महाशय ।
चैतन्येर तोमा सम प्रिय केह नय ॥५७
ऐछे चैतन्यनिष्ठा योग्य तोमाते ।
तुमि ना देखाइले इहा शिखिब केमते ॥५८
याहा देखिबारे वस्त्र मस्तके बान्धिल ।
सेइ अपूर्व्व प्रेम एइ प्रत्यक्षे देखिल ॥५९
रक्त वस्त्र वैष्णवेर परिते ना जुयाय ।
कोन प्रवासीके दिब, कि काज उहाय ॥"६०

पाक करि जगदानन्द चैतन्ये समर्पिल ।
दुइ जने बसि तब प्रसाद पाइल ॥६१
प्रसाद पाइ दुइजन कैल ग्रालिङ्गन ।
चैतन्यविरहे दुँहे करिल क्रन्दन ॥६२
एइमते मास दुइ रहिला वृन्दावने ।
चैतन्यविरहदुःख ना याय सहने ॥६३
महाप्रभुर सन्देश कहिल सनातने ।
"ग्रामिह ग्रासितेछि, करिह एक स्थाने" ॥
६४॥
जगदानन्द पण्डित तबे ग्राज्ञा किछु मागिल ।
सनातनप्रभुके किछु भेटवस्तु दिल ॥६५
रासस्थलीर बालु ग्रार गोवर्द्धनेर शिला ।
शुष्क पक्व पीलुफल ग्रार गुञ्छामाला ॥६६
जगदानन्द पण्डित चलिला सब लञा ।
व्याकुल हैला सनातन ताँरे विदाय दिया ॥६७
प्रभुर निमित्त एक स्थान मने विचारिल ।
द्वादशादित्यटिलाय एक मठि पाइल ॥६८
सेइ स्थान राखिल गोसाञि संस्कार करिया ।
मठिर ग्रागे राखिल एक चालि बान्धिया ॥६९
शीघ्र चलि नीलाचले गेल जगदानन्द ।
सब भक्त सह गोसाञि परम ग्रानन्द ॥७०
प्रभुर चरण वन्दि सबारे मिलिला ।
महाप्रभु ताँरे दृढ़ ग्रालिङ्गन कैला ॥७१
सनातनेर नामे पण्डित दण्डवत कैल ।
रासस्थलीर धूलि-ग्रादि सब भेट दिल ॥७२
सब द्रव्य राखिलेन, पीलु दिलेन बाँटिञा ।
वृन्दावनेर फल बलि खाइल हृष्ट हञा ॥७३
ये कहे जाने से ग्राँटि चुषिते लागिल ।
ये ना जाने गौड़िया, पीलु चिबाञा खाइल ॥७४
मुखे तार छाल गेल, जिह्वाय बहे लाला ।
वृन्दावनेर पीलु खाइते एइ एक लीला ॥७५
जगदानन्देर ग्रागमने सबार उल्लास ।
एइमते नीलाचले प्रभुर विलास ॥७६
एक दिन प्रभु यमेश्वरटोटा याइते ।
सेइकाले देवदासी लागिला गाहिते ॥७७
गुर्ज्जरी राग लञा सुमधुर स्वरे ।
गीतगोविन्द-पद गाय, जग-मन हरे ॥७८
दूरे गान शुनि प्रभुर हइला ग्रावेश ।
स्त्री पुरुष केबा गाय ना जानि विशेष ॥७९
ताँरे मिलिबारे प्रभु ग्रावेशे धाइला ।
पथे सिजेर बाड़ि फुठिञा चिलिला ॥८०
ग्रङ्गे काँटा लागिल, किछु ना जानिला ।
ग्रस्तेव्यस्ते गोविन्द ताँर पिछेते धाइला ॥८१
धाइया यायेन प्रभु, स्त्री ग्राछे ग्रल्प दूर ।
'स्त्री गाय' बलि गोविन्द प्रभुके कैल कोले ॥८२
स्त्रीनाम शुनि प्रभुर वाह्य स्फूर्त्ति हैला ।
पुनरपि सेइपथे बाहुड़ि चलिला ॥८३
प्रभु कहे "गोविन्द ग्राजि राखिले जीवन ।
स्त्रीपरश हैले ग्रामार हइत मरण ॥८४
ए ऋण शोधिते ग्रामि नारिब तोमार ।"
गोविन्द कहे "जगन्नाथ राखे, मुञि कोन् छार
८५॥
प्रभु कहे "गोविन्द मोर सङ्गे रहिबा ।
याँहा ताँहा मोर रक्षाय सावधान हइबा ॥८६

एत बलि नेउटि प्रभु गेला निज स्थाने ।
शुनि महा भय पाइल स्वरूपादि मने ॥८७
एथा तपनमिश्रपुत्र रघुनाथ भट्टाचार्य्य ।
प्रभुके देखिते चलिला छाड़ि सब कार्य्य ॥८८
काशी हइते चलिला तिँहो गौड़पथ दिया ।
सङ्गे सेवक चले ताँर झालि साजाइया ॥८९
पथे ताँरे मिलिला विश्वास रामदास ।
विश्वासखानार कायस्थ तिँहो राजविश्वास ।९०
सर्व्वशास्त्रे प्रवीण, काव्यप्रकाश-अध्यापक ।
परम वैष्णव रघुनाथ-उपासक ॥९१
अष्ट प्रहर रामनाम जपे रात्रि दिने ।
सर्व्वत्यागी चलिला जगन्नाथदरशने ॥९२
रघुनाथभट्टेर सहे पथेते मिलिला ।
भट्टेर झालि माथे करि बहिया चलिला ॥९३
नाना सेवा करि करे पादसम्वाहन ।
ताते रघुनाथेर हय सङ्कुचित मन ॥९४
"तुमि बड़लोक पण्डित महाभागवते ।
सेवा ना करिह सुखे चल मोर साथे ॥"९५
रामदास कहे "आमि शूद्र अधम ।
ब्राह्मणेर सेवा, एइ मोर निज धर्म्म ॥९६
सङ्कोच ना कर तुमि, आमि तोमार दास ।
तोमार सेवा करिले हय हृदये उल्लास ॥"९७
एत बलि झालि बहे करेन सेवने ।
रघुनाथेर तारकमन्त्र जपे रात्रि दिने ॥९८
एइमते रघुनाथ आइला नीलाचले ।
प्रभुर चरणे याञा मिलिला कुतुहले ॥९९
दण्डप्रणाम करि भट्ट पड़िला चरणे ।
प्रभु रघुनाथ जानि कैल आलिङ्गने ॥१००
मिश्र आर शेखरेर दण्डवत् जानाइला ।
महाप्रभु ता सबार वार्त्ता पुछिला ॥१०१
"भाल हइल आइला देख कमललोचन ।
आजि आमार एथा करिबे प्रसादभोजन ॥१०२
गोविन्देरे कहि एक वासा देओयाइला ।
स्वरूपादि भक्तगणसने मिलाइला ॥१०३
एइमते प्रभुसङ्गे रहिला अष्टमास ।
दिने दिने प्रभुर कृपाय बाड़ये उल्लास ॥१०४
मध्ये मध्ये महाप्रभुर करे निमन्त्रण ।
घर भात करे आर विविध व्यञ्जन ॥१०५
रघुनाथभट्ट पाके अति सुनिपुण ।
येइ रान्धे सेइ हय अमृतेर सम ॥१०६
परम सन्तोषे प्रभु करेन भोजन ।
प्रभुर अवशिष्टपात्र भट्टेर भक्षण ॥१०७
रामदास यदि प्रथम प्रभुरे मिलिला ।
महाप्रभु अधिक तारे कृपा ना करिला ॥१०८
अन्तरे मुमुक्षु तेँहो विद्यागर्व्ववान् ।
सर्व्वचित्तज्ञाता प्रभु सर्व्वज्ञ भगवान् ॥१०९
रामदास कैल तबे नीलाचले वास ।
पट्टनायक गोष्ठीके पड़ाय काव्यप्रकाश ॥११०
अष्टमास रहि प्रभु भट्टे विदाय दिल ।
"विवाह ना करिओ" निषेध करिल ॥१११
"वृद्ध मातापिता याइ करह सेवन ।
वैष्णव-पाश भागवत कर अध्ययन ॥११२
पुनरपि एकबार आसिओ नीलाचले ।"
एत बलि कण्ठमाला दिल तार गले ॥११३
आलिङ्गन करि प्रभु विदाय तारे दिला ।
प्रेमे गर गर भट्ट कान्दिते लागिला ॥११४

स्वरूप-आदि भक्तठाञि आज्ञा मागिया ।
वाराणसी आइला भट्ट प्रभु-आज्ञा पाञा ॥ ॥११५॥

चारि वत्सर घरे पिता-माता-सेवा कैला ।
वैष्णवपण्डित-ठाञि भागवत पड़िला ॥११६

पितामाता काशी पाइले उदासीन हञा ।
पुनः प्रभुर ठाञि आइला गृहादि छाड़िया ॥ ॥११७॥

पूर्व्ववत् अष्टमास प्रभुपाश छिला ।
अष्टमास रहि पुनः प्रभु आज्ञा दिला ॥११८

"आमार आज्ञाय रघुनाथ याह वृन्दावने ।
ताँहा याञा रह रूप-सनातन-स्थाने ॥११९

भागवत पढ़, सदा लह कृष्णनाम ।
अचिरे करिवेन कृपा कृष्ण भगवान् ॥१२०

एत बलि प्रभु तारे आलिङ्गन कैल ।
प्रभुर कृपाते कृष्णप्रेमे मत्त हैल ॥१२१

चौद्दहात जगन्नाथेर तुलसीर माला ।
छुटा पानविड़ा महोत्सवे पाञा छिला ॥१२२

सेइ माला छुटा पान प्रभु तारे दिला ।
इष्टदेव करि माला धरिया राखिला ॥१२३

प्रभुर ठाञि आज्ञा लञा गेला वृन्दावने ।
आश्रय करिल आसि रूप-सनातने ॥१२४

रूपगोसाञिर सभाय करे भागवतपटन ।
भागवत पड़िते प्रेमे आउलाय तार मन ॥१२५

अश्रु कम्प गद्गद प्रभुर कृपाते ।
नेत्र कण्ठ रोधे वाष्प, ना पारे पड़िते ॥१२६

पिकस्वर कण्ठ, ताते रागेर विभाग ।
एक श्लोक पड़िते फिराय तिन चारि राग१२७

कृष्णेर सौन्दर्य्य-माधुर्य्य यबे पड़े शुने ।
प्रेमे विह्वल हय तबे किछुइ ना जाने ॥१२८

गोविन्दचरणे कैल आत्मसमर्पण ।
गोविन्दचरणाविन्द याँर प्राणधन ॥१२९

निज शिष्ये कहि गोविन्दमन्दिर कराइल ।
बंशी-मकर-कुण्डलादि भूषण करि दिल ॥१३०

ग्राम्यवार्त्ता नाहि शुने, ना कहे जिह्वाय ।
कृष्णकथा-पूजादिते अष्ट प्रहर याय ॥१३१

वैष्णवेर निन्द्य कर्म्म नाहि पाड़े काने ।
सबे कृष्णभजन करे एइमात्र जाने ॥१३२

महाप्रभुर दत्त माला स्मरणेर काले ।
प्रसाद-कड़ाह सह बान्धिलेन गले ॥१३३

महाप्रभुर कृपाय कृष्ण-प्रेम अनर्गल ।
एइत कहिल ताते चैतन्येर कृपाफल ॥१३४

जगदानन्देर कहिल वृन्दावन-आगमन ।
तार मध्ये देवदासीर गान श्रवण॥१३५

महाप्रभुर रघुनाथे कृपा-महाफल ।
एक परिच्छेदे तिन कथा कहिल सकल ॥१३६

ये एइ सकल कथा शुणे श्रद्धा करि ।
तारे कृष्ण-प्रेमधन देन गोरहरि ॥१३७

श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१३८

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्ड जगदानन्दवृन्दावनगमनं नाम त्रयोदशः परिच्छेदः ॥१३॥



चतुर्द्दश परिच्छेद ।

कृष्णविच्छेदविभ्रान्त्या मनसा वपुषा धिया ।
यद्यद्व्यधत्त गौराङ्गस्तल्लेश: कथ्यतेऽधुना ॥१॥

टीका—गौराङ्ग: कृष्णविच्छेदविभ्रान्त्या मनसा वपुषा धिया यद्यत् व्यधत्त, अधुना तल्लेस: कथ्यते ॥१

श्रीकृष्ण विच्छेद हेतु भ्रान्ति निबन्धन गौराङ्ग देव मन देह एवं बुद्धि से समस्त भाव चेष्टादि प्रकट किये थे, अधुना उसका ही अवशिष्ट अङ्ग का वर्णन करते हैं ॥१

जय जय श्रीचैतन्य स्वयं भगवान् ।
जय जय गौरचन्द्र भक्तगण प्राण ॥१
जय जय नित्यानन्द चैतन्यजीवन ।
जयाद्वैताचार्य्य जय गौर प्रियतम ॥२
जय स्वरूप-श्रीवासादि प्रभुर भक्तगण ।
शक्ति देह, करि येन चैतन्य वर्णन ॥३
प्रभुर विरहोन्माद भाव गम्भीर ।
बुझिते ना पारे केह, यद्यपि हय धीर ॥४
बुझिते ना पारि याहा, वर्णिते के पारे ।
सेइ बुझे वर्णे, चैतन्य शक्ति देन यारे ॥५
स्वरूपगोस्वाञि आर रघुनाथदास ।
एइ दुइ कड़चाते ए लीलाप्रकाश ॥६
से काले ए दुइ रहे महाप्रभुर पाशे ।
आर सव कड़चा-कर्त्ता रहे दूर देशे ॥७
क्षणे क्षणे अनुभवि एइ दुइ जन ।
संक्षेपे बाहुल्य करे कड़चाग्रन्थन ॥८
स्वरूप सूत्रकर्त्ता, रघुनाथ वृत्तिकार ।
तार बाहुल्य वर्णि पाँजि-टीका-व्यवहार ॥९
ताते विश्वास करि शुन भावेर वर्णन ।
हइवे भावेर ज्ञान, पाइबे प्रेमधन ॥१०
कृष्ण मथुरा गेले गोपी ये दशा हइल ।
कृष्णविच्छेदे प्रभुर से दशा उपजिल ॥११
उद्धवदर्शने यैछे राधार विलाप ।
क्रमे क्रमे हैल प्रभुर से उन्माद-विलाप ॥१२
राधिकार भावे प्रभुर सदा अभिमान ।
सेइ भावे आपनाके हय राधा-ज्ञान ॥१३
दिव्योन्मादे ऐछे हय, कि इहा विस्मय ।
अधिरूढ़भावे दिव्योन्माद प्रलाप हय ॥१४

तथाहि उज्ज्वलनीलमणौ स्थायिभावे १३७ श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

एतस्य मोहनाख्यस्य गतिं काम्प्युपेयुष: ।
भ्रमाभा कापि वैचित्री दिव्योन्माद इतीर्य्यते ।
उद्घूर्णाचित्रजल्पाद्यास्तद्भेदा बहवो मता: ॥२

टीका - कामपि अनिर्व्वचनीयां गतिं उपेयुष:एतस्य मोहनाख्यस्य भ्रमाभा कापि वैचित्री दिव्योन्माद इति ईर्य्यते । उद्घूर्णाचित्रजल्पाद्या: बहव: तद्भेदा: मता: कथिता: ॥२

अधिरूढ़ महाभाव के मोहनाख्यभाव यदि अतुलनीय दशा में उपस्थित होता है तो भ्रान्तिमयी वैचित्री होती है। उसी का नाम दिव्योन्माद है। उद्घूर्णा चित्र जल्पादि इसके बहुविध भेद हैं ॥२

एक दिन महाप्रभु करियाछेन शयन ।
कृष्ण रासलीला करे देखिल स्वपन ॥१५
त्रिभङ्ग-सुन्दर देह मुरलीवदन ।
पीताम्बर वनमाला मदन-मोहन ॥१६

मण्डलीबन्धे गोपीगण करेन नर्त्तन ।
मध्ये राधा सह नाचे व्रजेन्द्रनन्दन ॥१७
देखि प्रभु सेइ रसे आविष्ट हइला ।
वृन्दावने कृष्ण पाइनु एइ ज्ञान हैला ॥१८
प्रभुर विलम्ब देखि गोविन्द जागाइला ।
जागिले स्वप्नज्ञान हैल, प्रभु दुःखी हैला ॥१९
देहाभ्यासे नित्यकृत्य करि समापन ।
काले याइ कैल जगन्नाथ-दरशन ॥२०
यावत् काल दर्शन करे गरुड़ेर पाछे ।
प्रभुर आगे दर्शन करे लोक लाखे लाखे ॥२१
उड़िया एक स्त्री भिड़े दर्शन ना पाञा ।
गरुड़े चड़ि देखे प्रभुर स्कन्धे पद दिञा ॥२२
देखिया गोविन्द अस्तव्यस्ते सेइ स्त्रीके वर्ज्जिला ।
तारे नामाइते प्रभु गोविन्दे निषेधिला ॥२३
''आदिवश्या ! एइ स्त्रीके ना कर वर्ज्जन ।
करुक यथेष्ट जगन्नाथ-दरशन ॥२४
अस्तेव्यस्ते सेइ नारी भूमिते नामिला ।
महाप्रभुके देखि ताँर चरण वन्दिला ॥२५
तार आर्त्ति देखि प्रभु कहिते लागिला ।
एत आर्त्ति जगन्नाथ मोरे नाहि दिला ॥२६
जगन्नाथे आविष्ट इहार तनु मन प्राणे ।
मोर स्कन्धे पद दियाछे ताहा नाहि जाने ॥२७
अहो भाग्यवती एइ वन्दि इहार पाय ।
इहार प्रसादे ऐछे आर्त्ति आमार वा हय ॥२८
पूर्व्वे आमि यबे कैल जगन्नाथ-दरशन ।
जगन्नाथे देखि साक्षात् व्रजेन्द्रनन्दन ॥२९
स्वप्नेर दर्शनावेशे तद्रूप हइल मन ।
याँहा ताँहा देखि सर्व्वत्र मुरलीवदन ॥३०
एबे यदि स्त्रीके देखि प्रभुर वाह्य हइल ।
जगन्नाथ-सुभद्रा बलरामेर स्वरूप देखिल ॥३१
कुरुक्षेत्रे देखि कृष्ण ऐछे कैल मन ।
'काँहा कुरुक्षेत्रे आइलाम, काँहा वृन्दावन ॥३२
प्राप्तरत्न हाराइला ऐछे व्यग्र हैला ।
विषण्ण हइया प्रभु निज वासा आइला ॥३३
भूमिर उपर वसि निज नखे भूमि लिखे ।
अश्रुगङ्गा नेत्रे वहे, किछुइ ना देखे ॥३४
पाइनु वृन्दावननाथ पुनः हाराइनु ।
के मोर निलेक कृष्ण,काँहा मुञि आइनु ॥३५
स्वप्नावेशे प्रेमे प्रभुर गर गर मन ।
वाह्य हैले हय येन हाराइनु धन ॥३६
उन्मत्तेर प्राय प्रभु करे गान नृत्य ।
देहेर स्वभावे करे स्नान भोजनकृत्य ॥३७
रात्रि हैले स्वरूप-रामानन्द लइया ।
आपन मनेर भाव कहे उघाड़िया ॥३८

तथाहि गोस्वामिपादोक्तः श्लोकः—

प्राप्तप्रनष्टाच्युतवित्त आत्मा,
ययौ विषादोज्झितदेहगेहः ।
गृहीतकापालिकधर्म्मको मे,
वृन्दावनं स्वेन्द्रियशिष्यवृन्दः ॥३

टीका—मे मम आत्मा गृहीतकापालिकधर्म्मकः गृहीतयोगिधर्म्मकः सन् वृन्दावनं ययौ । आत्मा किम्भूतः ?—प्राप्तप्रनष्टाच्युतवित्तः प्राप्तः सन् प्रनष्टः अच्युत एव वित्तं धनं येन सः । पुनः कीदृशः ?— विषादोज्झितदेहगेहः विषादेन कृष्णविच्छेदेन हेतुना उज्झितः परित्यक्तः देह एव गेहः येन सः । पुनः किम्भुतः ?—स्वेन्द्रियशिष्यवृन्दः स्वस्य स्वकीयस्य इन्द्रियाण्येव शिष्यवृन्दं यस्य सः ॥३

श्रीचैतन्य देव स्वरूप रामानन्द को कहे थे—मदीय आत्मा कृष्णरूप निधि को खोकर देह रूप गृह को विसर्जन कर योगिधर्मावलम्बन पूर्वक इन्द्रियरूप शिष्य वृन्द के सहित वृन्दावन गमन किया है ॥३

यथाराग: ।

प्राप्त रत्न हाराइया, तार गुण सङरिया,
महाप्रभु सन्तापे विह्वल ।
राय-स्वरूपेर कण्ठधरि, कहे हा हा हरि,
धैर्य्य गेल, हइल चपल ॥३६
शुन बान्धव ! कृष्णेर माधुरी ।
यार लोभे मोर मन, छाड़िलेक वेदधर्म्म,
योगी हआ हइल भिखारी ॥ध्रु॥४०
कृष्णलीलामण्डल, शुद्ध शङ्खकुण्डल,
गड़ियाछे शुक कारिकर ।
सेइ कुण्डल काने परि, तृष्णा-लाउ थालि धरि,
आशाझुलि कान्धेर उपर ॥४१
चिन्ता-कान्था उड़ि गाय,
धूलि-विभूति-मलिन काय,
'हा हा कृष्ण' प्रलाप-उत्तर ।
उद्वेग-द्वादश हाते,
लोभेर झुलि निल माथे,
भिक्षाभावे क्षीण कलेवर ॥४२
व्यास-शुकादि योगिगण,
कृष्ण आत्मा निरञ्जन,
व्रजे तांर यत लीलागण ।
भागवतादि शास्त्रगणे, करियाछे वर्णने,
सेइ तर्ज्जा पढ़े अनुक्षण ॥४३
दशेन्द्रिय शिष्य करि,
'महा वाउल' नाम धरि,
शिष्य लआ करिनु गमन ।
मोर देह स्वसदन, विषयभोग महाधन,
सब छाड़ि गेला वृन्दावन ॥४४
वृन्दावने प्रजागण, यत स्थावर जङ्गम,
वृक्षलता गृहस्थ-आश्रमे ।
तार घरे भिक्षाटन, फल-मूल-पत्राशन,
एइ वृत्ति करे शिष्यसने ॥४५
कृष्ण-गुण-रूप-रस, गन्ध-शब्द-परश,
से सुधा आस्वादे गोपीगण ।
ता सबार ग्रास शेषे,
आनि पञ्चेन्द्रिय-शिष्ये,
से भिक्षाय राखेन जीवन ॥४६
शून्य-कुञ्जमण्डप कोणे
योगाभ्यास कृष्ण-ध्याने,
ताँहा रहे लआ शिष्यगण ।
कृष्ण आत्मा निरञ्जन,
साक्षात् देखिते मन,
ध्याने रात्रि करे जागरण ॥४७
मन कृष्ण-वियोगी, दुःखे मन हैल योगी,
से वियोगे दश दशा हय ।
से दशाय व्याकुल हआ,
मन गेला पलाइया,
शून्य मोर शरीर आलय ॥४८
कृष्णेर वियोगे गोपीर दश दशा हय ।
सेइ दश दशा एवे प्रभुर उदय ॥४६

तथाहि उज्ज्वलनीलमणौ शृङ्गारभेदकथने पञ्चषष्टि-श्लोके श्रीरूपगोस्वामि-वाक्यं—

चिन्तात्र जागरोद्वेगौ तानवं मलिनाङ्गता।
प्रलापो व्याधिरुन्मादोमोहो मृत्युर्द्दशादश ॥४

टीका— अत्र दशदशाः उक्ताः । तद्विवृतिमाह यथा—चिन्ता, इष्टलाभार्थचिन्तनं ; जागरोद्वेगौ जागरः जागरणं उद्वेगः व्याकुलत्वं ; तानवं तनुता ; मलिनाङ्गता ; प्रलापः ; व्याधिः ; उन्मादः ; मोहः ; मृत्युः स्पन्दनशून्यता ॥४

इष्ट लाभार्थ चिन्ता, जागरण, उद्वेग, तनुता, अङ्गमालिन्य, असम्बद्ध भाषण, रोग, उन्माद, मूर्च्छा एवं स्पन्दनराहित्य को दश दशा कहते हैं ॥४

एइ दश दशाय प्रभु व्याकुल रात्रिदिने ।
कभु कोन दशा उठे, स्थिर नहे मने ॥५०
एत कहि महाप्रभु मौन करिला ।
रामानन्दराय श्लोक पड़िते लागिला ॥५१
स्वरूप गोसाञि करे कृष्णलीला गान ।
दुइ जने किछु कैल प्रभुर वाह्यज्ञान ॥५२
एइमत अर्द्धरात्रि कैल निर्यापण ।
भितर प्रकोष्ठे प्रभुके कराइल शयन ॥५३
रामानन्दराय तबे गेला निज घरे ।
स्वरूप गोविन्द दुइ शुइलेन वहिर्द्वारे ॥५४
सब रात्रि महाप्रभु करे जागरण ।
उच्च करि करे कृष्णनामसंकीर्तन ॥५५
प्रभुर शब्द ना पाइया स्वरूप कपाट कैल दूरे।
तिन द्वार देया आछे, प्रभु नाहि घरे ॥५६
चिन्तित हइल सबे प्रभु ना देखिया ।
प्रभु चाहि बुले सबे व्याकुल हइया ॥५७
सिंहद्वारेर उत्तर दिशाय आछे एक ठाञि ।
तार मध्ये पड़ि आछेन चैतन्य गोसाञि ॥५८
देखि स्वरूप गोसाञि-आदि आनन्दित हइला ।
प्रभुर दशा देखि पुनः चिन्तिते लागिला ॥५९
प्रभु पड़ि आछेन दीर्घ हात पाँच छय ।
अचेतन देह, नासाय श्वास नाहि वय ॥६०
एकेक हस्त-पाद-दीर्घ तिन तिन हाथ ।
अस्थि ग्रन्थि भिन्न,चर्म्म आछे मात्र तात ॥६१
हस्त पद ग्रीवा कटि अस्थिसन्धि यत ।
एकेक वितस्ति भिन्न हइयाछे तत ॥६२
चर्म्ममात्र उपरे, सन्धि आछे दीर्घ हञा ।
दुःखित हइल सबे प्रभुके देखिया ॥६३
मुखे लाला फेन प्रभुर उत्तान नयन ।
देखिया सकल भक्तेर देहे छाड़े प्राण ॥६४
स्वरूप गोसाञि तबे उच्च करिया ।
प्रभुर काणे कृष्णनाम कहे भक्तगण लञा ॥६५
बहुक्षणे कृष्णनाम हृदये पशिला ।
"हरिवोल" वलि प्रभु गर्ज्जिया उठिला ॥६६
चेतन पाइते अस्थि सन्धि लागिल ।
पुर्व्वप्राय यथावत् शरीर हइल ॥६७
एइ लीला महाप्रभुर रघुनाथदास ।
चैतन्य स्तवकल्पवृक्षे करियाछेन प्रकाश ॥६८

तथाहि स्तवावल्यां चैतन्यस्तवकल्पवृक्ष चतुर्थ-श्लोक—

क्वचिन्मिश्रावासे व्रजपतिसुतस्योरुविरहात्,
श्लथत्-श्रीसन्धित्वाद्दधदधिक दैर्घ्यं भुजपदोः ।
लुठन् भूमौ काक्वावाण्या विकलं गद्गदवाचा,
रुदन् श्रीगौराङ्गो हृदय उदयन्मां मदयति ॥५

टीका—श्रीगौराङ्गः मम हृदये उदयन् सन मां मदयति आनन्दयति । किं कुर्व्वन् !—क्वचित् कस्मिंश्चित् काले मिश्रावासे काशीमिश्रस्य गृहे व्रजपतिसुतस्य नन्दनन्दनस्य उरुविरहात्

दारुणविच्छेदयन्त्रणायाः हेतोः श्लथत्-श्रीसन्धित्वात् शिथिलितसंयोगत्वात् भुजपदोः करचरणयोः दैर्घ्यं दधत् सन् ; पुनश्च भूमौ क्षितौ काक्वावाण्या लुठन् सन् ; पुनरपि गद्गद्वाचा विकलं यथा स्यात्तथा रुदन् सन् ॥५

एकदिन काशीमिश्र के गृह में प्रबल कृष्ण विच्छेद यातना हेतु गौराङ्ग देव के देह सन्धिसमूह शिथिल होने के कारण कर-चरण अतीव दीर्घ हुये थे। उस समय आप "काक्वा" शब्द से भूतल में लोटपोट कर गद्गद वाक्य से एवं विकलान्तः करण से रोदन किये थे। आहा ! अद्यापि वह छवि मदीय हृदय कन्दर में आविर्भूत होकर मुझे निरतिशय आनन्दित कर रही है ॥५

सिंहद्वारे देखि प्रभुर विस्मय हइल ।
"काँहा कर कि" एइ स्वरूपे पुछिल ॥६९
स्वरूप कहे उठ प्रभु, चल निज घरे ।
तथाइ तोमारे सब करिव गोचरे ॥७०
एत वलि प्रभु धरि घरे लञा गेल ।
ताँहार अवस्था सब कहिते लागिल ॥७१
शुनि महाप्रभुर बड़ हैल चमत्कार ।
प्रभु कहे किछु स्मृति नाहिक आमार ॥७२
सबे देखि हय मोर कृष्ण विद्यमान ।
विद्युत प्राय देखा दिया हय अन्तर्धान ॥७३
हेन काले जगन्नाथेर पाणिशङ्ख बाजिल ।
स्नान करि महाप्रभु दरशने गेल ॥७४
एइ त कहिल प्रभुर अद्भुत विकार ।
याहार श्रवणे लोके लागे चमत्कार ॥७५
लोके नाहि देखि ऐछे शास्त्रे नाहि शुनि ।
हेन भाव व्यक्त करे व्यासि चूड़ामणि ॥७६
शास्त्रलोकातीत येइ येइ भाव हय ।
इतर लोकेर ताते ना हय निश्चय ॥७७
रघुनाथदासेर सदा प्रभु सङ्गे स्थिति ।
ताँर मुखे शुनि लिखि करिया प्रतीति ॥७८
एकदिन महाप्रभु समुद्रे याइते ।
चटकपर्व्वत देखिलेन आचम्बिते ॥७९
गोवर्द्धन शैल ज्ञाने आविष्ट हइला ।
पर्व्वतदिशाते प्रभु धाइया चलिला ॥८०

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२१।१८)—
हन्तायमद्रिरबला हरिदासवर्य्यो,
यद्रामकृष्णचरणस्परशप्रमोदः ।
मानं तनोति सह गोगणयोस्तयोर्यत्,
पानीयसुयवसकन्दरकन्दमूलैः ॥६

श्रीमद्भागवत के १०।२१।१८ में उक्त है- हे सखि ! यह गोवर्द्धन पर्वत कृष्णभक्त वृन्द के मध्य श्रेष्ठ है ; कारण, यह अद्रिराज रामकृष्ण के पादपद्म के स्पर्श से पुलकित होकर पानीय जल, नूतन नूतन तृण, शीतल छाया युक्त कन्दर एवं विविध फल मूलादि के द्वारा रामकृष्ण की धेनु प्रभृति की एवं वयस्य वृन्द की पूजा कर रहा है ॥६

एइ श्लोक पड़ि प्रभु चले वायुवेगे ।
गोविन्द धाइल पाछे, नाहि पाय लागे ॥८१
फुकार पाड़िल, महा कोलाहल हैल ।
येइ याँहा छिल, सेइ उठिया धाइल ॥८२
स्वरूप जगदानन्द पण्डित गदाधर ।
रामाइ नन्दाइ नीलाइ पण्डित शङ्कर ॥८३
पुरीभारती गोसाञि आइला सिन्धुतीरे ।
भगवानाचार्य्य खञ्ज चलिला धीरे धीरे ॥८४
प्रथमे चलिला प्रभु येन वायुगति ।
स्तम्भभाव पथे हैल, चलिते नाहि शक्ति ॥८५
प्रति रोमकूपे मांस व्रणेर आकार ।
तार उपरे रोमद्गम कदम्ब प्रकार ॥८६

प्रति रोमे प्रस्वेदे पड़े रुधिरेर धार ।
कण्ठ घर्घर, नाहि वर्णेर उच्चार ॥८७
दुइ नेत्र वहि अश्रु वहये अपार ।
समुद्रे मिलिला येन गङ्गा-यमुना-धार ॥८८
वैवर्ण्ये शङ्खप्राय श्वेत हैल अङ्ग ।
तबे कम्प उठे येन समुद्रतरङ्ग ॥८९
काँपिते काँपिते प्रभु भूमिते पड़िल ।
तवे त गोविन्द प्रभुर निकटे आइल ॥९०
करङ्गेर जले करे सर्व्वाङ्ग सिञ्चन ।
वहिर्वास लञा करे अङ्गसंवीजन ॥९१
स्वरूपादिगण ताँहा आसिया मिलिला ।
प्रभुर अवस्था देखि काँन्दिते लागिला ॥९२
प्रभुर अङ्गे देखे अष्ट सात्त्विकविकार ।
आश्चर्य्य सात्त्विक देखि हैल चमत्कार॥९३
उच्च संकीर्त्तन करे प्रभुर श्रवणे ।
शीतल जले करे प्रभुर अङ्गसम्मार्ज्जने ॥९४
एइमत बहुवार कीर्त्तन करिते ।
"हरिबोल" बलि प्रभु उठे आचम्बिते ॥९५
आनन्दे सकल वैष्णव बले हरि हरि ।
उठिल मङ्गलध्वनि चतुर्द्दिक भरि ॥९६
उठि महाप्रभु विस्मित इति उति चाय ।
ये देखिते चाय ताहा देखिते ना पाय ॥९७
वैष्णव देखिया प्रभुर अर्द्धवाह्य हैल ।
स्वरूप गोसाञिरे किछु कहिते लागिल ॥९८
"गोवर्द्धन हइते मोरे के इँहा आनिल ।
पाइया कृष्णेर लीला देखिते ना पाइल॥९९
इँहा हइते आजि मुञि गेनु गोवर्द्धने ।
देखों यदि कृष्ण करे गोधनचारणे ॥१००
गोवर्द्धने चड़ि कृष्ण वाजाइल वेणु ।
गोवर्द्धनेर चौदिके चरे सब धेनु ॥१०१
वेणुनाद शुनि आइला राधाठाकुराणी ।
ताँर रूपभाव सखि ! वर्णिते ना जानि॥१०२
राधा लइया कृष्ण प्रवेशिला कन्दराते ।
सखीगण चाहे केह फुल उठाइते ॥१०३
हेनकाले तुमि सब कोलाहल कैला ।
ताँहा हइते धरि मोरे इँहा लञा आइला॥१०४
केन वा आनिले मोरे वृथा दुःख दिते ।
पाइया कृष्णेर लीला ना पाइनु देखिते॥१०५
एतबलि महाप्रभु करेन क्रन्दन ।
ताँर दशा देखि वैष्णव करेन रोदन॥ १०६
हेनकाले आइल पुरी भारती दुइजन ।
दोँहा देखि महाप्रभुर हइल सम्भ्रम ॥१०७
निपटवाह्य हइले प्रभु दुहाँके बन्दिला ।
महाप्रभुके दुइजन आलिङ्गन कैला ॥१०८
प्रभु कहे "दुहे केन आइला एत दूरे ।"
पुरीगोसाञि कहे "तोमार नृत्य देखिकरे॥१०९
लज्जित हइला प्रभु पुरीर वचने ।
समुद्रघाट आइला सब वैष्णव सने ॥११०
स्नान करि महाप्रभु घरेते आइला ।
सबा लञा महाप्रसाद भोजन करिला ॥१११
एइ त कहिल प्रभुर दिव्योन्माद भाव ।
ब्रह्मा ओ कहिते नारे याहार प्रभाव ॥११२
चटकगिरि-गमन-लीला रघुनाथदास ।
चैतन्यस्तवकल्पवृक्षे करियाछेन प्रकाश॥११३

तथाहि स्तवावल्यां गौरस्तवकल्पवृक्षे अष्टम श्लोके श्रीरघुनाथदासवाक्यं—

समीपे नीलाद्रेश्चटकगिरिराजस्य कलना-
दये गोष्ठे गोवर्द्धनगिरिपतिं लोकितुमितः ।
व्रजन्नस्मीत्युक्त्वा प्रमद इव धावन्नवधृतो
गणैः स्वैर्गौराङ्गो हृदय उदयन्मां मदयति ॥७

टीका-नीलाद्रेः समीपे चटकगिरिराजस्य कलनात् अवलोकनाद्धेतोः गोष्ठे गोवर्द्धनगिरिपतिं लोकितुं द्रष्टुं इतः व्रजन् अस्मि, इत्युक्त्वा यो गौराङ्गः प्रमद इव धावन् सन् गणैः भक्तवर्गैः पश्चात् अवधृतः, अये विस्मये, सः गौराङ्गः मम हृदये उदयन् मां मदयति ॥७

जिनके बालभुजदण्ड गोवर्द्धन पर्वत को कन्दुकवत् उत्तोलन किया था, कमलनयन श्रीहरि वह भुजदण्ड तुम सबकी रक्षा करे ।

नीलाचल के समीप में चटक पर्वत को देखकर "मैं यहाँ से वृन्दावन गोष्ठ में गोवर्द्धन दर्शन हेतु जाऊँ" यह कहकर जो गौराङ्ग उन्मादवत् धावित होने से उनके पीछे से आकर उनको भक्तगण पकड़े थे, वह गौराङ्ग मेरे हृदयमें उदित होकर मुझको आनन्दविभोर कर रहे हैं ॥७

एवे प्रभु यत कैल अलौकिक लीला ।
के बुझिते पारे ताहा महाप्रभुर खेला ॥ ११४
संक्षेप करिया करि दिगदरशन ।
इहा येइ शुने, पाय कृष्णेर चरण ॥११५
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥११६

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे चटकगिरिगमन रूपदिव्योन्मादवर्णनं नाम चतुर्द्दशः परिच्छेदः ॥१४॥

पञ्चदश परिच्छेद ।

दुर्गमे कृष्णभावाब्धौ निमग्नोन्मग्नचेतसा ।
गौरेण हरिणा प्रेममर्य्यादा भूरि दर्शिता ॥१

टीका—दुर्गमे कृष्णभावाब्धौ कृष्णभाव-रूप-जलधौ निमग्नोन्मग्नचेतसा गौरेण हरिणा प्रेममर्य्यादा भूरि दर्शिता ॥१

श्रीगौर हरि ब्रह्मादि दुर्लभ कृष्णभाव-रूप जलधि में निमग्न एवं भासमान होकर भूरि परिमाण में प्रेममर्य्यादा प्रदर्शन किये थे ॥१

जय जय श्रीकृष्णचैतन्य अधीश्वर ।
जय नित्यानन्द पूर्णानन्दकलेवर ॥१
जयाद्वैताचार्य्य कृष्णचैतन्यप्रियतम ।
जय जय श्रीनिवास-आदि भक्तगण ॥२
एइमत महाप्रभु रात्रिदिवसे ।
आत्मस्फूर्त्ति नाहि रहे कृष्णभावावेशे ॥३
कभु भावे मग्न, कभु अर्द्धवाह्यस्फूर्ति ।
कभु वाह्यस्फूर्त्ति, तिन रीते प्रभुर स्थिति ॥४
स्नान दर्शन भोजन देहस्वभावे हय ।
कुमारेर चाक येन सतत फिरय ॥५
एकदिन करे प्रभु जगन्नाथदरशन ।
जगन्नाथ देखे साक्षात् व्रजेन्द्रनन्दन ॥६
एकेवारे स्फुरे प्रभुर कृष्णेर पञ्चगुण ।
पञ्चगुणे करे पञ्चेन्द्रिय आकर्षण ॥७
एक मन पञ्च दिके पञ्चगुणे टाने ।
टानाटानि प्रभुर मन हइल अगेयाने ॥८
हेनकाले ईश्वरेर उपलभोग सरिल ।
भक्तगण महाप्रभुके घरे लइया आसिल ॥९
स्वरूप रामानन्द एइ दुइ जन लञा ।
विलाप करेन दुँहार कण्ठेते धरिया ॥१०

कृष्णेर वियोगे राधार उत्कण्ठित मन ।
विशाखाके कहे आपन उत्कण्ठार कारण॥११
सेइ श्लोक पड़ि आपने करे मनस्ताप ।
श्लोकेर अर्थ शुनाय दुँहाके करिया विलाप॥१२

तथाहि गोविन्दलीलामृते अष्टमसर्गे तृतीय श्लोके
विशाखां प्रति श्रीराधिकावाक्यं ।

सौन्दर्य्यामृतसिन्धुभङ्गललनाचित्ताद्रिसंप्लावकः,
कर्णानन्दिसनर्म्मरम्यवचनः कोटीन्दुशीताङ्गकः ।
सौरभ्यामृतसंप्लवावृतजगत् पीयुषरम्याधरः,
श्रीगोपेन्द्रसुतः स कर्षतिबलात् पञ्चेन्द्रियाण्यालि मे।२

टीका—हे आलि ! हे सखि ! सः श्रीगोपेन्द्रसुतः श्रीकृष्णः बलात् मे मम पञ्चेन्द्रियाणि कर्षति । सः किम्भुतः?—सौन्दर्य्यामृत-सिन्धु-भङ्ग-ललनाचित्ताद्रि-संप्लावकः सौन्दर्य्यमेव अमृत-सिन्धुः तस्य भङ्ग तरङ्गः तेन ललनानां चित्तमेव अद्रिं संप्लावयितुं शीलं यस्य सः पुनः किम्भूतः ?—कर्णानन्दिसनर्म्मरम्य-वचनः कर्णं आनन्दयितुं शीलं यस्य तत् तेन नर्म्मेण स्मितेन सह रम्यं वचनं यस्य सः । पुनः कीदृशः ?—कोटीन्दुशीताङ्गकः कोटीन्दुतुल्यं कोटिचन्द्रसदृशं शीतलं अङ्गं यस्य सः । पुनः कीदृशः ? ।—सौरभामृत-संप्लावितजगत् सौरभ्यमेव अमृतसंप्लवः सुधासागर-स्तेन आवृतं जगत् येन सः । पुनः कीदृशः ?—पीयुषरम्याधरः पीयुषवत् अमृतवत् रम्यः मनोहरः अधरो यस्य सः॥२॥

हे आलि ! सौन्दर्यरूप सुधासिन्धु की तरङ्ग के प्रहार से अबलावृन्द के चित्तरूप पर्वतको प्लावित करके एवं सनर्म मधुर वाक्य के द्वारा श्रवण द्वय को आनन्दित करके, कोटि चन्द्रमा के तुल्य शीतल अङ्ग विन्यास करके,सौगन्ध्य के प्रवाह से विश्व को व्याप्त करके एवं अमृतवत् अधर शोभा को विस्तार करके गोपराजनन्दन मेरी पञ्च इन्द्रिय को बल पूर्वक आकर्षण कर रहे हैं ॥२॥

यथारागः ।

कृष्ण-रूप-शब्द-स्पर्श, सौरभ्य अधररस,
यार माधुर्य्य कहन ना याय ।
देखि लोभे पञ्चजन, एक अश्व मोर मन,
चड़ि पञ्च पाँचदिके धाय ॥१३॥
सखि हे ! शुन मोर दुःखेर कारण ।
मोर पञ्चेन्द्रियगण, महा लम्पट दस्युगण,
सबे करे हरे परधन ॥१४॥ध्रू॥
एक अश्व एकक्षणे, पाँच पाँच दिके टाने,
एक मन कोन दिके याय ।
एक काले सबे टाने, गेल घोड़ार पराणे,
ए दुःख सहन ना याय ॥१५॥
इन्द्रिये ना करि रोष, इहा सबार काँहा दोष,
कृष्णरूपादि महा आकर्षण ।
रूपादि पाँच पाँचे टानें, गेल पाँचेर पराणे,
मोर देहे ना रहे जीवन ॥१६॥
कृष्णरूपामृतसिन्धु, ताहार तरङ्गबिन्दु,
एकबिन्दु जगत् डुवाय ।
त्रिजगते यत नारी, तार चित्त उच्चगिरि,
ताहा डुवाय आगे उठि धाय ॥१७॥
कृष्णेर वचनमाधुरी, नानारस-नर्म्मधारी,
तार अन्याय कहने ना जाय ।
जगतेर नारीर काणे, माधुरीगुणे बान्धि टानें,
टानाटानि काणेर प्राण याय ॥१८॥
कृष्ण-अङ्ग सुशीतल, कि कहिव तार बल,
छटाय जिने कोटीन्दु चन्दन ।
सशैल नारीर वक्ष, ताहा आकर्षिते दक्ष,
आकर्षये नारीगणमन ॥१९॥

कृष्णाङ्ग-सौरभ्यभर,　　मृगमद-मदहर,
नीलोत्पलेर हरे गर्वधन ।
जगतनारीर नासा, तार भितर पाते वासा,
नारीगणेर करे आकर्षण ॥२०॥
कृष्णेर अधरामृत, ताते कर्पूर मन्दस्मित,
स्वमाधुर्य्ये हरे नारी मन ।
अन्यत्र छाड़ाय लोभ, ना पाइले मने क्षोभ,
व्रजनारी गणेर मूलधन ॥२१॥
एत कहि गौरहरि, दुइ जनार कण्ठे धरि,
कहे "शुन स्वरूप राम राय ।
काँहा करों काँहा याङ,काँहा गेले कृष्ण पाङ,
दुँहे मोरे कह से उपाय ॥२२॥
एइमत गोर प्रभु प्रति दिने दिने ।
विलाप करेन स्वरूप रामानन्द सने ॥२३॥
सेइ दुइ जन प्रभुर करे आश्वासन ।
स्वरूप गाय, राय करे श्लोकपठन ॥२४॥
कर्णामृत विद्यापति श्रीगीतगोविन्द ।
इहार श्लोक-गोते प्रभुर कराय आनन्द ॥२५
एक दिन महाप्रभु समुद्र याइते ।
पुष्पेर उद्यान ताँहा देखिल आचम्बिते ॥२६
वृन्दावनभ्रमे ताँहा पशिल धाइया ।
प्रेमावेशे बुले ताँहा कृष्ण अन्वेषिया ॥२७॥
रासे राधा लञा कृष्ण अन्तर्धान कैल ।
पाछे सखीगण यैछे चाहि बेड़ाइल ॥२८
सेइ भावावेशे प्रति तरु लता ।
श्लोक पड़ि पड़ि चाहि बुले यथा तथा ॥२९

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३०।९)

चुतपियाल-पनसाशन कोविदार,
जम्न्वर्कविल्ववकुलाम्रकदम्बनीपाः ।
येऽन्ये परर्थभावका यमुनोपकुलाः,
शंसन्तु कृष्णपदवीं रहितात्मनां नः ॥३॥

टीका—हे चुतपियालपनसासन कोविदारजम्वर्क-विल्ववकुलाम्रकदम्बनीपाः ! ये अन्य परर्थभावकाः यमुनोपकुलाः यमुनातीरवर्त्तिनः, ते भवन्तः रहितात्मनां शून्यचित्तानां नः अस्माकं कृष्णपदवीं शंसन्तु निर्द्दिशन्तु ।

श्रीमद्भागवत के १०।३०।९ में उक्त है हे चूत ! हे पियाल ! हे पनस ! हे असन ! हे कोविदार ! हे जम्बु ! हे अर्क ! हे विल्व ! हे वकुल ! हे आम्र ! हे कदम्ब ! हे नीप ! हे अन्यान्य तरुगण ! तुम सब यमुना के तीर में अवस्थान कर रहे हो, परहित साधन हेतु तुम सब का जन्म हुआ है, हम सब कृष्ण विच्छेद से आत्मविस्मृत हैं, कृष्ण किस पथ से गया है, हम सब को कहो ॥३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३०।१)

कच्चित्तुलसि कल्याणि गोविन्दचरणप्रिये ।
सह त्वालिकूलैर्बिभ्रद्द् दृष्टस्तेऽतिप्रियोऽच्युतः ॥४॥

टीका— हे कल्याणि गोविन्दचरणप्रिये तुलसि ! अलिकुलैः सह त्वां त्वां बिभ्रत् तव अतिप्रियः अच्युतः क्वचित्ः किं दृष्टः ?

श्रीमद्भागवत के (१०।३०।१) में उक्त है, हे कल्याणि ! गोविन्दचरणप्रिये तुलसि ! कृष्ण भ्रमर वेष्टित तुमको धारण करते हैं, तुमने तुम्हारे प्रियतम अच्युत को क्या देखा है ? ॥४

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३०।८) मालत्यादीन् प्रति गोपीवाक्यं—

मालत्यदर्शि वः कच्चिन्मल्लिके जातियूथिके ।
प्रीतिं वो जनयन् यातः करस्पर्शेन माधवः ॥५॥

टीका— हे मालति ! हे मल्लिके ! हे जाति ! हे युथिके ! क्वचित् वः युष्माकं माधवः अदर्शि दृष्टः ? करस्पर्शेन वः प्रीतिं तुष्टि जनयन् सन् सः यातः किं ? ॥५॥

श्रीमद्भागवत के (१०।३०।८) में उक्त है, हे मालति ! हे मल्लिके ! हे जाति ! हे युथिके ! माधव

को क्या तुम सबने देखा है ? माधव हस्त स्पर्श के द्वारा तुम सबको आनन्दित कर क्या इस पथ से गये हैं ? ॥५॥

आम्र पनस पियाल जम्बु कोविदार ।
तीर्थवासी सबे कर पर-उपकार ॥३०
कृष्ण तोमार इँहा आइला, पाइला दर्शन ।
कृष्णेर उद्देश कहि राखह जीवन ॥३१
उत्तर ना पाञा पुनः करे अनुमान ।
'एइ सब पुरुष जाति कृष्ण सखार समान॥३२
ए केन कहिबे कृष्णेर उद्देश आमाय ।
ए स्त्रीजाति लता आमार सखीप्राय ॥३३
अवश्य कहिबे पाञाछे कृष्णेर दर्शने ।"
एत अनुमानि पूछे तुलस्यादि गणे ॥३४
"तुलसि मालति यूथि माधवि मल्लिके ।
तोमार प्रिय कृष्ण आइला तोमार अन्तिके।३५
तुमि सब हओ आमार सखीर समान ।
कृष्णोद्देश कहि सबे राखह पराण ॥"३६
उत्तर ना पाञा पुनः भावेन अन्तरे ।
"एइ कृष्णदासी भये ना कहे आमारे ॥"३७
आगे मृगगण देखि कृष्णाङ्गगन्ध पाञा ।
तार मुख देखि पूछेन निर्णय करिया ॥३८

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३०।११)

अप्येणपत्न्युपगतः प्रिययेहगात्रै-
स्तन्वन् दृशां सखि सुनिर्वृतिरच्युतो वः ।
कान्ताङ्गसङ्गकुचकुङ्कुमरञ्जितायाः,
कुन्दस्रजः कुलपतेरिह वातिगन्धः ॥६॥

हे सखि एणपत्नि ! हरिणदयिते ! अच्युतः माधवः प्रियया प्रधानगोपिकया सह गात्रैः व युष्माकं दृशां चक्षुषां सुनिर्वृतिं सन्तुष्टिं तन्वन् विस्तारयन् सन् इह स्थाने उपगतः अपि किं ? यतः कुलपतेः हरेः कुन्दस्रजः कुन्दकुसुमैः ग्रथितमालायाः गन्धःइह अस्मिन् स्थाने वाति । कुन्दस्रजः किम्भूतायाः ?– कान्ताङ्गकुचकुङ्कुमरञ्जितायाः ॥६॥

श्रीमद्भागवत के (१०।३०।११) में उक्त है –

हे सखि हरिण दयिते ! माधव निज प्रियतमा के साथ यहाँ आकर निज शोभनाङ्ग दर्शन कराकर क्या तुम्हारेनेत्र रञ्जन किये हैं ? कारण अच्युत के कुन्दकुसुम उनकी प्रियाके वक्षःस्थल लग्न होने के कारण कुचकुङ्कुम गन्ध रञ्जित हुई थी यहाँ पर वही गन्ध प्रसारित हो रही है ॥६॥

"कह मृगि ! राधा सह श्रीकृष्ण सर्व्वथा ।
तोमाय सुख दिते आइला ? नाहिक अन्यथा।३९
राधार प्रिय सखी आमरा, नहि वहिरङ्ग ।
दूरे हैते जानि ताँर यैछे अङ्गगन्ध ॥४०
राधा-अङ्ग-सङ्गे कुचकुङ्कुम भूषित ।
कृष्ण-कुन्दमालागन्धे वायु सुवासित ॥४१
कृष्ण इँहा छाड़ि गेला, इँहो विरहिणी ।"
किवा उत्तर दिवे एइ ? ना शुने काहिनी ॥४२
आगे वृक्षगण देखे पुष्पफलभरे ।
शाखा वड़ पड़ियाछे पृथिवी उपरे ॥४३
"कृष्ण देखि एइ सब करे नमस्कार ।"
कृष्ण-गमन पूछे तारे करिया निर्द्धार ॥४४

तथाहि श्रीमद्भागवते १०।३०।१२)

बाहुं प्रियांस उपधाय गृहीतपद्मो,
रामानुजस्तुलसिकालिकुलैर्म्मदान्धैः ।
अन्वीयमान इह वस्तरवः प्रणामं,
किंवाभिनन्दति चरन् प्रणयावलोकैः ॥७॥

टीका—हे तरवः ! हे पादपाः ! रामानुजः माधवः गृहीत पद्मः, तथा प्रियांसे प्रियतमास्कन्धे बाहुं उपधाय संस्थाप्य मदान्धैः तुलसिकालिकुलैः अन्वीयमानः इह चरन् सन् वः युष्माकं प्रणामं प्रणयावलोकैः किं न अभिनन्दति ? ॥७॥

श्रीमद्भागवत के १०।३०।१२ में उक्त है—

हे तरुगण ! बलदेवानुज हरि,–प्रियतमाके स्कन्धदेशमें वामबाहु स्थापनकर दक्षिण हस्तसे लीलापद्म धारण कर तुलसी सौरभ से मत्त अनुगम्यमान अलिपुञ्ज के सहित यहाँ विहार करते करते प्रणयावलोकन के द्वारा क्या तुम सबके प्रणाम को अङ्गीकार किये हैं ॥७॥

"प्रियामुखे भृङ्ग पड़े, ताहा निवारिते ।
लीलापद्म चालाइते हैला अन्यचित्ते ॥४५

तोमार प्रणाम कि करियाछे अवधान ?
किवा नाहि करे ? कह वचन प्रमाण ॥४६
कृष्णेर वियोगे एइ सेवक दुःखित ।
किवा उत्तर दिवे एइ ? नाहिक सम्वित ।'४७
एत वलि आगे चले यमुनार कूले ।
देखे, ताँहा कृष्ण हय कदम्वेर तले ॥४८
कोटी-मन्मथमोहन मुरलीवदन ।
अपार सौन्दर्य्ये हरे जगत-नेत्र-मन ॥४९
सौन्दर्य्य देखिया भूमे पड़े मूर्च्छा पाञा ।
हेनकाले स्वरूपादि मिलिला आसिया ॥५०
पुर्व्ववत सर्व्वाङ्गे प्रभुर सात्विक सकल ।
अन्तरे आनन्द-आस्वाद, वाहिरे विह्वल ॥५१
पुर्व्ववत सबे मिलि कराइल चेतन ।
उठिया चौदिके प्रभु करेन दर्शन ॥५२
"काँहा गेला कृष्ण एखुनि पाइनु दरशन ।
याँहार सौन्दर्य्ये हरिल नेत्र-मन ॥५३
पुनः केन ना देखिये मुरलीवदन ।
ताँहार दर्शनलोभे भ्रमये नयन ॥"५४
विशाखाके राधा यैछे श्लोक कहिला ।
सेइ श्लोक महाप्रभु पढ़िते लागिला ॥५५

तथाहि गोविन्दलीलामृते (८।४) विशाखां प्रति श्रीराधिकावाक्यं—

नवाम्बुदलसद्द्युतिनवतड़िन्मनोज्ञाम्बरः,
सुचित्रमुरलीमुखः शरदमन्दचन्द्राननः ।
मयूरदलभूषितः सुभगतारहारप्रभः,
स मे मदनमोहनः सखि तनोति नेत्रस्पृहां ॥८॥

टीका— हे सखि विशाखे ! सः मदनमोहनः मे मम नेत्रस्पृहां लोचनानन्दं तनोति । सः किम्भूतः ? नवाम्बुदलसद्द्युतिः नवनीरदानां लसन्ती अङ्गकान्तिर्यस्य सः । पुनः कीदृशः ?—नवतड़िन्मनोज्ञाम्बरः नवविद्युद्वत् शोभनाम्बरः । पुन.किम्भूतः ? सुचित्रमुरलीमुखः रत्नालंकृतवंशीवदनः ! पुनः कीदृशः ? शारदमन्दचन्द्राननः शारदीयपूर्णशशधरवत् शोभनमुखः । पुनः कथम्भूत ?— मयूरदलभूषितः मयुरवर्हैः शोभितः । पुनः कीदृशः ?—सुभगतारहारप्रभः सुन्दरमुक्तादिगठितहारप्रभः ॥८॥

श्रीगोविन्दलीलामृत (८।४) में उक्त है, हे सखि विशाखे ! मदनमोहन श्रीकृष्ण अद्य मदीय नयन युगल के हर्षवर्द्धन कर रहे हैं, नवनीरद प्रवाह से नवीन अङ्गकान्ति दीप्यमान है, नवीन पीत वसन नव तड़िद्वत् मनोहर है, रत्न निर्मित वंशी नवीन अधर में विराजित है । तदीय आननपद्म शारदीय पूर्णचन्द्रमावत स्निग्ध है, मस्तकदेश मयूर वर्ण से समलंकृत है एवं मनोहर मुक्ताहार की दीप्ति से उनके वक्षस्थल समुद्र के समान हो रहा है ॥८॥

"नवघनस्निग्ध वर्ण, दलिताञ्जन-चिक्कण,
इन्दीवर निन्दि सुकोमल ।
जिनि उपमागण, हरे सबार नेत्र-मन,
कृष्णकान्ति परम प्रवल ॥५६

कह सखि ! कि करि उपाय ।
कृष्णाद्भुत वलाहक, मोर नेत्र चातक,
ना देखि पियासे मरि याय ॥ध्रू॥५७

सौदामिनी पीताम्बर, स्थिर नहे निरन्तर,
मुक्ताहार वकपाँति भाल ।
इन्द्रधनु शिखि-पाखा, उपरे दियाछे देखा,
आर धनु वैजयन्ति-माल ॥५८
मुरलीर कलध्वनि, मधुर गर्जन शुनि,
वृन्दावने नाचे मयूरचय ।
अकलङ्क पूर्णकल, लावण्य-ज्योत्स्ना झलमल,
चित्रचन्द्र ताहाते उदय ॥५६
लीलामृत-वरिषणे, सिञ्चे चौद्द भुवने,
हेन मेघ यवे देखा दिल ।
दुर्द्दैव झञ्झापवने, मेघ-नील अन्यस्थाने,
मरे चातक पीते ना पाइल ॥"६०
पुनः कहे, हाय हाय, पढ़ पढ़ रामराय,
कहे प्रभु गद्गद आख्याने ।
रामानन्द पढ़े श्लोक, शुनि प्रभुर हर्ष-शोक,
आपने प्रभु करेन व्याख्याने ॥६१

तथाहि श्रीमदभागवते (१०।२६।३६)

वीक्ष्यालकावृतमुखं तव कुण्डलश्रि-
गण्डस्थलाधरसुधं हसितावलोकं ।
दत्ताभयञ्च भुजदण्डयुगं विलोक्य,
वक्षः श्रियैकरमणञ्च भवाम दास्यः ॥६॥

श्रीमद्भागवत के १०।२६।३६ में उक्त है—
हे कृष्ण ! तुम्हारे वदन मण्डल अलकाविभूषित है, गण्ड युगल में कुण्डल श्रीविराजमान है, अधर पीयूष मण्डित है, नयन युगल में सस्मित दर्शन है, तुम्हारे बाहुयुगल अभय प्रदानकर रहे हैं, वक्षःस्थल लक्ष्मी के प्रीति स्थल है, तुम्हारे ये सब देखकर हमारे मन में तुम्हारी दासी होने की वासना हो रही है ॥६॥

कृष्ण जिनि पद्मचान्द, पातियाछे मुख-फान्द,
ताते अधर-मधुरस्मित-चार ।
व्रजनारी आसि आसि, फान्दे पड़ि हय दासी,
छाड़ि लाज पति घरद्वार ॥६२॥
बान्धव ! कृष्ण करे व्याधेर आचार ।
नाहि माने धर्म्माधर्म, हरे नारी-मृगी-मर्म्म,
करे नाना उपाय ताहार ॥ध्रु॥६३॥
गण्डस्थल झलमल, नाचे मकर कुण्डल,
सेइ नृत्ये हरे नारीचय ।
सस्मित-कटाक्ष-वाणे, ता सबार हृदये हाने,
नारीबधे नाहि किछु भय ॥६४॥
अति उच्च सुविस्तार, लक्ष्मी-श्रीवत्स-अलङ्कार
कृष्णेर ये डाकातिया बक्ष ।
व्रजदेवी लक्ष-लक्ष ता सबार मन बक्ष,
हरिदासी करिवारे दक्ष ॥६५
सुललित दीर्घार्गल, कृष्ण भुजयुगल,
भूज नहे कृष्णसर्पकाय ।
दुइ शैल-छिद्रे पैशे, नारीर हृदये दंशे,
मरे नारी से विष ज्वालाय ॥६६
कृष्ण-करपदतल, कोटिचन्द्र-सुशीतल,
यिनि कर्पूर-वेणामूल-चन्दन ।
एकवारे यारे स्पर्शे, स्मर-ज्वाला-विष नाशे,
यार स्पर्शे लुब्ध नारीमन ॥"६७
एतेक विलाप करि, विषादे श्रीगौरहरि,
एइ अर्थे पड़े एक श्लोक ।
श्लोक पढ़े राधा, विशाखाके कहे,
उघाड़िया हृदयेर शोक ॥६८

तथाहि गोविन्दलीलामृते (८।७)—

हरिन्मणिकवाटिकाप्रततिहारिवक्षस्थलः,
स्मरार्त्ततरुणीमनः कलुषहारिदोरर्गलः ।

सुधांशुहरिचन्दनोत्पलसिताभ्रशीताङ्गकः,
स मे मदनमोहनः सखि तनोति बक्षःस्पृहां ॥१०

टीका— हे सखि ! सः मदनमोहनः नन्दसुतः मे मम बक्षस्पृहां तनोति विस्थारयति । सः कीदृश ! हरिण्मणिकवाटिकाप्रततिहारिबक्षस्थलः हरिण्मणिभिः इन्द्रनीलमणिभिः निर्म्मितायाः कवाटिकायाः या प्रततिः तां हर्त्तुं शीलं यस्य तत्सदृशं बक्षःस्थलं यस्य सः । पुनःकिम्भूतः ?—स्मरार्त्ततरुणीमनः कलुषहारिदोर्गलः स्मरार्त्तानां मदनातुराणां तरुणीनां नवयौवनसम्पन्नानां मनसां कलुषं हर्त्तुं शीलं यस्य तद्वत् दोरेव बाहुद्वयमेव अर्गलं यस्य सः । पुनः कथम्भुतः ?-सुधांशुहरिचन्दनोत्पलसिताभ्रशीताङ्गकः सुधांशुः शशाङ्ककिरणं हरिचन्दनं स्निग्धचन्दनभेदः उत्पलं नीलकमलं सिताभ्रः कर्पूरः एभ्य शीतः अङ्गो यस्य सः ॥१०॥

हे सखि ! मदनमोहन कृष्ण मेरी बक्षःस्थल को विस्तार कर रहे हैं। अहो उनके बक्षःस्थल मणि निर्म्मित कबाट को विस्तृति की विराजित कर रहा है, बाहुरूप अर्गल कामातुर सुन्दरीमनको आबद्धकर उन सबके दुःख दूर करने में सुनिपुण है, शशाङ्क रश्मि, हरि चन्दन, नील कमल एवं कपूर से भी उनके अङ्ग सुशीतल है ॥१०॥

प्रभु कहे "कृष्ण मुञि एखुनि देखिनु ।
आपनार दुर्द्दैवे पुनः हाराइनु ॥६९
चञ्चल स्वभाव कृष्णेर, ना रय एक स्थाने ।
देखा दिया मन हरि करे अन्तर्धाने ॥७०॥"

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२९।४८)—

तासां तत् सौभगमदं बीक्ष्यमानञ्च केशवः ।
प्रशमाय प्रसादाय तत्रैवान्तरधीयत ॥११॥

टीका—तासां गोपीनां सौभगमदं तत् मानञ्च बीक्ष्य केशवः गर्व्वं प्रति प्रशमाय मानं प्रति प्रसादाय तत्रैव अन्तरधीयत ॥११॥

श्रीमद्भागवत के १०।२९।४८ में उक्त है—गोपिकागण के सौभाग्य हेतु गर्व एवं मान को देखकर गर्वप्रशमनार्थ एवं उन गोपीगणों के प्रति प्रसन्नता प्रदर्शनार्थ सर्वशक्तिमय केशव उसी स्थल में ही तिरोहित हो गये ॥११॥

स्वरूपगोसाञिके कहे "गाह एक गीत ।
याते आमार हृदयेर हय त सम्वित ॥७१॥"
स्वरूपगोसाञि तबे मधुर करिञा ।
गीतगोविन्देर पद गाय प्रभुके शुनाञा ॥७२

तथाहि श्रीगीतगोविन्दे (२।३)—

रासे हरिमिह विहितविलासं ।
स्मरति मनोमम कृतपरिहासं ॥१२॥

टीका—हे सखि ! इह रासे मम मनः हरिं स्मरति । हरिं किम्भूतं ?–विहित विलासं विरचितरसकौतुकं । पुनः किम्भूतं ?– कृतपरिहासं ॥१२॥

हे सखि ! जिन्होंने वृन्दावन पुलिन में महा रासोत्सव के समय विविध रस कौतुक एव परिहास प्रदर्शन किया, अद्य मदीयचित्त उन हरि का स्मरण कर रहा है ॥१२॥

स्वरूपगोसाञि यबे एइ पद गाइला ।
उठि प्रेमावेशे प्रभु नाचिते लागिला ॥७३
अष्ट सात्विक अङ्गे प्रकट हइल ।
हर्षादि व्याभिचारी सब उथलिल ॥७४
भावोदय भावसन्धि भावशावल्य ।
भावे भावे महायुद्ध, सबार प्राबल्य ॥७५
सेइ पद पुनः पुनः कराय गायन ।
पुनः पुनः आस्वादये, वाढ़ये नर्त्तन ॥७६
एइमत नृत्य यदि हैल बहुक्षण ।
स्वरूपगोसाञि पद कैल समापन ॥७७
'बोल बोल' बलि प्रभु कहे वारवार ।
ना गाय स्वरूपगोसाञि श्रम देखि ताँर ॥७८
'बोल बोल' प्रभु बोले, भक्तगण शुनि ।
चौदिकेते सबे मिलि करे हरिध्वनि ॥७९

रामानन्दराय तबे प्रभुके वसाइल ।
व्यजनादि करि प्रभुर श्रम घुचाइल ॥८०
प्रभु लञा गेला तबे समुद्रेर तीरे ।
स्नान कराइया पुनः लञा आइला घरे ॥८१
भोजन कराइया प्रभुके कराइल शयन ।
रामानन्द-आदि सबे गेला निज स्थान ॥८२
एइ त कहिल प्रभुर उद्यानबिहार ।
वृन्दावनभ्रमे याँहा प्रवेश ताँहार ॥८३
प्रलापसहित एइ उन्माद वर्णन ।
श्रीरूपगोसाञि इहा करियाछे लिखन ॥८४

तथाहि स्तवमालायां श्रीचैतन्यदेवस्तवे षष्ठ श्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यं—

पयोराशेस्तीरे स्फुरदुपवनालिकलनया,
मुहुर्वृन्दारण्यस्मरणजनितप्रेमविवशः ।
क्वचित् कृष्णावृत्तिप्रचलरसनो भक्तिरसिकः,
स चैतन्य किं मे पुनरपि दृशोर्यास्यतिपदं ॥१३

टीका—यः पयोराशे सागरस्य तीरे स्फुरदुपवनालिकलनया मुहुः पुनः पुनः वृन्दारण्यस्मरणजनितप्रेमविवशः अभूत, क्वचित् कदा वा कृष्णावृत्तिप्रचलरसनः कृष्णनामोच्चारणचञ्चलरसनः अभूत, भक्तिरसिकश्च अभूत, सः चैतन्यः मे मम दृशोः चक्षुषोः पदं पुनरपि यास्यति किं ? ॥१३॥

सागरोपकूल के उपवन समूह को देखकर वृन्दावन स्मृति होने पर जो पुनः पुनः प्रेम विह्वल हो जाते थे, समय समय पर नामोच्चारण से जिनकी जिह्वा चपल हो जाती, जो भक्तितत्व के गूढ़रस का आस्वादन किये थे, उन चैतन्यदेव क्या पुनर्वार मदीय नेत्र पथ के पथिक होंगे ? ॥१३॥

अनन्त चैतन्यलीला ना याय लिखन ।
दिङ्मात्र देखाइया करिये सूचन ॥८५
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥८६

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे उद्यानविहारो नाम पञ्चदशः परिच्छेदः ॥१५॥



षोडश परिच्छेद ।

वन्दे श्रीकृष्णचैतन्यं कृष्णभावामृतं हि यः ।
आस्वाद्यास्वादयन् भक्तान् प्रेमदीक्षामशिक्षयत् ॥१॥

टीका—हि निश्चितं यः कृष्णभावामृतं आस्वाद्य भक्तान् आस्वादयन् सन् तान् प्रेमदीक्षां अशिक्षयत् उपदिदेश, अहं तं श्रीकृष्णचैतन्यं वन्दे ॥१॥

जिन्होंने स्वयं कृष्णभाव सुधा का आस्वादन पूर्वक भक्तवृन्द को आस्वादन कराकर उन सबको प्रेम दीक्षा उपदेश प्रदान किया, मैं उन कृष्णचैतन्य देव की वन्दना करता हूँ ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
एइमत महाप्रभु रहे नीलाचले ।
भक्तगणसङ्गे सदा प्रेमविह्वले ॥२
वर्षान्तरे आइला सब गौड़ेर भक्तगण ।
पूर्व्ववत आसि कैल प्रभुरे मिलन ॥३
ताँ सबार सङ्गे प्रभुर चित्तवाह्य हैल ।
पुर्व्ववत् रथयात्राय नृत्यादि करिल ॥४
ताँ सबार सङ्गे आइल कालिदास नाम ।
कृष्णनाम विना तिँह नाहि जाने आन ॥५
महाभागवत तिँह सरल उदार ।
कृष्णनाम-सङ्केते चालाय व्यवहार ॥६

कौतुकेते तेँहो यदि पाशक खेलाय।
'हरेकृष्ण हरेकृष्ण' कहि पाशक चालाय॥७
रघुनाथदासेर तिँह हय ज्ञाति खुड़ा।
वैष्णवेर उच्छिष्ट खाइते तेँह हैला बुढ़ा॥८
गौड़देशे हय यत वैष्णवेर गण।
सबार उच्छिष्ट तेँह करिला भोजन॥९
ब्राह्मण वैष्णव यत छोट वड़ हय।
उत्तम वस्तु भेट लञा ताँर ठाञि याय॥१०
ताँर ठाञि शेषपात्र लयेन माङ्गिया।
काँहाओ ना पान यवे, रहेन लुकाइया॥११
भोजन करिया पात्र फेलाइया याय।
लुकाइया सेइ पात्र आनि चाटि खाय॥१२
शूद्र-वैष्णवेर घर याय भेट लञा।
एइमत तार उच्छिष्ट खाय लुकाइया॥१३
भूमिमालिजाति वैष्णव झड़ु ताँर नाम।
आम्रफल लञा तेँहो गेल ताँर स्थान॥१४
आम्र भेट दिया ताँर चरण वन्दिल।
ताँर पत्नीके तबे नमस्कार कैल॥१५
पत्नीसहिते तेँहो आछेन वसिया।
बहुत सम्मान कैल कालिदासेरे देखिया॥१६
इष्टगोष्ठी कथोक्षण करि ताँर सने।
झड़ु ठाकुर कहे ताँरे मधुर वचने॥१७
"आमि नीच जाति, तुमि अतिथि सर्व्वोत्तम।
कोन् प्रकारे करिव तोमार सेवन॥१८
आज्ञा देह, ब्राह्मणघरे अन्न लञा दिये।
ताँहा तुमि प्रसाद पाओ, तबे आमि जीये॥१९"
कालिदास कहे "ठाकुर! कृपा कर मोरे।
तोमार दर्शने आइनु मुञि पतित पामरे॥२०
पवित्र हइनु मुञि, पाइनु दर्शन।
कृतार्थ हइनु, मोर सफल जीवन॥२१
एक वाञ्छा हय, यदि कृपा करि कर।
पदरज देह पाद मोर माथे धर॥२२॥"
ठाकुर कहे "ऐछे वात कहिते ना जुयाय।
आमि नीचजाति, तुमि सुसज्जनराय॥२३"
तबे कालिदास श्लोक पढ़ि शुनाइल।
शुनि झड़ु ठाकुरेर वड़ सुख हैल॥२४

तथाहि हरिभक्तिविलासस्य दशमविलासे एकनवत्यङ्कधृतेतिहाससमुच्चयोक्तं भगवद्वाक्यं—

न मे भक्तश्चतुर्व्वेदी मद्भक्तः श्वपचः प्रियः।
तस्मै देयं ततो ग्राह्यं स च पूज्यो यथाह्यहम्॥२

चतुर्वेदाध्याय होने से ही जो मेरा भक्त होगा, यह नहीं, किन्तु मेरे प्रति भक्ति करने से चण्डाल भी मेरा प्रिय होता है, मैं भक्त को प्रेम प्रदान करता हूं, एवं उसका प्रेम ग्रहण भी करता हूँ मैं जिस प्रकार जगत् पूज्य हूँ, मेरा भक्त भी उस प्रकार सबके पूज्य हैं॥२॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (७।९।१०)

विप्राद्द्विषड्गुणयुतादरविन्दनाभ-
पदारविन्दविमुखात् श्वपचं वरिष्ठं।
मन्ये तदर्पितमनोवचनेहितार्थ-
प्राणंपुनाति स कुलं न तु भूरिमानः॥३॥

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।३३।७)—

अहोवत श्वपचोऽतो गरीयान्,
यज्जिह्वाग्रे वर्त्तते नाम तुभ्यं।
तेपुस्तपस्ते जुहुवुः सस्नुरार्य्या,
ब्रह्मानुचूर्नाम गृणन्ति ये ते॥४॥

श्रीमद्भागवत के (३।३३।७) में उक्त है—
देवहूति कपिलदेव को बोलीं हे प्रभो! जिसके रसनाग्र में तदीय नाम विद्यमान है, वह चण्डाल होने पर भी श्रेष्ठ है, जो व्यक्ति आपके नाम ग्रहण

करते हैं, वे ही तपस्वी हैं, वे ही होमकारी हैं, वे ही तीर्थ स्नायी हैं, वे ही सदाचारी हैं, एवं आर्य्य तथा वेदाध्यायी हैं ॥४॥

शुनि ठाकुर कहे "शास्त्र एइ सत्य हय ।
सेइ नीच नहे, याते कृष्णभक्ति हय ॥२५
आमि नीज जाति, आमार नाहि कृष्णभक्ति ।
अन्ये ऐछे हय, आमार नाहि ऐछे शक्ति ॥२६
तारे नमस्करि कालिदास मागिला ।
झड़ु ठाकुर तबे तारे अनुव्रजि आइला ॥२७
ताँरे विदाय दिया ठाकुर यदि घरे आइला ।
ताँहार चरणचिह्न येइ ठाञि पड़िला ॥२८
सेइ धूलि लञा कालिदास सर्व्वाङ्गे लेपिल ।
ताँर निकट एक स्थाने लुकाञा रहिल ॥२९
झड़ु ठाकुर घर याइ देखि आम्रफल ।
मानसेइ कृष्णचन्द्रे अर्पिल सकल ॥३०
कलार पाटुया खोला हैते आम्र निकाशिया ।
ताँर पत्नी ताँरे देन, खायेन चुषिया ॥३१
चुषि चुषि चोका आँटि फेलिल पाटुयाते ।
ताँरे खाओयाइया ताँर पत्नी खायेन पश्चाते।३२
आँटि चोका सेइ पाटुया खोलाते भरिया ।
वाहिरे उच्छिष्टगर्त्ते फेलाइल लञा ॥३३
सेइ खोला आँटि चोका चुषे कालिदास ।
चुषिते चुषिते हय प्रेमेर उल्लास ॥३४
एइमत यत वैष्णव वैसे गौड़देशे ।
कालिदास ऐछे सबार निल अवशेषे ॥३५
सेइ कालिदास यबे नीलाचल आइला ।
महाप्रभु ताँर उपर महाकृपा कैला ॥३६
प्रतिदिन प्रभु यदि यान दरशने ।
जल करङ्ग लञा गोविन्द याय प्रभु सने ॥३७
सिंह द्वारेर उत्तरदिके कपाटेर आड़े ।
वाइशपशार तले आछे एक निम्न गाड़े ॥३८
सेइ गाड़े करे प्रभु पादप्रक्षालन ।
तबे करिवारे याय ईश्वर दर्शन ॥३९
गोविन्देरे महाप्रभु करियाछे नियम ।
"मोर पदजल येन ना लय कोन जन ॥४०"
प्राणी मात्र लइते न पाय सेइ जल ।
अन्तरङ्ग भक्तलय करि कोन छल ॥४१
एकदिन प्रभु ताँहा पाद प्रक्षालिते ।
कालिदास आसि ताँहा पातिलेन हाते ॥४२
एक अञ्जलि दुइ अञ्जलि तिन अञ्जलि पिल ।
तबे महाप्रभु ताँरे निषेध करिल ॥४३
"अतःपर आर ना करिह पुनर्व्वार ।
एतावत वाञ्छा पूर्ण करिल तोमार ॥४४॥"
सर्व्वज्ञ शिरोमणि चैतन्य ईश्वर ।
वैष्णवे ताँहार विश्वास, जानेन अन्तर ॥४५
सेइ गुण लञा प्रभु तारे तुष्ट हैल ।
अन्येर दुर्ल्लभ प्रसाद ताहारे करिल ॥४६
वाइश पशार पाछे उपर दक्षिण दिके ।
एक नृसिंहमूर्त्ति आछे, उठिते वामभागे ॥४७
प्रतिदिन प्रभु, करे ताँरे करेन नमस्कार ।
नमस्करि एइ श्लोक पढ़ेन बार बार ॥४८

तथाहि नृसिंह पुराणे —

नमस्ते नरसिंहाय प्रह्लादाह्लाद दायिने ।
हिरण्यकशिपोर्बक्षःशिलाटङ्कनखालये ॥५॥

टीका—हे भगवन् ! ते तुभ्यं नमः । किम्भूताय तुभ्यं ? प्रह्लादाह्लाददायिने प्रह्लादस्य हर्षदात्रे । पुनः कीदृशाय ?—हिरण्यकशिपोः बक्षःशिलाटङ्कनखालये बक्षोरूपपाषाणविदारणे नखश्रेणी विशिष्टाय॥५

नृसिंह पुराण में लिखित है—

हे प्रभो ! आप नरसिंह रूपी भगवान् हैं, आपको नमस्कार, आप हिरण्यकशिपु के वक्षोरूप पाषाण विदारणार्थ नखर समूह लीला धारणकर प्रह्लाद का आनन्दवर्द्धन किये थे ॥५॥

तथाहि नृसिंह पुराणे—

इतो नृसिंहः परतो नृसिंहो,
यतो यतो यामि ततो नृसिंहः ।
वहिर्नृसिंहो हृदये नृसिंहो,
नृसिंहमादिं शरणं प्रपद्ये ॥६॥

टीका—इतः स्थाने नृसिंहः शोभते, परतः नृसिंहः शोभते। अन्तर्वहिश्च नृसिंहः विराजते। अतः तं आदिं नृसिंहं शरणं प्रपद्ये ॥६॥

नृसिंह पुराण में लिखित है—

इस स्थान में, उस स्थान में, अन्तर में, बाहर सर्वत्र ही नृसिंहदेव विराजित हैं अतएव आदिदेव नृसिंह की शरण ग्रहण करता हूँ ॥६॥

तबे प्रभु कैल जगन्नाथदरशन ।
घरे आसि मध्याह्न करि करिल भोजन ॥४९
वहिर्द्वारे आछे कालिदास प्रत्याशा करिया ।
गोविन्देरे ठारे प्रभु कहेन जानिया ॥५०
प्रभुर इङ्गिते गोविन्द सब जाने ।
कालिदासेरे दिल प्रभुर शेषपात्र दाने ॥५१
वैष्णवेर शेषभक्षणेर एतेक महिमा ।
कालिदासे पाओयाइल प्रभुर कृपासीमा ॥५२
ताते वैष्णवेर झुटा खाओ छाड़ि घृणा-लाज ।
याहा हैते पाइबे वाञ्छित सब काज ॥५३
कृष्णेर उच्छिष्ट हय महाप्रसाद नाम ।
भक्तशेष हैले महा-महाप्रसाद आख्यान ॥५४
भक्तपदधूलि, आर भक्तपदजल ।
भक्तभुक्तशेष एइ तिन महाबल ॥५५
एइ तिन-सेवा हैते कृष्ण-प्रेमा हय ।
पुनः पुनः सर्व्वशास्त्रे फुकारिया कय ॥५६
ताते बार बार कहि, शुन भक्तगण ।
विश्वास करिया कर ए तिन-सेवन ॥५७
तिन हैते कृष्णनामप्रेमेर उल्लास ।
कृष्णेर प्रसाद ताते, साक्षी कालिदास ॥५८
नीलाचले महाप्रभु रहे एइमते ।
कालिदासे महा कृपा कैल अलक्षिते ॥५९
से वत्सर शिवानन्द पत्नी लञा आइल ।
पुरीदास छोटपुत्रे सङ्गे आनिल ॥६०
पुत्रे सङ्गे लञा तेँह आइला प्रभुर स्थाने ।
पुत्रेरे वाराइल प्रभुर चरणबन्दने ॥६१
"कृष्ण कह" बलि प्रभु बले बार बार ।
तबु कृष्णनाम बालक ना करे उच्चार ॥६२
शिवानन्द बालकेरे बहु यत्न कैल ।
तबु सेइ बालक कृष्णनाम ना कहिल ॥६३
प्रभु कहे "आनि नाम जगते लओयाइल ।
स्थावर पर्य्यन्त कृष्णनाम कराइल ॥६४
इहारे नारिल कृष्णनाम कहाइते ।
शुनिया स्वरूपगोसाञि लागिला कहिते ॥६५
"तुमि कृष्णनाममन्त्र कैले उपदेशे ।
मन्त्र पाञा कारो आगे ना करे प्रकाशे ॥६६
मने मने जपे, मुखे ना करे आख्यान ।
एइ इहार मनःकथा करि अनुमान ॥६७"
आर दिन कहे प्रभु "पढ़ पुरीदास ।"
एइ श्लोक करि तिँह करिल प्रकाश ॥६८

तथाहि कर्णपूरकृताचार्य्यशतके प्रथमश्लोकः—

श्रवसोः कुवलयमक्ष्णोरञ्जनमुरसो महेन्द्रमणिदाम ।
वृन्दावनरमणीनां मण्डनमखिलं हरिर्जयति ॥७॥

टीका—हरिः जयति । किम्भूतः ?—श्रवसोः चक्षुषो कुवलयं नीलपद्मसदृशप्रीतिदायकः । पुनः किम्भुतः ?—अक्ष्णोः नेत्रयोः अञ्जनं कज्जलसमान-शोभाकरः । पुनः किम्भूतः ?—उरसः वक्षसः महेन्द्रमणिदाम-इन्द्रनीलमणिनिर्म्मितमाल्यसदृश-मोहनः । पुनश्च वृन्दावनरमणीनां गोपिकानां अखिलं मण्डनं विभूषणं ।।७।।

जो नीलकमल सदृश नयन प्रीतिकर, एवं कज्ज्वलवत् सन्तोषजनक, इन्द्रनीलमणि ग्रथित माला के तुल्य वक्षशोभनकारी एवं गोपिकावृन्द के समस्त भूषण हैं उन हरि की जय हो ।।७।।

सात वत्सरेर शिशु नाहि अध्ययन ।
ऐछे श्लोक करे, लोके चमतकार-मन ।।६९
चैतन्य प्रभुर एइ कृपार महिमा ।
ब्रह्मादि देव याँर नाहि पाय सीमा ।।७०
भक्तगण प्रभुसङ्गे रहे चारि मासे ।
प्रभु आज्ञा दिल, सबे गेल गौड़देशे ।।७१
ताँ सबार सङ्गे प्रभुर छिल वाह्यज्ञान ।
ताँरा गेले पुनः हैल उन्माद-प्रधान ।।७२
रात्रि दिने स्फूरे कृष्णेर रूप गन्ध रस ।
साक्षादनुभवे येन कृष्ण-उपस्पर्श ।।७३
एकदिन प्रभु गेला जगन्नाथदरशने ।
सिंहद्वारे दलइ आसि करिल बन्दने ।।७४
तारे बोले "कोथा कृष्ण मोर प्राणनाथ ?।
मोरे कृष्ण देखाओ" बलि धरे तार हात ।।७५
सेइ कहे "इहा हय व्रजेन्द्रनन्दन ।
आइस तुमि मोर सङ्गे कराङ दर्शन ।।७६"
"तुमि मोर सखा, देखाओ काँहा प्राणनाथ ।'
एत बलि जगमोहन गेला धरि तार हात ।।७७
सेइ बले "एइ देख श्रीपुरुषोत्तम ।
नेत्र भरिया तुमि करह दर्शन ।।७८"
गरुड़ेर पाछे रहि करेन दरशन ।
देखेन, जगन्नाथ हय मुरलीवदन ।।७९
एइ लीला निज ग्रन्थे रघुनाथदास ।
चैतन्यस्तवकल्पवृक्षे करियाछेन प्रकाश ।।८०

तथाहि स्तववल्यां चैतन्यस्तवकल्पवृक्षे सप्तम श्लोके रघुनाथदासवाक्यम्—

क्व मे कान्तः कृष्णस्त्वरितमिह तं लोकय सखे !
त्वमेवेति द्वाराधिपमभिवदन्नुन्मद इव ।
द्रुतं गच्छ द्रष्टुं प्रियमिति तदुक्तेनधृततद्,
भुजान्तर्गौराङ्गो हृदय उदयन्मां मदयति ।।८

टीका—हे सखे ! मे मम कान्तः कृष्णः क्व कुत्र ? इह समये त्वं तमेव त्वरितं आशु लोकय दर्शय । इति एवम्प्रकारेण उन्मद इव द्वाराधिपं द्वाररक्षकं अभिवदन् सन् प्रियं द्रष्टुं द्रुतं त्वरितं गच्छ आगच्छ इति तदुक्तेन धृततद्भुजान्तः गौराङ्गः मम हृदये उदयन् सन् मां मदयति ।।८।।

हे सखे ! मदीय प्राणनाथ श्रीहरि कहाँ हैं ? अधुना तुम आशु उन कृष्ण का दर्शन कराओ" इस प्रकार उन्मादवत् द्वारपाल को कहने पर द्वारपाल ने कहा "आपके प्रियतम के दर्शन हेतु आशु आइये' यह सुनकर द्वारपाल के हस्त धारण किये थे, इस प्रकार गौराङ्गदेव मदीय हृदय मन्दिर में उदित होकर मुझको उन्मादवत् कर रहे हैं ।।८।।

हेनकाले गोपालवल्लभ-भोग लागाइल ।
शङ्ख-घण्टा-आदि सह आरति वाजिल ।।८१
भोग सरिले जगन्नाथेर सेवकगण ।
प्रसाद लञा प्रभुर ठाँइ कैल आगमन ।।८२
माला पराइया प्रसाद दिल प्रभुर हाते ।
आस्वाद रहुक, यार गन्धे मन भाते ।।८३
बहुमूल्य प्रसाद सेइ वस्तु सर्व्वोत्तम ।
तार अल्प खाओयाइते करिल यतन ।।८४

तार अल्प लञा प्रभु जिह्वाते यदि दिल ।
आर सब गोविन्देर आँचले बान्धिल ॥८५
कोटि-अमृत-स्वाद पाञा प्रभुर चमत्कार ।
सर्व्वाङ्गे पुलक, नेत्रे वहे अश्रुधार ॥८६
"एइ द्रव्ये एत स्वाद काँहा हैते आइल ।
कृष्णेर अधरामृत इथे सञ्चारिला" ॥८७
एइ बुद्धे महाप्रभुर प्रेमावेश हैल ।
जगन्नाथेर सेवक देखि संवरण कैल ॥८८
"सुकृतिलभ्य फेलामृत" बले बार बार ।
ईश्वर-सेवक पुछे "प्रभु ! कि अर्थ इहार॥८९
प्रभु कहे "एइ ये दिल कृष्णाधरामृत ।
ब्रह्मादिदुर्ल्लभ एइ, निन्दये अमृत ॥९०
कृष्णेर ये भुक्तशेष, तार फेला नाम ।
तार एक लव पाय, सेइ भाग्यवान् ॥९१
सामान्य भाग्य हैते तार प्राप्ति नाहि हय ।
कृष्णेर याते पूर्ण कृपा, सेइ ताहा पाय ॥९२
'सुकृति' शब्दे कहे कृष्ण-कृपा-हेतु पुण्य ।
सेइ यार हय, फेला पाय, सेइ धन्य ॥९३
एत बलि प्रभु ता सबारे विदाय दिला ।
उपलभोग देखिया प्रभु निज वासा आइला॥९४
मध्याह्न करिया कैला भिक्षानिर्व्वाहण ।
कृष्णाधरामृत सदा अन्तरे स्मरण ॥९५
वाह्य कृत्य करे, प्रेमे गरगर मन ।
कष्टे संवरण करे आवेश सघन ॥९६
सन्ध्याकृत्य करि पुनः निजगणसङ्गे ।
निभृते वसिला नाना कृष्णकथारङ्गे ॥९७
प्रभुर ईङ्गिते गोविन्द प्रसाद आनिला ।
पुरीभारतीके प्रभु किछु पाठाइला ॥९८
रामानन्द-सार्व्वभौम-स्वरूपादि गण ।
सबाके प्रसाद दिल करिया वण्टन ॥९९
प्रसादेर सौरभ्य माधुर्य्य करि आस्वादन ।
अलौकिक आस्वादे सबार विस्मित हैल मन१००
प्रभु कहे "एइ सब हय प्राकृत द्रव्य ।
ऐक्षव कर्पूर मरिच एलाइच वङ्ग गव्य॥१०१
रसवास गुड़त्वक्-आदि यत सब ।
प्राकृत वस्तुर स्वाद सबार अनुभव ॥१०२
एत द्रव्ये एत आस्वाद गन्ध लोकातीत ।
आस्वाद करिया देख सबार प्रतीति ॥१०३
आस्वाद दूरे रहुक, गन्धे माते मन ।
आपना विनु अन्य माधुर्य्य कराय विस्मरण१०४
ताते एइ द्रव्ये कृष्णाधरस्पर्श हैल ।
अधरेर गुण सब इहाते सञ्चारिल ॥१०५
अलौकिक गन्ध स्वाद, अन्यविस्मरण ।
महामादक हय एइ कृष्णाधरेर गुण॥१०६
अनेक सुकृते इहा हैञाछे सम्प्राप्ति ।
सबेइ आस्वाद कर करि महाभक्ति"॥१०७
हरिध्वनि करे सबे कैल आस्वादन ।
आस्वादिते प्रेमे मत्त हैल सबार मन ॥१०८
प्रेमावेशे महाप्रभु यबे आज्ञा दिला ।
रामानन्दराय श्लोक पढ़िते लागिला ॥१०९

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३१।१४)—

सुरतवर्द्धनं शोकनाशनं,
स्वरितवेणुना सुष्ठुचुम्बितं ।
इतररागविस्मारणं नृणां,
वितरवीर नस्तेऽधरामृतं ॥९॥

टीका—हे वीर ! ते तव अधरामृतं नः अस्मभ्यम् वितर । किम्भूतम् ? सुरतवर्द्धनं रमणीलीलादिवर्द्धनं! पुनः कीदृशं ? शोक नाशनम् । पुनः कथंभूतं ?

स्वरित वेणुना नादितवेणुना सष्ठु मनोहरं यथास्यात्तथा चुम्बितं लग्नं । पुनश्च नृणां इतरराग विस्मारणं ॥६

श्रीमद्भागवत के १०।३१।१४ में उक्त है—

हे वीर ! तदीय अधरामृत हम सबको प्रदान करो, वह अधरामृत-रमणी लीला कौतुकादि वर्द्धक है, शोकापहारक है, एवं शब्दित वेणु में सम्यक् संलग्न है। वह मनुष्यवृन्द की इतर वासना को विस्मृत करा देता है ॥६॥

श्लोक शुनि महाप्रभु महातुष्ट हैला ।
राधार उत्कण्ठा-श्लोक पढ़िते लागिला ॥११०

तथाहि गोविन्दलीलामृते (८।८)—

व्रजातुलकुलाङ्गनेतररसालितृष्णाहरः,
प्रदीव्यदधरामृतः सुकृतिलभ्यफेलालवः
सुधाजिदहिवल्लिकासदलवीटिकाचर्व्वितः,
स मे मदनमोहनः सखि तनोति जिह्वास्पृहां॥१०

टीका—हे सखि ! सः मदनमोहनः मे मम जिह्वा स्पृहां रसनावासनां तनोति विस्तारयति । सः किम्भूतः ? व्रजातुलकुलाङ्गनेतररसालितृष्णाहरः व्रजस्य अतुलानां कुलाङ्गनानां इतरेषु रसालिषु तृष्णां हर्त्तुं शीले यस्य सः । पुनः किम्भूतः ? प्रदीव्यद धरामृतं यस्य सः । पुनः किम्भूतः ? सुकृतिलभ्य-फेलालवः सुकृतिभिः पुण्यशीलैः लभ्यः प्रापणीयः फेलायाः अधरसुधायाः लवः किञ्चिदंशो यस्य सः । पुनः कीदृशः ? सुधाजिदहिवल्लिकासुदलवीटिका-चर्व्वितः सुधाजित पीयूषनिन्दितं तथा अहि-वल्लिकायाः नागलतिकायाः सुदलमिव वीटिकायाः ताम्बूलस्य चर्वितं यस्य सः ॥१०॥

हे सखि ! जिनको प्राप्त करने से व्रजाङ्गनावृन्द में अपर वासना नहीं रहती है, जिनमें अधरसुधा उत्तमरूप से विद्यमान है। भूरि पुण्य से ही उनकी कणिका प्राप्त करना सम्भव है, जिनके चर्वित ताम्बूल, सुधा का आस्वादन को पराभूत करता रहता है, इस प्रकार मदनमोहन अद्य मेरी जिह्वा की वासना को वर्द्धित कर रहे हैं ॥१०॥

"तनु-मन कराय क्षोभ, बाड़ाय सुरत लोभ,
हर्ष-शोकादि-भाव विनाशय ।
पासराय अन्य रस, जगत् करे आत्मवश,
लज्जा धर्म धैर्य्य करे क्षय ॥१११
नागर ! शुन तोमार अधर चरित ।
माताय नारीर मन, जिह्वा करे आकर्षण,
विचारिते सब विपरीत ॥ध्रु॥११२॥
आछुक नारीर काज, कहिते बासिये लाज,
तोमार अधर बड़ धृष्ट राय ।
पुरुषे करे आकर्षण, आपना पियाइते मन,
अन्यरस सब पासराय ॥११३
सचेतन रहु दूरे, अचेतन सचेतन करे,
तोमार अधर बड़ वाजिकर ।
तोमार वेणु शुष्केन्धन,तार जन्माय इन्द्रियमन,
तारे आपना पियाय निरन्तर ॥११४
वेणु धृष्ट पुरुष हैञा, पुरुषाधर पियाइञा,
गोपीगणे जानाय निज पान ।
'अहो शुन गोपीगण, बले पिङो तोमार धन,
तोमार यदि थाके अभिमान ॥११५
तबे मोरे क्रोध करि, लज्जा भय धर्म छाड़ि,
छाड़ि दिमु करसिञा पान ।
नहे पिमु निरन्तर, तोमाय मोर नाहि डर,
अन्ये देखों तृणेर समान' ॥११६
अधरामृत निज स्वरे, सञ्चारिया सेइ बले,
आकर्षये जगतेर-मन ।
आमरा धर्म्मभय करि, रहि यदि धैर्य्य धरि,
तबे आमाय करे विड़म्बन ॥११७
नीवि खसाय गुरु-आगे,लज्जा-धर्म्म कराय त्यागे,
केशे धरि येन लैञा याय ।

आनि कराय तोमार दासी,शुनि लोक करे हासि,
एइमत नारीरे नाचाय ॥११८
शुष्क बाँशेर काठिखान, एत करे अपमान,
एइ दशा करिल गोसाञि ।
ना सहि कि करिते पारि, ताहे रहि मौन धरि,
चोरार माके डाकि कान्दिते नाञि ॥११९
अधरेर एइ रीति, आर शुन विपरीति,
से अधर सने यार मेला ।
सेइ भक्ष्य भोज्य पान, हय अमृत समान,
तार नाम हय कृष्ण-फेला ॥१२०
से फेलार एक लव, ना पाय देवता सब,
ए दम्भे केवा पातियाय ।
बहु जन्म पुण्य करे, तबे सुकृति नाम धरे,
से सुकृति तार लव पाय ॥१२१
कृष्ण ये खाय तम्बूल, कहे तार नाहि मूल,
ताहे आर दम्भपरिपाटी ।
तार येवा उद्‌गार, तारे कय अमृतसार,
गोपीर मुख करे आलवाटी ॥१२२
ए सब तोमार कुटिनाटि, छाड़ एइ परिपाटी,
वेणुद्वारे काहे हर प्राण ? ।
आपनार हासि लागि, नह नारीर बधभागी,
देह निजाधरामृत दान" ॥१२३॥
कहिते कहिते प्रभुर मन फिरि गेल ।
क्रोध मन शान्त हैल, उत्कण्ठा बाड़िल॥१२४
परम दुर्ल्लभ एइ कृष्णाधरामृत ।
ताहा येइ पाय तार सफल जीवित ॥१२५
योग्य हैञा केहो करिते ना पाय पान ।
तथापि निर्ल्लज सेइ वृथा धरे प्राण ॥१२६
अयोग्य हैञा ताहा केह सदा पान करे ।
योग्यजन नाहि पाय, लोभे मात्र मरे ॥१२७
ताते जानि, कोन तपस्यार आछे बल ।
अयोग्येरे देओयाय कृष्णाधरामृतफल ॥१२८
कह रामराय, किछु शुनिते हय मन ।"
भाव जानि पड़े राय गोपीर वचन ॥१२९

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२१।९)—

गोप्य किमाचरदयं कुशलं स्म वेणु-
र्दामोदराधरसुधामपि गोपिकानां ।
भुङ्क्ते स्वयं यदवशिष्टरसं ह्रदिन्यो,
हृष्यत्त्वचोऽश्रु मुमुचुस्तरवो यथार्य्याः ॥११॥

टीका—हे गोप्यः ! अयं वेणुः किं कुशलं आचरत् स्म विस्मये । कथं ?— यत् यतः गोपिकानामस्माकं भोग्यां दामोदरसुधां स्वयं भुङ्क्ते । कथं ? अवशिष्ट-रसं यथा स्यात्तथा ह्रदिन्यः नद्यः हृष्यत्त्वचः लक्षिताः । येषां वंशे तरवः अश्रु मुमुचुः । यथा आर्य्या स्वकुले भगवद्भक्तं दृष्ट्वा हृष्यत्त्वचः अश्रु मुञ्चन्ति तद्वत् ॥११

श्रीमद्‌भागवत के १०।२१।९ में उक्त है—

गोपाङ्गना बोली थी, हे गोपिकावृन्द ! श्रीहरि के अधरामृत केवल मात्र भोग्य एवं रसपूर्ण है किन्तु किस पुण्य हेतु वेणु एकक ही उसको पान कर रही है, समझने में नहीं आती है ।

और भी देखो, कुलवृन्द आर्यवृन्द निज कुल में भगवद् भक्त देखने से जिस प्रकार पुलकित होकर आनन्दाश्रु त्याग करते हैं,उस प्रकार जिसके जलसे वह वेणु पुष्ट हुई, जननी सदृशी नदी समूह कमल विकास कर जैसे रोमाञ्चित दिखाई देती हैं, एवं जिसके वंश में वह उत्पन्न हुई है, वे सब पादपगण भी मधुधारा वर्षण पूर्वक जैसे हर्षवारि विसर्जन कर रहे हैं ॥११

एइ श्लोक शुनि प्रभु भावाविष्ट हैञा ।
उत्कण्ठाते अर्थ करे प्रलाप करिञा ॥१३०

यथाराग:।

"अहो व्रजेन्द्रनन्दन, व्रजेर कोन कन्यागण,
अवश्य करिवे परिणय।
से सम्बन्धे गोपीगण, याके जाने निज धन,
से सुधा अन्येर लभ्य नय ॥१३१

गोपीगण कह सब करिया विचारे।
कोन् तीर्थे कोन् तप, कोन् सिद्ध मन्त्र जप,
एइ वेणु कैल जन्मान्तरे ? ॥ध्रु॥१३२

हेन कृष्णाधरसुधा, ये कैल अमृत मुदा,
यार आशाय गोपी धरे प्राण।
एइ वेणु अयोग्य अति, एके स्थावर पुरुष जाति,
से सुधा सदाइ करे पान ॥१३३

यार धन ना कहे तारे, पान करे बलात्कारे,
पिते तारे डाकिया जानाय।
तार तपस्यार फल, देख इहार भाग्यबल,
इहार उच्छिष्ट महाजने खाय ॥१३४

मानसगङ्गा कालिन्दी, भुवन पावन नदी,
कृष्ण यदि ताते करेन स्नान।
वेणु झुटाधररस, हैञा लोभे परवस,
सेइ काले हर्षे करे पान ॥१३५

एत नदी रहु दूरे, वृक्ष सब तार तीरे,
तप करे पर-उपकारी।
नदीर शेष रस पाञा, मूल द्वारा आकर्षिञा,
केन पिये बुझिते ना पारि ॥१३६

निजाङ्कुरे पुलकित, पुष्पहास्य विकसित,
मधु-मिशे वहे अश्रुधार।
वेणुके मानि निज जाति, आर्य्येर येन पुत्रनाति,
वैष्णव हैले आनन्द विकार ॥१३७

वेणुर तप जानि यबे, सेइ तप करि तबे,
ए त अयोग्य, आमरा योग्यनारी।
यहा ना पाञा दुःखे मरि,
अयोग्य पिये सहिते नारि,
ताहा लागि तपस्या विचारि" ॥१३८

एतेक प्रलाप करि, प्रेमावेगे गौरहरि,
सङ्गे लैञा स्वरूप रामराय।
कभु नाचे, कभु गाय, भावावेशे मूर्च्छा याय,
एइ रूपे रात्रि दिन याय ॥१३९

स्वरूप रूप सनातन, रघुनाथेर श्रीचरण,
शिरे धरि, करि यार आश।
चैतन्यचरितामृत, अमृत हैते परामृत,
गाय दीन हीन कृष्णपास ॥१४०

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे कालिदासप्रसाद-
विरहोन्मादप्रलापो नाम षोडशः परिच्छेदः ॥१६॥

सप्तदश परिच्छेद।

लिख्यते श्रीलगौरेन्दोरत्यद्भुतमलौकिकम्।
यैर्दृष्टं तन्मुखात् च्छ्रुत्वा दिव्योन्मादविचेष्टितं ॥१

टीका—यैः श्रीलगौरेन्दोः अत्यद्भुतं तथा अलौकिकं दिव्योन्माद-विचेष्टितं भावमुद्रादिकं दृष्टं, तन्मुखात् तत् श्रुत्वा लिख्यते, मया इति शेषः ॥१॥

जिन्होंने श्रीगौराङ्गदेव की अत्युद्भुत एवं अलौकिक दिव्यभाव चेष्टा का दर्शन किया है, मैं उनके मुखसे सुनकर उसको लिख रहा हूँ ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१॥

एइमत महाप्रभु रात्रि दिवसे ।
उन्मादेर चेष्टा प्रलाप करे प्रेमावेशे ॥२
एक दिन प्रभु, स्वरूप रामानन्देर सङ्गे ।
अर्द्धरात्रि गोङाइल कृष्णकथारङ्गे ॥३
यवे येइ भाव प्रभुर करये उदय ।
भावानुरूप गीत गाय स्वरूप महाशय ॥४
विद्यापति चण्डीदास श्रीगीतगोविन्द ।
भावानुरूप श्लोक पढ़े राय रामानन्द ॥५
मध्ये मध्ये आपने प्रभु श्लोक पड़िया ।
श्लोकेर अर्थ करे प्रभु विलाप करिया ॥६
एइमते नानाभावे अर्द्धरात्रि हैल ।
गोसाञिरे शयन कराइ दुँहे घर गेल ॥७
गम्भीरार द्वारे गोविन्द करिल शयन ।
सब रात्रि प्रभु करे उच्च सङ्कीर्त्तन ॥८
आचम्बिते शुने प्रभु कृष्ण-वेणु-गान ।
भावादेशे प्रभु ताँहा करिला पयाण ॥९
तिन द्वारे कपाट ऐछे आछे त लागिया ।
भावावेशे प्रभु गेला वाहिर हइया ॥१०
सिंहद्वार-दक्षिणे आछे तेलेङ्गा गाभीगण ।
ताँहा याइ पड़िला प्रभु हैञा अचेतन ॥११
एथा गोविन्द प्रभुर शब्द ना पाइया ।
स्वरूपेरे बोलाइल कपाट खुलिया ॥१२
तबे स्वरूप गोसाञि सङ्गे लैञा भक्तगण ।
दिउटी ज्वालिया करे प्रभु-अन्वेषण ॥१३
इति उति अन्वेषिया सिंहद्वारे गेला ।
गाभीगण मध्ये याइ प्रभुरे पाइला ॥१४
पेटेर भितरे हस्त-पाद, कूर्म्मेर आकार ।
मुखे येन पुलकाङ्ग नेत्रे अश्रु धार ॥१५
अचेतन पड़ि आछे कुष्माण्डफल ।
बाहिरे जड़िमा, अन्तरे आनन्दविह्वल ॥१६
गाभी सब चौदिके शुँके प्रभुर अङ्ग ।
दूर कैले नाहि छाड़े प्रभुर अङ्गसङ्ग ॥१७
अनेक करिल यत्न ना हय चेतन ।
प्रभुरे उठाइया घरे आनिल भक्तगण ॥१८
उच्च करि श्रवणे करे नाम सङ्कीर्त्तन ।
अनेकक्षणे महाप्रभु पाइल चेतन ॥१९
चेतन हैले हस्त-पाद वाहिर हैल ।
पूर्व्ववत् यथायोग्य शरीर हइल ॥२०
उठिया वसिल प्रभु, चाहे इति उति ।
स्वरूपे कहे "तुमि आमा आनिले कति ॥२१
वेणुशब्द शुनि आमि गेलाङ वृन्दावन ।
देखि, गोष्ठे वेणु वाजाय व्रजेन्द्रनन्दन ॥२२
सङ्केत-वेणुनादे राधा गेला कुञ्जघरे ।
कुञ्जेते चलिला कृष्ण क्रीड़ा करिवारे ॥२३
ताँर पाछे-पाछे आमि करिनु गमन ।
ताँर भूषाध्वनिते आमार हरिल श्रवण ॥२४
गोपीगण सह विहार हास परिहास ।
कण्ठध्वनि उक्ति शुनि मोर कर्णोल्लास ॥२५
हेनकाले तुमि सब कोलाहल करि ।
आम इँहा लैञा आइला बलात्कारकरि॥ २६
शुनिते ना पाइनु सेइ अमृत सम वाणी ।
शुनिते ना पाइनु भूषण-मुरलीर ध्वनि ॥२७"
भावावेशे स्वरूपे कहे गद्‌गद वाणी ।
"कर्ण तृष्णाय मरे, पढ़ रसामृत शुनि ॥२८"
स्वरूपगोसाञि प्रभुर भाव जानिया ।
भागवतेर श्लोक पढ़े मधुर करिया ॥२९

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।२९।४०)

कास्त्र्यङ्ग ते कलपदामृतवेणुगीत-
सम्मोहितार्य्यचरितान्न चलेत्त्रिलोक्यां ।
त्रैलोक्यसौभगमिदञ्च निरीक्ष्य रूपं,
यद्गोद्विजद्रुममृगाः पुलकान्यबिभ्रन् ॥२॥

श्रीमद्भागवत के १०।२९।४० में लिखित है—

हे प्रिय ! त्वदीय सुधासिक्त, मधुरपद सम्बन्धि वंशीनाद को सुनकर त्रिभुवन में कौन नारी है जो निज कुलधर्म से विचलित नहीं होती है ? कारण, त्वदीय त्रिभुवत मोहन रूप को देखकर धेनु, हरिण, तरुलता एवं पक्षी प्रभृति भी पुलकाञ्चित होते हैं ॥२

यथारागः ।

हैल गोपीभावावेश, कैल रासे परवेश,
कृष्णेर शुनि उतेक्षा-वचन ।
कृष्णेर मुधुर हास्यवाणी, त्यागे ताहा सत्य मानि
रोषे कृष्ण देन ओलाहन ॥३०
"नागर कह तुमि करिया निश्चय ।
एइ त्रिजगत भरि, आछे यत योग्य नारी,
तोमार वेणु काँरे ना आकर्षय ॥ध्रु॥३१
कैले जगते वेणु ध्वनि, सिद्धमन्त्रादि योगिनी,
दूती हैञा मोहे नारी-मन ।
महोत्कण्ठा बाड़ाइया, आर्य्यपथ छाड़ाइया,
आनि तोमाय करे समर्पण ॥३२
धर्म्म छाड़ाओ वेणुद्वारे, हान कटाक्ष-कामस्वरे,
लज्जा भय सकल छाड़ाओ ।
एबे आमाय कर रोष, कहि पति-त्यागे दोष,
धार्मिक हैञा धर्म शिखाओ ॥३३
अन्य कथा अन्य मन, बाहिरे अन्य आचरण,
एइ सब शठ परिपाटि ।
तुमि जान परिहास, हय नारीर सर्वनाश,
छाड़ एइ सब कुटिनाटि ॥३४
वेणुनाद अमृत घोले, अमृत समान मिठा बोले,
अमृत सम भूषण शिञ्जत ।
तिन अमृते हरे काण हरे मन, हरे प्राण,
केमने नारी धरिवेक चित ॥३५"
एत कहि क्रोधावेशे, भावेर तरङ्गे भासे,
उत्कण्ठासागरे डूबे मन ।
राधार उत्कण्ठावाणी, पढ़ि आपने वाखानि,
कृष्णमाधुर्य्य करे आस्वादन ॥३६

तथाहि गोविन्दलीलामृते (८।५)—

नदज्जलदनिस्वनः श्रवणकर्षिसच्छिञ्जितः,
सनर्म्मरससूचकाक्षरपदार्थभंग्युक्तिकः ।
रमादिकवराङ्गनाहृदयहारिवंशीकलः,
स मे मदनमोहनः सखि ! तनोति कर्णस्पृहां ॥३

टीका—अथ शब्दं स्पष्टयति नदज्जलदित्येकेन । हे सखि ! स कृष्णो मम कर्णस्पृहां तनोति। स कीदृशः ? नदज्जलदिति ! नदतो जलस्य निस्वनः कण्ठध्वनि र्यस्य सः, गम्भीर इत्यर्थः । पुनः किम्भूत ? श्रवणकर्षि मदुत्तमं शिञ्जितं भूषणानां ध्वनिर्यस्य सः । भूषणानान्त शिञ्जितमित्यमरः । पुनः नर्म्मणा परिहासेन सह वर्त्तमानैरतएव रससूचकैः । किंवा सनर्म्मरसस्य सूचकैरक्षरैः । अनेन ज्ञातं अन्येषां वचनानि रससूचकानि स्युः, कृष्णस्य वचनानाम-क्षराण्यपि रससूचकान्येवेति । तैर्जातानां पदानां विभक्त्यन्तशब्दानां या अर्थकौशलं । यद्वा रस-सूचकाक्षर-पदार्थभङ्ग्या सह वर्त्तमानोक्तिर्यस्य सः। यद्वा सनर्म्म-रससूचकाक्षरपदार्थानां भङ्गी भङ्गवान् लहरीवान् समुद्रः अर्थान्नर्म्मरससमुद्रः तद्रूपोक्तिर्यस्य सः पुनः रमादिनानामुत्तमस्त्रीणां हृदयहारी वंश्याः कलो मधुरास्फुटध्वनिर्यस्य सः । वयन्तु मानुष्य स्तत्रापि युवत्याः । अर्व्वाचीनाः तत्रापि सजातीयाः तत्रापि तस्य सम्भोग्याः । तस्य वाञ्छनीयाः प्रियाश्च । अतस्तत् कर्त्तृकमस्मच्चित्ताकर्षणं किं विचित्रमिति ॥३॥

गोविन्दलीलामृत ग्रन्थ में उक्त है—

श्रीराधा बोली—हे सखि ! जिनकी कण्ठध्वनि जलद गम्भीर है, जिनके भूषण सिञ्जित श्रुतिहारी हैं, जिनके सपरिहास मधुराक्षर युक्त पदार्थ भङ्गि मय वाक्य एवं जिनके मुरलीरवरमादि वराङ्गनागण के हृदयहारी है, इस प्रकार मदनमोहन मेरी कर्ण स्पृहा को विस्तार कर रहे हैं ॥३॥

पुनर्यथारागः ।

''कण्ठेर गम्भीर ध्वनि, नवघन ध्वनि जिनि,
याँर गाने कोकिल लाज पाय ।
तार एक श्रुतिकरो, डुवाय जगतेर काणे,
पुनः काण बाहुड़ि ना याय ॥३७
कह सखि कि करि उपाय ?
कृष्णेर माधुरी गाने, हरिल आमार काणे,
एवे ना पाय, तृष्णाय मरि याय ॥ध्रु॥३८
नूपुर किङ्किणी-ध्वनि, हंस सारस जिनि,
कङ्कणध्वनि चटक लाजाय ।
एकवार येइ शुने, व्यापि रहे तार काणे,
अन्य शब्द से काणे ना याय ॥३९
से श्रीमुख भाषित, अमृत हैते परामृत,
स्मित-कर्पूर ताहाते मिश्रित ।
शब्द अर्थ दुइ शक्ति, नाना रस करे व्यक्ति,
प्रत्यक्षरे नर्म्म विभूषित ॥४०
से अमृतेर एक कण, कर्णचोकर-जीवन,
कर्ण-चोकर जीये सेइ आशे ।
भाग्यवशे कभुपाय, अभावे कभु ना पाय,
ना पाइले मरये पियासे ॥४१
येवा वेणु कलध्वनि, एकवार ताहा शुनि,
जगन्नारीचित्त आउलाय ।
नीविबन्ध पड़े खसि, बिना मूल्ये हय दासी,
वाउली हैञा कृष्ण पाशे धाय ॥४२
येवा लक्ष्मी ठाकुराणी, तिँहो ये काकली शुनि,
कृष्णपाशे आइसे प्रत्याशाय ।
ना पेये कृष्णेर सङ्ग, वाड़े तृष्णार तरङ्ग,
तप करे तबु नाहि पाय ॥४३
एइ शब्दामृत चारि, यार हय भाग्य भारि,
सेइ कर्णे इहा करे पान ।
इहा येइ नाहि शुने, से काण जन्मिल केने,
काणाकड़िसम सेइ काण'' ॥४४
करिते ऐछे विलाप, उठिल उद्वेग भाव,
मने काँहो नाहि आलम्वन ।
उद्वेग विषाद मति, औत्सुक्य त्रास धृति स्मृति,
नाना भावेर हइल मिलन ॥४५
भावशावल्ये राधार उक्ति, लीलाशुके हैल स्फूर्ति,
सेइ भावे पढ़े एक श्लोक ।
उन्मादेर सामर्थ्ये, सेइ श्लोकेर करे अर्थे,
येइ अर्थ नाहि जाने लोक ॥४६॥

तथाहि कृष्णकर्णामृते (४२)—

किमिह कृणुमः कस्य ब्रूमः कृतं कृतमाशया,
कथयत कथामन्यां धन्यामहो हृदयेशयः ।
मधुरमधुरस्मेराकारे मनोनयनोत्सवे,
कृपणकृपणा कृष्णे तृष्णा चिरं तत लम्बते ॥४॥

टीका—हे सखि ! इह विरहे किं कृणुमः । कस्य सम्बन्धे ब्रूमः । आशया कृतं, तत् कृतं न कुर्म्म; अधुना तद्वार्त्तां परित्यज्य अन्यां धन्यां कथां कथयते । अहो ! स धूर्त्तः मम हृदयेशयः । कृष्णे वत खेदे मम तृष्णा वाञ्छा चिरं प्रतिक्षणं लम्बते । तृष्णा किम्भूता ?— कृपणकृपणा । कृष्णे किम्भूते ? मधुरमधुरस्मेराकारेमधुरान्मधुरः स्मेराकारः मृदुस्मितरूपाकृतिर्यस्मिन् । पुनः किम्भूते ?— मनोनयनोत्सवे मनोनयनयोः उत्सवो यस्मिन् ॥४॥

श्रीराधिका श्रीहरि विरह में सखी को सम्बोधन

कर बोल रही है—हे सखि ! इस समय किस उपाय से श्रीकृष्ण का दर्शन होगा ? तुम सब भी मेरे तुल्य कातर हो,सुतरां किसको इस व्यथा को कहूं ? कृष्ण की आशा से जो कुछ कर चुकी हूं वही उत्तम है, और कुछ नहीं करूँगी । अधुना उनका प्रसङ्ग को छोड़कर अपर प्रसङ्ग कहो, हाय ! वह तो मदीय हृदय गुहाशायी है, तब कैसे उनका प्रसङ्ग परित्याग कर सकती हूँ ? अहो ! उनका प्रसङ्ग परित्याग करना तो दूर है, मधुर हास्यपूर्ण मनोनयन के हर्षवर्द्धन नन्दनन्दन में मदीय तृष्णा चिरदिन ही आलम्बित होकर है । यहाँ मति, त्रास, चिन्ता, रागोदय, विश्राम प्रभृति भावोदय की विचित्रता प्रकाशित हुई है ॥४॥

यथारागः

"एइ कृष्णेर विरहे, उद्वेगे मन स्थिर नहे,
प्राप्त्युपाय चिन्तन ना याय ।
येवा तुमि सखीगण, विषादे वाउल मन,
कारे पुछों के कहे उपाय ॥४७
हा हा सखि कि करि उपाय ?
काहा करों काँहा याङ, काँहा गेले कृष्ण पाङ,
कृष्ण विना प्राण मोर याय ॥ध्रु॥४८"
क्षणे मन स्थिर हय, तबे मने विचारय,
बलिते हइल मति भावोद्गम ।
पिङ्गलार वचन स्मृति, कराइल भावमति,
ताते करे अर्थनिर्द्धारण ॥३९
"देखि एइ उपाये, कृष्ण-आशा छाड़ि दिये,
आशा छाड़िले सुखी हय मन ।
छाड़ि कृष्णकथा अधन्य, कह अन्य कथा धन्य,
याते कृष्ण हइ विस्मरण ॥५०॥"
कहितेइ हइल स्मृति, चित्ते हैल कृष्णस्फूर्त्ति,
सखीके कहे हइया विस्मिते ।
"यारे चाहि छाड़िते, से सुइया आछे चिते;
कोन रीते ना पारि छाड़िते ॥५१॥"
राधाभावेर स्वभाव आन,
कृष्णे कराय कामज्ञान,
कामज्ञाने त्रास हैल चित्ते ।
कहे "ये जगतमारे, से पशिल अन्तरे,
एइ वैरी ना देय पासरिते ॥५२॥"
औनसुक्येर प्राधान्य, जिनि अन्य भाव-सैन्य,
उदय कैल निजराज्य मने ।
मने हैल लालस, ना हय आपन वश,
दुःखे मने करेन भर्त्सने ॥५३
"मन मोर काम दीन, जल विना येन मीन,
कृष्ण विना क्षणे मरि जाय ।
मधुर हास्य वदने, मनोनेत्र-रसायने,
कृष्ण तृष्णा द्विगुण बाड़ाय ॥५४
हा हा कृष्ण प्राणधन, हा हा पद्मलोचन,
हा हा दिव्यसद्गुणसागर ! ।
हा हा श्यामसुन्दर, हा हा पीताम्बरधर,
हा हा रासविलास नागर ! ॥५५
काँहा गेले तोमा पाइ, तुमि कह ताँहा याइ,"
एत कहि चलिल धाइया ।
स्वरूप उठि कोले करि, प्रभुरे आनिल धरि,
निज स्थाने बसाइल निया ॥५६
क्षणेके प्रभुर वाह्य हैल, स्वरूपेरे आज्ञा दिल,
"स्वरूप ! किछु कर मधुर गान ।"
स्वरूप गाय विद्यापति, गीतगोविन्द-गीति,
शुनि प्रभुर युड़ाइल काण ॥५७
एइमत महाप्रभु प्रति रात्रिदिने ।
उन्माद-चेष्टित हय प्रलापवचने ॥५८॥

एकदिने यत हय भावेर विकार ।
सहस्र मुखे वर्णे यदि, नाहि पाय पार ॥५६
जीव दीन कि करिबे ताहार वर्णन ? ।
शाखाचन्द्रन्याय करि दिग्‌दरशन ॥५०
इहा येइ शुने तार जुड़ाय मन काण ।
अलौकिक गूढ़ प्रेमेर हय चेष्टा-ज्ञान ॥६१
अद्‌भुत निगूढ़ प्रेमेरे माधुर्य्यमहिमा ।
आपनि आस्वादि प्रभु देखाइल सीमा ॥६२
अद्‌भुत दयालु चैतन्य अद्‌भुत वदान्य ।
ऐछे दयालु दाता लोके नाहि शुनि अन्य ॥६३
सर्व्वभावे भज लोक ! चैतन्य चरण ।
याहा हइते पाबे कृष्णप्रेमामृतधन ॥६४
एइत कहिल प्रभुर कूर्म्माकृति-भाव ।
उन्माद-चेष्टित ताते उन्माद-प्रलाप ॥६५
एइ लीला निज-ग्रन्थे रघुनाथदास ।
चैतन्यस्तवकल्पवृक्षे करियाछे प्रकाश ॥६६

तथाहि स्तववल्यां चैतन्यस्तवकल्पवृक्षे श्रीरघुनाथदास वाक्यम् ।—

अनुद्‌घाट्य द्वारत्रयमुरु च भित्तित्रयमहो,
विलङ्घ्योच्चैः कालिङ्गिकसुरभिमध्ये निपतितः ।
तनूद्यत्सङ्कोचात् कमठ इव कृष्णोरुविहरात्,
विराजन् गौराङ्गो हृदय उदयन्मां मदयति ॥५॥

टीका—गौराङ्गः मम हृदये उदयन् सन् मां मदयति । किं कुर्व्वन् ?—कृष्णोरुविरहात् कृष्णस्य दारुणविच्छेदात् विराजन् सन् । क इव ? तनूद्यत्-सङ्कोचात् देहस्य अन्तःसङ्कोचात् कमठः कच्छपः इव । किं कुर्व्वन्? मिश्रगृहे द्वारत्रयं अनुद्‌घाट्य अहो आश्चर्यं उरु च भित्तित्रयं अत्युन्नतं प्राचीरत्रयं उच्चैः यथा स्यात्तथा विलङ्घ्य कालिङ्गिकसुरभिमध्ये कलिङ्गसंज्ञकदेशीयधेनुगणाभ्यन्तरे निपतितः ॥५॥

जो काशी मिश्र के गृह के अर्गलबद्ध द्वारत्रय को उद्‌घाटन न करके ही अत्युन्नत प्राचीर लङ्घन करके कृष्ण के दारुण विच्छेद से कूर्म्मवत् संकुचित देह होकर कलिङ्ग देशीय धेनु के मध्य में निपतित हुये थे, उन गौराङ्गदेव मदीय हृदय में उदित होकर मुझको अतुल आनन्द प्रदान कर रहे हैं ॥५॥

श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥६७॥

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे कूर्म्माकारानुभावोन्माद-प्रलापवर्णनं नाम सप्तदशः परिच्छेदः ॥१७॥



अष्टादश परिच्छेद ।

शरज्ज्योत्स्नासिन्धोरवकलनया जातयमुना-
भ्रमाद्धावन् योऽस्मिन् हरिविरहातापार्णव इव ।
निमग्नो मूर्च्छालः पयसि निवसन्रात्रिमखिलां,
प्रभाते प्राप्तः स्वैरवतु स शचीसूनुरिह नः ॥१॥

यः शचीसुतः शरज्ज्योत्स्नासिन्धोः शरज्ज्योत्-स्नया सह सागरस्य अवकलनया दर्शनेन जातयमुना-भ्रमात् धावन् मूर्च्छालः सन् हरिविरहतापार्णवे इव पयसि सागरसलिले निमग्नः सन् अखिलां रात्रिं निवसन् प्रभाते स्वैः गणैः प्राप्तः अभूत्, सः शचीसूनुः इह नः अस्मान् अवतु रक्षतु ॥१॥

शारदीय ज्योत्स्ना में समुद्र दर्शनकर यमुना भ्रमसे कृष्ण विच्छेद ताप सागर में मग्न होने के समान जो प्रभावित होकर मूर्च्छित दशा में समुद्र सलिलमें निमज्जित होकर समस्त रात्रि अति वाहित किये थे, एवं प्रातःकाल में परिजनवृन्द जिनको उसी दशा में प्राप्त किये थे, वह शचीनन्दन अधुना हम सबकी रक्षा करें ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१॥

एइमते महाप्रभु नीलाचले वैसे ।
रात्रिदिने कृष्ण-विच्छेदार्णवे भासे ॥२
शरत्कालेर रात्रि, सब चन्द्रिका उज्ज्वल ।
प्रभु निजगण लञा वेड़ान सकल ॥३
उद्याने उद्याने भ्रमे कौतुक देखिते ।
रासलीलार गीत-श्लोक पड़िते शुनिते ॥४
कभु प्रेमावेशे करेन गान नर्त्तन ।
कभु भावावेशे रासलीलानुकरण ॥५
कभु भावोन्मादे प्रभु इति उति धाय ।
भूमे पड़ि कभु मूर्च्छा, कभु गड़ियाय ॥६
रासलीलार एक श्लोक यवे पड़े शुने ।
पुर्व्ववत् तार अर्थ करेन आपने ॥७
एइमत रासलीलाय हय यत श्लोक ।
सबार अर्थ करे, कभु पाय हर्ष शोक ॥८
से सब श्लोकेर अर्थ, से सब बिकार ।
से सब वर्णिते ग्रन्थ हय अति विस्तार ॥९
द्वादश वत्सरे ये ये लीला क्षणे क्षणे ।
अति बाहुल्य भये ग्रन्थे ना कैल लिखये ॥१०
पूर्व्वे येइ देखाञाछि दिग्‌दरशन ।
तैछे-जानिह विकार-प्रलाप-बर्णन ॥११
सहस्रवदने यवे कहये अनन्त ।
एक दिनेर लीलार तबु नाहि पाय अन्त ॥१२
कोटि युग पर्य्यन्त यदि लिखये गणेश ।
एकदिनेर लीलार कभु नाहि पाय शेष ॥१३
भक्तेर प्रेमविकार देखि कृष्णेर चमत्कार ।
कृष्ण यार ना पाय अन्त,केवा छार आर॥१४
भक्तप्रेमेर यत दशा, ये गति प्रकार ।
यत दुःख, यत सुख, यतेक विकार ॥१५
कृष्ण ताहा सम्यक् ना पारि जानिते ।
भक्तभाव अङ्गीकारे ताहा आस्वादिते ॥१६
कृष्णेरे नाचाय प्रेमा भक्तेरे नाचाइ ।
आपने नाचये-तिने नाचे एक ठाञि ॥१७
प्रेमार विकार वर्णिते चाहे येइ जन ।
चान्द धरिते चाहे येन हइया वामन ॥१८
वायु यैछे सिन्धुजलेर हरे एक कण ।
कृष्णप्रेमा-कणे तैछे जीवेर स्पर्शन ॥१९
क्षणे क्षणे उठे प्रेमार तरङ्ग अनन्त ।
जीव छार काँहा तार पाइवेक अन्त ? ॥२०
श्रीकृष्णचैतन्य याहा करे आस्वादन ।
सबे एक जाने ताहा स्वरूपादि गण ॥२१
जीव हैञा करे येइ ताहार वर्णन ।
आपना शोधिते तार छोँये एक कण ॥२२
एइमत रासेर श्लोक सकलि पड़िला ।
शेषे जलकेलिर श्लोक पढ़िते लागिला ॥२३

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३३।२३)—

ताभिर्युतः श्रममपोहितुमङ्गसङ्ग-
घृष्टस्रजः स्वकुचकुम्कुमरञ्जितायाः।
गन्धर्व्वपालिभिरनुद्रुत आविशद्वाः,
श्रान्तो गजीभिरिभराड़िव भिन्नसेतुः ॥२॥

टीका—अङ्गसङ्गघृष्टस्रजः अङ्गसङ्गेन मर्द्दित-पुष्पमालायाः, अतस्तासां स्वकुचकुम्कुमरञ्जितायाः सम्बन्धिभिः गन्धर्वपतिरूपभ्रमरैः अनुद्रुतः सकृष्णः ताभिः गोपिकाभिर्युतः श्रान्तः सन श्रमं अपोहितुं गजीभिः सह इभराट् मत्तवारण इव कः यमुनासलिलं आविशत। कृष्णः किम्भूतः ?–भिन्नसेतुः अतिक्रान्त-लोकमर्य्यादः ॥२॥

श्रीमद्भागवत के १०।३३।२२ में उक्त है—

मदमत्त वारण जिस प्रकार करिणीवृन्द के सहित जल क्रीड़ा करते हैं, लौकिक मर्य्यादातीति

भगवान् श्रीकृष्ण उस प्रकार श्रम अपनोदन हेतु गोपिका कुल के सहित समवेत होकर कालिन्दी जल में अवगाहन किये थे। उस समय गोपाङ्गनागण की कुचकुङ्कुम रञ्जित पुष्पमाला में कतिपय भ्रमर सन्निविष्ट थे, वे गन्धर्वपति के समान मधुर सङ्गीत करते करते उनका अनुसरण करने लगे ॥२॥

एइमत महाप्रभु भ्रमिते भ्रमिते ।
आइटोटा हैते समुद्र देखे आचम्बिते ॥२४
चन्द्रकान्त्ये उछलित तरङ्ग उज्ज्वल ।
झलमल करे येन यमुनार जल ॥२५
यमुनार भ्रमे प्रभु धाइया चलिला ।
अलक्षिते याइ सिन्धुजले झाँप दिला ॥२६
पड़ितेइ हैल मूर्च्छा, किछुइ ना जाने ।
कभु डुबाय, कभु भासाय तरङ्गेरगणे ॥२७
तरङ्गे वहिया फिरे येन शुष्क काठ ।
के बुझिते पारे एइ चैतन्येर नाट ॥२८
कोनार्केर दिके प्रभुके तरङ्गे लैञा याय ।
कभु डुबाय, कभु भासाञा लैञा याय ॥२९
यमुनाते जलकेलि गोपीगणसङ्गे ।
कृष्ण करे, महाप्रभु मग्न सेइ रङ्गे ॥३०
इँहा स्वरूपादिगण प्रभुरे ना देखिया ।
"काँहा गेला प्रभु" कहे चमकित हैञा ॥३१
मनोवेगे गेला प्रभु लखिते नारिला ।
प्रभु ना देखिया संशय करिते लागिला ॥३२
"जगन्नाथ देखिते किबा देवालये गेला ।
अन्य उद्याने किबा उन्मादे पड़िला ॥३३
गुण्डिचामन्दिरे किबा गेला नरेन्द्रेरे ।
चटकपर्व्वते किबा गेला कोनार्केरे ॥३४"
एतबलि सबे फिरे प्रभुरे चाहिया ।
समुद्रेर तीरे आइला कत जन लैञा ॥३५
चाहिया बेड़ाइते ऐछे शेषरात्रि हैल ।
अन्तर्धान कैल प्रभु निश्चय करिल ॥३६॥
प्रभुर विच्छेदे कारो देहे नाहि प्राण ।
अनिष्ट-आशङ्का बिनु मने नाहि आन ॥३७

तथाहि अभिज्ञानशकुन्तलनाटके चतुर्थ-परिच्छेदे शकुन्तलां प्रति प्रियम्बदावाक्यम्—

अनिष्टाशङ्कीनि बन्धुहृदयानि भवन्ति हि ॥३॥

टीका—अनिष्टाशङ्कीनि बन्धुहृदयानि अनिष्टाशङ्कीनि अनिष्टे आशङ्का येषु तानि भवन्ति ॥३॥

बन्धुवृन्द के हृदय में अनिष्ट शङ्का ही समुदित होती है ॥३॥

समुद्रेर तीरे आसि युकति करिला ।
चिराइपर्व्वत दिके कत जन गेला ॥३८
पुर्व्वदिशाय चले स्वरूप लैञा कत जन ।
सिन्धुतीरे नीरे करे प्रभुर अन्वेषण ॥३९"
विषादे विह्वल सबे, नाहिक चेतन ।
तबु प्रेमबले करे प्रभुर अन्वेषण ॥४०
देखे एक जालिया आइसे कान्धे जाल करि ।
हासे कान्धे नाचे गाय बले हरि हरि ॥४१
जालियार चेष्टा देखि सबार चमत्कार ।
स्वरूपगोसाञि तारे पुछिल समाचार ॥४२
"कह जालिया, एइ दिके देखिले एक जन ?।
तोमार ए दशा केने कहत कारण ॥४३"
जालिया कहे "इँहा एक मनुष्य ना देखिल ।
जाल बाहिते एक मृतक मोर जाले आइल॥४४
बड़ मत्स्य बलि आमि उठाइल यतने ।
मृतक देखिते मोर भय हैल मने ॥४५
जाल खसाइते तार अङ्गस्पर्श हैल ॥
स्पर्शमात्रे सेइ भूत हृदये पशिल ॥४६

भये कम्प हैल मोर, नेत्रे वहे जल ।
गद्गद वाणी, रोम उठिल सकल ॥४७
किवा ब्रह्मदैत्य किबा भूत कहने ना याय ।
दर्शनमात्रे मनुष्येर पैशे सेइ काय ॥४८
शरीर दीर्घल तार, हाथ पाच सात !
एकेक हस्त पद तार, तिन तिन हात ॥४९
अस्थिसन्धि छुटिल, चर्म्म करे नड़बड़े ।
ताहा देखि प्राण कार नाहि रहे धड़े ॥५०
मड़ा-रूप धरि रहे उत्तान नयन ।
कभु गों गों करे, कभु अचेतन ॥५१
साक्षात् देखिआछ मुञि पाइल सेइ भूत ।
मुञि मैले मोर कैछे जीवे स्त्री-पुत ॥५२
सेइ त भूतेर कथा कहने ना याय ।
ओझा-ठाञि याइ, यदि से भूत छाड़ाय ॥५३
एका रात्रे बुलि, मत्स्य मारिये निर्ज्जने ।
भूत प्रेत ना लागे आमाय नृसिंह स्मरणे ॥५४
एइ भूत नृसिंह-नामे चापये द्विगुणे ।
ताहार आकार देखितेइ भय लागे मने ॥५५
ओथा ना याइह, आमि निषेधि तोमारे ।
ताँहा गेल सेइ भूत लागिबे सबारे ॥५६"
एत शुनि स्वरूपगोसाञि सब तत्त्व जानि ।
जालियाके किछु कय सुमधुर वाणी ॥५७
"आमि बड़ ओझा, जानि भूत छाड़ाइते ।"
मन्त्र पढ़ि श्रीहस्त दिल ताहार माथे ॥५८
तिन चापड़ मारि कहे, "भूत पलाइल ।
भय ना पाइओ" बलि सुस्थिर करिल ॥५९
एके प्रेम, आरे भय, द्विगुण अस्थिर ।
भय अंश गेल, सेइ हैल किछु धीर ॥६०
स्वरूप कहे, "यारे तुमि कर भूत-ज्ञान ।
भूत नहे तेँह कृष्णचैतन्य भगवान् ॥६१
प्रेमावेशे पड़िल तिँह समुद्रेर जले ।
ताँरे तुमि उठाइले आपनार जाले ॥६२
ताँर स्पर्शे हैल तोमार कृष्णप्रेमोदय ।
भूत-प्रेत-ज्ञाने तोमार हैल महाभय ॥६३
एवे भय गेल तोमार, मन हैल स्थिरे ।
काँहा ताँहारे उठाजाछ देखाह आभारे ॥६४"
जालिया कहे "प्रभुके देखियाछि बार बार ।
तिँहो नहे, एइ अति विकृति आकार ॥६५"
स्वरूप कहे "ताँर हय प्रेमेर विकार ।
अस्थिसन्धि छाड़े, हय अति दीर्घाकार ॥६६
शुनि सेइ जालिया आनन्दित हैल ।
सबा लैञा गेला, महाप्रभुके देखाइल ॥६७
भूमिते पड़िया आछे, दीर्घ सब काय ।
जले श्वेततनु, बालु लागियाछे गाय ॥६८
अति दीर्घ शिथिल तनु, चर्म्म नटकाय ।
दूर पथ उठाइया आनन ना याय ॥६९
आर्द्र कौपीन दूर करि शुष्क पराइया ।
वहिर्वासे शोयाइल बालुका झाड़िया ॥७०
सबे मिलि उच्च करि करे सकीर्त्तने ।
उच्चकरि कृष्णनाम कहे प्रभुर काणे ॥७१
कतक्षणे प्रभुर काणे शब्द प्रवेशिल ।
हुङ्कार करिया प्रभु तबहि उठिल ॥७२
उठितेइ अस्थि सब लागिल निज स्थाने ।
अर्द्धवाह्य इति उति करे दरशने ॥७३
तिन दशाय महाप्रभु रहे सर्व्वकाल ।
अन्तर्द्दशा, वाह्यदशा, अर्द्धवाह्य आर ॥७४

अन्तर्द्दशाय किछु घोर किछु वाह्यज्ञान ।
सेइ दशा कहे भक्त अर्द्धवाह्य नाम ॥७५
अर्द्धवाह्ये कहे प्रभु प्रलापवचने ।
आकाशे कहेन, सब शुने भक्तगणे ॥७६
"कालिन्दी देखिये आमि गेलाङ वृन्दावन ।
देखि जलक्रीड़ा करे व्रजेन्द्रनन्दन ॥७७
राधिकादि गोपीगणसङ्गे एकत्र मेलि ।
यमुनार जले महारङ्गे करे केलि ॥७८
तीरे रहि देखि आमि सखीगणसङ्गे ।
एक सखी सखीगणे देखाय से रङ्गे ॥७९"

यथाराग: ।

पट्टवस्त्र अलङ्कारे, समर्पिया सखीकरे,
सूक्ष्म शुक्ल वस्त्र परिधान ।
कृष्ण लैआ कान्तागण, कैल जलावगाहन,
जलकेलि रचिला सुठाम ॥८०
सखि हे ! देख कृष्णेर जलकेलिरङ्गे ।
कृष्ण मत्तकरिवर, चञ्चल कर पुष्कर,
गोपीगण-करिणीर सङ्गे ॥ध्रू॥८१
आरम्भिल जलकेलि, अन्योन्ये जल-फेलाफेलि,
हुड़ाहुड़ि बर्षे जलधार ।
सबे जय पराजय, नाहि किछु निश्चय,
जलयुद्ध बाढ़िल अपार ॥८२
बर्षे स्थिर तड़ित् घन, सिञ्चे श्याम नवघन,
घनबर्षे तड़ित-उपरे ।
सखीगणेर नयन, तृषित चातकीगण,
सेइ अमृत सुखे पान करे ॥८३
प्रथमे युद्ध जलाञ्जलि, तबे युद्ध कराकरि,
तार पाछे युद्ध मुखामुखि ।
तबे युद्ध हृदाहृदि, तबे हैल रदारदि,
तबे हैल युद्ध नखानखि ॥८४
सहस्र कर जल सेके, सहस्र नेत्रे गोपीदेखे,
सहस्रपदे निकट गमने ।
सहस्र मुख चुम्बने, सहस्र वपु सङ्गमे,
गोपी नर्म्म शुने सहस्र काने ॥८५
कृष्ण राधाय लैआ बले, गेला कण्ठलग्न जले,
छाड़ि ताँहा याहा अगाध पानी ।
तिँहो कृष्णकण्ठ धरि, भासे जलेर उपरि,
गजोत्घाते यैछे कमलिनी ॥८६
यत गोपसुन्दरी, कृष्ण तत रूप धरि,
सबार वस्त्र करिल हरणे ।
यमुनारजल निर्मल, अङ्ग करे झलमल,
सुखे कृष्ण करे दरशने ॥८७
पद्मिनीलता सखीचय, कैल कारो सहाय,
तरङ्ग हस्त पत्र समर्पिल ।
केह मुक्त केशपाश, आगे कैल अधोवास,
कहे हस्ते कञ्चुलि धरिल ॥८८
कृष्णेर कलह राधासने, गोपीगण सेइक्षणे,
हेमाब्जवने गेला लुकाइते ।
आकण्ठवपु जले पैशे, मुखमात्र जले भासे,
पद्म मुखे ना पारि चिनिते ॥८९
एथा कृष्ण राधासने, कैल ये आछिल मने,
गोपीगण अन्वेषिते गेला ।
तबे राधा सूक्ष्ममति, जानिया सखीर स्थिति,
सखीमध्ये आसिया मिलिला ॥९०
यत हेमाब्ज जले भासे, तत नीलाब्ज तार पाशे,
आसि आसि करये मिलन ।

नीलाब्ज हेमाब्जे ठेके, युद्ध हय प्रत्येके,
कौतुक देखे तीरे सखीगण ॥९१
चक्रवाक-मण्डल, पृथक् पृथक् युगल,
जल हैते करिल उद्गम ।
उठिल पद्ममण्डल, पृथक् पृथक् युगल,
चक्रबाके कैल आच्छादन ॥९२
उठिल बहु रक्तोतपल, पृथक् पृथक् युगल,
पद्मगणेर कैल निबारण ।
पद्म चाहे लुठि निते, उत्पल चाहे राखिते,
चक्रबाक लागि दोहार रण ॥९३
पद्मोत्पल अचेतन, चक्रबाक सचेतन,
चक्रबाके, पद्म आस्वादय ।
इँहा दुँहार उलटा स्थिति, हइल विपरीत,
कृष्णेर राज्ये ऐछे न्याय हय ॥९४
मित्रेर मित्र सहवासी, चक्रबाके लुठे आसि,
कृष्णेर राज्ये ऐछे व्यवहार ।
अपरिचित शत्रु मित्र, राखे उत्पल ए वड़ चित्र,
ए वड़ बिरोध-अलङ्कार ॥९५
अतिशयोक्ति बिरोधाभास, दुइ अलङ्कार प्रकाश,
करि कृष्ण प्रकट देखाइल ।
याहा करि आस्वादन, आनन्दित मोर मन,
नेत्र-कर्णयुग जुड़ाइल ॥९६
ऐछे विचित्र क्रीड़ा करि, तीरे आइला श्रीहरि,
सङ्गे लैञा सब कान्तागण ।
गन्ध-तैल मर्द्दन, आमलकी उद्वर्त्तन,
सेवा करे तीरे सखीगण ॥९७
पुनरपि कैल स्नान, शुष्क वस्त्र परिधान,
रत्नमन्दिरे कैल आगमन ।

वृन्दाकृत सम्भार, गन्ध पुष्प अलङ्कार,
वन्यवेश करिल रचन ॥९८
वृन्दावने तरुलता, अद्भुत ताहा कथा,
बारो मास धरे फुल फल ।
वृन्दावने देवीगण, कुञ्जदासी यत जन,
फल पाड़ी आनिया सकल ॥९९
उत्तम संङ्कार करि, बड़ बड़ थालि भरि,
रत्नमन्दिरे पिण्डार उपरे ।
भक्षणेर क्रम करि, धरियाछे सारिसारि,
आगे आसन वसिबार तरे ॥१००
एकनारिकेल नानाजाति,एक आम्र नानाभाति,
कला कोलि विवध प्रकार ।
पनस खर्ज्जुर कमला,नारङ्ग जाम समतारा,
द्राक्षा बादाम मेओया यत आर ॥१०१
खरमुजा क्षीरणी ताल,केशर पानिफल मृणाल
विल्व पीलू दाड़िम्बादि यत ।
कोन देशे कार ख्याति, वृन्दावने सब प्राप्ति,
सहस्र जाति लेखा याय कत ॥१०२
गङ्गाजल अमृतकेलि, पीयूषगन्थि कर्पूरकेलि,
सरपूपी अमृत पद्म-चिनि ।
खण्डखिरिसार बृक्ष, घरे करि नाना भक्ष्य,
राधा याहा कृष्ण लागि-आनि ॥१०३
भक्षेर परिपाटि देखि, कृष्ण हैल महासुखी,
वसि कैल वन्यभोजन ।
सङ्गे लैञा सखिगण, राधा कैल भोजन,
दुँहे कैल मन्दिरे शयन ॥१०४
केह करे बीजन केह पादसम्बाहन,
केह कराय ताम्बूल भक्षण ।

राधाकृष्ण निद्रा गेला, सखीगण शयन कैला,
देखि आमार सुखी हैल मन ॥१०५
हेनकाले मोरेधरि, महा कोलाहल करि,
तुमि सब इँह लैञा आइला ।
काँहा यमुना वृन्दावन, काँहा कृष्ण गोपीगण,
से सुख भङ्ग कराइला ॥१०६"
एतेक कहिते प्रभुर केवल वाह्य हैल ।
स्वरूपगोसाञिके देखि ताहारे पुछिल ॥१०७
"इँहा केने तोमरा सब आमाके लैञा आइला ।"
स्वरूपगोसाञि तबे कहिते लागिला ॥१०८
"यमुनार भ्रमे तुमि समुद्रे पड़िला ।
समुद्रेर तरङ्गे भासि एत दूरे आइला ॥१०९
एइ जालिया जाले करि तोमाय उठाइला ।
तोमार परशे एइ प्रेमे मत्त हैला ॥११०
सब रात्रि सबे वेड़ाइ तोमारे अन्वेषिया ।
जालियार मुखे शुनि पाइलुँ आसिया ॥१११
तुमि मूर्च्छा छले वृन्दावने देख क्रीड़ा ।
तोमार मूर्च्छा देखि सबे मने पाइ पीड़ा॥११२
कृष्णनाम लैते तोमार अर्द्धवाह्य हैल ।
ताते ये प्रलाप कैले ताहाओ शुनिल ॥११३
प्रभु कहे "स्वप्ने देखि, गेलाङ वृन्दावने ।
देखि, कृष्ण रास करेन गोपीगण सने ॥११४
जलक्रीड़ा करि कैल वन्यभोजने ।
देखि आमि प्रलाप कैल हेन लय मने ॥११५"
तबे स्वरूपगोसाञि ताँरे स्नान कराइया ।
प्रभुरे लैञा घर आइला आनन्दित हैञा ॥११६
एइत कहिल प्रभुर समुद्र पतन ।
इहा येइ शुने पाय चैतन्य चरण ॥११७
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्य चरितामृत कहे कृष्णदास ॥११८

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे
समुद्रपतनं नाम अष्टादशः परिच्छेदः ॥१८॥



ऊनविंश परिच्छेद ।

वन्दे तं कृष्णचैतन्यं मातृभक्तशिरोमणिं ।
प्रलप्य मुखसंघर्षी मधूद्याने ललास यः ॥१॥

टीका— यः मुखसंघर्षी सन् प्रलप्य मधूद्याने वसन्तकाले जगन्नाथवल्लभाख्यविपिने ललास रराज, तं मातृभक्तशिरोमणिं कृष्णचैतन्यं वन्दे ॥१॥

जो मुख संघर्षणपूर्वक प्रलापोक्ति प्रयोग करके वसन्त ऋतु में जगन्नाथ वल्लभाख्य पुष्प कानन में विराजित थे मैं उन मातृभक्त चूड़ामणि श्रीचैतन्यदेव की वन्दना करता हूँ ॥१॥

जय जय श्रीचैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१
एइमते महाप्रभु कृष्णप्रेमावेशे ।
उन्माद प्रलाप करे रात्रि-दिवसे ॥२
प्रभुर अत्यन्त प्रिय पण्डित जगदानन्द ।
याँहार चरित्रे प्रभु पायेन आनन्द ॥३
प्रति वतसर प्रभु ताँरे पाठान नदीयाते ।
विच्छेद-दुःखिता जानि जननी आश्वासिते॥४
"नदीया चलह, माताके कहिय नमस्कार ।
आमार नामे पादपद्म धरिह ताँहार ॥५
कहिय ताँहारे "तुमि करह स्मरण ।
नित्य आसि आमि तोमार बन्दिये चरण ॥६

ये दिने तोमार इच्छा कराइते भोजन ।
से दिने अवश्य आमि करिये भक्षण ॥७
तोमार सेवा छाड़ि आमि करिल सन्यास ।
बाउल हइया आमि कैल धर्म्मनाश ॥८
एइ अपराध तुमि ना लइह आमार ।
तोमार अधीन आमि पुत्र से तोमार ॥९
नीलचले आछि आमि तोमार आज्ञाते ।
यावत् जीव, तावत् आमि नारिव छाड़िते ॥१०"
गोपलीलाय पाये सेइ प्रसाद-वसने ।
माताके पाठान ताहा पुरीर वचने ॥११
जगन्नाथेर उत्तम प्रसाद आनाञा यतने ।
माताके पृथक् पाठान आर भक्तगणे ॥१२
मातृभक्तगणेर प्रभु हन शिरोमणि ।
सन्न्यास करिया सदा सेवेन जननी ॥१३
जगदानन्द नदीया गिया माताके मिलिला ।
प्रभुर यत निवेदन सकल कहिला ॥१४
आचार्य्यादि भक्तगणे मिलिला प्रसाद दिया ।
माता ठाञि आज्ञा लैल मासेक रहिया ॥१५
आचार्य्येर ठाञि गिया आज्ञा मागिल ।
आचार्य्यगोसाञि प्रभुके सन्देश कहिल ॥१६
तरजा प्रहेली आचार्य्य कहे ठारे ठोरे ।
प्रभुमात्र बुझे केह बुझिते ना पारे ॥१७
"प्रभुके कहिओ आमार कोटि नमस्कार ।
एइ निवेदन ताँर चरणे आमार ॥१८
बाउलके कहिय, लोके हइल आउल ।
बाउलके कहिय हाटे, ना विकाय चाउल॥१९
बाउलके कहिय, काजे नाहिक आउल ।
बाउलके कहिय, इहा कहियाछे बाउल ॥२०"
एत शुनि जगदानन्द हासिञा चलिला ।
नीलाचले आसि तबे प्रभुके कहिला ॥२१
तरजा शुनि महाप्रभु ईषत हासिला ।
"ताँर येइ आज्ञा" बलि मौन करिला ॥२२
जानिया स्वरूपगोसाञि प्रभुके पूछिल ।
"एइ तरजार अर्थ बुझिते नारिल ॥२३"
प्रभु कहे "आचार्य्य हय पूजक प्रबल ।
आगमशास्त्रेर बिधि बिधाने कुशल ॥२४
उपासना लागि देवेर करे आवाहन ।
पूजा लागि कतक काल करे निरोधन ॥२५
पूजानिर्व्वाह हैले पाछे करे विसर्ज्जन ।
तरजार ना जानि अर्थ, किवा ताँर मन ॥२६
महायोगेश्वर आचार्य्य तरजाते समर्थ ।
आमिह बुझिते नारि तरजार अर्थ ॥२७"
शुनिया विस्मित हैला सब भक्तगण ।
स्वरूपगोसाञि किछु हइला विमन ॥२८
सेइ दिन हैते प्रभुर आर दशा हैल ।
कृष्णेर विरह दशा द्विगुण बाढ़िल ॥२९
उन्माद-प्रलाप-चेष्टा करे रात्रिदिने ।
राधाभावावेशे विरह बाढ़े अनुक्षणे ॥३०
आचम्बिते स्फुरे कृष्णेर मथुरागमन ।
उद्घूर्णादिशा हइल उन्मादलक्षण ॥३१
रामानन्देर गला धरि करेन प्रलपन ।
स्वरूपे पूछेन मानि निज सखीजन ॥३२
पूर्व्वे येन विशाखाके राधिका पूछिला ।
सेइ श्लोक पढ़ि प्रलाप करिते लागिला ॥३३

तथाहि ललितमाधवे (३२५)—

क्व नन्दकुलचन्द्रमाः क्व शिखिचन्द्रिकालङ्कृतिः,
क्वः मन्दमुरलीरवः क्व तु सुरेन्द्रनीलद्युतिः ।

क्व रासरसताण्डवी क्व सखि जीवरक्षौषधि-
निधिर्म्मम सुहृत्तमः क्व वत हन्त हा धिग् विधिम् ॥२

टीका—हे सखि ! नन्दकुलचन्द्रमाः नन्दवंशशशङ्कः क्व कुत्र, शिखिचन्द्रिकालङ्कृतिः मयूरपुच्छभूषितः कृष्णः क्व कुत्र । मन्दमुरलीरवः क्व, नु भोः सुरेन्द्रनीलद्युतिः इन्द्रनीलकान्ति क्व, जीवरक्षौषधिः प्राणरक्षौषधिरूपः क्व, मम निधिः सहृत्तम कृष्णः वत विस्मये क्व, हन्त हा खेदे विधि धिक् ॥२॥

श्रीराधिका कृष्ण विच्छेद में विशाखा सखी के निकट उत्कण्ठा व्यक्तकर कह रही है— हे सखि ! नन्दकुल चन्द्रमा कहाँ ? जो मयूर वर्ह विभूषित है, वह कहाँ है ? जिनके मुरलीरव मृदुमन्द है, वह कहाँ है ? जिनकी अङ्गकान्ति इन्द्रनीलमणि के सदृश है, वह कहाँ है ? जो रास रस नृत्य परायण हैं, वह कहाँ है ? जो मेरी प्राण रक्षा के महौषधि स्वरूप है, वह कहाँ है ? जो मदीय अमूल्य निधि एवं परम सुहृत स्वरूप है, वह कहाँ है ? हा विधे तुम्हें धिक्॥२

यथाराग: ।

व्रजेन्द्रकुल-दुग्धसिन्धु, कृष्ण ताहे पूर्ण इन्दु,
जन्मि कैल जगत उजोर ।
कान्त्यामृत येवा पिये, निरन्तर पिया जीये,
व्रजजनेर नयन-चकोर ॥३४
सखि हे ! कोथा कृष्ण कराह दरशन ।
क्षणेके याँहार मुख, ना देखिले फाटे बुक,
शीघ्र देखाओ, ना रहे जीवन ॥ध्रु॥३५
एइ व्रजेर रमणी, कामार्क-तप्त कुमुदिनी,
निजकरामृत दिया दान ।
प्रफुल्लित करे येइ, काँहा मोर चन्द्र सेइ,
देखाओ सखि ! राख मोर प्राण ॥३६
काँहा से चूड़ार ठाम, शिखि पुच्छेर उड़ान,
नव मेघे येन इन्द्रधनु ।
पीताम्बर तड़िद्द्युति, मुक्तामाला वकपाँति,
नवाम्बुद जिनि श्याम तनु ॥३७
एकबार यार नयने लागे, सदा तार हृदये जागे,
कृष्ण तनु येन आम्र-आठा ।
नारीर मने पशि याय, यत्ने नाहि वाहिराय,
तनु नहे, सेया कुलेर काँटा ॥३८
जिनिया तमालद्युति, इन्द्रनीलसम कान्ति,
ये कान्तिते जगतमाताय ।
शृङ्गाररससार छानि, ताते चन्द्र-ज्योत्स्ना सानि,
जानि विधि निरमलताय ॥३९
काँहा से मुरलीध्वनि, नवाम्बुद गर्ज्जित जिनि,
जगदाकर्षे श्रवणे याहार ।
उठिधाय व्रजजन, तृषित चातकगण,
आसिपिये कान्त्यामृतधार ॥४०
मोर सेइ कलानिधि, प्राणरक्षामहौषधि,
सखि ! मोर तेँहो सुहृत्तम ।
देह जीये ताँहा विने, धिक् एइ जीवने,
विधि करे एत विड़म्बन ॥४१
ये जन जीते नाहि चाय, तारे केने जीयाय",
बिधि प्रति उठे क्रोध शोक ।
विधिके करे भर्त्सन, कृष्णे देय ओलाहन,
पढ़ि भागवतेर एक श्लोक ॥४२

तथाहि श्रीमद्भागवते (१०।३९।१९)—

अहो विधातस्तव न क्वचिद्दया,
संयोज्य मैत्र्या प्रणयेन देहिनः ।
तांश्चाकृतार्थान् वियुनङ्क्ष्यपार्थकं,
विचेष्टितं तेऽर्भकचेष्टितं यथा ॥३॥

टीका—अहो खेदे, हे विधातः ! तव न क्वचित दया अस्ति, यतः देहिनः मैत्र्या हितानुष्ठानेन, तथा प्रणयेन संयोज्य तान् अकृतार्थांश्च वियुनङ्क्षि वियोजयसि, अर्भकचेष्टितं यथा शिशुचेष्टितमेव ते तव

विचेष्टितं अपार्थकं निष्प्रयोजनं मन्ये ॥३॥

श्रीमद्भागवत के १०।३६।१६ में उक्त है—

कृष्ण विच्छेद की सम्भावना की विधि के प्रति आक्रोश कर गोपिका कहीं थी, हे विधे ! तुम्हारे हृदय में दया का लेश भी नहीं है, यदि होता तो देहीगण को मैत्री एवं स्नेह से परस्पर युक्तकर अतृप्त अवस्था में वियुक्त क्यों करते ? समझ गई हूँ, यह तुम्हारी क्रिया शिशुके कार्य्य के समान निरर्थक है॥३

अस्यार्थो यथारागः ।

"ना जानिस् प्रेम मर्म्म, व्यर्थ करिस् परिश्रम,
तोर चेष्टा बालक समान ।
तोर यदि लागि पाइये, तबे तोरे शिक्षा दिये,
एमत येन ना करिस् विधान ॥४३
अहो बिधि ! तों बड़ निठुर ।
अन्योन्य दुर्लल्ल जन, प्रेमे कराजा सम्मिलन,
अकृतार्थे केन करिस् दूर ॥ध्रु॥४४
अरे विधि ! अकरुण, देखाइया कृष्णानन,
नेत्रमन लोभाइलि आमार ।
क्षणेक करिते पान, काढ़ि निलि अन्य स्थान,
पाप कैलि दत्त-अपहार ॥४५
अक्रूर करे तोमार दोष, कर आमाय केन रोष,
इहा यदि कह दुराचार ।
तुजि अक्रूरमूर्त्तिधरि, कृष्णे निलि चुरि करि,
अन्येर नहे ऐछे व्यवहार ॥४६
आपनार कर्म्मदोष, तोरे किवा करि रोष,
तोर मोर सम्बन्ध विदूर ।
ये आमार प्राणनाथ, एकत्र रहि तार साथ,
सेइ कृष्ण हइल निष्ठुर ॥४७
सब त्यजि भजि यारे, सेइ आपन हाते मारे,
नारी बधे कृष्णेर नाहि भय ।
तार लागि आमि मरि, उलटि ना चाहे हरि;
क्षणमात्रे भाङ्गिलप्रणय ॥४८
कृष्णेरे केन करि रोष, आपन दुर्द्दैव-दोष,
पाकिल मोर एइ पापफल ।
ये कृष्ण मोर प्रेमाधीन, तारे कैले उदासीन,
येइ मोर अभाग्य प्रबल ॥४९"
एइमत गौरराय, विषादे करे "हाय हाय;
हा हा कृष्ण ! तुमि गेले कति ।"
गोपीभाव हृदये, तार वाक्य बिलपये,
गोविन्द दामोदर माधवेति ॥५०
तबे स्वरूप रामराय, करि नाना उपाय,
महाप्रभुर करे आश्वाशन ।
गायेन सङ्गमगीत, प्रभुर फिराइते चित,
प्रभुर किछु स्थिर हैल मन ॥५१

एइमत बिलपिते अर्द्धरात्रि गेल ।
गम्भीराते स्वरूपगोसाञि प्रभुरे शोयाइल॥५२
प्रभुरे शोयाजा रामानन्द गेला घरे ।
स्वरूप गोविन्द शुइला गम्भीरार द्वारे ॥५३
प्रेमावेशे महाप्रभुर गरगर मन ।
नामसंकीर्त्तन करे वसि करे जागरण ॥५४
बिरहे व्याकुल प्रभुर उद्वेग उठिला ।
गम्भीराभितरे मुख घर्षिते लागिला ॥५५
मुखे गण्डे नाके क्षत हइल अपार ।
भावावेशे ना जाने प्रभु, पड़े रक्तधार ॥५६
सर्व्व रात्रि करे भावे मुख सङ्घर्षण ।
गों गों शब्द करे, स्वरूप शुनिल तखन ॥५७
दीप ज्वालि घरे गेला, देखि प्रभुर मुख ।
स्वरूप गोविन्द दुँहार हैल महा दुःख ॥५८

प्रभुके शय्याते आनि शयन कराइल ।
"काँहा कैले एइ तुमि" ? स्वरूप पूछिल ॥५९
प्रभु कहे "उद्वेगे घरे ना पारि रहिते ।
द्वार चाहि फिरि शीघ्र बाहिर हइते ॥६०
दार ना पाइया मुख लागे चारि भिते ।
क्षत हय, रक्त पड़े, ना पारि याइते ॥६१"
उन्माददशाय प्रभुर स्थिर नहे मन ।
ये करे, ये बोले, सब उन्मादलक्षण ॥६२
स्वरूपगोसाञि तबे चिन्ता पाइल मने ।
भक्तगण लैञा बिचार कैल आर दिने ॥६३
सब भक्त मिलि तबे प्रभुरे साधिल ।
शङ्करपण्डिते प्रभुर सङ्गे शोयाइल ॥६४
प्रभुर पादतले शङ्कर करेन शयन ।
प्रभु तार उपर करेन पादप्रसारण ॥६५
प्रभुपादोपधान बलि तार नाम हैल ।
पूर्व्वे विदुरे येन श्रीशुक बर्णिल ॥६६

तथाहि श्रीमद्भागवते (३।१३।५)—

इति ब्रुवाणं विदुरं विनीतं,
सहस्रशीर्ष्णश्चरणोपधानं ।
प्रहृष्टरोमा भगवत्कथायां,
प्रणीयमानो मुनिरभ्यचष्ट ॥४॥

टीका—भगवत्कथायां प्रणीयमानः मुनिः मैत्रेयनामाऋषिः प्रहृष्टरोमाः सन् इति एवम्प्रकारेण विनीतः यथा स्यात्तथा ब्रुवाणं विदुरं अभ्यचष्ट कथयामास । विदुरं किम्भूतं ?—सहस्रशीर्ष्णः हरेः चरणोपधानं ॥४॥

श्रीमद्भागवत के ३।१३।५ में उक्त है—

शुकदेव परीक्षित् महाराज को कहे थे—हे राजन् ! भगवान् हरि जिनको निज पादोपधान किये थे, वह विदुर विनीत होकर जिज्ञासा करने पर भगवत् कथा में प्रवर्त्तमान मैत्रेय ऋषि आनन्द से पुलकायित होकर कहना प्रारम्भ किए थे ॥४॥

शङ्कर करेन प्रभुर पादसम्बाहन ।
घुमाञा पड़ेन तैछे करेन शयन ॥६७
उघाडि अङ्गे पड़िया शङ्कर निद्रा याय ।
प्रभु उठि आपन काँथा तारे ओड़ाय ॥६८
निरन्तर घुमाय शङ्कर शीघ्र चेतन ।
वसि पाद चापि करे रात्रि जागरण ॥६९
ताहार भये नारे प्रभु बाहिर याइते ।
तार भये नारे भिते मुखाब्ज घर्षिते ॥७०
एइ लीला महाप्रभुर रघुनाथदास ।
चैतन्यस्तवकल्पवृक्षे करियाछे प्रकाश ॥७१॥

तथाहि स्तवावल्यां चैतन्यस्तवकल्पवृक्षे षष्ठश्लोके रघुनाथदासवाक्यं ।—

स्वकीयस्य प्राणार्व्वुदसदृशगोष्ठस्य विरहात्,
प्रलापानुन्मादात् सततमतिकुर्व्वन् विकल धीः ।
दधद्भित्तौ शश्वद्वदनविधुघर्षेण रुधिरं,
क्षतोत्थं गौराङ्गो हृदय उदयन्मां मदयति ॥५॥

टीका—स्वकीयस्य स्वस्य प्राणार्व्वुदसदृशगोष्ठस्य दशकोटीप्राणातुल्यवृन्दावनस्य विरहात् विच्छेदवशात् उन्मादात् मत्तताहेतोः सततं सदा प्रलापान् अतिकुर्व्वन् विकलधीः विकलमानसः सन् भित्तौ शश्वत् सर्व्वदा वदनविधुघर्षेण आननचन्द्रघर्षेण क्षतोत्थं रुधिरं दधत् सन् गौराङ्गः मे मम हृदये उदयन् मां मदयति ॥५॥

निज दशकोटि प्राणतुल्य व्रजपुर के विच्छेद से उन्मत्त होकर जो निरन्तर प्रलाप करते करते विह्वल होते थे, सर्वदा भित्ति में वदन चन्द्र के घर्षण हेतु क्षत स्थल से शोणित धारा क्षरित होती वह गौराङ्ग मदीय हृदय पटल में उदित होकर मुझको अतीव कातर कर रहे हैं ॥५॥

एइमत महाप्रभु रात्रि दिवसे ।
प्रेमसिन्धु मगन रहे, कभु डुबे भासे ॥७२

एककाले वैशाखेर पौर्णमासी दिने ।
रात्रिकाले महाप्रभु चलिला उद्याने ॥७३
जगन्नाथवल्लभ नाम उद्यान-प्रधाने ।
प्रवेश करिला प्रभु लञा भक्तगणे ॥७४
प्रफुल्लित वृक्ष-वल्ली, येन वृन्दावन ।
शुक शारी पिक भृङ्ग करे आलापन ॥७५
पुष्पगन्ध लैञा वहे मलयपवन ।
गुरु हैञा तरुलता शिक्षाय नाचन ॥७६
पूर्णचन्द्रचन्द्रिकाय परम उज्ज्वल ।
तरुलतादि ज्योत्स्नाय करे झलमल ॥७७
छयऋतुगण याँहा वसन्त प्रधान ।
देखि आनन्दित हैल गौर भगवान् ॥७८
"ललितलवङ्गलता" पद गाओयाइया ।
नृत्य करि बुले प्रभु निजगण लैञा ॥७९
प्रतिवृक्षवल्ली ऐछे भ्रमिते भ्रमिते ।
अशोकेर तले कृष्ण देखे आचम्बिते ॥८०
कृष्ण देखि महाप्रभु धाइया चलिला ।
आगे देखि हासि कृष्ण अन्तर्धान हैला ॥८१
आगे पाइल कृष्ण तारे पुनः हाराइया ।
भूमिते पड़िल प्रभु मूर्च्छित हइया ॥८२
कृष्णेर श्रीअङ्गगन्धे भरियाछे उद्यान ।
सेइ गन्ध पाञा प्रभु हैला अचेतन ॥८३
निरन्तर नाशाय पैशे कृष्ण-परिमल ।
गन्ध आस्वादिते प्रभु हइला पागल ॥८४
कृष्णगन्धलुब्ध राधा सखीके ये कहिला ।
सेइ श्लोक पढ़ि प्रभु अर्थ करिला ॥८५

तथाहि गोविन्दलीलामृते (८।६)—

कुरङ्गमदजिद्वपुः परिमलोर्म्मिकृष्टाङ्गकः,
स्वकाङ्गनलिनाष्टके शशियुताब्जगन्धप्रथः ।
मदेन्दुवरचन्दनागुरुसुगन्धचर्च्चार्चितः,
स मे मदनमोहनः सखि तनोति नासास्पृहां ॥६॥

टीका—हे सखि ! सः मदनमोहनः कृष्णः मे मम नासास्पृहां नासिकायाः वासनां तनोति विस्तारयति । किम्भूतः सः ?—कुरङ्गमदजिद्वपुः परिमलोर्म्मि-कृष्टाङ्गकः कुरङ्गमदात् कस्तूरिकागन्धात् श्रेष्ठस्य वपुषः परिमलः तस्य उर्म्मिभिः कृष्टानि आकृष्टानि वराङ्गनाङ्गकानि येन सः । पुनः किम्भूतः? स्वकाङ्ग-नलिनाष्टके निजाङ्गकमलस्य नयनाभिमुखहस्त पदाष्टके शशियुताब्जगन्धप्रथः कर्पूरेण सह पद्मगन्धस्य ख्यातिर्यस्य सः । पुनः किम्भूतः ? मदेन्दुवरचन्दना-गुरुसुगन्धचर्च्चार्च्चितः मदः कस्तूरी कर्पूरः चन्दनं शुभ्रचन्दनं अगुरु एषां सुगन्धचर्च्चाभिः अर्च्चितः ॥६॥

राधिका विशाखा को सम्बोधन कर बोली—हे सखि ! जो कस्तूरी गन्धापेक्षा भी सुरभितर अङ्ग सौरभ के प्रवाहाघात से व्रजरमणीवृन्द के अङ्ग समूह को आकर्षण करते हैं, जिनके वदन, चक्षु, नाभि, हस्त, पद प्रभृति अष्ट अङ्ग कमल में कर्पूर एवं कमल गन्ध निहित है, जो कस्तूरी, कर्पूर, श्वेत चन्दन एवं अगुरु के द्वारा निरन्तर पूजित होते हैं, वह मदनमोहन कृष्ण मदीय नासिका की लालसा वर्द्धित कर रहे हैं ॥६॥

यथाराग: ।

कस्तूरीलिप्त नीलोत्पल, तार येइ परिमल,
ताहा जिनि कृष्ण-अङ्गगन्ध ।
व्यापे चौद्द भुवने, करे सर्व्व आकर्षणे,
नारीगणेर आँखि करे अन्ध ॥८६
सखि हे ? कृष्णगन्ध जगत माताय ।
नारीर नासाते पैशे, सर्व्वकाल ताँहा वैसे,
कृष्णपाशे धरि लैञा याय ॥ध्रू॥८७
नेत्र नाभि वदन, करयुग चरण,
एइ अष्ट पद्म कृष्ण-अङ्गे ।
कर्पूरलिप्त कमल, तार यैछे परिमल,
सेइ गन्ध अष्टपद्म-सङ्गे ॥८८

हेमकीलित चन्दन, ताहा करि घर्षण,
ताहे अगुरु कुङ्कुम कस्तूरी ।
कर्पूरसने चर्च्चा अङ्गे, पूर्व्व अङ्गेर गन्धसङ्गे,
मिलि ताके येन कैल चुरि ॥८९

हरे नारीर तनुमन, नासा करे घूर्णन,
खसाय नीवि, छुटाय केशबन्ध ।
करे आगे वाउरी, नाचाय जगत-नारी,
हेन डाकाइत कृष्ण-अङ्गगन्ध ॥९०

सेइ गन्धवश नासा, सदा करे गन्धेर आशा,
कभु पाय, कभु नाहि पाय ।
पाइले पिया पेट भरे, पिङ पिङ तबु करे,
ना पाइले तृष्णाय मरि याय ॥९१

मदनमोहन नाट, पसारि चाँदेर हाट,
जगन्नारी ग्राहक लोभाय ।
विनि मूले देय गन्ध, गन्धदिया करे अन्ध,
घर याइते पथ नाहि पाय ॥९२

एइमत गौरहरि, गन्धे कैल मन चुरि,
भृङ्ग प्राय इति उति धाय ।
याय वृक्षलता-पाशे, कृष्ण स्फूरे सेइ आशे,
कृष्ण ना पाय, गन्धमात्र पाय ॥९३

स्वरूप रामानन्द गाय, प्रभु नाचे सुख पाय,
एइमते प्रातःकाल हैल ।
स्वरूप रामानन्दराय, करि नाना उपाय,
महाप्रभु वाह्यस्फूर्त्ति कैल ॥९४

मातृभक्ति प्रलापन, भित्त्ये मुखघर्षण,
कृष्णगन्ध-स्फूर्त्ते दिव्य नृत्य ।
एइ चारि लीला-भेदे, गाइल एइ परिच्छेदे,
कृष्णदास रूपगोसाञिर भृत्य ॥९५

एइमत महाप्रभु पाइया चेतन ।
स्नान करि कैल जगन्नाथ दरशन ॥९६
अलौकिक कृष्णलीला, दिव्यशक्ति ताँर ।
तर्केर गोचर नहे चरित्र याँहार ॥९७
एइ प्रेमा सदा जागे याहार अन्तरे ।
पण्डितेओ तार चेष्टा बुझिते ना पारे ॥९८

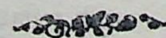
तथाहि भक्तिरसामृतसिन्धौ पूर्व्वविभागे प्रेमभक्ति-लहर्य्यां द्वादशश्लोके श्रीरूपगोस्वामिवाक्यम्—

धन्यस्यायं नवप्रेमा यस्योन्मीलति चेतसि ।
अन्तर्व्वाणीभिरप्यस्य मुद्रा सुष्ठु सुदुर्गमा ॥७॥

जिस साधक के हृदय में नव प्रेम सञ्चारित होकर उसको कृतार्थ किया है, तदीय चित्त का विवरण एवं भजन व्यवहारादि अतीव सुदुर्गम हैं, अर्थात् सरलतासे बोधगम्य नहीं हो सकते हैं ॥७॥

अलौकिक प्रभुर चेष्टा प्रलाप शुनिया ।
तर्क ना करिह शुन विश्वास करिया ॥९९
इहार सत्यत्वे प्रमाण श्रीभागवते ।
श्रीराधार प्रेम प्रलाप भ्रमरगीताते ॥१००
महिषीर गीत येन दशमेर शेषे ।
पण्डिते ना बुझे तार अर्थ सविशेषे ॥१०१
महाप्रभु नित्यानन्द दुँहार दासेर दास ।
यारे कृपा करे, तार इहाते विश्वास ॥१०२
श्रद्धाकरि शुन इहा, शुनिते महा सुख ।
खण्डिवे आध्यात्मिकादि सकल दुःख ॥१०३
श्रीचैतन्यचरितामृत नित्य नूतन ।
शुनिते शुनिते जुड़ाय हृदय श्रवण ॥१०४
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१०५

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे विरह प्रलापमुख-घर्षणादिवर्णनं नाम ऊनविंशः परिच्छेदः ॥१९॥



विंश परिच्छेद ।

प्रेमोद्भावितहर्षोद्वेगदैन्यार्त्तिमिश्रितं ।
लपितं गौरचन्द्रस्य भाग्यवद्भिर्निषेव्यते ॥१॥

टीका—भाग्यवद्भिः साधुभिः गौरचन्द्रस्य लपितं निषेव्यते । लपितं किम्भूतं ? प्रेमोद्भावितहर्षेर्षोद्वेग-दैन्यार्त्तिमिश्रितं प्रेम्ना हेतुना उद्भाविताभिः प्रकाशिताभिः हर्षेर्षोद्वेगदैन्यार्त्तिभिः मिश्रितं एकत्रितं ॥१॥

भाग्यवान् साधु व्यक्तिवृन्द ही श्रीगौराङ्ग के प्रेम हेतु प्रकाशित हुये, ईर्षा, उद्वेग, दैन्य एवं आर्त्ति के द्वारा विशिष्ट प्रलाप को सुनते हैं ॥१॥

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द ॥१॥
एइमत महाप्रभु वैसे नीलाचले ।
रजनी दिवसे कृष्णविरह विह्वले ॥२
स्वरूप रामानन्द एइ दुइजन सने ।
रात्रिदिने करे रसगीत श्लोक-आस्वादने ॥३
नाना भाव उठे प्रभुर, हर्ष शोक रोष ।
दैन्योद्वेगार्त्ति उत्कण्ठा सन्तोष ॥४
सेइ सेइ भावे निज श्लोक पड़िया ।
श्लोकेर अर्थ आस्वादये दुइ बन्धु लैञा ॥५
कोन दिने कोन भावे श्लोक पठन ।
सेइ श्लोक आस्वादिते रात्रि जागरण ॥६
हर्षे प्रभु कहे "शुन स्वरूप रामराय ।
नामसंकीर्त्तन कलौ परम उपाय ॥७
संकीर्त्तनयज्ञे कलौ कृष्ण आराधन ।
सेइत सुमेधा पाय कृष्णेर चरण ॥८"

तथाहि श्रीमद्भागवते (११।५।३२)—

कृष्णवर्णं त्विषाकृष्णं साङ्गोपाङ्गास्त्रपार्षदं ।
यज्ञैः संकीर्त्तनप्रायै र्यजन्ति हि सुमेधसः ॥२॥

श्रीमद्भागवत के ११।५।३२ में उक्त है—

कर भाजन योगीन्द्र निमि महाराज को कहे थे-हे राजन् ! कृष्णवर्ण-इन्द्रनीलमणिवत् ज्योतिः सम्पन्न, एवं उपाङ्ग तदवयव श्रीवासादि के सहित, अस्त्र एवं गोविन्द गदाधरादि रूप पार्षदवृन्द के सहित भगवान् जिस समय अवतीर्ण होते हैं, विवेकी मनुष्यगण उस समय नाम सङ्कीर्त्तन रूप यज्ञ के द्वारा उनकी पूजा करते हैं ॥२॥

नामसंकीर्त्तने हय सर्व्वानर्थनाश ।
सर्व्वशुभोदय कृष्णप्रेमेर उल्लास ॥६॥

तथाहि पद्यावल्यां सप्तमाङ्कधृत
श्रीकृष्णचैतन्यदेवस्य श्लोकः—

चेतोदर्पणमार्ज्जनं भवमहादावाग्निनिर्व्वापणं,
श्रेयः कैरवचन्द्रिकावितरणं विद्यावधूजीवनं ।
आनन्दाम्बुधिबर्द्धनंप्रतिपदं पूर्णामृतास्वादनं,
सर्व्वात्मस्नपनं परः विजयते श्रीकृष्णसंकीर्त्तनं ॥३॥

टीका—श्रीकृष्णसङ्कीर्त्तनं परं सर्व्वोत्कर्षेण विजयते । सङ्कीर्त्तनं किम्भूतं ?—चेतोदर्पणमार्ज्जनं मानसदर्पणस्य मालिन्यापहारकं । पुनः किम्भूतं ?—भवमहादावाग्निनिर्व्वापणं संसाररूपदावानल-निवारकं, पुनश्च श्रेयः कैरवचन्द्रिकावितरणं श्रेयएव कल्याणमेव कैरवं श्वेतपद्मं श्रेयः श्वेत-पद्ममिव शुक्लं अतिपवित्रमित्यर्थः तस्मिन् चन्द्रिकां वितरितुं शीलं यस्य तत् । पुनश्च विद्यावधुजीवनं पराविद्यारूपवध्वाः जीवनतुल्यं । पुनः कथम्भूतः ? आनन्दाम्बुधिबर्द्धनं सुखसागरंबर्द्धितुं शीलं यस्य तत् । पुनः किम्भूतं ? प्रतिपदं यथास्यात्तथा पूर्णामृता-स्वादनं । पुनः किम्भूतं ? सर्व्वात्मस्नपनं ॥३॥

जो मानस दर्पण के मालिन्य को विदूरित करता है, जो भवरूप दावानल के निवारक है, जो परम मङ्गलपथ रूप श्वेत पद्म के शुभ्र ज्योत्स्ना सदृश है, जो पराविद्या बधू के प्राण स्वरूप है, जिसका श्रवण करने से आनन्द सागर उद्वेलित हो उठता है, जिसके पद पद में सुधास्वाद पूर्णरूप में

विराजमान है, जो आत्मा को रसभाव से स्नान कराकर अभूतपूर्व प्रीति सुख विवरण करता है, वह हरि सङ्कीर्त्तन जय युक्त हो ।।३।।

संकीर्त्तन हैते पाप संसारनाशन ।
चित्तशुद्धि, सर्व्वभक्तिसाधन-उद्गम ।।१०
कृष्णप्रेमोद्गम, प्रेमामृत-आस्वादन ।
कृष्णप्राप्ति, सेवामृतसमुद्रे मज्जन ।।११
उठिल विषाद दैन्य, पढ़े आपन श्लोक ।
याहार अर्थ शुनि सब याय दुःख शोक ।।१२

तथाहि पद्यावल्यां एकोनविंशाङ्कधृतः श्रीकृष्णचैतन्य देवस्य श्लोक—

नाम्नामकारिबहुधा निजसर्व्वशक्ति-
स्तत्रार्पिता नियमितः स्मरणे न कालः ।
एतादृशी तव कृपा भगवन्ममापि,
दुर्द्दैवमीदृशमिहाजनि नानुरागः ।।४।।

टीका—हे भगवन् ! त्वया तव नाम्नां सम्बन्धे निजसर्व्वशक्तिः बहुधा अनेकप्रकारैः तत्र नामसमूहे अर्पिता अकारि । स्मरणे न कालः नियमितः । एतादृशी तव कृपा विद्यते, तथापि मम दुर्द्दैवं ईदृशं, यत् इह नाम्नि अनुरागः न अजनि ।।४।।

हे भगवन् ! तुम्हारी इस प्रकार करुणा है कि तदीय नाम समूह में बहुधा शक्ति निहित हैं एवं वे सब नाम स्मरणार्थ समस्त समय विहित हैं, किन्तु मदीय इस प्रकार दूरदृष्ट है कि इस प्रकार नाम के प्रति मदीय अनुराग नहीं हुआ ।।४।।

"अनेक लोकेर वाञ्छा अनेक प्रकार ।
कृपाते करिले अनेक नामेर प्रचार ।।१३
खाइते शुइते यथा तथा नाम लय ।
काल-देश-नियम नाहि, सर्व्वसिद्धि हय ।।१४
सर्व्वशक्ति, नामे दिलेन करिया विभाग ।
आमार दुर्द्दैव, नामे नाहि अनुराग ।।१५
ये रूपे लइले नामे प्रेम उपजय ।
तार लक्षण शुन स्वरूप रामराय ।।१६"

तथाहि पद्यावल्यां विंशाङ्कधृत
श्रीकृष्णचेतन्यचन्द्रोक्त श्लोक ।

तृणादपि सुनीचेन तरुरिव सहिष्णुना ।
अमानिना मानदेन कीर्त्तनीयः सदा हरिः ।।५।।

टीका—जनेन तृणात् अपि सुनीचेन, अतिनम्र स्वभावेन इत्यर्थः । तरोः वृक्षस्य इव सहिष्णुना, सर्व्वक्लेशसहनक्षमेषां इति भावः, अमानिना मानगर्व्वविहीनेन, मानदेन सम्मानभाजने प्रदर्शित-मानेन सता, हरिः भगवान् सदा नियतमेव कीर्त्तनीयः ।।५।।

तृण के समान अतीव विनीत होकर तरु के तुल्य परोपकारी एवं सहिष्णु होकर निज मान अभिमान को वर्जनकर अपर को सम्मान प्रदानकर सर्वदा श्रीहरि के नाम कीर्तन करना कर्त्तव्य है ।।५।।

"उत्तम हैञा आपनाके माने तृणाधम ।
दुइ प्रकारे सहिष्णुता करे वृक्षसम ।।१७
वृक्ष येन काटिलेओ किछु ना बोलय ।
शुकाइया मैले कारेओ पानी ना मागय ।।१८
येइ ये मागये, तारे देय आपन धन ।
धर्म्म-वृष्टि सहे, आनेर करये रक्षण ।।१९
उत्तम हैञा वैष्णव हवे निरभिमान ।
जीवे सम्मान दिवे जानि कृष्ण-अधिष्ठान ।।२०
एइमत हैञा येइ कृष्णनाम लय ।
श्रीकृष्णचरणे तार प्रेम उपजय ।।२१
कहिते कहिते प्रभुर दैन्य बाढ़िला ।
शुद्धभक्ति कृष्णठाञि मागिते लागिला ।।२२
प्रेमेर स्वभाव, याँहा प्रेमेर सम्बन्ध ।
सेइ माने, कृष्णे मोर नाहि भक्तिगन्ध ।।२३

तथाहि पद्यावल्यां पञ्चाशीत्यङ्कधृतः
श्रीकृष्णचैतन्यदेवस्य श्लोकः ।

न धनं न जनं न सुन्दरीं,
कवितां वा जगदीश कामये ।
मम जन्मनि जन्मनीश्वरे,
भवताद्भक्तिरहैतुकी त्वयि ॥६॥

टीका—हे जगदीश ! न धनं कामये, तथा न जनं, न सुन्दरीं, न वा कवितां । मम जन्मनि जन्मनि ईश्वरे त्वयि अहेतुकी भक्तिः भवतात् अस्तु ॥६॥

हे जगदीश ! मैं धन, जन, सुन्दरी, स्त्री अथवा कवित्व शक्तिमान होने की कामना नहीं करता हूं, किन्तु जन्म जन्म में हे ईश्वर ! तुम्हारे चरणों में अहैतुकी भक्ति हो, यही कामना करता हूं ॥६॥

"धन जन नाहि मागों कविता सुन्दरी ।
शुद्धभक्ति देह मोरे, कृष्ण ! कृपा करि ॥२४
अति दैन्ये पुनः मागों दास्यभक्तिदान ।
आपनाके करे संसारी जीव अभिमान ॥२५

तथाहि पद्यावल्यां त्रयोदशाङ्क-धृत-श्रीचैतन्यदेवकृत
श्लोकः—

अयि नन्दतनुज किङ्करं,
पतित मां विषमे भवाम्बुधौ ।
कृपया तव पादपङ्कज-
स्थितधूलिसदृशं विचिन्तय ॥७॥

टीका—अयि हे नन्दतनुज ! विषमे भवाम्बुधौ भवसमुद्रे पतितं मां कृपया तव पादपङ्कजस्थितधूलि-सदृशं किङ्करं विचिन्तय ॥७॥

हे नन्दनन्दन ! विषम संसार समुद्र में निपतित मुझको कृपा पूर्वक निज चरण पङ्कज स्थित धूली के तुल्य मानो ॥७॥

"तोमार नित्यदास मुञि तोमा पासरिया ।
पड़ियाछों भवार्णवे मायाबद्ध हैञा ॥२६
कृपा करि कर मोरे पदधूलिसम ।
तोमार सेवक करों तोमार सेवन ॥२७"

पुनः अति उत्कण्ठा दैन्य हैल उद्गम ।
कृष्ण-ठाञि मागे प्रेमनामसंकीर्त्तन ॥२८

तथाहि पद्यावल्यां चतुरशीत्यङ्कधृतः श्रीकृष्णचैतन्य देवस्य श्लोकः—

नयनं गलदश्रुधारया, वदनं गद्गदरुद्धया गिरा ।
पुलकैर्निचितं वपुः कदा, तव नामग्रहणे भविष्यति ॥८

टीका—हे प्रभो ! कदा कस्मिन् समये तव नाम ग्रहणे, गलदश्रुधारया निःसृतनेत्रजलधारया सह नयनं गद्गदरुद्धया गिरा वचसा वदनं, पुलकैः सह निचितं वपुर्देहं भविष्यति ? ॥८॥

हे प्रभो ! कब तुम्हारे नाम ग्रहण करते करते नयनों से वारि धारा विगलित होगी, वदन में वाणी अवरुद्ध होगी एवं शरीर पुलकायित होगा ? ॥८॥

"प्रेमधन विना व्यर्थ दरिद्रजीवन ।
दास करि वेतन मोरे देह प्रेमधन ॥२९"
रसान्तरावेशे हैल वियोगस्फुरण ।
उद्वेग-विषाद-दैन्य करे प्रलपन ॥३०

तथाहि पद्यावल्यां सप्तत्रिंशत्यधिक-त्रिशताङ्कधृत श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्रोक्तश्लोकः ।

युगायितं निमिषेण चक्षुषा प्रावृषायितं ।
शून्यायितं जगत् सर्व्वं गोविन्दविरहेण मे ॥९॥

टीका—गोविन्दविरहेण मे मम निमिषेण मुहूर्त्त-मात्रसमयेन युगायितं युगवत् लक्षितं. चक्षुषा नेत्रेण प्रावृषायितं, सर्व्वं जगत शून्यायितं शून्यवत् लक्षितं॥९

गोविन्द विच्छेद में मुहूर्त्त समय भी मेरे पक्ष में युगवत् प्रतीत होता है, नयनों से वर्षाकालीन जलधारा के तुल्य अश्रुधारा निर्गलित होती रहती है एवं समस्त जगत् शून्य प्रतीत होते हैं ॥९॥

"उद्वेगे दिवस ना याय, क्षण हैल युगसम ।
वर्षार मेघप्राय अश्रु वर्षे नयन ॥३१
गोविन्दविरहे शून्य हइल त्रिभुवन ।
तुषानले पोड़े येन, ना याय जीवन ॥३२

कृष्ण उदासीन हैल करिते परीक्षण ।
सखीसब कहे, कृष्णे कर उपेक्षण ॥३३"
एतेक चिन्तिते राधार निर्म्मल हृदय ।
स्वाभाविक प्रेमार स्वभाव करिल उदय ॥३४
ईर्षा उत्कण्ठा दैन्य प्रौढ़ि विनय ।
एत भाव एकठाञि करिल उदय ॥३५
एत भावे राधार मन स्थिर हैल ।
सखीगण-आगे प्रौढ़ि-श्लोक ये पढ़िल ॥३६
सेइ भावे प्रभु येइ श्लोक उच्चारिल ।
श्लोक उच्चारिते तद्रूप आपने हइल ॥३७

तथाहि पद्यावल्यां चतुस्त्रिंशदधिकशताङ्कधृतः श्रीचैतन्यदेवस्यश्लोकः ।

आश्लिष्य वा पादरतां पिनष्टु मा-
मदर्शनान्मर्म्महतां करोतु वा ।
यथा तथा वा विदधातु लम्पटो,
मत्प्राणनाथस्तु स एव नापरः ॥१०॥

टीका—सः गोविन्दः मां आश्लिष्य पादरतां चरणसेवापरायणां करोतु वा, किं वा मां पिनष्टु, वा किंवा अदर्शनात् मां मर्म्महतां करोतु, लम्पटः सन् यथा तथा विदधातु वा, तु तथापि स एव कृष्णः मत्प्राणनाथः न अपरः अन्यः ॥१०॥

हे सखि ! कृष्ण मुझको आलिङ्गन कर चरणरता किङ्करी मानें अथवा महाकष्ट में डालकर निष्पेषित करें, किं वा अदर्शन देकर मर्म्म हता करें अथवा बहुनारी लम्पट होकर यथा तथा विहार करें तथापि वह कृष्ण ही एकमात्र प्राणनाथ हैं, अपर कोई नहीं ॥१०

यथारागः

आमि कृष्ण पददासी, तिँहो रससुखराशि,
आलिङ्गिया करे आत्मसात ।
किवा ना देन दरशन,जारेन आमार तनु मन,
तबु तिंहो मोर प्राणनाथ ॥३८

सखि हे शुन मोर मनेर निश्चय ।
किवा अनुराग करे, किवा दुःख दिया मारे,
मोर प्राणेश्वर कृष्ण अन्य नय ॥ध्रु॥३९
छाड़ि अन्य नारीगण, मोर वश तनु-मन,
मोर सौभाग्य प्रकट करिया ।
ता सबारे देय पीड़ा, आमा सने करे क्रीड़ा,
सेइ नारीगणे देखाइया ॥४०
किवा तिँहो लम्पट, शठ धृष्ट सकपट,
अन्य नारीगण करि साथ ।
मोरे दिते मनःपीड़ा, मोर आगे करे क्रीड़ा,
तबु तिँहो मोर प्राणनाथ ॥४१
ना गणि आपन दुःख, सबे वाञ्छि तार सुख,
तार सुखे आमार तात्पर्य्य ।
मोरे यदि दिले दुःख, ताँर हैल महासुख,
सेइ दुःख मोर सुखवर्य्य ॥४२
ये नारीके वाञ्छे कृष्ण, तार रूपे सतृष्ण,
तारे ना पाइया काहे हय दुःखी ?
मुञि तार पाये पड़ि, लैञा याङ हाते धरि,
क्रीड़ा कराञा तारे करो सुखी ॥४३
कान्ता कृष्णे करे रोष, कृष्ण पाय सन्तोष,
सुख पाय ताड़न भर्त सने ।
यथायोग्य करे मान, कृष्ण ताते सुख पान,
छाड़े मान अल्प साधने ॥४४
सेइ नारी जीये केने, कृष्णमर्म्म नाहि जाने,
तबु कृष्णे करे गाढ़ रोष ।
निज सुखे माने लाभ, पड़ुक तार शिरे बाज,
कृष्णेर मात्र चाहिये सन्तोष ॥४५
ये गोपी मोरे करे द्वेषे, कृष्णेर करे सन्तोषे,
कृष्ण यारे करे अभिलाष ।

मुञि तार घरे याञा, तारे सेवों दासी हैञा,
तबे मोर सुखेर उल्लास ॥४६
कुष्ठी विप्रेर रमणी, पतिव्रताशिरोमणि,
पति लागि कैल वेश्यार सेवा ।
स्तम्भिले सूर्य्येर गति, जीयाइले मृत पति,
तुष्ट कैल मुख्य तिन देवा ॥४७
कृष्ण मोर जीवन, कृष्ण मोर प्राणधन,
कृष्ण मोर जीवनेर जीवन ।
हृदय उपरे धरों, सेवा करि सुखी करों,
येइ मोर सदा रहे ध्यान ॥४८
मोर सुख सेवने, कृष्णेर सुख सङ्गमे,
अतएव देह देङ दान ।
कृष्ण मोरे कान्ता करि, कहे मोरे 'प्राणेश्वरी',
मोर हय दासी-अभिमान ॥४६
कान्तसेवा सुखपूर, सङ्गम हैते सुमधुर,
ताते साक्षी लक्ष्मीठाकुराणी ।
नारायणेर हृदे स्थिति, तभु पदसेवाय मति,
सेवा करे दासी-अभिमानी ॥५०''
एइ राधार वचन, शुद्ध प्रेमेर लक्षण,
आस्वादये श्रीगौरराय ।
भावे मन नहे स्थिर, सात्विके व्यापे शरीर,
मन-देह धरण ना याय ॥५१
व्रजेश्वर-शुद्ध प्रेम, येन जाम्बुनद हेम,
आत्मसुखेर याहे नाहि गन्ध ।
से प्रेम जानाते लोके, प्रभु कैल एइ श्लोके,
पद कैल अर्थेर निर्बन्ध ॥५२
एइमत महाप्रभु भावाविष्ट हैञा ।
प्रलाप करिल किछु श्लोक पड़िञा ॥५३
पूर्व्वे अष्ट श्लोक करि लोके शिक्षा दिल ।
सेइ अष्ट श्लोकार्थ आपनि अस्वादिल ॥५४
प्रभुर अष्ट शिक्षा-श्लोके येइ पढ़े शुने ।
कृष्ण-प्रेमभक्ति तार बाढ़े दिने दिने ॥५५
यद्यपिह प्रभु कोटी समुद्र-गम्भीर ।
नानाभाव चन्द्रोदये हयेन अस्थिर ॥५६
येइ येइ श्लोक जयदेव भागवते ।
रायेर नाटक ये आर कर्णामृते ॥५७
सेइ सेइ भावेर श्लोक करिया पठन ।
सेइ सेइ भावावेशे करे आस्वादन ॥५८
द्वादश वत्सर ऐछे दशा रात्रि-दिने ।
कृष्णरस आस्वादये दुइ बन्धुसने ॥५६
सेइ रसलीला सब आपनि अनन्त ।
सहस्र वदने बर्णि नाहि पाय अन्त ॥६०
जीव क्षुद्रबुद्धि, ताहा के पारे वर्णिते ।
तार एक कण स्पर्शि आपना शोधिते ॥६१
यत चेष्टा, यत प्रलाप, नाहि तार पार ।
से सब बर्णिते ग्रन्थ हय सुविस्तार ॥६२
वृन्दावनदास प्रथम ये लीला वर्णिल ।
सेइ सब लीलार आमि सूत्रमात्र कैल ॥६३
तार व्यक्त अवशेष संक्षेपे कहिल ।
लीलार बाहुल्ये ग्रन्थ तथापि बाढ़िल ॥६४
अतएव से सब लीला नारि वर्णिवारे ।
समाप्त करिल लीला करि नमस्कारे ॥६५
ये किछु कहिल एइ दिग्‌दरशन ।
एइ अनुसारे हबे तार आस्वादन ॥६६
प्रभुर गम्भीर लीला ना पारि बुझिते ।
बुद्धि प्रवेश नाहि, ताते ना पारि वर्णिते ॥६७

सब श्रोता वैष्णवेर वन्दिया चरण।
चैतन्यचरितवर्णन कैल समापन ॥६८
आकाश अनन्त, ताते यैछे पक्षिगण।
यार यत शक्ति, तत करे आरोहण ॥६९
ऐछे महाप्रभुर लीला नाहि ओर-पार।
जीव हैञा केवा सम्यक् पारे वर्णिवार ॥७०
यावत् बुद्धिर गति, तावत वर्णिल।
समुद्रेर मध्ये येन एक कण छुँइल ॥७१
नित्यानन्द-कृपापात्र वृन्दावनदास।
चैतन्यलीलार तिँह हय आदि व्यास ॥७२
ताँर आगे यद्यपि सब लीलार भाण्डार।
तथापि अल्प वर्णिया छाड़िलेन आर ॥७३
ये किछु वर्णिल सेह संक्षेप करिया।
'लिखिते ना पारि' ग्रन्थे राखियाछे लिखिया।७४
चैतन्यमङ्गले तिँह लिखियाछे स्थाने स्थाने।
सेइ वचन शुन सेइ परम प्रमाणे ॥७५
संक्षेपे कहिल, विस्तार ना याय कथने।
विस्तारिया वेदव्यास करिवे वर्णने ॥७६
चैतन्यमङ्गले इहा लिखियाछे स्थाने स्थाने।
सत्य कहे व्यास आगे करिबे वर्णने ॥७७
चैतन्यलीलामृत-सिन्धु दुग्धाब्धिसमान।
तृष्णानुरूप झारी भरि तिँह कैल मान ॥७८
ताँर झारी-शेषामृत किछु मोरे दिला।
ततेके भरिल पेट, तृष्णा मोर गेला ॥७९
आमि अति क्षुद्र जीव, पक्षी राङ्गाटुनि।
से यैछे तृष्णाय पिये समुद्रेर पानी ॥८०
तैछे आमि एक कण छुँइल लीलार।
एइ दृष्टान्ते जानिह प्रभुर लीलार विस्तार ॥८१

'आमि लिखि' एहो मिथ्या करि अभिमान।
आमार शरीर काष्ठपुतली समान ॥८२
वृद्ध जरातुर आमि अन्धबधिर।
हस्त हाले, मनोबुद्धि नहे मोर स्थिर ॥८३
नानारोगग्रस्त चलिते वसिते ना पारि।
पञ्चरोगेर पीड़ाय आकुल, रात्रिदिन मरि ॥८४
पूर्व्व ग्रन्थे इहा करियाछि निवेदन।
तथापि लिखिये, शुन इहार कारण ॥८५
श्रीगोविन्द श्रीचैतन्य श्रीनित्यानन्द।
श्रीअद्वैत श्रीभक्त आर श्रीश्रोतृवृन्द ॥८६
श्रीस्वरूप श्रीरूप श्रीसनातन।
श्रीरघुनाथदास श्रीगुरु श्रीजीवचरण ॥८७
इँहा सवार चरणकृपाय लेखाय आमारे।
आर एक हय, तिँहो अति कृपा करे ॥८८
श्रीमदन-गोपाल मोरे लेखाय आज्ञा करि।
कहिते ना जुयाय, तबु रहिते ना पारि ॥८९
ना कहिले हय मोर कृतघ्नता-दोष।
दम्भ करि बलि श्रोता! ना करिह रोष ॥९०
तोमा सबार चरणधूलि करिनु वन्दन।
ताते चैतन्यलीला हैल ये किछु लिखन ॥९१
एबे अन्त्यलीलागणेर करि अनुवाद।
अनुवाद कैले पाइ लीलार आस्वाद ॥९२
प्रथम परिच्छेदे रूपेर द्वितीय मिलन।
तार मध्ये दुइ नाटकेर विधान श्रवण ॥९३
तार मध्ये शिवानन्दसङ्गे कुक्कुर ये आइल।
प्रभु तारे कृष्ण कहाइया मुक्त कैल ॥९४
द्वितीये छोट हरिदासे कराइल शिक्षण।
तार मध्ये शिवानन्देर आश्चर्य्य-दर्शन ॥९५

तृतीये श्रीहरिदासेर महिमा प्रचण्ड।
दामोदरपण्डित कैल प्रभुरे वाक्यदण्ड ॥९६
प्रभुनाम दिया कैल ब्रह्माण्ड मोचन।
हरिदास करिल नामेर महिमा स्थापन ॥९७
चतुर्थे श्रीसनातनेर द्वितीय मिलन।
देहत्याग हइते तारे करिल रक्षण ॥९८
ज्यैष्ठ मासेर घामे तारे कैल परीक्षण।
शक्ति सञ्चारिया तारे पाठाइल वृन्दावन ॥९९
पञ्चमे प्रद्युम्नमिश्रे प्रभु कृपा कैल।
राय द्वारा कृष्ण कथा तारे शुनाइल ॥१००
तार मध्ये बाङ्गाल-कविर नाटक उपेक्षण।
स्वरूपगोसाञि कैल विग्रहमहिमा स्थापन॥१०१
षष्ठे रघुनाथदास प्रभुरे मिलिला।
नित्यानन्द-आज्ञाय चिँड़ा-महोतसव कैला॥१०२
दामोदरस्वरूप-ठाञि तारे समर्पिला।
गोवर्द्धनेर शिला गुञ्जामाला तारे दिला॥१०३
सप्तम परिच्छेदे वल्लभभट्टेर मिलन।
नानामते कैल तार गर्व्वखण्डन ॥१०४
अष्टमे रामचन्द्रपुरीर आगमन।
तार भये कैल प्रभु भिक्षा-सङ्कोचन ॥१०५
नवमे गोपीनाथपट्टनायक-मोचन।
त्रिजगतेर लोक प्रभुर पाइल दर्शन ॥१०६
दशमे करिल भक्तदत्त आस्वादन।
राघव-पण्डितेर ताँहा झालिर साजन ॥१०७
तार मध्ये गोविन्देर कैल परीक्षण।
तार मध्ये परिमुण्डा नृत्येर वर्णन ॥१०८
एकादशे हरिदासठाकुरेर निर्य्याण।
भक्तवात्सल्य याँहा देखाइल गौर भगवान्॥१०९
द्वादशे जगदानन्देर तैलभञ्जन।
नित्यानन्द कैल शिवानन्देर ताड़न ॥११०
त्रयोदशे जगदानन्द मथुरा यात्रा आइला।
महाप्रभु देवदासीर गीत शुनिला ॥१११
रघुनाथभट्टाचार्य्येर ताँहाइ मिलन।
प्रभु तारे कृपा करि पाठाइल वृन्दावन ॥११२
चतुर्द्दशे दिव्योन्माद-आरम्भ-वर्णन।
शरीर एथा प्रभुर मन गेला वृन्दावन ॥११३
तार मध्ये प्रभुर सिंहद्वारे पतन।
अस्थिसन्धित्याग अनुभावेर उद्गम ॥११४
चटकपर्वत देखि प्रभुर धावन।
तार मध्ये प्रभुर किछु प्रलाप वर्णन ॥११५
पञ्चदश परिच्छेदे उद्यानविलास।
वृन्दावनभ्रमे याँहा करिल प्रवेश ॥११६
तार मध्ये प्रभुर पञ्चेन्द्रिय-आकर्षण।
तार मध्ये करिल रासे कृष्ण अन्वेषण॥११७
षोड़शे कालिदासे प्रभु कृपा कैल।
वैष्णवोच्छिष्ट खाइवार फल देखाइल ॥११८
शिवानन्देर बालके श्लोक कराइल।
सिंहद्वारेर द्वारी प्रभुके कृष्ण देखाइल ॥११९
महाप्रसादेर ताँहा महिमा वर्णिल।
कृष्णाधरामृतेर श्लोक सब आस्वादिल ॥१२०
सप्तदशे गाभीमध्ये प्रभुर पतन।
कूर्म्माकार-अनुभावेर ताहाइ उद्गम ॥१२१
कृष्णेर शब्दगुणे प्रभुर मन आकर्षिल।
'कास्त्र्यङ्ग ते' श्लोकेर अर्थ आवेशे करिल॥१२२
भावशावल्ये पुनः कैल प्रलपन।
कर्णामृत-श्लोकेर अर्थ कैल विवरण ॥१२३

अष्टादश परिच्छेदे समुद्रे पतन ।
कृष्ण-गोपी-जलकेलि ताँहा दरशन ॥१२४
ताँहाञि देखिल कृष्णेर वन्यभोजन ।
जालिया उठाइला, प्रभु आइला स्वभवन॥१२५
ऊनविंशे भित्त्ये प्रभुर मुखसंघर्षण ।
कृष्णेर विरहस्फूर्त्ति, प्रलापवर्णन ॥१२६
वसन्त-रजनी पुष्पोद्याने विहरण ।
कृष्णेर सौरभ्य-श्लोकेर अर्थ विवरण ॥१२७
विंशति परिच्छेदे निज शिक्षाष्टक पड़िया ।
तार अर्थ आस्वादिल प्रेमाविष्ट हइया॥१२८
भक्ते शिक्षाइते क्रमे ये शिक्षाष्टक कैल ।
सेइ श्लोकाष्टकेर अर्थ पुनः आस्वादिल ॥१२९
मुख्य मुख्य-लीलार ताँहा करिल कथन ।
अनुवाद हैते स्मरे ग्रन्थ विवरण ॥ १३०
एकेक परिच्छेदेर कथा अनेक प्रकार ।
मुख्य मुख्य कहिल, कहा ना याय विस्तार॥१३१
श्रीराधासह श्रीमदनमोहन ।
श्रीराधासह श्रीगोविन्दचरण ॥१३२
श्रीराधासह श्रील गोपीनाथ ।
एइ तिन-ठाकुर-सब गौड़ियार नाथ ॥१३३
श्रीकृष्णचैतन्य श्रीयुक्त नित्यानन्द ।
श्रीअद्वैत-आचार्य्य श्रीगौरभक्तवृन्द ॥१३४
श्रीस्वरूप श्रीरूप श्रीसनातन ।
श्रीगुरु श्रीरघुनाथ श्रीजीवचरण ॥१३५
निज शिरे धरि एइ सबार चरण ।
याहा हइते हय सब वाञ्छित पूरण ॥१३६
सबार चरणकृपा गुरु-उपाध्यायी ।
ताँर वाणी शिष्या, तारे बहुत नाचाइ ॥१३७
शिष्यार श्रम देखि गुरु नाचन राखिल ।
कृपा ना नाचाय, वाणी वसिया रहिल ॥१३८
अनिपुणा वाणी, आपने नाचिते ना जाने ।
यत नाचाइल तत नाचि करिल विश्रामे॥१३९
सब श्रोतृगणेर करि चरण बन्दन ।
या सबार चरणकृपा शुभेर कारण ॥१४०
चैतन्यचरितामृत येइ जन शुने ।
ताहार चरण धुञा करों मुञि पाने ॥१४१
श्रोतार पदरेणु करों मस्तके भूषण ।
तोमारा ए अमृत पिले सफल हय श्रम ॥१४२
श्रीरूप-रघुनाथ-पदे-यार आश ।
चैतन्यचरितामृत कहे कृष्णदास ॥१४३

चरितममृतमेतत् श्रीलचैतन्यविष्णोः,
शुभदमशुभनाशि श्रद्धया स्वादयेद् यः ।
तदमलपदपद्मे भृङ्गतामेत्य सोऽयम्,
रसयति रसमुच्चैः प्रेममाध्वीकपूरम् ॥१॥

श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु के प्रेमसेवाप्रद एवं अपराध नाशक इस चरितामृत का श्रद्धा पूर्वक जो आस्वादन करता है, वह उनके पाद-पद्म में भृङ्ग होकर विविध विषय रसादि विस्मारक प्रेमानन्द माधीक का आस्वादन करता है ॥१॥

श्रीमन्मदन गोपाल गोविन्ददेवतुष्टये ।
चैतन्यार्पितमस्त्वेतच्चैतन्य चरितामृतम् ॥२॥

यह चैतन्यार्पित श्रीचैतन्य-चरितामृत श्रीमन्मदन गोपाल एवं गोविन्ददेव के सन्तोष हेतु हो ॥२॥

परिमलवासितभुवनं स्वरसोन्मादित रसिकालम्बम् ।
गिरिधरचरणाम्भोजं कः खलु रसिकः समीहते हातुम्॥३

चतुर्द्दश भवन सुगन्धिकारि एवं स्वमाधुर्य्य द्वारा रसज्ञ भ्रमरार्कषि श्रीकृष्ण पाद-पद्म को परित्याग करने में कौन रस भावना चतुर व्यक्ति सक्षम होगा ॥३॥

मत्प्राणसर्वस्वपदाब्जरेणोर्मदीश्वरी श्रीयुतराधिकायाः
प्राणोरु सर्वस्व पदाब्जरेणुं श्रीश्रील गोविन्दमहं प्रपद्ये।४

जिनकी पदपङ्कज रेणु मदीश्वरी श्रीयुत राधिका के एवं मदीय प्राण सर्वस्व है, मैं उन श्री श्रीगोविन्द देव की शरण ग्रहण करता हूँ ।।४।।

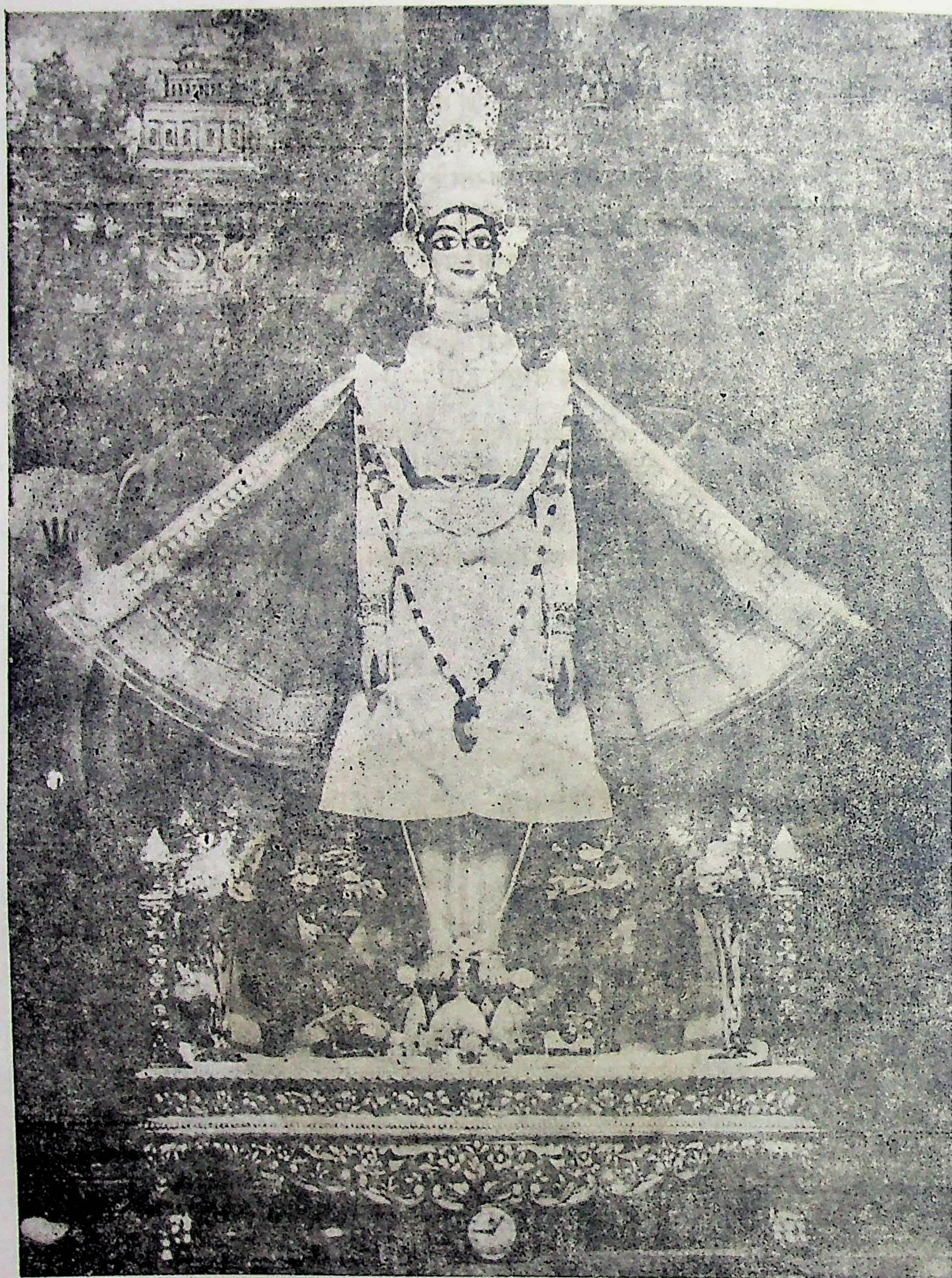
शाके सिन्ध्वग्निवाणेन्दौ ज्यैष्ठे वृन्दावनान्तरे ।
सूर्य्येऽह्नचसित पञ्चम्यां ग्रन्थोऽयं पूर्णतां गतः ।।५।।

१५३७ शकाब्द के ज्येष्ठ मासीय रविवार कृष्ण पक्ष की पञ्चमी तिथि में वृन्दावन में यह श्रीचैतन्य-चरितामृत ग्रन्थ सम्पूर्ण हुआ ।।५।।

१९१० शकाब्द में श्रीवृन्दावन में श्रीहरिदास शास्त्री कृत श्लोकानुवाद सम्पूर्ण हुआ ।

इति श्रीचैतन्यचरितामृते अन्त्यखण्डे शिक्षाष्टकार्थास्वादनं नाम विंशतिः परिच्छेदः ।।२०।।





श्रीहरिदास शास्त्री सम्पादिता ग्रन्थावली

क्रम	सद्ग्रन्थ	मूल्य
1	अलंकारकौस्तुभ	300
2	अहिंसा परमो धर्म	120
3	ऐश्वर्यकादम्बिनी	40
4	श्रीभगवद्भवित्तसार समुच्चय	40
5	वजरीतिचिन्तामणि	50
6	श्रीब्रह्मसंहिता	60
7	भगवत्ससन्दर्भ:	200
8	कृष्णसन्दर्भ:	330
9	भक्तिसन्दर्भ:	380
10	प्रीतिसन्दर्भ:	380
11	तत्वसन्दर्भ:	120
12	परमात्मसन्दर्भ	280
13	श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु पूर्व विभाग उत्तमा भक्ति लक्षण, प्रथम लहरी	175
14	वेदान्तदर्शनम् भागवतभाष्योपतेम्	220
15	वेदान्तस्यमन्तक	50
16	श्रीमद् भगवतीय उन्तमा भक्ति विभाषणम्	110
17	श्रीमद्भगवत प्रथम स्कन्द (श्लोक)	40
18	श्रीमद्भगवद्गीतोक्त भगवत्प्राप्ती उपाय	60
19	स्वकीयात्वनिरास परकीयात्वनिरूपणम्	110
20	भक्तिचन्द्रिका	40
21	भक्तिरसामृतशेष:	110
22	भक्ति सर्वस्वम्	60
23	श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु पूर्व विभाग	410
24	श्रीचेतन्यचन्द्रामृतम्	40
25	श्रीचेतन्यभागवत	250
26	श्रीचेतन्यमंगल	200
27	श्रीचेतन्यचरितामृतम्	300
28	दिनचन्दिका	30
29	चतु:श्लोकीभाष्यम्	70
30	दश:श्लोकी भाष्यम्	70
31	श्रीगौरगाविन्दार्चेनपद्धिति	30
32	श्रीगोविन्दलीलामृतम्- (3 vols)	500
33	श्रीगोरांगविरूदावली	50
34	श्रीचेतन्यविजयग्रन्थ	35
35	श्रीगोविन्दवृन्दावनम्	40
36	श्रीगौरांगचन्द्रोदय	40
37	श्रीगायत्री व्याख्याविवृति	20
38	धर्मसंग्रह	60
39	श्रीगौरागलीलामृतम्	40
40	श्री हरिभक्ति विलास श्लोक नाम सूची	
41	श्रीहरिभक्ति विलास 1 प्रथम	1200

क्रम	सद्ग्रन्थ	मूल्य
42	श्रीहरिभक्ति विलास 11 द्वितीय	
43	श्रीहरेकृष्णमहामन्त्र	5
44	गोसेवा	50
45	गोमांसादि भक्षण विधिनिषेध	60
46	हिन्दूधर्मरहस्यं वा सर्वधर्मसमन्वय:	60
47	श्रीहरिभक्तिसार संग्रह:	60
48	काव्यकौस्तुभ:	110
49	मेरी प्यारी राधा न्यास	60
50	श्रीहरिनामामृत व्याकरण्	320
51	श्रीकृष्णभक्तिरत्नप्रकाश	60
52	श्रीकृष्णचैतन्यचरितामृत	170
53	श्रीचैतन्यचरितामृत महाकाव्यम्	170
54	श्रीकृष्णजन्मतिथिविधि	40
55	श्रीमन्त्रभागवत	60
56	श्रीमाधवी गादो भवन्तु	5
57	श्री नामामृतसमुन्द्र	20
58	श्रीनृसिंह चर्तुदशी	20
59	श्रीसंकल्पकल्पद्रुम	40
60	नित्यकृत्यप्रकरणम्	60
61	प्रेमसम्पुट	50
62	प्रमेयरत्नावली	60
63	श्रीराधाकृष्णार्चनदीपिका	30
64	प्रयुक्ताख्यात मंजरी	30
65	पवित्रगौसेदानाभ	60
66	रासप्रबन्ध	40
67	श्रीराधारससुधानिधि-मूल	30
68	श्रीराधारससुधानिधि-सानुवाद	110
69	रस विवेचनम्	60
70	श्रीरासलीला	60
71	श्रीराधानामृतचन्द्रिका	30
72	सनतकुमार संहिता	30
73	श्रीसाधनदीपिका	70
74	श्रुत्तिस्तुति व्याख्या	110
75	सत्संग	60
76	शिक्षाष्टकम्	20
77	संक्षेप श्रीहरिनामामृत व्याकरणम्	120
78	साहित्य कौमुदी	170
79	श्रीसिद्धान्त दर्पण	120
80	पद्यावली	220
81	छन्द: कौस्तुभ:	60
82	श्रीकृष्णमजनामृतम्	40